इदं पुस्तकं जामनगरे श्रीजैनभास्करोदय मुद्रणालये
**मेनेजर बालचंद्रेण मुद्रापितं**

# श्रीव्याख्याप्रज्ञप्त्या द्वितीयविभागस्य शुद्धिपत्रकम् ।

| पत्रे | पंक्तौ | अशुद्धम् | शुद्धम् |
|---|---|---|---|
| ६०१ | १ | पूर्वत्र | पूर्वं |
| ६०३ | १२ | ० पुव्वीए | ०पुव्वीए |
| ६०८ | १ | आयत संठायप्प | आयतसंठाणप्प० |
| ६०८ | ६ | ०प्रमोग० | ०प्रयोग० |
| ,, | १४ | एव | एव, |
| ६०९ | १४ | संठप्पओ | सट्ठाणओ |
| ६११ | १४ | बादरोवि | बादरावि |
| ६१३ | 3 | भाणिवव्वं | भाणियव्वं |
| ६१३ | ९ | ०इड्डिपत्त अपमत्त० | ०इड्ढिपत्तअपमत्त० |
| ,, | १० | ०अपमत० | ०अपमत्त० |
| ६१७ | ७ | अथ | अथ |
| ६१८ | ५ | ०सच्च णप्प० | ०सच्चमणप्प० |
| ६२२ | १० | ०मुचितभकोपेतं | ०मुचितभंगकोपेतं |
| ६२४ | १४ | सीहम्म० | सोहम्म० |
| ६२७ | १० | ०मेदसम्भवा० | मेदसंबा० |

| पत्रे | पंक्तौ | अशुद्धम् | शुद्धम् |
|---|---|---|---|
| ६२८ | २ | ०वोन्दि० | ०बोन्दि० |
| ६३२ | ९ | व्यक्तं० | ० त्युक्तं |
| ६३३ | ८ | मत्य ज्ञाने | ०मत्यज्ञाने |
| ६४४ | ११ | तिर्विशमा० | निर्विशमा० |
| ६६० | १ | रयणप्प० | रयणप्प० |
| ,, | ११ | षलिओ० | पलिओ० |
| ६६१ | ८ | निदसेति | निदंसेति |
| ६६६ | १२ | भिलाप्यद्रव्यादि० | भिलाप्यानभिलाप्यद्रव्यादि |
| ६७० | ६ | दर्शितमेव | दर्शितमेव |
| ६७१ | ९ | करणेनेति 'दुविहं०' | तत्र 'करणेने'ति 'दुविहेणं तिविहेणं' द्विविधं कृतादीनामन्यतमद्वयरूपं योगं 'त्रिविधेन' मनःप्रभृतिकरणेन, एवमन्येऽपि-'दुविहं' |
| ६८० | १२ | विशेपे० | विशेषे० |
| ६८१ | ५ | अथानारो० | अथानन्तरो० |

| पत्रे | पंक्तौ | अशुद्धम् | शुद्धम् |
|---|---|---|---|
| ६८४ | १२ | चर्चितं, | चार्चितं, |
| ,, | १२ | तृतीय० | तृतीय० |
| ६९७ | १० | गन:प्रभृति० | मन:प्रभृति० |
| ७०० | १० | इन्द्रियार्थप्रकूल० | इन्द्रियार्थप्रतिकूल० |
| ७०४ | ७ | यदगुसमेवालो | यदगुसमेवालो० |
| ७०६ | ८ | त भंते! | तं भंते! |
| ७१० | १३ | योऽवगत | योऽपगत० |
| ७११ | ४ | श्तुर्थस्तु | चतुर्थस्तु |
| ७१३ | १४ | तपरि० | तत्परि० |
| ,, | ,, | ततन्नि० | तन्निर० |
| ७१४ | ५ | कदाचिक० | कदाचित्क० |
| ,, | ६ | ०पुंरस्कार० | ०पुरस्कार० |
| ७१६ | ६ | ०लोभालूनां | ०लोभाणूनां |
| ७१९ | १३ | त्यथः, | त्यर्थः, |
| ७२६ | ८ | पङ्क्तिरेवं— | सरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदयेणं, एवं चेव मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं?, ओरालियसरीरप्पयोगबंधेणं |
| ७२८ | १३ | (३४७ सूत्रं) ३४६ अत एकैकहान्या सूत्रांका ज्ञेया धीधनैः | |
| ७३५ | १३ | समग्रेनं | समयेन |
| ७४२ | ७ | जहल्लिया | जहन्निया |
| ७४४ | १३ | ०वियहेण | ०विग्रहेण |
| ७४८ | | बालं | कालं |
| ७५५ | १२ | समं भणिय० | समं भणियं तहेव भाणिय० |
| ७५५ | १४ | देसबंधेणवि भणियं तहेव | देसबंधेणवि × |
| ७५९ | ११ | पुण जहन्नभहिया | पुण जहन्नभहिया |
| ७६० | ३ | असंस्ब० | असंख्न० |
| ,, | ७ | विसेसो जत्थ भणिहामि | विसेसो जो जत्थ भणिहामि |
| ,, | ११ | हंचेत० | हवंत० |
| ,, | १२ | ०ऽणाइत्ता | ०ऽणाइत्ता |
| ,, | १० | ०णंवगुणा | णंतगुणा |
| ,, | ११ | णाणत्तउम्मि | णाणत्तमाउम्मि |

| पत्र | पंक्तौ | अशुद्धम् | शुद्धम् |
|---|---|---|---|
| ७६१ | १ | तम्हाऽसंख० | तम्हासंख० |
| ,, | १४ | यें | ये |
| ७६२ | ६ | ०नद्धिसम | ०नर्द्धिसम० |
| ७६६ | २ | असत्वाद् | असंगत्वाद् |
| ७६७ | ११ | भवग्गणेर्हि | भवग्गहणेहिं |
| ७७० | २ | रसपमाणे | रसपरिणामे |
| ७८० | ७ | समुद्रपयान्ति | समुद्रमुपयान्ति |
| ७८८ | ४ | तप्पविकलयस्स | तप्पक्खियस्स |
| ७९२ | १२ | असोचा० | असोच्चा० |
| ७९३ | २ | केवलिउवागस्स | केवलिउवासगस्स |
| ७९३ | ८ | दर्शमोह० | दर्शनमोह० |
| ८०२ | ९ | समुप्जइ | समुप्पज्जइ |
| ,, | १२ | पसिस्सा० | सिस्सा० |
| ८१० | १० | ०द्वयोर्त्तत्ति० | ०द्वयोत्पत्ति० |
| ८१२ | ७ | वलुयप्पभा० | वालुयप्पभा० |
| ,, | १२ | अहसेतमा० | अर्हत्सत्तमा० |
| ८२२ | ११ | सं० सङ्ख्याताः सं० | × |

| पत्रे | पंक्तौ | अशुद्धम् | शुद्धम् |
|---|---|---|---|
| ८२३ | ९ | ०वारे | ०चारे |
| ८२८ | १ | पंचिंदिय० | पंचिंदिय० |
| ८३२ | १४ | सओ | संतो |
| ८३५ | ८ | ना का० | नारका० |
| ८४८ | १४ | अन्ते | ( सू० ३८२ ) |
| ८६१ | ३ | अविद्य मान० | अविद्यमान० |
| ८७७ | २ | अन्येतैः | अन्यैः |
| ८७९ | १४ | चापरादंस | चामरादर० |
| ८८४ | १४ | ०रेपित० | ०रोपित० |
| ८८५ | ५ | ०ऽगम्यन्ते | ०ऽम्यन्ते |
| ,, | १३ | तीभिः | गीर्भिः |
| ८९४ | ७ | पथा | तथा |
| ९०३ | ७ | त्रिन्त्रियत्वं | त्रिक्रियत्वं |
| ९१५ | ३ | नोपलत्ये | नोपलप्स्ये |
| ९१७ | १३ | दसंमे | दसमे |
| ९२७ | १३ | ०नामगणि | ०नामगाणि |
| ९३२ | ८ | आदौ वाच्यं | तायत्तीसाए |

| पत्रे | पंक्तौ | अशुद्धम् | शुद्धम् |
|---|---|---|---|
| ,, | १३ | अन्ते | (सू० ४०७) |
| ९५३ | १४ | चेलवसिणो | चेलवासिणो |
| ९५९ | १४ | जे अरूवी अजीवा | जे अजीवा |
| ९६० | ९ | अहोलोगे | अ [हो] लोगे |
| ९७४ | ९ | निधेहि | निधेहि |
| ९७९ | ३ | ओप्पिपरियट्टा | ओसप्पिपरियट्टा |
| ९८६ | १३ | चित्ते | चित्तं |
| ९९० | ७ | ०दसणं | ०देसणं |
| ९९५ | ३ | यथौतिपपा० | यथौपपा० |
| ,, | १ | संमाजिता | संमार्जिता |
| ९९८ | ५ | सए य सयसाह० | सए य साहस्सिए य सयसाह० |
| ९९९ | ५ | उम्मुकमाल० | उम्मुकबाल० |
| ,, | ७ | ०खंभसयंस० | ०खंभसयसं० |
| १००० | ४ | ०जनन | ०जनेन |
| १००७ | ५ | अणगारस्ल | अणगारस्स |
| ,, | ११ | एवं वाच्यं | सेट्ठिकुलंसि पुत्तं० |
| १००८ | ११ | भित्यादि | मित्यादि |
| १००९ | ३ | प्रकारेण श० | प्रकारेण चतुर्दश० |
| १०१९ | ७ | ०नुष्ठनं० | ०नुष्ठानं० |
| १०२४ | | दुब्बलियत्त साहुजयति | दुब्बलियत्तं साहु जयंति! |
| १०२६ | ९ | ०गाढसेढि० | ०गाससेढि० |
| १०३४ | १४ | रवधे | खंधे |
| १०३६ | ५ | ,, | ,, |
| १०३९ | ९ | संस्विज्जा | संखिज्जा |
| १० ,, | १४ | इत्यथः | इत्यर्थः |
| १०४१ | १० | अनंता | अणंता |
| १०४३ | ९ | आरूयाता | आख्याता |
| १०४४ | १ | संख्येय० | संख्येयै० |
| १०४५ | २ | ०न्तिम | पर्यन्तिम० |
| १०४८ | ८ | उक्रोसे | उक्कोसे |
| १०४९ | १ तः ४ | न वाच्यं | "कंखा" यावत् विवेगे. |
| १०६० | ४ | लघाय० | लघीय० |
| १०६१ | १४ | ०मुद्दं | ०सुद्दं |

| पत्रे | पंक्तौ | अशुद्धम् | शुद्धम् |
|---|---|---|---|
| १०६२ | ० | जाव | जीव |
| १०६३ | १३ | उक्कोस० | उक्कोस० |
| ११६४ | ५ | अणावकंत | अणक्कंत |
| १०७२ | १० | अहिच्छि० | जहिच्छि० |
| १०७३ | ९ | जच्चेव | जहेव० |
| ,, | ,, | व्वाइएसु उव० | ०व्वाइएसु जाव उ० |
| ,, | १३ | ०देवाणं णपु० | देवाणं पु० |
| १०७१ | ११ | | नो उववाओ |
| १०९० | ९ | सि० | सिय० |
| ११०० | ६ | द्विताय: | द्वितीयः |
| ,, | १० | व्रजेदित्यर्थ | व्रजेदित्याद्यर्थः |
| १११० | ४ | महावगास | महावास |
| १११८ | ८ | ०समएहिंवि | ततः ( सू० ४८१) |
| | १० | भते | भंते |
| | ११ | ४८२ | × |
| ११२० | १४ | रिद्धा० | अद्धा० |
| ११२१ | ११ | काएहिं | कायपएसेहिं |

| पत्रे | पंक्तौ | अशुद्धम् | शुद्धम् |
|---|---|---|---|
| ११२३ | १३ | ०रपि | ०रपि |
| ११३५ | १२ | भगव | भगवं |
| ११३८ | १३ | निग्गच्छंति | पडिनिग्गच्छंति |
| | ,, | ,, | ,, |
| ११४४ | १३ | पेक्षया, (ततः) | स चित्तः कायो जीवच्छरीरापेक्षया |
| ११६८ | ९ | वासं | वीसं |
| ११७५ | ११ | कालविशेपि | कालविशेप केवलिसमुद्घातविशेपितं |
| ११९२ | १४ | चतुरश्र | चतुरस्र |
| १२०० | ८ | अवियत्तजभगा | अवियत्तजंभगा |
| १२०१ | ६ | एसहुमं | एसुहुमं |
| १२०३ | १ | कमद्रव्य | कर्मद्रव्य |

समाप्तमिदं शुद्धिपत्रकम्



-: प्राप्तिस्थानं :-

श्रीजैनानन्द-पुस्तकालय

**गोपीपुरा-सुरत.**

## ॥ अथ अष्टमं शतकम् ॥



पूर्वत्र पुद्गलादयो भावाः प्ररूपिताः, इहापि त एव प्रकारान्तरेण प्ररूप्यन्त इत्येवं संबद्धमथाष्टमशतं विव्रियते, तस्य चोद्देशकसङ्ग्रहार्थं 'पुग्गले' त्यादिगाथामाह—

पोग्गल १ आसीविस २ रुक्ख ३ किरिय ४ आजीव ५ फासुग ६ मदत्ते ७ ।
पडिणीय ८ बंध ९ आराहणा य १० दस अट्ठमंमि सए ॥ ५७ ॥

रायगिहे जाव एवं वयासी-कइविहा णं भंते ! पोग्गला पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा-पओगपरिणया मीससापरिणया वीससापरिणया । ( सूत्रं ३०८ ] ॥

'पोग्गल'त्ति पुद्गलपरिणामार्थः प्रथम उद्देशकः पुद्गल एवोच्यते, एवमन्यत्रापि १, 'आसीविस 'त्ति आशीविषादिविषयो द्वितीयः २ 'रुक्ख'त्ति सङ्ख्यातजीवादिवृक्षविषयस्तृतीयः ३ 'किरिय 'त्ति कायिक्यादिक्रियाभिधानार्थश्चतुर्थः ४ 'आजीव'त्ति आजीविकवक्तव्यतार्थः पञ्चमः ५ 'फासुग'त्ति प्रासुकदानादिविषयः षष्ठः ६ 'अदत्ते'त्ति अदत्तादानविचारणार्थः सप्तमः ७ 'पडिणीय'त्ति गुरुप्रत्यनीकाद्यर्थप्ररूपणार्थोऽष्टमः 'बंध'त्ति प्रयोगबन्धाद्यभिधानार्थो नवमः ९ 'आराहण'त्ति देशाराधनाद्यर्थो दशमः १० ॥ 'पओगपरिणय'त्ति जीवव्यापारेण शरीरादितया परिणताः, 'मीससापरिणय'त्ति मिश्रकपरिणताः-प्रयोगविस्रसाभ्यां परिणताः, प्रयोगपरिणाममत्यजन्तो विस्रसया स्वभावान्तरमापादिता मुक्तकडेवरादिरूपाः,

अथचौदारिकादिवर्गणारूपा विस्रसया निष्पादिताः सन्तो ये जीवप्रयोगेणैकेन्द्रियादिशरीरप्रभृतिपरिणामान्तरमापादितास्ते मिश्रपरिणताः, ननु प्रयोगपरिणामोऽप्येवंविध एव ततः क एषां विशेषः?, सत्यं, किन्तु प्रयोगपरिणतेषु विस्रसा सत्यपि न विवक्षिता इति । 'वीससापरिणय'त्ति स्वभावपरिणताः ॥ अथ 'पओगपरिणयाण'मित्यादिना ग्रन्थेन नवभिर्दण्डकैः प्रयोगपरिणतपुद्गलान् निरूपयति, तत्र च–

पओगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा– एगिंदियपओगपरिणया बेइंदियपओगपरिणया जाव पंचिंदियपओगपरिणया । एगिंदियपओगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पन्नत्ता?, गोयमा ! पंचविहा, पं०, तंजहा–पुढविक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया जाव वणस्सइकाइयएगिंदियपयोगपरिणया । पुढविक्काइयएगिंदियपओगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-सुहुमपुढविकाइयएगिंदियपओगपरिणया य बादरपुढविक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया य, आउक्काइयएगिंदियपओगपरिणया एवं चेव, एवं दुपयओ भेदो जाव वणस्सइकाइया य । बेइंदियपयोगपरिणयाणं पुच्छा, गोयमा ! अणेगविहा पन्नत्ता, तंजहा–,एवं तेइंदियचउरिंदियपओगपरिणयावि । पंचिंदियपयोगपरिणयाणं पुच्छा, गोयमा ! चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा–नेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया तिरिक्ख०, एवं मणुस्स० देवपंचिंदिय०, नेरइयपंचिंदियपओग० पुच्छा, गोयमा ! सत्तविहा पन्नत्ता, तंजहा–रयणप्पभापुढविनेरइयपयोगपरिणयावि जाव अहेसत्तमपुढविनेरइयपंचिंदियपयोगपरिणयावि, तिरिक्खजोणियपंचि-

दियपओगपरिणयाणं पुच्छा, गोयमा ! तिविहा पन्नत्ता, तंजहा- जलचरपंचिंदियतिरिक्खजोणिय० थलचरतिरिक्खजोणियपंचिंदिय०, खहचरतिरिक्खपंचिंदिय०, जलयरतिरिक्खजोणियपओगपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-संमुच्छिमजलयर० गब्भवक्कंतियजलयर०, थलयरतिरिक्ख० पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा--चउप्पयथलयर० परिसप्पथलयर०, चउप्पयथलयर० पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-संमुच्छिमचउप्पयथलयर० गब्भवक्कंतियचउप्पयथलयर०, एवं एएणं अभिलावेणं परिसप्पा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-उरपरिसप्पा य भुयपरिसप्पा य, उरपरिसप्पा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-संमुच्छिमा य गब्भवक्कंतिया य, एवं भुयपरिसप्पावि, एवं खहयरावि। मणुस्सपंचिंदियपयोगपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-संमुच्छिममणुस्स० गब्भवक्कंतियमणुस्स०। देवपंचिंदियपयोगपुच्छा, गोयमा ! चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा-भवणवासिदेवपंचिंदियपयोग० एवं जाव वेमाणिया। भवणवासिदेवपंचिंदियपुच्छा, गोयमा ! दसविहा पन्नत्ता, तंजहा- असुरकुमारा जाव थणियकुमारा, एवं एएणं अभिलावेणं अट्ठविहा वाणमंतरा पिसाया जाव गंधव्वा, जोइसिया पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा-चंदविमाणजोतिसिय जाव ताराविमाणजोतिसियदेव०, वेमाणिया दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-कप्पोववन्नग० कप्पातीतगवेमाणिय०, कप्पोवगा दुवालसविहा पण्णत्ता, तंजहा-सोहम्मकप्पोवग० जाव अच्चुयकप्पोवगवेमाणिया। कप्पातीत०, गो० ! दुविहा पण्णत्ता, तंजहा-गेवेज्जकप्पातीतवे० अणुत्तरोववाइयकप्पातीतवे०, गेवेज्जकप्पातीतगा नवविहा पण्णत्ता, तंजहा-हेट्ठिम २

गेवेज्जगकप्पातीतगवे० जाव उवरिम२गेविज्जगकप्पातीय० । अणुत्तरोववाइयकप्पातीतगवेमाणियदेवपंचिंदियपयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–विजयअणुत्तरोववाइय० जाव परिण० जाव सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयदेवपंचिंदिय जाव परिणया ॥ सुहुमपुढविकाइयएगिंदियपयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, [केई अपज्जत्तगं पढमं भणंति पच्छा पज्जत्तगं,] पज्जत्तगसुहुमपुढविकाइय जाव परिणया य अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइय जाव परिणया य, बादरपुढविकाइयएगिंदिय० जाव वणस्सइकाइया, एक्केक्का दुविहा पोग्गला–सुहुमा य बादरा य, पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य भाणियव्वा । बेइंदियपयोगपरिणया णं पुच्छा, गोयमा! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगबेंदियपयोगपरिणया य अपज्जत्तग जाव परिणया य, एवं तेइंदियावि, एवं चउरिंदियावि । रयणप्पभापुढविनेरइय० पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगरयणप्पभापुढवि जाव परिणया य अपज्जत्तगजावपरिणया य, एवं जाव अहेसत्तमा । संमुच्छिमजलयरतिरिक्खपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तग० अपज्जत्तग०, एवं गब्भवक्कंतियावि, संमुच्छिमचउप्पयथलयरा, एवं चेव गब्भवक्कंतिया य, एवं जाव संमुच्छिमखहयरगब्भवक्कंतिया य एक्केक्के पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य भाणियव्वा । संमुच्छिममणुस्सपंचिंदियपुच्छा, गोयमा ! एगविहा पन्नत्ता, अपज्जत्तगा चेव । गब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदियपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगगब्भक्कंतियावि अपज्जत्तगगब्भवक्कंतियावि । असुरकुमारभवणवासिदे-

वाणं पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-पज्जत्तगअसुरकुमार० अपज्जत्तगअसुर०, एवं जाव थणियकुमारा पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य, एवं एएणं अभिलावेणं दुयएणं भेदेणं पिसाया य जाव गंधव्वा, चंदा जाव ताराविमाणा०, सोहम्मकप्पोवगा जाव अच्चुओ, हिट्ठिमहिट्ठिमगेविज्जगकप्पातीय जाव उवरिमउवरिमगेविज्ज०, विजयअणुत्तरो० जाव अपराजिय० सव्वट्ठसिद्धकप्पातीयपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरो० अपज्जत्तगसव्वट्ठ जाव परिणयावि, २ दंडगा ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवीकाइयएगिंदियपयोगपरिणया ते ओरालियतेयाकम्मगसरीरप्पयोगपरिणया, जे पज्जत्ता सुहुम० जाव परिणया ते ओरालियतेयाकम्मगसरीरप्पयोगपरिणया, एवं जाव चउरिंदिया पज्जत्ता, नवरं जे पज्जत्तबादरवाउकाइयएगिंदियपयोगपरिणया ते ओरालियवेउव्वियतेयाकम्मसरीर जाव परिणता, सेसं तं चेव, जे अपज्जत्तरयणप्पभापुढविनेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया ते वेउव्वियतेयाकम्मसरीरप्पयोगपरिणया, एवं पज्जत्तगावि, एवं जाव अहेसत्तमा । जे अपज्जत्तगसंमुच्छिमजलयरजावपरिणया ते ओरालियतेयाकम्मासरीर जाव परिणया एवं पज्जत्तगावि, गब्भवक्कंतिया अपज्जत्तया एवं चेव, पज्जत्तयाणं एवं चेव, नवरं सरीरगाणि चत्तारि जहा बादरवाउक्काइयाणं पज्जत्तगाणं, एवं जहा जलचरेसु चत्तारि आलावगा भणिया एवं चउप्पयउरपरिसप्पभुयपरिसप्पखहयरेसुवि चत्तारि आलावगा भाणियव्वा । जे संमुच्छिममणुस्सपंचिंदियपयोगपरिणया ते ओरालियतेयाकम्मासरीर जाव परिणया, एवं गब्भवक्कंतियावि अपज्जत्तगावि, पज्जत्तगावि एवं चेव, नवरं सरीरगाणि

पंच भाणियव्वाणि, जे अपज्जत्ता असुरकुमारभवणवासि जहा नेरइया तहेव, एवं पज्जत्तगावि, एवं दुयएणं भेदेणं जाव थणियकुमारा, एवं पिसाया जाव गंधव्वा, चंदा जाव ताराविमाणा, सोहम्मो कप्पो जाव अच्चुओ, हेट्ठिम २ गेवेज्जजावउवरिम २ गेवेज्ज०, विजयअणुत्तरोववाइए जाव सव्वट्ठसिद्धअणु०, एक्केक्केणं दुयओ भेदो भाणियव्वो जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइया जाव परिणया ते वेउव्वियतेयाकम्मासरीरपयोगपरिणया, दंडगा ३ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियपयोगपरिणता ते फासिंदियपयोगपरिणया, जे पज्जत्ता सुहुमपुढविकाइया एवं चेव, जे अपज्जत्ता बादरपुढविकाइया एवं चेव, एवं पज्जत्तगावि, एवं चउक्कएणं भेदेणं जाव वणस्सइकाइया, जे अपज्जत्ता बेइंदियपयोगपरिणया ते जिब्भिदियफासिंदियपयोगपरिणया, जे पज्जत्ता बेइंदिया एवं चेव, एवं जाव चउरिंदिया, नवरं एक्केक्कं इंदियं वड्ढेयव्वं जाव अपज्जत्ता रयणप्पभापुढविनेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया ते सोइंदियचक्खिंदियघाणिंदियजिब्भिदियफासिंदियपयोगपरिणया एवं पज्जत्तगावि, एवं सव्वे भाणियव्वा, तिरिक्खजोणियमणुस्सदेवा जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव परिणया ते सोइंदियचक्खिंदिय जाव परिणया ४ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियओरालियतेयकम्मासरीरप्पयोगपरिणया ते फासिंदियपयोगपरिणया जे पज्जत्ता सुहुम० एवं चेव बादर०, अपज्जत्ता एवं चेव, एवं पज्जत्तगावि, एवं एएणं अभिलावेणं जस्स जइंदियाणि सरीराणि य ताणि भाणियव्वाणि, जाव जे य पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियवेउव्वियतेया-

कम्मासरीरपयोगपरिणया ते सोइंदियचक्खिंदिय जाव फासिंदियपयोगपरिणया ५ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियपयोगपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि नील० लोहिय० हालिद्द० सुक्किल्ल० गंधओ सुब्भिगंधपरिणयावि दुब्भिगंधपरिणयावि, रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसप० अंबिलरसप० महुररसप०, फासओ कक्खडफासपरि० जाव लुक्खफासपरि०, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणयावि वट्ट० तंस० चउरंस० आयतसंठाणपरिणयावि, जे पज्जत्ता सुहुमपुढवि० एवं चेव, एवं जहाणुपुव्वीए नेयव्वं जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव परिणयावि ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव आययसंठाणपरिणयावि ६ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवि० एगिंदियओरालियतेयाकम्मासरीरपयोगपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरि० जाव आययसंठाणपरि०, जे पज्जत्ता सुहुमपुढवि० एवं चेव, एवं जहाणुपुव्वीए नेयव्वं जस्स जइ सरीराणि जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयदेवपंचिंदियवेउव्वियतेयाकम्मसरीरा जाव परिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव आयतसंठाणपरिणयावि ७ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियफासिंदियपयोगपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणया जाव आययसंठाणपरिणयावि, जे पज्जत्ता सुहुमपुढवि एवं चेव, एवं जहाणुपुव्वीए जस्स जइ इंदियाणि तस्स तत्तियाणि भाणियव्वाणि जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरजावदेवपंचिंदियसोइंदिय जाव फासिंदियपयोगपरिणयावि ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव आययसंठाणपरिणयावि ८ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियओरालियतेयाकम्माफासिंदियपयो-

गपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव आयतसंठाणप०, जे पज्जत्ता सुहुमपुढवि० एवं चेव, एवं जहाणुपुव्वीए जस्स जइ सरीराणि इंदियाणि य तस्स तइ भाणियव्वाणि जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियवेउव्वियतेयाकम्मा सोइंदिय जाव फासिंदियपयोगपरि० ते वन्नओ कालवन्नपरि० जाव आययसंठाणपरिणयावि, एवं एए नव दंडगा ९ ॥ ( सूत्रं ३०९ ) ॥

एकेन्द्रियादिसर्वार्थसिद्धदेवान्तजीवभेदविशेषितप्रयोगपरिणतानां पुद्गलानां प्रथमो दण्डकः, तत्र च 'आउक्काइयएगिंदिय एवं चेव'त्ति पृथिवीकायिकैकेन्द्रियप्रयोगपरिणता इव अप्कायिकैकेन्द्रियप्रयोगपरिणता वाच्या इत्यर्थः 'एवं दुयओ'त्ति पृथिव्यप्कायप्रयोगपरिणतेष्विव द्विको–द्विपरिणामो द्विपदो वा भेदः–सूक्ष्मबादरविशेषणः कृतस्ते (स्तथा ते) जःकायिकैकेन्द्रियप्रयोगपरिणतादिषु वाच्य इत्यर्थः, 'अणेगविह'त्ति पुलाककृमिकादिभेदत्वाद् द्वीन्द्रियाणां, त्रीन्द्रियप्रयोगपरिणता अप्यनेकविधाः, कुन्थुपिपीलिकादिभेदत्वात्तेषां, चतुरिन्द्रियप्रयोगपरिणता अप्यनेकविधा एव, मक्षिकामशकादिभेदत्वात्तेषाम्, एतदेव सूचयन्नाह— 'एवं तेइंदी'त्यादि॥ 'सुहुमपुढविकाइए'इत्यादि, सर्वार्थसिद्धदेवान्तः पर्याप्तकापर्याप्तकविशेषणो द्वितीयो दण्डकः, तत्र 'एक्केक्के'त्यादि, एकैकस्मिन् काये सूक्ष्मबादरभेदाद् द्विविधाः पुद्गला वाच्याः, ते च प्रत्येकं पर्याप्तकापर्याप्तकभेदात्पुनर्द्विविधा वाच्या इत्यर्थः॥ 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'त्यादिरौदारिकादिशरीरविशेषणस्तृतीयो दण्डकः, तत्र च 'ओरालियतेयाकम्मसरीरपओगपरिणय'त्ति औदारिकतैजसकार्मणशरीराणां यः प्रयोगस्तेन परिणता ये ते तथा, पृथिव्यादीनां हि एतदेव शरीरत्रयं भवतीतिकृत्वा तत्प्रयोगपरिणता एव ते भवन्ति, बादरपर्याप्तकवायूनां त्वाहारकवर्जशरीरचतुष्टयं भवतीतिकृत्वाऽऽह–नवरं 'जे पज्जत्ते'त्यादि ।

'एवं गब्भवक्कंतियावि अपज्जत्तग'त्ति वैक्रियाहारकशरीराभावाद् गर्भव्युत्क्रान्तिका अप्यपर्याप्तका मनुष्यास्त्रिशरीरा एवेत्यर्थः ॥ 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'त्यादिरौदारिकादिशरीर- 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'त्यादिरिन्द्रियविशेषणश्चतुर्थो दण्डकः ४ ॥ 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'त्यादि वर्णगन्धरसस्पर्शसंस्थानविशेषणः षष्ठः ६ ॥ एवमौदारिकादि- स्पर्शनादीन्द्रियविशेषणः पञ्चमः ५ ॥ 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'त्यादि वर्णगन्धरसस्पर्शसंस्थानविशेषणः षष्ठः ६ ॥ एवमौदारिकादि- शरीरवर्णादिभावविशेषणः सप्तमः ७ ॥ इन्द्रियवर्णादिविशेषणोऽष्टमः ८ ॥ शरीरेन्द्रियवर्णादिविशेषणो नवम इति, अत एवाह- एते नव दण्डकाः ॥

मीसापरिणया णं भंते ! पोग्गला कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा-एगिंदियमीसापरिणया जाव पंचिंदियमीसापरिणया, एगिंदियमीसापरिणया णं भंते ! पोग्गला कतिविहा पण्णत्ता?, गोयमा ! एवं जहा पओगपरिणएहिं नव दंडगा भणिया एवं मीसापरिणएहिवि नव दंडगा भाणियव्वा, तहेव सव्वं निरवसेसं, नवरं अभिलावो मीसापरिणया भाणियव्वं, सेसं तं चेव, जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तर जाव आययसंठाणपरिणयावि ॥ (सूत्रं ३१०) ॥ वीससापरिणया णं भंते ! पोग्गला कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा-वन्नपरिणया गंधपरिणया रसपरिणया फासपरिणया संठाणपरिणया, जे वन्नपरिणया ते पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा-कालवन्नपरिणया जाव सुक्किल्लवन्नपरिणया, जे गंधपरिणया ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-सुब्भिगंधपरिणयावि दुब्भिगंधपरिणयावि, एवं जहा पन्नवणापदे तहेव निरवसेसं जाव जे संठाणओ आयतसंठाणपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव लुक्खफासपरिणयावि (सूत्रं ३११)॥

मिश्रपरिणतेष्वप्येत एवं नव दण्डका इति ॥ अथ विश्रसापरिणतपुद्गलांश्चिन्तयति—'वीससापरिणया ण' मित्यादि, 'एवं जहा पन्नवणापए'त्ति तत्रैवमिदं सूत्रं—'जे रसपरिणया ते पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा—तित्तरसपरिणया एवं कडुय० कसाय० अंबिल० महुररसपरिणया, जे फासपरिणया ते अट्ठविहा प० तं०—कक्खडफासपरिणया एवं मउय० गरुय० लहुय० सीय० उसिण० निद्ध० लुक्खफासपरिणया य' इत्यादि ॥ अथैकं पुद्गलद्रव्यमाश्रित्य परिणामं चिन्तयन्नाह—

एगे भंते ! दव्वे किं पयोगपरिणए मीसापरिणए वीससापरिणए?, गोयमा ! पयोगपरिणए वा मीसापरिणए वा वीससापरिणए वा । जइ पयोगपरिणए किं मणप्पयोगपरिणए वइप्पयोगपरिणए कायप्पयोगपरिणए ?, गोयमा ! मणप्पयोगपरिणए वा वइप्पयोगपरिणए वा कायप्पओगपरिणए वा, जइ मणप्पओगपरिणए किं सच्चमणप्पओगपरिणए मोसमणप्पयोग० सच्चामोसमणप्पयो० असच्चामोसमणप्पयो० ?, गोयमा! सच्चमणप्पयोगपरिणए वा मोसमणप्पयोग० वा सच्चामोसमणप्प० वा असच्चामोसमणप्प० वा, जइ सच्चमणप्पओगप० किं आरंभसच्चमणप्पयो० अणारंभसच्चमणप्पयोगपरि० सारंभसच्चमणप्पयोग० असारंभसच्चमण० समारंभसच्चमणप्पयोगपरि० असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणए ?, गोयमा ! आरंभसच्चमणप्पओगपरिणए वा जाव असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणए वा, जइ मोसमणप्पयोगपरिणए किं आरंभमोसमणप्पयोगपरिणए वा ? एवं जहा सच्चेणं तहा मोसेणवि, एवं सच्चामोसमणप्पओगपरिणएणवि, एवं असच्चामोसमणप्पयोगेणवि । जइ वइप्पयोगपरिणए किं सच्चवइप्पयोगपरिणए मोसवयप्पयोगपरिणए० ? एवं जहा मणप्पयोग-

परिणए तहा वयप्पयोगपरिणएवि जाव असमारंभवयप्पयोगपरिणए वा। जइ कायप्पयोगपरिणए किं ओरालियसरीरकायप्पयोगपरिणए ओरालियमीसासरीरकायप्पयो० वेउव्वियसरीरकायप्पयो० वेउव्वियमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए आहारगसरीरकायप्पओगपरिणए आहारकमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए कम्मासरीरकायप्पओगपरिणए ?, गोयमा! ओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए वा जाव कम्मासरीरकायप्पओगपरिणए वा, जइ ओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए किं एगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए एवं जाव पंचिंदियओरालिय जाव परि० ? गोयमा! एगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए वा बेंदिय- जाव परिणए वा जाव पंचिंदिय जाव परिणए वा, जइ एगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए किं पुढविक्काइयएगिंदिय जाव परिणए जाव वणस्सइकाइयएगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए वा ?, गोयमा! पुढविक्काइयएगिंदियपयोग जाव परिणए वा जाव वणस्सइकाइयएगिंदिय जाव परिणए वा, जइ पुढविकाइयएगिंदियओरालियसरीर जाव परिणए किं सुहुमपुढविकाइय जाव परिणए बायरपुढविक्काइयएगिंदिय जाव परिणए ?, गोयमा! सुहुमपुढविक्काइयएगिंदिय जाव परिणए वा बायरपुढविक्काइय जाव परिणए वा, जइ सुहुमपुढविकाइय जाव परिणए किं पज्जत्तसुहुमपुढवि जाव परिणए अपज्जत्तसुहुमपुढवी जाव परिणए ?, गोयमा! पज्जत्तसुहुमपुढविकाइय जाव परिणए वा अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइय जाव परिणए वा, एवं बादरोवि, एवं जाव वणस्सइकाइयाणं चउक्कओ भेदो, बेइंदियतेइंदियचउरिंदियाणं दुयओ भेदो पज्जत्तगा य

अपज्जत्तगा य। जइ पंचिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए किं तिरिक्खजोणियपंचिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए ?, गोयमा ! तिरिक्खजोणिय जाव परिणए वा मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए वा, जइ तिरिक्खजोणिय जाव परिणए किं जलचरतिरिक्खजोणिय जाव परिणए वा थलचर० खहचर०, एवं चउक्कओ भेदो जाव खहचराणं। जइ मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए किं संमुच्छिममणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए गब्भवक्कंतियमणुस्स जाव परिणए ?, गोयमा ! दोसुवि, जइ गब्भवक्कंतियमणुस्स जाव परिणए किं पज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए अपज्जत्तगब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरकायप्पयोगपरिणए ?, गोयमा ! पज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए वा अपज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए १। जइ ओरालियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए किं एगिंदियओरालियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए वेइंदियजावपरिणए जाव पंचेंदियओरालिय जाव परिणए ?, गोयमा ! एगिंदियओरालिय एवं जहा ओरालियसरीरकायप्पयोगपरिणएणं आलावगो भणिओ तहा ओरालियमीसासरीरकायप्पओगपरिणएणवि आलावगो भाणियव्वो, नवरं बायरवाउक्काइयगब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियगब्भवक्कंतियमणुस्साणं एएसि णं पज्जत्तापज्जत्तगाणं, सेसाणं अपज्जत्तगाणं २। जइ वेउव्वियसरीरकायप्पयोगपरिणए किं एगिंदियवेउव्वियसरीरकायप्पओगपरिणए जाव पंचिंदियवेउव्वियसरीर जाव परिणए ?, गोयमा ! एगिंदिय जाव परिणए वा पंचिंदिय जाव परिणए वा, जइ एगिंदिय जाव परिणए किं वाउ-

काइयएगिंदिय जाव परिणए अवाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए ?, गोयमा ! वाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए,
नो अवाउक्काइय जाव परिणए, एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे वेउव्वियसरीरं भणियं तहा
इहवि भाणियव्वं जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववातियकप्पातीयवेमाणियदेवपंचिंदियवेउव्वियसरीरकाय-
प्पओगपरिणए वा अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध०कायप्पयोगपरिणए वा ३। जइ वेउव्वियमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए
किं एगिंदियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए वा जाव पंचिंदियमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए वा ?, एवं जहा वेउ-
व्वियं तहा वेउव्वियमीसगंपि, नवरं देवनेरइयाणं अपज्जत्तगाणं, सेसाणं पज्जत्तगाणं तहेव जाव नो पज्जत्तसव्वट्ठसि-
द्धअणुत्तरो जाव पओग०, अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववातियदेवपंचिंदियवेउव्वियमीसासरीरकायप्पओगपरि-
णए ४। जइ आहारगसरीरकायप्पओगपरिणए किं मणुस्साहारगसरीरकायप्पओगपरिणए अमणुस्साहार-
ग जाव प०?, एवं जहा ओगाहणसंठाणे जाव इड्ढिपत्तअपमत्तसंजयसम्मद्दिट्ठिपज्जत्तगसंखेज्जवासाउय जाव परि-
णए, नो अणिड्ढिपत्तअपमत्तसंजयसम्मद्दिट्ठिपज्जत्तसंखेज्जवासाउय जाव प०। जइ आहारगमीससरीरकाय-
प्पयोगप० किं मणुस्साहारगमीसासरीर० ? एवं जहा आहारगं तहेव मीसगंपि निरवसेसं भाणियव्वं ६।
जइ कम्मासरीरकायप्पओगप० किं एगिंदियकम्मासरीरकायप्पओगप० जाव पंचिंदियकम्मासरीर जाव
प०?, गोयमा ! एगिंदियकम्मासरीरकायप्पओ० एवं जहा ओगाहणसंठाणे कम्मगस्स भेदो तहेव इहावि
जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियकम्मासरीरकायप्पयोगपरिणए अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध-

अणु० जाव परिणए वा ७ ॥ जइ मीसापरिणए किं मणमीसापरिणए वयमीसापरिणए कायमीसापरिणए ?, गोयमा ! मणमीसापरिणए वा वयमीसा० वा कायमीसापरिणए वा, जइ मणमीसापरिणए किं सच्चमणमीसापरिणए वा मोसमणमीसापरीणए वा जहा पओगपरिणए तहा मीसापरिणएवि भाणियव्वं निरवसेसं जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियकम्मासरीरगमीसापरिणए वा अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणु० जाव कम्मासरीरमीसापरिणए वा । जइ वीससापरिणए कि वन्नपरिणए गंधपरिणए रसपरिणए फासपरिणए संठाणपरिणए ?, गोयमा ! वन्नपरिणए वा गंधपरिणए वा रसपरिणए वा फासपरिणए वा संठाणपरिणए वा, जइ वन्नपरिणए किं कालवन्नपरिणए नील जाव सुक्किलवन्नपरिणए ?, गोयमा ! कालवन्नपरिणए जाव सुक्किलवन्नपरिणए, जइ गंधपरिणए किं सुब्भिगंधपरिणए दुब्भिगंधपरिणए ?, गोयमा ! सुब्भिगंधपरिणए वा दुब्भिगंधपरिणए वा, जइ रसपरिणए किं तित्तरसपरिणए ? ५, पुच्छा, गोयमा ! तित्तरसपरिणए वा जाव महुररसपरिणए वा जइ फासपरिणए किं कक्खडफासपरिणए जाव लुक्खफासपरिणए?, गोयमा ! कक्खडफासपरिणए वा जाव लुक्खफासपरिणए वा, जइ संठाणपरिणए पुच्छा, गोयमा ! परिमंडलसंठाणपरिणए वा जाव आययसंठाणपरिणए वा ॥ ( सूत्रं ३१२ ) ॥

'एगे'इत्यादि, 'मणपओगपरिणए'त्ति मनस्तया परिणतमित्यर्थः 'वइप्पयोगपरिणए'त्ति भाषाद्रव्यं काययोगेन गृहीत्वा वाग्योगेन निसृज्यमानं वाक्प्रयोगपरिणतमित्युच्यते 'कायप्पओपगरिणए'त्ति औदारिकादिकाययोगेन गृहीतमौदारिकादिवर्ग-

णाद्द्रव्यमौदारिकादिकायतया परिणतं कायप्रयोगपरिणतमित्युच्यते, 'सच्चमणे'त्यादि सद्भूतार्थचिन्तननिबन्धनस्य मनसः प्रयोगः सत्यमनःप्रयोग उच्यते, एवमन्येऽपि, नवरं मृषा–असद्भूतोऽर्थः सत्यमृषा–मिश्रो यथा पञ्चसु दारकेषु जातेषु दश दारका जाता इति, असत्यमृषा–सत्यमृषास्वरूपमतिक्रान्तो यथा देहीत्यादि, 'आरंभसच्चे'त्यादि, आरम्भो–जीवोपघातस्तद्विषयं सत्यमारम्भसत्यं तद्विषयो यो मनःप्रयोगस्तेन परिणतं यत्तत्तथा, एवमुत्तरत्रापि, नवरमनारम्भो–जीवानुपघातः 'सारंभ'त्ति संरम्भो–वधसङ्कल्पः समारम्भस्तु परिताप इति। 'ओरालिए'त्यादि, औदारिकशरीरमेव पुद्गलस्कन्धरूपत्वेनोपचीयमानत्वाद् काय औदारिकशरीरकायस्तस्य यः प्रयोगः औदारिकशरीरस्यवायः कायप्रयोगः स तथा, अयं च पर्याप्तकस्यैव वेदितव्यस्तेन यत् परिणतं तत्तथा, 'ओरालियमिस्सासरीरकायप्पयोगपरिणए'त्ति औदारिकमुत्पत्तिकालेऽसम्पूर्णं सत् मिश्रं कार्म्मणेनेति औदारिकमिश्रं तदेवौदारिकमिश्रकं तल्लक्षणं शरीरमौदारिकमिश्रकशरीरं तदेव कायस्तस्य यः प्रयोगः औदारिकमिश्रकशरीरस्य वा यः कायप्रयोगः स औदारिकमिश्रकशरीरकायप्रयोगस्तेन परिणतं यत्तत्तथा, अयं पुनरौदारिकमिश्रकशरीरकायप्रयोगोऽपर्याप्तकस्यैव वेदितव्यः, यत आह—"जोएण कम्मएणं आहारेई अणंतरं जीवो। तेण परं मीसेणं जाव सरीरस्स निप्फत्ती ॥ १ ॥" एवं तावत् कार्म्मणेनौदारिकशरीरस्य मिश्रता, उत्पत्तिमाश्रित्य तस्य प्रधानत्वात्, यदा पुनरौदारिकशरीरी वैक्रियलब्धिसंपन्नो मनुष्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः पर्याप्तबादरवायुकायिको वा वैक्रियं करोति तदा औदारिककाययोग एव वर्त्तमानः प्रदेशान् विक्षिप्य वैक्रियशरीरयोग्यान् पुद्गलानुपादाय यावद् वैक्रियशरीरपर्याप्त्या न पर्याप्तिं गच्छति तावद्वैक्रियेणौदारिकशरीरस्य मिश्रता, प्रारम्भकत्वेन तस्य प्रधानत्वात्, एवमाहारकेणाप्यौदारिकशरीरस्य मिश्रता वेदितव्येति, 'वेउव्वियसरीरकायप्पओगपरिणए'त्ति इह वैक्रियशरीरकायप्रयोगो वैक्रियपर्याप्तकस्येति।

'वेउव्वियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए'त्ति, इह वैक्रियमिश्रकशरीरकायप्रयोगो देवनारकेषूत्पद्यमानस्यापर्याप्तकस्य, मिश्रता चेह वैक्रियशरीरस्य कार्मणेनैव, लब्धिवैक्रियपरित्यागे त्वौदारिकप्रवेशाद्धायामौदारिकोपादानाय प्रवृत्तेर्वैक्रियप्राधान्यादौदारिकेणापि वैक्रियस्य मिश्रतेति । 'आहारगसरीरकायप्पयोगपरिणए'त्ति इहाहारकशरीरकायप्रयोग आहारकशरीरनिर्वृत्तौ सत्यां तदानीं तस्यैव प्रधानत्वात् । 'आहारगमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए'त्ति इहाहारकमिश्रशरीरकायप्रयोग आहारकस्यौदारिकेण मिश्रतायां, स चाहारकत्यागेनौदारिकग्रहणाभिमुखस्य, एतदुक्तं भवति–यदाऽऽहारकशरीरी भूत्वा कृतकार्यः पुनरप्यौदारिकं गृह्णाति तदाऽऽहारकस्य प्रधानत्वादौदारिकप्रवेशं प्रति व्यापारभावान्न परित्यजति यावत्सर्वथैवाहारकं तावदौदारिकेण सह मिश्रतेति, ननु तत्तेन सर्वथाऽमुक्तं पूर्वनिर्वर्त्तितं तिष्ठत्येव तत्कथं गृह्णाति ?, सत्यं, तिष्ठति तत् तथाऽप्यौदारिकशरीरोपादानार्थं प्रवृत्त इति गृह्णात्येवेत्युच्यत इति । 'कम्मासरीरकायप्पओगपरिणए'त्ति इह कार्म्मणशरीरकायप्रयोगो विग्रहे समुद्घातगतस्य च केवलिनस्तृतीयचतुर्थपञ्चमसमयेषु भवति, उक्तं च–"कार्म्मणशरीरयोगी चतुर्थके पञ्चमे तृतीये च"ति,एवं प्रज्ञापनाटीकानुसारेणौदारिकशरीरकायप्रयोगादीनां व्याख्या, शतकटीकाऽनुसारतः पुनर्मिश्रकायप्रयोगाणामेवं–औदारिकमिश्र औदारिक एवापरिपूर्णो मिश्र उच्यते, यथा गुडमिश्रं दधि न गुडतया नापि दधितया व्यपदिश्यते,तत् ताभ्यामपरिपूर्णत्वात्, एवमौदारिकं मिश्रं कार्मणेनैव नौदारिकतया नापि कार्म्मणतया व्यपदेष्टुं शक्यमपरिपूर्णत्वादिति तस्यौदारिकमिश्रव्यपदेशः, एवं वैक्रियाहारकमिश्रावपीति, नवरं 'बायरवाउक्काइए' इत्यादि, यथौदारिकशरीरकायप्रयोगपरिणते सूक्ष्मपृथिवीकायिकादि प्रतीत्यालापकोऽधीतस्तथौदारिकमिश्रशरीरकायप्रयोगपरिणतेऽपि वाच्यो, नवरमयं विशेषः–तत्र सर्वेऽपि सूक्ष्मपृथिवीकायिकादयः पर्याप्तापर्याप्तविशेषणा अधीता इह तु बादरवायुकायिका गर्भजपञ्चे-

न्द्रियतिर्यग्मनुष्याश्च पर्याप्तकापर्याप्तकविशेषणा अध्येतव्याः; शेषास्त्वपर्याप्तकविशेषणा एव, यतो बादरवायुकायिकादीनां पर्या-
प्तकावस्थायामपि वैक्रियारम्भणत औदारिकमिश्रशरीरकायप्रयोगो लभ्यते, शेषाणां पुनरपर्याप्तकावस्थायामेवेति। 'जहा ओगाह-
णसंठाणे'त्ति प्रज्ञापनायामेकविंशतितमपदे, तत्र चैवमिदं सूत्रं-'जइ वाउक्काइयएगिंदियवेउव्वियसरीरकायप्पयोगपरिणए किं
सुहुमवाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए बादरवाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए ?, गोयमा ! नो सुहुम जाव परिणए, बायर जाव
परिणए' इत्यादीति। 'एवं जहा ओगाहणसंठाणे'त्ति तत्र चैवमिदं सूत्रं-'गोयमा ! णो अमणुस्साहारगसरीरकायप्पओगपरिणए,
मणुस्साहारगसरीरकायप्पओगपरिणए'इत्यादि। 'एवं जहा ओगाहणसंठाणे कम्मगस्स भेओ'त्ति स चायं भेदः—बेइंदिय-
कम्मासरीरकायप्पओगपरिणए वा एवं तेइंदिय० चउरिंदिय०' इत्यादिरिति ॥ अथ द्रव्यद्वयं चिन्तयन्नाह—

दो भंते ! दव्वा किं पयोगपरिणया मीसापरिणया वीससापरिणया ?, गोयमा ! पओगपरिणया वा १
मीसापरिणया वा २ वीससापरिणया वा ३ अहवा एगे पओगपरिणए एगे मीसापरिणए ४ अह-
वेगे पओगप० एगे वीससापरि० ५ अहवा एगे मीसापरिणए एगे वीससापरिणए, एवं ६। जइ पओगपरि-
णया किं मणप्पयोगपरिणया वइप्पयोग० कायप्पयोगपरिणया ?, गोयमा ! मणप्पयो० वइप्पयोगप० काय-
प्पयोगपरिणया वा, अहवेगे मणप्पयोगप० एगे वयप्पयोगप०, अहवेगे मणप्पयोगपरिणए एगे कायप०, अहवेगे
वयप्पयोगप० एगे कायप्पओगपरि०, जइ मणप्पयोगप० किं सच्चमणप्पयोगप० ४ ?, गोयमा ! सच्चमणप्पयो-
गपरिणया वा जाव असच्चामोससमणप्पयोगप० १ अहवा एगे सच्चमणप्पयोगपरिणए एगे मोसमणप्पओगप-

रिणए १ अहवा एगे सच्चमणप्पओगप० एगे सच्चामोसमणप्पओगपरिणए २ अहवा एगे सच्चमणप्पयोगप-
रिणए एगे असच्चामोसमणप्पओगपरिणए ३ अहवा एगे मोसमणप्पयोगप० एगे सच्चामोसमणप्पयोगप० ४
अहवा एगे मोसमणप्पयोगप० एगे असच्चामोसमणप्पयोगप० ५ अहवा एगे सच्चामोसमणप्पओगप० एगे
असच्चामोसमणप्पओगप० ६। जइ सच्चमणप्पओगप० किं आरंभसच्चमणप्पयोगपरिणया जाव असमारंभसच्च-
मणप्पयोगप० ?, गोयमा! आरंभसच्चमणप्पयोगपरिणया वा जाव असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणया वा,
अहवा एगे आरंभसच्चमणप्पयोगप० एगे अणारंभसच्चमणप्पयोगप० एवं एएणं गमएणं दुयसंजोएणं नेयव्वं,
सव्वे संयोगा जत्थ जत्तिया उट्ठेंति ते भाणियव्वा जाव सव्वट्ठसिद्धगत्ति। जइ मीसाप० किं मणमीसापरि०
एवं मीसापरि० वि०। जइ वीससापरिणया किं वण्णपरिणया गंधप० एवं वीससापरिणयावि जाव अहवा एगे
चउरंससंठाणपरि० एगे आययसंठाणपरिणए वा॥ तिन्नि भंते! दव्वा किं पयोगपरिणया मीसाप० वीससाप० ?,
गोयमा! पयोगपरिणया वा मीसापरिणया वा वीससापरिणया वा १ अहवा एगे पयोगपरिणए दो मीसाप०
१ अहवेगे पयोगपरिणए दो वीससाप० २ अहवा दो पयोगपरिणया एगे मीससापरिणए ३ अहवा दो पयोग-
प० एगे वीससाप० ४ अहवा एगे मीसापरिणए दो वीससाप० ५ अहवा दो मीससाप० एगे वीससाप० ६
अहवा एगे पयोगप० एगे मीसापरि० एगे वीसासाप० ७। जइ पयोगप० किं मणप्पयोगपरिणया वइप्पयो-
गप० कायप्पयोगप० ?, गोयमा! मणप्पयोगपरिणया वा एवं एक्कगसंयोगो दुयासंयोगो तियासंयोगो

८ शतके
उद्देशः १
द्रव्यादि-
द्रव्येषु
प्रयोगः
सू०३१३

प्र०आ०३३६

भाणियव्वो, जइ मणप्पयोगपरि० किं सच्चमणप्पयोगपरिणया वा ४?, गोयमा! सच्चमणप्पयोगपरिणया वा
जाव असच्चामोसमणप्पयोगपरिणया वा ४, अहवा एगे सच्चमणप्पयोगपरिणए दो मोसमणप्पयोगपरिणया वा,
एवं दुयासंयोगो तियासंयोगो भाणियव्वो, एत्थवि तहेव जाव अहवा एगे तंससंठाणपरिणए वा एगे चउरं-
ससंठाणपरिणए वा एगे आययसंठाणपरिणए वा॥ चत्तारि भंते! दव्वा किं पओगपरिणया ३?, गोयमा! पयो-
गपरिणया वा मीसापरिणया वा वीससापरिणया वा, अहवा एगे पओगपरिणए तिन्नि मीसापरिणया १
अहवा एगे पओगपरिणए तिन्नि वीससापरिणया २ अहवा दो पयोगपरिणया दो मीसापरिणया ३ अहवा
दो पयोगपरिणया दो वीससापरिणया ४ अहवा तिन्नि पओगपरिणया एगे मीससापरिणए ५ अहवा तिन्नि
पओगपरिणया एगे वीससापरिणए ६ अहवा एगे मीससापरिणए तिन्नि वीससापरिणया ७ अहवा दो
मीसापरिणया दो वीससापरिणया ८ अहवा तिन्नि मीसापरिणया एगे वीससापरिणए ९ अहवा एगे पओगपरि-
णए एगे मीसापरिणए दो वीससापरिणया १ अहवा एगे पयोगपरिणए दो मीसापरिणया एगे वीससापरिणए २
अहवा दो पयोगपरिणया एगे मीसापरिणए एगे वीससापरिणए ३। जइ पयोगपरिणया किं मणप्पयोगपरिणया
३?, एवं एएणं कमेणं पंच छ सत्त जाव दस संखेज्जा असंखेज्जा अणंता य दव्वा भाणियव्वा (एक्कगसंजोगेण)
दुयासंजोएणं तियासंजोएणं जाव दससंजोएणं एक्कारसंजोएणं बारससंजोएणं उवजुंजिऊणं जत्थ जत्तिया संजोगा
उट्ठेंतिते सव्वे भाणियव्वा, एए पुण जहा नवमसए पवेसणए भणिहामो तहा उवजुंजिऊण भाणियव्वा जाव असं

खेज्जा अणंता एवं चेव, नवरं एक्कं पदं अब्भहियं, जाव अहवा अणंता परिमंडलसंठाणपरिणया जाव अणंता आययसंठाणपरिणया ॥ ( सूत्रं ३१३ ) ॥

'दो भंते!' इत्यादि, इह प्रयोगपरिणतादिपदत्रये एकत्वे त्रयो विकल्पाः, द्विकयोगेऽपि त्रय एवेत्येवं षट्, एवं मनःप्रयोगादित्रयेऽपि, सत्यमनःप्रयोगपरिणतादीनि तु चत्वारि पदानि, तेष्वेकत्वे चत्वारि द्विकयोगे तु षट्, एवं सर्वेऽपि दश, आरम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणतादीनि च षट् पदानि, तेष्वेकत्वे षड्, द्विकयोगे तु पञ्चदश, सर्वेऽप्येकविंशतिः ६, ( एकत्वे १-२-३-४-५-६ ॥ द्वित्वे १५ ।

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| १-२ | २-३ | ३-४ | ४-५ | ५-६ |
| १-३ | २-४ | ३-५ | ४-६ | (१५) |
| १-४ | २-५ | ३-६ | | |
| १-५ | २-६ | | | |
| १-६ | | | | |

सूत्रे च 'अहवा एगे आरंभसच्चमणप्पओगपरिणए' इत्यादिनेह द्विकयोगे प्रथम एव भङ्गको दर्शितः, शेषांस्तदन्यपदसम्भवांश्चातिदेशेन पुनर्दर्शयतोक्तम्—एवं एएणं गमेणं' इत्यादि एवमेतेन गमेनारम्भसत्यमनःप्रयोगादिपदप्रदर्शितेन द्विकसंयोगेन नेतव्यं समस्तं द्रव्यद्वयसूत्रं, द्विकसंयोगस्य चैकत्वविकल्पाभिधानपूर्वकत्वादेकत्वविकल्पैश्चेति दृश्यं, तत्र च यत्रारम्भसत्यमनःप्रयोगादिपदसमूहे यावन्तो द्विकसंयोगा उत्तिष्ठन्ते सर्वे ते तत्र भणितव्याः, तत्र चारम्भसत्यमनःप्रयोगाः दर्शिता एव, आरम्भादिपदषट्कविशेषितेषु पुनरित्थमेव त्रिषु मृषामनःप्रयोगादिषु चतुर्षु च सत्यवाक्प्रयोगादिषु तु प्रत्येकमेकत्वे षड् विकल्पाः, द्विकसंयोगे तु पञ्चदशेत्येवं प्रत्येकमेवमेव सर्वेष्वप्येकविंशतिः, औदारिकशरीरकायप्रयोगादिषु तु सप्तसु पदेष्वेकत्वे सप्त द्विकयोगे त्वेकविंशतिरित्येवमष्टाविंशतिरिति ( एकत्वे १-२-३-४-५-६-७ द्वित्वे २१, १२-१३-१४-१५-१६-१७-२३-२४-२५-२६-२७-३४-३५-३६-३७-४५-४६-४७-५६-५७-६७

एवमेकेन्द्रियादिपृथिव्यादिपदप्रभृतिभिः पूर्वोक्तक्रमेणौदारिकादिकायप्रयोगपरिणतद्रव्यद्वयं प्रपञ्चनीयं, कियद्दूरं यावत्? इत्याह–'जाव सव्वट्ठसिद्धग'त्ति, एतच्चैवं—'जाव सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयकप्पातीतगवेमाणियदेवपंचेंदियकम्मासरीरकायप्पओगपरिणया किं पज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध जाव परिणया अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध जाव परिणया वा?, गोयमा! पज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध जाव परिणया वा अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध जावपरिणया वा, अहवा एगे पज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध जाव परिणए एगे अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध जाव परिणए'त्ति, 'एवं वीससापरिणयावि'त्ति एवमिति–प्रयोगपरिणतद्रव्यद्वयवत् प्रत्येकविकल्पैर्द्विकसंयोगैश्च विश्रसापरिणते अपि द्रव्ये वर्णगन्धरसस्पर्शसंस्थानेषु पञ्चादिभेदेषु वाच्ये, कियद्दूरं यावत्? इत्याह—'जाव अहवेगे' इत्यादि, अयं च पञ्चभेदसंस्थानस्य दशानां द्विकसंयोगानां दशम इति ॥ अथ द्रव्यत्रयं चिन्तयन्नाह—'तिन्नी'त्यादि, इह प्रयोगपरिणतादिपदत्रये एकत्वे त्रयो विकल्पाः, द्विकसंयोगे तु षट्, कथम्?, आद्यद्वयैकत्वे शेषयोः क्रमेण द्वित्वे द्वौ तथाऽऽद्यस्य द्वित्वे शेषयोः क्रमेणैकत्वेऽन्यौ द्वौ ४ तथा द्वितीयस्यैकत्वे तृतीयस्य च द्वित्वेऽन्यः ५ तथा द्वितीयस्य द्वित्वे तृतीयस्य चैकत्वेऽन्यः ६ इत्येवं षट्, त्रिकयोगे त्वेक एवेत्येवं सर्वे दश, एवं मनःप्रयोगादिपदत्रयेऽपि, अत एवाह—'एवमेक्कगसंजोगो'इत्यादि, सत्यमनःप्रयोगादीनि तु चत्वारि पदानीत्यत एकत्वे चत्वारो द्विकसंयोगे तु द्वादश, कथम्?, आद्यस्यैकत्वेन शेषाणां त्रयाणां क्रमेणानेकत्वेन त्रयो लब्धाः, पुनरन्ये त्रय आद्यस्यानेकत्वेन शेषाणां त्रयाणां क्रमेणैकत्वे ६, तथा द्वितीयस्यैकत्वेन शेषयोः क्रमेणानेकत्वेन द्वौ, पुनर्द्वितीयस्यानेकत्वेन शेषयोः क्रमेणैवैकत्वेन द्वावेव तृतीयचतुर्थयोरेकत्वानेकत्वाभ्यामेकः पुनर्विपर्ययेणैक इत्येवं द्वादश, त्रिकयोगे तु चत्वार इत्येवं सर्वेऽपि विंशतिरिति। सूत्रे तु कांश्चिदुपदर्श्य शेषानतिदेशत आह–'एवं दुयासंजोगो'इत्यादि, 'एत्थवि तहेव'त्ति अत्रापि द्रव्यत्रयाधिकारे तथैव वाच्यं सूत्रं यथा द्रव्यद्वयाधि-

कारे उक्तं, तत्र च मनोवाक्कायप्रभेदतो यः प्रयोगपरिणामो मिश्रतापरिणामो वर्णादिभेदतश्च विश्रसापरिणाम उक्तः स इहापि वाच्य इति भावः, किमन्तं तत्सूत्रं वाच्यम्? इत्याह–'जावे'त्यादि, इह च परिमण्डलादीनि पञ्च पदानि तेषु चैकत्वे पञ्च विकल्पाः, द्विकसंयोगे तु विंशतिः, कथम्?, आद्यस्यैकत्वे शेषाणां च क्रमेणानेकत्वे तथाऽऽद्यस्यानेकत्वे शेषाणां तु क्रमेणैकत्वे अष्टौ, एवं द्वितीयस्यैकत्वेऽनेकत्वे च शेषत्रयस्य चानेकत्वे एकत्वे च षट्, तथा तृतीयस्यैकत्वेऽनेकत्वे च द्वयोश्चानेकत्वे एकत्वे च चत्वारः,तथा चतुर्थस्यैकत्वेऽनेकत्वे च पञ्चमस्य चानेकत्वे एकत्वे च द्वावित्येवं सर्वेऽपि विंशतिः, त्रिकयोगे तु दश, अत्र च 'अहवा एगे तंससंठाण'-इत्यादिना त्रिकयोगानां दशमो दर्शित इति । अथ द्रव्यचतुष्कमाश्रित्याह––'चत्तारि भंते !' इत्यादि, इह प्रयोगपरिणतादित्रये एकत्वे त्रयो, द्विकसंयोगे तु नव, कथम्?, आद्यस्यैकत्वे द्वयोश्च क्रमेण त्रित्वे द्वौ, तथाऽऽद्यस्य द्वित्वे द्वयोरपि क्रमेणैव द्वित्वेऽन्यौ द्वौ, तथाऽऽद्यस्य त्रित्वे द्वयोश्च क्रमेणैवैकत्वेऽन्यौ द्वौ, तथा द्वितीयस्यैकत्वेऽन्यस्य त्रित्वे तथा द्वयोरपि द्वित्वे तथा द्वितीयस्य त्रित्वेऽन्यस्य चैकत्वे त्रयोऽन्ये इत्येवं सर्वेऽपि नव, त्रिकयोगे तु त्रय एव भवन्तीत्येवं सर्वेऽपि पञ्चदश इति । 'जइ पओगपरिणया किं मणप्पओगे'त्यादिना चोक्तशेषं द्रव्यचतुष्कप्रकरणमुपलक्षितं, तच्च पूर्वोक्तानुसारेण संस्थानसूत्रान्तमुचितमुचितभङ्गोपेतं समस्तमध्येयमिति । अथ पञ्चादिद्रव्यप्रकरणाण्यतिदेशतो दर्शयन्नाह––'एवं एएण'मित्यादि, एवं चाभिलापः––'पंच भंते ! दव्वा किं पओगपरिणया ३?, गोयमा ! पओगपरिणया ३, अहवा एगे पओगपरिणए चत्तारि मीसापरिणया' इत्यादि, इह च द्विकसंयोगे विकल्पा द्वादश, कथम्?, एकं चत्वारि च १ द्वे द्वे त्रीणि च २ त्रीणि द्वे च ३ चत्वार्येकं च ४ इत्येवं चत्वारो विकल्पाः, द्रव्यपञ्चकमाश्रित्यैकत्र द्विकसंयोगे पदत्रयस्य त्रयो द्विकसंयोगास्ते च चतुर्भिर्गुणिता द्वादशेति, त्रिकयोगे तु षट्, कथम्?,

८ शतके
उद्देशः १
द्व्यादि-
द्रव्येषु
प्रयोगः
सू०३१३
प्र०आ०३३८

त्रीण्येकमेकं च १ एकं त्रीण्येकं च २ एकमेकं त्रीणि च ३ द्वे द्वे एकं च ४ द्वे एकं द्वे च ५ एकं द्वे द्वे च ६ इत्येवं षट्, 'जाव दससंजोएणं'ति इह यावत्करणाच्चतुष्कादिसंयोगाः सूचिताः, तत्र च द्रव्यपञ्चकापेक्षया सत्यमनःप्रयोगादिषु चतुर्षु पदेषु द्विकत्रिकचतुष्कसंयोगा भवन्ति, तत्र च द्विकसंयोगाश्चतुर्विंशतिः २४, कथम्?, चतुर्णां पदानां षट् द्विकसंयोगाः, तत्र चैकैकस्मिन् पूर्वोक्तक्रमेण चत्वारो विकल्पाः, षण्णां चतुर्भिर्गुणने च चतुर्विंशतिरिति, त्रिकसंयोगा अपि चतुर्विंशतिः, कथम् ?, चतुर्णां पदानां त्रिकसंयोगाश्चत्वारः, एकैकस्मिंश्च पूर्वोक्तक्रमेण षड् विकल्पाः, चतुर्णां च षड्भिर्गुणने चतुर्विंशतिरिति, चतुष्कसंयोगे तु चत्वारः, कथम्?, आदौ द्वे त्रिषु चैकैकं १ तथा द्वितीयस्थाने द्वे शेषेषु चैकैकं २ तथा तृतीये स्थाने द्वे शेषेषु चैकैकं ३ तथा चतुर्थे द्वे शेषेषु चैकैकम् ४ इत्येवं चत्वार इति, एकेन्द्रियादिषु तु पञ्चसु पदेषु द्विकत्रिकचतुष्कपञ्चकसंयोगा भवन्ति, तत्र च द्विकसंयोगाश्चत्वारिंशत्, कथम्?, पञ्चानां पदानां दश द्विकसंयोगा एकैकस्मिंश्च द्विकसंयोगे पूर्वोक्तक्रमेण चत्वारो विकल्पाः, दशानां च चतुर्भिर्गुणने चत्वारिंशदिति, त्रिकसंयोगे तु षष्टिः, कथम् ?, पञ्चानां पदानां दश द्विकसंयोगाः, एकैकस्मिंश्च द्विकसंयोगे पूर्वोक्तक्रमेण षड् विकल्पाः, दशानां च षड्भिर्गुणने षष्टिरिति, चतुष्कसंयोगास्तु विंशतिः, कथम्?, पञ्चानां पदानां तु चतुष्कसंयोगे पञ्च विकल्पाः, एकैकस्मिंश्च पूर्वोक्तक्रमेण चत्वारो भङ्गाः, पञ्चानां चतुर्भिर्गुणने विंशतिरिति, पञ्चकसंयोगे त्वेक एवेति, एवं षट्कादिसंयोगा अपि वाच्याः, नवरं षट्कसंयोग आरम्भसत्यमनःप्रयोगादिपदान्याश्रित्य सप्तकसंयोगस्त्वौदारिकादिकायप्रयोगमाश्रित्य अष्टकसंयोगस्तु व्यन्तरभेदान् नवकसंयोगस्तु ग्रैवेयकभेदान् दशकसंयोगस्तु भवनपतिभेदानाश्रित्य वैक्रियशरीरकायप्रयोगापेक्षया समवसेयः, एकादशसंयोगस्तु सूत्रे नोक्तः, पूर्वोक्तपदेषु तस्यासम्भवात्, द्वादशसंयोगस्तु कल्पोपपन्नदेवभेदानाश्रित्य वैक्रियशरीरकायप्रयोगापेक्षयैवेति । 'पवेसण'त्ति नवमशतक-

सत्कतृतीयोद्देशके गाङ्गेयाभिधानानगारकृतनरकादिगतप्रवेशनविचारे, कियन्ति तदनुसारेण द्रव्याणि वाच्यानि ? इत्याह—'जाव असंखेज्जे'त्ति असङ्ख्यातान्तनारकादिवक्तव्यताश्रयं हि तत्सूत्रम्, इह तु यो विशेषस्तमाह-'अणंता'इत्यादि, एतदेवाभिलापतो दर्शयन्नाह—'जाव अणंते'इत्यादि ॥ अथैतेषामेवाल्पबहुत्वं चिन्तयन्नाह—

एएसि णं भंते ! पोग्गलाणं पयोगपरिणयाणं मीसापरिणयाणं वीससापरिणयाण य कयरेरहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा पोग्गला पयोगपरिणया, मीसापरिणया अणंतगुणा, वीससा-परिणया अणन्तगुणा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥(सूत्रं ३१४)॥ अट्ठमसयस्स पढमो उद्देसो सम्मत्तो ॥८-१॥

'एएसि णं'मित्यादि, 'सव्वत्थोवा पुग्गला पओगपरिणय'त्ति कायादिरूपतया, जीवपुद्गलसम्बन्धकालस्य स्तोकत्वात्, 'मीसापरिणया अणंतगुण'त्ति कायादिप्रयोगपरिणतेभ्यः सकाशान्मिश्रकपरिणता अनन्तगुणाः, यतः प्रयोगकृतमाकारमपरित्यजन्तो विश्रसया ये परिणामान्तरमुपागता मुक्तकडेवराद्यवयवरूपास्तेऽनन्तानन्ताः, विश्रसापरिणतास्तु तेभ्योऽप्यनन्तगुणाः, परमाण्वादीनां जीवाग्रहणप्रायोग्याणामप्यनन्तत्वादिति ॥ अष्टमशते प्रथमः ॥ ८-१ ॥

प्रथमे पुद्गलपरिणाम उक्तो, द्वितीये तु स एवाशीविषद्वारेणोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्यादिसूत्रम्—

कतिविहा णं भंते ! आसीविसा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा आसीविसा पन्नत्ता, तंजहा—जातिआसीविसा य कम्मआसीविसा य, जाइआसीविसा णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! चउव्विहा पन्नत्ता,

तंजहा—विच्छुयजातिआसीविसे मंडुक्कजाइआसीविसे उरगजातिआसीविसे मणुस्सजातिआसीविसे, विच्छुयजातिआसीविसस्स णं भंते ! केवतिए विसए पन्नत्ते ?, गोयमा ! पभू णं विच्छुयजातिआसीविसे अद्धभरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं विसट्टमाणं पकरेत्तए, विसए से विसट्ठयाए, नो चेव णं संपत्तीए करेंसु वा करेंति वा करिस्संति वा १, मंडुक्कजातिआसीविसपुच्छा, गोयमा ! पभू णं मंडुक्कजातिआसीविसे भरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं सेसं तं चेव जाव करेस्संति वा २, एवं उरगजातिआसीविसस्सवि, नवरं जंबुद्दीवप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं सेसं तं चेव जाव करेस्संति वा ३, मणुस्सजातिआसीविसस्सवि एवं चेव, नवरं समयखेत्तप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेण विसपरिगयं सेसं तं चेव जाव करेस्संति वा ४। जइ कम्मआसीविसे किं नेरइयकम्मासीविसे तिरिक्खजोणियकम्मआसीविसे मणुस्सकम्मआसीविसे देवकम्मासीविसे ?, गोयमा ! नो नेरइयकम्मासीविसे, तिरिक्खजोणियकम्मासीविसेवि मणुस्सकम्मा० देवकम्मासी०, जइ तिरिक्खजोणियकम्मासीविसे किं एगिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे ?, गोयमा ! नो एगिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे जाव नो चउरिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, जइ पंचिंदियतिरिक्खजोणियजावकम्मासीविसे किं संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणियजावकम्मासीविसे गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे ?, एवं जहा वेउव्वियसरीरस्स भेदो जाव पज्जत्तासंखेज्जवासाउयगब्भवक्कंतियपंचिंदियति-

रिक्खजोणियकम्मासीविसे, नो अपज्जत्तासंखेज्जवासाउयजावकम्मासीविसे। जइ मणुस्सकम्मासीविसे किं संमुच्छिममणुस्सकम्मासीविसे गब्भवक्कंतियमणुस्सकम्मासीविसे ?, गोयमा ! णो संमुच्छिममणुस्सकम्मासीविसे, गब्भवक्कंतियमणुस्सकम्मासीविसे, एवं जहा वेउव्वियसरीरं जाव पज्जत्तासंखेज्जवासाउयकम्मभूमगगब्भवक्कंतियमणूसकम्मासीविसे, नो अपज्जत्ता जाव कम्मासीविसे। जइ देवकम्मासीविसे किं भवणवासीदेवकम्मासीविसे जाव वेमाणियदेवकम्मासीविसे ?, गोयमा ! भवणवासीदेवकम्मासीविसे वाणमंतर० जोतिसिय० वेमाणियदेवकम्मासीविसे, जइ भवणवासिदेवकम्मासीविसे से किं असुरकुमारभवणवासिदेवकम्मासीविसे जाव थणियकुमार जाव कम्मासीविसे ?, गोयमा ! असुरकुमारभवणवासिदेवकम्मासीविसेवि जाव थणियकुमार०आसीविसेवि, जइ असुरकुमार जाव कम्मासीविसे किं पज्जत्तअसुरकुमार जाव कम्मासीविसे अपज्जत्तअसुरकुमारभवणवासिकम्मासीविसे ?, गोयमा ! नो पज्जत्तअसुरकुमार जाव कम्मासीविसे अपज्जत्तअसुरकुमारभवणवासि जाव कम्मासीविसे, एवं थणियकुमाराणं, जइ वाणमंतरदेवकम्मासीविसे किं पिसायवाणमंतर० एवं सव्वेसिपि अपजत्तगाणं, जोइसियाणं सव्वेसिं अपज्जत्तगाणं, जइ वेमाणियदेवकम्मासीविसे किं कप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे कप्पातीयवेमाणियदेवकम्मासीविसे ?, गोयमा ! कप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे नो कप्पातीयवेमाणियदेवकम्मासीविसे, जइ कप्पोवगवेमाणियदेव कम्मासीविसे किं सोहम्मकप्पोव० जाव कम्मासीविसे अच्चुयकप्पोवग जाव कम्मासीविसे ?, गोयमा ! सोहम्मकप्पोवग-

वेमाणियदेवकम्मासीविसेवि जाव सहस्सारकप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसेवि, नो आणयकप्पोवग जाव नो अच्चुयकप्पोवगवेमाणियदेव०, जइ सोहम्मकप्पोवग जाव कम्मासीविसे किं पज्जत्तसोहम्मकप्पोवगवेमाणिय० अपज्जत्तगसोहम्मग०?, गोयमा! नो पज्जत्तसोहम्मकप्पोवगवेमाणिय०, अपज्जत्तसोहम्मकप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे, एवं जाव नो पज्जत्तसहस्सारकप्पोवगवेमाणिय जाव कम्मासीविसे, अपज्जत्तसहस्सारकप्पोवगजावकम्मासीविसे ॥ (सूत्रं ३१५) ॥

'कइविहे'त्यादि, 'आसीविस'त्ति 'आशीविषाः' दंष्ट्राविषाः 'जाइआसीविस'त्ति जात्या-जन्मनाऽऽशीविषा जात्याशीविषाः 'कम्मआसीविस'त्ति कर्म्मणा-क्रियया शापादिनोपघातकरणेनाशीविषाः कर्माशीविषाः, तत्र पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च कर्माशीविषाः पर्याप्तका एव, एते हि तपश्चरणानुष्ठानतोऽन्यतो वा गुणतः खल्वाशीविषा भवन्ति, शापप्रदानेनैव व्यापादयन्तीत्यर्थः, एते चाशीविषलब्धिस्वभावात् सहस्रारान्तदेवेष्वेवोत्पद्यन्ते, देवास्त्वेत एव ये देवत्वेनोत्पन्नास्तेऽपर्याप्तकावस्थायामनुभूतभावतया कर्म्माशीविषा इति, उक्तञ्च शब्दार्थभेदसम्भवादि भाष्यकारेण—"आसी दाढा तग्गयमहाविसाऽऽसीविसा दुविहभेया। ते कम्मजाइभेएण णेगहा चउविहविगप्पा ॥ १ ॥" 'केवइए'त्ति कियान् 'विसए'त्ति गोचरो विषयस्येति गम्यम् 'अद्धभरहप्पमाणमेत्तं'ति अर्द्धभरतस्य यत् प्रमाणं-सातिरेकत्रिपष्ट्यधिकयोजनशतद्वयलक्षणं तदेव मात्रा-प्रमाणं यस्याः सा तथा तां 'बोंदिं'ति तनुं 'विसेणं'ति विषेण स्वकीयाशीप्रभवेण करणभूतेन 'विसपरिगयं'ति विषं भावप्रधानत्वान्निर्देशस्य विषतां परिगता-प्राप्ता विषपरिगताऽतस्तास्, अत एव 'विसट्टमाणिं'ति विकसन्तीं-'करेत्तए'त्ति कर्तुं, 'विसए से'त्ति गोचरोऽसौ, अथवा 'से'तस्य वृश्चिकस्य 'विसट्ठयाए'-

[illegible] विषयमात्रं-विषयस्य गत्यां वा, 'नो चेव'त्ति नैवेत्यर्थः 'संपत्तीए'त्ति संपत्त्या पुनः-
[illegible] 'करिंसु'त्ति अकार्षुरिति इति यावत्. इह चैकवचनप्रक्रमेऽपि बहुवचननिर्देशो वृश्चिकादीनां बहु-
त्वख्यापनार्थः, [illegible] त्रिकालनिर्देशश्चैषां त्रैकालिकत्वज्ञापनार्थः, 'समयखेत्त'त्ति 'समयक्षेत्रं' मनुष्य-
क्षेत्रं [illegible] यथा वैक्रिये भणितो जीवभेदो भणितस्तथेहापि वाच्योऽस्येतिरर्थः, स चायं-
गोयमा! नो संमुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, जइ गब्भवक्कंतिय-
पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे किं संखेज्जवासाउयगब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे असंखेज्जवासाउय
जाव कम्मासीविसे?, गोयमा! संखेज्जवासाउय जाव कम्मासीविसे, नो असंखेज्जवासाउय जाव कम्मासीविसे, जइ संखेज्ज जाव
कम्मासीविसे किं पज्जत्तसंखेज्ज जाव कम्मासीविसे अपज्जत्तसंखेज्ज जाव कम्मासीविसे?, गोयमा! शेषं लिखितमेवास्ति॥ एतच्चोक्तं
वस्तु छद्मस्थो न जानाति, अन्यान्यपि कानिचिद्वस्तूनि कश्चिन्न जानातीति दर्शयन्नाह—

दस ठाणाइं छउमत्थे सव्वभावेणं न जाणइ न पासइ, तंजहा-धम्मत्थिकायं १ अधम्मत्थिकायं २ आगा-सत्थिकायं ३ जीवं असरीरपडिबद्धं ४ परमाणुपोग्गलं ५ सद्दं ६ गंधं ७ वातं ८ अयं जिणे भविस्सइ वा ण वा भविस्सइ ९ अयं सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्सति वा न वा करेस्सइ १०॥ एयाणि चेव उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली सव्वभावेणं जाणइ पासइ, तंजहा-धम्मत्थिकायं जाव करेस्सति वा न वा करेस्सति (सूत्रं ३१६)॥

८ शतके उद्देशः २ आशीविषाधिकारः सू० ३१६

'दसे'त्यादि 'स्थानानि' वस्तूनि गुणपर्यायाश्रितत्वात्, छद्मस्थ इहावध्याद्यतिशयविकलो गृह्यते, अन्यथाऽमूर्त्तत्वेन धर्मास्तिकायादीनजानन्नपि परमाण्वादि जानात्येवासौ, मूर्त्तत्वात्तस्य, समस्तमूर्त्तविषयत्वाच्चावधिविशेषस्य । अथ सर्वभावेनेत्युक्तं, ततश्च तत् कथञ्चिज्जानन्नप्यनन्तपर्यायतया न जानातीति, सत्यं, केवलमेवं दशेति सङ्ख्यानियमो व्यर्थः स्यात्, घटादीनां सुबहूनामर्थानामकेवलिना सर्वपर्यायतया ज्ञातुमशक्यत्वात्, सर्वभावेन च–साक्षात्कारेण, चक्षुःप्रत्यक्षेणेति हृदयं, श्रुतज्ञानादिना त्वसाक्षात्कारेण जानात्यपि, 'जीवं असरीरपडिबद्धं'ति देहविमुक्तं, सिद्धमित्यर्थः, 'परमाणुपुग्गलं'ति परमाणुश्चासौ पुद्गलश्चेति, उपलक्षणमेतत् तेन द्व्यणुकादिकमपि कश्चिन्न जानातीति, अयमिति–प्रत्यक्षः कोऽपि प्राणी जिनो–वीतरागो भविष्यति न वा भविष्यतीति नवमम् ९ 'अय'मित्यादि च दशमम् ॥ उक्तव्यतिरेकमाह—'एयाणी'त्यादि, 'सव्वभावेणं जाणइ'त्ति सर्वभावेन–साक्षात्कारेण जानाति केवलज्ञानेनेति हृदयम् ॥ जानातीत्युक्तमतो ज्ञानसूत्रम्—

कतिविहे णं भंते ! नाणे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे नाणे पन्नत्ते, तंजहा–आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे ओहिनाणे मणपज्जवनाणे केवलनाणे, से किं तं आभिणिबोहियनाणे ?, आभिणिबोहियनाणे चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा–उग्गहो ईहा अवाओ धारणा, एवं जहा रायप्पसेणइए णाणाणं भेदो तहेव इहवि भाणियव्वो जाव सेत्तं केवलनाणे ॥ अन्नाणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तंजहा–मइअन्नाणे सुयअन्नाणे विभंगन्नाणे । से किं तं मइअन्नाणे ?, २ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–उग्गहो जाव धारणा । से किं तं उग्गहे ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–अत्थोग्गहे य वंजणोग्गहे य, एवं जहेव आभिणि-

बोहियनाणं तहेव, नवरं एगट्ठियवज्जं जाव नोइंदियधारणा, सेत्तं धारणा, सेत्तं मइअन्नाणे। से किं तं सुयअन्नाणे?, २ जं इमं अन्नाणिएहिं मिच्छदिट्ठिएहिं जहा नंदीए जाव चत्तारि वेदा संगोवंगा, सेत्तं सुयअन्नाणे। से किं तं विभंगनाणे?, २ अणेगविहे पण्णत्ते, तंजहा–गामसंठिए नगरसंठिए जाव संनिवेससंठिए दीवसंठिए समुद्दसंठिए वाससंठिए वासहरसंठिए पव्वयसंठिए रुक्खसंठिए थूभसंठिए हयसंठिए गयसंठिए नरसंठिए किंनरसंठिए किंपुरिससंठिए महोरगगंधव्वसंठिए उसभसंठिए पसुपसयविहगवानरणाणासंठाणसंठिए पण्णत्ते॥ जीवा णं भंते! किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! जीवा नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते अत्थेगतिया दुन्नाणी अत्थेगतिया तिन्नाणी अत्थेगतिया चउनाणी अत्थेगतिया एगनाणी, जे दुन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी य सुयनाणी य, जे तिन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी अहवा आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी मणपज्जवनाणी, जे चउनाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी मणपज्जवनाणी, जे एगनाणी ते नियमा केवलनाणी, जे अन्नाणी ते अत्थेगतिया दुअन्नाणी अत्थेगतिया तिअन्नाणी, जे दुअन्नाणी ते मइअन्नाणी य सुयअन्नाणी य, जे तियअन्नाणी ते मइअन्नाणी सुयअन्नाणी विभंगनाणी। नेरइया णं भंते! किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते नियमा तिन्नाणी, तंजहा–आभिणिबोहि० सुयना० ओहिना०, जे अन्नाणी ते अत्थेगतिया दुअन्नाणी अत्थेगतिया तिअन्नाणी, एवं तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए। असुरकुमारा णं भंते! किं नाणी अन्नाणी?, जहेव नेरइया

तहेव तिन्नि नाणाणि नियमा, तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए, एवं जाव थणियकु० । पुढविक्काइया णं भंते ! किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नो नाणी, अन्नाणी, जे अन्नाणी ते नियमा दुअन्नाणी-मइअन्नाणी य सुयअन्ना०, एवं जाव वणस्सइका० । बेइंदियाणं पुच्छा, गोयमा ! णाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते नियमा दुन्नाणी, तंजहा-आभिणिबोहियनाणी य सुयनाणी य, जे अन्नाणी ते नियमा दुअन्नाणी, तं०आभिणिबोहियअन्नाणी सुयअन्नाणी, एवं तेइंदियचउरिंदियावि. पंचिंदियतिरिक्खजो० पुच्छा, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते अत्थे० दुन्नाणी, अत्थे० तिन्ना०, एवं तिन्नि नाणाणि तिन्नि अन्नाणाणि य भयणाए । मणुस्सा जहा जीवा तहेव पंच नाणाणि तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए । वाणमंत० जहा ने०, जोइसियवेमाणियाणं तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा नियमा । सिद्धा णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! णाणी, नो अन्नाणी, नियमा एगनाणी केवलनाणी ( सूत्रं ३१७ ) ॥

तत्र च 'आभिणिबोहियनाणे'त्ति अर्थाभिमुखोऽविपर्ययरूपत्वात् नियतोऽसंशयरूपत्वाद् बोधः-संवेदनमभिनिबोधः स एव स्वार्थिकेकप्रत्ययोपादानादाभिनिबोधिकं, ज्ञातिर्ज्ञायते वाऽनेनेति ज्ञानम्, आभिनिबोधिकं च तज्ज्ञानं चेति आभिनिबोधिकज्ञानम्-इन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तो बोध इति । 'सुयनाणे'त्ति श्रूयते तदिति श्रुतं-शब्दः स एव ज्ञानं भावश्रुतकारणत्वात् कारणे कार्योपचारात् श्रुतज्ञानं, श्रुताद्वा-शब्दात् ज्ञानं श्रुतज्ञानम्-इन्द्रियमनोनिमित्तः श्रुतग्रन्थानुसारी बोध इति । 'ओहिणाणे'त्ति अवधीयते-अधोऽधो विस्तृतं वस्तु परिच्छिद्यतेऽनेनेत्यवधिः स एव ज्ञानम् अवधिना वा-मर्यादया मूर्त्तद्रव्याण्येव जानाति नेतराणीति व्यवस्थया ज्ञान-

मवधिज्ञानं 'मणपज्जवणाणे'त्ति मनसो-मन्यमानमनोद्रव्याणां पर्यवः-परिच्छेदो मनःपर्यवः स एव ज्ञानं मनःपर्यवज्ञानं मनःपर्यायाणां वा-तदवस्थाविशेषाणां ज्ञानं मनःपर्यायज्ञानम् । 'केवलणाणे'त्ति केवलमेकं मत्यादिज्ञाननिरपेक्षत्वात् शुद्धं वा आवरणमलकलङ्करहितत्वात् सकलं वा-तत्प्रथमतयैवाशेषतदावरणाभावतः सम्पूर्णोत्पत्तेः असाधारणं वाऽनन्यसदृशत्वात् अनन्तं वा ज्ञेयानन्तत्वात् यथाऽवस्थिताशेषभूतभवद्भाविभावस्वभावावभासीति भावना, तच्च तत् ज्ञानं चेति केवलज्ञानम् । 'उग्गहो'त्ति सामान्यार्थस्य-अशेषविशेषनिरपेक्षस्यानिर्देश्यस्य रूपादेः अव इति-प्रथमतो ग्रहणं-परिच्छेदनमवग्रहः 'ईहे'त्ति सदर्थविशेषालोचनमीहा 'अवाओ'त्ति प्रक्रान्तार्थविनिश्चयोऽवायः 'धारणे'ति अवगतार्थविशेषधरणं धारणा 'एवं जहे' त्यादि, 'एवम्' उक्तक्रमेण यथा राजप्रश्नकृते द्वितीयोपाङ्गे ज्ञानानां भेदो भणितस्तथैवेहापि भणितव्यः, स चैवम्—'से किं तं उग्गहे ?, उग्गहे दुविहे पन्नत्ते, तंजहा-अत्थोग्गहे य वंजणोग्गहे य' इत्यादिरिति, यच्च वाचनान्तरे श्रुतज्ञानाधिकारे यथा नन्द्यामङ्गप्ररूपणेत्यभिधाय 'जाव भविया अभविया तत्तो सिद्धा असिद्धा ये' त्युक्तं तस्यामयर्थः-श्रुतज्ञानसूत्रावसाने किल नन्द्यां श्रुतविषयं दर्शयतेदमभिहितम्-'इच्चेयंमि दुवालसंगे गणिपिडए अणंता भावा अणंता अभावा जाव अणंता भवसिद्धिया अणंता अभवसिद्धिया अणंता सिद्धा अणंता असिद्धा पन्नत्ते'ति अस्य च सूत्रस्य या सङ्ग्रहगाथा—भावमभावा हेऊमहेउ कारणमकारणा जीवा । अज्जीव भवियाऽभविया तत्तो सिद्धा असिद्धा य ॥ १ ॥" इत्येवंरूपा तस्याः खण्डमिदमेतदन्तं श्रुतज्ञानसूत्रमिहाध्येयमिति ॥ ज्ञानविपर्ययस्त्वज्ञानमिति तत्सूत्रम्-तत्र च 'अन्नाणे'त्ति नञः कुत्सार्थत्वात् कुत्सितं ज्ञानमज्ञानं, कुत्सितत्वं च मिथ्यात्वसंवलितत्वात्, उक्तञ्च—"अविसेसिया मइच्चिय सम्मदिट्ठिस्स सा मइन्नाणं । मइअन्नाणं मिच्छदिट्ठिस्स सुयंपि एमेव ॥ १ ॥" 'विभंगणाणे'त्ति विरुद्धा भङ्गा-वस्तुविकल्पा यस्मिंस्त-

द्विभङ्गं तच्च तज्ज्ञानं च, अथवा विरूपो भङ्गः-अवधिभेदो विभङ्गः स चासौ ज्ञानं चेति विभङ्गज्ञानम्, इह च कुत्सा विभङ्गशब्देनैव गमितेति न ज्ञानशब्दो नञा विशेषितः, 'अत्थोग्गहे य'त्ति अर्थ्यत इत्यर्थस्तस्यावग्रहः अर्थावग्रहः-सकलविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यार्थग्रहणमेकसामयिकमिति भावार्थः, 'वंजणोग्गहे य'त्ति व्यज्यतेऽनेनार्थः प्रदीपेनेव घट इति व्यञ्जनं, तच्चोपकरणेन्द्रियं शब्दादिपरिणतद्रव्यसङ्घातो वा, ततश्च व्यञ्जनेन-उपकरणेन्द्रियेण व्यञ्जनानां वा-शब्दादिपरिणतद्रव्याणामवग्रहो व्यञ्जनावग्रहः, अत्रार्थावग्रहस्य सुलक्ष्यत्वात् सकलेन्द्रियार्थव्यापकत्वाच्च प्रथममुपन्यासः, 'एवं जहेवे'त्यादि, यथैवाभिनिबोधिकज्ञानमधीतं तथैव मत्यज्ञानमप्यध्येयं, तच्चैवम्—'से किं तं वंजणोग्गहे ?, २ चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा-सोइंदियवंजणोग्गहे घाणिंदियवंजणोग्गहे जिब्भिंदियवंजणोग्गहे फासिंदियवंजणोग्गहे'इत्यादि, यश्चेह विशेषस्तमाह-'नवरं एगट्ठियवज्जं'ति इहाभिनिबोधिकज्ञाने 'उग्गिण्हणया अवधारणया सवणया अवलंबणया मेहे'त्यादीनि पञ्च पञ्चैकार्थिकान्यवग्रहादीनामधीतानि, मत्यज्ञाने तु न तान्यध्येयानीति भावः, 'जाव नोइंदियधारण'त्ति इदमन्त्यपदं यावदित्यर्थः, 'जं इमं अन्नाणीएहिं'ति यदिदम् 'अज्ञानिकैः' निर्ज्ञानैः, तत्राल्पज्ञानभावादधनवदशीलवद्वा सम्यग्दृष्टयोऽप्यज्ञानिकाः प्रोच्यन्तेऽत एवाह-मिथ्यादृष्टिभिः, 'जहा नंदीए'त्ति, तत्रैवमेतत्सूत्रम्—'सच्छंदबुद्धिमइविगप्पियं तंजहा-भारहं रामायण'मित्यादि, तत्रावग्रहेहे बुद्धिः अवायधारणे च मतिः, स्वच्छन्देन-स्वाभिप्रायेण तत्त्वतः सर्वज्ञप्रणीतार्थानुसारमन्तरेण बुद्धिमतिभ्यां विकल्पितं स्वच्छन्दबुद्धिमतिविकल्पितं, स्वबुद्धिकल्पनाशिल्पनिर्मितमित्यर्थः 'चत्तारि य वेय'त्ति साम ऋक् यजुः अथर्वा चेति 'संगोवंग'ति इहाङ्गानि-शिक्षादीनि षट् उपाङ्गानि च-तद्व्याख्यानरूपाणि, 'गामसंठिए'त्ति ग्रामालम्बनत्वाद् ग्रामाकारम्, एवमन्यान्यपि, नवरं 'वाससंठिए'त्ति भरतादिवर्षाकारं



प्र० आ० ३४४

'वासहरसंठिए'त्ति हिमवदादिवर्षधरपर्वताकारं 'हयसंठिए' अश्वाकारं, 'पसय'त्ति पसयसंठिए, तत्र पसयः-आटव्यो द्विखुरश्चतुष्पदविशेषः, एवं च नानाविधसंस्थानसंस्थितमिति ॥ अनन्तरं ज्ञानान्यज्ञानानि चोक्तानि, अथ ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च निरूपयन्नाह—'जीवाणं भंते!' इत्यादि, इह च नारकाधिकारे 'जे नाणी ते नियमा तिन्नाणी'ति सम्यग्दृष्टिनारकाणां भवप्रत्ययमवधिज्ञानमस्तीतिकृत्वा ते नियमात् त्रिज्ञानिनः 'जे अन्नाणी ते अत्थेगतिया दुअन्नाणी अत्थेगतिया तिअन्नाणी'ति, कथम् ?, उच्यते, असञ्ज्ञिनः सन्तो ये नारकेषूत्पद्यन्ते तेषामपर्याप्तकावस्थायां विभङ्गाभावादाद्यमेवाज्ञानद्वयमिति ते द्व्यज्ञानिनः, ये तु मिथ्यादृष्टिसञ्ज्ञिभ्यः उत्पद्यन्ते तेषां भवप्रत्ययो विभंगो भवतीति ते त्र्यज्ञानिनः, एतदेव निगमयन्नाह—'एवं तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए'त्ति, 'बेइंदियाण'मित्यादि, द्वीन्द्रियाः केचित् ज्ञानिनोऽपि सास्वादनसम्यग्दर्शनभावेनापर्याप्तकावस्थायां भवन्तीत्यत उच्यते 'नाणीवि अन्नाणीवि'त्ति ॥ अनन्तरं जीवादिषु षड्विंशतिपदेषु ज्ञान्यज्ञानिनश्चिन्तिताः, अथ तान्येव गतीन्द्रियकायादिद्वारेषु चिन्तयन्नाह—

**निरयगइया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, तिन्नि नाणाइं नियमा, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। तिरियगइया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! दो नाणा दो अन्नाणा नियमा। मणुस्सगइया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! तिन्नि नाणाइं भयणाए, दो अन्नाणाइं नियमा, देवगतिया जहा निरयगतिया। सिद्धगतिया णं भंते ! जहा सिद्धा १ ॥ सइंदिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! चत्तारि नाणाइं, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। एगिंदिया णं भंते ! जीवा**

किं नाणी० ?, जहा पुढविकाइया बेइंदियतेइंदियचउरिंदियाणं दो नाणा दो अन्नाणा नियमा। पंचिंदिया जहा सइंदिया। अणिंदिया णं भंते! जीवा किं नाणी०?, जहा सिद्धा २॥ सकाइया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! पंच नाणाणि, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया नो नाणी, अन्नाणी, नियमा दुअन्नाणी, तंजहा-मतिअन्नाणी य सुयअन्नाणी य, तसकाइया जहा सकाइया। अकाइया णं भंते! जीवा किं नाणी०?, जहा सिद्धा ३॥ सुहुमा णं भंते! जीवा किं नाणी०? जहा पुढविकाइया। बादरा णं भंते! जीवा किं नाणी०? जहा सकाइया। नोसुहुमानोबादरा णं भंते! जीवा० जहा सिद्धा ४॥ पज्जत्ता णं भंते! जीवा किं नाणी०?, जहा सकाइया। पज्जत्ता णं भंते! नेरइया किं नाणी०?, तिन्नि नाणा, तिन्नि अन्नाणा नियमा, जहा नेरइए एवं जाव थणियकुमारा। पुढविकाइया जहा एगिंदिया, एवं जाव चउरिंदिया। पज्जत्ता णं भंते! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया किं नाणी अन्नाणी?, तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा भयणाए। मणुस्सा जहा सकाइया। वाणमंतरा जोइसिया वेमाणिया जहा नेरइया। अपज्जत्ता णं भंते! जीवा किं नाणी० २?, तिन्नि नाणा, तिन्नि अन्नाणा भयणाए। अपज्जत्ता णं भंते! नेरतिया किं नाणी अन्नाणी?, तिन्नि नाणा नियमा, तिन्नि अन्नाणा भयणाए, एवं जाव थणियकुमारा। पुढविक्काइया जाव वणस्सइकाइया जहा एगिंदिया। बेंदियाणं पुच्छा, दो नाणा दो अन्नाणा णियमा, एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं। अपज्जत्तगा णं भंते! मणुस्सा किं नाणी अन्नाणी?, तिन्नि नाणाइं भयणाए, दो अन्नाणाइं नियमा, वाणमंतरा जहा नेरइया, अपज्ज-

त्तगा जोइसियवेमाणिया णं तिन्नि नाणा, तिन्नि अन्नाणा नियमा। नोपज्जत्तगानोअपज्जत्तगा णं भंते! जीवा किं नाणी० ?, जहा सिद्धा ६ ॥ निरयभवत्था णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, जहा निरयगतिया। तिरियभवत्था णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, तिन्नि नाणा, तिन्नि अन्नाणा भयणाए। मणुस्सभवत्था णं० जहा सकाइया। देवभवत्था णं भंते! जहा निरयभवत्था। अभवत्था जहा सिद्धा ६ ॥ भवसिद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी० ?, जहा सकाइया,। अभवसिद्धियाणं पुच्छा, गोयमा! नो नाणी, अन्नाणी, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। नोभवसिद्धियानोअभवसिद्धिया णं भंते! जीवा० जहा सिद्धा ७॥ सन्नीणं पुच्छा जहा सइंदिया, असन्नी जहा इंदिया, नोसन्नीनोअसन्नी जहा सिद्धा ८ ॥ ( सूत्रं ३१८ ) ॥

'निरगइया ण'मित्यादि, गत्यादिद्वाराणि चैतानि—"गइ इंदिए य काये सुहुमे पज्जत्तए भवत्थे य। भवसिद्धिए य सन्नी लद्धी उवओग जोगे य ॥ १ ॥ लेसा कयास वेए आहारे नाणगोयरे काले। अंतर अप्पाबहुयं च पज्जवा चेह दाराइं ॥ २ ॥" तत्र च निरये गतिः—गमनं येषां ते निरयगतिकास्तेषाम्, इह च सम्यग्दृष्टयो मिथ्यादृष्टयो वा ज्ञानिनोऽज्ञानिनो वा ये पञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्येभ्यो नरके उत्पत्तुकामा अन्तरगतौ वर्त्तन्ते ते निरयगतिका विवक्षिताः, एतत्प्रयोजनत्वाद्गतिग्रहणस्येति, 'तिन्नि नाणाइं नियम'त्ति अवधेर्भवप्रत्ययत्वेनान्तरगतावपि भावात् 'तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए'त्ति असञ्ज्ञिनां नरके गच्छतां द्वे अज्ञाने, अपर्याप्तकत्वे विभङ्गस्याभावाद्, सञ्ज्ञिनां तु मिथ्यादृष्टीनां त्रीण्यज्ञानानि भवप्रत्ययविभङ्गस्य सद्भावाद् अतस्त्रीण्यज्ञानानि भजनयेत्युच्यत इति। 'तिरियगइया णं'ति तिर्यक्षु गतिः—गमनं येषां ते तिर्यग्गतिकास्तेषां तदपान्तरालवर्त्तिनां 'दो नाण'त्ति सम्यग्दृष्टयो

ह्यवधिज्ञाने प्रपतिते एव तिर्यक्षु गच्छन्ति तेन तेषां द्वे एव ज्ञाने, 'दोअन्न णे'त्ति मिथ्यादृष्टयोऽपि हि विभंगज्ञाने प्रतिपतिते एव तिर्यक्षु गच्छन्ति तेन तेषां द्वे अज्ञाने इति । 'मणुस्सगइया णं'मित्यादौ 'तिन्नि नाणाइं भयणाए'त्ति मनुष्यगतौ हि गच्छन्तः केचिज्ज्ञानिनोऽवधिना सहैव गच्छन्ति तीर्थङ्करवत् केचिच्च तद्विमुच्य तेषां त्रीणि वा द्वे वा ज्ञाने स्यातामिति, ये पुनरज्ञानिनो मनुष्यगतावुत्पत्तुकामास्तेषां प्रतिपतित एव विभंगे तत्रोत्पत्तिः स्यादित्यत उक्तं 'दो अन्नाणाइं नियम'त्ति । 'देवगइया जहा निरयगइय'त्ति देवगतौ ये ज्ञानिनो यातुकामास्तेषामवधिर्भवप्रत्ययो देवायुःप्रथमसमय एवोत्पद्यते अतस्तेषां नारकाणामिवोच्यते, 'तिन्नि नाणाइं नियम'त्ति, ये त्वज्ञानिनस्तेऽसंज्ञिभ्य उत्पद्यमाना द्व्यज्ञानिनः, अपर्याप्तकत्वे विभंगस्याभावात्, संज्ञिभ्य उत्पद्यमानास्तु त्र्यज्ञानिनो भवप्रत्ययविभंगस्य सद्भावाद्, अतस्तेषां नारकाणामिवोच्यते-'तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए'त्ति । 'सिद्धिगइया णं'मित्यादि, यथा सिद्धाः केवलज्ञानिन एव एवं सिद्धिगतिका अपि वाच्या इति भावः, यद्यपि च सिद्धानां सिद्धिगतिकानां चान्तरगत्यभावान्न विशेषोऽस्ति तथाऽपीह गतिद्वारबलायातत्वात्ते दर्शिताः, एवं द्वारान्तरेष्वपि परस्परान्तर्भावेऽपि तत्तद्विशेषापेक्षयाऽपौनरुक्त्यं भावनीयमिति ॥ अथेन्द्रियद्वारे-'सइंदिये'त्यादि, 'सेन्द्रियाः' इन्द्रियोपयोगवन्तस्ते च ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च, तत्र ज्ञानिनां चत्वारि ज्ञानानि भजनया, स्यात् द्वे स्यात् त्रीणि स्याच्चत्वारि, केवलज्ञानं तु नास्ति तेषाम्, अतीन्द्रियज्ञानत्वात्तस्य, द्व्यादिभावश्च ज्ञानानां लब्ध्यपेक्षया, उपयोगापेक्षया तु सर्वेषामेकदैकमेव ज्ञानम्, अज्ञानिनां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनयैव, स्यात् द्वे स्यात् त्रीणीति. 'जहा पुढविकाइय'त्ति एकेन्द्रियाः मिथ्यादृष्टित्वादज्ञानिनस्ते च द्व्यज्ञाना एवेत्यर्थः । 'बेइंदिये'त्यादि, एषां द्वे ज्ञाने, सासादनस्तेषूत्पद्यत इतिकृत्वा, सासादनश्चोत्कृष्टतः षडावलिकामानोऽतो द्वे ज्ञाने तेषु लभ्येते इति । 'अणिंदिय'त्ति केवलिनः ॥ कायद्वारे-

'सकाइया णं'मित्यादि, सह कायेन–औदारिकादिना शरीरेण पृथिव्यादिषट्कायान्यतरेण वा कायेन ये ते सकायास्त एव सकायिकाः, ते च केवलिनोऽपि स्युरिति सकायिकानां सम्यग्दृशां पञ्च ज्ञानानि मिथ्यादृशां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनया स्युरिति । 'अकाइया णं'ति नास्ति कायः–उक्तलक्षणो येषां तेऽकायास्त एवाकायिकाः–सिद्धाः ॥ सूक्ष्मद्वारे—'जहा पुढविकाइय'त्ति द्व्यज्ञानिनः सूक्ष्माः, मिथ्यादृष्टित्वादित्यर्थः 'जहा सकाइय'त्ति बादराः केवलिनोऽपि भवन्तीतिकृत्वा ते सकायिकवद्भजनया पञ्चज्ञानिनस्त्र्यज्ञानिनश्च वाच्या इति ॥ पर्याप्तकद्वारे—'जहा सकाइय'त्ति पर्याप्तकाः केवलिनोऽपि स्युरिति ते सकायिकवत्पूर्वोक्तप्रकारेण वाच्याः। पर्याप्तकद्वार एव चतुर्विंशतिदण्डके पर्याप्तकनारकाणां 'तिन्नि अन्नाणा नियम'त्ति अपर्याप्तकानामेवासंज्ञिनारकाणां विभङ्गाभाव इति पर्याप्तकावस्थायां तेषामज्ञानत्रयमेवेति । 'एवं जाव चउरिंदिय'त्ति द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियाः पर्याप्तका द्व्यज्ञानिन एवेत्यर्थः। 'पज्जत्ता णं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खे'त्यादि, पर्याप्तकपञ्चेन्द्रियतिरश्चामवधिर्विभङ्गो वा केषाञ्चित्स्यात्केषाञ्चित्पुनर्नेति त्रीणि ज्ञानान्यज्ञानानि वा द्वे वा ज्ञाने अज्ञाने वा तेषां स्यातामिति । 'बेइंदियाणं दो नाणे'त्यादि, अपर्याप्तकद्वीन्द्रियादीनां केषाञ्चित्सासादनसम्यग्दर्शनस्य सद्भावाद् द्वे ज्ञाने केषाञ्चित्पुनस्तस्यासद्भावाद् द्वे एवाज्ञाने । अपर्याप्तकमनुष्याणां पुनः सम्यग्दृशामवधिभावे त्रीणि ज्ञानानि यथा तीर्थकराणां, तदभावे तु द्वे ज्ञाने, मिथ्यादृशां तु द्वे एवाज्ञाने, विभंगस्यापर्याप्तकत्वे तेषामभावात्. अत एवोक्तं 'तिन्नि नाणाइं भयणाए, दो अन्नाइं नियम'त्ति । 'वाणमंतरे'त्यादि, व्यन्तरा अपर्याप्तका नारका इव त्रिज्ञाना द्व्यज्ञानास्त्र्यज्ञाना वा वाच्याः, तेष्वसंज्ञिभ्य उत्पद्यमानानामपर्याप्तकानां विभंगाभावात् शेषाणां चावधेर्विभंगस्य चावश्यम्भावात् त्रीणि ज्ञानान्यज्ञानानि वा स्युरिति । 'नोपज्जत्तगनोअपज्जत्तग'त्ति सिद्धाः ॥ भवस्थद्वारे–'निरयभवत्थया णं'मित्यादि. निरयभवे

तिष्ठन्तीति निरयभवस्थाः-प्राप्तोत्पत्तिस्थानाः, ते च यथा निरयगतिका ज्ञानिनो द्व्यज्ञानास्त्र्यज्ञानाश्चोक्ता तथा वाच्या इति । भवसिद्धिकद्वारे-'जहा सकाइय'त्ति भवसिद्धिकाः केवलिनोऽपीति ते सकायिकवद्भजनया पञ्चज्ञानाः, तथा यावत्सम्यक्त्वं न प्रतिपन्नास्तावद्भजनयैव त्र्यज्ञानाद्व्यज्ञानाश्च वाच्या इति । अभवसिद्धिकानां त्वज्ञानत्रयं भजनया स्यात्, सदा मिथ्यादृष्टित्वात्तेषाम्. अत उक्तं 'नो नाणी, अन्नाणी'त्यादिरिति॥ सञ्ज्ञिद्वारे--'जहा सइंदिय'त्ति ज्ञानानि चत्वारि भजनया, अज्ञानानि त्रीणि च तथैवेत्यर्थः'असन्नी जहा बेइंदिय'त्ति अपर्याप्तकावस्थायां ज्ञानद्वयमपि सासादनतया स्यात्, पर्याप्तकावस्थायां त्वज्ञानद्वयमेवेत्यर्थः ॥
लब्धिद्वारे लब्धिभेदान् दर्शयन्नाह--

कइविहा णं भंते ! लद्धी पण्णत्ता ?, गोयमा ! दसविहा लद्धी पण्णत्ता, तंजहा-नाणलद्धी १ दंसणलद्धी २ चरित्तलद्धी ३ चरित्ताचरित्तलद्धी ४ दाणलद्धी ५ लाभलद्धी ६ भोगलद्धी ७ उवभोगलद्धी ८ विरियलद्धी ९ इंदियलद्धी १० । णाणलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा-आभिणिबोहियणाणलद्धी जाव केवलणाणलद्धी ॥ अन्नाणलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा-मइअन्नाणलद्धी सुयअन्नाणलद्धी विभंगनाणलद्धी ॥ दंसणलद्धी णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा-सम्मदंसणलद्धी मिच्छादंसणलद्धी सम्मामिच्छादंसणलद्धी ॥ चरित्तलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा-सामाइयचरित्तलद्धी छेदोवट्ठावणिय०लद्धी परिहारविसुद्ध०लद्धी सुहुमसंपराग०लद्धी अहक्खायचरित्तलद्धी ॥ चरित्ताचरित्तलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता?

गोयमा ! एगागारा पण्णत्ता, एवं जाव उवभोगलद्धी एगागारा पन्नत्ता ॥ वीरियलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा–बालवीरियलद्धी पंडियवीरियलद्धी बालपंडियवीरियलद्धी । इंदियलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–सोइंदियलद्धी जाव फासिंदियलद्धी॥ नाणलद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! नाणी, नो अन्नाणी, अत्थेगतिया दुन्नाणी, एवं पंच नाणाइं भयणाए। तस्स अलद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! नो नाणी, अन्नाणी, अत्थेगतिया दुअन्नाणी, तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए। आभिणिबोहियणाणलद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! नाणी, नो अन्नाणी, अत्थेगतिया दुन्नाणी, चत्तारि नाणाइं भयणाए। तस्स अलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते नियमा एगनाणी केवलनाणी, जे अन्नाणी ते अत्थेगइया दुअन्नाणी, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, एवं सुयनाणलद्धीयावि, तस्स अलद्धीयावि जहा आभिणिबोहियनाणस्स अलद्धीया। ओहिनाणलद्धीया णं पुच्छा, गोयमा ! नाणी, नो अन्नाणी, अत्थेगइया तिन्नाणी, अत्थेगतिया चउनाणी, जे तिन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी, जे चउनाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुय० ओहि० मणपज्जवनाणी। तस्स अलद्धीया णं भंते! जीवा किं नाणी०, गोयमा! नाणीवि अन्नाणीवि, एवं ओहिनाणवज्जाइं चत्तारि नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। मणपज्जवनाणलद्धिया णं पुच्छा, गोयमा! णाणी, णो अन्नाणी, अत्थेगतिया तिन्नाणी अत्थेगतिया चउनाणी, जे तिन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयणाणी मणपज्जवणाणी, जे चउनाणी

ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी मणपज्जवणाणी, जे चउनाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी मणपज्जवनाणी, तस्स अलद्धिया णं पुच्छा, गोयमा ! णाणीवि अन्नाणीवि, मणपज्जवणाणवज्जाइं चत्तारि णाणाइं, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। केवलनाणलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणी, नो अन्नाणी, नियमा एगणाणी केवलनाणी, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, केवलनाणवज्जाइं चत्तारि णाणाइं, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए ॥ अन्नाणलद्धिया णं पुच्छा, गोयमा! नो नाणी, अन्नाणी, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा ! नाणी, नो अन्नाणी, पंच नाणाइं भयणाए जहा अन्नाणस्स लद्धिया अलद्धिया य भणिया एवं मइअन्नाणस्स सुयअन्नाणस्स य लद्धिया अलद्धिया य भाणियव्वा, विभंगनाणलद्धियाणं तिन्नि अन्नाणाइं नियमा, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए, दो अन्नाणाइं नियमा १॥ दंसणलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! तस्स अलद्धिया नत्थि । सम्मदंसणलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, मिच्छादंसणलद्धिया णं भंते ! पुच्छा, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं तिन्नि य अन्नाणाइं भयणाए, सम्मामिच्छादंसणलद्धिया य अलद्धिया य जहा मिच्छादंसणलद्धी अलद्धी तहेव भाणियव्वं २॥ चरित्तलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! पंच नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं मणपज्जवनाणवज्जाइं

चत्तारि नाणाइं तिन्नि य अन्नाणाइं भयणाए, सामाइयचरित्तलद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी? गोयमा! नाणी, केवलवज्जाइं चत्तारि नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं तिन्नि य अन्नाणाइं भयणाए, एवं जहा सामाइयचरित्तलद्धिया अलद्धिया य भणिया एवं जाव अहक्खायचरित्तलद्धिया अलद्धिया य भाणियव्वा, नवरं अहक्खायचरित्तलद्धिया पंच नाणाइं भ० ३। चरित्ताचरित्तलद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! नाणी, नो अन्नाणी, अत्थेगइया दुण्णाणी अत्थेगतिया तिन्नाणी, जे दुन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी य सुयनाणी य, जे तिन्नाणी ते आभि० सुयना० ओहिना०, तस्स अल० पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए ४॥ दाणलद्धियणं पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अ० पुच्छा, गोयमा! नाणी, नो अन्नाणी, नियमा एगनाणी केवलनाणी ५। एवं जाव वीरियस्स लद्धी अलद्धी य भाणियव्वा, बालवीरियलद्धियाणं तिन्नि नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए, पंडियवीरियलद्धीयाणं पंच नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं मणपज्जवनाणवज्जाइं णाणाइं अन्नाणाणि तिन्नि य भयणाए, बालपंडियवीरियलद्धियाणं भंते! जीवा० तिन्नि नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए ९॥ इंदियलद्धियाणं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! चत्तारि णाणाइं तिन्नि य अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा! नाणी, नो अन्नाणी, नियमा एगनाणी केवलनाणी, सोइंदियलद्धियाणं जहा इंदियलद्धिया, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा! नाणीवि अन्नाणीवि,

जे नाणी ते अत्थेगतिया दुन्नाणी अत्थेगतिया एगन्नाणी, जे दुन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी जे एगनाणी ते केवलनाणी, जे अन्नाणी ते नियमा दुअन्नाणी, तंजहा–मइअन्नाणी य सुयअन्नाणी य, चक्खिदियघाणिंदियाणं लद्धियाणं अलद्धियाण य जहेव सोइंदियस्स, जिब्भिदियलद्धियाणं चत्तारि णाणाइं तिन्नि य अनाणाणि भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते नियमा एगनाणी केवलनाणी, जे अन्नाणी ते नियमा दुअन्नाणी, तंजहा–मइअन्नाणी य सुयअन्नाणी य, फासिंदियलद्धियाणं अलद्धीयाणं जहा इंदियलद्धिया य अलद्धिया य ॥ ( सूत्रं ३१९ ) ॥

'कतिविहा ण'मित्यादि, तत्र लब्धिः–आत्मनो ज्ञानादिगुणानां तत्तत्कर्मक्षयादितो लाभः, सा च दशविधा, तत्र ज्ञानस्य–विशेषबोधस्य पञ्चप्रकारस्य तथाविधज्ञानावरणक्षयक्षयोपशमाभ्यां लब्धिर्ज्ञानलब्धिः, एवमन्यत्रापि, नवरं च दर्शनं–रुचिरूप आत्मनः परिणामः, चारित्रं–चारित्रमोहनीयक्षयक्षयोपशमोपशमजो जीवपरिणामः, तथा चरित्रं च तदचरित्रं चेति चरित्राचरित्रं–संयमासंयमः, तच्चाप्रत्याख्यानकषायक्षयोपशमजो जीवपरिणामः, दानादिलब्धयस्तु पञ्चप्रकारान्तरायक्षयक्षयोपशमसम्भवाः, इह च सकृद्भोजनमशनादीनां भोगः पौनःपुन्येन चोपभोजनमुपभोगः, स च वस्त्रभवनादेः, दानादीनि तु प्रसिद्धानीति, तथा इन्द्रियाणां–स्पर्शनादीनां मतिज्ञानावरणक्षयोपशमसम्भूतानामेकेन्द्रियादिजातिनामकर्मोदयनियमितक्रमाणां पर्याप्तकनामकर्मादिसामर्थ्यसिद्धानां द्रव्यभावरूपाणां लब्धिरात्मन इतीन्द्रियलब्धिः॥ अथ ज्ञानलब्धेर्विपर्ययभूताऽज्ञानलब्धिरित्यज्ञानलब्धिनिरूपणायाह—'अन्नाणलद्धी'त्यादि ॥ 'सम्मदंसणे'त्यादि, इह सम्यग्दर्शनं मिथ्यात्वमोहनीयकर्माणुवेदनोपशम १ क्षय २ क्षयोपशपम३ समुत्थ आत्मपरिणामः, मिथ्या-

दर्शनमशुद्धमिथ्यात्वदलिकोदयसमुत्थो जीवपरिणामः, सम्यग्मिथ्यादर्शनं त्वर्द्धविशुद्धमिथ्यात्वदलिकोदयसमुत्थ आत्मपरिणाम एव ॥ 'सामाइयचरित्तलद्धि'त्ति सामायिकं-सावद्ययोगविरतिरूपं एतदेव चरित्रं सामायिकचरित्रं तस्य लब्धिः सामायिकचरित्रलब्धिः, सामायिकचरित्रं च द्विधा-इत्वरं यावत्कथिकं च, तत्राल्पकालमित्वरं, तच्च भरतैरावतेषु प्रथमपश्चिमतीर्थकरतीर्थेष्वनारोपितव्रतस्य शिक्षकस्य भवति, यावत्कथिकं तु यावज्जीविकं, तच्च मध्यमवैदेहिकतीर्थङ्करतीर्थान्तर्गतसाधूनामवसेयं, तेषामुपस्थापनाया अभावात्, नन्वित्वरस्यापि यावज्जीवतया प्रतिज्ञानात् तस्यैव चोपस्थापनायां परित्यागात् कथं न प्रतिज्ञालोपः ?, अत्रोच्यते, अतिचाराभावात्, तस्यैव सामान्यतः सावद्ययोगनिवृत्तिरूपेणावस्थितस्य शुद्ध्यन्तरापादनेन सञ्ज्ञामात्रविशेषादिति । 'छेओवट्ठावणियचरित्तलद्धी'ति छेदे-प्राक्तनसंयमस्य व्यवच्छेदे सति यदुपस्थापनीयं-साधावारोपणीयं तच्छेदोपस्थापनीयं, पूर्वपर्यायच्छेदेन महाव्रतानामारोपणमित्यर्थः, तच्च सातिचारमनतिचारं च, तत्रानतिचारमित्वरसामायिकस्य शिक्षकस्यारोप्यते, तीर्थान्तरसङ्क्रान्तौ वा, यथा पार्श्वनाथतीर्थाद्वर्द्धमानस्वामितीर्थं सङ्क्रामतः पञ्चयामधर्मप्राप्तौ, सातिचारं तु मूलगुणघातिनो यद् व्रतारोपणं, तच्च तच्चरित्रं च छेदोपस्थापनीयचरित्रं तस्य लब्धिश्छेदोपस्थापनीयचरित्रलब्धिः, 'परिहारविसुद्धियचरित्तलद्धि'त्ति परिहारः-तपोविशेषस्तेन विशुद्धिर्यस्मिंस्तत्परिहारविशुद्धिकं, शेषं तथैव, एतच्च द्विविधं-निर्विशमानकं निर्विष्टकायिकं च, तत्र निर्विशमानकास्तदासेवकास्तदव्यतिरेकात्तदपि निर्विशमानकम्, आसेवितविवक्षितचारित्रकायास्तु निर्विष्टकायास्त एव निर्विष्टकायिकास्तदव्यतिरेकात्तदपि निर्विष्टकायिकमिति, इह च नवको गणो भवति, तत्र चत्वारः परिहारिका भवन्ति, अपरे तु तद्वैयावृत्त्यकराश्चत्वार एवानुपरिहारिकाः, एकस्तु कल्पस्थितो वाचनाचार्यो, गुरुभूत इत्यर्थः, एतेषां च निर्विशमानकानामयं परिहारः—परिहारियाण उ तवो जहन्न मज्झो तहेव उक्कोसो । सीउण्हवासकाले भणिओ धीरेहिं

पत्तेयं ॥ १ ॥ तत्थ जहन्नो गिम्हे चउत्थ छट्ठं तु होइ मज्झिमओ । अट्ठममिह उक्कोसो एत्तो सिसिरे पवक्खामि ॥ २ ॥ सिसिरे उ जहन्नाई छट्ठाई दसमचरिमगा होंति । वासासु अट्ठमाई बारसपज्जन्तओ णेइ ॥३॥ पारणगे आयामं पंचसु गह दोसऽभिग्गहो भिक्खे । कप्पट्ठिया य पइदिण करेंति एमेव आयामं ॥ ४ ॥" इह सप्तस्वेषणासु मध्ये आद्ययोरग्रह एव, पञ्चसु पुनर्ग्रहः, तत्राप्येकतरया भक्तमेकतरया च पानकमित्येवं द्वयोरभिग्रहोऽवगन्तव्य इति । 'एवं छम्मासतवं चरिउं परिहारिगा अणुचरंति । अणुचरगे परिहारियपयट्ठिए जाव छम्मासा ॥ ५ ॥ कप्पट्ठिओऽवि एवं छम्मासतवं करेइ सेसा उ । अणुपरिहारिगभावं वयंति कप्पट्ठियत्तं च ॥ ६ ॥ एवेसो अट्ठारसमासपमाणो उ वण्णिओ कप्पो । संखेवओ विसेसो सुत्ता एयस्स णायव्वो ॥ ७ ॥ कप्पसमत्तीइ तयं जिणकप्पं वा उवेंति गच्छं वा । पडिवज्जमाणगा पुण जिणस्सगासे पवज्जंति ॥ ८ ॥ तित्थयरसमीवासेवगस्स पासे व नो य अन्नस्स । एएसिं जं चरणं परिहारविसुद्धियं तं तु ॥ ९ ॥"अन्यैस्तु व्याख्यातं—परिहारतो मासिकं चतुर्लघ्वादि तपश्चरति यस्तस्य परिहारिकचारित्रलब्धिर्भवतीति, इदं च परिहारतपो यथा स्यात्तथोच्यते—"नवमस्स तइयवत्थुं जहन्न उक्कोस ऊणगा दस उ । सुत्तत्थभिग्गहा पुण दव्वाइ तवो रयणमाति ॥ १ ॥" अयमर्थः—यस्य जघन्यतो नवमपूर्वं तृतीयं वस्तु यावद्भवति उत्कर्षतस्तु दश पूर्वाणि न्यूनानि सूत्रतोऽर्थतो भवन्ति द्रव्यादयश्चाभिग्रहा रत्नावल्यादिना च तपस्तस्य परिहारतपो दीयते, तद्दाने च निरुपसर्गार्थं कायोत्सर्गो विधीयते, शुभे च नक्षत्रादौ तत्प्रतिपत्तिः, तथा गुरुस्तं ब्रूते—यथाऽहं तव वाचनाचार्यः, अयं च गीतार्थः साधुः सहायस्ते, शेषसाधवोऽपि वाच्याः, यथा "एस तवं पडिवज्जइ न कंचि आलवइ मा य आलवह । अत्तट्ठचिंतगस्स उ वाघाओ भे न कायव्वो ॥ १ ॥" तथा कथमहमालापादिरहितः संस्तपः करिष्यामीत्येवं बिभ्यतस्तस्य भयापहारः कार्यः, कल्पस्थितश्च तस्यैतत्करोति—किइकम्मं च

पडिच्छइ परिन्न पडिपुच्छयंपि से देइ । सोवि य गुरुमुवचिट्ठइ उदंतमवि पुच्छिओ कहइ १ ॥ इह परिज्ञा-प्रत्याख्यानं प्रतिपृच्छा त्वालापकः, ततोऽसौ यदा ग्लानीभूतः सन्नुत्थानादि स्वयं कर्त्तुं न शक्नोति तदा भणति-उत्थानादि कर्त्तुमिच्छामि, ततोऽनुपरिहारिकस्तूष्णीक एव तदभिप्रेतं समस्तमपि करोति, आह च-"उट्ठेज्ज निसीएज्जा भिक्खं हिंडेज्ज भंडगं पेहे । कुवियपियबंधवस्स व करेइ इयरोवि तुसिणीओ ॥ १ ॥ तपश्च तस्य ग्रीष्मशिशिरवर्षासु जघन्यादिभेदेन चतुर्थादिद्वादशान्तं पूर्वोक्तमेवेति । 'सुहुमसंपरायचरित्तलद्धि'त्ति संपरैति-पर्यटति संसारमेभिरिति सम्परायाः-कषायाः सूक्ष्मा-लोभांशावशेषरूपाः सम्परााया यत्र तत् सूक्ष्मसम्परायं शेषं तथैव, एतदपि द्विधा-विशुद्ध्यमानकं संक्लिश्यमानकं च, तत्र विशुद्ध्यमानकं क्षपकोपशमकश्रेणिद्वयमारोहतो भवति १ संक्लिश्यमानकं तूपशमश्रेणीतः प्रच्यवमानस्येति २ । 'अहक्खायचरित्तलद्धी'ति यथा-येन प्रकारेण आख्यातं-अभिहितमकषायतयेत्यर्थः तथैव यत् तद्यथाख्यातं, तदपि द्विविधम्-उपशमकक्षपकश्रेणिभेदात्, शेषं तथैवेति ॥ एवं 'चरित्ताचरित्ते'त्यादौ, 'एगागार'त्ति मूलगुणोत्तरगुणादीनां तद्भेदानामविवक्षणात् द्वितीयकषायक्षयोपशमलभ्यपरिणाममात्रस्यैव च विवक्षणाच्चारित्राचरित्रलब्धेरेकाकारत्वमवसेयम् । एवं दानलब्ध्यादीनामप्येकाकारत्वं, भेदानामविवक्षणात् ॥ 'बालवीरियलद्धी'त्यादि, बालस्य-असंयतस्य यद्वीर्यं-असंयमयोगेषु प्रवृत्तिनिबन्धनभूतं तस्य या लब्धिश्चारित्रमोहोदयाद्वीर्यान्तरायक्षयोपशमाच्च सा तथा, एवमितरे अपि यथायोगं वाच्ये, नवरं पण्डितः-संयतो, बालपण्डितस्तु संयतासंयत इति ॥ 'तस्स अलद्धिया णं'ति तस्य ज्ञानस्य अलब्धिकाः-अलब्धिमन्तः ज्ञानलब्धिरहिता इत्यर्थः । 'आभिणिबोहियनाणे'त्यादि, आभिनिबोधिकज्ञानलब्धिकानां चत्वारि ज्ञानानि भजनया, केवलिनो नास्त्याभिनिबोधिकज्ञानमिति, मतिज्ञानस्यालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्ते केवलिनस्ते चैकज्ञानिन एव, ये त्वज्ञानिनस्तेऽज्ञानद्वयवन्तो-

ऽज्ञानत्रयवन्तो वा, एवं श्रुतेऽपि। 'ओहिनाणलद्धी'त्यादि, अवधिज्ञानलब्धिकास्त्रिज्ञानाः केवलमनःपर्यायासद्भावे चतुर्ज्ञाना वा केवलाभावात्, अवधिज्ञानस्यालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्ते द्विज्ञाना मतिश्रुतभावात् त्रिज्ञाना वा मतिश्रुतमनःपर्यायभावात्, एकज्ञाना वा केवलभावात्, ये त्वज्ञानिनस्ते द्व्यज्ञाना मत्यज्ञानश्रुताज्ञानभावात्, त्र्यज्ञाना वाऽज्ञानत्रयस्यापि भावात्। 'मणपज्जवे'त्यादि, मनःपर्यवज्ञानलब्धिकास्त्रिज्ञाना अवधिकेवलाभावात्, चतुर्ज्ञाना वा केवलस्यैवाभावात्, मनःपर्यवज्ञानस्यालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्ते द्विज्ञाना आद्यद्वयभावात्, त्रिज्ञाना वाऽऽद्यत्रयभावात्, एकज्ञाना वा केवलस्यैव भावात्, ये त्वज्ञानिनस्ते द्व्यज्ञाना आद्याज्ञानद्वयभावात्, त्र्यज्ञाना वाऽज्ञानत्रयस्यापि भावात्, 'केवलनाणे'त्यादि, केवलज्ञानलब्धिका एकज्ञानिनस्ते च केवलज्ञानिन एव, केवलज्ञानस्यालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्तेषामाद्यं ज्ञानद्वयं तत्त्रयं मतिश्रुतावधिज्ञानानि मतिश्रुतमनःपर्यायज्ञानानि वा, केवलज्ञानवर्जानि चत्वारि वा ज्ञानानि भवन्ति, ये त्वज्ञानिनस्तेषामाद्यमज्ञानद्वयं तत्त्रयं वा भवतीत्येवं भजनाऽवसेयेति ॥ 'अन्नाणलद्धियाण'मित्यादि, अज्ञानलब्धिका अज्ञानिनः, तेषां च त्रीण्यज्ञानानि भजनया, द्वे अज्ञाने त्रीणि वाऽज्ञानानीत्यर्थः, अज्ञानालब्धिकास्तु ज्ञानिनः, तेषां च पञ्च ज्ञानानि भजनया पूर्वोपदर्शितया वाच्यानि, 'जहा अन्नाणे'त्यादि, अज्ञानलब्धिकानां त्रीण्यज्ञानानि भजनयोक्तानि मत्यज्ञानश्रुताज्ञानलब्धिकानामपि तानि तथैव, तथाऽज्ञानालब्धिकानां पञ्च ज्ञानानि भजनयोक्तानि, मत्यज्ञानश्रुताज्ञानालब्धिकानामपि पञ्च ज्ञानानि भजनयैव वाच्यानीति। 'विभंगे'त्यादि, विभङ्गज्ञानलब्धिकानां तु त्रीण्यज्ञानानि नियमात्, तदलब्धिकानां तु ज्ञानिनां पञ्च ज्ञानानि भजनया, अज्ञानिनां च द्वे अज्ञाने नियमादिति ॥ 'दंसणलद्धी'त्यादि, 'दर्शनलब्धिकाः' श्रद्धानमात्रलब्धिका इत्यर्थः, ते च सम्यक्श्रद्धानवन्तो ज्ञानिनस्तदितरे त्वज्ञानिनः, तत्र ज्ञानिनां पञ्च ज्ञानानि भजनया, अज्ञानिनां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनयैवेति। 'तस्स अलद्धिया नत्थि'त्ति

तस्य दर्शनस्य येषामलब्धिस्ते न सन्त्येव, सर्वजीवानां रुचिमात्रस्यास्तित्वादिति । 'सम्मदंसणलद्धियाणं'ति सम्यग्दृष्टीनां, 'तस्स अलद्धियाण'मित्यादि, 'तस्यालब्धिकानां' सम्यग्दर्शनस्यालब्धिमतां मिथ्यादृष्टीनां मिश्रदृष्टीनां च त्रीण्यज्ञानानि भजनया, यतो मिश्रदृष्टीनामप्यज्ञानमेव, तात्त्विकसद्बोधहेतुत्वाभावान्मिश्रस्येति । 'मिच्छादंसणलद्धियाणं'ति मिथ्यादृष्टीनां, 'तस्स अलद्धियाण'मित्यादि, 'तस्यालब्धिकानां' मिथ्यादर्शनस्यालब्धिमतां सम्यग्दृष्टीनां मिश्रदृष्टीनां च क्रमेण पञ्च ज्ञानानि त्रीण्यज्ञानानि च भजनयेति ॥ 'चरित्तलद्धी'त्यादि चरित्रलब्धिका ज्ञानिन एव, तेषां च पञ्च ज्ञानानि भजनया, यतः केवल्यपि चारित्री । चारित्रालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्तेषां मनःपर्यववर्जानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया भवन्ति, कथम् ?, असंयतत्वे आद्यं ज्ञानद्वयं तत्त्रयं वा, सिद्धत्वे च केवलज्ञानं, सिद्धानामपि चरित्रलब्धिशून्यत्वाद्, यतस्ते नोचारित्रिणो नोअचारित्रिण इति, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनया। 'सामाइए'त्यादि, सामायिकचरित्रलब्धिका ज्ञानिन एव, तेषां च केवलज्ञानवर्जानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया, सामायिकचरित्रलब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, छेदोपस्थापनीयादिभावेन सिद्धभावेन वा, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनया । एवं छेदोपस्थापनीयादिष्वपि वाच्यम्, एतदेवाह-'एव'मित्यादि, तत्र छेदोपस्थापनीयादिचरित्रत्रयलब्धयो ज्ञानिन एव, तेषां चाद्यानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया, तदलब्धयो यथाख्यातचारित्रलब्धयश्च ये ज्ञानिनस्तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, ये त्वज्ञानिनस्तेषामज्ञानत्रयं भजनयैव, यथाख्यातचारित्रलब्धिकानां तु विशेषोऽस्ति अतस्तद्दर्शनायाह— 'नवरं अहक्खाये'त्यादि, सामायिकादिचारित्रचतुष्टयलब्धिमतां छद्मस्थत्वेन चत्वार्येव ज्ञानानि भजनया, यथाख्यातचारित्रलब्धिमतां छद्मस्थेतरभावेन पञ्चापि भजनया भवन्तीति तेषां तथैव तान्युक्तानि ॥ 'चरित्ताचरित्ते'त्यादौ, 'तस्स अलद्धिय'त्ति चरि-

प्रथमवैकल्पिकः, तथाहि—उपशान्तमोहादिर्यदा ऐर्यापथिकं कर्म बद्ध्वा बध्नाति तदाऽतीतसमयापेक्षया बद्धवान् वर्त्तमानसमयापेक्षया च बध्नाति अनागतसमयापेक्षया तु भन्त्स्यतीति १, द्वितीयस्तु केवली, स ह्यतीतकाले बद्धवान् वर्त्तमाने च बध्नाति शैलेश्यवस्थायां पुनर्न भन्त्स्यतीति २, तृतीयस्तूपशान्तमोहत्वे बद्धवान् तत्प्रतिपतितस्तु न बध्नाति पुनस्तत्रैव भवे उपशमश्रेणीं प्रतिपन्नो भन्त्स्यतीति, एकभवे चोपशमश्रेणी द्विर्वारं प्राप्यत एवेति ३, चतुर्थः पुनः सयोगित्वे बद्धवान् शैलेश्यवस्थायां न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति ४, पञ्चमः पुनरायुषः पूर्वभागे उपशान्तमोहत्वादि न लब्धमिति न बद्धवान् अधुना तु लब्धमिति बध्नाति तदद्धाया एवैष्यत्समयेषु पुनर्भन्त्स्यतीति ५, षष्ठस्तु नास्त्येव, तत्र बद्धवान् बध्नातीत्यनयोरुपपद्यमानत्वेऽपि न भन्त्स्यतीत्यस्यानुपपद्यमानत्वात्, तथाहि— आयुषः पूर्वभागे उपशान्तमोहत्वादि न लब्धमिति न बद्धवान् तल्लाभसमये च बध्नाति ततोऽनन्तरसमयेषु च भन्त्स्यत्येव, न तु न भन्त्स्यति, समयमात्रस्य बन्धस्येहाभावात्, यस्तु मोहोपशमनिर्ग्रन्थस्य समयानन्तरमरणेनैर्यापथिककर्मबन्धः समयमात्रो भवति नासौ षष्ठविकल्पहेतुः, तदनन्तरैर्यापथिककर्मबन्धाभावस्य भवान्तरवर्त्तित्वाद् ग्रहणाकर्षस्य चेह प्रक्रान्तत्वात्, यदि पुनः सयोगिचरमसमये बध्नाति ततोऽनन्तरं न भन्त्स्यतीति विवक्ष्यते तदा यत्सयोगिचरमसमये बध्नातीति तद् बन्धपूर्वकमेव स्यात् नाबन्धपूर्वकं, तत्पूर्वसमये तस्य बन्धकत्वात्, एवं च द्वितीय एव भङ्गः स्यात्, न पुनः षष्ठ इति ६, सप्तमः पुनर्भव्यविशेषस्य अष्टमस्त्वभव्यस्येति ८, इह च भवाकर्षापेक्षेष्वष्टसु भङ्गकेषु 'बंधी बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र प्रथमे भङ्गे उपशान्तमोहः, 'बंधी बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र द्वितीये क्षीणमोहः, 'बंधी न बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र तृतीये उपशान्तमोहः, 'बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र चतुर्थे शैलेशिगतः, 'न बंधी बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र पञ्चमे उपशान्तमोहः, 'बंधी बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र षष्ठे

तस्य दर्शनस्य येषामलब्धिस्ते न सन्त्येव, सर्वजीवानां रुचिमात्रस्यास्तित्वादिति । 'सम्मदंसणलद्धियाणं'ति सम्यग्दृष्टीनां, 'तस्स अलद्धियाण'मित्यादि, 'तस्यालब्धिकानां' सम्यग्दर्शनस्यालब्धिमतां मिथ्यादृष्टीनां मिश्रदृष्टीनां च त्रीण्यज्ञानानि भजनया, यतो मिश्रदृष्टीनामप्यज्ञानमेव, तात्त्विकसद्बोधहेतुत्वाभावान्मिश्रस्येति । 'मिच्छादंसणलद्धियाणं'ति मिथ्यादृष्टीनां, 'तस्स अलद्धियाण'मित्यादि, 'तस्यालब्धिकानां' मिथ्यादर्शनस्यालब्धिमतां सम्यग्दृष्टीनां मिश्रदृष्टीनां च क्रमेण पञ्च ज्ञानानि त्रीण्यज्ञानानि च भजनयेति ॥ 'चरित्तलद्धी'त्यादि चरित्रलब्धिका ज्ञानिन एव, तेषां च पञ्च ज्ञानानि भजनया, यतः केवल्यपि चारित्री । चारित्रालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्तेषां मनःपर्यववर्जानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया भवन्ति, कथम् ?, असंयतत्वे आद्यं ज्ञानद्वयं तत्त्रयं वा, सिद्धत्वे च केवलज्ञानं, सिद्धानामपि चरित्रलब्धिशून्यत्वाद्, यतस्ते नोचारित्रिणो नोअचारित्रिण इति, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनया। 'सामाइए'त्यादि, सामायिकचरित्रलब्धिका ज्ञानिन एव, तेषां च केवलज्ञानवर्जानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया, सामायिकचरित्रलब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, छेदोपस्थापनीयादिभावेन सिद्धभावेन वा, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनया । एवं छेदोपस्थापनीयादिष्वपि वाच्यम्, एतदेवाह–'एव'मित्यादि, तत्र छेदोपस्थापनीयादिचरित्रत्रयलब्धयो ज्ञानिन एव, तेषां चाद्यानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया, तदलब्धयो यथाख्यातचारित्रलब्धयश्च ये ज्ञानिनस्तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, ये त्वज्ञानिनस्तेषामज्ञानत्रयं भजनयैव, यथाख्यातचारित्रलब्धिकानां तु विशेषोऽस्ति अतस्तद्दर्शनायाह—'नवरं अहक्खाये'त्यादि, सामायिकादिचारित्रचतुष्टयलब्धिमतां छद्मस्थत्वेन चत्वार्येव ज्ञानानि भजनया, यथाख्यातचारित्रलब्धिमतां छद्मस्थेतरभावेन पञ्चापि भजनया भवन्तीति तेषां तथैव तान्युक्तानि ॥ 'चरित्ताचरित्ते'त्यादौ, 'तस्स अलद्धिय'त्ति चरि-

प्रस्थापयेदिति, 'इच्चेएहिं'इत्यादि निगमनं सामान्येन, 'जहा जहा से'इत्यादि तु विशेषनिगमनमिति ॥ एतैर्व्यवहर्त्तुः फलं प्रश्न-द्वारेणाह—'से किं'मित्यादि, अथ किं हे भदन्त !—भट्टारक 'आहुः' प्रतिपादयन्ति ? ये 'आगमबलिकाः' उक्तज्ञानविशेषबल-वन्तः श्रमणा निर्ग्रन्थाः केवलिप्रभृतयः'इच्चेयं'ति इत्येतद्वक्ष्यमाणं, अथवा इत्येवमिति—उक्तरूपं एतं प्रत्यक्षं पञ्चविधं व्यवहारं प्रायश्चित्तदा-नादिरूपं 'सम्मं ववहरमाणे'त्ति संबध्यते, व्यवहरन् प्रवर्त्तयन्नित्यर्थः, कथं ?—'सम्मं'ति सम्यक्, तदेव कथम् ? इत्याह—'यदा २' यस्मिन् २ अवसरे 'यत्र २' प्रयोजने वा क्षेत्रे वा यो य उचितस्तं तमिति शेषः तदा २ काले तस्मिन् २ प्रयोजनादौ, कथम्भूतम्? इत्याह—अनिश्रितैः—सर्वाशंसारहितैरुपाश्रितः—अङ्गीकृतोऽनिश्रितोपाश्रितस्तम्, अथवा निश्रितश्च—शिष्यत्वादि प्रतिपन्नः उपाश्रितश्च—स एव वैयावृत्त्यकरत्वादिना प्रत्यासन्नतरस्तौ, अथवा निश्रितं—रागः उपाश्रितं च—द्वेषस्ते, अथवा निश्रितं च—आहारादिलिप्सा उपाश्रितं च—शिष्यप्रतीच्छककुलाद्यपेक्षा ते न स्तो यत्र तत्तथेति क्रियाविशेषणं, सर्वथा पक्षपातरहितत्वेन यथावदित्यर्थः, इह पूज्यव्याख्या—"रागो य होइ निस्सा उवस्सिओ दोससंजुत्तो ॥ अहवण आहाराई दाही मज्झं तु एस निस्सा उ । सीसो पडिच्छओ वा होइ उवस्सा कुलादीया ॥ १ ॥" इति, आज्ञाया—जिनोपदेशस्याराधको भवतीति, हन्त ! आहुरेवेति गुरुवचनं गम्यमिति, अन्ये तु 'से किमाहु भंते !' इत्याद्येवं व्याख्यान्ति—अथ किमाहुर्भदन्त ! आगमबलिकाः श्रमणा निर्ग्रन्थाः ? पञ्चविधव्यवहारस्य फलमिति शेषः, अत्रो त्तरमाह—'इच्चेय'मित्यादि ॥ आज्ञाराधकश्च कर्म्म क्षपयति शुभं वा तद् बध्नातीति बन्धं निरूपयन्नाह—'कई'त्यादि, 'बंधे'त्ति द्रव्यतो निगडादिबन्धो भावतः कर्मबन्धः, इह च प्रक्रमात् कर्मबन्धोऽधिकृतः'ईरियावहियाबंधे य'त्ति ईर्या—गमनं तत्प्रधानः पन्था—मार्ग ईर्यापथस्तत्र भवमैर्यापथिकं—केवलयोगप्रत्ययं कर्म्म तस्य यो बन्धः स तथा, स चैकस्य वेदनीयस्य. 'संपराइयबंधे य'त्ति संपरैति—

संसारं पर्यटति एभिरिति सम्परायाः-कषायास्तेषु भवं साम्परायिकं कर्म तस्य यो बन्धः स साम्परायिकबन्धः, कषायप्रत्यय इत्यर्थः, स चावीतरागगुणस्थानकेषु सर्वेष्विति । 'नो नेरइओ'इत्यादि, मनुष्यस्यैव तद्बन्धो, यस्मादुपशान्तमोहक्षीणमोहसयोगकेवलिनामेव तद्बन्धनमिति, 'पुव्वपडिवन्नए'इत्यादि, पूर्वं-प्राक्काले प्रतिपन्नमैर्यापथिकबन्धकत्वं यैस्ते पूर्वप्रतिपन्नकास्तान्, तद्बन्धकत्वद्वितीयादिसमयवर्त्तिन इत्यर्थः, ते च सदैव बहवः पुरुषाः स्त्रियश्च सन्ति, उभयेषां केवलिनां सदैव भावात्, अत उक्तं 'मणुस्सा मणुस्सीओ य बंधंति'त्ति, 'पडिवज्जमाणए'त्ति प्रतिपद्यमानकान्, ऐर्यापथिककर्म्मबन्धनप्रथमसमयवर्त्तिन इत्यर्थः, एषां च विरहसम्भवाद् एकदा मनुष्यस्य स्त्रियाश्चैकैकयोगे एकत्वबहुत्वाभ्यां चत्वारो विकल्पाः, द्विकसंयोगे तथैव चत्वारः, एवमेते सर्वेऽप्यष्टौ, स्थापना चेयमेषाम्-पुं १ स्त्री १ पुं ३ स्त्री ३ ।

| पु | स्त्री |
|---|---|
| १ | १ |
| १ | ३ |
| ३ | १ |
| ३ | ३ |

। एतदेवाह-'मणुस्से वा'इत्यादि, एषां च पुंस्त्वादि तत्तल्लिङ्गापेक्षया, न तु वेदापेक्षया, क्षीणोपशान्तवेदत्वात् । अथ वेदापेक्षं स्त्रीत्वाद्यधिकृत्याह-'तं भंते! किं'मित्यादि, 'नो इत्थी'इत्यादि च पद्- त्रयनिषेधेनावेदकः प्रश्नितः, उत्तरे तु पण्णां पदानां निषेधः, सप्तमपदोक्तस्तु व्यपगतवेदः, तत्र च पूर्वप्रतिपन्नाः प्रतिपद्यमानकाश्च भवन्ति, तत्र पूर्वप्रतिपन्नकानां विगतवेदानां सदा बहुत्वभावात् आह-'पुव्वपडिवन्ने'त्यादि, प्रतिपद्यमानकानां तु सामयिकत्वाद् विरहभावेनैकादिसम्भवाद्विकल्पद्वयमत एवाह-'पडिवज्जमाणे'त्यादि ॥ अपगतवेदमैर्यापथिकबन्धमाश्रित्य स्त्रीत्वादि भूतभावापेक्षया विकल्पयन्नाह-'जई'त्यादि, 'तं भंते!' तदा भदन्त! तद्वा कर्म्म 'इत्थीपच्छाकडे'त्ति भावप्रधानत्वान्निर्देशस्य स्त्रीत्वं पश्चात्कृतं-भूततां नीतं येनावेदकेनासौ स्त्रीपश्चात्कृतः, एवमन्यान्यपि, इहैककयोगे एकत्वबहुत्वाभ्यां षड् विकल्पाः, द्विकयोगे तु तथैव द्वादश, त्रिकयोगे पुनस्तथैवाष्टौ, एते च सर्वे षड्विंशतिः, इयं चैषां-स्थापना-स्त्री १ पु० १ न० १ स्त्री ३ पु० ३ न० ३।

सूत्रे च चतुर्भङ्ग्यष्टभङ्गीनां प्रथमविकल्पा दर्शिताः ॥ अस्तार स्थापना सर्वान्तिमश्चेति । अथैर्यापथिककर्मबन्धनमेव कालत्रयेण विकल्पयन्नाह–'तं भंते!' इत्यादि, 'तद्' ऐर्यापथिकं कर्म 'बंधी'ति बद्धवान् बध्नाति भन्त्स्यति चेत्येको विकल्पः, एवमन्येऽपि सप्त, एषां च स्थापना । उत्तरं तु 'भवे'त्यादि, भवे अनेकत्रोपशमादिश्रेणिप्राप्त्या आकर्षः—ऐर्यापथिककर्माणुग्रहणं भवाकर्षस्तं प्रतीत्य 'अस्त्येकः' भवत्येकः कश्चिज्जीवः प्रथमवैकल्पिकः, तथाहि–पूर्वभवे उपशान्तमोहत्वे सत्यैर्यापथिकं कर्म्म बद्धवान्, वर्त्तमानभवे चोपशान्तमोहत्वे बध्नाति, अनागते चोपशान्तमोहावस्थायां भन्त्स्यतीति १, द्वितीयस्तु यः पूर्वस्मिन् भवे उपशान्तमोहत्वं लब्धवान् वर्त्तमाने च क्षीणमोहत्वं प्राप्तः स पूर्वं बद्धवान् वर्त्तमाने च बध्नाति शैलेश्यवस्थायां पुनर्न भन्त्स्यतीति २, तृतीयः पूर्वजन्मनि उपशान्तमोहत्वे बद्धवान् तत्प्रतिपतितो न बध्नाति अनागते चोपशान्तमोहत्वं प्रतिपत्स्यते तदा भन्त्स्यतीति ३, चतुर्थस्तु शैलेशीपूर्वकाले बद्धवान् शैलेश्यां च न बध्नाति न च पुनर्भन्त्स्यतीति ४, पञ्चमस्तु पूर्वजन्मनि नोपशान्तमोहत्वं लब्धवानिति न बद्धवान् अधुना लब्धवानिति बध्नाति पुनरप्येष्यत्काले उपशान्तमोहाद्यवस्थायां भन्त्स्यतीति पञ्चमः ५, षष्ठः पुनः क्षीणमोहत्वादि न लब्धवानिति न पूर्वं बद्धवान् अधुना तु क्षीणमोहत्वं लब्धमिति बध्नाति शैलेश्यवस्थायां पुनर्न भन्त्स्यतीति षष्ठः ६, सप्तमः पुनर्भव्यस्य, स ह्यनादौ काले न बद्धवान् अधुनाऽपि कश्चिन्न बध्नाति कालान्तरे तु भन्त्स्यतीति ७, अष्टमस्त्वभव्यस्य ८, स च प्रतीत एव । 'गहणागरिस'मित्यादि, एकस्मिन्नेव भवे ऐर्यापथिककर्मपुद्गलानां ग्रहणरूपो य आकर्षोऽसौ ग्रहणाकर्षस्तं प्रतीत्यास्त्येकः कश्चिज्जीवः

| स्त्री | पुं | स्त्री | न | पुं | न |
|---|---|---|---|---|---|
| १ | १ | १ | १ | १ | १ |
| १ | २ | १ | २ | १ | २ |
| २ | १ | २ | १ | २ | १ |
| २ | २ | २ | २ | २ | २ |

| स्त्री | पुं | न |
|---|---|---|
| १ | १ | १ |
| १ | १ | २ |
| १ | २ | १ |
| १ | २ | २ |
| २ | १ | १ |
| २ | १ | २ |
| २ | २ | १ |
| २ | २ | २ |

| प्रस्तार स्थापना |
|---|
| ऽ ऽ ऽ |
| ऽ ऽ । |
| ऽ । ऽ |
| ऽ । । |
| । ऽ ऽ |
| । ऽ । |
| । । ऽ |
| । । । |

प्रथमवैकल्पिकः, तथाहि—उपशान्तमोहादिर्यदा ऐर्यापथिकं कर्म बद्ध्वा बध्नाति तदाऽतीतसमयापेक्षया बद्धवान् वर्त्तमानसमयापेक्षया च बध्नाति अनागतसमयापेक्षया तु भन्त्स्यतीति १, द्वितीयस्तु केवली, स ह्यतीतकाले बद्धवान् वर्त्तमाने च बध्नाति शैलेश्यवस्थायां पुनर्न भन्त्स्यतीति २, तृतीयस्तूपशान्तमोहत्वे बद्धवान् तत्प्रतिपतितस्तु न बध्नाति पुनस्तत्रैव भवे उपशमश्रेणीं प्रतिपन्नो भन्त्स्यतीति, एकभवे चोपशमश्रेणी द्विर्वारं प्राप्यत एवेति ३, चतुर्थः पुनः सयोगित्वे बद्धवान् शैलेश्यवस्थायां न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति ४, पञ्चमः पुनरायुषः पूर्वभागे उपशान्तमोहत्वादि न लब्धमिति न बद्धवान् अधुना तु लब्धमिति बध्नाति तदद्धाया एव चैष्यत्समयेषु पुनर्भन्त्स्यतीति ५, षष्ठस्तु नास्त्येव, तत्र बद्धवान् बध्नातीत्यनयोरुपपद्यमानत्वेऽपि न भन्त्स्यतीत्यस्यानुपपद्यमानत्वात्, तथाहि— आयुषः पूर्वभागे उपशान्तमोहत्वादि न लब्धमिति न बद्धवान् तल्लाभसमये च बध्नाति ततोऽनन्तरसमयेषु च भन्त्स्यत्येव, न तु न भन्त्स्यति, समयमात्रस्य बन्धस्येहाभावात्, यस्तु मोहोपशमनिर्ग्रन्थस्य समयानन्तरमरणेनैर्यापथिककर्मबन्धः समयमात्रो भवति नासौ षष्ठविकल्पहेतुः, तदनन्तरैर्यापथिककर्म्मबन्धाभावस्य भवान्तरवर्त्तित्वाद् ग्रहणाकर्षस्य चेह प्रक्रान्तत्वात्, यदि पुनः सयोगिचरमसमये बध्नाति ततोऽनन्तरं न भन्त्स्यतीति विवक्ष्यते तदा यत्सयोगिचरमसमये बध्नातीति तद् बन्धपूर्वकमेव स्यात् नाबन्धपूर्वकं, तत्पूर्वसमये तस्य बन्धकत्वात्, एवं च द्वितीय एव भङ्गः स्यात्, न पुनः षष्ठ इति ६, सप्तमः पुनर्भव्यविशेषस्य अष्टमस्त्वभव्यस्येति ८, इह च भवाकर्षापेक्षेष्वष्टसु भङ्गकेषु 'बंधी बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र प्रथमे भङ्गे उपशान्तमोहः, 'बंधी बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र द्वितीये क्षीणमोहः, 'बंधी न बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र तृतीये उपशान्तमोहः, 'बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र चतुर्थे शैलेशिगतः, 'न बंधी बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र पञ्चमे उपशान्तमोहः, 'बंधी बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र षष्ठे

सव्वेणं देसं बंधइ सव्वेणं सव्वं बंधइ ?, गोयमा ! नो देसेणं देसं बंधइ णो देसेणं सव्वं बंधइ नो सव्वेणं देसं बंधइ, सव्वेणं सव्वं बंधइ ॥ ( सूत्रं ३४० ) ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, व्यवहरणं व्यवहारो-मुमुक्षुप्रवृत्तिनिवृत्तिरूपः, इह तु तन्निबन्धनत्वात् ज्ञानविशेषोऽपि व्यवहारः, तत्रागम्यन्ते-परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेनेत्यागमः-केवलमनःपर्यायावधिपूर्वचतुर्दशकदशकनवकरूपः, तथा श्रुतं-शेषमाचारप्रकल्पादि, नवादिपूर्वाणां च श्रुतत्वेऽप्यतीन्द्रियार्थेषु विशिष्टज्ञानहेतुत्वेन सातिशयत्वादागमव्यपदेशः केवलवदिति, तथाऽऽज्ञा-यदगीतार्थस्य पुरतो गूढार्थपदैर्देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनायातीचारालोचनं इतरस्यापि तथैव शुद्धिदानं, तथा धारणा-गीतार्थसंविग्नेन द्रव्याद्यपेक्षया यत्रापराधे यथा या विशुद्धिः कृता तामवधार्य यदगुप्तमेवालोचनदानतस्तत्रैव तथैव तामेव प्रयुङ्क्ते इति, वैयावृत्त्यकरादेर्वा गच्छोपग्रहकारिणोऽशेषानुचितस्य उचित्त प्रायश्चित्तपदानां प्रदर्शितानां धरणमिति, तथा जीतं द्रव्यक्षेत्रकालभावपुरुषप्रतिसेवानुवृत्त्या संहननधृत्यादिपरिहाणिमवेक्ष्य यत् प्रायश्चित्तदानं यो वा यत्र गच्छे सूत्रातिरिक्तः कारणतः प्रायश्चित्तव्यवहारः प्रवर्तितो बहुभिरन्यैश्चानुवर्तित इति। आगमादीनां व्यापारणे उत्सर्गापवादावाह-'जहे'त्यादि, यथेति यथाप्रकारः केवलादीनामन्यतमः 'से' तस्य व्यवहर्त्तुः स चोक्तलक्षणो व्यवहारः 'तत्र' तेषु पञ्चसु व्यवहारेषु मध्ये तस्मिन् वा प्रायश्चित्तदानादिव्यवहारकाले व्यवहर्त्तव्ये वा वस्तुनि विषये 'आगमः' केवलादिः 'स्यात्' भवेत् तादृशेनेति शेषः आगमेन 'व्यवहारं' प्रायश्चित्तदानादिकं 'प्रस्थापयेत्' प्रवर्त्तयेत्, न शेषैः, आगमेऽपि षड्विधे केवलेन, अवन्ध्यबोधत्वात्तस्य, तदभावे मनःपर्यायेण, एवं प्रधानतराभावे इतरेणेति । अथ 'नो' नैव चशब्दो यदिशब्दार्थः, 'से' तस्य वा तत्र व्यवहर्त्तव्यादावागमः स्यात् 'यथा' यत्प्रकारं 'से' तस्य तत्र व्यवहर्त्तव्यादौ श्रुतं स्यात् तादृशेन श्रुतेन व्यवहारं

प्रथमवैकल्पिकः, तथाहि—उपशान्तमोहादिर्यदा ऐर्यापथिकं कर्म बद्ध्वा बध्नाति तदाऽतीतसमयापेक्षया बद्धवान् वर्त्तमानसमयापेक्षया च बध्नाति अनागतसमयापेक्षया तु भन्त्स्यतीति १, द्वितीयस्तु केवली, स ह्यतीतकाले बद्धवान् वर्त्तमाने च बध्नाति शैलेश्यवस्थायां पुनर्न भन्त्स्यतीति २, तृतीयस्तूपशान्तमोहत्वे बद्धवान् तत्प्रतिपतितस्तु न बध्नाति पुनस्तत्रैव भवे उपशमश्रेणीं प्रतिपन्नो भन्त्स्यतीति, एकभवे चोपशमश्रेणी द्विर्वारं प्राप्यत एवेति ३, चतुर्थः पुनः सयोगित्वे बद्धवान् शैलेश्यवस्थायां न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति ४, पञ्चमः पुनरायुषः पूर्वभागे उपशान्तमोहत्वादि न लब्धमिति न बद्धवान् अधुना तु लब्धमिति बध्नाति तदद्धाया एव चैष्यत्समयेषु पुनर्भन्त्स्यतीति ५, षष्ठस्तु नास्त्येव, तत्र बद्धवान् बध्नातीत्यनयोरुपपद्यमानत्वेऽपि न भन्त्स्यतीत्यस्यानुपपद्यमानत्वात्, तथाहि— आयुषः पूर्वभागे उपशान्तमोहत्वादि न लब्धमिति न बद्धवान् तल्लाभसमये च बध्नाति ततोऽनन्तरसमयेषु च भन्त्स्यत्येव, न तु न भन्त्स्यति, समयमात्रस्य बन्धस्येहाभावात्, यस्तु मोहोपशमनिर्ग्रन्थस्य समयानन्तरमरणेनैर्यापथिककर्मबन्धः समयमात्रो भवति नासौ षष्ठविकल्पहेतुः, तदनन्तरैर्यापथिककर्मबन्धाभावस्य भवान्तरवर्त्तित्वाद् ग्रहणाकर्षस्य चेह प्रक्रान्तत्वात्, यदि पुनः सयोगिचरमसमये बध्नाति ततोऽनन्तरं न भन्त्स्यतीति विवक्ष्यते तदा यत्सयोगिचरमसमये बध्नातीति तद् बन्धपूर्वकमेव स्यात् नाबन्धपूर्वकं, तत्पूर्वसमये तस्य बन्धकत्वात्, एवं च द्वितीय एव भङ्गः स्यात्, न पुनः षष्ठ इति ६, सप्तमः पुनर्भव्यविशेषस्य अष्टमस्त्वभव्यस्येति ८, इह च भवाकर्षापेक्षेष्वष्टसु भङ्गकेषु 'बंधी बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र प्रथमे भङ्गे उपशान्तमोहः, 'बंधी बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र द्वितीये क्षीणमोहः, 'बंधी न बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र तृतीये उपशान्तमोहः, 'बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र चतुर्थे शैलेशिगतः, 'न बंधी बंधइ बंधिसइ' इत्यत्र पञ्चमे उपशान्तमोहः, बंधी बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र षष्ठे

सव्वेणं देसं बंधइ सव्वेणं सव्वं बंधइ ?, गोयमा ! नो देसेणं देसं बंधइ णो देसेणं सव्वं बंधइ नो सव्वेणं देसं बंधइ, सव्वेणं सव्वं बंधइ ॥ ( सूत्रं ३४० ) ॥

'कइविहे णं'मित्यादि, व्यवहरणं व्यवहारो–मुमुक्षुप्रवृत्तिनिवृत्तिरूपः, इह तु तन्निबन्धनत्वात् ज्ञानविशेषोऽपि व्यवहारः, तत्रागम्यन्ते–परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेनेत्यागमः–केवलमनःपर्यायावधिपूर्वचतुर्दशकदशकनवकरूपः, तथा श्रुतं–शेषमाचारप्रकल्पादि, नवादिपूर्वाणां च श्रुतत्वेऽप्यतीन्द्रियार्थेषु विशिष्टज्ञानहेतुत्वेन सातिशयत्वादागमव्यपदेशः केवलवदिति, तथाऽऽज्ञा–यदगीतार्थस्य पुरतो गूढार्थपदैर्देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनायातीचारालोचनं इतरस्यापि तथैव शुद्धिदानं, तथा धारणा–गीतार्थसंविग्नेन द्रव्याद्यपेक्षया यत्रापराधे यथा या विशुद्धिः कृता तामवधार्य यदगुप्तमेवालोचनदानतस्तत्रैव तथैव तामेव प्रयुङ्क्ते इति, वैयावृत्त्यकरादेर्वा गच्छोपग्रहकारिणोऽशेषानुचितस्य उचित्त प्रायश्चित्तपदानां प्रदर्शितानां धरणमिति, तथा जीतं द्रव्यक्षेत्रकालभावपुरुषप्रतिसेवानुवृत्त्या संहननधृत्यादिपरिहाणिमवेक्ष्य यत् प्रायश्चित्तदानं यो वा यत्र गच्छे सूत्रातिरिक्तः कारणतः प्रायश्चित्तव्यवहारः प्रवर्तितो बहुभिरन्यैश्चानुवर्तित इति। आगमादीनां व्यापारणे उत्सर्गापवादावाह–'जहे'त्यादि, यथेति यथाप्रकारः केवलादीनामन्यतमः 'से' तस्य व्यवहर्त्तुः स चोक्तलक्षणो व्यवहारः 'तत्र' तेषु पञ्चसु व्यवहारेषु मध्ये तस्मिन् वा प्रायश्चित्तदानादिव्यवहारकाले व्यवहर्त्तव्ये वा वस्तुनि विषये 'आगमः' केवलादिः 'स्यात्' भवेत् तादृशेनेति शेषः आगमेन 'व्यवहारं' प्रायश्चित्तदानादिकं 'प्रस्थापयेत्' प्रवर्तयेत्, न शेषैः, आगमेऽपि षड्विधे केवलेन, अवन्ध्यबोधत्वात्तस्य, तदभावे मनःपर्यायेण, एवं प्रधानतराभावे इतरेणेति । अथ 'नो' नैव चशब्दो यदिशब्दार्थः, 'से' तस्य वा तत्र व्यवहर्त्तव्यादावागमः स्यात् 'यथा' यत्प्रकारं 'से' तस्य तत्र व्यवहर्त्तव्यादौ श्रुतं स्यात् तादृशेन श्रुतेन व्यवहारं

कडो य णपुंसगपच्छाकडो य बंधइ ४ उदाहु पुरिसपच्छाकडो य णपुंसगपच्छाकडो य बंधइ ४ उदाहु इत्थिपच्छाकडो य पुरिसपच्छाकडो य णपुंसगपच्छाकडो य भाणियव्वं ८, एवं एते छव्वीसं भंगा २६ जाव उदाहु इत्थीपच्छाकडा य पुरिसप० नपुंसकप० बंधंति ?, गोयमा ! इत्थिपच्छाकडोवि बंधइ १ पुरिसपच्छाकडोवि बं० २ नपुंसगपच्छाकडोवि बं० ३ इत्थीपच्छाकडावि बं० ४ पुरिसपच्छाकडावि बं० ५ नपुंसकपच्छाकडावि बं० ६ अहवा इत्थीपच्छाकडो पुरिसपच्छाकडो य बंधइ ७ एवं एए चेव छव्वीसं भंगा भाणियव्वा, जाव अहवा इत्थिपच्छाकडा य पुरिसपच्छाकडा य नपुंसगपच्छाकडा य बंधंति ॥ तं भंते ! किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २ बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३ बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४ न बंधी बंधइ बंधिस्सइ ५ न बंधी बंधइ न बंधिस्सइ ६ न बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ७ न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ८ ?, गोयमा ! भवागरिसं पडुच्च अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगतिए बंधी बंधइ न बंधिस्सइ, एवं तं चेव सव्वं जाव अत्थेगतिए न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ, गहणागरिसं पडुच्च अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ एवं जाव अत्थेगतिए न बंधी बंधइ बंधिस्सइ, णो चेव णं न बंधी बंधइ न बंधिस्सइ, अत्थेगतिए न बंधी न बंधइ बंधिस्सइ अत्थेगतिए न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ॥ तं भंते ! किं साइयं सपज्जवसियं बंधइ साइयं अपज्जवसियं बंधइ अणाइयं सपज्जवसियं बंधइ अणाइयं अपज्जवसियं बंधइ ?, गोयमा ! साइयं सपज्जवसियं बंधइ, नो साइयं अपज्जवसियं बंधइ नो अणाइयं सपज्जवसियं बंधइ नो अणाइयं अपज्जवसियं बंधइ ॥ तं भंते ! किं देसेणं देसं बंधइ देसेणं सव्वं बंधइ

माहु भंते !, आगमबलिया समणा निग्गंथा, इच्चेतं पंचविहं ववहारं जया २ जहिं २ तहा २ तहिं २ अणिस्सिओवस्सितं सम्मं ववहरमाणे समणे निग्गंथे आणाए आराहए भवइ ॥ ( सूत्रं ३३९ ) ॥ कइविहे णं भंते ! बंधे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे बंधे पन्नत्ते, तंजहा–ईरियावहियाबंधे य संपराइयबंधे य। ईरियावहियण्णं भंते ! कम्मं किं नेरइओ बंधइ तिरिक्खजोणिओ बंधइ तिरिक्खजोणिणी बंधइ मणुस्सो बं० मणुस्सी बं० देवो बं० देवी बं० ?, गोयमा ! नो नेरइओ बंधइ नो तिरिक्खजोणिओ बंधइ नो तिरिक्खजोणिणी बंधइ नो देवो बंधइ नो देवी बंधइ, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च मणुस्सा य मणुस्सीओ य बं० पडिवज्जमाणए पडुच्च मणुस्सो वा बंधइ १ मणुस्सी वा बंधइ २ मणुस्सा वा बंधंति ३ मणुस्सीओ वा बंधंति ४ अहवा मणुस्सो य मणुस्सी य बंधइ ५ अहवा मणुस्सो य मणुस्सीओ य बंधन्ति ६ अहवा मणुस्सा य मणुस्सी य बंधंति ७ अहवा मणुस्सा य मणुस्सीओ य बं० ८॥ तं भंते! किं इत्थी बंधइ पुरिसो बंधइ नपुंसगो बंधति इत्थीओ बंधन्ति पुरिसा बं० नपुंसगा बंधन्ति नोइत्थीनोपुरिसोनोनपुंसओ बंधइ ?, गोयमा ! नो इत्थी बंधइ नो पुरिसो बं० जाव नो नपुंसगा बंधन्ति, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च अवगयवेदा बंधंति, पडिवज्जमाणए य पडुच्च अवगयवेदो वा बंधति अवगयवेदा वा बंधंति ॥ जइ भंते ! अवगयवेदो वा बंधइ अवगयवेदा वा बंधंति ते भंते ! किं इत्थीपच्छाकडो बं० पुरिसपच्छाकडो बं० २ नपुंसकपच्छाकडो बं० ३ इत्थीपच्छाकडा बंधंति ४ पुरिसपच्छाकडावि बंधंति ५ नपुंसगपच्छाकडावि बं० ६ उदाहु इत्थिपच्छाकडो य पुरिसपच्छाकडो य बंधंति ४ उदाहु इत्थीपच्छा-

संघो गणसमुदाओत्तिकाऊणं ॥ २ ॥" 'अणुकंप'मित्यादि, अनुकम्पा-भक्तपानादिभिरुपष्टम्भस्तां प्रतीत्य, तत्र तपस्वी-क्षपकः ग्लानो-रोगादिभिरसमर्थः शैक्षः-अभिनवप्रव्रजितः, एते ह्यनुकम्पनीया भवन्ति, तदकरणाकारणाभ्यां च प्रत्यनीकतेति ॥ 'सुयपण्ण'मित्यादि, 'श्रुतं'सूत्रादि, तत्र सूत्रं-व्याख्येयम् अर्थः-तद्व्याख्यानं निर्युक्त्यादि तदुभयं-एतद्द्वितयं, तत्प्रत्यनीकता च—"काया वया य ते च्चिय ते चेव पमाय अप्पमाया य। मोक्खाहिगारियाणं जोइसजोणीहिं किं कज्जं ? ॥ १ ॥" इत्यादि दूषणोद्भावनं। 'भाव'मित्यादि, भावः-पर्यायः, स च जीवाजीवगतः, तत्र जीवस्य प्रशस्तोऽप्रशस्तश्च, तत्र प्रशस्तः-क्षायिकादिः अप्रशस्तो विवक्षयौदयिकः, क्षायिकादिः पुनर्ज्ञानादिरूपोऽतो भावान् ज्ञानादीन् प्रति प्रत्यनीकः तेषां वितथप्ररूपणतो दूषणतो वा, यथा—"पाययसुत्तनिबद्धं को वा जाणइ पणीय केणेयं ?। किं वा चरणेणं तु दाणेण विणा उ हवइत्ति ? ॥१॥" एते च प्रत्यनीका अपुनःकरणेनाभ्युत्थिताः शुद्धिमर्हन्ति, शुद्धिश्च व्यवहारादिति व्यवहारप्ररूपणायाह—

कइविहे णं भंते ! ववहारे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे ववहारे पन्नत्ते, तंजहा-आगमे सुत्तं आणा धारणा जीए, जहा से तत्थ आगमे सिया आगमेणं ववहारं पट्ठवेज्जा, णो य से तत्थ आगमे सिया जहा से तत्थ सुते सिया सुएणं ववहारं पट्ठवेज्जा, णो वा से तत्थ सुए सिया जहा से तत्थ आणा सिया आणाए ववहारं पट्ठवेज्जा, णो य से तत्थ आणा सिया जहा से तत्थ धारणा सिया धारणाए णं ववहारं पट्ठवेज्जा, णो य से तत्थ धारणा सिया जहा से तत्थ जीए सिया जीएणं ववहारं पट्ठवेज्जा, इच्चेएहिं पंचहिं ववहारं पट्ठवेज्जा, तंजहा-आगमेणं सुएणं आणाए धारणाए जीएणं, जहा २ से आगमे सुए आणा धारणा जीए तहा २ ववहारं पट्ठवेज्जा ॥ से किं-

**समूहण्णं भंते! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता?, गोयमा! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा–कुलपडिणीए गणपडिणीए संघपडिणीए॥ अणुकंपं पडुच्च पुच्छा, गोयमा! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा–तवस्सिपडिणीए गिलाणपडिणीए सेहपडिणीए ॥ सुयण्णं भंते ! पडुच्च पुच्छा, गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा–सुत्तपडिणीए अत्थपडिणीए तदुभयपडिणीए। भावं णं भंते ! पडुच्च पुच्छा, गोयमा ! तओ पडिणीया पन्नत्ता, तंजहा—नाणपडिणीए दंसणपडिणीए चरित्तपडिणीए ॥ ( सूत्रं ३३८ ) ॥**

'रायगिहे'इत्यादि, तत्र 'गुरू णं'ति'गुरून्' तत्त्वोपदेशकान् प्रतीत्य–आश्रित्य प्रत्यनीकमिव–प्रतिसैन्यमिव प्रतिकूलतया ये ते प्रत्यनीकाः, तत्राचार्यः–अर्थव्याख्याता उपाध्यायः–सूत्रदाता, स्थविरस्तु जातिश्रुतपर्यायैः, तत्र जात्या षष्टिवर्षजातः श्रुतस्थविरः–समवायधरः पर्यायस्थविरो–विंशतिवर्षपर्यायः, एतत्प्रत्यनीकता चैवम्–''जच्चाईहिं अवन्नं भासइ वट्टइ न यावि उववाए। अहिओ छिद्दप्पेही पगासवाई अणणुलोमो ॥ १ ॥ अहवावि वए एवं उवएस परस्स देंति एवं तु। दसविहवेयावच्चे कायव्व सयं न कुव्वंति ॥२॥'' 'गइं ण'मित्यादि, 'गतिं' मानुष्यत्वादिकां प्रतीत्य तत्रेहलोकस्य–प्रत्यक्षस्य मानुषत्वलक्षणपर्यायस्य प्रत्यनीक इन्द्रियार्थप्रतिकूलकारित्वात् पञ्चाग्नितपस्विवद् इहलोकप्रत्यनीकः, परलोको–जन्मान्तरं तत्प्रत्यनीकः–इन्द्रियार्थतत्परः, द्विधालोकप्रत्यनीकश्च चौर्यादिभिरिन्द्रियार्थसाधनपरः ॥ 'समूहण्णं भंते !'इत्यादि, 'समूहं' साधुसमुदायं प्रतीत्य, तत्र कुलं–चान्द्रादिकं तत्समूहो गणः–कोटिकादिस्तत्समूहः संघः, प्रत्यनीकता चैतेषामवर्णवादादिभिरिति, कुलादिलक्षणं चेदम्—''एत्थ कुलं विन्नेयं एगायरियस्स संतई जा उ। तिण्ह कुलाण मिहो पुण सावेक्खाणं गणो होइ ॥ १ ॥ सव्वोऽवि नाणदंसणचरणगुणविहूसियाण समणाणं। समुदाओ पुण

तभेदप्रक्रमे यद् गतिभेदभणनं तद् गतिधर्मत्वात् प्रपातस्य गतिभेदभणने गतिप्रपातभेदा एव भणिता भवन्तीति न्यायादवसेयं, तत्र प्रयोगस्य सत्यमनःप्रभृतिकस्य पञ्चदशविधस्य गतिः प्रवृत्तिः प्रयोगगतिः, 'ततगइ'त्ति ततस्य-ग्रामनगरादिकं गन्तुं प्रवृत्तत्वेन तच्चाप्राप्तत्वेन तदन्तरालपथे वर्त्तमानतया प्रसारितक्रमतया च विस्तारं गतस्य गतिः ततगतिः, ततो वाऽवधिभूतग्रामादेर्नगरादौ गतिः प्राकृतत्वेन ततगई, अस्मिंश्च स्थाने इतः सूत्रादारभ्य प्रज्ञापनायां षोडशं प्रयोगपदं 'सेत्तं विहायगई' एतत्सूत्रं यावद्वाच्यम्, एतदेवाह-'एत्तो'इत्यादि, तच्चैवं-'बंधणछेयणगई उववायगई विहायगई'इत्यादि, तत्र बन्धनच्छेदनगतिः-बन्धनस्य कर्मणः सम्बन्धस्य वा छेदने-अभावे गतिर्जीवस्य शरीरात् शरीरस्य वा जीवाद् बन्धनच्छेदनगतिः,उपपातगतिस्तु त्रिविधा-क्षेत्रभवनोभवभेदात्, तत्र नारकतिर्यग्नरदेवसिद्धानां यत् क्षेत्रे उपपाताय-उत्पादाय गमनं सा क्षेत्रोपपातगतिः, या च नारकादीनामेव स्वभवे उपपातरूपा गतिः सा भवोपपातगतिः, यच्च सिद्धपुद्गलयोर्गमनमात्रं सा नोभवोपपातगतिः, विहायोगतिस्तु स्पृशद्गत्यादिकाऽनेकविधेति ॥ अष्टमे शते सप्तमः ॥ ७ ॥

---

अनन्तरोद्देशके स्थविरान् प्रत्यन्ययूथिकाः प्रत्यनीका उक्ताः, अष्टमे तु गुर्वादिप्रत्यनीका उच्यन्ते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदं सूत्रम्-

**रायगिहे नगरे जाव एवं वयासी-गुरू णं भंते ! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता?, गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता ?, तंजहा-आयरियपडिणीए उवज्झायपडिणीए थेरपडिणीए ॥ गई णं भंते ! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता ?, गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा-इहलोगपडिणीए परलोगपडिणीए दुहओलोगपडिणीए॥**

तदा पात्रपतनलक्षणं ग्रहणमदत्तस्यापि प्राप्तमिति, निर्ग्रन्थोत्तरवाक्ये तु 'अम्हाण अज्जो! दिज्जमाणे दिन्ने'इत्यादि यदुक्तं तत्र क्रियाकाल-निष्ठाकालयोरभेदाद्दीयमानत्वादेर्दत्तत्वादि समवसेयमिति । अथ दीयमानमदत्तमित्यादेर्भवन्मतत्वाद् यूयमेवासंयतत्वादिगुणा इत्या-वेदनायान्ययूथिकान् प्रति स्थविराः प्राहुः—'तुज्झे णं अज्जो ! अप्पणा चेवे'त्यादि, 'रीयं रीयमाण'त्ति 'रीतं' गमनं 'रीय-माणाः' गच्छन्तो, गमनं कुर्वाणा इत्यर्थः 'पुढविं पेच्चेह' पृथिवीमाक्रामयेत्यर्थः 'अभिहणह'त्ति पादाभ्यामाभिमुख्येन हथ 'वत्तेह'त्ति पादाभिघातेनैव 'वर्त्तयथ' श्लक्ष्णतां नयथ 'लेसेह'त्ति 'श्लेषयथ' भूम्यां श्लिष्टां कुरुथ 'संघाएह'त्ति 'सङ्घातयथ' संहतां कुरुथ 'संघट्टेह'त्ति 'सङ्घट्टयथ' स्पृशथ 'परितावेह'त्ति 'परितापयथ' समन्ताज्जातसन्तापां कुरुथ 'किलामेह'त्ति क्लमयथ मारणान्तिकसमुद्घातं गमयथेत्यर्थः 'उवद्दवेह'त्ति उपद्रवयथ, मारयथेत्यर्थः 'कायं व'त्ति 'कायं'शरीरं प्रतीत्योच्चारादिकायकार्यमि-त्यर्थः 'जोगं व'त्ति 'योगं' ग्लानवैयावृत्त्यादिव्यापारं प्रतीत्य 'रियं वा पडुच्च'त्ति ऋतं'सत्यं प्रतीत्य—अप्कायादिजीवसंरक्षणलक्षणं संयममाश्रित्येत्यर्थः, 'देसं देसेणं वयामो'त्ति प्रभूतायाः पृथिव्या ये विवक्षिता देशास्तैर्व्रजामो, नाविशेषेण. ईर्यासमितिपरायण-त्वेन सचेतनदेशपरिहारतोऽचेतनदेशैर्व्रजाम इत्यर्थः, एवं 'पएसं पएसेणं वयामो'इत्यपि, नवरं देशो—भूमेर्महत्खण्डं प्रदेशस्तु—लघुतरमिति ॥ अथोक्तगुणयोगेन नास्माकमिवैषां गमनमस्तीत्यभिप्रायतः स्थविराः यूयमेव पृथिव्याक्रमणादितोऽसंयतत्वादिगुणा इति प्रतिपादनायान्ययूथिकान् प्रत्याहुः—'तुज्झे णं अज्जो'इत्यादि । 'गइप्पवायं'ति गतिः प्रोद्यते—प्ररूप्यते यत्र तद् गतिप्रवादं गतेर्वा—प्रवृत्तेः क्रियायाः प्रपातः—प्रपतनं सम्भवः प्रयोगादिष्वर्थेषु वर्त्तनं गतिप्रपातस्तत्प्रतिपादकमध्ययनं गतिप्रपातं तत् प्रज्ञापि-तवन्तो, गतिविचारप्रस्तावादिति । अथ गतिप्रपातमेव भेदतोऽभिधातुमाह—'कइविहे णं'मित्यादि, 'पओगगति'त्ति इह गतिप्रपा-

तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी-तुज्झे णं अज्जो! गममाणे अगते वीतिक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं संपाविउकामे असंपत्ते, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी-नो खलु अज्जो! अम्हं गममाणे अगए वीइक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं जाव असंपत्ते, अम्हाणं अज्जो! गममाणे गए वीतिक्कमिज्जमाणे वितिक्कंते रायगिहं नगरं संपाविउकामे संपत्ते, तुज्झे णं अप्पणा चेव गममाणे अगए वीतिक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं जाव असंपत्ते, तए णं ते थेरा भगवंतो अन्नउत्थिए एवं पडिहणेन्ति, पडिहणित्ता गइप्पवायं नाम अज्झयणं पन्नवइंसु ॥ (सूत्रं ३३६) ॥ कइविहे णं भंते! गइप्पवाए पण्णत्ते?, गोयमा! पंचविहे गइप्पवाए पण्णत्ते, तंजहा-पयोगगती ततगती बंधणछेयणगती उववायगती विहायगती. एत्तो आरब्भ पयोगपयं निरवसेसं भाणियव्वं, जाव सेत्तं विहायगई। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति (सूत्रं ३३७)। अट्ठमसयस्स सत्तमो उद्देसो सम्मत्तो ॥ ८-७ ॥

'तेण'मित्यादि, तत्र 'अज्जो'त्ति हे आर्य्याः! 'तिविहं तिविहेणं'ति त्रिविधं करणादिकं योगमाश्रित्य त्रिविधेन मनःप्रभृतिककरणेन 'अदिन्नं साइज्जह'त्ति अदत्तं स्वदध्वे, अनुमन्यध्व इत्यर्थः 'दिज्जमाणे अदिन्ने'इत्यादि दीयमानमदत्तं, दीयमानस्य वर्त्तमानकालत्वाद् दत्तस्य चातीतकालवर्त्तित्वात् वर्त्तमानातीतयोश्चात्यन्तभिन्नत्वाद्दीयमानं दत्तं न भवति, दत्तमेव दत्तमिति व्यपदिश्यते, एवं प्रतिगृह्यमाणादावपि, तत्र दीयमानं दायकापेक्षया प्रतिगृह्यमाणं ग्राहकापेक्षया 'निसृज्यमानं' क्षिप्यमाणं पात्रापेक्षयेति 'अंतरे'ति अवसरे, अयमभिप्रायः-यदि दीयमानं पात्रेऽपतितं सद्दत्तं भवति तदा तस्य दत्तस्य सतः पात्रपतनलक्षणं ग्रहणं कृतं भवति, यदा तु तद्दीयमानमदत्तं



प्र०आ०३८०

तए णं ते थेरे भगवंते ते अन्नउत्थिए एवं वयासी-तुज्झे णं अज्जो दिज्जमाणे अदिन्ने तं चेव जाव गाहावइस्स णं, णो खलु तं तुज्झे, तए णं तुब्भे अदिन्नं गेण्हह, तं चेव जाव एगंतबाला यावि भवह। तए णं ते अन्नउ० ते थेरे भ० एवं व०-तुज्झे णं अज्जो! तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव एगंतबा० भवह तए णं ते थेरा भ० ते अन्नउत्थिए एवं वयासी-केण कारणेणं अम्हे तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी-तुज्झे णं अज्जो! रीयं रीयमाणा पुढविं पेचेह अभिहणह वत्तेह लेसेह संघाएह संघट्टेह परितावेह किलामेह उद्दवेह, तए णं तुज्झे पुढविं पेच्चेमाणा जाव उवद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं असंजयअविरय जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी-नो खलु अज्जो! अम्हे रीयं रीयमाणा पुढविं पेचेमो अभिहणामो जाव उवद्दवेमो, अम्हे णं अज्जो! रीयं रीयमाणा कायं वा जोयं वा रीयं वा पडुच्च देसं देसेणं वयामो पएसं पएसेणं वयामो, ते णं अम्हे देसं देसेणं वयमाणा पएसं पएसेणं वयमाणा नो पुढविं पेच्चेमो अभिहणामो जाव उवद्दवेमो, तए णं अम्हे पुढविं अपेच्चेमाणा अणभिहणेमाणा जाव अणुवद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं संजय जाव एगंतपंडिया यावि भवामो, तुज्झे णं अज्जो! अप्पणा चेव तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव बाला यावि भवह, तए णं ते अन्नउत्थिया थेरे भगवंते एवं वयासी-केण कारणेणं अज्जो! अम्हे तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?, तए णं ते थेरा भगवंतो अन्नउत्थिए एवं वयासी-तुब्भे णं अज्जो! रीयं रीयमाणा पुढविं पे० जाव उद्दवेह, तए णं तुज्झे पुढविं पेच्चेमाणा जाव उवद्दवेमाणा तिविहं

गाहावइस्स णं तं भंते !, नो खलु तं तुब्भं, तए णं तुज्झे अदिन्नं गेण्हह जाव अदिन्नं सातिज्जह, तए णं तुज्झे अदिन्नं गेण्हमाणा जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–नो खलु अज्जो ! अम्हे अदिन्नं गिण्हामो अदिन्नं भुंजामो अदिन्नं सातिज्जामो, अम्हे णं अज्जो! दिन्नं गेण्हामो दिन्नं भुंजामो दिन्नं सातिज्जामो, तए णं अम्हे दिन्नं गेण्हमाणा दिन्नं भुंजमाणा दिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं संजयविरयपडिहय जहा सत्तमसए जाव एगंतपंडिया यावि भवामो, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी-केण कारणेणं अज्जो ! तुम्हे दिन्नं गेण्हह जाव दिन्नं सातिज्जह, जए णं तुज्झे दिन्नं गेण्हमाणा जाव एगंतपंडिया यावि भवह ?, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–अम्हे णं अज्जो ! दिज्जमाणे दिन्ने पडिग्गहेज्जमाणे पडिग्गहिए निसिरिज्जमाणे निसट्ठे, जेणं अम्हे णं अज्जो! दिज्जमाणं पडिग्गहगं असंपत्तं एत्थ णं अंतरा केइ अवहरेज्जा अम्हाणं तं, णो खलु तं गाहावइस्स, जए णं अम्हे दिन्नं भुंजामो दिन्नं सातिज्जामो तए णं अम्हे दिन्नं गेण्हमाणा जाव दिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं संजय जाव एगंतपंडिया यावि भवामो, तुज्झे णं अज्जो ! अप्पणा चेव तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–तुज्झे णं अज्जो ! अदिन्नं गेण्हह ३, तए णं अज्जो तुब्भे अदिन्नं गे० जाव एगंत०, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अम्हे अदिन्नं गेण्हामो जाव एगंतबा०?

लस्स चेइयस्स अदूरसामंते बहवे अन्नउत्थिया परिवसंति, तेणं कालेणं २ समणे भगवं महावीरे आदिगरे जाव समोसढे जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं २ समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अंतेवासी थेरा भगवंतो जातिसंपन्ना कुलसंपन्ना जहा बितियसए जाव जीवियासामरणभयविप्पमुक्का समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरा झाणकोट्ठोवगया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा जाव विहरंति, तए णं ते अन्नउत्थिया जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छंति २ त्ता ते थेरे भगवंते एवं वयासी-तुब्भे णं अज्जो! तिविहं तिविहेणं अस्संजयअविरयअप्पडिहय जहा सत्तमसए बितिए उद्देसए जाव एगंतबाले यावि भवह, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी-केण कारणेणं अज्जो! अम्हे तिविहं तिविहेणं अस्संजयअविरय जाव एगंतबाला यावि भवामो?, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी-तुब्भे णं अज्जो! अदिन्नं गेण्हह अदिन्नं भुंजह अदिन्नं सातिज्जह, तए णं ते तुब्भे अदिन्नं गेण्हमाणा अदिन्नं भुंजमाणा अदिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं अस्संजयअविरय जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी-केण कारणेणं अज्जो! अम्हे अदिन्नं गेण्हामो अदिन्नं भुंजामो अदिन्नं सातिज्जामो?, जए णं अम्हे अदिन्नं गेण्हमाणा जाव अदिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव एगंतबाला यावि भवामो?, तए णं अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी-तुम्हा णं अज्जो! दिज्जमाणे अदिन्ने पडिग्गहेज्जमाणे अपडिग्गहिए निस्सरिज्जमाणे अणिसट्ठे, तुब्भे णं अज्जो! दिज्जमाणं पडिग्गहगं असंपत्तं एत्थ णं अंतरा केइ अवहरिज्जा,


॥६९४॥

बहुत्वेनापरौ द्वौ, एवमौदारिकशरीरापेक्षया चत्वारो दण्डका इति॥ 'जीवे ण'मित्यादि, जीवः परकीयं वैक्रियशरीरमाश्रित्य कतिक्रियः?, उच्यते, स्यात्त्रिक्रिय इत्यादि, पञ्चक्रियश्चेह नोच्यते, प्राणातिपातस्य वैक्रियशरीरिणः कर्त्तुमशक्यत्वाद्, अविरतिमात्रस्य चेहाविवक्षितत्वाद्, अत एवोक्तं–'पंचमकिरिया न भन्नइ'त्ति, 'एवं जहा वेउव्वियं तहा आहारयंपि तेयगंपि कम्मगंपि भाणियव्वं'ति अनेनाहारकादिशरीरत्रयमप्याश्रित्य दण्डकचतुष्टयेन नैरयिकादिजीवानां त्रिक्रियत्वं चतुष्क्रियत्वं चोक्तं, पञ्चक्रियत्वं तु निवारितं, मारयितुमशक्यत्वात्तस्येति, अथ नारकस्याधोलोकवर्त्तित्वादाहारकशरीरस्य च मनुष्यलोकवर्त्तित्वेन तत्क्रियाणामविषयत्वात् कथमाहारकशरीरमाश्रित्य नारकः स्यात्त्रिक्रियः स्याच्चतुष्क्रिय इति ?, अत्रोच्यते, यावत्पूर्वशरीरमव्युत्सृष्टं जीवनिर्वर्त्तितपरिणामं न त्यजति तावत्पूर्वभावप्रज्ञापनानयमतेन निर्वर्त्तकजीवस्यैवेति व्यपदिश्यते घृतघटन्यायेनेत्यतो नारकपूर्वभवदेहो नारकस्यैव तद्देशेन च मनुष्यलोकवर्त्तिनाऽस्थ्यादिरूपेण यदाहारकशरीरं स्पृश्यते परिताप्यते वा तदाहारकदेहान्नारकस्त्रिक्रियश्चतुष्क्रियो वा भवति, कायिकीभावे इतरयोरवश्यंभावात्, पारितापनिकीभावे चाद्यत्रयस्यावश्यंभावादिति । एवमिहान्यदपि तद्विषयमवगन्तव्यं, यच्च तैजसकार्म्मणशरीरापेक्षया जीवानां परितापकत्वं तदौदारिकाद्याश्रितत्वेन तयोरवसेयं, स्वरूपेण तयोः परितापयितुमशक्यत्वादिति॥ अष्टमशते षष्ठोद्देशः॥८–६॥



प्र०आ०३७८

षष्ठोद्देशके क्रियाव्यतिकर उक्त इति क्रियाप्रस्तावात् सप्तमोद्देशके प्रद्वेषक्रियानिमित्तकोऽन्ययूथिकविवादव्यतिकर उच्यते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ रायगिहे नगरे वन्नओ, गुणसिलए चेइए वन्नओ, जाव पुढविसिलावट्टओ, तस्स णं गुणसि-

त्र्यधिकरणिकीप्राद्वेषिकाणां भावात्, एतासां च परस्परेणाविनाभूतत्वात् स्यात्त्रिक्रिय इत्युक्तं, न पुनः स्यादेकक्रियः स्याद् द्विक्रिय इति, अविनाभावश्च तासामेवम्—अधिकृतक्रिया ह्यवीतरागस्यैव, नेतरस्य, तथाविधकर्मबन्धहेतुत्वात्, अवीतरागकायस्य चाधिकरणत्वेन प्रद्वेषान्वितत्वेन च कायक्रियासद्भावे इतरयोरवश्यंभावः, इतरभावे च कायिकीसद्भावः, उक्तश्च प्रज्ञापनायामिहार्थे—"जस्स णं जीवस्स काइया किरिया कज्जइ तस्स अहिगरणिया किरिया नियमा कज्जइ, जस्स अहिगरणिया किरिया कज्जइ तस्सवि काइया किरिया नियमा कज्जइ" इत्यादि, तथाऽऽद्यक्रियात्रयसद्भावे उत्तरक्रियाद्वयं भजनया भवति, यदाह—"जस्स णं जीवस्स काइया किरिया कज्जइ तस्स पारियावणिया सिय कज्जइ सिय नो कज्जइ" इत्यादि, ततश्च यदा कायव्यापारद्वारेणाद्यक्रियात्रय एव वर्त्तते, न तु परितापयति न चातिपातयति तदा त्रिक्रिय एवेत्यतोऽपि स्यात्त्रिक्रिय इत्युक्तं, यदा तु परितापयति तदा चतुष्क्रियः, आद्यक्रियात्रयस्य तत्रावश्यंभावात्, यदा त्वतिपातयति तदा पञ्चक्रियः, आद्यक्रियाचतुष्कस्य तत्रावश्यंभावात्, उक्तश्च—"जस्स पारियावणिया किरिया कज्जइ तस्स काइया नियमा कज्जई"त्यादीति, अत एवाह—'सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए'त्ति, तथा 'सिय अकिरिय'त्ति वीतरागावस्थामाश्रित्य, तस्यां हि वीतरागत्वादेव न सन्त्यधिकृतक्रिया इति ॥ 'नेरइए ण'मित्यादि, नारको यस्मादौदारिकशरीरवन्तं पृथिव्यादिकं स्पृशति परितापयति विनाशयति च तस्मादौदारिकात् स्यात्त्रिक्रिय इत्यादि, अक्रियस्त्वयं न भवति, अवीतरागत्वेन क्रियाणामवश्यंभावित्वादिति, 'एवं चेव'त्ति स्यात् त्रिक्रिय इत्यादि सर्वेष्वसुरादिपदेषु वाच्यमित्यर्थः, 'मणुस्से जहा जीवे'त्ति जीवपदे इव मनुष्यपदेऽक्रियत्वमपि वाच्यमित्यर्थः, जीवपदे मनुष्यसिद्धापेक्षयैवाक्रियत्वस्याधीतत्वादिति, 'ओरालिय सरीरेहिंतो'त्ति औदारिकशरीरेभ्य इत्येवं बहुत्वापेक्षोऽयमपरो दण्डकः, एवमेतौ जीवस्यैकत्वेन द्वौ दण्डकौ, एवमेव च जीवस्य

णिए, नवरं मणुस्से जहा जीवे, एवं जहा ओरालियसरीराणं चत्तारि दंडगा भणिया तहा वेउव्वियसरीरेणवि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा, नवरं पंचमकिरिया न भन्नइ, सेसं तं चेव, एवं जहा वेउव्वियं तहा आहारगंपि तेयगंपि कम्मगंपि भाणियव्वं, एक्केक्के चत्तारि दंडगा भाणियव्वा जाव वेमाणिया णं भंते! कम्मगसरीरेहिंतो कइकिरिया ?, गोयमा ! तिकिरियावि चउकिरियावि, सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ ( सूत्रं ३३५ ) ॥ अट्ठमसयस्स छट्ठो उद्देसओ समत्तो ॥ ८-६ ॥

'पदीवस्से'त्यादि, 'झियायमाणस्स'त्ति ध्मायतो ध्मायमानस्य वा ज्वलत इत्यर्थः 'पदीवे'त्ति प्रदीपो दीपयष्ट्यादिसमुदायः 'झियाइ'त्ति ध्मायति ध्मायते वा ज्वलति 'लट्ठि'त्ति दीपयष्टिः 'वत्ति'त्ति दशा 'दीवचंपए'त्ति दीपस्थगनकं 'जोइ'त्ति अग्निः॥ ज्वलनप्रस्तावादिदमाह—'अगारस्स णं'मित्यादि, इह चागारं–कुटीगृहं 'कुड्ड'त्ति भित्तयः 'कडण'त्ति त्रट्टिकाः 'धारण'त्ति बलहरणाधारभूते स्थूणे 'बलहरणे'त्ति धारणयोरुपरिवर्त्ति तिर्यगायतकाष्ठं 'मोभ' इति यत्प्रसिद्धं 'वंस'त्ति वंशाश्छित्वराधारभूताः 'मल्ल'त्ति मल्लाः–कुड्यावष्टम्भनस्थाणवः बलहरणाधारणाश्रितानि वा छित्वराधारभूतानि ऊर्द्ध्वायतानि काष्ठानि 'वाग'त्ति वल्का–वंशादिबन्धनभूता वटादित्वचः 'छित्तर'त्ति छित्वराणि–वंशादिमयानि छादनाधारभूतानि किलिञ्जानि 'छाणे'ति छादनं दर्भादिमयं पटलमिति ॥ इयं च तेजसां ज्वलनक्रिया परशरीराश्रयेति परशरीरमौदारिकाद्याश्रित्य जीवस्य नारकादेश्च क्रिया अभिधातुमाह—'जीवे णं'मित्यादि, 'ओरालियसरीराओ'त्ति औदारिकशरीरात्–परकीयमौदारिकशरीरमाश्रित्य कतिक्रियो जीवः ? इति प्रश्नः, उत्तरं तु 'सिय तिकिरिए'त्ति यदैको जीवोऽन्यपृथिव्यादेः सम्बन्ध्यौदारिकशरीरमाश्रित्य कायं व्यापारयति तदा त्रिक्रियः, कायि-

झि० वग्गा झियाइ छित्तरा झियाइ छाणे झियाति जोती झियाति ?, गोयमा ! नो अगारे झियाति, नो कुड्डा झियाति जाव नो छाणे झियाति, जोती झियाति ॥ (सूत्रं ३२४) ॥ जीवे णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए सिय अकिरिए ॥ नेरइए णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिया (ए) ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए। असुरकुमारे णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिए ? एवं चेव, एवं जाव वेमाणिए, नवरं मणुस्से जहा जीवे। जीवे णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए जाव सिय अकिरिए। नेरइए णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिए ?, एवं एसो जहा पढमो दंडओ तहा इमोवि अपरिसेसो भाणियव्वो जाव वेमाणिए, नवरं मणुस्से जहा जीवे। जीवा णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिया ?, गोयमा ! सिय तिकिरिया जाव सिय अकिरिया, नेरइया णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिया ?, एवं एसोवि जहा पढमो दंडओ तहा भाणियव्वो जाव वेमाणिया, नवरं मणुस्सा जहा जीवा। जीवा णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिया ?, गोयमा ! तिकिरियावि चउकिरियावि पंचकिरियावि अकिरियावि, नेरइया णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कइकिरिया ?, गोयमा ! तिकिरियावि चउकिरियावि पंचकिरियावि एवं जाव वेमाणिया, नवरं मणुस्सा जहा जीवा॥ जीवे णं भंते ! वेउव्वियसरीराओ कतिकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय अकिरिए, नेरइए णं भंते ! वेउव्वियसरीराओ कतिकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए, एवं जाव वेमा-

८ शतके
उद्देशः ६
शरीरात्
क्रिया
सू० ३२५

यथोचितम्, एतच्च गीतार्थतायामेव भवति, नान्यथा, 'अंतियं'ति समीपं, गत इति शेषः 'थेरा य अमुहा सिय'त्ति स्थविराः पुनः 'अमुखाः' निर्वाचः स्युर्वातादिदोषात्, ततश्च तस्यालोचनादिपरिणामे सत्यपि नालोचनादि संपद्यत इत्यतः प्रश्नयति—'से णं'-मित्यादि, 'आराहए'त्ति मोक्षमार्गस्याराधकः, शुद्ध इत्यर्थः, भावस्य शुद्धत्वात्, संभवति चालोचनापरिणतौ सत्यां कथञ्चित्तदप्राप्तावप्याराधकत्वं, यत उक्तं मरणमाश्रित्य—"आलोयणापरिणओ सम्मं संपट्ठिओ गुरुसगासे। जइ मरइ अंतरे चिय तहावि सुद्धोत्ति भावाओ ॥ १ ॥" इति। स्थविरात्मभेदेन चेह द्वे अमुखसूत्रे, द्वे कालगतसूत्रे, इत्येवं चत्वारि असंप्राप्तसूत्राणि ४, संप्राप्तसूत्राण्यप्येवं चत्वार्येव ४, एवमेतान्यष्टौ पिण्डपातार्थं गृहपतिकुले प्रविष्टस्य, एवं विचारभूम्यादावष्ट ८, एवं ग्रामगमनेऽष्टौ, एवमेतानि चतुर्विंशतिः सूत्राणि। एवं निर्ग्रन्थिकाया अपि चतुर्विंशतिः सूत्राणीति॥ अथानालोचित एव कथमाराधकः? इत्याशङ्कामुत्तरं चाह—'से केणट्ठेणं'-मित्यादि, 'तणसूयं वा'त्ति तृणाग्रं वा 'छिज्जमाणे छिन्ने'त्ति क्रियाकालनिष्ठाकालयोरभेदेन प्रतिक्षणं कार्यस्य निष्पत्तेः छिद्यमानं छिन्नमित्युच्यते, एवमसावालोचनापरिणतौ सत्यामाराधनाप्रवृत्त आराधक एवेति। 'अहयं व'त्ति 'अहतं' नवं 'धोयं'ति प्रक्षालितं 'तंतुग्गयं'ति तन्त्रोद्गतं तूरिवेमादेरुत्तीर्णमात्रं 'मंजिट्ठादोणिए'त्ति मञ्जिष्ठारागभाजनं ॥ आराधकश्च दीपवद्दीप्यत इति दीपस्वरूपं निरूपयन्नाह—

पईवस्स णं भंते! झियायमाणस्स किं पदीवे झियाति लट्ठी झियाइ वत्ती झियाइ तेल्ले झियाइ दीवचंपए झियाइ जोती झियाइ?, गोयमा! नो पदीवे झियाइ जाव नो पदीवचंपए झियाइ, जोई झियाइ॥ आगारस्स णं भंते! झियायमाणस्स किं आगारे झियाइ कुड्डा वा झियाइ कडणा झि० धारणा झि० बलहरणे झि० वंसा० मल्ला

गमा भणिया एवं निग्गंथीएवि तिन्नि आलावगा भाणियव्वा जाव आराहिया, नो विराहिया॥ से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-आराहए, नो विराहए?, गोयमा! से जहानामए-केइ पुरिसे एगं महं उन्नालोमं वा गयलोमं वा सणलोमं वा कप्पासलोमं वा तणसूयं वा दुहा वा तिहा वा संखेज्जहा वा छिंदित्ता अगणिकायंसि पक्खिवेज्जा से नूणं गोयमा! छिज्जमाणे छिन्ने पक्खिप्पमाणे पक्खित्ते दज्झमाणे दड्ढेत्ति वत्तव्वं सिया?, हंता भगवं! छिज्जमाणे छिन्ने जाव दड्ढेत्ति वत्तव्वं सिया, से जहा वा केइ पुरिसे वत्थं अहतं वा धोतं वा तंतुग्गयं वा मंजिट्ठादोणीए पक्खिवेज्जा से नूणं गोयमा! उक्खिप्पमाणे उक्खित्ते पक्खिप्पमाणे पक्खित्ते रज्जमाणे रत्तेत्ति वत्तव्वं सिया?, हंता भगवं! उक्खिप्पमाणे उक्खित्ते जाव रत्तेत्ति वत्तव्वं सिया, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ—आराहए, नो विराहए॥ ( सूत्रं ३३३ )॥

'निग्गंथेण चे'त्यादि, इह चशब्दः, पुनरर्थस्तस्य घटना चैवं-निर्ग्रन्थं कश्चित् पिण्डपातप्रतिज्ञया प्रविष्टं पिण्डादिनोपनिमन्त्रयेत् तेन च निर्ग्रन्थेन पुनः 'अकिच्चट्ठाणे'त्ति कृत्यस्य-करणस्य स्थानं-आश्रयः कृत्यस्थानं तन्निषेधः अकृत्यस्थानं-मूलगुणादिप्रतिसेवारूपोऽकार्यविशेषः, 'तस्स णं'ति निर्ग्रन्थस्य सञ्जातानुतापस्य 'एवं भवति' एवंप्रकारं मनो भवति 'एयस्स ठाणस्स'त्ति विभक्तिपरिणामाद् 'एतत्स्थानम्' अनन्तरासेवितम् 'आलोचयामि' स्थापनाचार्यनिवेदनेन 'प्रतिक्रमामि'मिथ्यादुष्कृतदानेन 'निन्दामि' स्वसमक्षं स्वस्याकृत्यस्थानस्य वा कुत्सनेन 'गर्हे' गुरुसमक्षं कुत्सनेन 'विउट्टामि'त्ति वित्रोटयामि-तदनुबन्धं छिनद्मि 'विशोधयामि' प्रायश्चित्तपङ्कं प्रायश्चित्ताभ्युपगमेन 'अकरणतया' अकरणेन 'अभ्युत्तिष्ठामि'त्ति अभ्युत्थितो भवामीति 'अहारिहं'ति यथार्हं

कम्मं पडिवज्जिस्सामि, से य संपट्ठिओ असंपत्ते थेरा य पुव्वामेव अमुहा सिया से णं भंते! किं आराहए विराहए?, गोयमा! आराहए, नो विराहए १, से य संपट्ठिए असंपत्ते अप्पणा य पुव्वामेव अमुहा सिया, से णं भंते! किं आराहए विराहए?, गोयमा! आराहए, नो विराहए २, से य संपट्ठिए असंपत्ते अप्पणा य पुव्वामेव थेरा य कालं करेज्जा से णं भंते! किं आराहए विराहए?, गोयमा! आराहए, नो विराहए ३, से य संपट्ठिए असंपत्ते अप्पणा य पुव्वामेव कालं करेज्जा से णं भंते! किं आराहए विराहए?, गोयमा! आराहए, नो विराहए ४, से य संपट्ठिए संपत्ते थेरा य अमुहा सिया, से णं भंते! किं आराहए विराहए?, गोयमा! आराहए, नो विराहए, से य संपट्ठिए संपत्ते अप्पणा य, एवं संपत्तेणवि चत्तारि आलावगा भाणियव्वा जहेव असंपत्तेणं। निग्गंथेण य बहिया वियारभूमिं वा विहारभूमिं वा निक्खंतेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए, तस्स णं एवं भवति–इहेव ताव अहं एवं एत्थवि एते चेव अट्ठ आलावगा भाणियव्वा जाव नो विराहए। निग्गंथेण य गामाणुगामं दूइज्जमाणेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए तस्स णं एवं भवति इहेव ताव अहं एत्थवि ते चेव अट्ठ आलावगा भाणियव्वा जाव नो विराहए॥ निग्गंथीए य गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठाए अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए तीसे णं एवं भवइ, इहेव ताव अहं एयस्स ठाणस्स आलोएमि जाव तवोकम्मं पडिवज्जामि तओ पच्छा पवत्तिणीए अंतियं आलोएस्सामि जाव पडिवज्जिस्सामि, सा य संपट्ठिया असंपत्ता पवत्तिणी य अमुहा सिया, सा णं भंते! किं आराहिया विराहिया?, गोयमा! आराहिया, नो विराहिया, सा य संपट्ठिया जहा निग्गंथस्स तिन्नि

पडिग्गहवत्तव्वया भणिया एवं गोच्छगरयहरणचोलपट्टगकंबललट्ठीसंथारगवत्तव्वया य भाणियव्वा जाव दसहिं संथारएहिं उवनिमंतेज्जा जाव परिट्ठावेयव्वे सिया ॥ ( सूत्रं ३३२ ) ॥

'निग्गंथं चे'त्यादि, इह चशब्दः पुनरर्थस्तस्य चैवं घटना-निर्ग्रन्थाय संयतादिविशेषणाय प्रासुकादिदाने गृहपतेरेकान्तेन निर्जरा भवति, निर्ग्रन्थः पुनः 'गृहपतिकुलं'गृहिगृहं 'पिंडवायपडियाए'त्ति पिण्डस्य पातो-भोजनस्य पात्रे गृहस्थान्निपतनं तत्र प्रतिज्ञा-ज्ञानं बुद्धिः पिण्डपातप्रतिज्ञा तया, पिण्डस्य पातो मम पात्रे भवत्वितिबुद्ध्येत्यर्थः, 'उवनिमंतेज्ज'त्ति भिक्षो ! गृहाणेदं पिण्डद्वयमित्यभिदध्यादित्यर्थः, तत्र च 'एग'मित्यादि,'से य'त्ति स पुनर्निर्ग्रन्थः 'तं'ति स्थविरपिण्डं 'थेरा य से'त्ति स्थविराः पुनः 'तस्य'निर्ग्रन्थस्य 'सिय'त्ति स्युर्भवन्तीत्यर्थः, 'दावए'त्ति दद्यात् दापयेद्वा अदत्तादानप्रसङ्गात्, गृहपतिना हि पिण्डोऽसौ विवक्षित-स्थविरेभ्य एव दत्तो, नान्यस्मै इति, 'एगंते'त्ति जनालोकवर्जिते 'अणावाए'त्ति जनसंपातवर्जिते 'अचित्ते'त्ति अचेतने, नाचेतन-मात्रेणैवेत्यत आह-'बहुफासुए'त्ति बहुधा प्रासुकं बहुप्रासुकं तत्र, अनेन चाचिरकालकृते विकृते विस्तीर्णे दूरावगाढे त्रसप्राणबीज-रहिते चेति सङ्गृहीतं द्रष्टव्यमिति, 'से य ते'त्ति स च निर्ग्रन्थः 'तौ 'स्थविरपिण्डौ 'पडिग्गहेज्ज'त्ति प्रतिगृह्णीयादिति ॥ निर्ग्रन्थप्रस्तावादिदमाह—

निग्गंथेण य गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए पविट्ठेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए, तस्स णं एवं भवति-इहेव ताव अहं एयस्स ठाणस्स आलोएमि पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि विउट्टामि विसोहेमि अकरणयाए अब्भुट्ठेमि आहारिहं पायच्छित्तं तवोकम्मं पडिवज्जामि, तओ पच्छा थेराणं अंतियं आलोएस्सामि जाव तवो-

घातसद्भावेन विशेषः सोऽत्र न विवक्षितः, पापकर्म्मणो निर्जराया अभावस्यैव च विवक्षितत्वादिति, सूत्रत्रयेणापि चानेन मोक्षार्थमेव यद्दानं तच्चिन्तितं, यत्पुनरनुकम्पादानमौचित्यदानं वा तन्न चिन्तितं, निर्जरायास्तत्रानपेक्षणीयत्वाद्, अनुकम्पौचित्ययोरेव चापेक्षणीयत्वादिति, उक्तञ्च—"मोक्खत्थं जं दाणं तं पइ एसो विही समक्खाओ। अणुकंपादाणं पुण जिणेहिं न कयाइ पडिसिद्धं ॥ १ ॥" इति ॥ दानाधिकारादेवेदमाह—

निग्गंथं च णं गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठं केई दोहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा-एगं आउसो! अप्पणा भुंजाहि, एगं थेराणं दलयाहि, से य तं पिण्डं पडिग्गहेज्जा, थेरा य से अणुगवेसियव्वा सिया, जत्थेव अणुगेवसमाणे थेरे पासिज्जा तत्थेवाणुप्पदायव्वे सिया, नो चेव णं अणुगवेसमाणे थेरे पासिज्जा तं नो अप्पणा भुंजेज्जा, नो अन्नेसिं दावए, एगंते अणावाए अचित्ते बहुफासुए थंडिल्ले पडिलेहेत्ता पमज्जित्ता परिट्ठावेयव्वे सिया। निग्गंथं च णं गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठं केति तिहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा-एगं आउसो! अप्पणा भुंजाहि, दो थेराणं दलयाहि, से य ते पडिग्गहेज्जा, थेरा य से अणुगवेसेयव्वा सेसं तं चेव जाव परिट्ठावेयव्वे सिया, एवं जाव दसहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा, नवरं एगं आउसो! अप्पणा भुंजाहि, नव थेराणं दलयाहि सेसं तं चेव जाव परिट्ठावेयव्वे सिया। निग्गंथं च णं गाहावइ जाव केइ दोहिं पडिग्गहेहिं उवनिमंतेज्जा-एगं आउसो! अप्पणा पडिभुंजाहि, एगं थेराणं दलयाहि, से य तं पडिग्गहेज्जा, तहेव जाव तं नो अप्पणा पडिभुंजेज्जा, नो अन्नेसिं दावए, सेसं तं चेव जाव परिट्ठवेयव्वे सिया, एवं जाव दसहिं पडिग्गहेहिं, एवं जहा

पाण जाव किं कज्जइ?, गोयमा! एगंतसो से पावे कम्मे कज्जइ, नत्थि से काइ निज्जरा कज्जइ ॥ ( सूत्रं ३३१ ) ॥

'समणे'त्यादि, 'किं कज्जइ'त्ति किं फलं भवतीत्यर्थः, 'एगंतसो'त्ति एकान्तेन तस्य श्रमणोपासकस्य, 'नत्थि य से'त्ति नास्ति चैतद् यत् 'से' तस्य पापं कर्म 'क्रियते'भवति अप्रासुकदाने इवेति, 'वहुतरिय'त्ति पापकर्म्मापेक्षया 'अप्पतराए'त्ति अल्पतरं निर्जरापेक्षया, अयमर्थः-गुणवते पात्रायाप्रासुकादिद्रव्यदाने चारित्रकायोपष्टम्भो जीवघातो व्यवहारतस्तच्चारित्रवाधा च भवति, ततश्च-चारित्रकायोपष्टम्भान्निर्जरा जीवघातादेश्च पापं कर्म्म, तत्र च स्वहेतुसामर्थ्यात् पापापेक्षया वहुतरा निर्जरा निर्जरापेक्षया चाल्पतरं पापं भवति, इह च विवेचका मन्यन्ते-असंस्तरणादिकारणत एवाप्रासुकादिदाने वहुतरा निर्जरा भवति, नाकारणे, यत उक्तम्— "संथरणंमि असुद्धं दोण्हवि गेण्हंतदितयाणऽहियं। आउरदिट्ठंतेणं तं चेव हियं असंथरणे ॥ १ ॥" इति, अन्ये त्वाहुः-अकारणेऽपि गुणवत्पात्रायाप्रासुकादिदाने परिणामवशाद् वहुतरा निर्जरा भवति,अल्पतरं च पापं कर्म्मेति, निर्विशेषणत्वात् सूत्रस्य, परिणामस्य च प्रमाणत्वात्, आह च—"परमरहस्समिसीणं समत्तगणिपिडगझरियसाराणं। परिणामियं पमाणं निच्छयमवलंवमाणाणं ॥ १ ॥" यच्चोच्यते 'संथरणंमि असुद्ध'मित्यादिनाऽशुद्धं द्वयोरपि दातृगृहीत्रोरहितायेति तद्ग्राहकस्य व्यवहारतः संयमविराधनात् दायकस्य च लुब्धकदृष्टान्तभावितत्वेनाव्युत्पन्नत्वेन वा ददतः शुभाल्पायुष्कतानिमित्तत्वात्, शुभमपि चायुरल्पमहितं विवक्षया, शुभाल्पायुष्कतानिमित्तत्वं चाप्रासुकादिदानस्याल्पायुष्कताफलप्रतिपादकसूत्रे प्राक् चर्चितं, यत्पुनरिह तत्त्वं तत्केवलिगम्यमिति। तृतीयसूत्रे 'अस्संजयअविरये'त्यादिनाऽगुणवान् पात्रविशेष उक्तः, 'फासुएण वा अफासुएण वा'इत्यादिना तु प्रासुकाप्रासुकादेर्दानस्य पापकर्मफलता निर्जराया अभावश्चोक्तः, असंयमोपष्टम्भस्योभयत्रापि तुल्यत्वात्. यश्च प्रासुकादौ जीवघाताभावेन अप्रासुकादौ च जीव-

तदेव कर्म्म यन्त्रपीडनकर्म्म 'निल्लंछणकम्मे'त्ति निर्लाञ्छनमेव–वर्द्धितककरणमेव कर्म निर्लाञ्छनकर्म्म 'दवग्गिदावणय'त्ति दवाग्नेः–दवस्य दापनं–दाने प्रयोजकत्वं उपलक्षणत्वाद्दानं च दवाग्निदापनं तदेव प्राकृतत्वाद् 'दवग्गिदावणया' 'सरदहतलायपरिसोसणय'त्ति सरसः–स्वयंसंभूतजलाशयविशेषस्य हृदस्य–नद्यादिषु निम्नतरप्रदेशलक्षणस्य तडागस्य–कृत्रिमजलाशयविशेषस्य परिशोषणं यत्तत्तथा, तदेव प्राकृतत्वात् स्वार्थिकताप्रत्यये 'सरदहतलायपरिसोसणया' 'असईपोसणय'त्ति दास्याः पोषणं तद्भाटीग्रहणाय, अनेन च कुक्कुटमार्जारादिक्षुद्रजीवपोषणमप्याक्षिप्तं द्रष्टव्यमिति, 'इच्चेते'त्ति 'इति' एवंप्रकाराः 'एते' निर्ग्रन्थसत्काः 'सुक्क'त्ति शुक्ला अभिन्नवृत्ता अमत्सरिणः कृतज्ञाः सदारम्भिणो हितानुबन्धाश्च 'सुक्काभिजाइय'त्ति 'शुक्लाभिजात्याः' शुक्लप्रधानाः ॥ अनन्तरं देवतयोपपत्तारो भवन्तीत्युक्तम्, अथ देवानेव भेदत आह—'कतिविहा ण'मित्यादि ॥ अष्टमशते पञ्चमः ॥ ८–५ ॥



पञ्चमे श्रमणोपासकाधिकार उक्तः, षष्ठेऽप्यसावेवोच्यते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदं सूत्रम्—

**समणोवासगस्स णं भंते ! तहारूवं समणं वा माहणं वा फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभेमाणस्स किं कज्जति ?, गोयमा ! एगंतसो निज्जरा कज्जइ, नत्थि य से पावे कम्मे कज्जति। समणोवासगस्स णं भंते ! तहारूवं समणं वा माहणं वा अफासुएणं अणेसणिज्जेणं असणपाणजावपडिलाभेमाणस्स किं कज्जइ?, गोयमा ! बहुतरिया से निज्जरा कज्जइ, अप्पतराए से पावे कम्मे कज्जइ। समणोवासगस्स णं भंते ! तहारूवं अस्संजयअविरयपडिहयपच्चक्खायपावकम्मं फासुएण वा अफासुएण वा एसणिज्जेण वा अणेसणिज्जेण वा असण-**

विशेषानुष्ठानत्वात् परिगणिता आनन्दादिश्रमणोपासकवद्, अन्यथा बहवस्ते, 'ताले'त्ति तालाभिधान एकः, एवं तालप्रलम्बादयोऽपि, 'अरिहंतदेवयाग'त्ति गोशालकस्य तत्कल्पनयाऽर्हत्त्वात्, 'पंचफलपडिक्कंत'त्ति फलपञ्चकान्निवृत्ताः, उदुम्बरादीनि च पञ्च पदानि पञ्चमीबहुवचनान्तानि प्रतिक्रान्तशब्दानुस्मरणादिति, 'अनिल्लंछिएहिं'ति अवर्द्धितकैः 'अनक्कभिन्नेहिं'ति अनस्तितैः । 'एतेऽवि ताव एवं इच्छंति' एतेऽपि तावद्विशिष्टयोग्यताविकला इत्यर्थः एवमिच्छन्ति-अमुना प्रकारेण वाञ्छन्ति, धर्म्ममिति गम्यम्, 'किमंग पुणे'त्यादि, किं पुनर्ये इमे श्रमणोपासका भवन्ति, ते नेच्छन्तीति गम्यम्?, इच्छन्त्येवेति, विशिष्टतरदेवगुरुप्रवचनसमाश्रितत्वात्तेषां, 'कम्मादाणाइं'ति कर्म्माणि-ज्ञानावरणादीन्यादीयन्ते यैस्तानि कर्मादानानि, अथवा कर्माणि च तान्यादानानि च-कर्मादानानि-कर्महेतव इति विग्रहः, 'इंगाले'त्यादि, अङ्गारविषयं कर्म अङ्गारकर्म-अङ्गाराणां करणविक्रयस्वरूपम्, एवमग्निव्यापाररूपं यदन्यदपीष्टकापाकादिकं कर्म तदङ्गारकर्मोच्यते, अङ्गारशब्दस्य तदन्योपलक्षणत्वात्, 'वणकम्मे'त्ति वनविषयं कर्म्म वनकर्म्म-वनच्छेदनविक्रयरूपम्, एवं वीजपेषणाद्यपि, 'साडीकम्मे'त्ति शकटानां वाहनघटनविक्रयादि 'भाडीकम्मे'त्ति भाट्या-भाटकेन कर्म अन्यदीयद्रव्याणां शकटादिभिर्देशान्तरनयनं गोगृहादिसमर्प्पणं वा भाटीकर्म्म 'फोडीकम्मे'त्ति स्फोटिः-भूमेः स्फोटनं हलकुद्दालादिभिः सैव कर्म्म स्फोटिकर्म्म 'दंतवाणिज्जे'त्ति दन्तानां-हस्तिविषाणानाम् उपलक्षणत्वादेषां चर्मचामरपूतिकेशादीनां वाणिज्यं-क्रयविक्रयो दन्तवाणिज्यं 'लक्खवाणिज्जं'ति लाक्षाया आकरे ग्रहणतो विक्रयः, एतच्च त्रससंसक्तिनिमित्तस्यान्यस्यापि तिलादेर्द्रव्यस्य यद्वाणिज्यं तस्योपलक्षणं, 'केसवाणिज्जे'त्ति केशवज्जीवानां गोमहिषीस्त्रीप्रभृतिकानां विक्रयः 'रसवाणिज्जे'त्ति मद्यादिरसविक्रयः 'विसवाणिज्जे'त्ति विषस्योपलक्षणत्वाच्छस्त्रवाणिज्यस्याप्यनेनावरोधः, 'जंतपीलणकम्मे'त्ति यन्त्रेण तिलेक्ष्वादीनां यत्पीडनं

यथा वाक्काययोरिति, आह च—"आह कहं पुण मणसा करणं कारावणं अणुमई य ? । जह वइतणुजोगेहिं करणाई तह भवे मणसा ॥ १ ॥ तयहीणत्ता वइतणुकरणाईणं च अहव मणकरणं । सावज्जजोगमणणं पन्नत्तं वीयरागेहिं ॥ २ ॥ कारावण पुण मणसा चिंतेइ करेउ एस सावज्जं । चिंतेई य कए उण सुट्ठु कयं अणुमई होइ ॥ ३ ॥" इति, इह च पञ्चस्वणुव्रतेषु प्रत्येकं सप्तचत्वारिंशदधिकस्य भङ्गकशतस्य भावाद् भङ्गकानां सप्त शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि भवन्तीति॥ यत् स्थविरा आजीविकैः श्रमणोपासकगतं वस्तु पृष्टाः गौतमेन च भगवांस्तत्तावदुक्तम्, अथान्तरोक्तशीलाः श्रमणोपासका एव भवन्ति, न पुनराजीविकोपासकाः आजीविकानां गुणित्वेनाभिमता अपीति दर्शयन्नाह—'एए खलु'इत्यादि, 'एते खलु' एत एव परिदृश्यमाना निर्ग्रन्थसत्का इत्यर्थः 'एरिसग'त्ति ईदृशकाः प्राणातिपातादिष्वतीतप्रतिक्रमणादिमन्तः, 'नो खलु'त्ति नैव 'एरिसग'त्ति उक्तरूपा उक्तार्थानामपरिज्ञानात् 'आजीविओवासग'-त्ति गोशालकशिष्यश्रावकाः ॥ अथैतस्यैवार्थस्य विशेषतः समर्थनार्थमाजीविकसमयार्थस्य तदुपासकविशेषस्वरूपस्य चाभिधानपूर्वकमाजीविकोपासकापेक्षया श्रमणोपासकानुत्कर्षयितुमाह—'आजीविए'त्यादि, आजीविकसमयः—गोशालकसिद्धान्तः तस्य 'अयमट्ठे'-त्ति इदमभिधेयम्—'अक्खीणपरिभोइणो सव्वे सत्त'त्ति अक्षीणं—अक्षीणायुष्कमप्रासुकं परिभुञ्जत इत्येवंशीला अक्षीणपरिभोगिनः, अथवा इनुप्रत्ययस्य स्वार्थिकत्वादक्षीणपरिभोगा—अनपगताहारभोगासक्तय इत्यर्थः 'सर्वे सत्त्वाः' असंयताः सर्वे प्राणिनः, यद्येवं ततः किमित्याह—'से हंते'त्यादि, 'से'त्ति ततः 'हंत'त्ति हत्वा लगुडादिना अभ्यवहार्यं प्राणिजातं 'छित्त्वा' असिपुत्रिकादिना द्विधा कृत्वा 'भित्त्वा' शूलादिना भिन्नं कृत्वा 'लुप्त्वा' पक्षादिलोपनेन 'विलुप्य' त्वचो विलोपनेन 'अपद्राव्य' विनाश्य आहारमाहारयन्ति, 'तत्थ'त्ति 'तत्र' एवं स्थितेऽसंयतसत्त्ववर्गे हननादिदोषपरायणे इत्यर्थः आजीविकसमये वाऽधिकरणभूते द्वादशेति

वक्तृविवक्षाऽधीनत्वात् सर्वन्यायानां वक्ष्यमाणविकल्पायोगाच्चेति, एवं त्रिविधं त्रिविधेनेत्यत्र विकल्पे एक एव विकल्पः, तदन्येषु पुनर्द्वितीयतृतीयचतुर्थेषु त्रयः २ पञ्चमषष्ठयोर्नव नव सप्तमे त्रयः अष्टमनवमयोर्नव नवेति, एवं सर्वेष्वप्येकोनपञ्चाशत्, एवमियमतीतकालमाश्रित्य कृता करणकारणादियोजना, अथवैवमेषाअतीतकाले मनःप्रभृतीनां कृतं कारितमनुज्ञातं वा वधं क्रमेण न करोति न कारयति न चानुजानाति तन्निन्दनेन तदनुमोदनानिषेधतस्ततो निवर्त्तत इत्यर्थः,तन्निन्दनस्याभावे हि तदनुमोदनाऽनिवृत्तेः कृतादिरसौ क्रियमाणादिरिव स्यादिति, वर्त्तमानकालं त्वाश्रित्य सुगमैव, भविष्यत्कालापेक्षया त्वेवमसौ–न करोति मनसा तं हनिष्यामीत्यस्य चिन्तनात्, न कारयति मनसैव तमहं घातयिष्यामीत्यस्य चिन्तनात्, नानुजानाति मनसा, भाविनं वधमनुश्रुत्य हर्षकरणात्, एवं वाचा कायेन च तयोस्तथाविधयोः करणादिति, अथवैवमेव भविष्यत्काले मनःप्रभृतिना करिष्यमाणं कारयिष्यमाणमनुमंस्यमानं वा वधं क्रमेण न करोति न कारयति न चानुजानाति, ततो निवृत्तिमभ्युपगच्छतीत्यर्थः, सर्वेषां चैषां मीलने सप्तचत्वारिंशदधिकं भङ्गकशतं भवति, इह च त्रिविधं त्रिविधेनेति विकल्पमाश्रित्याक्षेपपरिहारौ वृद्धोक्तावेवम्–"न करेइच्चाइतियं गिहिणो कह होइ देसविरयस्स ?। भन्नइ विसयस्स बहिं पडिसेहो अणुमईएवि ॥ १ ॥ केई भणंति गिहिणो तिविहं तिविहेण नत्थि संवरणं । तं न जओ निद्दिट्ठं इहेव सुत्ते विसेसेउं ॥ २ ॥ तो कह निज्जुत्तीए ऽणुमइनिसेहोत्ति ? सो सविसयंमि । सामन्ने वऽन्नत्थ उ तिविहं तिविहेण को दोसो?॥३॥" इह च 'सविसयंमि'त्ति स्वविषये यथानुमतिरस्ति 'सामन्ने व'त्ति सामान्ये वाऽविशेषे प्रत्याख्याने सति 'अण्णत्थ उ'त्ति विशेषे स्वयंभूरमणजलधिमत्स्यादौ "पुत्ताइसंतइनिमित्तमेत्तमेगारसिं पवण्णस्स । जंपंति केइ गिहिणो दिक्खाभिमुहस्स तिविहंपि ॥ १ ॥" यथा च त्रिविधं त्रिविधेनेत्यत्राक्षेपपरिहारौ कृतौ तथाऽन्यत्रापि कार्यौ यत्रानुमतेरनुप्रवेशोऽस्तीति । अथ कथं मनसा करणादि ?, उच्यते,

ग्राहयन्नित्यर्थ इति, 'तीत'मित्यादि, 'तीतम्' अतीतकालकृतं प्राणातिपातं 'प्रतिक्रामति'ततो निन्दाद्वारेण निवर्त्तत इत्यर्थः 'पडुप्पन्नं'ति प्रत्युत्पन्नं-वर्त्तमानकालीनं प्राणातिपातं 'संवृणोति' न करोतीत्यर्थः 'अनागतं' भविष्यत्कालविषयं 'प्रत्याख्याति' न करिष्यामीत्यादि प्रतिजानीते ॥ 'तिविहं तिविहेण'मित्यादि, इह च नव विकल्पास्तत्र गाथा-"तिन्नि तिया तिन्नि दुया तिन्नि य एक्का हवंति जोगेसु । तिदुएक्कं तिदुएक्कं तिदुएक्कं चेव करणाइं ॥ १ ॥" एतेषु च विकल्पेष्वेकादयो विकल्पा लभ्यन्ते, आह च— "एगो तिन्नि य तियगा दो नवगा तह य तिन्नि नव नव य । भंगनवगस्स एवं भंगा एगूणपन्नासं ॥ १ ॥ अतेषु ७३५ । स्थापना चेयम्—तत्र तिविहं तिविहेणं'ति 'त्रिविधं' त्रिप्रकारं करणकारणानुमतिभेदात् प्राणातिपातयोगमिति गम्यते, 'त्रिविधेन' मनोवचनकायलक्षणेन करणेन प्रतिक्रामति—ततो निन्दनेन विरमति, 'तिविहं दुविहेणं'ति त्रिविधं वधकरणादिभेदात् 'द्विविधेन' करणेन मनःप्रभृतीनामेकतरवर्जिततद्द्वयेन, 'तिविहं एगविहेणं'ति त्रिविधं तथैव 'एकविधेन' मनःप्रभृतीनामेकतमेन करणेनेति 'दुविहं तिविहेणं पडिक्कममाणे' इत्यादि, 'न करोति' न स्वयं विदधाति अतीतकाले प्राणातिपातं, मनसा-हा हतोऽहं येन मया तदाऽसौ न हत इत्येवमनुध्यानात्, तथा 'न' नैव कारयति मनसैव, यथा हा न युक्तं कृतं यदसौ परेण न घातित इति चिन्तनात्, तथा 'कुर्वन्तं' विदधानमुपलक्षणत्वात् कारयन्तं वा समनुजानन्तं वा परमात्मानं प्राणातिपातं 'नानुजानाति'नानुमोदयति, मनसैव वधानुस्मरणेन तदनुमोदनात्, एवं न करोति न कारयति कुर्वन्तं नानुजानाति वचसा, तथाविधवचनप्रवर्त्तनात्, एवं न करोति न कारयति कुर्वन्तं नानुजानाति कायेन, तथाविधाङ्गविकारकरणादिति, न चेह यथासङ्ख्यन्यायो न करोति मनसा न कारयति वचसा नानुजानाति कायेनेत्येवंलक्षणोऽनुसरणीयो,

| ३३३ | २२२ | १११ | योगः |
|---|---|---|---|
| ३२१ | ३२१ | ३२१ | कर० |
| १३३ | ३९९ | ३९९ | ल० |

१२, इच्चेते दुवालस आजीवियोवासगा अरिहंतदेवतागा अम्मापिउसुस्सूसगा पंचफलपडिक्कंता, तंजहा–उंबरेहिं वडेहिं बोरेहिं सतरेहिं पिलंखूहिं, पलंडुल्हसणकंदमूलविवज्जगा अणिल्लंछिएहिं अणक्कभिन्नेहिं गोणेहिं तसपाणविवज्जिएहिं चित्तेहिं वित्तिं कप्पेमाणे विहरंति, एएवि ताव एवं इच्छंति, किमंग पुण जे इमे समणोवासगा भवंति जेसिं नो कप्पंति इमाइं पन्नरस कम्मादाणाइं सयं करेत्तए वा कारवेत्तए वा करेंतं वा अन्नं न समणुजाणेत्तए, तंजहा–इंगालकम्मे वणकम्मे साडीकम्मे भाडीकम्मे फोडीकम्मे दंतवाणिज्जे लक्खवाणिज्जे केसवाणिज्जे रसवाणिज्जे विसवाणिज्जे जंतपीलणकम्मे निल्लंछणकम्मे दवग्गिदावणया सरहदतलायपरिसोसणया असतीपोसणया, इच्चेते समणोवासगा सुक्का सुक्काभिजातीया भविया भवित्ता कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति ॥ (सूत्रं ३२९) कतिविहा णं भंते ! [देवा] देवलोगा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चउव्विहा देवलोगा पण्णत्ता तंजहा–भवणवासिवाणमंतरजोइसवेमाणिया, सेवं भंते २ ॥ (सूत्रं ३३०)॥ अट्ठमसयस्स पंचमो ॥८-५॥

'समणोवासयस्स णं'ति तृतीयार्थत्वात् षष्ठ्याः श्रमणोपासकेनेत्यर्थः सम्बन्धमात्रविवक्षया वा षष्ठीयं, 'पुव्वामेव'त्ति प्राक्कालमेव सम्यक्त्वप्रतिपत्तिसमनन्तरमेवेत्यर्थः 'अपच्चक्खाए'त्ति न प्रत्याख्यातो भवति, तदा देशविरतिपरिणामस्याजातत्वात्, ततश्च 'से णं'ति श्रमणोपासकः 'पश्चात्' प्राणातिपातविरतिकाले 'पच्चाइक्खमाणे'त्ति प्रत्याचक्षाणः प्राणातिपातमिति गम्यते किं करोति ? इति प्रश्नः, वाचनान्तरे तु 'अपच्चक्खाए' इत्यस्य स्थाने 'पच्चक्खाए'त्ति दृश्यते 'पच्चाइक्खमाणे'इत्यस्य च स्थाने 'पच्चक्खावेमाणे'त्ति दृश्यते, तत्र च प्रत्याख्याता स्वयमेव प्रत्याख्यापयंश्च गुरुणा हेतुकर्त्रा प्राणातिपातप्रत्याख्यानं गुरुणाऽऽत्मानं

मणसा कायसा ३६, अहवा न कारवेइ वयसा कायसा ३७, अहवा करेंतं नाणुजा० मणसा वयसा ३८, अहवा करेंतं नाणुजा० मणसा कायसा ३९, अहवा करेंतं नाणुजाणइ वयसा कायसा ४०, एक्कविहं एगविहेणं पडिक्कममाणे न करेति मणसा ४१, अहवा न करेति वयसा ४२, अहवा न करेति कायसा ४३, अहवा न कारवेति मणसा ४४, अहवा न कारवेति वयसा ४५, अहवा न कारवेइ कायसा ४६, अहवा करेंतं नाणुजाणइ मणसा४७ अहवा करेंतं नाणुजा० वयसा ४८ अहवा करेंतं नाणुजाणइ कायसा ४९। पडुप्पन्नं संवरेमाणे किं तिविहं तिविहेणं संवरेइ ?, एवं जहा पडिक्कममाणेणं एगूणपन्नं भंगा भणिया एवं संवरमाणेणवि एगूणपन्नं भंगा भाणियव्वा। अणागयं पच्चक्खमाणे किं तिविहं तिविहेणं पच्चक्खाइ ? एवं ते चेव भंगा एगुणपन्ना भाणियव्वा जाव अहवा करेंतं नाणुजाणइ कायसा ॥ समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव थूलमुसावाए अपच्चक्खाए भवइ, से णं भंते! पच्छा पच्चाइक्खमाणे एवं जहा पाणाइवायस्स सीयालं भंगसयं भणियं तहा मुसावायस्सवि भाणियव्वं। एवं अदिन्नादाणस्सवि, एवं थूलगस्स मेहुणस्सवि, थूलगस्स परिग्गहस्सवि जाव अहवा करेंतं नाणुजाणइ कायसा॥ एए खलु एरिसगा समणोवासगा भवंति, नो खलु एरिसगा आजीवियोवासगा भवंति ( सूत्रं ३२८ )॥ आजीवियसमयस्स णं अयमट्ठे पण्णत्ते अक्खीणपडिभोइणो सव्वे सत्ता से हंता छेत्ता भेत्ता लुंपित्ता विलुंपित्ता उद्दवइत्ता आहारमाहारेंति, तत्थ खलु इमे दुवालस आजीवियोवासगा भवंति, तंजहा-ताले १ तालपलंबे २ उव्विहे ३ संविहे ४ अवविहे ५ उदए ६ नामुदए ७ णमुदए ८ अणुवालए ९ संखवालए १० अयंबुले ११ कायरए

कायसा ४, तिविह एगविहेणं पडि० न करेति ३ मणसा ५, अहवा न करेइ ३ वयसा ६, अहवा न करेइ ३ कायसा ७, दुविहं ति० प० न करेइ न का० मणसा वयसा कायसा ८, अहवा न करेइ करेंतं नाणुजाणइ मण० वय० काय० ९, अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजा० मणसा वयसा कायसा १०, दु० दु० प० न क० न का० म० व० ११, अहवा न क० न का० म० कायसा १२, अहवा न क० न का० वयसा कायसा १३, अहवा न करेइ करेंतं नाणुजाणइ मणसा वयसा १४, अहवा न करे० करेंतं नाणुजाणइ मणसा कायसा १५, अहवा न करेति करेंतं नाणुजाणति वयसा कायसा १६, अहवा न कारवेति करेंतं नाणुजाणति मणसा वयसा १७, अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजाणइ मणसा कायसा १८, अहवा न कारवेति करेंतं नाणुजाणइ वयसा कायसा १९, दुविहं एक्कविहेणं पडिक्कममाणे न करेति न कारवेति मणसा २०, अहवा न करेति न कारवेति वयसा २१, अहवा न करेति न कारवेति कायसा २२, अहवा न करेति करेंतं नाणुजाणइ मणसा २३, अहवा न करेइ करेंतं नाणुजाणइ वयसा २४, अहवा न करेइ करेंतं नाणुजाणए कायसा २५, अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजाणइ मणसा २६, अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजाणइ वयसा २७ अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजाणइ कायसा २८, एगविहं तिविहेणं पडि० न करेति मणसा वयसा कायसा २९, अहवा न कारवेइ मण० वय० कायसा ३०, अहवा करेंतं नाणुजा० मणसा ३।३१, एक्कविहं दुविहेणं पडिक्कममाणे न करेति मणसा वयसा ३२, अहवा न करेति मणसा कायसा ३३, अहवा न करेइ वयसा कायसा ३४, अहवा न कारवेति मणसा वयसा ३५, अहवा न कारवेति

'सार'त्ति प्रधानं 'सावएज्ज'त्ति स्वापतेयं-द्रव्यम्, एतस्य च पदत्रयस्य कर्मधारयः, अथ यदि तद्भाण्डमभाण्डं भवति तदा कथं स्वकीयं तद् गवेषयति ? इत्याशङ्क्याह—'ममत्ते'त्यादि, परिग्रहादिविषये मनोवाक्कायानां करणकारणे तेन प्रत्याख्याते, ममत्वभावः पुनः-हिरण्यादिविषये ममतापरिणामः पुनः 'अपरिज्ञातः' अप्रत्याख्यातो भवति, अनुमतेरप्रत्याख्यातत्वात्, ममत्वभावस्य चानुमतिरूपत्वादिति ॥ 'केई जायं चरेज्ज'त्ति कश्चिद् उपपतिरित्यर्थः 'जायां' भार्यां 'चरेत्' सेवेत, 'सुण्ह'त्ति स्नुषा-पुत्रभार्या 'पेज्जबंधणे'त्ति प्रेमैव-प्रीतिरेव बन्धनं प्रेमबन्धनं तत्पुनः 'से' तस्य श्राद्धस्याव्यवच्छिन्नं भवति, अनुमतेरप्रत्याख्यातत्वात् प्रेमानुबन्धस्य चानुमतिरूपत्वादिति ॥

**समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव थूलए पाणाइवाए अपच्चक्खाए भवइ, से णं भंते ! पच्छा पच्चाइक्खमाणे किं करेति ?, गोयमा ! तीयं पडिक्कमइ पडुप्पन्नं संवरेइ अणागयं पच्चक्खाति॥ तीयं पडिक्कममाणे किं तिविहं तिविहेणं पडिक्कमति १ तिविहं दुविहेणं पडिक्कमति २ तिविहं एगविहेणं पडिक्कमति ३ दुविहं तिविहेणं पडिक्कमति ४ दुविहं दुविहेणं पडिक्कमति ५ दुविहं एगविहेणं पडिक्कमति ६ एगविहं तिविहेणं पडिक्कमति ७ एक्कविहं दुविहेणं पडिक्कमति ८ एक्कविहं एक्कविहेणं पडिक्कमति ९, गोयमा ! तिविहं तिविहेणं पडिक्कमति तिविहं दुविहेण वा पडिक्कमति तं चेव जाव एक्कविहं वा एक्कविहेणं पडिक्कमति, तिविहं वा तिविहेणं पडिक्कममाणे न करेति न कारवेति करेंतं णाणुजाणइ मणसा वयसा कायसा १, तिविहं दुविहेणं पडि० न क० न का० करेंतं नाणुजाणइ मणसा वयसा २, अहवा न करेइ न का० करेंतं नाणुजा० मणसा कायसा ३, अह न करेइ ३ वयसा**

८ शतके
उद्देशः ३
श्रावक-
व्रतभंगाः
सू० ३२७

'रायगिहे'इत्यादि, गौतमो भगवन्तमेवमवादीत्–'आजीविकाः' गोशालकशिष्या भदन्त ! 'स्थविरान्' निर्ग्रन्थान् भगवतः 'एवं' वक्ष्यमाणप्रकारमवादिषुः, यच्च ते तान् प्रत्यवादिषुस्तद् गौतमः स्वयमेव पृच्छन्नाह–'समणोवासगस्स ण'मित्यादि, 'सामाइयकडस्स'त्ति कृतसामायिकस्य–प्रतिपन्नाद्यशिक्षाव्रतस्य, श्रमणोपाश्रये हि श्रावकः सामायिकं प्रायः प्रतिपद्यते इत्यत उक्तं श्रमणोपाश्रये आसीनस्येति, 'केइ'त्ति कश्चित्पुरुषः 'भंडं'ति वस्त्रादिकं वस्तु गृहवर्त्ति साधूपाश्रयवर्त्ति वा 'अवहरेज्ज'त्ति अपहरेत् 'से'त्ति स श्रमणोपासकः 'तं भंडं'ति तद्–अपहृतं भाण्डम् 'अणुगवेसमाणे'त्ति सामायिकपरिसमाप्त्यनन्तरं गवेषयन् 'सभंडं'ति स्वकीयं भाण्डं 'परायगं'ति परकीयं वा ?, पृच्छतोऽयमभिप्रायः–स्वसम्बन्धित्वात्तत्स्वकीयं सामायिकप्रतिपत्तौ च परिग्रहस्य प्रत्याख्यातत्वादस्वकीयमतः प्रश्नः, अत्रोत्तरं–'सभंडं'ति स्वभाण्डं, 'तेहिं'ति तैर्विवक्षितैर्यथाक्षयोपशमं गृहीतैरित्यर्थः, 'सीले'त्यादि, तत्र शीलव्रतानि–अणुव्रतानि गुणा–गुणव्रतानि विरमणानि–रागादिविरतयः प्रत्याख्यानं–नमस्कारसहितादि पौषधोपवासः–पर्वदिनोपवसनं तत एषां द्वन्द्वोऽतस्तैः, इह च शीलव्रतादीनां ग्रहणेऽपि सावद्ययोगविरत्या विरमणशब्दोपात्तया प्रयोजनं, तस्या एव परिग्रहस्यापरिग्रहतानिमित्तत्वेन भाण्डस्याभाण्डताभवनहेतुत्वादिति, 'से भंडे अभंडे भवइ'त्ति 'तत्' अपहृतं भाण्डमभाण्डं भवत्यसंव्यवहार्यत्वात् ॥ 'से केणं'ति अथ केन 'खाइ णं'ति पुनः 'अट्ठेणं'ति अर्थेन हेतुना 'एवं भवइ'त्ति एवंभूतो मनःपरिणामो भवति?, 'नो मे हिरन्ने'इत्यादि, हिरण्यादिपरिग्रहस्य द्विविधं त्रिविधेन प्रत्याख्यातत्वात्, उक्तानुक्तार्थसङ्ग्रहेणाह–'नो मे'इत्यादि धनं–गणिमादि गवादि वा कनकं प्रतीतं रत्नानि–कर्केतनादीनि मणयः–चन्द्रकान्तादयः, मौक्तिकानि शङ्खाश्च प्रतीताः, शिलाप्रवालानि—विद्रुमाणि रक्तरत्नानि–पद्मरागादीनि तत एषां द्वन्द्वस्ततो विपुलानि–धनादीन्यादिर्यस्य तत्तथा 'संत'त्ति विद्यमानं

क्रियाधिकारात्पञ्चमोद्देशके परिग्रहादिक्रियाविषयं विचारं दर्शयन्नाह—

रायगिहे जाव एवं वयासी—आजीविया णं भंते ! थेरे भगवंते एवं वयासी—समणोवासगस्स णं भंते ? सामाइयकडस्स समणोवस्सए अच्छमाणस्स केइ भंडे अवहरेज्जा, से णं भंते ! तं भंडं अणुगवेसमाणे किं सयं भंडं अणुगवेसइ परायगं भंडं अणुगवेसइ ?, गोयमा! सयं भंडं अणुगवेसति, नो परायगं भंडं अणुगवेसइ, तस्स णं भंते ! तेहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं से भंडे अभंडे भवति ?, हंता भवति ॥ से केणं खाइ णं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सयं भंडं अणुगवेसइ, नो परायगं भंडं अणुगवेसइ ? गोयमा! तस्स णं एवं भवति—णो मे हिरन्ने नो मे सुवन्ने नो मे कंसे नो मे दूसे नो मे विउलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमादीए संतसारसावदेज्जे, ममत्तभावे पुण से अपरिण्णाए भवति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—सयं भंडं अणुगवेसइ, नो परायगं भंडं अणुगवेसइ॥ समणोवासग्गस्स णं भंते ! सामाइयकडस्स समणोवस्सए अच्छमाणस्स केति जायं चरेज्जा, से णं भंते! किं जायं चरइ अजायं चरइ ?, गोयमा ! जायं चरइ, नो अजायं चरइ, तस्स णं भंते ! तेहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं सा जाया अजाया भवइ ?, हंता भवइ, से केणं खाइ णं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—जायं चरइ, नो अजायं चरइ ?, गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ—णो मे माता णो मे पिता णो मे भाया णो मे भगिणी णो मे भज्जा णो मे पुत्ता णो मे धूया नो मे सुण्हा, पेज्जबंधणे पुण से अवोच्छिन्ने भवइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो अजायं चरइ ॥ ( सूत्रं ३२७ ) ॥

अनन्तरोद्देशके वैमानिका उक्ताः, ते च क्रियावन्त इति चतुर्थोद्देशके ता उच्यन्ते, तत्र च—

रायगिहे जाव एवं वयासी–कति णं भंते ! किरियाओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! पंच किरियाओ पन्नत्ताओ, तंजहा–काइया अहिगरणिया, एवं किरियापदं निरवसेसं भाणियव्वं जाव मायावत्तियाओ किरियाओ विसेसाहियाओ, सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति भगवं गोयमे० ॥ ( सूत्रं ३२६ ) ॥ ८–४ ॥

'एवं किरियापयं'ति, 'एवम्' एतेन क्रमेण क्रियापदं प्रज्ञापनाया द्वाविंशतितमं, तच्चैवं—'काइया अहिगरणिया पाओसिया पारियावणिया पाणाइवायकिरिया' इत्यादि, अन्तिमं पुनरिदं सूत्रमत्र 'एयासि णं भंते ! आरंभियाणं परिग्गहियाणं अपच्चक्खाणियाणं मायावत्तियाणं मिच्छादंसणवत्तियाण य कयरे२हिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वथोवा मिच्छादंसणवत्तियाओ किरियाओ' मिथ्यादृशामेव तद्भावात्, 'अप्पच्चक्खाणकिरियाओ विसेसाहियाओ' मिथ्यादृशामविरतसम्यग्दृशां च तासां भावात्, 'परिग्गहियाओ विसेसाहियाओ' पूर्वोक्तानां देशविरतानां च तासां भावात्, 'आरंभियाओ किरियाओ विसेसाहियाओ' पूर्वोक्तानां प्रमत्तसंयतानां च तासां भावात्, 'मायावत्तियाओ विसेसाहियाओ' पूर्वोक्तानामप्रमत्तसंयतानां च तद्भावादिति, एतदन्तं चेदं वाच्यमिति दर्शयन्नाह—'जावे'त्यादि, इह गाथे–"मिच्छापच्चक्खाणे परिग्गहारंभमायकिरियाओ। कमसो मिच्छाअविरयदेसपमत्तप्पमत्ताणं ॥ १ ॥ मिच्छत्तवत्तियाओ मिच्छद्दिट्ठीण चेव तो थोवा। सेसाणं एक्केक्को वड्ढइ रासी तओ अहिया॥२॥" इति ॥ [ गतार्थं पूर्वोक्तेन ] ॥ अष्टमशते चतुर्थोद्देशकः ॥ ८–४ ॥



इति, तदेतद्द्वितयमपि यथा न संभवति तथोक्तम्, अथ 'नो चरिमाइं नो अचरिमाइं'ति, कथं ?, यदा तस्याश्चरमव्यपदेशोऽपि नास्ति तदा चरमाणीति कथं भविष्यति ?, एवमचरमाण्यपि, तथा 'नो चरिमंतपएसा नो अचरिमंतपएस'त्ति, अत्रापि चरमत्वस्याचरमत्वस्य चाभावात्तत्प्रदेशकल्पनाया अप्यभाव एवेत्यत उक्तं-नो चरिमान्तप्रदेशा नो अचरिमान्तप्रदेशा रत्नप्रभा इति, किं तर्हि? 'नियमात्' नियमेनाचरमं च चरमाणि च, एतदुक्तं भवति-अवश्यंतयेयं केवलभङ्गैर्वाच्या न भवति, अवयवावयविरूपत्वादसंख्येयप्रदेशावगाढत्वाद्यथोक्तनिर्वचनविषयैवेति, तथाहि-रत्नप्रभा तावदनेन प्रकारेण व्यवस्थितेति विनेयजनानुग्रहाय लिख्यते, स्थापना चेयम्—एवमवस्थितायां यानि प्रान्तेषु व्यवस्थितानि तदध्यासितक्षेत्रखण्डानि तानि तथाविधविशिष्टैकपरिणामयुक्तत्वाच्चरमाणि, यत्पुनर्मध्ये महद् रत्नप्रभाक्रान्तं क्षेत्रखण्डं तदपि तथाविधपरिणामयुक्तत्वादचरमं, तदुभयसमुदायरूपा चेयम्, अन्यथा तदभावप्रसङ्गात्, प्रदेशपरिकल्पनायां तु चरमान्तप्रदेशाश्चाचरमान्तप्रदेशाश्च, कथं?, ये बाह्यखण्डप्रदेशास्ते चरमान्तप्रदेशाः, ये च मध्यखण्डप्रदेशास्तेऽचरमान्तप्रदेशा इति, अनेन चैकान्तदुर्णयनिरासप्रधानेन निर्वचनसूत्रेणावयवावयविरूपं वस्त्वित्याह, तयोश्च भेदाभेद इति। एवं शर्करादिष्वपि, अथ कियद्दूरं तद्वाच्यम् ? इत्याह-'जावे'त्यादि, ये वैमानिकभवसम्भवं स्पर्शं न लप्स्यन्ते पुनस्तत्रानुत्पादेन मुक्तिगमनात्ते वैमानिकाः स्पर्शचरमेण चरमाः, ये तु तं पुनर्लप्स्यन्ते ते त्वचरमा इति ॥ अष्टमशते तृतीयः ॥ ८-३ ॥



भाणियव्वं जाव वेमाणिया णं भंते ! फासचरिमेणं किं चरिमा अचरिमा ?, गोयमा ! चरिमावि अचरिमावि। सेवं भंते ! २ भग० गो० ॥ ( सूत्रं ३२५ ) ॥ ८-३ ॥

'कइ ण'मित्यादि, तत्र 'इमा णं भंते ! रयणप्पभापुढवी किं चरिमा अचरिमा?' इति, अथ केयं चरमाचरमपरिभाषा ? इति, अत्रोच्यते, चरमं नाम प्रान्तं पर्यन्तवर्त्ति, आपेक्षिकं च चरमत्वं, यदुक्तम्–"अन्यद्रव्यापेक्षयेदं चरमं द्रव्यमिति, यथा पूर्वशरीरापेक्षया चरमं शरीर"मिति, तथा अचरमं नाम अप्रान्तं मध्यवर्त्ति, आपेक्षिकं चाचरमत्वं, यदुक्तम्—"अन्यद्रव्यापेक्षयेदमचरमं द्रव्यं, यथाऽन्त्यशरीरापेक्षया मध्यशरीर"मिति, इह स्थाने प्रज्ञापनादशमं पदं वाच्यं, एतदेवाह—'चरिमे'त्यादि, तत्र पदद्वयं दर्शितमेव, शेषं तु दर्श्यते–'चरिमाइं अचरिमाइं चरिमंतपएसा अचरिमंतपएसा ?, गोयमा ! इमा णं रयणप्पभापुढवी नो चरिमा नो अचरिमा नो चरिमाइं नो अचरिमाइं नो चरिमंतपएसा नो अचरिमंतपएसा, नियमा अचरिमं चरमाणि य चरिमंतपएसा य अचरिमंतपएसा य' इत्यादि, तत्र किं चरिमा अचरिमा ? इत्येकवचनान्तः प्रश्नः 'चरिमाइं अचरिमाइं'इति बहुवचनान्तः प्रश्नः, 'चरिमंतपएसा अचरिमंतपएस'त्ति चरिमाण्येवान्तवर्त्तित्वादन्ताश्चरिमान्तास्तेषां प्रदेशा इति समासः, तथाऽचरममेवान्तो–विभागोऽचरमान्तः तस्य प्रदेशा अचरमान्तप्रदेशाः, 'गोयमा ! नो चरिमा नो अचरिमा' चरमत्वं ह्येतदापेक्षिकम्, अपेक्षणीयस्याभावाच्च कथं चरिमा भविष्यति ?, अचरमत्वमप्यपेक्ष्यैव भवति, ततः कथमन्यस्यापेक्षणीयस्याभावेऽचरमत्वं भवति ?, यदि हि रत्नप्रभाया मध्येऽन्या पृथिवी स्यात्तदा तस्याश्चरमत्वं युज्यते, न चास्ति सा, तस्मान्न चरमाऽसौ, तथा यदि तस्या बाह्यतोऽन्या पृथिवी स्यात् तदा तस्या अचरमत्वं युज्यते, न चास्ति सा, तस्मान्नाचरमाऽसाविति, अयं च वाक्यार्थोऽत्र–किमियं रत्नप्रभा पश्चिमा उत मध्यमा?,



प्र०आ०३६५

अह भंते ! कुम्मे कुम्मावलिया गोहे गोहावलिया गोणे गोणावलिया मणुस्से मणुस्सावलिया महिसे महिसावलिया एएसि णं दुहा वा तिहा वा संखेज्जहावि छिन्नाणं जे अंतरा तेवि णं तेहिं जीवपएसेहिं फुडा ?, हंता फुडा। पुरिसे णं भंते ! (जं अंतरं) ते अंतरे हत्थेण वा पादेण वा अंगुलियाए वा सलागाए वा कट्ठेण वा कलिंचेण वा आमुसमाणे वा संमुसमाणे वा आलिहमाणे वा विलिहमाणे वा अन्नयरेण वा तिक्खेणं सत्थजाएणं आच्छिंदमाणे वा विच्छिंदमाणे वा अगणिकाएणं वा समोडहमाणे तेसिं जीवपएसाणं किंचि आबाहं वा विबाहं वा उप्पायइ छविच्छेदं वा करेइ ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं संकमइ ॥ ( सूत्रं ३२४ ) ॥

'अहे'त्यादि, 'कुम्मे'त्ति 'कूर्मः' कच्छपः 'कुम्मावलिय'त्ति 'कूर्मावलिका' कच्छपपङ्क्तिः 'गोहे'त्ति गोधा-सरीसृपविशेषः 'जं अंतर'न्ति यान्यन्तरालानि 'ते अंतरे'त्ति तान्यन्तराणि 'कलिंचेण व'त्ति क्षुद्रकाष्ठरूपेण 'आमुसमाणे व'त्ति आमृशन्, ईषत् स्पृशन्नित्यर्थः 'संमुसमाणे य'त्ति संमृशन्, सामस्त्येन स्पृशन्नित्यर्थः 'आलिहमाणे व'त्ति आलिखन्-ईषत् सकृद्वा कर्षन् 'विलिहमाणे व'त्ति विलिखन्-नितरामनेकशो वा कर्षन् 'आच्छिंदमाणे व'त्ति ईषत् सकृद्वा छिन्दन् 'विच्छिंदमाणे व'त्ति नितरामसकृद्वा छिन्दन् 'समोडहमाणे'त्ति समुपदहन् 'आबाहं व'त्ति ईषद्बाधां 'वाबाहं व'त्ति व्याबाधां—प्रकृष्टपीडाम् ॥ कूर्मादिजीवाधिकारात्तदुत्पत्तिक्षेत्रस्य रत्नप्रभादेश्चरमाचरमविभागदर्शनायाह—

कति णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ पुढवीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-रयणप्पभा जाव अहेसत्तमा पुढवी ईसिपब्भारा । इमा णं भंते ! रयणप्पभापुढवी किं चरिमा अचरिमा ?, चरिमपदं निरवसेसं

असंखेज्जजीविया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा-एगट्ठिया य बहुबीयगा य, से किं तं एगट्ठिया ?, २ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा-निंबंबजंबु० एवं जहा पन्नवणापए जाव फला बहुबीयगा, सेत्तं बहुबीयगा, सेत्तं असंखेज्जजीविया। से किं तं अणंतजीविया ?, अणंतजीविया अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा-आलुए मूलए सिंगबेरे, एवं जहा सत्तमसए जाव सीउण्हे सिउंढी मुसुंढी, जे यावन्ने त०, सेत्तं अणंतजीविया ॥ ( सूत्रं ३२३ ) ॥

'कई'त्यादि, 'संखेज्जजीविय'त्ति संख्याता जीवा येषु सन्ति ते संख्यातजीविकाः, एवमन्यदपि पदद्वयं, 'जहा पन्नवणाए'त्ति यथा प्रज्ञापनायां तथा, अत्रेदं सूत्रमध्येयं, तत्र चैवमेतत्-'ताले तमाले तक्कलि तेतलि साले य सालकल्लाणे। सरले जायइ केयइ कंदलि तह चम्मरुक्खे य ॥ १ ॥ भुयरुक्खे हिंगुरुक्खे लवंगरुक्खे य होइ बोद्धव्वे। पूयफली खज्जूरी बोद्धव्वा नालिएरी य ॥ २ ॥" 'जे यावन्ने तहप्पगारे'ति ये चाप्यन्ये तथाप्रकारा वृक्षविशेषास्ते संख्यातजीविका इति प्रक्रमः। 'एगट्ठिया य'त्ति एकमस्थिकं-फलमध्ये बीजं येषां ते एकास्थिकाः 'बहुबीयगा य'त्ति बहूनि बीजानि फलमध्ये येषां ते बहुबीजकाः-अनेकास्थिकाः 'जहा पन्नवणापए'त्ति यथा प्रज्ञापनाख्ये प्रज्ञापनाप्रथमपदे तथाऽत्रेदं सूत्रमध्येयं, तच्चैवं-"निंबंबजंबुकोसंबसालअंकोल्लपीलुसल्लूया। सल्लइमोयइमालुयबउलपलासे करंजे य ॥ १ ॥" इत्यादि। तथा "से किं तं बहुबीयगा ?, बहुबीयगा अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा—अत्थियतेंदुककविट्ठे अंबाडगमाउलुंगबिल्ले य। आमलगफणसदाडिम आसोट्ठे उंबरवडे य ॥ १ ॥" इत्यादि। अन्तिमं पुनरिदं सूत्रमत्र—"एएसिं मूलावि असंखेज्जजीविया कंदावि खंधावि तयावि सालावि पवालावि, पत्ता पत्तेयजीविया पुप्फा अणेगजीविया फला बहुबीयग"त्ति, एतदन्तं चेदं वाच्यमिति दर्शयन्नाह-'जावे'त्यादि ॥ जीवाधिकारादिदमाह—

विभङ्गस्य बहुतमविषयत्वात्, तथाहि—विभङ्गज्ञानमूर्द्ध्वाध उपरिमग्रैवेयकादारभ्य सप्तमपृथिव्यन्ते क्षेत्रे तिर्यक् चासङ्ख्यातद्वीपसमुद्ररूपे क्षेत्रे यानि रूपिद्रव्याणि तानि कानिचिज्जानाति कांश्चित्तत्पर्यायांश्च, तानि च मनःपर्यायज्ञानविषयापेक्षयाऽनन्तगुणानीति, तेभ्योऽवधिज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, अवधेः सकलरूपिद्रव्यप्रतिद्रव्यासङ्ख्यातपर्यायविषयत्वेन विभङ्गापेक्षया अनन्तगुणविषयत्वात्, तेभ्योऽपि श्रुताज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, श्रुताज्ञानस्य श्रुतज्ञानवदोघादेशेन समस्तमूर्त्तामूर्त्तद्रव्यसर्वपर्यायविषयत्वेनावधिज्ञानापेक्षयाऽनन्तगुणविषयत्वात्, तेभ्यः श्रुतज्ञानपर्यवा विशेषाधिकाः, केषाञ्चित् श्रुताज्ञानाविषयीकृतपर्यायाणां विषयीकरणाद्, यतो ज्ञानत्वेन स्पष्टावभासं तत्, तेभ्योऽपि मत्यज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, यतः श्रुतज्ञानमभिलाप्यवस्तुविषयमेव, मत्यज्ञानं तु तदनन्तगुणानभिलाप्यवस्तुविषयमपीति, ततोऽपि मतिज्ञानपर्यवा विशेषाधिकाः, केषाञ्चिदपि मत्यज्ञानाविषयीकृतभावानां विषयीकरणात्, तद्धि मत्यज्ञानापेक्षया स्फुटतरमिति, ततोऽपि केवलज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, सर्वाद्धाभाविनां समस्तद्रव्यपर्यायाणामनन्यसाधारणावभासनादिति ॥ अष्टमशते द्वितीयः ॥ ८-२ ॥



अनन्तरमाभिनिबोधिकादिकं ज्ञानं पर्यवतः प्ररूपितं, तेन च वृक्षादयोऽर्था ज्ञायन्ते अतस्तृतीयोद्देशके वृक्षविशेषानाह—

कइविहा णं भंते ! रुक्खा पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा रुक्खा पण्णत्ता, तंजहा–संखेज्जजीविया असंखेज्जजीविया अणंतजीविया । से किं तं संखेज्जजीविया ?, संखे० अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–ताले तमाले तक्कलि तेतलि जहा पन्नवणाए जाव नालिएरी, जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं संखेज्जजीविया । से किं तं असंखेज्जजीविया?,

"एक्केक्कमक्खरं पुण सपरपज्जायभेयओ भिन्नं । तं सव्वदव्वपज्जायरासिमाणं मुणेयव्वं ॥ १ ॥ जे लब्भइ केवलो से सवन्नसहिओ य पज्जवेऽगारो । ते तस्स सपज्जाया सेसा परपज्जवा तस्स ॥२॥"त्ति, एवं चाक्षरात्मकत्वेनाक्षरपर्यायोपेतत्वादनन्ताः श्रुतज्ञानस्य पर्याया इति, 'एवं जाव'त्ति करणादिदं दृश्यं-'केवइया णं भंते ! ओहिनाणपज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता ओहिनाणपज्जवा पन्नत्ता । केवइया णं भंते ! मणपज्जवनाणपज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता मणपज्जवनाणपज्जवा पण्णत्ता । केवइया णं भंते ! केवलनाणपज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता केवलनाणपज्जवा पन्नत्ता' इति, तत्रावधिज्ञानस्य स्वपर्याया येऽवधिज्ञानभेदाः भवप्रत्ययक्षायोपशमिकभेदात् नारकतिर्यग्मनुष्यदेवरूपतत्स्वामिभेदाद् असंख्यातभेदतद्विषयभूतक्षेत्रकालभेदाद् अनन्तभेदं तद्विषयद्रव्यपर्यायभेदाद्विभागपलिच्छेदाच्च, ते चैवमनन्ता इति, मनःपर्यायज्ञानस्य केवलज्ञानस्य च स्वपर्याया ये स्वाम्यादिभेदेन स्वगता विशेषाः, ते चानन्ता अनन्तद्रव्यपर्यायपरिच्छेदापेक्षयाऽविभागपलिच्छेदापेक्षया वेति, एवं मत्यज्ञानादित्रयेऽप्यनन्तपर्यायत्वमूह्यमिति [ग्रन्थाग्रं ८०००]। अथ पर्यवाणामेवाल्पबहुत्वनिरूपणायाह-'एएसि णं'मित्यादि, इह च स्वपर्यायापेक्षयैवैषामल्पबहुत्वमवसेयं, स्वपरपर्यायापेक्षया तु सर्वेषां तुल्यपर्यायत्वादिति, तत्र सर्वस्तोका मनःपर्यायज्ञानपर्यायाः, तस्य मनोमात्रविषयत्वात्, तेभ्योऽवधिज्ञानपर्याया अनन्तगुणाः, मनःपर्यायज्ञानापेक्षयाऽवधिज्ञानस्य द्रव्यपर्यायतोऽनन्तगुणविषयत्वात्, तेभ्यः श्रुतज्ञानपर्याया अनन्तगुणाः, ततस्तस्य रूप्यरूपिद्रव्यविषयत्वेनानन्तगुणविषयत्वात्, ततोऽप्याभिनिबोधिकज्ञानपर्याया अनन्तगुणाः, ततस्तस्याभिलाप्यद्रव्यादिविषयत्वेनानन्तगुणविषयत्वात्, ततः केवलज्ञानपर्याया अनन्तगुणाः, सर्वद्रव्यपर्यायविषयत्वात्तस्येति । एवमज्ञानसूत्रेऽप्यल्पबहुत्वकारणं सूत्रानुसारेणोहनीयं, मिश्रसूत्रे तु स्तोका मनःपर्यायज्ञानपर्यवाः, इहोपपत्तिः प्राग्वत्, तेभ्यो विभङ्गज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, मनःपर्यायज्ञानापेक्षया

अपरः संख्येयभागवृद्ध्या ३ अन्यतरः संख्येयगुणवृद्ध्या ४ तदन्योऽसंख्येयगुणवृद्ध्या ५ अपरस्त्वनन्तगुणवृद्ध्या ६ इति, एवं च संख्यातस्य संख्यातभेदत्वाद् असंख्यातस्य चासंख्यातभेदत्वादनन्तस्य चानन्तभेदत्वाद् अनन्ता विशेषा भवन्ति, अथवा तज्ज्ञेयस्यानन्तत्वात् प्रतिज्ञेयं च तस्य भिद्यमानत्वात् अथवा मतिज्ञानप्रविभागपरिच्छेदैर्बुद्ध्या छिद्यमानमनन्तखण्डं भवतीत्येवमनन्तास्तत्पर्यवाः, तथा ये पदार्थान्तरपर्यायास्ते तस्य परपर्यायाः; ते च स्वपर्यायेभ्योऽनन्तगुणाः, परेषामनन्तगुणत्वादिति, ननु यदि ते परपर्यायास्तदा तस्येति न व्यपदेष्टुं युक्तं, परसम्बन्धित्वात्, अथ तस्य ते तदा न परपर्यायास्ते व्यपदेष्टव्याः, स्वसम्बन्धित्वादिति, अत्रोच्यते, यस्मात् तत्रासम्बद्धास्ते तस्मात् तेषां परपर्यायव्यपदेशः, यस्माच्च ते परित्यज्यमानत्वेन तथा स्वपर्यायाणां स्वपर्याया एते इत्येवं विशेषणहेतुत्वेन च तस्मिन्नुपयुज्यन्ते तस्मात्तस्य पर्यवा इति व्यपदिश्यन्ते, यथाऽसम्बद्धमपि धनं स्वधनं, उपयुज्यमानत्वादिति, आह च- "जइ ते परपज्जाया न तस्स अह तस्स न परपज्जाया। आचार्य आह-जं तंमि असंबद्धा तो परपज्जायववएसो॥१॥चायसपज्जायविसेसणाइणा तस्स जमुवउज्जंति। सधणमिवासंबद्धं हवंति तो पज्जवा तस्स ॥२॥"त्ति। 'केवइया णं भंते! सुयणाणे'त्यादौ, 'एवं चेव'त्ति अनन्ताः श्रुतज्ञानपर्यायाः प्रज्ञप्ता इत्यर्थः, ते च स्वपर्यायाः परपर्यायाश्च, तत्र स्वपर्याया ये श्रुतज्ञानस्य स्वगताक्षरश्रुतादयो भेदाः, ते चानन्ताः, क्षयोपशमवैचित्र्यविषयानन्त्याभ्यां श्रुतानुसारिणां बोधानामनन्तत्वात् अविभागपलिच्छेदानन्त्याच्च, परपर्यायास्त्वनन्ताः सर्वभावानां प्रतीता एव, अथवा श्रुतं-ग्रन्थानुसारि ज्ञानं श्रुतज्ञानं, श्रुतग्रन्थश्चाक्षरात्मकः, अक्षराणि चाकारादीनि, तेषां चैकैकमक्षरं यथायोगमुदात्तानुदात्तस्वरितभेदात् सानुनासिकनिरनुनासिकभेदात् अल्पप्रयत्नमहाप्रयत्नभेदादिभिश्च संयुक्तसंयोगासंयुक्तसंयोगभेदाद् द्व्यादिसंयोगभेदादभिधेयानन्त्याच्च भिद्यमानमनन्तभेदं भवति, ते च तस्य स्वपर्यायाः, परपर्यायाश्चान्येऽनन्ता एव, एवं चानन्तपर्यायं तत्, आह च-

सुयनाणी य दोवि तुल्ला विसेसाहिया, विभंगनाणी असंखेज्जगुणा, केवलनाणी अणंतगुणा, मइअन्नाणी सुयअन्नाणी दोवि तुल्ला अणंतगुण'त्ति, तत्र ज्ञानिसूत्रे स्तोका मनःपर्यायज्ञानिनो, यस्मादृद्धिप्राप्तादिसंयतस्यैव तद्भवति, अवधिज्ञानिनस्तु चतसृष्वपि गतिषु सन्तीति तेभ्योऽसंख्येयगुणाः, आभिनिबोधिकज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनश्चान्योऽन्यं तुल्याः, अवधिज्ञानिभ्यस्तु विशेषाधिकाः, यतस्तेऽवधिज्ञानिनोऽपि मनःपर्यायज्ञानिनोऽपि अवधिमनःपर्यायज्ञानिनोऽपि अवध्यादिरहिता अपि पञ्चेन्द्रिया भवन्ति, सास्वादनसम्यग्दर्शनसद्भावे विकलेन्द्रिया अपि च मतिश्रुतज्ञानिनो लभ्यन्त इति, केवलज्ञानिनस्त्वनन्तगुणाः, सिद्धानां सर्वज्ञानिभ्योऽनन्तगुणत्वात् । अज्ञानिसूत्रे तु विभङ्गज्ञानिनः स्तोकाः, यस्मात् पञ्चेन्द्रिया एव ते भवन्ति, तेभ्योऽनन्तगुणा मत्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनः, यतो मत्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनश्चैकेन्द्रिया अपीति तेन तेभ्यस्तेऽनन्तगुणाः, परस्परतश्च तुल्याः । तथा मिश्रसूत्रे स्तोका मनःपर्यायज्ञानिनः, अवधिज्ञानिनस्तु तेभ्योऽसंख्येयगुणाः, आभिनिबोधिकज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनश्चान्योऽन्यं तुल्याः प्राक्तनेभ्यश्च विशेषाधिकाः, इह युक्तिः पूर्वोक्तैव, आभिनिबोधिकज्ञानिश्रुतज्ञानिभ्यो विभङ्गज्ञानिनोऽसंख्येयगुणाः, कथम् ?, उच्यते, यतः सम्यग्दृष्टिभ्यः सुरनारकेभ्यो मिथ्यादृष्टयस्तेऽसंख्येयगुणा उक्तास्तेन विभङ्गज्ञानिन आभिनिकबोधिकज्ञानिश्रुतज्ञानिभ्योऽसंख्येयगुणाः, केवलज्ञानिनस्तु विभङ्गज्ञानिभ्योऽनन्तगुणाः, सिद्धानामेकेन्द्रियवर्जसर्वजीवेभ्योऽनन्तगुणत्वात्, मत्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनश्चान्योऽन्यं तुल्याः, केवलज्ञानिभ्यस्त्वनन्तगुणाः, वनस्पतिष्वपि तेषां भावात्, तेषां च सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वादिति ॥ अथ पर्यायद्वारे—'केवइया'इत्यादि, आभिनिबोधिकज्ञानस्य पर्यवाः-विशेषधर्म्मा आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवाः, ते च द्विविधाः स्वपरपर्यायभेदात्, तत्र येऽवग्रहादयो मतिविशेषाः क्षयोपशमवैचित्र्यात् ते स्वपर्यायास्ते चानन्ताः कथम् ?, एकस्मादवग्रहादेरन्योऽवग्रहादिरनन्तभागवृद्धया विशुद्धः १ अन्यस्त्वसंख्येयभागवृद्धया २

सम्यक्त्वाद् भ्रष्टस्य वनस्पत्यादिष्वनन्ता उत्सर्पिण्यवसर्पिणीरतिवाह्य पुनः प्राप्तसम्यग्दर्शनस्येति। 'विभंगनाणी णं भंते ! पुच्छा, गोयमा! जहन्नेणं एक्कं समयं' उत्पत्तिसमयानन्तरमेव प्रतिपाते 'उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं देसूणपुव्वकोडिअब्भहियाइं' देशोनां पूर्वकोटिं विभङ्गितया मनुष्येषु जीवित्वाऽप्रतिष्ठानादावुत्पन्नस्येति ॥ अन्तरद्वारे-'अंतरं सव्वं जहा जीवाभिगमे'त्ति पञ्चानां ज्ञानानां त्रयाणां चाज्ञानानामन्तरं सर्वं यथा जीवाभिगमे तथा वाच्यं, तच्चैवम्-आभिणिबोहियणाणस्स णं भंते ! अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं, सुयनाणीओहिनाणीमणपज्जवनाणीणं एवं चेव, केवलनाणिस्स पुच्छा, गोयमा! नत्थि अंतरं, मइअन्नाणिस्स सुयअन्नाणिस्स य पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं साइरेगाइं । विभंगनाणिस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं वणस्सइकालो'त्ति ॥ अल्पबहुत्वद्वारे— 'अप्पाबहुगाणि तिन्नि जहा बहुवत्तव्वयाए'त्ति अल्पबहुत्वानि त्रीणि ज्ञानिनां परस्परेणाज्ञानिनां च ज्ञान्यज्ञानिनां च यथाऽल्पबहुत्ववक्तव्यतायां प्रज्ञापनासम्बन्धिन्यामभिहितानि तथा वाच्यानीति, तानि चैवम्—'एएसि णं भंते ! जीवाणं आभिणिबोहियनाणीणं ५ कयरे २ हिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा मणपज्जवनाणी, ओहिनाणी असंखेज्जगुणा, आभिणिबोहियनाणी सुयणाणी दोवि तुल्ला विसेसाहिया, केवलनाणी अणंतगुणा' इत्येकम् १। 'एएसि णं भंते ! जीवाणं मइअन्नाणीणं ३ कयरे २ हिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा विभंगणाणी, मइअन्नाणी सुयअन्नाणी दोवि तुल्ला अनंतगुणा' इति द्वितीयम् २ । 'एएसि णं भंते ! जीवाणं आभिणिबोहिनाणीणं ५ मइअन्नाणीणं ३ कयरे २ हिंतो जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा मणपज्जवणाणी, ओहिनाणी असंखेज्जगुणा, आभिणिबोहियनाणी

'आभिणिबोहिये'त्यादि सूचामात्रम्, 'एवं चैतद् द्रष्टव्यम्—'आभिणिबोहियणाणी णं भंते ! आभिणिबोहियनाणित्ति कालतो केवच्चिरं होइ ?'त्ति 'एवं नाणी आभिणिबोहियनाणी'त्यादि, अयमर्थः—'एव'मित्यनन्तरोक्तेन 'आभिणिबोहिए'त्यादिना सूत्रक्रमेण ज्ञान्याभिनिबोधिकज्ञानिश्रुतज्ञान्यवधिज्ञानिमनःपर्यवज्ञानिकेवलज्ञान्यज्ञानिमत्यज्ञानिश्रुताज्ञानिविभङ्गज्ञानिनां 'संचिट्ठणे'ति अवस्थितिकालो यथा कायस्थितौ प्रज्ञापनाया अष्टादशे पदेऽभिहितस्तथा वाच्यः, तत्र ज्ञानिनां पूर्वमुक्त एवावस्थितिकालः, यच्च पूर्वमुक्तस्याप्यतिदेशतः पुनर्भणनं तदेकप्रकरणपतितत्वादित्यवसेयम्, आभिनिबोधिकज्ञानादिद्वयस्य तु जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तमुत्कृष्टतस्तु सातिरेकाणि षट्षष्टिः सागरोपमाणि, अवधिज्ञानिनामप्येवं, नवरं जघन्यतो विशेषः, स चायम्—'ओहिनाणी जहन्नेणं एक्कं समयं' कथं ?, यदा विभङ्गज्ञानी सम्यक्त्वं प्रतिपद्यते तत्प्रथमसमय एव विभङ्गमवधिज्ञानं भवति, तदनन्तरमेव च तत् प्रतिपतति तदा एकं समयमवधिर्भवतीत्युच्यते । 'मणपज्जवनाणी णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी,' कथं ?, संयतस्याप्रमत्ताद्धायां वर्त्तमानस्य मनःपर्यवज्ञानमुत्पन्नं तत उत्पत्तिसमयसमनन्तरमेव विनष्टं चेन्न्येवमेकं समयं, तथा चरणकाल उत्कृष्टो देशोना पूर्वकोटी, तत्प्रतिपत्तिसमनन्तरमेव च यदा मनःपर्यवज्ञानमुत्पन्नमाजन्म चानुवृत्तं तदा भवति मनःपर्यवस्योत्कर्षतो देशोना पूर्वकोटीति । केवलनाणी णं पुच्छा, गोयमा ! साइए अपज्जवसिए, अन्नाणी मइअन्नाणी सुयअन्नाणी णं पुच्छा, गोयमा ! अन्नाणी मइअन्नाणी सुयअन्नाणी य तिविहे पन्नत्ते, तंजहा—अणाइए वा अपज्जवसिए अभव्यानां १ अणाइए वा सपज्जवसिए भव्यानां २ साइए वा सपज्जवसिए प्रतिपतितसम्यग्दर्शनानां ३, 'तत्थ णं जे से साइए सपज्जवसिए से जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं' सम्यक्त्वप्रतिपतितस्यान्तर्मुहूर्त्तोपरि सम्यक्त्वप्रतिपत्तौ, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंता उस्सप्पिणीओसप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं'

'खेत्तओ णं केवलनाणी सव्वं खेत्तं जाणइ पासइ' इह च धर्मास्तिकायादिसर्वद्रव्यग्रहणेनाकाशद्रव्यस्य ग्रहणेऽपि यत्पुनरुपादानं तत्तस्य क्षेत्रत्वेन रूढत्वादिति, 'कालओ णं केवलणाणी सव्वं कालं जाणइ पासइ, भावओ णं केवली सव्वे भावे जाणइ पासइ'॥ 'मइअन्नाणपरिगयाइ'ति मत्यज्ञानेन–मिथ्यादर्शनसंवलितेनावग्रहादिनौत्पत्तिक्यादिना च परिगतानि–विषयीकृतानि यानि तानि तथा, ज्ञानात्यपायादिना पश्यत्यवग्रहादिना, यावत्करणादिदं दृश्यं–'खेत्तओ णं मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगयं खेत्तं जाणइ पासइ, कालओ णं मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगयं कालं जाणइ पासइ'त्ति। 'सुयअन्नाणे'त्यादि, 'सुयअन्नाणपरिगयाइं'ति श्रुताज्ञानेन–मिथ्यादृष्टिपरिगृहीतेन सम्यक्श्रुतेन लौकिकश्रुतेन कुप्रावचनिकश्रुतेन वा यानि परिगतानि–विषयीकृतानि तानि तथा 'आघवेइ'त्ति आग्राहयति अर्थापयति वा आख्यापयति वा प्रत्याययतीत्यर्थः 'पन्नापयति' भेदतः कथयति 'प्ररूपयति' उपपत्तितः कथयतीति, वाचनान्तरे पुनरिदमधिकमवलोक्यते–'दंसेति निदंसेति उवदंसेति'त्ति, तत्र च दर्शयति उपमामात्रतः, तच्च यथा गौस्तथा गवय इत्यादि, निदर्शयति हेतुदृष्टान्तोपन्यासेन, उपदर्शयति उपनयनिगमनाभ्यां, मतान्तरदर्शनेन वेति। 'दव्वओ णं विभंगनाणी'त्यादौ 'जाणइ'त्ति विभङ्गज्ञानेन 'पासइ'त्ति अवधिदर्शनेनेति॥ अथ कालद्वारे–'साइए'इत्यादि, इहाद्यः केवली द्वितीयस्तु मत्यादिमान्, तत्राद्यस्य साद्यपर्यवसितेति शब्दत एव कालः प्रतीयत इति द्वितीयस्यैव तं जघन्येतरभेदमुपदर्शयितुमिदमाह–'तत्थ णं जे से साइए'इत्यादि, तत्र च 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति आद्यं ज्ञानद्वयमाश्रित्योक्तं, तस्यैव जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तमात्रत्वात्, तथा 'उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं साइरेगाइं'ति यदुक्तं तदाद्यं ज्ञानत्रयमाश्रित्य, तस्य हि उत्कर्षेणैतावत्येव स्थितिः, सा चैवं भवति–"दो वारे विजयाइसु गयस्स तिन्नच्चुए अहव ताइं। अइरेगं नरभवियं णाणाजीवाण सव्वद्धं ॥ १ ॥"

मई अहे जाव इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिमहेट्ठिल्ले खुड्डागपयरे उड्ढं जाव जोइसस्स उवरिमतले तिरियं जाव अंतोमणुस्सखेत्ते अड्ढाइज्जेसु दीवसमुद्देसु पन्नरससु कम्मभूमीसु [तीसाए अकम्मभूमीसु] छप्पन्नाए अंतरदीवगेसु सन्नीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तगाणं मणोगए भावे जाणइ पासइ' तत्र क्षेत्रत ऋजुमतिरधः—अधस्ताद् यावदमुष्या रत्नप्रभायाः पृथिव्या उपरिमाधस्त्यान् क्षुल्लकप्रतरान् तावत्, किं ?—मनोगतान् भावान् जानाति पश्यतीति योगः, तत्र रुचकाभिधानात्तिर्यग्लोकमध्यादधो यावन्नव योजनशतानि तावदमुष्या रत्नप्रभाया उपरिमाः क्षुल्लकप्रतराः, क्षुल्लकत्वं च तेषामधोलोकप्रतरापेक्षया, तेभ्योऽपि येऽधस्तादधोलोकग्रामान् यावत्तेऽधस्तना क्षुल्लकप्रतराः ऊर्ध्वं यावज्ज्योतिपश्च—ज्योतिश्चक्रस्योपरितलं, 'तिरियं जाव अंतोमणुस्सखेत्ते'ति तिर्यङ् यावदन्तर्मनुष्यक्षेत्रं, मनुष्यक्षेत्रस्यान्तं यावदित्यर्थः, तदेव विभागत आह—'अड्ढाइज्जेसु'इत्यादि, तथा 'तं चेव विउलमई अड्ढाइज्जेहिं अंगुलेहिं अब्भहियतरागं विउलतरागं वितिमिरतरागं विसुद्धतरागं जाणइ पासइ'त्ति तत्र 'तं चेव'त्ति क्षेत्राधिकारस्य प्राधान्यात्तदेव मनोलब्धिसमन्वितजीवाधारं क्षेत्रमभिगृह्यते, तत्राभ्यधिकतरकमायामविष्कम्भावाश्रित्य विपुलतरकं बाहल्यमाश्रित्य 'विशुद्धतरकं' निर्मलतरकं वितिमिरतरकं तु तिमिरकल्पतदावरणस्य विशिष्टतरक्षयोपशमसद्भावादिति, तथा—'कालओ णं उज्जुमई जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणवि पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं जाणइ पासइ अईयं अणागयं च, तं चेव विपुलमई विसुद्धतरागं वितिमिरतरागं जाणइ पासइ' कियन्नन्दीसूत्रमिहाध्येयम् ? इत्याह—'जाव भावओ'त्ति भावसूत्रं यावदित्यर्थः, तच्चैवं—'भावओ णं उज्जुमई अणंते भावे जाणइ पासइ, सव्वभावाणं अणंतभागं जाणइ पासइ, तं चेव विउलमई विसुद्धतरागं जाणइ पासइ'त्ति। 'केवलणाणस्से'त्यादि 'एवं जाव भावओ'त्ति 'एवम्' उक्तन्यायेन यावद्भावत इत्यादि तावत्केवलविषयाभिधायि नन्दीसूत्रमिहाध्येयमित्यर्थः, तच्चैवं—

न तु प्रतिद्रव्यमिति, उत्कृष्टतोऽप्यनन्तान् भावान् जानाति पश्यति च, तेऽपि चोत्कृष्टपदिनः सर्वपर्यायाणामनन्तभाग इति, 'उज्जुमइ'त्ति मननं मतिः संवेदनमित्यर्थः ऋज्वी-सामान्यग्राहिणी मतिः ऋजुमतिः-घटोऽनेन चिन्तित इत्यध्यवसायनिबन्धना मनोद्रव्यपरिच्छित्तिरित्यर्थः, अथवा ऋज्वी मतिर्यस्यासावृजुमतिस्तद्वानेव गृह्यते, 'अणंते'त्ति 'अनन्तान्' अपरिमितान् 'अणंतपएसिए'त्ति अनन्तपरमाण्वात्मकान् 'जहा नंदीए'त्ति तत्र चेदं सूत्रमेवं-'खंधे जाणइ पासइ'त्ति तत्र 'स्कन्धान्' विशिष्टैकपरिणामपरिणतान् सञ्ज्ञिभिः पर्याप्तकैः प्राणिभिरर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्त्तिभिर्मनस्त्वेन परिणामितानित्यर्थः, 'जाणइ'त्ति मनःपर्यायज्ञानावरणक्षयोपशमस्य पटुत्वात्साक्षात्कारेण विशेषभूयिष्ठपरिच्छेदात् जानातीत्युच्यते, तदालोचितं पुनरर्थं घटादिलक्षणं मनःपर्यायज्ञानं स्वरूपाध्यक्षतो न जानाति, किन्तु तत्परिणामान्यथाऽनुपपत्त्याअतः पश्यतीत्युच्यते, उक्तञ्च भाष्यकारेण-"जाणइ वज्झेऽणुमाणाओ"त्ति, इत्थं चैतदङ्गीकर्त्तव्यं, यतो मूर्त्तद्रव्यालम्बनमेवेदं, मन्तारश्चामूर्त्तमपि धर्मास्तिकायादिकं मन्येरन्, न च तदनेन साक्षात्कर्तुं शक्यते, तथा चतुर्विधं च चक्षुर्दर्शनादि दर्शनमुक्तमतो भिन्नालम्बनमेवेदमवसेयं,तत्र च दर्शनसम्भवात्पश्यतीत्यपि न दुष्टम्, एकप्रमात्रपेक्षया तदनन्तरभावित्वाच्चोपन्यस्तमित्यलमतिविस्तरेण, 'ते चेव उ विलउमई अब्भहियतराए बहुतराए वितिमिरतराए विसुद्धतराए जाणइ पासइ' तानेव स्कन्धान् विपुला-विशेषग्राहिणी मतिर्विपुलमतिः-घटोऽनेन चिन्तितः स च सौवर्णः पाटलिपुत्रकोऽद्यतनो महानित्याद्यध्यवसायहेतुभूता मनोद्रव्यविज्ञप्तिः, अथवा विपुला मतिर्यस्यासौ विपुलमतिस्तद्वानेव, 'अभ्यधिकतरकान्' ऋजुमतिदृष्टस्कन्धापेक्षया बहुतरान् द्रव्यार्थतया वर्णादिभिश्च वितिमिरतरा इव-अतिशयेन विगतान्धकारा इव ये ते वितिमिरतरास्त एव वितिमिरतरका अतस्तान्, अत एव 'विशुद्धतरकान्' विस्पष्टतरकान् जानाति पश्यति च, तथा 'खेत्तओ णं उज्जु-

तत् "सुए चरित्ते न पज्जवा सव्वे"त्ति अनेन च सह कथं न विरुध्यते?, उच्यते, इह सूत्रे सर्वग्रहणेन पञ्चौदयिकादयो भावा गृह्यन्ते, तांश्च सर्वान् जातितो जानाति, अथवा यद्यप्यभिलाप्यानां भावानामनन्तभाग एव श्रुतनिबद्धस्तथापि प्रसङ्गानुप्रसङ्गतः सर्वेऽप्यभिलाप्याः श्रुतविषया उच्यन्ते, अतस्तदपेक्षया सर्वभावान् जानातीत्युक्तम्, अनभिलाप्यभावापेक्षया तु "सुए चरित्ते न पज्जवा सव्वे" इत्युक्तमिति न विरोधः। 'दव्वओ ण'मित्यादि, अवधिज्ञानी रूपिद्रव्याणि पुद्गलद्रव्याणीत्यर्थः, तानि च जघन्येनानन्तानि तैजसभाषाद्रव्याणामपान्तरालवर्त्तीनि, यत उक्तं-"तेयाभासादव्वाण अंतरा एत्थ लभति पट्ठवओ"त्ति उत्कृष्टतस्तु सर्वबादरसूक्ष्मभेदभिन्नानि जानाति विशेषाकारेण, ज्ञानत्वात्तस्य, पश्यति सामान्याकारेणावधिज्ञानिनोऽवधिदर्शनस्यावश्यम्भावात्, नन्वादौ दर्शनं ततो ज्ञानमिति क्रमस्तत्किमर्थमेनं परित्यज्य प्रथमं जानातीत्युक्तम्?, अत्रोच्यते, इहावधिज्ञानाधिकारात् प्राधान्यख्यापनार्थमादौ जानातीत्युक्तम्, अवधिदर्शनस्य त्ववधिविभङ्गसाधारणत्वेनाप्रधानत्वात् पश्चात्पश्यतीति, अथवा सर्वा एव लब्धयः साकारोपयोगोपयुक्तस्योत्पद्यन्ते लब्धिश्चावधिज्ञानमिति साकारोपयोगोपयुक्तस्यावधिज्ञानलब्धिर्जायते इत्येतस्यार्थस्य ज्ञापनार्थं साकारोपयोगाभिधायकं जानातीति प्रथममुक्तं, ततः क्रमेणोपयोगप्रवृत्तेः पश्यतीति, 'जहा नंदीए'त्ति एवं च तत्रेदं सूत्रं-'खेत्तओ णं ओहिणाणी जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं जाणइ पासइ' इत्यादि, व्याख्या पुनरेवं-क्षेत्रतोऽवधिज्ञानी जघन्येनाङ्गुलस्यासङ्ख्येयभागमुत्कृष्टतोऽसंख्येयान्यलोके शक्तिमपेक्ष्य लोकप्रमाणानि खण्डानि जानाति पश्यति, कालतोऽवधिज्ञानी जघन्येनावलिकाया असंख्येयं भागमुत्कृष्टतोऽसंख्येया उत्सर्प्पिण्यवसर्प्पिणीरतीता अनागताश्च जानाति पश्यति, तद्गतरूपिद्रव्यावगमात्, अथ कियद्दूरं यावदिह नन्दीसूत्रं वाच्यम्? इत्याह-'जाव भावओ'त्ति भावाधिकारं यावदित्यर्थः, स चैवं-भावतोऽवधिज्ञानी जघन्येनानन्तान् भावानाधारद्रव्यानन्तत्वाज्जानाति पश्यति,

चक्षुरादिदर्शनमिति प्राप्तमिति कथं न विरोधः ? सत्यमेतत्, किन्त्वविवक्षयित्वा मतिज्ञानचक्षुरादिदर्शनयोर्भेदं मतिज्ञानमष्टाविंशतिधोच्यते इति पूज्या व्याचक्षत इति, 'खेत्तओ'त्ति क्षेत्रमाश्रित्याभिनिबोधिकज्ञानविषयक्षेत्रं वाऽऽश्रित्य यदाभिनिबोधिकज्ञानं तत्र 'आदेसेणं'ति ओघतः श्रुतपरिकर्मिततया वा 'सव्वं खेत्तं'ति लोकालोकरूपम्, एवं कालतो भावतश्चेति, आह च भाष्यकारः—"आएसोत्ति पगारो ओघादेसेण सव्वदव्वाइं। धम्मत्थिकाइयाइं जाणइ न उ सव्वभावेणं ॥१॥ खेत्तं लोगालोगं कालं सव्वद्धमहव तिविहंपि। पंचोदइयाईए भावे जन्नेयमेवइयं ॥२॥ आएसोत्ति व सुत्तं सुओवलद्धेसु तस्स मइनाणं। पसरइ तब्भावणया विणावि सुत्ताणुसारेणं ॥ ३ ॥" इति, इदं च सूत्रं नन्द्यामिहैव वाचनान्तरे'न पासइ'त्ति पाठान्तरेणाधीतम्, एवं च नन्दिटीकाकृता व्याख्यातम्—"आदेशः—प्रकारः,स च सामान्यतो विशेषतश्च, तत्र द्रव्यजातिसामान्यादेशेन सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि जानाति, विशेषतोऽपि यथा धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकायस्य देश इत्यादि, न पश्यति सर्वान् धर्मास्तिकायादीन्, शब्दादींस्तु योग्यदेशावस्थितान् पश्यत्यपीति," 'उवउत्ते'त्ति भावश्रुतोपयुक्तो, नानुपयुक्तः, स हि नाभिधानादभिधेयप्रतिपत्तिसमर्थो भवतीति विशेषणमुपात्तं, 'सर्वद्रव्याणि' धर्मास्तिकायादीनि 'जानाति' विशेषतोऽवगच्छति, श्रुतज्ञानस्य तत्स्वरूपत्वात्, पश्यति च श्रुतानुवर्तिना मानसेन अचक्षुर्दर्शनेन, सर्वद्रव्याणि चाभिलाप्यान्येव जानाति, पश्यति चाभिन्नदशपूर्वधरादिः श्रुतकेवली, तदारतस्तु भजना, सा पुनर्मतिविशेषतो ज्ञातव्येति, वृद्धैः पुनः पश्यतीत्यत्रेदमुक्तं—ननु पश्यतीति कथं ?, कथं च न ?, सकलगोचरदर्शनायोगात् अत्रोच्यते, प्रज्ञापनायां श्रुतज्ञानपश्यत्तायाः प्रतिपादितत्वादनुत्तरविमानादीनां चालेख्यकरणात् सर्वथा चाहष्टस्यालेख्यकरणानुपपत्तेः, एवं क्षेत्रादिष्वपि भावनीयमिति, अन्ये तु 'न पासइ'त्ति पठन्तीति, ननु 'भावओ णं सुयनाणी उवउत्ते सव्वभावे जाणइ' इति यदुक्तमिह

अन्नाणपज्जवा अणंतगुणा सुयनाणपज्जवा विसेसाहिया मइअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा आभिणिबोहियनाणपज्जवा विसेसाहिया केवलणाणपज्जवा अणंतगुणा। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति॥ (सूत्रं ३२२)॥ अट्ठमस्स सयस्स बितिओ उद्देसो॥ ८-२॥

'केवइए'त्ति किंपरिमाणः 'विसए'त्ति गोचरो ग्राह्योऽर्थ इतियावत्, तं च भेदपरिमाणतस्तावदाह—'से'इत्यादि, 'सः' आभिनिबोधिकज्ञानविषयस्तद्वाऽऽभिनिबोधिकज्ञानं 'समासतः'सङ्क्षेपेण प्रभेदानां भेदेष्वन्तर्भावेनेत्यर्थः चतुर्विधश्चतुर्विधं वा, द्रव्यतो-द्रव्याणि धर्मास्तिकायादीन्याश्रित्य क्षेत्रतो—द्रव्याधारं आकाशमात्रं वा क्षेत्रमाश्रित्य कालतः—अद्धां द्रव्यपर्यायावस्थितिं वा समाश्रित्य भावतः—औदयिकादिभावान् द्रव्याणां वा पर्यायान् समाश्रित्य, 'दव्वओ णं'ति द्रव्यमाश्रित्याभिनिबोधिकज्ञानविषयद्रव्यं वाऽऽश्रित्य यदाभिनिबोधिकज्ञानं तत्र 'आएसेणं'ति आदेशः—प्रकारः सामान्यविशेषरूपस्तत्र चादेशेन—ओघतो द्रव्यमात्रतया न तु तद्गतसर्वविशेषापेक्षयेति भावः, अथवा 'आदेशेन' श्रुतपरिकर्मिततया 'सर्वद्रव्याणि' धर्मास्तिकायादीनि 'जानाति' अवायधारणापेक्षयाऽवबुध्यते, ज्ञानस्यावायधारणारूपत्वात्, 'पासइ'त्ति पश्यति अवग्रहेहापेक्षयाऽवबुध्यते, अवग्रहेहयोर्दर्शनत्वात्, आह च भाष्यकारः "नाणमवायधिईओ दंसणमिट्ठं जहोग्गहेहाओ। तह तत्तरुई सम्मं रोइज्जइ जेण तं णाणं॥ १॥" तथा—"जं सामन्नग्गहणं दंसणमेयं विसेसियं नाणं" अवग्रहेहे च सामान्यार्थग्रहणरूपे अवायधारणे च विशेषग्रहणस्वभावे इति, नन्वष्टाविंशतिभेदमानमाभिनिबोधिकज्ञानमुच्यते, यदाह—"आभिणिबोहियनाणे अट्ठावीसं हवंति पयडीओ"त्ति इह च व्याख्याने श्रोत्रादिभेदेन षड्भेदतयाऽवायधारणयोर्द्वादशविधं मतिज्ञानं प्राप्तं, तथा श्रोत्रादिभेदेनैव षड्भेदतयाऽर्थावग्रहईहयोर्व्यञ्जनावग्रहस्य च चतुर्विधतया षोडशविधं

वा अपज्जवसिए साइए वा सपज्जवसिए, तत्थ णं जे से साइए सपज्जवसिए से जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं सातिरेगाइं। आभिणिबोहियणाणी णं भंते! आभिणिबोहिय० एवं नाणी आभिणिबोहियनाणी जाव केवलनाणी। अन्नाणी मइअन्नाणी सुयअन्नाणी विभंगनाणी, एएसिं दसण्हवि संचिट्ठणा जहा कायट्ठिईए॥ अंतरं सव्वं जहा जीवाभिगमे॥ अप्पाबहुगाणि तिन्नि जहा बहुवत्तव्वयाए॥ केवतिया णं भंते! आभिणिबोहियणाणपज्जवा पण्णत्ता?, गोयमा! अणंता आभिणिबोहियणाणपज्जवा पण्णत्ता, केवतिया णं भंते! सुयनाणपज्जवा पण्णत्ता?, एवं चेव, एवं जाव केवलनाणस्स। एवं मइअन्नाणस्स सुयअन्नाणस्स, केवतिया णं भंते! विभंगनाणपज्जवा पण्णत्ता?, गोयमा! अणंता विभंगनाणपज्जवा पण्णत्ता। एएसि णं भंते! आभिणिबोहियनाणपज्जवाणं सुयनाण० ओहिनाण० मणपज्जवनाण० केवलनाणपज्जवाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा मणपज्जवनाणपज्जवा ओहिनाणपज्जवा अणंतगुणा सुयनाणपज्जवा अणंतगुणा आभिणिबोहियनाणपज्जवा अणंतगुणा केवलनाणपज्जवा अणंतगुणा। एएसि णं भंते! मइअन्नाणपज्जवाणं सुयअन्नाण०विभंगनाणपज्जवाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वथोवा विभंगनाणपज्जवा सुयअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा मइअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा॥ एएसि णं भंते! आभिणिबोहियणाणपज्जवाणं जाव केवलनाणप० मइअन्नाणप० सुयअन्नाणप० विभंगनाणप० कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा मणपज्जवनाणपज्जवा विभंगनाणपज्जवा अणंतगुणा ओहिणाणपज्जवा अणंतगुणा सुय-

सव्वभावे जाणाति पासति। ओहिनाणस्स णं भंते! केवतिए विसए पन्नत्ते?, गोयमा! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा—दव्वओ४, दव्वओ णं ओहिनाणी रूविदव्वाइं जाणइ पासइ जहा नंदीए जाव भावओ। मणपज्जवनाणस्स णं भंते! केवतिए विसए पण्णत्ते?, गोयमा! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा—दव्व-४, दव्वओ णं उज्जुमती अणंते अणंतपदेसिए जहा नंदीए जाव भावओ। केवलनाणस्स णं भंते! केवतिए विसए पण्णत्ते?, गोयमा! से समासओ चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं केवलनाणी सव्वदव्वाइं जाणइ पासइ, एवं जाव भावओ॥ मइअन्नाणस्स णं भंते! केवतिए विसए पन्नत्ते?, गोयमा! से समासओ चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगयाइं दव्वाइं जाणइ, जाव भावओ मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगए भावे जाणइ पासइ। सुयअन्नाणस्स णं भंते! केवतिए विसए पण्णत्ते?, गोयमा! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा—दव्वओ ४, दव्वओ णं सुयअन्नाणी सुयअन्नाणपरिगयाइं दव्वाइं आघवेति पन्नवेति परूवेइ, एवं खेत्तओ कालओ, भावओ णं सुयअन्नाणी सुयअन्नाणपरिगए भावे आघवेति तं चेव। विभंगणाणस्स णं भंते! केवतिए विसए पण्णत्ते?, गोयमा! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा—दव्वओ ४, दव्वओ णं विभंगनाणी विभंगनाणपरिगयाइं दव्वाइं जाणइ पासइ. एवं जाव भावओ णं विभंगनाणी विभंगनाणपरिगए भावे जाणइ पासइ॥ (सूत्रं ३२१)॥ णाणी णं भंते! णाणीति कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! नाणी दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—साइए

र्ज्ञानिनस्त्र्यज्ञानिनश्चेति भजनयेत्यर्थः, 'सुक्कलेसा जहा सलेस'त्ति पञ्चज्ञानिनो भजनया त्र्यज्ञानिनश्चेत्यर्थः । 'अलेस्सा जहा सिद्ध'त्ति एकज्ञानिन इत्यर्थः ॥ कषायद्वारे–'सकसाई जहा सइंदिय'त्ति भजनया केवलवर्जचतुर्ज्ञानिनस्त्र्यज्ञानिनश्चे त्यर्थः, 'अकसाई णं'मित्यादि, अकषायिणां पञ्च ज्ञानानि भजनया, कथम् ?, उच्यते, छद्मस्थवीतरागः केवली चाकषायः, तत्र च छद्मस्थवीतरागस्याद्यं ज्ञानचतुष्कं भजनया भवति, केवलिनस्तु पञ्चममिति ॥ वेदद्वारे–'जहा सइंदिय'त्ति सवेदकाः सेन्द्रियवद्भजनया केवलवर्जचतुर्ज्ञानिनस्त्र्यज्ञानिनश्च वाच्याः, 'अवेदगा जहा अकसाइ'त्ति अवेदका अकषायिवद्भजनया पञ्चज्ञाना वाच्याः, यतोऽनिवृत्तिबादरादयोऽवेदका भवन्ति, तेषु च छद्मस्थानां चत्वारि ज्ञानानि भजनया केवलिनां तु पञ्चममिति ॥ आहारकद्वारे–'आहारगे'त्यादि, सकषाया भजनया चतुर्ज्ञानास्त्र्यज्ञानाश्चोक्ताः आहारका अप्येवमेव, नवरमाहारकाणां केवलमप्यस्ति, केवलिन आहारकत्वादपीति, 'अणाहारगा णं'मित्यादि, मनःपर्यवज्ञानमाहारकाणामेव, आद्यं पुनर्ज्ञानत्रयमज्ञानत्रयं च विग्रहे भवति, केवलं च केवलिसमुद्घातशैलेशीसिद्धावस्थास्वनाहारकाणामपि स्यादत उक्तं 'मणपज्जवे'त्यादि ॥ अथ ज्ञानगोचरद्वारे—

आभिणिबोहियनाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पन्नत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं आभिणिबोहियनाणी आएसेणं सव्वदव्वाइं जाणइ पासइ, खेत्तओ आभिणिबोहियणाणी आएसेणं सव्वखेत्तं जाणइ पासइ, एवं कालओवि, एवं भावओवि । सुयनाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पण्णत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वओ ४, दव्वओ णं सुयनाणी उवउत्ते सव्वदव्वाइं जाणति पासति, एवं खेत्तओवि कालओवि, भावओ णं सुयनाणी उवउत्ते

'सागारोवउत्ते'त्यादि, आकारो-विशेषस्तेन सह यो बोधः स साकारः, विशेषग्राहको बोध इत्यर्थः, तस्मिन्नुपयुक्ताः,तत्संवेदनका ये ते साकारोपयुक्ताः,ते च ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च, तत्र ज्ञानिनां पञ्च ज्ञानानि भजनया-स्याद् द्वे स्यात् त्रीणि स्याच्चत्वारि स्यादेकं, यच्च स्यादेकं यच्च स्याद् द्वे इत्याद्युच्यते तल्लब्धिमात्रमङ्गीकृत्य, उपयोगापेक्षया त्वेकदा एकमेव ज्ञानमज्ञानं वेति, अज्ञानिनां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनयैवेति ॥ अथ साकारोपयोगभेदापेक्षमाह--'आभिणी'त्यादि, 'ओहिनाणसागारे'त्यादि, अवधिज्ञानसाकारोपयुक्ता यथाऽवधिज्ञानलब्धिकाः प्रागुक्ताः स्यात् त्रिज्ञानिनो मतिश्रुतावधियोगात् स्याच्चतुर्ज्ञानिनो मतिश्रुतावधिमनःपर्यवयोगात्तथा वाच्याः । 'मणपज्जवे'त्यादि, मनःपर्यवज्ञानसाकारोपयुक्ता यथा मनःपर्यवज्ञानलब्धिकाः प्रागुक्ताः स्यात्त्रिज्ञानिनो मतिश्रुतमनःपर्यवयोगात् स्याच्चतुर्ज्ञानिनः केवलवर्जज्ञानयोगात्तथा वाच्या इति॥ 'अणागारोवउत्ता ण'मित्यादि,अविद्यमान आकारो यत्र तदनाकारं-दर्शनं तत्रोपयुक्ताः-तत्संवेदनका ये ते तथा, ते च ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च, तत्र ज्ञानिनां लब्ध्यपेक्षया पञ्च ज्ञानानि भजनया, अज्ञानिनां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनयैव । 'एव'मित्यादि, यथाऽनाकारोपयुक्ता ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्चोक्ताः एवं चक्षुर्दर्शनाद्युपयुक्ता अपि, 'नवरं'ति विशेषः पुनरयं-चक्षुर्दर्शनेतरोपयुक्ताः केवलिनो न भवन्तीति तेषां चत्वारि ज्ञानानि भजनयेति ॥ योगद्वारे--'सजोगी ण'मित्यादि, 'जहा सकाइय'त्ति प्रागुक्ते कायद्वारे यथा सकायिका भजनया पञ्चज्ञानास्त्र्यज्ञानाश्चोक्तास्तथा सयोगा अपि वाच्याः, एवं मनोयोग्यादयोऽपि, केवलिनोऽपि मनोयोगादीनां भावात्, तथा मिथ्यादृशां मनोयोगादिमतामज्ञानत्रयभावाच्च,'अजोगी जहा सिद्ध'त्ति अयोगिनः केवललक्षणैकज्ञानिन इत्यर्थः ॥ लेश्याद्वारे--'जहा सकाइय'त्ति सलेश्याः सकायिकवद्भजनया पञ्च ज्ञानास्त्र्यज्ञानाश्च वाच्याः, केवलिनोऽपि शुक्ललेश्यासम्भवेन सलेश्यत्वात्, 'कण्हलेसे'त्यादि, 'जहा सइंदिय'त्ति कृष्णलेश्याश्चतु-

गारोवउत्ता जहा ओहिनाणलद्धिया, मणपज्जवनाणसागारोवउत्ता जहा मणपज्जवनाणलद्धिया, केवलनाणसागारोवउत्ता जहा केवलनाणलद्धिया, मइअन्नाणसागरोवउत्ताण तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, एवं सुयअन्नाणसागारोवउत्तावि, विभंगनाणसागारोवउत्ताणं तिन्नि अन्नाणाइं नियमा ॥ अणागारोवउत्ता णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, एवं चक्खुदंसणअचक्खुदंसणअणागारोवउत्तावि, नवरं चत्तारि णाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, ओहिदंसणअणागारोवउत्ताणं पुच्छा, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते अत्थेगतिया तिन्नाणी अत्थेगतिया चउन्नाणी, जे तिन्नाणी ते आभिणिबोहिय० सुयनाणी ओहिनाणी, जे चउणाणी ते आभिणिबोहियणनाणी जाव मणपज्जवनाणी, जे अन्नाणी ते नियमा तिअन्नाणी, तंजहा–मइअन्नाणी सुयअन्नाणी विभंगनाणी, केवलदंसणअणागारोवउत्ता जहा केवलनाणलद्धिया ॥ सयोगी णं भंते ! जीवा किं नाणी जहा सकाइया, एवं मणजोगी वइजोगी कायजोगीवि, अजोगी जहा सिद्धा ॥ सलेस्सा णं भंते ! जहा सकाइया, कण्हलेस्सा णं भंते ! जहा सइंदिया, एवं जाव पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा जहा सलेस्सा, अलेस्सा जहा सिद्धा ॥ सकसाई णं भंते ! जहा सइंदिया, एवं जाव लोहकसाई, अकसाईणं भंते०! पंच नाणाइं भयणाए॥ सवेदगा णं भंते ! जहा सइंदिया, एवं इत्थिवेदगावि, एवं पुरिसवेयगा एवं नपुंसकवे०, अवेदगा जहा अकसाई॥ आहारगा णं भंते ! जीवा जहा सकसाई, नवरं केवलनाणंपि, अणाहारगा णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, मणपज्जवनाणवज्जाइं नाणाइं अन्नाणाणि य तिन्नि भयणाए ॥ ( सूत्रं ३२० ) ॥

वाच्याः, ते च ये ज्ञानिनस्तेऽकेवलित्वादाद्यज्ञानचतुष्टयवन्तो भजनया भवन्ति, अज्ञानिनस्तु भजनया त्र्यज्ञानाः, श्रोत्रेन्द्रियालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्ते आद्यद्विज्ञानिनः, ते चापर्याप्तकाः सासादनसम्यग्दर्शनिनो विकलेन्द्रियाः, एकज्ञानिनो वा केवलज्ञानिनः, ते हि श्रोत्रेन्द्रियालब्धिका इन्द्रियोपयोगाभावात्, ये त्वज्ञानिनस्ते पुनराद्याज्ञानद्वयवन्त इति । 'चक्खिदिए' इत्यादि, अयमर्थः—यथा श्रोत्रेन्द्रियलब्धिमतां चत्वारि ज्ञानानि भजनया त्रीणि चाज्ञानानि भजनयैव तदलब्धिकानां च द्वे ज्ञाने द्वे चाज्ञाने एकं च ज्ञानमुक्तमेवं चक्षुरिन्द्रियलब्धिकानां घ्राणेन्द्रियलब्धिकानां च तदलब्धिकानां च वाच्यं, तत्र चक्षुरिन्द्रियलब्धिका घ्राणेन्द्रियलब्धिकाश्च ये पञ्चेन्द्रियास्तेषां केवलवर्जानि चत्वारि ज्ञानानि त्रीणि चाज्ञानानि भजनयैव, ये तु विकलेन्द्रियाश्चक्षुरिन्द्रियघ्राणेन्द्रियलब्धिकास्तेषां सासादनसम्यग्दर्शनभावे आद्यं ज्ञानद्वयं तदभावे त्वाद्यमेवाज्ञानद्वयं, चक्षुरिन्द्रियघ्राणेन्द्रियालब्धिकास्तु यथायोग्यं त्रिद्व्येकेंद्रियाः केवलिनश्च, तत्र द्वीन्द्रियादीनां सासादनभावे आद्यज्ञानद्वयसम्भवः, तदभावे त्वाद्याज्ञानद्वयसम्भवः, केवलिनां त्वेकं केवलज्ञानमिति, 'जिब्भिदिय' इत्यादौ,'तस्स अलद्धिय'त्ति जिह्वालब्धिवर्जिताः, ते च केवलिन एकेन्द्रियाश्चेत्यत आह—'नाणीवी'त्यादि, ये ज्ञानिनस्ते नियमात्केवलज्ञानिनः, येऽज्ञानिनस्ते नियमाद् द्व्यज्ञानिनः, एकेन्द्रियाणां सासादनभावतोऽपि सम्यग्दर्शनस्याभावाद् विभङ्गाभावाच्चेति । 'फासिंदिय' इत्यादि, स्पर्शनेन्द्रियलब्धिकाः केवलवर्जज्ञानचतुष्कवन्तो भजनया तथैवाज्ञानत्रयवन्तो वा, स्पर्शनेन्द्रियालब्धिकास्तु केवलिन एव, इन्द्रियलब्ध्यलब्धिमन्तोऽप्येवंविधा एवेत्यत उक्तं'जहा इंदिए' इत्यादि ॥ उपयोगद्वारे—

सागारोवउत्ता णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए ॥ आभिणिबोहियनाणसागारोवउत्ता णं भंते!०चत्तारि णाणाइं भयणाए । एवं सुयनाणसागारोवउत्तावि । ओहिनाणसा·

ऽचारित्रस्यालब्धिकाः श्रावकादन्ये, ते च ये ज्ञानिनः तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनयैव ॥ 'दाणलद्धी'त्यादि, दानान्तरायक्षयक्षयोपशमाद्दाने दातव्ये लब्धिर्येषां ते दानलब्धयः, ते च ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च, तत्र ये ज्ञानिनः तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, केवलज्ञानिनामपि दानलब्धियुक्तत्वात्, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनयैव, दानस्यालब्धिकास्तु सिद्धाः,ते च दानान्तरायक्षयेऽपि दातव्याभावात् सम्प्रदानासत्त्वाद्दानप्रयोजनाभावाच्च दानालब्धय उक्ताः,ते च नियमात्केवलज्ञानिन इति, लाभभोगोपभोगवीर्यलब्धीः सेतरा अतिदिशन्नाह—'एव'मित्यादि, इह चालब्धयः सिद्धानामेवोक्तन्यायादवसेयाः, ननु दानाद्यन्तरायक्षयात् केवलिनां दानादयः सर्वप्रकारेण कस्मान्न भवन्ति ? इति, उच्यते, प्रयोजनाभावात्, कृतकृत्या हि ते भगवन्त इति ॥ 'बालवीरियलद्धियाण'मित्यादि, बालवीर्यलब्धयः-असंयताः,तेषां च ज्ञानिनां त्रीणि ज्ञानानि अज्ञानिनां च त्रीण्यज्ञानानि भजनया भवन्ति, तदलब्धिकास्तु संयताः संयतासंयताश्च, ते च ज्ञानिन एव, एतेषां च पञ्च ज्ञानानि भजनया। 'पंडियवीरिये'-त्यादौ, 'तस्स अलद्धियाणं'ति असंयतानां संयतासंयतानां सिद्धानां चेत्यर्थः, तत्रासंयतानामाद्यं ज्ञानत्रयमज्ञानत्रयं च भजनया, संयतासंयतानां तु ज्ञानत्रयं भजनयैव भवति, सिद्धानां तु केवलज्ञानमेव, मनःपर्यायज्ञानं तु पण्डितवीर्यलब्धिमतामेव भवति, नान्येषामत उक्तं 'मणपज्जवे'त्यादि, सिद्धानां च पण्डितवीर्यालब्धिकत्वं पण्डितवीर्यवाच्ये प्रत्युपेक्षणाद्यनुष्ठाने प्रवृत्त्यभावात्, 'बालपंडिए'इत्यादौ, 'तस्स अलद्धियाणं'ति अश्रावकाणामित्यर्थः ॥ 'इंदियलद्धियाण'मित्यादि, इन्द्रियलब्धिका ये ज्ञानिनस्तेषां चत्वारि ज्ञानानि भजनया, केवलं तु नास्ति, तेषां केवलिनामिन्द्रियोपयोगाभावात्, ये त्वज्ञानिनस्तेषामज्ञानत्रयं भजनयैवेति, इन्द्रियालब्धिकाः पुनः केवलिन एवेत्येकमेव तेषां ज्ञानमिति। 'सोइंदिय'इत्यादि, श्रोत्रेन्द्रियलब्धय इन्द्रियलब्धिका इव

क्षीणमोहः, 'न बंधी न बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र सप्तमे भव्यः, 'न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्राष्टमेऽभव्यः, ग्रहणाकर्षापेक्षेषु पुनरेतेष्वेव प्रथमे उपशान्तमोहः क्षीणमोहो वा, द्वितीये तु केवली, तृतीये तूपशान्तमोहः, चतुर्थे शैलेशीगतः, पञ्चमे उपशान्तमोहः क्षीणमोहो वा, षष्ठः शून्यः, सप्तमे भव्यो भाविमोहोपशमो भाविमोहक्षयो वा, अष्टमे त्वभव्य इति॥ अथैर्यापथिकबन्धमेव निरूपयन्नाह—'त'मित्यादि, 'तत्' ऐर्यापथिकं कर्म्म 'साइयं सपज्जवसिय'मित्यादिचतुर्भङ्गी, तत्र चैर्यापथिककर्म्मणः प्रथम एव भङ्गे बन्धोऽन्येषु तदसम्भवादिति, 'त'मित्यादि, 'तत्' ऐर्यापथिकं कर्म्म 'देसेणं देसं'ति 'देशेन' जीवदेशेन 'देशं' कर्म्मदेशं बध्नातीत्यादिचतुर्भङ्गी; तत्र च देशेन कर्म्मणो देशः सर्वं वा कर्म्म सर्वात्मना वा कर्म्मणो देशो न बध्यते, किं तर्हि ?, सर्वात्मना सर्वमेव बध्यते, तथास्वभावत्वाज्जीवस्येति ॥ अथ साम्परायिकबन्धनिरूपणायाह—

संपराइयण्णं भंते ! कम्मं किं नेरइयो बंधइ तिरिक्खजोणिओ बंधइ जाव देवी बंधइ ? गोयमा ! नेरइओवि बंधइ तिरिक्खजोणिओवि बंधइ तिरिक्खजोणिणीवि बंधइ मणुस्सोवि बंधइ मणुस्सीवि बंधइ देवोवि बंधइ देवीवि बंधइ ॥ तं भंते ! किं इत्थी बंधइ पुरिसो बं० तहेव जाव नोइत्थीनोपुरिसोनोनपुंसओ बंधइ ?, गोयमा ! इत्थीवि बं० पुरिसोवि बंधइ जाव नपुंसगोवि बंधइ अहवेए य अवगयवेदो य बंधइ अहवेए य अवगयवेया य बंधंति । जइ भंते ! अवगयवेदो य बंधइ अवगयवेदा य बंधन्ति तं भंते ! किं इत्थीपच्छाकडो बंधइ पुरिसपच्छाकडो बंधइ ? एवं जहेव ईरियावहियाबंधगस्स तहेव निरवसेसं जाव अहवा इत्थीपच्छाकडा य पुरिसपच्छाकडा य [बंधन्ति] नपुंसगपच्छाकडा य बंधंति ॥ तं भंते ! किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २ बंधी

न बंधइ बंधिस्सइ ३ बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४ ?, गोयमा ! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ अत्थेगतिए
बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २ अत्थेगतिए बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३ अत्थेगतिए बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ॥ तं
भंते ! किं साइयं सपज्जवसियं बंधइ०? पुच्छा तहेव, गोयमा ! साइयं वा सपज्जवसियं बंधइ अणाइयं वा सप-
ज्जवसियं बंधइ अणाइयं वा अपज्जवसियं बंधइ, णो चेव णं साइयं अपज्जवसियं बंधइ। तं भंते! किं देसेणं देसं
बंधइ एवं जहेव ईरियावहियाबंधगस्स जाव सव्वेणं सव्वं बंधइ ( सूत्रं ३४१ ) ॥

'संपराइयं ण'मित्यादि, 'किं नेरइओ' इत्यादयः सप्त प्रश्नाः, उत्तराणि च सप्तैव, एतेषु च मनुष्यमनुषीवर्जाः पञ्च सा-
म्परायिकबन्धका एव सकषायत्वात्, मनुष्यमनुष्यौ तु सकषायित्वे सति साम्परायिकं बध्नीतो, न पुनरन्यदेति॥ साम्परायिकबन्धमेव
स्त्र्याद्यपेक्षया निरूपयन्नाह-'तं भंते ! किं इत्थी'त्यादि, इह स्त्र्यादयो विवक्षितैकत्वबहुत्वाः षट् सर्वदा साम्परायिकं बध्नन्ति,
अपगतवेदश्च कदाचिदेव, तस्य कादाचित्कत्वात्, ततश्च स्त्र्यादयः केवला बध्नन्ति अपगतवेदसहिताश्च, ततश्च यदाऽपगतवेदसहिता-
स्तदोच्यते अथवैते स्त्र्यादयो बध्नन्ति अपगतवेदश्च, तस्यैकस्यापि सम्भवात्, अथवैते स्त्र्यादयो बध्नन्ति अपगतवेदाश्च, तेषां बहूना-
मपि सम्भवात्, अपगतवेदश्च साम्परायिकबन्धको वेदत्रये उपशान्ते क्षीणे वा यावद्यथाख्यातं न प्राप्नोति तावल्लभ्यत इति, इह च
पूर्वप्रतिपन्नप्रतिपद्यमानकविवक्षा न कृता, द्वयोरप्येकत्वबहुत्वयोर्भावेन निर्विशेषत्वात्, तथाहि-अपगतवेदत्वे साम्परायिकबन्धोऽल्पका
लीन एव, तत्र च योऽपगतवेदत्वं प्रतिपन्नपूर्वः साम्परायिकं बध्नात्यसावेकोऽनेको वा स्यात्, एवं प्रतिपद्यमानकोऽपीति॥ अथ साम्परा-
यिककर्म्मबन्धमेव कालत्रयेण विकल्पयन्नाह—'तं भंते ! किं'मित्यादि, इह च पूर्वोक्तेष्वष्टासु विकल्पेष्वाद्याश्चत्वार एव संभवन्ति,

नेतरे, जीवानां साम्परायिककर्मबन्धस्यानादित्वेन 'न बन्धी'त्यस्यानुपपद्यमानत्वात्, तत्र प्रथमः सर्व एव संसारी यथाख्यातासंप्राप्तोपशमकक्षपकावसानः, स हि पूर्वं बद्धवान्, वर्त्तमानकाले तु बध्नाति. अनागतकालापेक्षया तु भन्त्स्यति १, द्वितीयस्तु मोहक्षयात्पूर्वमतीतकालापेक्षया बद्धवान् वर्त्तमानकाले तु बध्नाति भाविमोहक्षयापेक्षया तु न भन्त्स्यति २, तृतीयः पुनरुपशान्तमोहत्वात् पूर्वं बद्धवान् उपशान्तमोहत्वे न बध्नाति तस्माच्च्युतः पुनर्भन्त्स्यतीति ३, चतुर्थस्तु मोहक्षयात्पूर्वं साम्परायिकं कर्म बद्धवान् मोहक्षये न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति ॥ साम्परायिककर्मबन्धमेवाश्रित्याह—'त'मित्यादि. 'साइयं वा सपज्जवसियं बंधइ'त्ति उपशान्तमोहतायाश्च्युतः पुनरुपशान्तमोहतां क्षीणमोहतां वा प्रतिपत्स्यमानः, 'अणाइयं वा सपज्जवसियं बंधइ'त्ति आदितः क्षपकापेक्षमिदम्, 'अणाइयं वा अपज्जवसियं बंधइ'त्ति एतच्चाभव्यापेक्षं. 'नो चेव णं साइयं अपज्जवसियं बंधइ'त्ति, सादिसाम्परायिकबन्धो हि मोहोपशमाच्च्युतस्यैव भवति, तस्य चावश्यं मोक्षयायित्वात्साम्परायिकबन्धस्य व्यवच्छेदसम्भवः, ततश्च न सादिरपर्यवसानः साम्परायिकबन्धोऽस्तीति ॥ अनन्तरं कर्म्मवक्तव्यतोक्ता, अथ कर्म्मस्वेव यथायोगं परिषहावतारं निरूपयितुमिच्छुः कर्म्मप्रकृतीः परिषहांश्च तावदाह—

**कइ णं भंते ! कम्मपयडीओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपयडीओ पन्नत्ताओ, तंजहा--णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं ॥ कइ णं भंते ! परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! बावीसं परीसहा पन्नत्ता, तंजहा—दिगिंछापरीसहे पिवासापरीसहे जाव दंसणपरीसहे। एए णं भंते ! बावीसं परिसहा कतिसु कम्मपगडीसु समोयरंति ?, गोयमा ! चउसु कम्मपयडीसु समोयरंति, तंजहा—नाणावरणिज्जे वेयणिज्जे मोहणिज्जे अंतराइए। नाणावर-**

णिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?, गोयमा ! दो परीसहा समोयरंति, तंजहा—पन्नापरीसहे (अन्ना)नाणपरीसहे य, वेयणिज्जे णं भंते! कम्मे कति परीसहा समोयरंति?, गोयमा! एक्कारस परीसहा समोयरंति, तंजहा—पंचेव आणुपुव्वी चरिया सेज्जा वहे य रोगे य। तणफास जल्लमेव य एक्कारस वेदणिज्जंमि ॥ ५८॥ दंसणमोहणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?, गोयमा ! एगे दंसणपरीसहे समोयरइ, चरित्तमोहणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंनि ?, गोयमा ! सत्त परीसहा समोयरंति, तंजहा—अरती अचेल इत्थी निसीहिया जायणा य अक्कोसे। सक्कारपुरक्कारे चरित्तमोहंमि सत्तेते ॥५९॥ अंतराइए णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?, गोयमा ! एगे अलाभपरीसहे समोयरइ ॥ सत्तविहबंधगस्स णं भंते ! कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! बावीसं परीसहा पण्णत्ता, वीसं पुण वेदेइ, जं समयं सीयपरीसहं वेदेति णो तं समयं उसिणपरिसहं वेदेइ, जं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ णो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ, जं समयं चरियापरीसहं वेदेति णो तं समयं निसीहियापरिसहं वेदेति, जं समयं निसीहियापरिसहं वेदेइ णो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ। एवं अट्ठविहबंधगस्सवि। छव्विहबंधगस्स णं भंते ! सरागछउमत्थस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चोद्दस परीसहा पण्णत्ता, बारस पुण वेदेइ, जं समयं सीयपरीसहं वेदेइ णो तं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ, जं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ नो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ, जं समयं चरियापरीसहं वेदेति णो तं समयं सेज्जापरीसहं वेदेइ जं समयं सेज्जापरीसहं वेदेति णो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ। एक्कविहबंधगस्स णं भंते !

वीयरागछउमत्थस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! एवं चेव जहेव छव्विहबंधगस्स णं । एगविहबंधगस्स णं भंते ! सजोगिभवत्थकेवलिस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! एक्कारस परीसहा पण्णत्ता, नव पुण वेदेइ, सेसं जहा छव्विहबंधगस्स । अबंधगस्स णं भंते ! अजोगिभवत्थकेवलिस्स कति परीसहा पण्णत्ता ? गोयमा ! एक्कारस परीसहा पण्णत्ता, नव पुण वेदेइ, जं समयं सीयपरीसहं वेदेति नो तं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ जं समयं उसिणपरीसहं वेदेति नो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ, जं समयं चरियापरीसहं वेदेइ नो तं समयं सेज्जापरीसहं वेदेति जं समयं सेज्जापरीसहं वेदेइ नो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ ( सूत्रं ३४२ ) ॥

'कति णं'मित्यादि, 'परीसह'त्ति परीति—समन्तात् स्वहेतुभिरुदीरिता मार्गाच्यवननिर्जरार्थं साध्वादिभिः सह्यन्त इति परीषहास्ते च द्वाविंशतिरिति 'दिगिंछ'त्ति बुभुक्षा सैव परीसहः—तपोऽर्थमनेषणीयभक्तपरिहारार्थं वा मुमुक्षुणा परिषह्यमाणत्वात् दिगिंछापरीसहेत्ति, एवं पिपासापरीसहोऽपि, यावच्छब्दलब्धं सव्याख्यानमेवं दृश्यं—'सीयपरीसहे उसिणपरीसहे' शीतोष्णे परीषहौ आतापनार्थं शीतोष्णबाधायामप्यग्निसेवास्नानाद्यकृत्यपरिवर्जनार्थं वा मुमुक्षुणा तयोः परिषह्यमाणत्वात्, एवमुत्तरत्रापि, 'दंसमसगपरीसहे' दंशा मशकाश्च—चतुरिन्द्रियविशेषाः, उपलक्षणत्वाच्चैषां यूकामत्कुणमक्षिकादिपरिग्रहः, परीषहता चैतेषां देहव्यथामुत्पादयत्स्वपि तेष्वनिवारणभयद्वेषाभावतः 'अचेलपरीसहे' चेलानां—वाससामभावोऽचेलं तच्च परीषहोऽचेलतायां जीर्णपूर्णमलिनादिचेलत्वे च लज्जादैन्याकाङ्क्षाद्यकरणेन परिषह्यमाणत्वादिति, 'अरइपरीसहे' अरतिः—मोहनीयजो मनोविकारः, सा च परीषहस्तन्निषेधनेन सहनादिति 'इत्थियापरीसहे' स्त्रियः परीषहः २ तत्परीषहणं च तत्तन्निरपेक्षत्वं, ब्रह्मचर्यमित्यर्थः 'चरियापरीसहे' चर्या—ग्राम-

नगरादिषु संचरणं तत्परिषहणं चाप्रतिबद्धतया तत्करणं **'निसीहियापरीसहे'** नैषेधिकी-स्वाध्यायभूमिः शून्यागारादिरूपा तत्परिषहणं च तत्रोपसर्गेष्वत्रासः **'सेज्जापरीसहे'** शय्या-वसतिस्तत्परिषहणं च तज्जन्यदुःखादेरुपेक्षा **'अक्कोसपरीसहे'** आक्रोशो-दुर्वचनं **'वहपरीसहे'** व्यधो वधो वा-यष्ट्यादिताडनं तत्परीषहणं च क्षान्त्यवलम्बनं **'जायणापरीसहे'** याञ्चा-भिक्षणं तत्परिषहणं च तत्र मानवर्जनम् **'अलाभपरीसहे'** अलाभः-प्रतीतस्तत्परिषहणं च तत्र दैन्याभावः **'रोगपरीसहे'** रोगो-रुक् तत्परिषहणं च तत्पीडासहनं चिकित्सावर्जनं च **'तणफासपरीसहे'** तृणस्पर्शः-कुशादिस्पर्शस्तत्परिषहणं च कदाचित्कतृणग्रहणे तत्संस्पर्शजन्यदुःखाधिसहनं **'जल्लपरीसहे'** जल्लो-मलस्तत्परिषहणं च देशतः सर्वतो वा स्नानोद्वर्त्तनादिवर्जनं **'सक्कारपुरक्कारपरीसहे'** सत्कारो-वस्त्रादिपूजा पुरस्कारो-राजादिकृताभ्युत्थानादिस्तत्परिषहणं च तत्सद्भावे आत्मोत्कर्षवर्जनं तदभावे दैन्यवर्जनं तदनाकाङ्क्षा चेति **'पण्णापरीसहे'** प्रज्ञा-मतिज्ञानविशेषस्तत्परिषहणं च प्रज्ञाया अभावे उद्वेगाकरणं तद्भावे च मदाकरणं **'नाणपरीसहे'** ज्ञानं-मत्यादि तत्परिषहणं च तस्य विशिष्टस्य सद्भावे मदवर्जनमभावे च दैन्यपरिवर्जनं, ग्रन्थान्तरे त्वज्ञानपरीसह इति पठ्यते, **'दंसणपरीसहे'** दर्शनं-तत्त्वश्रद्धानं तत्परिषहणं च जिनानां जिनोक्तसूक्ष्मभावानां चाश्रद्धानवर्जनमिति । **'कइसु कम्मपयडीसु समोयरंति'**त्ति कतिषु कर्म्मप्रकृतिषु विषये परीषहाः समवतारं व्रजन्तीत्यर्थः **'पण्णापरीसहे'**इत्यादि प्रज्ञापरीषहो ज्ञानावरणे-मतिज्ञानावरणरूपे समवतरति, प्रज्ञाया अभावमाश्रित्य, तदभावस्य ज्ञानावरणोदयसम्भवत्वात्, यत्तु तदभावे दैन्यपरिवर्जनं तत्सद्भावे च मानवर्जनं तच्चारित्रमोहनीयक्षयोपशमादेरिति, एवं ज्ञानपरीषहोऽपि नवरं मत्यादिज्ञानावरणेऽवतरति, 'पंचे'त्यादिगाथा, 'पंचेव आणुपुव्वी'ति क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकपरीषहा इत्यर्थः, एतेषु च पीडैव वेदनीयोत्था तदधिसहनं तु चारित्रमोहनीयक्षयोपश-

मादिसम्भवं, अधिसहनस्य चारित्ररूपत्वादिति ॥ 'एगे दंसणपरीसहे समोयरति'त्ति यतो दर्शनं तत्त्वश्रद्धानरूपं दर्शनमोहनीयस्य क्षयोपशमादौ भवति उदये तु न भवतीत्यतस्तत्र दर्शनपरीषहः समवतरतीति, 'अरई'त्यादि गाथा, तत्र चारतिपरीषहोऽरतिमोहनीये तज्जन्यत्वात्, अचेलपरीषहो जुगुप्सामोहनीये लज्जापेक्षया, स्त्रीपरीषहः पुरुषवेदमोहे स्त्र्यपेक्षया तु पुरुषपरीषहः स्त्रीवेदमोहे, तत्त्वतः स्त्र्याद्यभिलापरूपत्वात्तस्य, नैषेधिकीपरीषहो भयमोहे उपसर्गभयापेक्षया, याञ्चापरीषहो मानमोहे तद्दुष्करत्वापेक्षया, आक्रोशपरीषहः क्रोधमोहे क्रोधोत्पत्त्यपेक्षया, सत्कारपुरस्कारपरीषहो मानमोहे मदोत्पत्त्यपेक्षया समवतरति, सामान्यतस्तु सर्वेऽप्येते चारित्रमोहनीये समवतरन्तीति ॥ 'एगे अलाभपरीसहे समोयरति'त्ति अलाभपरीषह एवान्तराये समवतरति, अन्तरायं चेह लाभान्तरायं तदुदय एव लाभाभावात्, तदधिसहनं च चारित्रमोहनीयक्षयोपशम इति ॥ अथ बन्धस्थानान्याश्रित्य परीषहान् विचारयन्नाह—'सत्तविहे'त्यादि, सप्तविधबन्धकः—आयुर्वर्जशेषकर्म्मबन्धकः 'जं समयं सीयपरीसहं'मित्यादि, यत्र समये शीतपरीषहं वेदयते न तत्रोष्णपरीसहं, शीतोष्णयोः परस्परमत्यन्तविरोधेनैकदैकत्रासम्भवात्, अथ यद्यपि शीतोष्णयोरेकदैकत्रासम्भवस्तथाऽप्यात्यन्तिके शीते तथाविधाग्निसन्निधौ युगपदेवैकस्य पुंस एकस्यां दिशि शीतमन्यस्यां चोष्णमित्येवं द्वयोरपि शीतोष्णपरीषहयोरस्ति सम्भवः, नैतदेवं, कालकृतशीतोष्णाश्रयत्वादधिकृतसूत्रस्यैवंविधव्यतिकरस्य वा प्रायेण तपस्विनामभावादिति । तथा 'जं समयं चरीयापरीसहं'मित्यादि तत्र चर्या—ग्रामादिषु संचरणं नैषेधिकी च—ग्रामादिषु प्रतिपन्नमासकल्पादेः स्वाध्यायादिनिमित्तं शय्यातो विविक्ततरोपाश्रये गत्वा निषदनम्, एवं चानयोर्विहारावस्थानरूपत्वेन परस्परविरोधान्नैकदा सम्भवः, अथ नैषेधिकीवच्छय्याऽपि चर्यया सह विरुद्धेति न तयोरेकदा सम्भवस्ततश्चैकोनविंशतेरेव परीषहाणामुत्कर्षेणैकदा वेदनं प्राप्तमिति, नैवं, यतो ग्रामा-

दिगमनप्रवृत्तौ यदा कश्चिदौत्सुक्यादनिवृत्ततत्परिणाम एव विश्रामभोजनाद्यर्थमित्वरशय्यायां वर्त्तते तदोभयमप्यविरुद्धमेव, तत्त्वतश्चर्याया असमाप्तत्वाद् आश्रयस्य चाश्रयणादिति, यद्येवं तर्हि कथं षड्विधबन्धकमाश्रित्य वक्ष्यति—'जं समयं चरियापरीसहं वेएति नो तं समयं सेज्जापरीसहं वेएइ' इत्यादीति ?, अत्रोच्यते, षड्विधबन्धको मोहनीयस्याविद्यमानकल्पत्वात् सर्वत्रौत्सुक्याभावेन शय्याकाले शय्यायामेव वर्त्तते, न तु बादररागवदौत्सुक्येन विहारपरिणामाविच्छेदाच्चर्यायामपि, अतस्तदपेक्षया तयोः परस्परविरोधाद्युगपदसम्भवः, ततश्च साध्वेव 'जं समयं चरिए' त्यादिति । 'छव्विहबंधे'त्यादि, षड्विधबन्धकस्यायुर्मोहवर्जानां बन्धकस्य, सूक्ष्मसम्परायस्येत्यर्थः, एतदेवाह—'सरागछउमत्थस्से'त्यादि, सूक्ष्मलोभाणूनां वेदनात्सरागोऽनुत्पन्नकेवलत्वाच्छद्मस्थस्ततः कर्मधारयोऽतस्तस्य 'चोद्दस परिसहं'त्ति अष्टानां मोहनीयसम्भवानां तस्य मोहाभावेनाभावाद्द्वाविंशतेः शेषाश्चतुर्दशपरीषहा इति, ननु सूक्ष्मसम्परायस्य चतुर्दशानामेवाभिधानान्मोहनीयसम्भवानामष्टानामसम्भव इत्युक्तं, ततश्च सामर्थ्यादनिवृत्तिबादरसंपरायस्य मोहनीयसम्भवानामष्टानामपि सम्भवः प्राप्तः, कथं चैतद् युज्यते ?, यतो दर्शनसप्तकोपशमे बादरकषायस्य दर्शनमोहनीयोदयाभावेन दर्शनपरीषहाभावात्सप्तानामेव सम्भवो नाष्टानां, अथ दर्शनमोहनीयसत्तापेक्षयाऽसावपीष्यत इत्यष्टावेव तर्हि उपशमकत्वे सूक्ष्मसम्परायस्यापि मोहनीयसत्तासद्भावात्कथं तदुत्थाः सर्वेऽपि परीषहा न भवन्ति ? इति, न्यायस्य समानत्वादिति, अत्रोच्यते, यस्माद्दर्शनसप्तकोपशमस्योपर्येव नपुंसकवेदाद्युपशमकालेऽनिवृत्तिबादरसम्परायो भवति, स चावश्यकादिव्यतिरिक्तग्रन्थान्तरमतेन दर्शनत्रयस्य बृहति भागे उपशान्ते शेषे चानुपशान्ते एव स्यात् नपुंसकवेदं चासौ तेन सहोपशमयितुमुपक्रमते, ततश्च नपुंसकवेदोपशमावसरेऽनिवृत्तिबादरसम्परायस्य सतो दर्शनमोहस्य प्रदेशत उदयोऽस्ति, न तु सत्तैव, ततस्तत्प्रत्ययो दर्शनपरीषहस्तस्यास्तीति, ततश्चाष्टावपि

भवन्तीति, सूक्ष्मसम्परायस्य तु मोहसत्तायामपि न परीषहहेतुभूतः सूक्ष्मोऽपि मोहनीयोदयोऽस्तीति न मोहजन्यपरीषहसम्भवः. आह च—"मोहनिमित्ता अट्ठवि बायररागे परीसहा किह णु? । किह वा सुहुमसरागे न होंति उवसामए सव्वे? ॥ १ ॥ आचार्य आह—सत्तगपरओ च्चिय जेण बायरो जं च सावसेसंमि । मग्गिल्लंमि पुरिल्ले लग्गइ तो दंसणस्सावि ॥ २ ॥ लब्भइ पएसकम्मं पडुच्च सुहुमोदओ तओ अट्ठ । तस्स भणिया न सुहुमे न तस्स सुहुमोदओऽवि जओ ॥ ३ ॥" यश्च सूक्ष्मसम्परायस्य सूक्ष्मलोभकिट्टिकानामुदयो नासौ परीषहहेतुः, लोभहेतुकस्य परीषहस्यानभिधानात्, यदि च कोऽपि कथञ्चिदसौ स्यात्तदा तस्येहात्यन्ताल्पत्वेनाविवक्षेति । 'वीयरागछउमत्थस्स'त्ति उपशान्तमोहस्य क्षीणमोहस्य 'एगविहबंधगस्स'त्ति वेदनीयबन्धकस्येत्यर्थः, कस्य तस्य? इत्यत आह—'वीयरागछउमत्थस्स'त्ति उपशान्तमोहस्य क्षीणमोहस्य चेत्यर्थः 'एवं चेवे'त्यादि चतुर्दश प्रज्ञप्ताः, द्वादश पुनर्वेदयतीत्यर्थः, शीतोष्णयोश्चर्याशय्ययोश्च पर्यायेण वेदनादिति ॥ अनन्तरं परीषहा उक्तास्तेषु चोष्णपरीषहस्तद्धेतवश्च सूर्या इत्यतः सूर्यवक्तव्यतां निरूपयन्नाह—

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति, मज्झंतियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति, अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति?, हंता गोयमा! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य तं चेव जाव अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति । जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि मज्झंतियमुहुत्तंसि य अत्थमणमुहुत्तंसि य सव्वत्थ समा उच्चत्तेणं?, हंता गोयमा! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमण जाव उच्चत्तेणं । जइ णं भंते! जंबुद्दीवे २ सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि य मज्झंतिय० अत्थमणमुहुत्तंसि मूले जाव उच्चत्तेणं से केणं खाइ अट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले

य दीसंति जाव अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति ?, गोयमा ! [ग्रन्थाग्रं ५०००] लेसापडिघाएणं उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति, लेसाभितावेणं मज्झंतियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति, लेस्सापडिघाएणं अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति जाव अत्थमण जाव दीसंति । जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं गच्छंति पडुप्पन्नं खेत्तं गच्छंति अणागयं खेत्तं गच्छंति?, गोयमा! णो तीयं खेत्तं गच्छंति, पडुप्पन्नं खेत्तं गच्छंति, णो अणागयं खेत्तं गच्छंति, जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं ओभासंति पडुप्पन्नं खेत्तं ओभासंति अणागयं खेत्तं ओभासंति ?, गोयमा ! नो तीयं खेत्तं ओभासंति, पडुप्पन्नं खेत्तं ओभासंति, नो अणागयं खेत्तं ओभासंति, तं भंते ! किं पुट्ठं ओभासंति अपुट्ठं ओभासंति ?, गोयमा ! पुट्ठं ओभासंति, नो अपुट्ठं ओभासंति, जाव नियमा छद्दिसिं । जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं उज्जोवेंति एवं चेव जाव नियमा छद्दिसि, एवं तवेंति एवं भासंति जाव नियमा छद्दिसिं ॥ जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरियाणं किं तीए खेत्ते किरिया कज्जइ पडुप्पन्ने खेत्ते किरिया कज्जइ अणागए खेत्ते किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! नो तीए खेत्ते किरिया कज्जइ पडुप्पन्ने खेत्ते किरिया कज्जइ णो अणागए खेत्ते किरिया कज्जइ, सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जति अपुट्ठा कज्जइ ?, गोयमा ! पुट्ठा कज्जइ नो अपुट्ठा कज्जति जाव नियमा छद्दिसिं । जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया केवतियं खेत्तं उड्ढं तवंति केवतियं खेत्तं अहे तवंति केवतियं खेत्तं तिरियं तवंति ?, गोयमा ! एगं जोयणसयं उड्ढं तवंति अट्ठारस जोयणस-

याइं अहे तवंति सीयालीसं जोयणसहस्साइं दोन्नि तेवट्ठे जोयणसए एक्कवीसं च सट्ठिभाए जोयणस्स तिरियं तवंति ॥ अंतो णं भंते! माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिमसूरियगहगणणक्खत्ततारारूवा ते णं भंते! देवा किं उड्ढोववन्नगा जहा जीवाभिगमे तहेव निरवसेसं जाव उक्कोसेणं छम्मासा। बहिया णं भंते! माणुसुत्तरस्स जहा जीवाभिगमे जाव इंदट्ठाणे णं भंते! केवतियं कालं उववाएणं विरहिए पन्नत्ते?, गोयमा! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं छम्मासा। सेवं भंते! सेवं भंते! ॥ सूत्रं ३४३ ॥ अट्ठमसए अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

'जंबुदीवे'इत्यादि, 'दूरे य मूले य दीसंति'त्ति 'दूरे च' द्रष्टृस्थानापेक्षया व्यवहिते देशे 'मूले च' आसन्ने द्रष्टृप्रतीत्यपेक्षया सूर्यौ दृश्येते, द्रष्टा हि स्वरूपतो बहुभिर्योजनसहस्रैर्व्यवहितमुद्गमास्तमययोः सूर्यं पश्यति, आसन्नं पुनर्मन्यते, सद्भूतं तु विप्रकर्षं सन्तमपि न प्रतिपद्यत इति। 'मज्झंतियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति'त्ति मध्यो–मध्यमोऽन्तो–विभागो गगनस्य दिवसस्य वा मध्यान्तः स यस्य मुहूर्त्तस्यास्ति स मध्यान्तिकः स चासौ मुहूर्त्तश्चेति मध्यान्तिकमुहूर्त्तस्तत्र 'मूले च' आसन्ने देशे द्रष्टृस्थानपेक्षया 'दूरे च' व्यवहिते देशे द्रष्टृप्रतीत्यपेक्षया सूर्यौ दृश्येते, द्रष्टा हि मध्याह्ने उदयास्तमनदर्शनापेक्षयाऽऽसन्नं रविं पश्यति, योजनशताष्टकेनैव तदा तस्य व्यवहितत्वात्, मन्यते पुनरुदयास्तमयप्रतीत्यपेक्षया व्यवहितमिति। 'सव्वत्थ समा उच्चत्तेणं'ति समभूतलापेक्षया सर्वत्रोच्चत्वमष्टौ योजनशतानीतिकृत्वा, 'लेसापडिघाएणं' तेजसः प्रतिघातेन, दूरतरत्वात तद्देशस्य तदप्रसरणेनेत्यर्थः, लेश्याप्रतिघाते हि सुखदृश्यत्वेन दूरस्थोऽपि स्वरूपेण सूर्यं आसन्नप्रतीतिं जनयति, 'लेसाभितावेणं'ति तेजसोऽभितापेन, मध्याह्ने हि आसन्नतरत्वात्सूर्यस्तेजसा प्रतपति, तेजःप्रतापे च दुर्दृश्यत्वेन प्रत्यासन्नोऽप्यसौ दूरप्रतीतिं जनयतीति। 'नो तीतं खेत्तं

गच्छंति'त्ति अतीतक्षेत्रस्यातिक्रान्तत्वात्, 'पडुप्पन्नं'ति वर्त्तमानं गम्यमानमित्यर्थः, 'नो अणागयं'ति गमिष्यमाणमित्यर्थः, इह च यदाकाशखण्डमादित्यः स्वतेजसा व्याप्नोति तत् क्षेत्रमुच्यते, 'ओभासंति'त्ति 'अवभासयतः' ईषदुद्द्योतयतः 'पुट्ठं'ति तेजसा स्पृष्टं 'जाव नियमा छद्दिसिं'ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं— 'तं भंते ! किं ओगाढं ओभासइ अणोगाढं ओभासइ ?, गोयमा ! ओगाढं ओभासइ नो अणोगाढ'मित्यादि 'तं भंते ! कतिदिसिं ओभासेइ ?, गोयमा ! इत्येतदन्तमिति। 'उज्जोवेंति'त्ति 'उद्द्योतयतः' अत्यर्थं द्योतयतः 'तवंति'त्ति तापयतः उष्णरश्मित्वात्तयोः 'भासंति'त्ति भासयतः, शोभयत इत्यर्थः ॥ उक्तमेवार्थं शिष्यहिताय प्रकारान्तरेणाह—'जंबू'इत्यादि, 'किरिया कज्जइ'त्ति अवभासनादिका क्रिया भवतीत्यर्थः 'पुट्ठ'त्ति तेजसा स्पृष्टात्—स्पर्शनाद् या सा स्पृष्टा, 'एगं जोयणसयं उड्ढं तवंति'त्ति स्वस्वविमानस्योपरि योजनशतप्रमाणस्यैव तापक्षेत्रस्य भावात् 'अट्ठारस जोयणसयाइं अहे तवंति'त्ति, कथं ?, सूर्यादष्टासु योजनशतेषु भूतलं भूतलाच्च योजनसहस्रेऽधोलोकग्रामा भवन्ति तांश्च यावदुद्द्योतनादिति, 'सीयालीस'मित्यादि, एतच्च सर्वोत्कृष्टदिवसे चक्षुःस्पर्शापेक्षयाऽवसेयमिति ॥ अनन्तरं सूर्यवक्तव्यतोक्ता, अथ सामान्येन ज्योतिष्कवक्तव्यतामाह—'अंतो णं भंते !' इत्यादि, 'जहा जीवाभिगमे तहेव निरवसेसं'ति, तत्र चेदं सूत्रमेवं—'कप्पोववन्नगा विमाणोववन्नगा चारोववन्नगा चारट्ठिइया गइरइया गइसमावन्नगा ?, गोयमा ! ते णं देवा नो उड्ढोववन्नगा नो कप्पोववन्नगा विमाणोववन्नगा चारोववन्नगा' ज्योतिश्चक्रचरणोपलक्षितक्षेत्रोपपन्ना इत्यर्थः 'नो चारट्ठिइया' इह चारो–ज्योतिषामवस्थानक्षेत्रं 'नो' नैव चारे स्थितिर्येषां ते तथा, अत एव 'गइरइया' अत एव 'गइसमावन्नगा' इत्यादि, कियद्दूरमिदं वाच्यम् ? इत्याह—'जाव उक्कोसेणं छम्मास'त्ति इदं चैवं द्रष्टव्यम्—'इंदट्ठाणे णं भंते ! केवइयं कालं विरहिए उववाएणं ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं

उक्कोसेणं छम्मास'त्ति, 'जहा जीवाभिगमे'त्ति, इदमप्येवं तत्र—'जे चंदिमसूरियगहगणनक्खत्ततारारूवा ते णं भंते! देवा किं उड्ढोववन्नगा?, इत्यादि प्रश्नसूत्रम्, उत्तरं तु गोयमा! ते णं देवा नो उड्ढोववन्नगा नो कप्पोववन्नगा विमाणोववन्नगा नो चारोववन्नगा चारट्ठिइया नो गइरइया नो गइसमावन्नगे' त्यादीति ॥ अष्टमशतेऽष्टमः ॥ ८-८ ॥



अष्टमोद्देशके ज्योतिषां वक्तव्यतोक्ता, सा च वैश्रसिकीति वैश्रसिकं प्रायोगिकं च बन्धं प्रतिपिपादयिषुर्नवमोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कइविहे णं भंते! बंधे पण्णत्ते?, गोयमा! दुविहे बंधे पण्णत्ते, तंजहा-पयोगबंधे य वीससाबंधे य॥ (सूत्रं ३४४)

वीससाबंधे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! दुविहे पण्णत्ते, तंजहा-साइयवीससाबंधे अणाइयवीससाबंधे य। अणाइयवीससाबंधे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! तिविहे पण्णत्ते, तंजहा-धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे अधम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे आगासत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे। धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे?, गोयमा! देसबंधे नो सव्वबंधे, एवं चेव अधम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधेवि, एवमागासत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधेवि। धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणाइयवीससाबंधे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! सव्वद्धं, एवं अधम्मत्थिकाए, एवं आगासत्थिकाये। सादीयवीससाबंधे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! तिविहे पण्णत्ते, तंजहा-बंध-

णपच्चइए भायणपच्चइए परिणामपच्चइए। से किं तं बंधणपच्चइए?, २ जन्नं परमाणुपुग्गलादुपएसिया तिपएसिया जाव दसपएसिया संखेज्जपएसिया असंखेज्जपएसिया, अणंतपएसियाणं भंते! खंधाणं वेमायनिद्धयाए वेमायलुक्खयाए वेमायनिद्धलुक्खयाए बंधणपच्चए णं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, सेत्तं बंधणपच्चइए। से किं तं भायणपच्चइए?, भा० २ जन्नं जुन्नसुराजुन्नगुलजुन्नतंदुलाणं भायणपच्चइएणं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं भायणपच्चइए। से किं तं परिणामपच्चइए?, परिणामपच्चइए जन्नं अब्भाणं अब्भरुक्खाणं जहा ततियसए जाव अमोहाणं परिणामपच्चइए णं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं छम्मासा, सेत्तं परिणामपच्चइए, सेत्तं साइयवीससाबंधे, सेत्तं वीससाबंधे ( सूत्रं ३४५ ) ॥

'कइविहे णं'मित्यादि 'बंधे'त्ति बन्धः-पुद्गलादिविषयः सम्बन्धः 'पओगबंधे य'त्ति जीवप्रयोगकृतः 'वीससाबंधे य'त्ति स्वभावसंपन्नः। यथासत्तिन्यायमाश्रित्याह—'वीससे'त्यादि, 'धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणाईयवीससाबंधे य'त्ति धर्मास्तिकायस्यान्योऽन्यं-प्रदेशानां परस्परेण योऽनादिको विश्रसाबन्धः स तथा, एवमुत्तरत्रापि। देसबंधे'त्ति देशतो-देशापेक्षया बन्धो देशबन्धो यथा सङ्कलिकाकटिकानां, 'सव्वबंधे' त्ति सर्वतः-सर्वात्मना बन्धः सर्वबन्धो यथा क्षीरनीरयोः 'देसबन्धे नो सव्वबंधे'त्ति धर्मास्तिकायस्य प्रदेशानां परस्परसंस्पर्शेन व्यवस्थितत्वाद्देशबन्ध एव न पुनः सर्वबन्धः, तत्र हि एकस्य प्रदेशस्य प्रदेशान्तरैः सर्वथा बन्धेऽन्योऽन्यान्तर्भावेनैकप्रदेशत्वमेव स्यात् नासङ्ख्येयप्रदेशत्वमिति॥ 'सव्वद्धं'ति सर्वाद्धां-सर्वकालं। 'साइयवीससाबंधे य'त्ति सादिको यो विश्रसाबन्धः स तथा, 'बंधणपच्चइए'त्ति बध्यतेऽनेनेति बन्धनं-विवक्षितस्निग्धतादिको गुणः स एव प्रत्ययो-

हेतुर्यत्र स तथा, एवं भाजनप्रत्ययः परिणामप्रत्ययश्च, नवरं भाजनं-आधारः परिणामो-रूपान्तरगमनं 'जन्नं परमाणुपुग्गले'त्यादौ परमाणुपुद्गलः परमाणुरेव 'वेमायनिद्धयाए'त्ति विषमा मात्रा यस्यां सा विमात्रा सा चासौ स्निग्धता चेति विमात्रस्निग्धता तया, एवमन्यदपि पदद्वयम्, इदमुक्तं भवति-"समनिद्धयाए बन्धो न होइ समलुक्खयाएवि न होइ। वेमायनिद्धलुक्खत्तणेण बंधो उ खंधाणं ॥ १ ॥" अयमर्थः-समगुणस्निग्धस्य समगुणस्निग्धेन परमाणुद्व्यणुकादिना बन्धो न भवति, समगुणरूक्षस्यापि समगुणरूक्षेण, यदा पुनर्विषमा मात्रा तदा भवति बन्धः, विषममात्रानिरूपणार्थं चोच्यते-"निद्धस्स निद्धेण दुयाहिएणं, लुक्खस्स लुक्खेण दुयाहिएणं। निद्धस्स लुक्खेण उवेइ बंधो, जहन्नवज्जो विसमो समो वा ॥ १ ॥" इति, 'बंधणपच्चइएणं'ति बन्धनस्य-बन्धस्य प्रत्ययो-हेतुरुक्तरूपविमात्रस्निग्धतादिलक्षणो बन्धनमेव वा विवक्षितस्नेहादि प्रत्ययो बन्धनप्रत्ययस्तेन, इह च बन्धनप्रत्ययेनेति सामान्यं विमात्रस्निग्धतयेत्यादयस्तु तद्भेदा इति। 'असंखेज्जं कालं'ति असङ्ख्येयोत्सर्पिण्यवसर्पिणीरूपं 'जुन्नसुरे'त्यादि तत्र जीर्णसुरायाः स्त्यानीभवनलक्षणो बन्धः, जीर्णगुडस्य जीर्णतन्दुलानां च पिण्डीभवनलक्षणः ॥

**से किं तं पयोगबंधे?, पयोगबंधे तिविहे पण्णत्ते, तंजहा-अणाइए वा अपज्जवसिए साइए वा अपज्जवसिए साइए वा सपज्जवसिए, तत्थ णं जे से अणाइए अपज्जवसिए से णं अट्ठण्हं जीवमज्झपएसाणं ॥ तत्थवि णं तिण्हं २ अणाइए अपज्जवसिए, सेसाणं साइए, तत्थ णं जे से सादीए अपज्जवसिए से णं सिद्धाणं, तत्थ णं जे से साइए सपज्जवसिए से णं चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा-आलावणबंधे अल्लियावणबंधे सरीरबंधे सरीरप्पयोगबंधे ॥ से किं तं आलावणबंधे?, आलावणबंधे जण्णं तणभाराण वा कट्ठभाराण वा पत्तभाराण वा पलालभाराण वा**

वेल्लभाराण वा वेत्तलयावागवरत्तरज्जुवल्लिकुसदब्भमादिएहिं आलावणबंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं आलावणबंधे। से किं तं अल्लियावणबंधे?, अल्लियावणबंधे चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा–लेसणाबंधे उच्चयबंधे समुच्चयबंधे साहणणाबंधे, से किं तं लेसणाबंधे?, लेसणाबंधे जन्नं कुड्डाणं कोट्टिमाणं खंभाणं पासायाणं कट्ठाणं चम्माणं घडाणं पडाणं कडाणं छुहाचिक्खिल्लसिलेसलक्खमहुसित्थमाइएहिं लेसणएहिं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं लेसणाबंधे, से किं तं उच्चयबंधे?, उच्चयबंधे जन्नं तणरासीण वा कट्ठरासीण वा पत्तरासीण वा तुसरासीण वा भुसरासीण वा गोमयरासीण वा अवगररासीण वा उच्चत्तेणं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं उच्चयबंधे, से किं तं समुच्चयबंधे?, समुच्चयबंधे जन्नं अगडतडागनदीदहवावीपुक्खरिणीदीहियाणं गुंजालियाणं सराणं सरपंतिआणं सरसरपंतियाणं बिलपंतियाणं देवकुलसभापव्वथूभखाइयाणं फरिहाणं पागारट्टालगचरियदारगोपुरतोरणाणं पासायघरसरणलेणआवणाणं सिंघाडगतियचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहमादीणं छुहाचिक्खिल्लसिलेससमुच्चएणं बंधे समुच्चए णं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं समुच्चयबंधे, से किं तं साहणणाबंधे?, साहणणाबंधे दुविहे पन्नत्ते, तंजहा–देससाहणणाबंधे य सव्वसाहणणाबंधे य, से किं तं देससाहणणाबंधे?, देससाहणणाबंधे जन्नं सगडरहजाणजुग्गगिल्लिथिल्लिसीयसंदमाणियालोहीलोहकडाहकडुच्छुआसणसयणखंभभंडमत्तोवगरणमाईणं देससाहणणाबंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं देससाहणणाबंधे, से किं तं

प्र०आ०३९५

सव्वसाहणणाबंधे ?, सव्वसाहणणाबंधे से णं खीरोदगमाईणं, सेत्तं सव्वसाहणणाबंधे, सेत्तं साहणणाबंधे, सेत्तं अल्लियावणबंधे ॥ से किं तं सरीरबंधे ?, सरीरबंधे दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–पुव्वप्पओगपच्चइए य पडुप्पन्नपओगपच्चइए य, से किं तं पुव्वप्पयोगपच्चइए?, पुव्वप्पओगपच्चइए जन्नं नेरइयाइयाणं संसारवत्थाणं सव्वजीवाणं तत्थ २ तेसु २ कारणेसु समोहणमाणाणं जीवप्पदेसाणं बंधे समुप्पज्जइ, सेत्तं पुव्वप्पयोगपच्चइए, से किं तं पडुप्पन्नप्पयोगपच्चइए ?, २ जन्नं केवलनाणिस्स अणगारस्स केवलिसमुग्घाएणं समोहयस्स ताओ समुग्घायाओ पडिनियत्तेमाणस्स अंतरा मंथे वट्टमाणस्स तेयाकम्माणं बंधे समुप्पज्जइ, किं कारणं ?, ताहे से पएसा एगत्तीगया भवंतित्ति, सेत्तं पडुप्पन्नप्पयोगपच्चइए, सेत्तं सरीरबंधे ३ ॥ से किं तं सरीरप्पयोगबंधे ?, सरीरप्पयोगबंधे पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–ओरालियसरीरप्पओगबंधे वेउव्वियसरीरप्पओगबंधे आहारगसरीरप्पओगबंधे तेयासरीरप्पयोगबंधे कम्मासरीरप्पयोगबंधे । ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे बेंदियओ० जाव पंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे । एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–पुढविक्काइयएगिंदिय० एवं एएणं अभिलावेणं भेदो जहा ओगाहणसंठाणे ओरालियसरीरस्स तहा भाणियव्वो जाव पज्जत्तगब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे य अपज्जत्तगगब्भवक्कंतियमणूस० जाव बंधे य ॥ ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए पमादपच्चया

कम्मं च जोगं च भवं च आउयं च पडुच्च ओरालियसरीरप्पयोगनामकम्मस्स उदएणं ओरालियसरीरप्पयोगबंधे ॥ एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, एवं चेव, पुढविक्काइयएगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे एवं चेव, एवं जाव वणस्सइकाइया, एवं बेइंदिया एवं तेइंदिया एवं चउरिंदियतिरिक्खजोणिय०, पंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गो० वीरियसजोगसद्दव्वयाए पमाय जाव आउयं पडुच्च पंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं, तिरिक्खपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे एवं चेव, मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा! वीरियसजोगसद्दव्वयाए पमादपच्चया जाव आउयं च पडुच्च मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे, ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, गोयमा! देसबंधेवि सव्वबंधेवि, एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, एवं चेव, एवं पुढविकाइया, एवं जाव मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, गोयमा! देसबंधेवि सव्वबंधेवि ॥ ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा! सव्वबंधे एक्कं समयं, देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं समयऊणाइं, एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा! सव्वबंधे एक्कं समयं देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समऊणाइं, पुढविकाइयएगिंदियपुच्छा, गोयमा! सव्वबंधे

एकं समयं देसबंधे जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समऊणाइं, एवं सव्वेसिं सव्वबंधो एक्कं समयं देसबंधो जेसिं नत्थि वेउव्वियसरीरं तेसिं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं जा जस्स ठिती सा समऊणा कायव्वा, जेसिं पुण अत्थि वेउव्वियसरीरं तेसिं देसबंधो जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं जा जस्स ठिती सा समऊणा कायव्वा जाव मणुस्साणं देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं समयूणाइं ॥ ओरालियसरीरबंधंतरे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडिसमयाहियाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं तिसमयाहियाइं, एगिंदियओरालियपुच्छा, गोयमा! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समयाहियाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं, पुढविक्काइयएगिंदियपुच्छा गो०! सव्वबंधंतरं जहेव एगिंदियस्स तहेव भाणियव्वं, देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि समया जहा पुढविक्काइयाणं, एवं जाव चउरिंदियाणं वाउक्काइयवज्जाणं, नवरं सव्वबंधंतरं उक्कोसेणं जा जस्स ठिती सा समयाहिया कायव्वा, वाउक्काइयाणं सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं तिन्नि वाससहस्साइं समयाहियाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं, पंचिंदियतिरिक्खजोणियओरालियपुच्छा, सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं पुव्वकोडी समयाहिया, देसबंधंतरं जहा एगिंदियाणं तहा पंचिंदिय-

तिरिक्खजो०, एवं मणुस्साणवि निरवसेसं भाणियव्वं जाव उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं॥ जीवस्स णं भंते ! एगिंदियत्ते णोएगिंदियत्ते पुणरवि एगिंदियत्ते एगिंदियओरालियसरीरप्पओगबंधंतरं कालओ केवच्चिरं होइ?, गोयमा! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दो खुड्डागभवग्गहणाइं तिसमयऊणाइं उक्कोसेणं दो सागरोवमसहस्साइं संखेज्जवासमब्भहियाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं समयाहियं उक्कोसेणं दो सागरोवमसहस्साइं संखेज्जवासमब्भहियाइं, जीवस्स णं भंते ! पुढविकाइयत्ते नोपुढविकाइयत्ते पुणरवि पुढविकाइयत्ते पुढविकाइयएगिंदियओरालियसरीरप्पयोबंधंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दो खुड्डाइं भवग्गहणाइं तिसमयऊणाइं उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंता उस्सप्पिणीओसप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अणंता लोगा असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा, ते णं पोग्गलपरियट्टा आवलियाए असंखेज्जइभागो, देसबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डाग्गभवग्गहणं समयाहियं उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव आवलियाए असंखेज्जइभागो, जहा पुढविक्काइयाणं एवं वणस्सइकाइयवज्जाणं जाव मणुस्साणं, वणस्सइकाइयाणं दोन्नि खुड्डाइं, एवं चेव उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं असंखिज्जाओ उस्सप्पिणिओसप्पिणीओ कालओ खेत्तओ असंखेज्जा लोगा, एवं देसबंधंतरंपि उक्कोसेणं पुढवीकालो ॥ एएसि णं भंते! जीवाणं ओरालियसरीरस्स देसबंधगाणं सव्वबंधगाणं अबंधगाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा ओरालियसरीरस्स सव्वबंधगा अबंधगा विसेसाहिया देसबंधगा असंखेज्जगुणा (सूत्रं ३४७)॥

'पओगबंधे'त्ति जीवव्यापारबन्धः, स च जीवप्रदेशानामौदारिकादिपुद्गलानां वा 'अणाइए वा' इत्यादयो द्वितीयवर्जास्त्रयो

भङ्गाः, तत्र प्रथमभङ्गोदाहरणायाह—'तत्थ णं जे से'इत्यादि, अस्य किल जीवस्यासङ्ख्येयप्रदेशिकस्याष्टौ ये मध्यप्रदेशास्तेषामनादिरपर्यवसितो बन्धो, यदाऽपि लोकं व्याप्य तिष्ठति जीवस्तदाऽप्यसौ तथैवेति, अन्येषां पुनर्जीवप्रदेशानां विपरिवर्त्तमानत्वान्नास्त्यनादिरपर्यवसितो बन्धः, तत्स्थापना— एतेषामुपर्यन्ये चत्वारः, एवमेतेऽष्टौ ॥ एवं तावत्समुदायतोऽष्टानां बन्ध उक्तः, अथ तेष्वेकैकेनात्मप्रदेशेन सह यावतां परस्परेण बन्धो भवति तद्दर्शनायाह— 'तत्थवि ण'मित्यादि, 'तत्रापि' तेष्वष्टासु जीवप्रदेशेषु मध्ये त्रयाणां त्रयाणामेकैकेन सहानादिरपर्यवसितो बन्धः, तथाहि—पूर्वोक्तप्रकारेणावस्थितानामष्टानामुपरितनप्रतरस्य यः कश्चिद्विवक्षितस्तस्य द्वौ पार्श्ववर्त्तिनावेकश्चाधोवर्त्तीत्येते त्रयः संबध्यन्ते, शेषस्त्वेक उपरितनस्त्रयश्चाधस्तना न संबध्यन्ते, व्यवहितत्वात्, एवमधस्तनप्रतरापेक्षयाऽपीति चूर्णिकारव्याख्या, टीकाकारव्याख्या तु दुरवगमत्वात्परिहृतेति, 'सेसाणं साइए'त्ति शेषाणां मध्यमाष्टाभ्योऽन्येषां सादिर्विपरिवर्त्तमानत्वात्, एतेन प्रथमभङ्ग उदाहृतः, अनादिसपर्यवसित इत्ययं तु द्वितीयो भङ्ग इह न संभवति, अनादिसंबद्धानामष्टानां जीवप्रदेशानामपरिवर्त्तमानत्वेन बन्धस्य सपर्यवसितत्वानुपपत्तेरिति । अथ तृतीयो भङ्ग उदाह्रियते—'तत्थ णं जे से साइए'इत्यादि, सिद्धानां सादिरपर्यवसितो जीवप्रदेशबन्धः, शैलेश्यवस्थायां संस्थापितप्रदेशानां सिद्धत्वेऽपि चलनाभावादिति । अथ चतुर्थभङ्गं भेदत आह—'तत्थ णं जे से साइए'इत्यादि, 'आलावणबंधे'त्ति आलाप्यते—आलीनं क्रियत एभिरित्यालापनानि—रज्ज्वादीनि तैर्बन्धस्तृणादीनामालापनबन्धः, 'अल्लियावणबंधे'त्ति अल्लियावणं—द्रव्यस्य द्रव्यान्तरेण श्लेषादिनाऽऽलीनस्य यत्करणं तद्रूपो यो बन्धः स तथा, 'सरीरबंधे'त्ति समुद्घाते सति यो विस्तारितसङ्कोचितजीवप्रदेशसम्बन्धविशेषवशात्तैजसादिशरीरप्रदेशानां सम्बन्धविशेषः स शरीरबन्धः, शरीरिबन्ध इत्यन्ये, तत्र शरीरिणः समुद्घाते विक्षिप्तजीवप्रदेशानां सङ्कोचने यो

बन्धः स शरीरिबन्ध इति, 'सरीरप्पओगबंधे'त्ति शरीरस्य–औदारिकादेर्यः प्रयोगेण–वीर्यान्तरायक्षयोपशमादिजनितव्यापारेण बन्धः–तत्पुद्गलोपादानं शरीररूपस्य वा प्रयोगस्य यो बन्धः स शरीरप्रयोगबन्धः॥ 'तणभाराण व'त्ति तृणभाराः-तृणभारकास्तेषां 'वेत्ते'त्यादि, वेत्रलता–जलवंशकम्बा 'वाग'त्ति वल्कः वरत्रा–चर्म्ममयी रज्जुः–सनादिमयी वल्ली–त्रपुष्यादिका कुशा–निर्मूलदर्भाः दर्भास्तु समूलाः, आदिशब्दाच्चीवरादिग्रहः, 'लेसणाबंधे'त्ति श्लेषणा–श्लथद्रव्येण द्रव्ययोः संबन्धनं तद्रूपो यो बन्धः स तथा, 'उच्चयबंधे'त्ति उच्चयः–ऊर्द्धं चयनं–राशीकरणं तद्रूपो बन्ध उच्चयबन्धः, 'समुच्चयबंधे'त्ति सङ्गतः–उच्चयापेक्षया विशिष्टतर उच्चयः समुच्चयः स एव बन्धः समुच्चयबन्धः, 'साहणणाबंधे'त्ति संहननं–अवयवानां सङ्घातनं तद्रूपो यो बन्धः स संहननबन्धः, दीर्घत्वादि चेह प्राकृतशैलीप्रभवमिति, 'कुट्टिमाणं'ति मणिभूमिकानां 'छुहाचिक्खिल्ले'त्यादौ 'सिलेस'त्ति श्लेषो-वज्रलेपः 'लक्ख'त्ति जतु 'महुसित्थ'त्ति मदनम्, आदिशब्दाद् गुग्गुलरालाखल्यादिग्रहः 'अवगररासीण व'त्ति कचवरराशीनाम् 'उच्चएणं'ति ऊर्द्धं चयनेन 'अगडतलागनई'इत्यादि प्रायः प्राग् व्याख्यातमेव, 'देससाहणणाबंधे य'त्ति देशेन देशस्य संहननलक्षणो बन्धः–सम्बन्धः शकटाङ्गादीनामिवेति देशसंहननबन्धः, 'सव्वसाहणणाबंधे य'त्ति सर्वेण सर्वस्य संहननलक्षणो बन्धः–सम्बन्धः क्षीरनीरादीनामिवेति सर्वसंहननबन्धः 'जन्नं सगडरहे'त्यादि, शकटादीनि च पदानि प्राग् व्याख्यातान्यपि शिष्यहिताय पुनर्व्याख्यायन्ते–तत्र च 'सगड'त्ति गन्त्री 'रह'त्ति स्यन्दनः 'जाण'त्ति यानं–लघुगन्त्री 'जुग्ग'त्ति युग्यं गोल्लविषयप्रसिद्धं द्विहस्तप्रमाणं वेदिकोपशोभितं जम्पानं 'गिल्लि'त्ति हस्तिन उपरि कोल्लरं यन्मानुषं गिलतीव 'थिल्लि'त्ति अड्डपलाणं 'सीय'त्ति शिबिका–कूटाकारेणाच्छादितो जम्पानविशेषः 'संदमाणि य'त्ति पुरुषप्रमाणो जम्पानविशेषः 'लोहि'त्ति मण्डकादिपचनभाजनं 'लोहकडाहे'ति भाजनविशेष

एव 'कडुच्छुय'त्ति परिवेषणभाजनम्, आसनशयनस्तम्भाः प्रतीताः 'भंड'त्ति मृन्मयभाजनं 'मत्त'त्ति अमत्र-भाजनविशेषः 'उवगरण'त्ति नानाप्रकारं तदन्योपकरणमिति ॥ 'पुव्वप्पओगपच्चइए य'त्ति पूर्वः-प्राक्कालासेवितः प्रयोगो-जीवव्यापारो वेदनाकषायादिसमुद्घातरूपः प्रत्ययः-कारणं यत्र शरीरबन्धे स तथा स एव पूर्वप्रयोगप्रत्ययिकः, 'पच्चुप्पन्नपओगपच्चइए य'त्ति प्रत्युत्पन्नः-अप्राप्तपूर्वो वर्त्तमान इत्यर्थः प्रयोगः-केवलिसमुद्घातलक्षणव्यापारः प्रत्ययो यत्र स तथा स एव प्रत्युत्पन्नप्रयोगप्रत्ययिकः । 'नेरइयाईण'मित्यादि, तत्थ तत्थ त्ति अनेन समुद्घातकरणक्षेत्राणां बाहुल्यमाह, 'तेसु तेसु'त्ति अनेन समुद्घातकारणानां वेदनादीनां बाहुल्यमुक्तं 'समोहणमाणाणं'ति समुद्धन्यमानानां-समुद्घातं शरीराद्बहिर्जीवप्रदेशप्रक्षेपलक्षणं गच्छतां 'जीवपएसाणं'ति इह जीवप्रदेशानामित्युक्तावपि शरीरबन्धाधिकारात्तात्स्थ्यात्तद्व्यपदेश इति न्यायेन जीवप्रदेशाश्रिततैजसकार्म्मणशरीरप्रदेशानामिति द्रष्टव्यं, शरीरिबन्ध इत्यत्र तु पक्षे समुद्घातेन विक्षिप्य सङ्कोचितानामुपसर्जनीकृततैजसादिशरीरप्रदेशानां जीवप्रदेशानामेवेति 'बंधे'त्ति बन्धो रचनादिविशेषः, 'जन्नं केवले'त्यादि, केवलिसमुद्घातेन दण्ड १ कपाट २ मथिकरणा ३ न्तरपूरण ४ लक्षणेन 'समुपहतस्य' विस्तारितजीवप्रदेशस्य 'ततः' समुद्घातात् 'प्रतिनिवर्त्तमानस्य' प्रदेशान् संहरतः, समुद्घातप्रतिनिवर्त्तमानत्वं च पञ्चमादिष्वनेकेषु समयेषु स्यादित्यतो विशेषमाह-'अंतरामंथे वट्टमाणस्स'त्ति निवर्त्तनक्रियाया अन्तरे-मध्येऽवस्थितस्य, पञ्चमसमय इत्यर्थः, यद्यपि च षष्ठादिसमयेषु तैजसादिशरीरसङ्घातः समुत्पद्यते तथाऽप्यभूतपूर्वतया पञ्चमसमय एवासौ भवति, शेषेषु तु भूतपूर्वतयैवेतिकृत्वा 'अंतरामंथे वट्टमाणस्से'त्युक्तमिति, 'तेयाकम्माणं बंधे समुपज्जइ'त्ति तैजसकार्मणयोः शरीरयोः 'बन्धः' सङ्घातः समुत्पद्यते 'किं कारणं' कुतो हेतोः?, उच्यते-'ताहे'त्ति तदा समुद्घातनिवृत्तिकाले 'से'त्ति तस्य केवलिनः 'प्रदेशाः' जीवप्रदेशाः

'एगत्तीगय'त्ति एकत्वं गताः—संघातमापन्ना भवन्ति, तदनुवृत्त्या च तैजसादिशरीरप्रदेशानां बन्धः समुत्पद्यत इति प्रकृतम्, शरीरिबन्ध इत्यत्र तु पक्षे 'तेयाकम्माणं बंधे समुपज्जइ'त्ति तैजसकार्मणाश्रयभूतत्वात्तैजसकार्मणाः शरीरिप्रदेशास्तेषां बन्धः समुत्पद्यत इति व्याख्येयमिति 'वीरियसजोगसद्दव्वयाए'त्ति वीर्यं—वीर्यान्तरायक्षयादिकृता शक्तिः योगाः—मनःप्रभृतयः सह योगैर्वर्त्तत इति सयोगः सन्ति—विद्यमानानि द्रव्याणि—तथाविधपुद्गला यस्य जीवस्यासौ सद्द्रव्यः वीर्यप्रधान सयोगो वीर्यसयोगः स चासौ सद्द्रव्यश्चेति विग्रहस्तद्भावस्तत्ता तया वीर्यसयोगसद्द्रव्यतया, सवीर्यतया सयोगतया सद्द्रव्यतया च जीवस्य, तथा 'पमायपच्चय'त्ति 'प्रमादप्रत्ययात्' प्रमादलक्षणकारणात् तथा 'कम्मं च'त्ति कर्म्म च एकेन्द्रियजात्यादिकमुदयवर्त्ति 'जोगं च'त्ति 'योगं च' काययोगादिकं 'भवं च'त्ति 'भवं च' तिर्यग्भवादिकमनुभूयमानम् 'आउयं च'त्ति 'आयुष्कं च' तिर्यगायुष्काद्युदयवर्त्ति 'पडुच्च'त्ति 'प्रतीत्य' आश्रित्य 'ओरालिए'त्यादि औदारिकशरीरप्रयोगसम्पादकं यन्नाम तदौदारिकशरीरप्रयोगनाम तस्य कर्म्मण उदयेनौदारिकशरीरप्रयोगबन्धो भवतीति शेषः, एतानि च वीर्यसयोगसद्द्रव्यतादीनि पदान्यौदारिकशरीरप्रयोगनामकर्मोदयस्य विशेषणतया व्याख्येयानि, वीर्यसयोगसद्द्रव्यतया हेतुभूतया यो विवक्षितकर्मोदयस्तेनेत्यादिना प्रकारेण, स्वतन्त्राणि वैतान्यौदारिकशरीरप्रयोगबन्धस्य कारणानि, तत्र च पक्षे यदौदारिकशरीरप्रयोगबन्धः कस्य कर्म्मण उदयेन ?इति पृष्टे यदन्यान्यपि कारणान्यभिधीयन्ते तद्विवक्षितकर्मोदयोऽभिहितान्येव सहकारिकारणान्यपेक्ष्येह कारणतयाऽवसेय इत्यस्यार्थस्य ज्ञापनार्थमिति ॥ 'एगिंदिए'त्यादौ 'एवं चेव'त्ति अनेनाधिकृतसूत्रस्य पूर्वसूत्रसमताभिधानेऽपि 'ओरालियसरीरप्पओगनामाए' इत्यत्र पदे 'एगिंदियओरालियसरीरप्पओगनामाए'इत्ययं विशेषो दृश्यः, एकेन्द्रियौदारिकशरीरप्रयोगबन्धस्येहाधिकृतत्वात्, एवमुत्तरत्रापि वाच्यमिति ॥ 'देसबंधेऽवि सव्वबंधेऽवि'त्ति तत्र यथा-

ऽपूपः स्नेहभृततप्ततापिकायां प्रक्षिप्तः प्रथमसमये घृतादि गृह्णात्येव, शेषेषु तु समयेषु गृह्णाति विसृजति च, एवमयं जीवो यदा प्राक्तनं शरीरकं विहायान्यद्गृह्णाति तदा प्रथमसमये उत्पत्तिस्थानगतान् शरीरप्रायोग्यपुद्गलान् गृह्णात्येवेत्ययं सर्वबन्धः, ततो द्वितीयादिषु समयेषु तान् गृह्णाति विसृजति चेत्येवं देशबन्धः, ततश्चैवमौदारिकस्य देशबन्धोऽप्यस्ति सर्वबन्धोऽप्यस्तीति ॥ 'सव्वबंधे एक्कं समयं'ति अपूपदृष्टान्तेनैव तत्सर्वबन्धकस्यैकसमयत्वादिति, 'देसबंधे'इत्यादि, तत्र यदा वायुर्मनुष्यादिर्वा वैक्रियं कृत्वा विहाय च पुनरौदारिकस्य समयमेकं सर्वबन्धं कृत्वा पुनस्तस्य देशबन्धं कुर्वन्नेकसमयानन्तरं म्रियते तदा जघन्यत एकं समयं देशबन्धोऽस्य भवतीति, 'उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं समयऊणाइं'ति, कथं?, यस्मादौदारिकशरीरिणां त्रीणि पल्योपमान्युत्कर्षतः स्थितिः, तेषु च प्रथमसमये सर्वबन्धक इति समयन्यूनानि त्रीणि पल्योपमान्युत्कर्षत औदारिकशरीरिणां देशबन्धकालो भवति । 'एगिंदियओरालिए'त्यादि, 'देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरी वैक्रियं गतः पुनरौदारिकप्रतिपत्तौ सर्वबन्धको भूत्वा देशबन्धकश्चैकं समयं भूत्वा मृतः इत्येवमिति, 'उक्कोसेणं बावीस'मित्यादि, एकेन्द्रियाणामुत्कर्षतो द्वाविंशतिर्वर्षसहस्राणि स्थितिस्तत्रासौ प्रथमसमये सर्वबन्धकः शेषकालं देशबन्धक इत्येवं समयोनानि द्वाविंशतिर्वर्षसहस्राण्येकेन्द्रियाणामुत्कर्षतो देशबन्धकाल इति ॥ 'पुढविक्काइए' त्यादि, 'देसबंधे जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयऊणं'ति, कथम् ?, औदारिकशरीरिणां क्षुल्लकभवग्रहणं जघन्यतो जीवितं, तच्च गाथाभिर्निरूप्यते—"दोन्नि सयाइं नियमा छप्पन्नाइं पमाणओ होंति । आवलियपमाणेणं खुड्डागभवग्गहणमेयं ॥ १ ॥ पणसट्ठि सहस्साइं पंचेव सयाइं तह य छत्तीसा । खुड्डागभवग्गहणा हवंति अंतोमुहुत्तेणं ॥२॥ सत्तरस भवग्गहणा खुड्डागा हुंति आणुपाणंमि । तेरस चेव सयाइं पंचाणउयाइं अंसाणं ॥ ३ ॥ इहोक्तलक्षणस्य ६५५३६ मुहूर्त्तगतक्षुल्लकभवग्र-

हणराशेः सहस्रत्रयशतसप्तकत्रिसप्ततिलक्षणेन ३७७३ मुहूर्त्तगतोच्छ्वासराशिना भागे हृते यल्लभ्यते तदेकत्रोच्छ्वासे क्षुल्लकभवग्रहणपरिमाणं भवति, तच्च सप्तदश, अवशिष्टस्तूक्तलक्षणोऽंशराशिर्भवतीति, अयमभिप्रायः—येषामंशानां त्रिभिः सहस्रैः सप्तभिश्च त्रिसप्तत्यधिकशतैः क्षुल्लकभवग्रहणं भवति तेषामंशानां पञ्चनवत्यधिकानि त्रयोदश शतानि अष्टादशस्यापि क्षुल्लकभवग्रहणस्य तत्र भवन्तीति, तत्र यः पृथिवीकायिकस्त्रिसमयेन विग्रहेणागतः स तृतीयसमये सर्वबन्धकः शेषेषु देशबन्धको भूत्वा आक्षुल्लकभवग्रहणं मृतः, मृतश्च सन्नविग्रहेणागतो यदा तदा सर्वबन्धक एव भवतीति, एवं च ये ते विग्रहसमयास्त्रयस्तैरूनं क्षुल्लकमित्युच्यते, 'उक्कोसेणं बावीस'-मित्यादि भावितमेवेति, 'देसबंधो जेसिं नत्थी'त्यादि, अयमर्थः—अप्तेजोवनस्पतिद्वित्रिचतुरिन्द्रियाणां क्षुल्लकभवग्रहणं त्रिसमयोनं जघन्यतो देशबन्धो, यतस्तेषां वैक्रियशरीरं नास्ति, वैक्रियशरीरे हि सत्येकसमयो जघन्यत औदारिकदेशबन्धः पूर्वोक्तयुक्त्या स्यादिति, 'उक्कोसेणं जा जस्से'त्यादि तत्रापां वर्षसहस्राणि सप्तोत्कर्षतः स्थितिः, तेजसामहोरात्राणि त्रीणि, वनस्पतीनां वर्षसहस्राणि दश, द्वीन्द्रियाणां द्वादश वर्षाणि त्रीन्द्रियाणामेकोनपञ्चाशदहोरात्राणि चतुरिन्द्रियाणां षण्मासाः, तत एषां सर्वबन्धसमयोना उत्कृष्टतो देशबन्धस्थितिर्भवतीति, 'जेसिं पुणे'त्यादि, ते च वायवः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च, एषां जघन्येन देशबन्ध एकं समयं, भावना च प्रागिव, 'उक्कोसेण'मित्यादि तत्र वायूनां त्रीणि वर्षसहस्राणि उत्कर्षतः स्थितिः, पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च पल्योपमत्रयम्, इयं च स्थितिः सर्वबन्धसमयोना उत्कृष्टतो देशबन्धस्थितिरेषां भवतीति, अतिदेशतो मनुष्याणां देशबन्धस्थितौ लब्धायामप्यन्तिमसूत्रत्वेन साक्षादेव तेषां तामाह—'जाव मणुस्साण'मित्यादि ॥ उक्त औदारिकशरीरप्रयोगबन्धस्य कालोऽथ तस्यैवान्तरं निरूपयन्नाह—'ओरालिए'त्यादि, सर्वबन्धान्तरं जघन्यतः क्षुल्लकभवग्रहणं त्रिसमयोनं, कथं ?, त्रिसमयविग्रहेणौदारिकशरीरिष्वागतस्तत्र द्वौ समयावनाहा

रकस्तृतीयसमये सर्वबन्धकः क्षुल्लकभवं च स्थित्वा मृत औदारिकशरीरिष्वेवोत्पन्नस्तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धकः, एवं च सर्वबन्धस्य सर्वबन्धस्य चान्तरं क्षुल्लकभवो विग्रहगतसमयत्रयोनः, 'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कृष्टतस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि पूर्वकोटीः (टी च) समयाभ्यधिकानि (का) सर्वबन्धान्तरं भवतीति, कथं ?, मनुष्यादिष्वविग्रहेणागतस्तत्र च प्रथमसमय एव सर्वबन्धको भूत्वा पूर्वकोटिं च स्थित्वा त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिर्नारकः सर्वार्थसिद्धको वा भूत्वा त्रिसमयेन विग्रहेणौदारिकशरीरी संपन्नस्तत्र च विग्रहस्य द्वौ समयावनाहारकस्तृतीये च समये सर्वबन्धकः, औदारिकशरीरस्यैव च यौ तौ द्वावनाहारसमयौ तयोरेकः पूर्वकोटीसर्वबन्धसमयस्थाने क्षिप्तस्ततश्च पूर्णा पूर्वकोटी जाता एकश्च समयोऽतिरिक्तः, एवं च सर्वबन्धस्य सर्वबन्धस्य चोत्कृष्टमन्तरं यथोक्तमानं भवतीति। 'देसबंधंतर'मित्यादि, देशबन्धान्तरं जघन्येनैकं समयं, कथं?, देशबन्धको मृतः सन्नविग्रहेणैवोत्पन्नस्तत्र च प्रथम एव समये सर्वबन्धको द्वितीयादिषु च समयेषु देशबन्धकः संपन्नः, तदेवं देशबन्धस्य देशबन्धस्य चान्तरं जघन्यत एकः समयः सर्वबन्धसम्बन्धीति। 'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कृष्टस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि त्रिसमयाधिकानि देशबन्धस्यान्तरं भवतीति, कथं ?, देशबन्धको मृत उत्पन्नश्च त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमायुः सर्वार्थसिद्धादौ, ततश्च च्युत्वा त्रिसमयेन विग्रहेणौदारिकशरीरी संपन्नस्तत्र च विग्रहस्य समयद्वयेऽनाहारकस्तृतीये च समये सर्वबन्धकस्ततो देशबन्धकोऽजनि, एवं चोत्कृष्टमन्तरालं देशबन्धस्य देशबन्धस्य च यथोक्तं भवतीति॥ औदारिकबन्धस्य सामान्यतोऽन्तरमुक्तमथ विशेषतस्तस्य तदाह-'एगिंदिए'त्यादि, एकेन्द्रियस्यौदारिकसर्वबन्धान्तरं जघन्यतः क्षुल्लकभवग्रहणं त्रिसमयेनं, कथं ? त्रिसमयेन विग्रहेण पृथिव्यादिष्वागतस्तत्र च विग्रहस्य समयद्वयमनाहारकस्तृतीये च समये सर्वबन्धकस्ततः क्षुल्लकं भवग्रहणं त्रिसमयोनं स्थित्वा मृतः अविग्रहेण च यदोत्पद्य सर्वबन्धक एव भवति तदा सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवतीति।

'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कृष्टतः सर्वबन्धान्तरं द्वाविंशतिर्वर्षसहस्राणि समयाधिकानि भवन्ति, कथम्?, अविग्रहेण पृथिवीकायिकेष्वागतः प्रथम एव च समये सर्वबन्धकस्ततो द्वाविंशतिर्वर्षसहस्राणि स्थित्वा समयोनानि विग्रहगत्या त्रिसमयया ऽन्येषु पृथिव्यादिषूत्पन्नस्तत्र च समयद्वयमनाहारको भूत्वा तृतीयसमये सर्वबन्धकः संपन्नः,अनाहारकसमययोश्चैको द्वाविंशतिवर्षसहस्रेषु समयोनेषु क्षिप्तस्तत्पूरणार्थं, ततश्च द्वाविंशतिर्वर्षसहस्राणि समयश्चैकेन्द्रियाणां सर्वबन्धयोरुत्कृष्टमन्तरं भवतीति। 'देसबंधंतर'मित्यादि, तत्रैकेन्द्रियौदारिकदेशबन्धान्तरं जघन्येनैकं समयं, कथं ? देशबन्धको मृतः सन्नविग्रहेण सर्वबन्धको भूत्वा एकस्मिन् समये पुनर्देशबन्धक एव जातः, एवं च देशबन्धयोर्जघन्यत एकः समयोऽन्तरं भवतीति, 'उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरस्य देशबन्धकः सन् वैक्रियं गतस्तत्र चान्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा पुनरौदारिकशरीरस्य सर्वबन्धको भूत्वा देशबन्धक एव जातः, एवं च देशबन्धयोरुत्कर्षतोऽन्तर्मुहूर्त्तमन्तरमिति ॥ 'पुढविकाइए'त्यादि, 'देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि समय'त्ति, कथं ?, पृथिवीकायिको देशबन्धको मृतः सन्नविग्रहगत्या पृथिवीकायिकेष्वेवोत्पन्नः एकं समयं च सर्वबन्धको भूत्वा पुनर्देशबन्धको जातः एवमेकसमयो देशबन्धयोर्जघन्येनान्तरं, तथा पृथिवीकायिक देशबन्धको मृतः सन् त्रिसमयविग्रहेण तेष्वेवोत्पन्नस्तत्र च समयद्वयमनाहारकः तृतीयसमये च सर्वबन्धको भूत्वा पुनर्देशबन्धको जातः, एवं च त्रयः समया उत्कर्षतो देशबन्धयोरन्तरमिति। अथाप्कायिकादीनां बन्धान्तरमतिदेशत आह-'जहा पुढविकाइयाणं'मित्यादि, अत्रैव च सवथा समतापरिहारार्थमाह-'नवर'मित्यादि, एवं चातिदेशतो यल्लब्धं तद्दर्श्यते-अप्कायिकानां जघन्यं सर्वबन्धान्तरं क्षुल्लकभवग्रहणं त्रिसमयोनं उत्कृष्टं तु सप्त वर्षसहस्राणि समयाधिकानि, देशबधान्तरं तु जघन्यमेकः समय उत्कृष्टं तु त्रयः समयाः, एवं वायुवर्जानां तेजःप्रभृतीनामपि, नवरमुत्कृष्टं सर्वबन्धान्तरं

स्वकीया स्वकीया स्थितिः समयाधिका वाच्या ॥ अथातिदेशे वायुकायिकवर्जानामित्यनेनातिदिष्टबन्धान्तरेभ्यो वायुबन्धान्तरस्य विलक्षणता सूचितेति वायुबन्धान्तरं भेदेनाह–'वाउक्काइयाण'मित्यादि, तत्र च वायुकायिकानामुत्कर्षेण देशबन्धान्तरमन्तर्मुहूर्त्तं, कथं?, वायुरौदारिकशरीरस्य देशबन्धकः सन् वैक्रियबन्धमन्तर्मुहूर्त्तं कृत्वा पुनरौदारिकसर्वबन्धसमयानन्तरमौदारिकदेशबन्धं यदा करोति तदा यथोक्तमन्तरं भवतीति ॥ 'पंचिंदिये'त्यादि, तत्र सर्वबन्धान्तरं जघन्यं भावितमेव, उत्कृष्टं तु भाव्यते–पञ्चेन्द्रियतिर्यङ् अविग्रहेणोत्पन्नः प्रथम एव च समये सर्वबन्धकः ततः समयोनां पूर्वकोटिं जीवित्वा विग्रहगत्या त्रिसमयया तेष्वेवोत्पन्नः तत्र च द्वावनाहारकसमयौ तृतीये च समये सर्वबन्धकः संपन्नः, अनाहारकसमययोश्चैकः समयः समयोनायां पूर्वकोट्यां क्षिप्तस्तत्पूरणार्थमेकस्त्वधिक इत्येवं यथोक्तमन्तरं भवतीति, देशबन्धान्तरं तु यथैकेन्द्रियाणां, तच्चैवं–जघन्यमेकः समयः, कथं?, देशबन्धको मृतः सर्वबन्धसमयानन्तरं देशबन्धको जात इत्येवं, उत्कर्षेण त्वन्तर्मुहूर्त्तं?, कथं?, औदारिकशरीरी देशबन्धकः सन् वैक्रियं प्रतिपन्नः तत्रान्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा पुनरौदारिकशरीरी जातः तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको द्वितीयादिषु तु देशबन्धक इत्येवं देशबन्धयोरन्तर्मुहूर्त्तमन्तरमिति, एवं मनुष्याणामपीति, एतदेवाह–'जहा पंचिंदिए'त्यादि। औदारिकबन्धान्तरं प्रकारान्तरेणाह—'जीवे'त्यादि, एकेन्द्रियत्वे 'नोएगिंदियत्ते'त्ति द्वीन्द्रियत्वादौ पुनरेकेन्द्रियत्वे सति यत्सर्वबन्धान्तरं तज्जघन्येन द्वे क्षुल्लकभवग्रहणे त्रिसमयोने, कथम्?, एकेन्द्रियस्त्रिसमयया विग्रहगत्योत्पन्नः तत्र च समयद्वयमनाहारको भूत्वा तृतीयसमये सर्वबन्धं कृत्वा तदूनं क्षुल्लकभवग्रहणं जीवित्वा मृतः अनेकेन्द्रियेषु क्षुल्लकभवग्रहणमेव जीवित्वा मृतः सन्नविग्रहेण पुनरेकेन्द्रियेष्वेवोत्पद्य सर्वबन्धको जातः, एवं च सर्वबन्धयोरुक्तमन्तरं जातमिति, 'उक्कोसेणं दो सागरोवमसहस्साइं संखेज्जवासमब्भहियाइं'ति, कथम्?, अविग्रहेणैकेन्द्रियः समुत्पन्नः तत्र च

प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा द्वाविंशतिं वर्षसहस्राणि जीवित्वा मृतस्त्रसकायिकेषु चोत्पन्नः, तत्र च सङ्ख्यातवर्षाभ्यधिकसागरोपमसहस्रद्वयरूपामुत्कृष्टत्रसकायिककायस्थितिमतिवाह्य एकेन्द्रियेष्वेवोत्पद्य सर्वबन्धको जात इत्येवं सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवति, सर्वबन्धसमयहीन एकेन्द्रियोत्कृष्टभवस्थितेस्त्रसकायस्थितौ प्रक्षेपणेऽपि सङ्ख्यातस्थानानां सङ्ख्यातभेदत्वेन सङ्ख्यातवर्षाभ्यधिकत्वस्याव्याहतत्वादिति । 'देसबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं समयाहियं'ति, कथम् ?, एकेन्द्रियो देशबन्धकः सन् मृत्वा द्वीन्द्रियादिषु क्षुल्लकभवग्रहणमनुभूयाविग्रहेण चागत्य प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा द्वितीये देशबन्धको भवति, एवं च देशबन्धान्तरं क्षुल्लकभवः सर्वबन्धसमयातिरिक्तः, 'उक्कोसेण'मित्यादि सर्वबन्धान्तरभावनोक्तप्रकारेण भावनीयमिति ॥ अथ पृथिवीकायिकबन्धान्तरं चिन्तयन्नाह— 'जीवस्से'त्यादि, 'एवं चेव'त्ति करणात् 'तिसमयऊणाइं'ति दृश्यम्, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं'ति, इह कालानन्तत्वं वनस्पतिकायस्थितिकालापेक्षयाऽनन्तकालमित्युक्तं तद्विभजनार्थमाह— 'अणंताओ'इत्यादि, अयमभिप्रायः-तस्यानन्तस्य कालस्य समयेषु अवसर्प्पिण्युत्सर्प्पिणीसमयैरपहियमाणेष्वनन्ता अवसर्प्पिण्युत्सर्प्पिण्यो भवन्तीति, 'कालओ'त्ति इदं कालापेक्षया मानं, 'खेत्तओ'त्ति क्षेत्रापेक्षया पुनरिदम्-'अणंता लोग'त्ति, अयमर्थः-तस्यानन्तकालस्य समयेषु लोकाकाशप्रदेशैरपहियमाणेष्वनन्ता लोका भवन्ति, अथ तत्र कियन्तः पुद्गलपरावर्त्ता भवन्ति ? इत्यत आह— 'असंखेज्जे'त्यादि, पुद्गलपरावर्त्तलक्षणं सामान्येन पुनरिदं-दशभिः कोटीकोटीभिरद्धापल्योपमानामेकं सागरोपमं, दशभिः सागरोपमकोटीकोटीभिरवसर्प्पिणी, उत्सर्प्पिण्यप्येवमेव,, ता अवसर्प्पिण्युत्सर्प्पिण्योऽनन्ताः पुद्गलपरावर्त्तः, एतद्विशेषलक्षणं तु इहैव वक्ष्यतीति, पुद्गलपरावर्त्तानामेवासङ्ख्यातत्वनियमनायाह-'आवलिए'त्यादि, असङ्ख्यातसमयसमुदायश्चावलिकेति । 'देसबंधंतरं जहन्नेण'मित्यादि, भावना त्वेवं-पृथिवीकायिको देशबन्धकः सन्मृतः

पृथिवीकायिकेषु क्षुल्लकभवग्रहणं जीवित्वा मृतः सन् पुनरविग्रहेण पृथिवीकायिकेष्वेवोत्पन्नः, तत्र च सर्वबन्धसमयानन्तरं देशबन्धको जातः, एवं च सर्वबन्धसमयेनाधिकमेकं क्षुल्लकभवग्रहणं देशबन्धयोरन्तरमिति। 'वणस्सइकाइयाणं दोन्नि खुड्डाइं'ति वनस्पतिकायिकानां जघन्यतः सर्वबन्धान्तरं द्वे क्षुल्लके भवग्रहणे 'एवं चेव'त्ति करणात्रिसमयोने इति दृश्यम्, एतद्भावना च वनस्पतिकायिकस्त्रिसमयेन विग्रहेणोत्पन्नः तत्र च विग्रहस्य समयद्वयमनाहारकस्तृतीये समये च सर्वबन्धको भूत्वा क्षुल्लकभवं च जीवित्वा पुनः पृथिव्यादिषु क्षुल्लकभवमेव स्थित्वा पुनरविग्रहेण वनस्पतिकायिकेष्वेवोत्पन्नः प्रथमसमये च सर्वबन्धकोऽसाविति सर्वबन्धयोस्त्रिसमयोने द्वे क्षुल्लकभवग्रहणे अन्तरं भवत इति। 'उक्कोसेण'मित्यादि, अयं च पृथिव्यादिषु कायस्थितिकालः, 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति यथा पृथिव्यादीनां देशबन्धान्तरं जघन्यमेवं वनस्पतेरपि, तच्च क्षुल्लकभवग्रहणं समयाधिकं, भावना चास्य पूर्ववत्, 'उक्कोसेणं पुढविकालो'त्ति उत्कर्षेण वनस्पतेर्देशबन्धान्तरं 'पृथिवीकालः' पृथिवीकायस्थितिकालोऽसङ्ख्यातावसर्प्पिण्युत्सर्प्पिण्यादिरूप इति ॥ अथौदारिकदेशबन्धकादीनामल्पत्वादिनिरूपणायाह— 'एएसी'त्यादि, सर्वस्तोकाः सर्वबन्धकास्तेषामुत्पत्तिसमय एव भावात्, अबन्धका विशेषाधिकाः, यतो विग्रहगतौ सिद्धत्वादौ च ते भवन्ति,, ते च सर्वबन्धकापेक्षया विशेषाधिकाः, देशबन्धका असङ्ख्यातगुणाः, देशबन्धकालस्यासङ्ख्यातगुणत्वात्, एतस्य च सूत्रस्य भावनां विशेषतोऽग्रे वक्ष्याम इति ॥ अथ वैक्रियशरीरप्रयोगबन्धनिरूपणायाह—

**वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते?, गोयमा! दुविहे पन्नत्ते, तंजहा-एगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे य पंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे य। जइ एगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे किं वाउक्काइयएगिंदियसरीरप्पयोगबंधे य अवाउक्काइयएगिंदिय० एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे वेउव्वि-**

यसरीरभेदो तहा भाणियव्वो जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयकप्पातीयवेमाणियदेवपंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे य अप्पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव पयोगबंधे य। वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा! वीरियसजोगसद्दव्वयाए जाव आउयं वा लद्धिं वा पडुच्च वेउव्वियसरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे। वाउक्काइयएगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोग० पुच्छा, गोयमा! वीरियसजोगसद्दव्वयाए चेव जाव लद्धिं च पडुच्च वाउक्काइयएगिंदियवेउव्विय जाव बंधो। रयणप्पभापुढविनेरइयपंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं?, गोयमा! वीरियसयोगसदव्वयाए जाव आउयं वा पडुच्च रयणप्पभापुढवि० जाव बंधे, एवं जाव अहेसत्तमाए। तिरिक्खजोणियपंचिंदियवेउव्वियसरीरपुच्छा, गोयमा! वीरिय० जहा वाउक्काइयाणं, मणुस्सपंचिंदियवेउव्विय० एवं चेव, असुरकुमारभवणवासिदेवपंचिंदियवेउव्विय० जहा रयणप्पभापुढविनेरइया, एवं जाव थणियकुमारा, एवं वाणमंतरा, एवं जोइसिया, एवं सोहम्मकप्पोवगया वेमाणिया एवं जाव अच्चुयगेवेज्जकप्पातीया वेमाणिया, एवं चेव अणुत्तरोववाइयकप्पातीया वेमाणिया एवं चेव। वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, गोयमा! देसबंधेवि सव्वबंधेवि. वाउक्काइयएगिंदिय एवं चेव रयणप्पभापुढविनेरइया एवं चेव, एवं जाव अणुत्तरोववाइया ॥ वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा! सव्वबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं दो समया, देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं समयूणाइं ॥ वाउक्काइएगिंदियवेउ-

उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं ॥ रयणप्पभापुढ-
व्वियपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं, देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं
विनेरइय पुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं, देसबंधे जहन्नेणं दसवाससहस्साइं तिसमयऊणाइं उक्कोसेणं
सागरोवमं समऊणं, एवं जाव अहेसत्तमा, नवरं देसबंधे जस्स जा जहन्निया ठिती सा ति समऊणा कायव्वा
जस्स जा उक्कोसा सा समयूणा ॥ पंचिंदियतिरिक्खजोणियाण मणुस्साण य जहा वाउक्काइयाणं । असुरकुमा-
रनागकुमार० जाव अणुत्तरोववाइयाणं जहा नेरइयाणं, नवरं जस्स जा ठिई सा भाणियव्वा जाव अणुत्तरोववा-
इयाणं सव्वबंधे एक्कं समयं, देसबंधे जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं तिसमऊणाइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं
समऊणाइं ॥ वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधंतरे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं
एक्कं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंताओ जाव आवलियाए असंखेज्जइभागो, एवं देसबंधंतरंपि ॥ वाउक्काइ-
यवेउव्वियसरीरपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं, एवं
देसबंधंतरंपि ॥ तिरिक्खजोणियपंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधंतरं पुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं
अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहुत्तं, एवं देसबंधंतरंपि, मणूसस्सवि ॥ जीवस्स णं भंते ! वाउकाइयत्ते नोवाउ-
काइयत्ते पुणरवि वाउकाइयत्ते वाउकाइयएगिंदिय० वेउव्वियपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं
उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, एवं देसबंधंतरंपि ॥ जीवस्स णं भंते ! रयणप्पभापुढविनेरइयत्ते णोरयण-
प्पभापुढवि० पुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं वण-

स्सइकालो, देसबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, एवं जाव अहेसत्तमाए, नवरं जा जस्स ठिती जहन्निया सा सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तमब्भहिया कायव्वा, सेसं तं चेव, पंचिंदियतिरिक्खजोणियमणुस्साण य जहा वाउक्काइयाणं। असुरकुमारनागकुमार जाव सहस्सारदेवाणं एएसिं जहा रयणप्पभापुढविनेरइयाणं नवरं सव्वबंधंतरे जस्स जा ठिती जहन्निया सा अंतोमुहुत्तमब्भहिया कायव्वा, सेसं तं चेव ॥ जीवस्स णं भंते ! आणयदेवत्ते नोआणय० पुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अट्ठारस सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, एवं जाव अच्चुए, नवरं जस्स जा जहन्निया ठिती सा सव्वबंधंतरं जह० वासपुहुत्तमब्भहिया कायव्वा, सेसं तं चेव। गेवेज्जकप्पातीयपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणं वणस्सइकालो ॥ जीवस्स णं भंते! अणुत्तरोववातियपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं संखेज्जाइं सागरोवमाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जाइं सागरोवमाइं ॥ एएसि णं भंते ! जीवाणं वेउव्वियसरीरस्स देसबंधगाणं सव्वबंधगाणं अबंधगाण य कयरे२हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वथोवा जीवा वेउव्वियसरीरस्स सव्वबंधगा देसबंधगा असंखेज्जगुणा अबंधगा अणंतगुणा ॥ आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! एगागारे पण्णत्ते। जइ एगागारे पण्णत्ते किं

मणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे किं अमणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे ?, गोयमा ! मणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे, नो अमणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे, एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे जाव इड्ढीपत्त,पमत्तसंजयसम्मदिट्ठिपज्जत्तसंखेज्जवासाउयकम्मभूमिगगब्भवक्कंतियमणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे णो अणिड्ढीपत्तपमत्त जाव आहारगसरीरप्पयोगबंधे। आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! वीरियसयोगसद्दव्वयाए जाव लद्धिं च पडुच्च आहारगसरीरप्पयोगणामाए कम्मस्स उदएणं आहारगसरीरप्पयोगबंधे। आहारसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, गोयमा ! देसबंधेवि सव्वबंधेवि। आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं देसबंधे जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं ॥ आहारगसरीरप्पयोगबंधंतरे णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंताओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अणंता लोया अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं, एवं देसबंधंतरंपि ॥ एएसि णं भंते ! जीवाणं आहारगसरीरस्स देसबंधगाणं सव्वबंधगाण अबंधगाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा आहारगसरीरस्स सव्वबंधगा देसबंधगा संखेज्जगुणा अबंधगा अणंतगुणा ३ ॥ ( सू० ३४८ ) ॥

तत्र 'एगिंदियवेउव्विए'त्यादि वायुकायिकापेक्षमुक्तं, 'पंचिंदिए'त्यादि तु पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्मनुष्यदेवनारकापेक्षमिति। 'वीरिये'त्यादौ यावत्करणात् 'पमायपच्चया कम्मं च जोगं च भवं चे'ति द्रष्टव्यं 'लद्धिं व'त्ति वैक्रियकरणलब्धिं वा प्रतीत्य,

एतच्च वायुपञ्चेन्द्रियतिर्यङ्मनुष्यानपेक्ष्योक्तं, तेन वायुकायादिसूत्रेषु लब्धिं वैक्रियशरीरबन्धस्य प्रत्ययतया वक्ष्यति, नारकदेवसूत्रेषु पुनस्तां विहाय वीर्यसयोगसद्द्रव्यतादीन् प्रत्ययतया वक्ष्यतीति ॥ 'सव्वबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं ?, वैक्रियशरीरिषूत्पद्यमानो लब्धितो वा तत् कुर्वन् समयमेकं सर्वबन्धको भवतीत्येवमेकं समयं सर्वबन्ध इति, 'उक्कोसेणं दो समय'त्ति, कथं ?, औदारिकशरीरी वैक्रियतां प्रतिपद्यमानः सर्वबन्धको भूत्वा मृतः पुनर्नारकत्वं देवत्वं वा यदा प्राप्नोति तदा प्रथमसमये वैक्रियस्य सर्वबन्धक एवेतिकृत्वा वैक्रियशरीरस्य सर्वबन्धक उत्कृष्टतः समयद्वयमिति, 'देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं ?, औदारिकशरीरी वैक्रियतां प्रतिपद्यमानः प्रथमसमये सर्वबन्धको भवति द्वितीयसमये देशबन्धको भूत्वा मृत इत्येवं देशबन्धो जघन्यत एकं समयमिति, 'उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं समयऊणाइं'ति, कथं ?, देवेषु नारकेषु चोत्कृष्टस्थितिषूत्पद्यमानः प्रथमसमये सर्वबन्धको वैक्रियशरीरस्य ततः परं देशबन्धकः तेन सर्वबन्ध समयेनोनानि त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्युत्कर्षतो देशबन्ध इति ॥ 'वाउक्काइए'त्यादि, 'देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरी सन् वैक्रियं गतस्ततः प्रथमसमये सर्वबन्धको द्वितीयसमये च देशबन्धको भूत्वा मृत इत्येवं जघन्येनैको देशबन्धसमयः 'उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं'ति वैक्रियशरीरेण स एव यदाऽन्तर्मुहूर्त्तमात्रमास्ते तदोत्कर्षतो देशबन्धोऽन्तर्मुहूर्त्तं, लब्धिवैक्रियशरीरिणो जीवतोऽन्तर्मुहूर्त्तात्परतो न वैक्रियशरीरावस्थानमस्ति, पुनरौदारिकशरीरस्यावश्यं प्रतिपत्तेरिति ॥ 'रयणप्पभे'त्यादि, 'देसबंधे जहन्नेणं दस वाससहस्साइं तिसमयऊणाइं'ति, कथं ?, त्रिसमयविग्रहेण रत्नप्रभायां जघन्यस्थितिर्नारकः समुत्पन्नः, तत्र च समयद्वयमनाहारकस्तृतीये च समये सर्वबन्धकस्ततो देशबन्धको वैक्रियस्य, तदेवमाद्यसमयत्रयन्यूनं वर्षसहस्रदशकं जघन्यतो देशबन्धः, 'उक्कोसेणं सागरोवमं समयऊणं'ति, कथं ?,

अविग्रहेण रत्नप्रभायामुत्कृष्टस्थितिर्नारकः समुत्पन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको वैक्रियशरीरस्य, ततः परं देशबन्धकः, तेन सर्वबन्धसमयेनोनं सागरोपममुत्कर्षतो देशबन्ध इति, एवं सर्वत्र सर्वबन्धः समयं देशबन्धश्च जघन्यो विग्रहसमयत्रयन्यूनो निजनिजजघन्यस्थितिप्रमाणो वाच्यः, सर्वबन्धसमयन्यूनोत्कृष्टस्थितिप्रमाणश्चोत्कृष्टदेशबन्ध इति, एतदेवाह—'एवं जावे'त्यादि, पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्मनुष्याणां वैक्रियसर्वबन्ध एकं समयं, देशबन्धस्तु जघन्यत एकं समयमुत्कर्षेणत्वन्तर्मुहूर्त्तम् ॥ एतदेवातिदेशेनाह—'पंचिंदिये'त्यादि, यच्च "अंतमुहूत्तं निरएसु होइ चत्तारि तिरियमणुएसु । देवेसु अद्धमासो उक्कोस विउव्वणाकालो ॥ १ ॥" इति वचनसामर्थ्यादन्तर्मुहूर्त्तचतुष्टयं तेषां देशबन्ध इत्युच्यते तन्मतान्तरमित्यवसेयमिति ॥ उक्तो वैक्रियशरीरप्रयोगबन्धस्य कालः, अथ तस्यैवान्तरं निरूपयन्नाह—'वेउव्वियये'त्यादि, 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं?, औदारिकशरीरी वैक्रियं गतः, प्रथमसमये सर्वबन्धको, द्वितीये देशबन्धको भूत्वा मृतो देवेषु नारकेषु वा वैक्रियशरीरिष्वविग्रहेणोत्पद्यमानः प्रथमसमये सर्वबन्धक इत्येवमेकः समयः सर्वबन्धान्तरमिति, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं'ति, कथं?, औदारिकशरीरी वैक्रियं गतो वैक्रियशरीरीषु वा देवादिषु समुत्पन्नः, स च प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा देशबन्धं च कृत्वा मृतः, ततः परमनन्तं कालमौदारिकशरीरिषु वनस्पत्यादिषु स्थित्वा वैक्रियशरीरवत्सूत्पन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको जातः, एवं च सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवतीति, (ग्रन्थाग्रं ९०००) 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति, जघन्येनैकं समयमुत्कृष्टतोऽनन्तं कालमित्यर्थः, भावना चास्य पूर्वोक्तानुसारेणेति ॥ 'वाउक्काइए'त्यादि 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं?, वायुरौदारिकशरीरी वैक्रियमापन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा मृतः, पुनर्वायुरेव जातः, तस्य चापर्याप्तकस्य वैक्रियशक्तिर्नाविर्भवतीत्यन्तर्मुहूर्त्तमात्रेणासौ पर्याप्तको भूत्वा वैक्रियशरीरमारभते, तत्र चासौ प्रथमसमये सर्वबन्धको जात इत्येवं

सर्वबन्धान्तरमन्तर्मुहूर्त्तमिति, 'उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं'ति, कथं?, वायुरौदारिकशरीरी वैक्रियं गतः, तत्प्रथमसमये च सर्वबन्धकस्ततो देशबन्धको भूत्वा मृतस्ततः परमौदारिकशरीरिषु वायुषु पल्योपमासङ्ख्येयभागमतिवाह्यावश्यं वैक्रियं करोति, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धकः, एवं च सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवतीति, 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति, अस्य भावना प्रागिवेति। 'तिरिक्खे'त्यादि, 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं?, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिको वैक्रियं गतः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धकः, ततः परं देशबन्धकोऽन्तर्मुहूर्त्तमात्रं, तत औदारिकस्य सर्वबन्धको भूत्वा समयं देशबन्धको जातः, पुनरपि श्रद्धेयमुत्पन्ना वैक्रियं करोमीति, पुनर्वैक्रियं कुर्वतः प्रथमसमये सर्वबन्धः, एवं च सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवतीति, 'उक्कोसेणं पुव्वकोडिपुहुत्तं'ति, कथं?, पूर्वकोट्यायुः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिको वैक्रियं गतः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धकस्ततो देशबन्धको भूत्वा कालान्तरे मृतः, तत्र पूर्वकोट्यायुः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्ष्वेवोत्पन्नः, पूर्वजन्मना सह सप्ताष्टौ वा वारान्, ततः सप्तमेऽष्टमे वा भवे वैक्रियं गतः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धं कृत्वा देशबन्धं करोतीति, एवं च सर्वबन्धयोरुत्कृष्टं यथोक्तमन्तरं भवतीति, 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति भावना चास्य सर्वबन्धान्तरोक्तभावनानुसारेण कर्त्तव्येति॥ वैक्रियशरीरबन्धान्तरमेव प्रकारान्तरेण चिन्तयन्नाह–'जीवस्से'त्यादि, 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं?, वायुर्वैक्रियशरीरं प्रतिपन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा मृतः, ततः पृथिवीकायिकेषूत्पन्नः, तत्रापि क्षुल्लकभवग्रहणमात्रं स्थित्वा पुनर्वायुर्जातः, तत्रापि कतिपयान् क्षुल्लकभवान् स्थित्वा वैक्रियं गतः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको जातः, ततश्च वैक्रियस्य सर्वबन्धयोरन्तरं बहवः क्षुल्लकभवास्ते च बहवोऽप्यन्तर्मुहूर्त्तं, अन्तर्मुहूर्त्ते बहूनां क्षुल्लकभवानां प्रतिपादितत्वात्, ततश्च सर्वबन्धान्तरं यथोक्तं भवतीति, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो'त्ति,

कथं ?, वायुर्वैक्रियशरीरीभवन् मृतो वनस्पत्यादिष्वनन्तं कालं स्थित्वा वैक्रियशरीरं पुनर्यदा लप्स्यते तदा यथोक्तमन्तरं भविष्यतीति, 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति भावना चास्य प्रागुक्तानुसारेणेति ॥ रत्नप्रभासूत्रे 'सव्वबंधंतर'मित्यादि, एतद्भाव्यते–रत्नप्रभानारको दशवर्षसहस्रस्थितिक उत्पत्तौ सर्वबन्धकः, तत उद्धृतश्च गर्भजपञ्चेन्द्रियेष्वन्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा रत्नप्रभायां पुनरप्युत्पन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धक इत्येवं सूत्रोक्तं जघन्यमन्तरं सर्वबन्धयोरिति, अयं च यदाऽपि प्रथमोत्पत्तौ त्रिसमयविग्रहेणोत्पद्यते तदापि न दशवर्षसहस्राणि त्रिसमयन्यूनानि भवन्ति, अन्तर्मुहूर्त्तस्य मध्यात् समयत्रयस्य तत्र प्रक्षेपात्, न च तत्प्रक्षेपेऽप्यन्तर्मुहूर्त्तस्यान्तर्मुहूर्त्तत्वव्याघातस्तस्यानेकभेदत्वादिति, 'उक्कोसेणं वणस्सइकालो'त्ति, कथं ?, रत्नप्रभानारक उत्पत्तौ सर्वबन्धकः तत उद्धृतश्चानन्तं कालं वनस्पत्यादिषु स्थित्वा पुनस्तत्रैवोत्पद्यमानः सर्वबन्धक इत्येवमुत्कृष्टमन्तरमिति, 'देसबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, रत्नप्रभानारको देशबन्धकः सन् मृतोऽन्तर्मुहूर्त्तायुः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्तयोत्पद्य मृत्वा रत्नप्रभानारकतयोत्पन्नः, तत्र च द्वितीयसमये देशबन्धक इत्येवं जघन्यं देशबन्धान्तरमिति, 'उक्कोसेण'मित्यादि, भावना प्रागुक्तानुसारेणेति । शर्कराप्रभादिनारकाणां वैक्रियशरीरबन्धान्तरमतिदेशतः सङ्क्षेपार्थमाह—'एवं जावे'त्यादि, द्वितीयादिपृथिवीषु च जघन्या स्थितिः क्रमेणैकं त्रीणि सप्त दश सप्तदश द्वाविंशतिश्च सागरोपमाणीति । 'पंचिंदिए'त्यादौ 'जहा वाउक्काइयाणं'ति जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तमुत्कृष्टतः पुनरनन्तं कालमित्यर्थः । असुरकुमारादयस्तु सहस्रारान्ता देवा उत्पत्तिसमये सर्वबन्धं कृत्वा स्वकीयां च जघन्यस्थितिमनुपाल्य पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षु जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तायुष्कत्वेन समुत्पद्य मृत्वा च तेष्वेव सर्वबन्धका जाताः, एवं च तेषां वैक्रियस्य जघन्यं सर्वबन्धान्तरं जघन्या तत्स्थितिरन्तर्मुहूर्त्ताधिका वक्तव्या उत्कृष्टं त्वनन्तं कालं, यथा रत्नप्रभानारकाणामिति, एतद्दर्शनायाह–'असुरकुमारे'त्यादि, तत्र जघन्या स्थि-

तिरसुरकुमारादीनां व्यन्तराणां च दश वर्षसहस्राणि, ज्योतिष्काणां पल्योपमाष्टभागः, सौधर्मादिषु तु 'पलियमहियं दो सार साहिया सत्त दस य चोद्दस य सतरस य' इत्यादि ॥ आनतसूत्रे 'सव्वबंधंतर'मित्यादि, एतस्य भावना आनतकल्पीयो देव उत्पत्तौ सर्वबन्धकः, स चाष्टादशसागरोपमाणि तत्र स्थित्वा ततश्च्युतो वर्षपृथक्त्वं मनुष्येषु स्थित्वा पुनस्तत्रैवोत्पन्नः प्रथमसमये चासौ सर्वबन्धक इत्येवं सर्वबन्धान्तरं जघन्यमष्टादश सागरोपमाणि वर्षपृथक्त्वाधिकानीति, उत्कृष्टं त्वनन्तं कालं, कथं?, स एव तस्माच्च्युतोऽनन्तं कालं वनस्पत्यादिषु स्थित्वा पुनस्तत्रैवोत्पन्नः, प्रथमसमये चासौ सर्वबन्धक इत्येवमिति, 'देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं'ति, कथं?, स एव देशबन्धकः संश्च्युतो वर्षपृथक्त्वं मनुष्यत्वमनुभूय पुनस्तत्रैव गतः, तस्य च सर्वबन्धानन्तरं देशबन्ध इत्येवं सूत्रोक्तमन्तरं भवति, इह च यद्यपि सर्वबन्धसमयाधिकं वर्षपृथक्त्वं भवति तथाऽपि तस्य वर्षपृथक्त्वादनर्थान्तरत्वविवक्षया न भेदेन गणनमिति । एवं प्राणतारणाच्युतग्रैवेयकसूत्राण्यपि ज्ञेयानि । अथ सनत्कुमारादिसहस्रारान्ता देवा जघन्यतो नवदिनायुष्केभ्यः आनताद्यच्युतान्तास्तु नवमासायुष्केभ्यः समुत्पद्यन्त इति जीवसमासेऽभिधीयते, ततश्च जघन्यं तत्सर्वबन्धान्तरं तत्तदधिकतज्जघन्यस्थितिरूपं प्राप्नोतीति, सत्यमेतत्, केवलं मतान्तरमेवेदमिति ॥ अनुत्तरविमानसूत्रे तु 'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कृष्टं सर्वबन्धान्तरं देशबन्धान्तरं च सङ्ख्यातानि सागरोपमाणि, यतो नानन्तकालमनुत्तरविमानच्युतः संसरति, तानि च जीवसमासमतेन द्विसङ्ख्यानीति ॥ अथ वैक्रियशरीरदेशबन्धकादीनामल्पत्वादिनिरूपणायाह—'एएसी'त्यादि, तत्र सर्वस्तोका वैक्रियसर्वबन्धकाः तत्कालस्याल्पत्वात्, देशबन्धका असङ्ख्यातगुणाः तत्कालस्य तदपेक्षयाऽसङ्ख्येयगुणत्वात्, अबन्धकास्त्वनन्तगुणाः, सिद्धानां वनस्पत्यादीनां च तदपेक्षयाऽनन्तगुणत्वादिति ॥ अथाहारकशरीरप्रयोगबन्धमधिकृत्याह—'आहारे'त्यादि, 'एगागारे'त्ति एकः प्रकारो नौदारिकादिवन्धव-

देकेन्द्रियाद्यनेकप्रकार इत्यर्थः, 'सव्वबंधे एक्कं समयं'ति आद्यसमय एव सर्वबन्धभावात्, 'देसबंधे जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं'ति, कथं?, जघन्यत उत्कर्षतश्चान्तर्मुहूर्त्तमात्रमेवाहारकशरीरी भवति, परत औदारिकशरीरस्यावश्यं ग्रहणात्, तत्र चान्तर्मुहूर्त्ते आद्यसमये सर्वबन्धः उत्तरकालं च देशबन्ध इति ॥ अथाहारकशरीरप्रयोगबन्धस्यैवान्तरनिरूपणायाह—'आहारे'त्यादि, 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं?, मनुष्य आहारकशरीरं प्रतिपन्नस्तत्प्रथमसमये च सर्वबन्धकस्ततोऽन्तर्मुहूर्त्तमात्रं स्थित्वौदारिकशरीरं गतस्तत्राप्यन्तर्मुहूर्त्तं स्थितः, पुनरपि च तस्य संशयादि आहारकशरीरकरणकारणमुत्पन्नं ततः पुनरप्याहारकशरीरं गृह्णाति, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धक एवेति, एवं च सर्वबन्धान्तरमन्तर्मुहूर्त्तं, द्वयोरप्यन्तर्मुहूर्त्तयोरेकत्वविवक्षणादिति, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं'ति, कथं?, यतोऽनन्तकालादाहारकशरीरं पुनर्लभत इति, कालानन्त्यमेव विशेषेणाह—'अणंताओ उस्सप्पिणीओ ओसप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अणंता लोग'त्ति, एतद्व्याख्यानं च प्राग्वत्, अथ तत्र पुद्गलपरावर्त्तपरिमाणं किं भवति? इत्याह—'अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं'ति, 'अपार्धम्' अपगतार्द्धमर्द्धमात्रमित्यर्थः 'पुद्गलपरावर्त्तं' प्रागुक्तस्वरूपम्, अपार्द्धमप्यर्द्धतः पूर्णं स्यादत आह—देशोनमिति। 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तमुत्कर्षतः पुनरपार्द्धं पुद्गलपरावर्त्तं देशोनं, भावना तु पूर्वोक्तानुसारेणेति ॥ अथाहारकशरीरदेशबन्धकादीनामल्पत्वादिनिरूपणायाह—'एएसि णं'मित्यादि, तत्र सर्वस्तोका आहारकस्य सर्वबन्धकास्तत्सर्वबन्धकालस्याल्पत्वात्, देशबन्धकाः सङ्ख्यातगुणास्तद्देशबन्धकालस्य बहुत्वात्, असङ्ख्यातगुणास्तु ते न भवन्ति, यतो मनुष्या अपि सङ्ख्याताः, किं पुनराहारकशरीरदेशबन्धकाः?, अबन्धकास्त्वनन्तगुणाः, आहारकशरीरं हि मनुष्याणां तत्रापि संयतानां तेषामपि केषाञ्चिदेव कदाचिदेव च भवतीति, शेषकाले ते शेषसत्त्वाश्चाबन्धकाः, ततश्च सिद्धवनस्पत्यादीनामनन्तगुणत्वादनन्तगुणास्त

इति ॥ अथ तैजसशरीरप्रयोगबन्धमधिकृत्याह—

तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—एगिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे बेइंदिय० तेइंदिय० जाव पंचिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे। एगिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?, एवं एएणं अभिलावेणं भेदो जहा ओगाहणसंठाणे जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयकप्पातीयवेमाणियदेवपंचिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे य अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयजावबंधे य। तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं?, गोयमा! वीरियसजोगसद्दव्वयाए जाव आउयं च पडुच्च तेयासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं तेयासरीरप्पयोगबंधे। तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे?, गोयमा! देसबंधे, नो सव्वबंधे। तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! दुविहे पण्णत्ते, तंजहा—अणाइए वा अपज्जवसिए, अणाइए वा सपज्जवसिए॥ तेयासरीरप्पयोगबंधंतरे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! अणाइयस्स अपज्जवसियस्स नत्थि अंतरं, अणाइयस्स सपज्जवसियस्स नत्थि अंतरं॥ एएसि णं भंते! जीवाणं तेयासरीरस्स देसबंधगाणं अबंधगाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा तेयासरीरस्स अबंधगा, देसबंधगा अणंतगुणा ४ (सूत्रं ३४९)॥

'तेये'त्यादि, 'नो सव्वबंधे'त्ति तैजसशरीरस्यानादित्वान्न सर्वबन्धोऽस्ति, तस्य प्रथमतः पुद्गलोपादानरूपत्वादिति। 'अणाइए वा अपज्जवसिए'इत्यादि, तत्रायं तैजसशरीरबन्धोऽनादिरपर्यवसितोऽभव्यानां, अनादिः सपर्यवसितस्तु भव्यानामिति॥ अथ तैज-

सशरीरप्रयोगबन्धस्यैवान्तरनिरूपणायाह—'तेये'त्यादि, 'अणाइयस्से'त्यादि, यस्मात्संसारस्थो जीवस्तैजसशरीरबन्धेन द्वयरूपेणापि सदाऽविनिर्मुक्त एव भवति तस्माद्द्वयरूपस्याप्यस्य नास्त्यन्तरमिति ॥ अथ तैजसशरीरदेशबन्धकाबन्धकानामल्पत्वादिनिरूपणायाह—'एएसी'त्यादि, तत्र सर्वस्तोकास्तैजसशरीरस्याबन्धकाः, सिद्धानामेव तदबन्धकत्वात्, देशबन्धकास्त्वनन्तगुणास्तद्देशबन्धकानां सकलसंसारिणां सिद्धेभ्योऽनन्तगुणत्वादिति ॥ अथ कार्म्मणशरीरप्रयोगबन्धमधिकृत्याह—

कम्मासरीरपयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! अट्ठविहे पण्णत्ते, तंजहा—नाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे जाव अंतराइयकम्मासरीरप्पयोगबंधे । णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! नाणपडिणीययाए णाणणिण्हवणयाए णाणंतराएणं णाणप्पदोसेणं णाणच्चासादणाए णाणविसंवादणाजोगेणं णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे । दरिसणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! दंसणपडिणीययाए, एवं जहा णाणावरणिज्जं नवरं दंसणनाम घेत्तव्वं जाव दंसणविसंवादणाजोगेणं दरिसणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं जावप्पओगबंधे । सायावेयणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! पाणाणुकंपयाए भूयाणुकंपयाए एवं जहा सत्तमसए दसमोद्देसए जाव अपरियावणयाए सायावेयणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं सायावेयणिज्जकम्मा जाव बंधे । अस्सायावेयणिज्जपुच्छा, गोयमा ! परदुक्खणयाए परसोयणयाए जहा सत्तमसए दसमोद्देसए जाव परियावणयाए अस्सायवेयणिज्जकम्मा

जाव पयोगबंधे। मोहणिज्जकम्मासरीरप्पयोग पुच्छा, गोयमा! तिव्वकोहयाए तिव्वमाणयाए तिव्वमायाए तिव्वलोभाए तिव्वदंसणमोहणिज्जयाए तिव्वचरित्तमोहणिज्जयाए मोहणिज्जकम्मासरीरजावपयोगबंधे। नेरइयाउयकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! पुच्छा, गोयमा! महारंभयाए महापरिग्गहयाए कुणिमाहारेणं पंचिंदियवहेणं नेरइयाउयकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं नेरइयाउयकम्मासरीरजाव पयोगबंधे। तिरिक्खजोणीयाउयकम्मासरीरप्पओगपुच्छा, गोयमा! माइल्लियाए नियडिल्लयाए अलियवयणेणं कूडतुलकूडमाणेणं तिरिक्खजोणियकम्मासरीरजावप्पयोगबंधे। मणुस्सआउयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा! पगइभद्दयाए पगइविणीययाए साणुक्कोसयाए अमच्छरियाए मणुस्साउयकम्मा जावपयोगबंधे। देवाउयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा! सरागसंजमेणं संजमासंजमेणं बालतवोकम्मेणं अकामनिज्जराए देवाउयकम्मासरीर जावपयोगबंधे॥ सुभनामकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा! कायउज्जुययाए भावुज्जुययाए भासुज्जुययाए अविसंवादणजोगेणं सुभनामकम्मासरीरजावप्पयोगबंधे। असुभनामकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा! कायअणुज्जुययाए भावअणुज्जुययाए भासणुज्जुयाए विसंवायणाजोगेणं असुभनामकम्माजाव पयोगबंधे। उच्चागोयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा! जातिअमदेणं कुलअमदेणं बलअमदेणं रूवअमदेणं तवअमदेणं सुयअमदेणं लाभअमदेणं इस्सरियअमदेणं उच्चागोयकम्मासरीरजाव पयोगबंधे, नीयागोयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा! जातिमदेणं कुलमदेणं बलमदेणं जाव इस्सरियमदेणं णीयागोयकम्मासरीरजावपयोगबंधे। अंतराइयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा! दाणंतराएणं लाभंतराएणं भोगंतराएणं उवभोगंतराएणं वीरियंतराएणं

अंतराइयकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं अंतराइयकम्मासरीरप्पयोगबंधे ॥ णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे?, गोयमा! देसबंधे, णो सव्वबंधे, एवं जाव अंतराइयकम्मा० । णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! णाणा० दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–अणाइए सपज्जवसिए अणाइए अपज्जवसिए वा, एवं जहा तेयगस्स संचिट्ठणा तहेव, एवं जाव अंतराइयकम्मस्स । णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधतरे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! अणाइयस्स एवं जहा तेयगसरीरस्स अंतरं तहेव, एवं जाव अंतराइयस्स। एएसि णं भंते! जीवाणं नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स देसबंधगाणं अबंधगाण य कयरे २ जाव अप्पाबहुगं जहा तेयगस्स, एवं आउयवज्जं जाव अंतराइयस्स। आउयस्स पुच्छा, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा आउयस्स कम्मस्स देसबंधगा, अबंधगा संखेज्जगुणा ५ ( सूत्रं ३५० ॥ )

'कम्मासरीरे'त्यादि, 'णाणपडिणीययाए'त्ति ज्ञानस्य–श्रुतादेस्तदभेदात् ज्ञानवतां वा या प्रत्यनीकता–सामान्येन प्रतिकूलता सा तथा तया, 'णाणनिण्हवणयाए'त्ति ज्ञानस्य–श्रुतस्य श्रुतगुरूणां वा या निह्नवता–अपलपनं सा तथा तया, 'नाणंतराएणं'ति ज्ञानस्य—श्रुतस्यान्तरायः—तद्ग्रहणादौ विघ्नो यः स तथा तेन, 'नाणपओसेणं'ति ज्ञाने–श्रुतादौ ज्ञानवत्सु वा यः प्रद्वेषः–अप्रीतिः स तथा तेन, 'नाणाऽच्चासायणाए'त्ति ज्ञानस्य ज्ञानिनां वा याऽत्याशातना–हीलना सा तथा तया, 'नाणविसंवायणाजोगेणं'ति ज्ञानस्य ज्ञानिनां वा विसंवादनयोगो–व्यभिचारदर्शनाय व्यापारो यः स तथा तेन, एतानि च बाह्यानि कारणानि ज्ञानावरणीयकार्म्मणशरीरबन्धे, अथाऽऽन्तरं कारणमाह—'नाणावरणिज्ज'मित्यादि, ज्ञानावरणीयहेतुत्वेन ज्ञानावरणीयल-

क्षणं यत्कार्म्मणशरीरप्रयोगनाम तत्तथा तस्य कर्म्मण उदयेनेति, 'दंसणपडिणीययाए'त्ति इह दर्शनं—चक्षुर्दर्शनादि, 'तिव्वदंसणमोहणिज्जयाए'त्ति तीव्रमिथ्यात्वतयेत्यर्थः 'तिव्वचरित्तमोहणिज्जयाए'ति कषायव्यतिरिक्तं नोकषायलक्षणमिह चारित्रमोहनीयं ग्राह्यं, तीव्रक्रोधतयेत्यादिना कषायचारित्रमोहनीयस्य प्रागुक्तत्वादिति, 'महारंभयाए'त्ति अपरिमितकृष्याद्यारम्भतयेत्यर्थः, 'महापरिग्गहयाए'त्ति अपरिमाणपरिग्रहतया 'कुणिमाहारेणं'ति मांसभोजनेनेति 'माइल्लयाए'त्ति परवञ्चनबुद्धिव( म )त्तया 'नियडिल्लयाए'निकृतिः—वञ्चनार्थं चेष्टा, मायाप्रच्छादनार्थं मायान्तरमित्येके, अत्यादरकरणेन परवञ्चनमित्यन्ये, तद्वत्तया, 'पगइभद्दयाए'त्ति स्वभावतः परानुतापितया 'साणुक्कोसयाए'त्ति सानुकम्पतया 'अमच्छरिययाए'त्ति मत्सरिकः—परगुणानामसोढा तद्भावनिषेधोऽमत्सरिकता तया ॥ 'सुभनामकम्मे'त्यादि, इह शुभनाम देवगत्यादिकं 'कायउज्जुययाए'त्ति कायर्जुकतया परावञ्चनपरकायचेष्टया 'भावुज्जुययाए'त्ति भावर्जुकतया, परावञ्चनपरमनःप्रवृत्त्येत्यर्थः, 'भासुज्जुययाए'त्ति भाषर्जुकतया, भाषाऽऽर्जवेनेत्यर्थः 'अविसंवायणाजोगेणं'ति विसंवादनं—अन्यथाप्रतिपन्नस्यान्यथाकरणं तद्रूपो योगो—व्यापारस्तेन वा योगः—सम्बन्धो विसंवादनयोगस्तन्निषेधादविसंवादनयोगस्तेन, इह च कायर्जुकतादित्रयं वर्त्तमानकालाश्रयं, अविसंवादनयोगस्त्वतीतवर्त्तमानलक्षणकालद्वयाश्रय इति ॥ 'असुभनामकम्मे'त्यादि, इह चाशुभनाम नरकगत्यादिकम् ॥ 'कम्मासरीरप्पओगबंधे णं'मित्यादि, कार्म्मणशरीरप्रयोगबन्धप्रकरणं तैजसशरीरप्रयोगबन्धप्रकरणवन्नेयं, यस्तु विशेषोऽसावुच्यते—'सव्वत्थोवा आउयस्स कम्मस्स देसबंधग'त्ति सर्वस्तोकत्वमेषामायुर्बन्धाद्धायाः स्तोकत्वादबन्धाद्धायास्तु बहुगुणत्वात्, तदबन्धकाः सङ्ख्यातगुणाः, नन्वसङ्ख्यातगुणास्तदबन्धकाः कस्मान्नोक्ताः? तदबन्धाद्धाया असङ्ख्यातजीवितानाश्रित्यासङ्ख्यातगुणत्वात्, उच्यते, इदमनन्तकायिकानाश्रित्य सूत्रं, तत्र

चानन्तकायिकाः सङ्ख्यातजीविता एव, ते चायुष्कस्याबन्धकास्तद्देशबन्धकेभ्यः सङ्ख्यातगुणा एव भवन्ति, यद्यबन्धकाः सिद्धादयस्तन्मध्ये क्षिप्यन्ते तथाऽपि तेभ्यः सङ्ख्यातगुणा एव ते, सिद्धाद्यबन्धकानामनन्तानामप्यनन्तकायिकायुर्बन्धकापेक्षयाऽनन्तभागत्वादिति । ननु यदायुषोऽबन्धकाः सन्तो बन्धका भवन्ति तदा कथं न सर्वबन्धसम्भवस्तेषाम् ?, उच्यते, न हि आयुःप्रकृतिरसती सर्वा तैर्निबध्यते औदारिकादिशरीरवदिति न सर्वबन्धसम्भव इति ॥ प्रकारान्तरेणौदारिकादि चिन्तयन्नाह—

जस्स णं भंते! ओरालियसरीरस्स सव्वबंधे से णं भंते! वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! नो बंधए, अबंधए, आहारगसरीरस्स किं बंधए अबंधए?, गोयमा ! नो बंधए, अबंधए, तेयासरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! बंधए, नो अबंधए, जइ बंधए किं देसबंधए सव्वबंधए?, गोयमा ! देसबंधए, नो सव्वबंधए, कम्मासरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, जहेव तेयगस्स जाव देसबंधए, नो सव्वबंधए ॥ जस्स णं भंते ! ओरालियसरीरस्स देसबंधे से णं भंते! वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! नो बंधए, अबंधए, एवं जहेव सव्वबंधेणं भणियं तहेव देसबंधेणवि भाणियव्वं जाव कम्मगस्स णं । जस्स णं भंते! वेउव्वियसरीरस्स सव्वबंधए से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए अबंधए?, गोयमा! नो बंधए, अबंधए, आहारगसरीरस्स एवं चेव, तेयगस्स कम्मगस्स य जहेव ओरालिएणं समं भाणियव्वं जाव देसबंधए नो सव्वबंधए। जस्स णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! नो बंधए अबंधए, एवं जहा सव्वबंधेणं भणियं तहेव देसबंधेणवि भणियं तहेव भाणियव्वं जाव कम्मगस्स। जस्स णं भंते ! आहारगसरीरस्स

सव्वबंधे से णं भंते! ओरालियसरीरस्स किं बंधए अबंधए?, गोयमा! नो बंधए, अबंधए, एवं वेउव्वियस्सवि, तेयाकम्माणं जहेव ओरालिएणं समं भणियं तहेव भाणियव्वं। जस्स णं भंते! आहारगसरीरस्स देसबंधे से णं भंते! ओरालियसरीर० एवं जहा आहारगसरीरस्स सव्वबंधेणं भणियं तहा देसबंधेणवि भाणियव्वं जाव कम्मगस्स। जस्स णं भंते! तेयासरीरस्स देसबंधे से णं भंते! ओरालियसरीरस्स किं बंधए अबंधए?, गोयमा! बंधए वा अबंधए वा, जइ बंधए किं देसबंधए सव्वबंधए?, गोयमा! देसबंधए वा, सव्वबंधए वा, वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए अबंधए?, एवं चेव, एवं आहारगसरीरस्सवि, कम्मगसरीरस्स किं बंधए अबंधए?, गोयमा! बंधए, नो अबंधए, जइ बंधए किं देसबंधए सव्वबंधए?, गोयमा! देसबंधए, नो सव्वबंधए। जस्स णं भंते! कम्मगसरीरस्स देसबंधे से णं भंते! ओरालियसरीरस्स जहा तेयगस्स वत्तव्वया भणिया तहा कम्मगस्सवि भाणियव्वा जाव तेयासरीरस्स जाव देसबंधए, नो सव्वबंधए ॥ ( सूत्रं ३५१ ) ॥

'जस्से'त्यादि, 'नो बंधए'त्ति, न ह्येकसमये औदारिकवैक्रियोर्बन्धो विद्यत इतिकृत्वा नो बन्धक इति, एवमाहारकस्यापि, तैजसस्य पुनः सदैवाविरहितत्वाद् बन्धको देशबन्धकेन, सर्वबन्धस्तु नास्त्येव तस्येति, एवं कार्म्मणशरीरस्यापि वाच्यमिति। एवमौदारिकसर्वबन्धमाश्रित्य शेषाणां बन्धचिन्तार्थः अनन्तरं दण्डक उक्तः, अथौदारिकस्यैव देशबन्धकमाश्रित्यान्यमाह—'जस्स ण'मित्यादि, अथ वैक्रियस्य सर्वबन्धमाश्रित्य शेषाणां बन्धचिन्तार्थोऽन्यो दण्डकः, तत्र च 'तेयगस्स कम्मगस्स य जहेवे'त्यादि, यथौदारिकशरीरसर्वबन्धकस्य तैजसकार्म्मणयोर्देशबन्धकत्वमुक्तमेवं वैक्रियशरीरसर्वबन्धकस्यापि तयोर्देशबन्धकत्वं वाच्यमिति भावः।

वैक्रियदेशबन्धदण्डक आहारकस्य सर्वबन्धदण्डको देशबन्धदण्डकश्च सुगम एव। तैजसदेशबन्धकदण्डके तु 'बंधए वा अबंधए वत्ति' तैजसदेशबन्धक औदारिकशरीरस्य बन्धको वा स्यादबन्धको वा, तत्र विग्रहे वर्त्तमानोऽबन्धकोऽविग्रहस्थः पुनर्बन्धकः, स एवोत्पत्तिक्षेत्रप्राप्तिप्रथमसमये सर्वबन्धको द्वितीयादौ तु देशबन्धक इति, एवं कार्म्मणशरीरदेशबन्धकदण्डकेऽपि वाच्यमिति ॥ अथौदारिकादिशरीरदेशबन्धकादीनामल्पत्वादिनिरूपणायाह—

एएसि णं भंते! सव्वजीवाणं ओरालियवेउव्वियआहारगतेयाकम्मासरीरगाणं देसबंधगाणं सव्वबंधगाणं अबंधगाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा आहारगसरीरस्स सव्वबंधगा १ तस्स चेव देसबंधगा संखेज्जगुणा २ वेउव्वियसरीरस्स सव्वबंधगा असंखेज्जगुणा ३ तस्स चेव देसबंधगा असंखेज्जगुणा ४ तेयाकम्मगाणं दुण्हवि तुल्ला अबंधगा अणंतगुणा ५ ओरालियसरीरस्स सव्वबंधगा अणंतगुणा ६ तस्स चेव अबंधगा विसेसाहिया ७ तस्स चेव देसबंधगा असंखेज्जगुणा ८ तेयाकम्मगाणं देसबंधगा विसेसाहिया ९ वेउव्वियसरीरस्स अबंधगा विसेसाहिया १० आहारगसरीरस्स अबंधगा विसेसाहिया ११। सेवं भंते! २ ॥ सूत्रं ( ३५२ ) अट्ठमसयस्स नवमो उद्देसओ संमत्तो ॥ ८-९ ॥



'एएसी'त्यादि, तत्र सर्वस्तोका आहारकशरीरस्य सर्वबन्धकाः, यस्मात्ते चतुर्दशपूर्वधरास्तथाविधप्रयोजनवन्त एव भवन्ति, सर्वबन्धकालश्च समयमेवेति, तस्यैव च देशबन्धकाः सङ्ख्येयगुणाः, देशबन्धकालस्य बहुत्वात्, वैक्रियशरीरस्य सर्वबन्धका असङ्ख्येयगुणाः, तेषां तेभ्योऽसङ्ख्यातगुणत्वात्, तस्यैव च देशबन्धका असङ्ख्येयगुणाः, सर्वबन्धाद्धापेक्षया देशबन्धाद्धाया असङ्ख्यातगुणत्वात्,

अथवा सर्वबन्धकाः प्रतिपद्यमानकाः, देशबन्धकास्तु पूर्वप्रतिपन्नाः, प्रतिपद्यमानकेभ्यश्च पूर्वप्रतिपन्नानां बहुत्वात् वैक्रियसर्वबन्धकेभ्यो देशबन्धका असङ्ख्येयगुणाः, तैजसकार्म्मणयोरबन्धका अनन्तगुणाः, यस्मात्ते सिद्धाः,ते च वैक्रियदेशबन्धकेभ्योऽनन्तगुणा एव, वनस्पतिवर्जसर्वजीवेभ्यः सिद्धानामनन्तगुणत्वादिति, औदारिकशरीरस्य सर्वबन्धका अनन्तगुणाः, ते च वनस्पतिप्रभृतीन् प्रतीत्य प्रत्येतव्याः, तस्यैव चाबन्धका विशेषाधिकाः, एते हि विग्रहगतिकाः सिद्धादयश्च भवन्ति, तत्र च सिद्धादीनामत्यन्ताल्पत्वेनेहाविवक्षा, विग्रहगतिकाश्च वक्ष्यमाणन्यायेन सर्वबन्धकेभ्यो बहुतरा इति तेभ्यस्तदबन्धका विशेषाधिका इति, तस्यैव चौदारिकस्य देशबन्धका असङ्ख्यातगुणाः, विग्रहाद्धापेक्षया देशबन्धाद्धाया असङ्ख्यातगुणत्वात्, तैजसकार्म्मणयोर्देशबन्धका विशेषाधिकाः, यस्मात्सर्वेऽपि संसारिणस्तैजसकार्म्मणयोर्देशबन्धका भवन्ति, तत्र च ये विग्रहगतिका औदारिकसर्वबन्धका वैक्रियादिबन्धकाश्च ते औदारिकदेशबन्धकेभ्योऽतिरिच्यन्त इति ते विशेषाधिका इति, वैक्रियशरीरस्याबन्धका विशेषाधिकाः, यस्माद्वैक्रियस्य बन्धकाः प्रायो देवनारका एव, शेषास्तु तदबन्धकाः सिद्धाश्च, तत्र च सिद्धास्तैजसादिदेशबन्धकेभ्योऽतिरिच्यन्ते इति ते विशेषाधिका उक्ताः, आहारकशरीरस्याबन्धका विशेषाधिकाः, यस्मान्मनुष्याणामेवाहारकशरीरं वैक्रियं तु तदन्येषामपि, ततो वैक्रियबन्धकेभ्य आहारकबन्धकानां स्तोकत्वेन वैक्रियाबन्धकेभ्य आहारकाबन्धका विशेषाधिका इति । इह चेयं स्थापना—

| ॥ ओराल० १ ॥ | ॥ वेउव्विय० २ ॥ | ॥ आहारग० ३ ॥ | ॥ तैजस० ४ ॥ | ॥ कार्म्मण० ५ |
|---|---|---|---|---|
| सव्वबंधा अणंता ६ देसबंधा असंखेज्ज० ८ ( विग्रहगति ) अबंधा विसेसाहिया ७ | सव्वबंध० असं० ३ देसबंध० असंखे ४ अबंधा विसेसा-हिया १० | सव्वबंध० थोवा १ देसबंध. संख्यातगुणा २ अबंधा विसेसा-हिया ११ | देसबंध. विसेसाहिया ९ अबंधा अणंता ५ | देसबंधा विसेसा-हिया ९ अबंधा अणंता ५ |

इहाल्पबहुत्वाधिकारे वृद्धा गाथा एवं प्रपञ्चितवन्तः—

ओरालसव्वबंधा थोवा अब्बंधया विसेसहिया। तत्तो य देसबंधा असंखगुणिया कहं नेया? ॥ १ ॥ पढमंमि सव्वबंधो समए सेसेसु देसबंधो उ। सिद्धाईण अबंधो विग्गहगइयाण य जियाणं ॥ २ ॥ इह पुण विग्गहिए च्चिय पडुच्च भणिया अबंधगा अहिया। सिद्धा अणंतभागंमि सव्वबन्धाणवि भवन्ति ॥ ३ ॥ उजुयाय एगवंका दुहओवंका गई भवे तिविहा। पढमाइ सव्वबंधा सव्वे बीयाइ अद्धं तु ॥ ४ ॥ तइयाइ तइयभंगो लब्भइ जीवाण सव्वबंधाणं। इति तिन्नि सव्वबंधा रासी तिन्नेव य अबंधा ॥ ५ ॥ रासिप्पमाणओ ते तुल्लाऽबंधा य सव्वबंधा य। संखापमाणओ पुण अबंधगा पुण जहब्भहिया ॥ ६ ॥ जे एगसमइया ते एग-निगोदंमि छद्दिसिं एंति। दुसमइया तिपयरिया तिसमइया सेसलोगाओ ॥ ७ ॥ तिरियाययं चउद्दिसि पयरमसंखप्पएसबाहल्लं। उड्ढं पुव्वावरदाहिणुत्तरायया य दो पयरा ॥८॥ जे तिपयरिया ते छद्दिसिएहिंतो भवंतऽसंखगुणा। सेसावि असंखगुणा खेत्तासंखेज्जगुणियत्ता

॥९॥एवं विसेसअहिया अबंधया सव्वबंधएहिंतो। तिसमइयविग्गहं पुण पडुच्च सुत्तं इमं होइ ॥१०॥ चउसमयविग्गहं पुण संखेज्जगुणा अबंधगा होंति । एएसिं निदरिसणं ठवणारासीहिँ वोच्छामि ॥११॥ पढमो होइ सहस्सं दुसमइया दोवि लक्खमेक्केक्कं । तिसमइया पुण तिन्निवि रासी कोडी भवेक्केक्का ॥ १२ ॥ एएसिं जहसंभवमत्थोवणयं करेज्ज रासीणं । एत्तो असंखगुणिया वोच्छं जह देसबंधा से ॥ १३ ॥ एगो असंखभागो वट्टइ उववट्टणोववायम्मि । एगनिगोए निच्चं एवं सेसेसुवि स एव ॥ १४ ॥ अंतोमुहुत्तमेत्ता ठिई निगोयाण जं विणिद्दिट्ठा । पल्लट्टंति निगोया तम्हा अंतोमुहुत्तेणं ॥ १५ ॥ तेसिं ठितिसमयाणं विग्गहसमया हवंति जइभागे एव-तिभागे सव्वे विग्गहिया सेसजीवाणं ॥ १६ ॥ सव्वेवि य विग्गहिया सेसाणं जं असंखभागंमि । तेणासंखगुणा देसबंधयाऽबंधए-हिंतो ॥ १७ ॥ वेउव्वियहारगतेयाकम्माइं पढियसिद्धाइं । तहवि विसेसो जत्थ तत्थ तं तं भणीहामि ॥ १८ ॥ वेउव्वियसव्वबंधा थोवा जे पढमसमयदेवाई । तस्सेव देसबंधा असंखगुणिया कहं के वा ? ॥ १९ ॥ तेसिं चिय जे सेसा ते सव्वे सव्वबंधए मोत्तुं होंति अबंधाणंता तव्वज्जा सेसजीवा जे ॥ २० ॥ आहारसव्वबंधा थोवा दो तिन्नि पंच वा दस वा । संखेज्जगुणा देसे ते उ पुहुत्त सहस्साणं ॥ २१ ॥ तव्वज्जा सव्वजिया अबंधया ते हवंतऽणंतगुणा । थोवा अबन्धया तेयगस्स संसारमुक्का जे ॥ २२ ॥ सेसा य देसबंधा तव्वज्जा ते हवंतऽणंतगुणा । एवं कम्मगभेयावि नवरि णाणत्तउम्मि ॥ २३ ॥ थोवा आउयबंधा संखेज्जगुणा अबंधया होंति । तेयाकम्माणं सव्वबंधगाअनत्थऽणाइता ॥ २४ ॥ अस्संखेज्जगुणा आउगस्स किमबंधगा न भन्नंति ? । जम्हा असंखभागो उव्वट्टइ एगसमएणं ॥ २५ ॥ भन्नइ एगसमइओ कालो उव्वट्टणाइ जीवाणं । बंधणकालो पुण आउगस्स अंतोमुहुत्तो उ ॥२६ ॥ जीवाण ठिइकाले आउयबंधद्धभाइए लद्धं । एवइभागे आउस्स बंधया सेसजीवाणं ॥ २७ ॥ जं संखेज्जतिभागो ठिइकालस्साउबंधकालो

उ । तम्हाऽसंखगुणा से अबंधया बंधएहिंतो ॥ २८ ॥ संजोगप्पाबहुयं आहारगसव्वबंधगा थोवा । तस्सेव देसबंधा संखगुणा ते य पुव्वुत्ता ॥ २९ ॥ तत्तो वेउव्वियसव्वबंधगा दरिसिया असंखगुणा । जमसंखा देवाई उववज्जंतेगसमएणं ॥ ३० ॥ तस्सेव देसबंधा असंखगुणिया हवंति पुव्वुत्ता । तेयगकम्माबंधा अणंतगुणिया य ते सिद्धा ॥ ३१ ॥ तत्तो उ अणंतगुणा ओरालियसव्वबंधगा होंति । तस्सेव ततोऽबंधा य देसबंधा य पुव्वुत्ता ॥३२॥ तत्तो तेयगकम्माण देसबंधा भवे विसेसहिया ॥ ते चेवोरालियदेसबंधगा होंतिमे वऽन्ने ॥ ३३ ॥ जे तस्स सव्वबंधा अबंधगा जे य नेरइयदेवा । एएहिं साहिया ते पुणाइ के ? सव्वसंसारी ॥ ३४ ॥ वेउव्वियस्स तत्तो अबंधगा साहिया विसेसेणं । ते चेव य नेरइयाइविरहिया सिद्धसंजुत्ता ॥ ३५ ॥ आहारगस्स तत्तो अबंधगा साहिया विसेसेणं । ते पुण के ? सव्वजीवा आहारगलद्धिए मोत्तुं ॥ ३६ ॥

इहौदारिकसर्वबन्धादीनामल्पत्वादिभावनार्थं सर्वबन्धादिस्वरूपं तावदुच्यते—इह ऋजुगत्या विग्रहगत्या चोत्पद्यमानानां जीवानामुत्पत्तिक्षेत्रप्राप्तिप्रथमसमये सर्वबन्धो भवति, द्वितीयादिषु तु देशबन्धः, सिद्धादीनामित्यत्रादिशब्दाद्वैक्रियादिबन्धकानां च जीवानामौदारिकस्याबन्ध इति, इह च सिद्धादीनामबन्धकत्वेऽप्यत्यन्ताल्पत्वेनाविवक्षणाद्वैग्रहिकानेव प्रतीत्य सर्वबन्धकेभ्योऽबन्धका विशेषाधिका उक्ता इति ॥१-२॥ एतदेवाह—साधारणेष्वपि सर्वबन्धभावात् सर्वबन्धकाः सिद्धेभ्योऽनन्तगुणाः, यत एवं ततः सिद्धास्तेषामनन्तभागे वर्त्तन्ते, यदि च सिद्धा अपि तेषामनन्तभागे वर्त्तन्ते तदा सुतरां वैक्रियबन्धकादय इति प्रतीयन्त एव, ततश्च तान् विहायैव सिद्धपदमेवाधीतमिति ॥३॥ अथ सर्वबन्धकानामबन्धकानां च समताभिधानपूर्वकमबन्धकानां विशेषाधिकत्वमुपदर्शयितुमाह—ऋज्वायतायां गतौ सर्वबन्धका एवाद्यसमये भवन्ति, एवमेकस्तेषां राशिः, एकवक्रया ये उत्पद्यन्ते तेषां ये प्रथमे समये तेऽबन्धकाः, ये द्वितीये

तु सर्वबन्धका इत्येवं तेषां द्वितीयो राशिः, स चैकवक्राभिधानद्वितीयगत्योत्पद्यमानानामर्द्धभूतो भवतीति, द्विवक्रया गत्या ये पुनरुत्पद्यन्ते ते आद्ये समयद्वयेऽबन्धकाः, तृतीये तु सर्वबन्धकाः, अयं च सर्वबन्धकानां तृतीयो राशिः, स च द्विवक्राभिधानतृतीयगत्योत्पद्यमानानां त्रिभागभूतो भवति, तृतीयसमयभावित्वात्तस्य, एवं च त्रयः सर्वबन्धकानां राशयः त्रय एव चाबन्धकानां, समयभेदेन राशिभेदादिति, एवं च ते राशिप्रमाणतस्तुल्या यद्यपि भवन्ति तथाऽपि सङ्ख्याप्रमाणतोऽधिका अबन्धका भवन्ति ॥ ४-५-६ ॥ ते चैवम्—ये एकसमयिका ऋजुगत्योत्पद्यमानका इत्यर्थः ते एकस्मिन्निगोदे- साधारणशरीरे लोकमध्यस्थिते षड्भ्यो दिग्भ्योऽनुश्रेण्याऽऽगच्छन्ति, ये पुनर्द्विसमयिका एकवक्रगत्योत्पद्यमाना इत्यर्थः ते त्रिप्रतरिकाः-प्रतरत्रयादागच्छन्ति, विदिशो वक्रेणाऽऽगमनात्, प्रतरश्च वक्ष्यमाणस्वरूपः, ये पुनस्त्रिसमयिकाः-समयत्रयेण वक्रद्वयेन चोत्पद्यमानकास्ते शेषलोकात् प्रतरत्रयातिरिक्तलोकादागच्छन्तीति ॥ ७ ॥ प्रतरप्ररूपणायाह—लोकमध्यगतैकनिगोदमधिकृत्य तिर्यगायतश्चतसृषु दिक्षु प्रतरः कल्प्यते, असङ्ख्येयप्रदेशबाहल्योः, विवक्षितनिगोदोत्पादकालोचितावगाहनाबाहल्य इत्यर्थः, तन्मात्रबाहल्यावेव 'उड्ढे'ति ऊर्द्धाधोलोकान्तगतौ पूर्वापरायतो दक्षिणोत्तरायतश्चेति द्वौ प्रतराविति ॥ ८ ॥ अथाधिकृतमल्पबहुत्वमुच्यते—ये जीवास्त्रिप्रतरिका एकवक्रया गत्योत्पत्तिमन्तस्ते षड्दिग्भ्य'—ऋजुगत्या षड्भ्यो दिग्भ्य आगतेभ्यः सकाशाद् भवन्त्यसङ्ख्यगुणाः, शेषा अपि ये त्रिसमयिकाः शेषलोकादागतास्तेऽप्यसङ्ख्येयगुणा भवन्ति, कुतः ?, क्षेत्रासङ्ख्यगुणितत्वाद्, यतः षड्दिक्क्षेत्रात्त्रिप्रतरमसङ्ख्येयगुणं, ततोऽपि शेषलोक इति ॥९॥ ततः किम् ? इत्याह—वक्रद्वयमाश्रित्येदं सूत्रमित्यर्थः ॥१०॥ प्रथम ऋजुगत्युत्पन्नसर्वबन्धकराशिः सहस्रं परिकल्पितं, क्षेत्रस्याल्पत्वात्, द्विसमयोत्पन्नानां द्वौ राशी, एकोऽबन्धकानामन्यः सर्वबन्धकानां, तौ च प्रत्येकं लक्षमानौ, तत्क्षेत्रस्य बहुतरत्वात्, ये पुनस्त्रिभिः समयैरुत्पद्यन्ते तेषां त्रयो राशयः,

तत्र चाद्ययोः समययोरबन्धकौ द्वौ राशी, तृतीयस्तु सर्वबन्धको राशिः, ते च त्रयोऽपि प्रत्येकं कोटीमानास्तत्क्षेत्रस्य बहुतमत्वादिति, तदेवं राशित्रयेऽपि सर्वबन्धकाः सहस्रं लक्षं कोटी चेत्येवं सर्वस्तोकाः, अबन्धकास्तु लक्षं कोटीद्वयं चेत्येवं विशेषाधिकास्त इति ॥१२॥ अनेन च गाथाद्वयेनोद्वर्त्तनाभणनाद्विग्रहसमयसम्भवः, अन्तर्मुहूर्त्तान्ते परिवर्त्तनाभणनाच्च निगोदस्थितिसमयमानमुक्तं, ततश्च अयमर्थः ॥१३-१४॥ तेषामेव वैक्रियबन्धकानां सर्वबन्धकान् मुक्त्वा ये शेषास्ते सर्वे वैक्रियस्य देशबन्धका भवन्ति, तत्र च सर्वबन्धकान् मुक्त्वेत्यनेन कथमित्यस्य निर्वचनमुक्तं, ये शेषा इत्यनेन तु के वेत्यस्येति, अबन्धकास्तु तस्यानन्ता भवन्ति, ते च के?, ये तद्वर्जा–वैक्रियसर्वदेशबन्धकवर्जाः शेषजीवाः, ते चौदारिकादिबन्धकाः देवादयश्च वैग्रहिका इति ॥ १५–२१ ॥ 'तद्वर्जाः' आहारकबन्धवर्जाः सर्वजीवा अबन्धका इत्याहारकाबन्धस्वरूपमुक्तं, ते च पूर्वेभ्योऽनन्तगुणा भवन्ति ॥२२–२४॥ सङ्ख्यातगुणा आयुष्काबन्धका इति यदुक्तं तत्र प्रश्नयन्नाह—एकोऽसङ्ख्यभागो निगोदजीवानां सर्वदोद्वर्त्तते, स च बद्धायुषामेव, तदन्येषामुद्वर्त्तनाऽभावात्, तेभ्यश्च ये शेषास्तेऽबद्धायुषः, ते च तदपेक्षयाऽसङ्ख्यातगुणा एवेत्येवमसङ्ख्यगुणा आयुष्काबन्धकाः स्युरिति, ॥ २५ ॥ अत्रोच्यते, निगोदजीवभवकालापेक्षया तेषामायुर्बन्धकालः सङ्ख्यातभागवृत्तिरित्यबन्धकाः सङ्ख्यातगुणा एव ॥ एतदेव भाव्यते–निगोदजीवानां स्थितिकालोऽन्तर्मुहूर्त्तमानः, स च कल्पनया समयलक्षं, तत्र 'आयुर्बन्धाद्धया' आयुर्बन्धकालेनान्तर्मुहूर्त्तमानेनैव कल्पनया समयसहस्रलक्षणेन भाजिते सति यल्लब्धं कल्पनया शतरूपं एतावति भागे वर्त्तन्ते आयुर्बन्धकाः 'सेसजीवाणं'ति शेषजीवानां, तदबन्धकानामित्यर्थः, तत्र किल लक्षापेक्षया शतं सङ्ख्येयतमो भागोऽतो बन्धकेभ्योऽबन्धकाः सङ्ख्येयगुणा भवन्तीति ॥ २६–२७ ॥ एतदेव भाव्यते—॥ २८ ॥ समासोऽयं बन्धः ॥ अष्टमशते नवमः ॥ ८–९ ॥

प्र०आ०४११

अनन्तरोद्देशके बन्धादयोऽर्था उक्ताः, तांश्च श्रुतशीलसंपन्नाः पुरुषा विचारयन्तीति श्रुतादिसंपन्नपुरुषप्रभृतिपदार्थविचारणार्थो दशम उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे नगरे जाव एवं वयासी–अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव एवं परूवेंति–एवं खलु सीलं सेयं १ सुयं सेयं २ सुयं सेयं ३ सीलं सेयं ४, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! जन्नं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि, एवं खलु मए चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता तंजहा–सीलसंपन्ने णामं एगे णो सुयसंपन्ने १ सुयसंपन्ने नामं एगे नो सीलसंपन्ने २ एगे सीलसंपन्नेवि सुयसंपन्नेवि ३ एगे णो सीलसंपन्ने नो सुयसंपन्ने ४, तत्थ णं जे से पढमे पुरिसजाए से णं पुरिसे सीलवं असुयवं, उवरए अविन्नायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे देसाराहए पण्णत्ते, तत्थ णं जे से दोचे पुरिसजाए से णं पुरिसे असीलवं सुयवं, अणुवरए विन्नायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे देसविराहए पण्णत्ते, तत्थ णं जे से तच्चे पुरिसजाए से णं पुरिसे सीलवं सुयवं, उवरए विन्नायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे सव्वाराहए पन्नत्ते, तत्थ णं जे से चउत्थे पुरिसजाए से णं पुरिसे असीलवं असुतवं, अणुवरए अविण्णायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे सव्वविराहए पन्नत्ते ॥ ( सूत्रं ३५३ ) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, तत्र च 'एवं खलु सीलं सेयं १ सुयं सेयं २ सुयं सेयं ३ सीलं सेयं ४' इत्येतस्य चूर्ण्यनुसारेण व्याख्या–'एवं' लोकसिद्धन्यायेन 'खलु'निश्चयेन इहान्ययूथिकाः केचित् क्रियामात्रादेवाभीष्टार्थसिद्धिमिच्छन्ति, न च किञ्चिदपि ज्ञानेन प्रयोजनं,

निश्चेष्टत्वात्, घटादिकरणप्रवृत्तावाकाशादिपदार्थवत्, पठ्यते च–"क्रियैव फलदा पुंसां, न ज्ञानं फलदं मतम् । यतः स्त्रीभक्ष्यभोगज्ञो, न ज्ञानात् सुखितो भवेत् ॥१॥ " तथा–"जहा खरो चंदणभारवाही, भारस्स भागी न हु चंदणस्स । एवं खु नाणी चरणेण हीणो, नाणस्स भागी न हु सोगईए ॥ १ ॥ " अतस्ते प्ररूपयन्ति–शीलं श्रेयः प्राणातिपातादिविरमणध्यानाध्ययनादिरूपा क्रियैव श्रेयः–अतिशयेन प्रशस्यं श्लाघ्यं पुरुपार्थसाधकत्वात्, श्रेयं वा–समाश्रयणीयं पुरुपार्थविशेपार्थिना, अन्ये तु ज्ञानादेवेष्टार्थसिद्धिमिच्छन्ति, न क्रियातः, ज्ञानविकलस्य क्रियावतोऽपि फलसिद्ध्यदर्शनात्, अधीयते च—"विज्ञप्तिः फलदा पुंसां, न क्रिया फलदा मता । मिथ्याज्ञानात् प्रवृत्तस्य, फलासंवाददर्शनात्॥१॥" तथा–पढमं नाणं तओ दया, एवं चिट्ठइ सव्वसंजए । अन्नाणी किं काही ? किं वा नाही छेयपावयं ? ॥१॥ " अतस्ते प्ररूपयन्ति–श्रुतं श्रेयः, श्रुतं–श्रुतज्ञानं तदेव श्रेयः–अतिप्रशस्यसमाश्रयणीयं वा पुरुपार्थसिद्धिहेतुत्वात्, न तु शीलमिति, अन्ये तु ज्ञानक्रियाभ्यामन्योऽन्यनिरपेक्षाभ्यां फलमिच्छन्ति, ज्ञानं क्रियाविकलमेवोपसर्जनीभूतक्रियं वा फलदं क्रियाऽपि ज्ञानविकला उपसर्जनीभूतज्ञाना वा फलदेति भावः, भणन्ति च—" किञ्चिद्वेदमयं पात्रं, किञ्चित्पात्रं तपोमयम् । आगमिष्यति तत्पात्रं, यत्पात्रं तारयिष्यति ॥ १ ॥ " अतस्ते प्ररूपयन्ति–श्रुतं श्रेयः तथा शीलं श्रेयः २, द्वयोरपि प्रत्येकं पुरुषस्य पवित्रतानिबन्धनत्वादिति, अन्ये तु व्याचक्षते–शीलं श्रेयस्तावन्मुख्यवृत्त्या, तथा श्रुतं श्रेयः–श्रुतमपि श्रेयो गौणवृत्त्या, तदुपकारित्वादित्यर्थः, इत्येकीयं मतं, अन्यदीयमतं तु श्रुतं श्रेयस्तावत् तथा शीलमपि श्रेयो गौणवृत्त्या तदुपकारित्वादित्यर्थः, अयं चार्थ इह सूत्रे काकुपाठाल्लभ्यते, एतस्य च प्रथमव्याख्यानेऽन्ययूथिकमतस्य मिथ्यात्वं, पूर्वोक्तपक्षत्रयस्यापि फलसिद्धावनङ्गत्वात्, समुदायपक्षस्यैव च फलसिद्धिकारणत्वात्, आह च–"णाणं पयासयं सोहओ तवो संजमो य गुत्तिकरो। तिण्हंपि समाओगे मोक्खो जिणसासणे भणिओ ॥१॥"

तपःसंयमौ च शीलमेव, तथा—" संजोगसिद्धीइ फलं वयंति, न हु एगचक्केण रहो पयाइ। अंधो य पंगू य वणे समिच्चा, ते संपउत्ता नगरं पविट्ठा ॥१॥" इति, द्वितीयव्याख्यानपक्षेऽपि मिथ्यात्वं, संयोगतः फलसिद्धेर्दृष्टत्वाद्, एकैकस्य प्रधानेतरविवक्षाया असत्त्वादिति, अहं पुनर्गौतम! एवमाख्यामि यावत्प्ररूपयामीत्यत्र श्रुतयुक्तं शीलं श्रेयः इत्येतावान् वाक्यशेषो दृश्यः, अथ कस्मादेवं ?, अत्रोच्यते–'एव'मित्यादि, एवं वक्ष्यमाणन्यायेन–'पुरिसजाय'त्ति पुरुषप्रकाराः 'सीलवं असुयवं'ति कोऽर्थः ?, 'उवरए अविन्नायधम्मे'त्ति 'उपरतः' निवृत्तः स्वबुद्ध्या पापात् 'अविज्ञातधर्मा' भावतोऽनधिगतश्रुतज्ञानो, बालतपस्वीत्यर्थः, गीतार्थानिश्रिततपश्चरणनिरतोऽगीतार्थ इत्यन्ये, 'देसाराहए'त्ति देशं–स्तोकमंशं मोक्षमार्गस्याराधयतीत्यर्थः, सम्यग्बोधरहितत्वात् क्रियापरत्वाच्चेति, 'असीलवं सुयवं'ति कोऽर्थः ?–'अणुवरए विन्नायधम्मे'त्ति पापादनिवृत्तो विज्ञातधर्मा च अविरतिसम्यग्दृष्टिरितिभावः, 'देसविराहए'त्ति देशं–स्तोकमंशं ज्ञानादित्रयरूपस्य मोक्षमार्गस्य तृतीयभागरूपं चारित्रं विराधयतीत्यर्थः, प्राप्तस्य तस्यापालनादप्राप्तेर्वा, 'सव्वाराहए'त्ति सर्वं–त्रिप्रकारमपि मोक्षमार्गमाराधयतीत्यर्थः, श्रुतशब्देन ज्ञानदर्शनयोः सङ्गृहीतत्वात्, न हि मिथ्यादृष्टिर्विज्ञातधर्मा तत्त्वतो भवतीति, एतेन समुदितयोः शीलश्रुतयोः श्रेयस्त्वमुक्तमिति 'सव्वाराहए'इत्युक्तम् ॥ अथाराधनामेव भेदत आह—

कतिविहा णं भंते! आराहणा पण्णत्ता?, गोयमा! तिविहा आराहणा पण्णत्ता, तंजहा–नाणाराहणा दंसणाराहणा चरित्ताराहणा। णाणाराहणा णं भंते! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा—उक्कोसिया मज्झिमा जहन्ना। दंसणाराहणा णं भंते!०, एवं चेव तिविहावि। एवं चरित्ताराहणावि ॥ जस्स णं भंते! उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा जस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स उक्कोसिया

णाणाराहणा?, गोयमा! जस्स उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स दंसणाराहणा उक्कोसिया वा अजहन्नउक्कोसिया वा, जस्स पुण उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स नाणाराहणा उक्कोसा वा जहन्ना वा अजहन्नमणुक्कोसा वा, जस्स णं भंते! उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स उक्कोसिया चरित्ताराहणा जस्सुक्कोसिया चरित्ताराहणा तस्सुक्कोसिया णाणाराहणा, जहा उक्कोसिया णाणाराहणा य दंसणाराहणा य भणिया तहा उक्कोसिया नाणाराहणा य चरित्ताराहणा य भाणियव्वा। जस्स णं भंते! उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्सुक्कोसिया चरित्ताराहणा जस्सुक्कोसिया चरित्ताराहणा तस्सुक्कोसिया दंसणाराहणा?, गोयमा! जस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स चरित्ताराहणा उक्कोसा वा जहन्ना वा अजहन्नमणुक्कोसा वा, जस्स पुण उक्कोसिया चरित्ताराहणा तस्स दंसणाराहणा नियमा उक्कोसा ॥ उक्कोसियं णं भंते! णाणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?, गोयमा! अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति [अत्थेगतिए दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति] अत्थेगतिए कप्पोवएसु वा कप्पातीएसु वा उववज्जंति, उक्कोसियं णं भंते! दंसणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गणेहिं, एवं चेव, उक्कोसियण्णं भंते! चरित्ताराहणं आराहेत्ता, एवं चेव, नवरं अत्थेगतिए कप्पातीयएसु उववज्जंति। मज्झिमियं णं भंते! णाणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?, गोयमा! अत्थेगतिए दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति तच्चं पुण भवग्गहणं नाइक्कमइ, मज्झिमियं णं भंते! दंसणाराहणं आराहेत्ता एवं चेव, एवं मज्झिमियं चरित्ताराहणंपि। जहन्नियन्नं भंते! नाणाराहणं आरा-

हेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झंति जाव अंतं करेंति?, गोयमा! अत्थेगतिए तच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झइ जाव अंतं करेइ सत्तट्ठभवग्गहणाइं पुण नाइक्कमइ, एवं दंसणाराहणंपि, एवं चरित्ताराहणंपि ॥ (सूत्रं ३५४) ॥

'कतिविहा ण'मित्यादि, 'आराहण'त्ति आराधना-निरतिचारतयाऽनुपालना, तत्र ज्ञानं पञ्चप्रकारं श्रुतं वा तस्याराधना—कालाद्युपचारकरणं दर्शनं-सम्यक्त्वं तस्याराधना-निःशङ्कितत्वादितदाचारानुपालनं चारित्रं-सामायिकादि तदाराधना-निरतिचारता, 'उक्कोसिय'त्ति उत्कर्षा ज्ञानाराधना ज्ञानकृत्यानुष्ठानेषु प्रकृष्टप्रयत्नता 'मज्झिम'त्ति तेष्वेव मध्यमप्रयत्नता 'जहन्न'त्ति तेष्वेवाल्पतमप्रयत्नता। एवं दर्शनाराधना चारित्राराधना चेति॥ अथोक्ताऽऽराधनाभेदानामेव परस्परोपनिबन्धमभिधातुमाह—'जस्स ण'-मित्यादि, 'अजहन्नुकोसा व'त्ति जघन्या चासौ उत्कर्षा च-उत्कृष्टा जघन्योत्कर्षा तन्निषेधादजघन्योत्कर्षा मध्यमेत्यर्थः, उत्कृष्टज्ञानाराधनावतो हि आद्ये द्वे दर्शनाराधने भवतो, न पुनस्तृतीया, तथास्वभावत्वात्तस्येति। 'जस्स पुणे'त्यादि,उत्कृष्टदर्शनाराधनावतो हि ज्ञानं प्रति त्रिप्रकारस्यापि प्रयत्नस्य सम्भवोऽस्तीति त्रिप्रकाराऽपि तदाराधना भजनया भवतीति। उत्कृष्टज्ञानचारित्राराधनासंयोगसूत्रे तूत्तरं-यस्योत्कृष्टा ज्ञानाराधना तस्य चारित्राराधना उत्कृष्टा मध्यमा वा स्यात्, उत्कृष्टज्ञानाराधनावतो हि चारित्रं प्रति नाल्पतमप्रयत्नता स्यात्तत्स्वभावत्वात् तस्येति, उत्कृष्टचारित्राराधनावतस्तु ज्ञानं प्रति प्रयत्नत्रयमपि भजनया स्यात्, एतदेवातिदेशत आह-'जहा उक्कोसिये'त्यादि, उत्कृष्टदर्शनचारित्राराधनासंयोगसूत्रे तूत्तरं-'जस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा' इत्यादि, यस्योत्कृष्टा दर्शनाराधना तस्य चारित्राराधना त्रिविधाऽपि भजनया स्यात्, उत्कृष्टदर्शनाराधनावतो हि चारित्रं प्रति प्रयत्नस्य त्रिविधस्याप्यविरुद्धत्वादिति। उत्कृष्टायां तु चारित्राराधनायामुत्कृष्टैव दर्शनाराधना, प्रकृष्टचारित्रस्य प्रकृष्टदर्शनानुगतत्वादिति॥ अथाराधनाभेदानां फल

प्रदर्शनायाह—'उक्कोसियं ण'मित्यादि, 'तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झइ'त्ति उत्कृष्टां ज्ञानाराधनामाराध्य तेनैव भवग्रहणेन सिद्धयति, उत्कृष्टचारित्राराधनायाः सद्भावे, 'कप्पोवएसु व'त्ति 'कल्पोपगेषु' सौधर्मादिदेवलोकोपगेषु देवेषु मध्ये उपपद्यते, मध्यमचारित्राराधनासद्भावे, 'कप्पातीएसु व' ग्रैवेयकादिदेवेषूत्पद्यते, मध्यमोत्कृष्टचारित्राराधनासद्भावे इति, तथा—'उक्कोसियं णं भंते ! दंसणाराहण'मित्यादि, 'एवं चेव'त्ति करणात् 'तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झइ'इत्यादि दृश्यं, तद्भवसिद्धयादि च तस्यां स्यात्, चारित्राराधनायास्तत्रोत्कृष्टाया मध्यमायाश्चोक्तत्वादिति, तथा-'उक्कोसियण्णं भंते ! चारित्ताराहण'मित्यादौ 'एवं चेव'त्ति करणात् 'तेणेव भवग्गहणेण'मित्यादि दृश्यं, केवलं तत्र 'अत्थेगइए कप्पोवगेसु वे' त्यभिहितमिह तु तन्न वाच्यं, उत्कृष्टचारित्राराधनावतः सौधर्मादिकल्पेष्वगमनाद्, वाच्यं पुनः 'अत्थेगइए कप्पातीएसु उववज्जइ'त्ति सिद्धिगमनाभावे तस्यानुत्तरसुरेषु गमनात्, एतदेव दर्शयतोक्तं-'नवर'मित्यादि । मध्यमज्ञानाराधनासूत्रे मध्यमत्वं ज्ञानाराधनाया अधिकृतभव एव निर्वाणाभावात्, भावे पुनरुत्कृष्टत्वमवश्यम्भावीत्यवसेयं, निर्वाणान्यथाऽनुपपत्तेरिति, 'दोच्चेणं'ति अधिकृतमनुष्यभवापेक्षया द्वितीयेन मनुष्यभवेन 'तच्चं पुण भवग्गहणं'ति अधिकृतमनुष्यभवग्रहणापेक्षया तृतीयं मनुष्यभवग्रहणं, एताश्च चारित्राराधनासंवलिता ज्ञानाद्याराधना इह विवक्षिताः, कथमन्यथा जघन्यज्ञानाराधनामाश्रित्य वक्ष्यति 'सत्तट्ठभवग्गहणाइं पुण णाइक्कमइ'त्ति, यतश्चारित्राराधनाया एवेदं फलमुक्तं, यदाह—"अट्ठभवा उ चरित्ते"त्ति, श्रुतसम्यक्त्वदेशविरतिभवास्त्वसङ्ख्येया उक्ताः, ततश्चरणाराधनारहिता ज्ञानदर्शनाराधना असङ्ख्येयभविका अपि भवन्ति, नत्वष्टभविका एवेति ॥ अनन्तरं जीवपरिणाम उक्तः, अथ पुद्गलपरिणामाभिधानायाह—

कतिविहे णं भंते ! पोग्गलपरिणामे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पोग्गलपरिणामे पण्णत्ते, तंजहा—वन्नपरि-

णामे १ गंधप० २ रसप० ३ फासप० ४ संठाणप० ५। वन्नपरिणामे णं कइविहे पण्णत्ते?, गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—कालवन्नपरिणामे जाव सुक्किल्लवन्नपरिणामे, एवं एएणं अभिलावेणं गंधपरिणामे दुविहे रसपणामे पंचविहे फासपरिणामे अट्ठविहे, संठाणप० भंते! कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—परिमंडलसंठाणपरिणामे जाव आययसंठाणपरिणामे ॥ (सूत्रं ३५५) ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, 'वन्नपरिणामे'त्ति यत्पुद्गलो वर्णान्तरत्यागाद्वर्णान्तरं यात्यसौ वर्णपरिणाम इति, एवमन्यत्रापि, 'परिमंडलसंठाणपरिणामे'त्ति इह परिमण्डलसंस्थानं वलयाकारं, यावत्करणाच्च 'वट्टसंठाणपरिणामे तंससंठाणपरिणामे चउरंससंठापरिणामे'त्ति दृश्यम् ॥ पुद्गलाधिकारादिदमाह—

एगे भंते! पोग्गलत्थिकायपएसे किं दव्वं १ दव्वदेसे २ दव्वाइं ३ दव्वदेसा ४ उदाहु दव्वं च दव्वदेसे य ५ उदाहु दव्वं च दव्वदेसा य ६ उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसे य ७ उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसा य ८?, गोयमा! सिय दव्वं सिय दव्वदेसे, नो दव्वाइं नो दव्वदेसा नो दव्वं च दव्वदेसे य जाव नो दव्वाइं च दव्वदेसा य ॥ दो भंते! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं दव्वदेसे पुच्छा तहेव, गोयमा! सिय दव्वं १ सिय दव्वदेसे २ सिय दव्वाइं ३ सिय दव्वदेसा ४ सिय दव्वं च दव्वदेसे य ५ नो दव्वं च दव्वदेसा य ६ सेसा पडिसेहेयव्वा ॥ तिन्नि भंते! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं दव्वदेसे०? पुच्छा, गोयमा! सिय दव्वं १ सिय दव्वदेसे २ एवं सत्त भंगा भाणियव्वा, जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसे य नो दव्वाइं दव्वदेसा य। चत्तारि भंते! पोग्गलत्थिकायपएसा किं

दव्वं ? पुच्छा, गोयमा! सिय दव्वं १ सिय दव्वदेसे २ अट्ठवि भंगा भाणियव्वा जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसा य ८। जहा चत्तारि भणिया एवं पंच छ सत्त जाव असंखेज्जा। अणंता भंते! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं० ?, एवं चेव जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसा य ॥ (सूत्रं ३५६) केवतिया णं भंते! लोयागासपएसा पन्नत्ता ?, गोयमा! असंखेज्जा लोयागासपएसा पन्नत्ता ॥ एगमेगस्स णं भंते! जीवस्स केवइया जीवपएसा पण्णत्ता ?, गोयमा! जावतिया लोगागासपएसा एगमेगस्स णं जीवस्स एवतिया जीवपएसा पण्णत्ता ॥ ( सूत्रं ३५७ ) ॥

'एगे भंते! पोग्गलत्थिकाये'इत्यादि, पुद्गलास्तिकायस्य-एकाणुकादिपुद्गलराशेः प्रदेशो-निरंशोऽंशः पुद्गलास्तिकायप्रदेशः-परमाणुः द्रव्यं-गुणपर्याययोगि द्रव्यदेशो-द्रव्यावयवः, एवमेकत्वबहुत्वाभ्यां प्रत्येकविकल्पाश्चत्वारः, द्विकसंयोगा अपि चत्वार एवेति प्रश्नः, उत्तरं तु स्याद् द्रव्यं द्रव्यान्तरासम्बन्धे सति, स्याद् द्रव्यदेशो द्रव्यान्तरसम्बन्धे सति, शेषविकल्पानां तु प्रतिषेधः, परमाणोरेकत्वेन बहुत्वस्य द्विकसंयोगस्य चाभावादिति । 'दो भंते!'इत्यादि, इहाष्टासु भङ्गकेषु मध्ये आद्याः पञ्च भवन्ति, न शेषाः, तत्र द्वौ प्रदेशौ स्याद्द्रव्यं, कथं ?, यदा तौ द्विप्रदेशिकस्कन्धतया परिणतौ तदा द्रव्यं १, यदा तु द्व्यणुकस्कन्धभावगतावेव तौ द्रव्यान्तरसम्बन्धमुपगतौ तदा द्रव्यदेशः २, यदा तु तौ द्वावपि भेदेन व्यवस्थितौ तदा द्रव्ये ३, यदा तु तावेव द्व्यणुकस्कन्धतामनापद्य द्रव्यान्तरेण सम्बन्धमुपगतौ तदा द्रव्यदेशौ ४, यदा पुनस्तयोरेकः केवलतया स्थितो द्वितीयश्च द्रव्यान्तरेण सम्बद्धस्तदा द्रव्यं च द्रव्यदेशश्चेति पञ्चमः, शेषविकल्पानां तु प्रतिषेधोऽसम्भवादिति ॥ 'तिन्नि भंते!' इत्यादि, त्रिषु प्रदेशेष्वष्टमविकल्पवर्जाः सप्त विकल्पाः संभवन्ति, तथाहि-यदा त्रयोऽपि त्रिप्रदेशिकस्कन्धतया परिणतास्तदा द्रव्यं १, यदा तु त्रिप्रदेशिकस्कन्धतापरिणता

एव द्रव्यान्तरसम्बन्धमुपगतास्तदा द्रव्यदेशः, २, यदा पुनस्ते त्रयोऽपि भेदेन व्यवस्थिता द्वौ वा द्व्यणुकीभूतावेकस्तु केवल एव स्थितस्तदा 'दव्वाइं'ति ३, यदा तु ते त्रयोऽपि स्कन्धतामनागता एव द्वौ वा द्व्यणुकीभूतावेकस्तु केवल एवेत्येवं द्रव्यान्तरेण संबद्धास्तदा 'दव्वदेसा'इति ४, यदा तु तेषां द्वौ द्व्यणुकतया परिणतावेकश्च द्रव्यान्तरेण संबद्धः अथवैकः केवल एव स्थितो द्वौ तु द्व्यणुकतया परिणम्य द्रव्यान्तरेण संबद्धौ तदा 'दव्वं च दव्वदेसे य'त्ति ५, यदा तु तेषामेकः केवल एव स्थितो द्वौ च भेदेन द्रव्यान्तरेण संबद्धौ तदा 'दव्वं च दव्वदेसा य'त्ति, यदा पुनस्तेषां द्वौ भेदेन स्थितावेकश्च द्रव्यान्तरेण संबद्धस्तदा 'दव्वाइं च दव्वदेसे य'त्ति ७, अष्टमविकल्पस्तु न संभवति, उभयत्र त्रिपु प्रदेशेषु बहुवचनाभावात्, प्रदेशचतुष्टयादौ त्वष्टमोऽपि संभवति, उभयत्रापि बहुवचनसद्भावादिति ॥ अनन्तरं परमाण्वादिवक्तव्यतोक्ता, परमाण्वादयश्च लोकाकाशप्रदेशावगाहिनो भवन्तीति तद्वक्तव्यतामाह—'केवइया णं'मित्यादि, 'असंखेज्ज'त्ति यस्मादसङ्ख्येयप्रदेशिको लोकस्तस्मात्तस्य प्रदेशा असङ्ख्येया इति ॥ प्रदेशाधिकारादेवेदमाह—'एगमेगस्से'त्यादि, एकैकस्य जीवस्य तावन्तः प्रदेशा यावन्तो लोकाकाशस्य, कथं ?, यस्माज्जीवः केवलिसमुद्घातकाले सर्वं लोकाकाशं व्याप्यावतिष्ठति तस्मात् लोकाकाशप्रदेशप्रमाणास्त इति ॥ जीवप्रदेशाश्च प्रायः कर्म्मप्रकृतिभिरनुगता इति तद्वक्तव्यतामभिधातुमाह—

प्र०आ०४२१

कति णं भंते! कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ, तंजहा—नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं, नेरइयाणं भंते! कइ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा! अट्ठ, एवं सव्वजीवाणं अट्ठ कम्मपगडीओ ठावेयव्वाओ जाव वेमाणियाणं। नाणावरणिज्जस्स णं भंते! कम्मस्स केवतिया अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता ?, गोयमा! अणंता अविभागपरिच्छेदा पण्णत्ता, नेरइयाणं भंते! णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स

केवतिया अविभागपलिच्छेया पण्णत्ता ?, गोयमा ! अणंता अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता, एवं सव्वजीवाणं जाव वेमाणियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता, एवं जहा णाणावरणिज्जस्स अविभागपलिच्छेदा भणिया तहा अट्ठण्हवि कम्मपगडीणं भाणियव्वा जाव वेमाणियाणं, अंतराइयस्स। एगमेगस्स णं भंते ! जीवस्स एगमेगे जीवपएसे णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवइएहिं अविभागपलिच्छेदेहिं आवेढिए परिवेढिए सिया ?, गोयमा ! सिय आवेढियपरिवेढिए सिय नो आवेढियपरिवेढिए, जइ आवेढियपरिवेढिए नियमा अणंतेहिं, एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स एगमेगे जीवपएसे णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवइएहिं अविभागपलिच्छेदेहिं आवेढिए परिवेढिते ?, गोयमा ! नियमा अणंतेहिं, जहा नेरइयस्स एवं जाव वेमाणियस्स, नवरं मणूसस्स जहा जीवस्स। एगमेगस्स णं भंते ! जीवस्स एगमेगे जीवपएसे दरिसणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवतिएहिं एवं जहेव नाणावरणिज्जस्स तहेव दंडगो भाणियव्वो जाव वेमाणियस्स, एवं जाव अंतराइयस्स भाणियव्वं, नवरं वेयणिज्जस्स आउयस्स णामस्स गोयस्स एएसिं चउण्हवि कम्माणं मणूसस्स जहा नेरइयस्स तहा भाणियव्वं, सेसं तं चेव ॥ ( सूत्रं ३५८ ) ॥

'कइ ण'मित्यादि, 'अविभागपलिच्छेद'त्ति परिच्छिद्यन्त इति परिच्छेदा—अंशास्ते च सविभागा अपि भवन्त्यतो विशेष्यन्ते—अविभागाश्च ते परिच्छेदाश्चेत्यविभागपरिच्छेदाः, निरंशा अंशा इत्यर्थः, ते च ज्ञानावरणीयस्य कर्म्मणोऽनन्ताः, कथं ?, ज्ञानावरणीयं यावतो ज्ञानस्याविभागान्—भेदान् आवृणोति तावन्त एव तस्याविभागपरिच्छेदाः, दलिकापेक्षया वाऽनन्ततत्परमाणुरूपाः,

'अविभागपलिच्छेदेहिं'ति तत्परमाणुभिः 'आवेढिए परिवेढिए'त्ति आवेष्टितपरिवेष्टितोऽत्यन्तं परिवेष्टित इत्यर्थः आवेष्टय परिवेष्टित इति वा 'सिय नो आवेढियपरिवेढिए'त्ति केवलिनं प्रतीत्य, तस्य क्षीणज्ञानावरणत्वेन तत्प्रदेशस्य ज्ञानावरणीयाविभागपलिच्छेदैरावेष्टनपरिवेष्टनाभावादिति। 'मणूसस्स जहा जीवस्स'त्ति 'सिय आवेढिये'त्यादि वाच्यमित्यर्थः, मनुष्यापेक्षयाऽऽवेष्टितपरिवेष्टितत्वस्य तदितरस्य च सम्भवात्। एवं दर्शनावरणीयमोहनीयान्तरायेष्वपि वाच्यं, वेदनीयायुष्कनामगोत्रेषु पुनर्जीवपद एव भजना वाच्या सिद्धापेक्षया, मनुष्यपदे तु नासौ, तत्र वेदनीयादीनां भावादित्येतदेवाह—'नवरं वेयणिज्जस्से'त्यादि ॥ अथ ज्ञानावरणं शेषैः सह चिन्त्यते—

जस्स णं भंते! नाणावरणिज्जं तस्स दरिसणावरणिज्जं जस्स दंसणावरणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं?, गोयमा! जस्स णं नाणावरणिज्जं तस्स दंसणावरणिज्जं नियमा अत्थि, जस्स णं दरिसणावरणिज्जं तस्सवि नाणावरणिज्जं नियमा अत्थि। जस्स णं भंते! णाणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं जस्स वेयणिज्जं तस्स णाणावरणिज्जं?, गोयमा! जस्स नाणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि, जस्स पुण वेयणिज्जं तस्स णाणावरणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि। जस्स णं भंते! नाणावरणिज्जं तस्स मोहणिज्जं जस्स मोहणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं?, गोयमा! जस्स नाणावरणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण मोहणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं नियमा अत्थि। जस्स णं भंते! णाणावरणिज्जं तस्स आउयं एवं जहा वेयणिज्जेण समं भणियं तहा आउएणवि समं भाणियव्वं, एवं नामेणवि, एवं गोएणवि समं, अंतराइएण समं जहा दरिसणावरणिज्जेण समं तहेव नियमा परो-

पदं भाणियव्वाणि १ ॥ जस्स णं भंते ! दरिसणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं जस्स वेयणिज्जं तस्स दरिसणावरणिज्जं, जहा नाणावरणिज्जं उवरिमेहिं सत्तहिं कम्मेहिं समं भणियं तहा दरिसणावरणिज्जंपि उवरिमेहिं छहिं कम्मेहिं समं भाणियव्वं जाव अंतराइएणं २ । जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स मोहणिज्जं जस्स मोहणिज्जं तस्स वेयणिज्जं ?, गोयमा ! जस्स वेयणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण मोहणिज्जं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि । जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स आउयं ?, एवं एयाणि परोप्परं नियमा, जहा आउएण समं एवं नामेणवि गोएणवि समं भाणियव्वं । जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स अंतराइयं ? पुच्छा, गोयमा ! जस्स वेयणिज्जं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि ३ । जस्स णं भंते ! मोहणिज्जं तस्स आउयं जस्स आउयं तस्स मोहणिज्जं ?, गोयमा ! जस्स मोहणिज्जं तस्स आउयं नियमा अत्थि, जस्स पुण आउयं तस्स पुण मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि, एवं नामं गोयं अंतराइयं च भाणियव्वं ४, जस्स णं भंते ! आउयं तस्स नामं० ? पुच्छा, गोयमा ! दोवि परोप्परं नियमं, एवं गोत्तेणवि समं भाणियव्वं, जस्स णं भंते ! आउयं तस्स अंतराइयं० ?, पुच्छा, गोयमा ! जस्स आउयं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स आउयं नियमा ५ । जस्स णं भंते ! नामं तस्स गोयं जस्स णं गोयं तस्स णं नामं ? पुच्छा, गोयमा ! जस्स णं णामं तस्स णं नियमा गोयं जस्स णं गोयं तस्स नियमा नामं, गोयमा ! दोवि एए परोप्परं नियमा, जस्स णं भंते ! णामं तस्स अंतराइयं० ? पुच्छा, गोयमा ! जस्स नामं तस्स

अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स नामं नियमा अत्थि ६। जस्स णं भंते! गोयं तस्स अंतराइयं०? पुच्छा, गोयमा! जस्स णं गोयं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स गोयं नियमा अत्थि ७॥ (सूत्रं ३५९) जीवे णं भंते! किं पोग्गली पोग्गले?, गोयमा! जीवे पोग्गलीवि पोग्गलेवि, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जीवे पोग्गलीवि पोग्गलेवि?, गोयमा! से जहानामए छत्तेणं छत्ती दंडेणं दंडी घडेणं घडी पडेणं पडी करेणं करी एवामेव गोयमा! जीवेवि सोइंदियचक्खिदियघाणिंदियजिब्भिदियफासिंदियाइं पडुच्च पोग्गली, जीवं पडुच्च पोग्गले, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जीवे पोग्गलीवि पोग्गलेवि। नेरइए णं भंते! किं पोग्गली०?, एवं चेव, एवं जाव वेमाणिए, नवरं जस्स जइ इंदियाइं तस्स तइवि भाणियव्वाइं। सिद्धे णं भंते! किं पोग्गली पोग्गले?, गोयमा! नो पोग्गली पोग्गले, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव पोग्गले?, गोयमा! जीवं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ सिद्धे नो पोग्गली, पोग्गले। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति॥ (सूत्रं ३६०)॥ ८-१०॥ अट्ठमसए दसमोः समत्तं अट्ठमं सयं॥ ८॥

'जस्स ण'मित्यादि, 'जस्स पुण वेयणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति अकेवलिनं केवलिनं च प्रतीत्य, अकेवलिनो हि वेदनीयं ज्ञानावरणीयं चास्ति, केवलिनस्तु वेदनीयमस्ति, न तु ज्ञानावरणीयमिति। 'जस्स णाणावरणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति अक्षपकं क्षपकं च प्रतीत्य, अक्षपकस्य हि ज्ञानावरणीयं मोहनीयं चास्ति, क्षपकस्य तु मोहक्षये यावत् केवलज्ञानं नोत्पद्यते तावज्ज्ञानावरणीयमस्ति, न तु मोहनीयमिति। एवं च यथा ज्ञानावरणीयं वेदनीयेन सममधीतं तथाऽऽयुपा

नाम्ना गोत्रेण च सहाध्येयं, उक्तप्रकारेण भजनायाः सर्वेषु तेषु भावात्, अंतराएणं च समं ज्ञानावरणीयं तथा वाच्यं यथा दर्शनावरणं, निर्भजनमित्यर्थः, एतदेवाह–'एवं जहा वेयणिज्जेण समं'मित्यादि, 'नियमा परोप्परं भाणियव्वाणि'त्ति कोऽर्थः ?–'जस्स नाणावरणिज्जं तस्स नियमा अंतराइयं जस्स अंतराइयं तस्स नियमा नाणावरणिज्ज'मित्येवमनयोः परस्परं नियमो वाच्य इत्यर्थः ॥ अथ दर्शनावरणं शेषैः षड्भिः सह चिन्तयन्नाह—'जस्से'त्यादि, अयं च गमो ज्ञानावरणीयगमसम एवेति । 'जस्स णं भंते ! वेयणिज्ज'मित्यादिना तु वेदनीयं शेषैः पञ्चभिः सह चिन्त्यते, तत्र च 'जस्स वेयणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति अक्षीणमोहं क्षीणमोहं च प्रतीत्य, अक्षीणमोहस्य हि वेदनीयं मोहनीयं चास्ति, क्षीणमोहस्य तु वेदनीयमस्ति नतु मोहनीयमिति । 'एवं एयाणि परोप्परं नियम'त्ति कोऽर्थः ?–यस्य वेदनीयं तस्य नियमादायुर्यस्यायुस्तस्य नियमाद्वेदनीयमित्येवमेते वाच्ये इत्यर्थः, एवं नामगोत्राभ्यामपि वाच्यं, एतदेवाह–'जहा आउएणे'त्यादि, अन्तरायेण तु भजनया यतो वेदनीयं अन्तरायं चाकेवलिनामस्ति, केवलिनां तु वेदनीयमस्ति, न त्वन्तरायं, एतदेव दर्शयतोक्तं 'जस्स वेयणिज्जं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति । अथ मोहनीयमन्यैश्चतुर्भिः सह चिन्त्यते, तत्र यस्य मोहनीयं तस्यायुर्नियमादकेवलिन इव, यस्य पुनरायुस्तस्य मोहनीयं भजनया, यतोऽक्षीणमोहस्यायुर्मोहनीयं चास्ति क्षीणमोहस्य त्वायुरेवेति, 'एवं नामं गोयं अंतराइयं च भाणियव्वं'ति, अयमर्थः–यस्य मोहनीयं तस्य नाम गोत्रमन्तरायं च नियमादस्ति, यस्य पुनर्नामादित्रयं तस्य मोहनीयं स्यादस्त्यक्षीणमोहस्येव, स्यान्नास्ति क्षीणमोहस्येवेति ॥ अथायुरन्यैस्त्रिभिः सह चिन्त्यते—'जस्स णं भंते ! आउय'मित्यादि, 'दोवि परोप्परं नियमं'त्ति कोऽर्थः ?–'जस्स आउयं तस्स नियमा नामं जस्स नामं तस्स नियमा आउयं'इत्यर्थः, एवं गोत्रेणापि, 'जस्स आउयं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि'-

त्ति यस्यायुस्तस्यान्तरायं स्यादस्ति अकेवलिवत् स्यान्नास्ति केवलिवदिति । 'जस्स णं भंते ! णामं'इत्यादिना नामान्येन द्वयेन सह चिन्त्यते, तत्र यस्य नाम तस्य नियमाद् गोत्रं यस्य गोत्रं तस्य नियमान्नाम, तथा यस्य नाम तस्यान्तरायं स्यादस्त्यकेवलिवत् स्यान्नास्ति केवलिवदिति । एवं गोत्रान्तराययोरपि भजना भावनीयेति ॥ अनन्तरं कर्मोक्तं तच्च पुद्गलात्मकमतस्तदधिकारादिदमाह–'जीवे ण'-मित्यादि, 'पोग्गलीवि'त्ति पुद्गलाः–श्रोत्रादिरूपा विद्यन्ते यस्यासौ पुद्गली, 'पुग्गलेवि'त्ति 'पुद्गल इति सञ्ज्ञा जीवस्य ततस्तद्योगात् पुद्गल इति । एतदेव दर्शयन्नाह–'से केणट्ठेण'मित्यादि ॥ अष्टमशते दशमः ॥ ८–१० ॥

सद्भक्त्याहुतिना विवृद्धमहसा पार्श्वप्रसादाग्निना, तन्नामाक्षरमन्त्रजप्तिविधिना विघ्नेन्धनप्लोपि(ष)तः ।
सम्पन्नेऽनघशान्तिकर्म्मकरणे क्षेमादहं नीतवान्, सिद्धिं शिल्पिवदेतदष्टमशतव्याख्यानसन्मन्दिरम् ॥ १ ॥

इति विस्तृततमवर्धमानप्रभुशासनविपद्विचारपरचन्द्राभश्रीचान्द्रकुलाभरणश्रीमदभयदेवाचार्य-रचितायां व्याख्याप्रज्ञप्तिवृत्तौ समाप्तं चाष्टमं शतकम् ॥ ८ ॥ ग्रन्थाग्रम् ९४३८ ॥

व्याख्यातमष्टमशतमथ नवममारभ्यते, अस्य चायमभिसम्बन्धः—अष्टमशते विविधाः पदार्था उक्ताः, नवमेऽपि त एव भङ्ग्यन्त-
रेणोच्यन्ते, इत्येवंसम्बन्धस्योद्देशकार्थसंसूचिकेयं गाथा—
जंबुद्दीवे १ जोइस २ अंतरदीवा ३० असोच ३१ गंगेय ३२। कुंडग्गामे ३३ पुरिसे ३४ नवमंमि सए चउ-
त्तीसा ॥ १ ॥
'जंबुदीवे'इत्यादि. तत्र 'जंबुदीवे'त्ति तत्र जम्बूद्वीपवक्तव्यताविषयः प्रथमोद्देशकः १, 'जोइस'त्ति ज्योतिष्कविषयो द्वितीयः
२, 'अंतरदीव'त्ति अन्तरद्वीपविषया अष्टाविंशतिरुद्देशकाः ३०, 'असोच'त्ति अश्रुत्वा धर्मं लभेतेत्याद्यर्थप्रतिपादनार्थं एकत्रिंशत्तमः
३१, 'गंगेय'त्ति गाङ्गेयाभिधानानगारवक्तव्यतार्थो द्वात्रिंशत्तमः ३२, 'कुंडग्गामे'त्ति ब्राह्मणकुण्डग्रामविषयस्त्रयस्त्रिंशत्तमः ३३,
'पुरिसे'त्ति पुरुषः पुरुषं घ्नन्नित्यादिवक्तव्यतार्थश्चतुस्त्रिंशतम ३४ इति ॥
तेणं कालेणं तेणं समएणं मिहिलानामं नगरी होत्था, वन्नओ, माणभद्दे चेइए वन्नओ, सामी समोसढे, परिसा
निग्गया जाव भगवं गोयमे पज्जुवासमाणे एवं वयासी—कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे? किंसंठिए णं भंते! जंबु-
दीवे दीवे? एवं जंबुदीवपन्नत्ती भाणियव्वा जाव एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुदीवे २ चोद्दस सलिला सयसहस्सा
छप्पन्नं च सहस्सा भवंतीतिमक्खाया। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति। (सूत्रं ३६१)॥नवमसयस्स पढमोउद्देसो ॥९–१॥
'कहि णं भंते!' इत्यादि, कस्मिन् देशे इत्यर्थः 'एवं जंबुदीवपन्नत्ती भाणियव्व'त्ति, सा चेयम्—'केमहालए णं भंते!
जंबुदीवे दीवे किमागारभावपडोयारे णं भंते! जंबुदीवे दीवे पन्नत्ते?' कस्मिन्नाकारभावे प्रत्यवतारो यस्य स तथा, गोयमा! अयन्नं

जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरए सव्वखुड्डाए वट्टे तिल्लापूयसंठाणसंठिए वट्टे रहचक्कवालसंठाणसंठिए वट्टे पुक्खरकन्नियासंठाणसंठिए वट्टे पडिपुन्नचंदसंठाणसंठिए पन्नत्ते एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेण'मित्यादि, किमन्तेयं व्याख्या ? इत्याह—'जावे'त्यादि. 'एवामेव'त्ति उक्तेनैव न्यायेन पूर्वापरसमुद्रगमनादिना 'सपुव्वावरेणं'ति सह पूर्वेण नदीवृन्देनापरं सपूर्वापरं तेन 'चोद्दस सलिलासयसहस्सा छप्पन्नं च सहस्सा भवंतीतिमक्खाय'त्ति इह 'सलिलाशतसहस्राणि' नदीलक्षाणि, एतत्सङ्ख्या चैवं—भरतैरावतयोर्गङ्गासिन्धुरक्तारक्तवत्यः प्रत्येकं चतुर्दशभिर्नदीनां सहस्रैर्युक्ताः, तथा हैमवतैरण्यवतयोः रोहिद्रोहितांशासुवर्णकूलारूप्यकूलाः प्रत्येकमष्टाविंशत्या सहस्रैर्युक्ताः, तथा हरिवर्षरम्यकवर्षयोर्हरिहरिकान्तानरकान्तानारीकान्ताः प्रत्येकं षट्पञ्चाशता सहस्रैर्युक्ताः समुद्रमुपयान्ति, तथा महाविदेहे शीताशीतोदे प्रत्येकं पञ्चभिर्लक्षैर्द्वात्रिंशता च सहस्रैर्युक्ते समुद्रमुपयात इति, सर्वासां च मीलने सूत्रोक्तं प्रमाणं भवति, वाचनान्तरे पुनरिदं दृश्यते—'जहा जंबुद्दीवपन्नत्तीए तहा णेयव्वं जोइसविहूणं जाव—खंडा जोयण वासा पव्वय कूडा य तित्थ सेढीओ । विजयद्दहसलिलाउ य पिंडए होंति संगहणी ॥ १ ॥'ति, तत्र 'जोइसविहूणं'ति जंबूद्वीपप्रज्ञप्त्यां ज्योतिष्कवक्तव्यताऽस्ति तद्विहीनं समस्तं जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमस्योद्देशकस्य सूत्रं ज्ञेयं, किंपर्यवसानं पुनस्तद् ? इत्याह—'जाव खंडे'त्यादि, तत्र 'खंडे'त्ति जम्बूद्वीपो भरतक्षेत्रप्रमाणानि खण्डानि कियन्ति स्यात् ?, उच्यते, नवत्यधिकं खण्डशतं, 'जोयण'त्ति जम्बूद्वीपः कियन्ति योजनप्रमाणानि खण्डानि स्यात् ?, उच्यते,—सत्तेव य कोडिसया णउया छप्पन्नसयसहस्साइं । चउणउइं च सहस्सा सयं दिवड्ढं च साहीयं ॥ १ ॥ गाउयमेगं पन्नरस धणुसया तह धणूणि पन्नरस । सट्ठिं च अंगुलाइं जंबुद्दीवस्स गणियपयं ॥ २ ॥' इति, गणितपदमित्येवंप्रकारस्य गणितस्य सञ्ज्ञा 'वास'त्ति जम्बूद्वीपे भरतहेमवतादीनि सप्त वर्षाणि, क्षेत्राणीत्यर्थः 'पव्वय'त्ति जम्बूद्वीपे

कियन्तः पर्वताः?, उच्यते, षड् वर्षधरपर्वताः हिमवदादयः एको मन्दरः, एकश्चित्रकूटः एक एव विचित्रकूटः एतौ च देवकुरुषु, द्वौ यमकपर्वतौ, एतौ चोत्तरकुरुषु, द्वे शते काञ्चनकानाम्, एते च शीताशीतोदयोः पार्श्वतो, विंशतिः वक्षस्काराः, चतुस्त्रिंशद्दीर्घविजयार्द्धपर्वताश्चत्वारो वर्त्तुलविजयार्द्धाः, एवं द्वेश ते एकोनसप्तत्यधिके पर्वतानां भवतः, 'कूड'त्ति कियन्ति पर्वतकूटानि?, उच्यते, षट्पञ्चाशद्वर्षधरकूटानि पण्णवतिर्वक्षस्कारकूटानि त्रीणि षडुत्तराणि विजयार्द्धकूटानां शतानि नव च मन्दरकूटानि, एवं च चत्वारि सप्तषष्ट्यधिकानि कूटशतानि भवन्ति. 'तित्थ'त्ति जम्बूद्वीपे कियन्ति तीर्थानि?, उच्यते, भरतादिषु चतुस्त्रिंशति, खण्डेषु मागधवरदामप्रभासाख्यानि त्रीणि त्रीणि तीर्थानि भवन्ति, एवं चैकं द्व्युत्तरं तीर्थशतं भवतीति, 'सेढीओ'त्ति विद्याधरश्रेणयः आभियोगिकश्रेणयश्च कियन्त्यः?, उच्यते, अष्टषष्टिः प्रत्येकमासां भवन्ति, विजयार्द्धपर्वतेषु प्रत्येकं द्वयोर्द्वयोर्भावात्, एवं च षट्त्रिंशदधिकं श्रेणिशतं भवतीति, 'विजय'त्ति कियन्ति चक्रवर्त्तिविजेतव्यानि भूखण्डानि?, उच्यते, चतुस्त्रिंशत्, एतावन्त एव राजधान्यादयोऽर्था इति, 'दह'त्ति कियन्तो महाह्रदाः?, उच्यते, पद्मादयः षड् दश च नीलवदादय उत्तरकुरुदेवकुरुमध्यवर्त्तिन इत्येवं षोडश, 'सलिल'त्ति नद्यस्तत्प्रमाणं च दर्शितमेव, 'पिंडए होंति संगहणि'त्ति उद्देशकार्थानां पिण्डके–मीलके विषयभूते इयं सङ्ग्रहणीगाथा भवतीति ॥ नवमशते प्रथमः ॥ ९–१ ॥



अनन्तरोद्देशके जम्बूद्वीपवक्तव्यतोक्ता, द्वितीये तु जम्बूद्वीपादिषु ज्योतिष्कवक्तव्यताऽभिधीयते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया चंदा पभासिंसु वा पभासेंति वा पभासिस्संति वा?, एवं जहा जीवाभिगमे जाव–'एगं च सयसहस्सं तेत्तीसं खलु भवे सहस्साइं। नव य सया पन्नासा तारागणकोडिकोडीणं ॥६१॥' सोभं सोभिंसु सोभिंति सोभिस्संति ॥ (सूत्रं ३६२) लवणे णं भंते! समुद्दे केवतिया चंदा पभासिंसु वा पभासिंति वा पभासिस्संति वा ३ एवं जहा जीवाभिगमे जाव ताराओ ॥ धायइसंडे कालोदे पुक्खरवरे अब्भिंतरपुक्खरद्धे मणुस्सखेत्ते, एएसु सव्वेसु जहा जीवाभिगमे जाव–'एगससीपरिवारो तारागणकोडाकोडीणं।' पुक्खरद्धे णं भंते! समुद्दे केवइया चंदा पभासिंसु वा?, एवं सव्वेसु दीवसमुद्देसु जोतिसियाणं भाणियव्वं जाव सयंभूरमणे जाव सोभं सोभिंसु वा सोभंति वा सोभिस्संति वा। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ३६३) नवमसए बीओ उद्देसो समत्तो ॥ ९–२ ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'एवं जहा जीवाभिगमे'त्ति, तत्र चैतत्सूत्रमेवम्—'केवतिया चंदा पभासिंसु वा पभासिंति वा पभासिस्संति वा ३? केवतिया सूरिया तविंसु वा तवंति वा तविस्संति वा? केवइया नक्खत्ता जोयं जोइंसु वा ३? केवइया महग्गहा चारं चरिंसु वा ३? केवइयाओ तारागणकोडाकोडीओ सोहिं सोहिंसु वा ३?' शोभां कृतवत्य इत्यर्थः, 'गोयमा! जंबूद्दीवे दीवे दो चंदा पभासिंसु वा ३ दो सूरिया तविंसु वा ३ छप्पन्नं नक्खत्ता जोगं जोइंसु वा ३ छावत्तरं गहसयं चारं चरिंसु वा ३' बहुवचनमिह छान्दसत्वादिति, 'एगं च सयसहस्सं तेत्तीसं खलु भवे सहस्साइं' शेषं तु सूत्रपुस्तके लिखितमेवास्ते ॥ 'लवणे णं भंते!'इत्यादौ

'एवं जहा जीवाभिगमे'त्ति तत्र चेदं सूत्रमेवं–'केवइया चंदा पभासिंसु वा ३ केवतिया सूरिया तविंसु वा ३' इत्यादि प्रश्नसूत्रं पूर्ववत्, उत्तरं तु 'गोयमा ! लवणे णं समुद्दे चत्तारि चंदा पभासिंसु वा ३ चत्तारि सूरिया तविंसु वा ३ बारसोत्तरं नक्खत्तसयं जोगं जोइंसु वा ३ तिन्नि बावन्ना महग्गहसया चारं चरिंसु वा ३ दोन्नि सयसहस्सा सत्तट्ठिं च सहस्सा नवसया तारागणकोडिकोडीणं सोहं सोहिंसु वा ३' सूत्रपर्यन्तमाह–'जाव ताराओ'त्ति तारकासूत्रं यावत् तच्च दर्शितमेवेति । 'धायइसंडे'इत्यादौ यदुक्तं 'जहा जीवाभिगमे' तदेवं भावनीयं—'धायइसंडे णं भंते ! दीवे केवतिया चंदा पभासिंसु वा ३ केवतिया सूरिया तविंसु वा ३ ? ' इत्यादिप्रश्नाः पूर्ववत्, उत्तरं तु 'गोयमा! बारस चंदा पभासिंसु वा ३ बारस सूरिया तविंसु वा ३, एवं—'चउवीसं ससिरविणो नक्खत्तसया य तिन्नि छत्तीसा । एगं च गहसहस्सं छप्पन्नं धायईसंडे ॥१॥ अट्ठेव सयसहस्सा तिन्नि सहस्साइं सत्त य सयाइं । धायइसंडे दीवे तारागणकोडिकोडीणं ॥ २ ॥ सोहं सोहिंसु वा ३ ' । कालोए णं भंते ! समुद्दे केवतिया चंदा'इत्यादि. प्रश्नः, उत्तरं तु गोयमा !—'बायालीसं चंदा बायालीसं च दिणयरा दित्ता । कालोदहिंमि एए चरंति संबद्धलेसागा ॥ १ ॥ नक्खत्तसहस्सं एगं एगं छावत्तरं च सयमन्नं । छच्च सया छन्नउया महागहा तिन्नि य सहस्सा ॥२॥ अट्ठावीसं कालोदहिंमि बारस य तह सहस्साइं । णव य सया पन्नासा तारागणकोडिकोडीणं ॥३॥ सोहं सोहिंसु वा ३ ।' तथा 'पुक्खरवरदीवे णं भंते ! दीवे केवइया चंदा'इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं त्वेतद्गाथाऽनुसारेणावसेयं–'चोयालं चंदसयं चोयालं चेव सूरियाण सयं । पुक्खरवरंमि दीवे भमंति एए पयासिंता ॥ १ ॥ ' इह च यद्भ्रमणमुक्तं न तत्सर्वांश्चन्द्रादित्यानपेक्ष्य, किं तर्हि ?, पुष्करद्वीपाभ्यन्तरार्द्धवर्त्तिनौ द्विसप्ततिमेवेति, 'चत्तारि सहस्साइं बत्तीसं चेव होंति नक्खत्ता । छच्च सया बावत्तरि महागहा बारससहस्सा ॥ १ ॥ छन्नउइ सयसहस्सा चोयालीसं भवे सहस्साइं । चत्तारि सया पुक्खरि

तारागणकोडिकोडीणं ॥१॥ सोहं सोहिंसु वा'। तथा—'अब्भितरपुक्खरद्धे णं भंते! केवतिया चंदा? इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं तु—'बावत्तरिं च चंदा बावत्तरिमेव दिणयरा दित्ता। पुक्खरवरदीवड्ढे चरंति एए पभासिंता॥१॥ तिन्नि सया छत्तीसा छच्च सहस्सा महग्गहाणं तु। नक्खत्ताणं तु भवे सोलाइं दुवे सहस्साइं। २॥ अडयाल सयसहस्सा बावीसं खलु भवे सहस्साइं। दो य सय पुक्खरद्धे तारागणकोडिकोडीणं॥३। सोभं सोभिंसु वा ३।' तथा 'मणुस्सखेत्ते णं भंते! केवइया चंदा?'इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं तु—'बत्तीसं चंदसयं बत्तीसं चेव सूरियाण सयं। सयलं मणुस्सलोयं चरंति एए पयासिंता॥१॥ एक्कारस य सहस्सा छप्पिय सोला महागहाणं तु। छच्च सया छण्णउया णक्खत्ता तिन्नि य सहस्सा॥२॥अडसीइ सयसहस्सा चालीस सहस्स मणुयलोगंमि। सत्त य सया अणूणा तारागणकोडिकोडीणं॥३॥'-इत्यादि, किमन्तमिदं वाच्यम्? इत्याह—'जावे'त्यादि. अस्य च सूत्रांशस्यायं पूर्वोऽशः—'अट्ठासीइं च गहा अट्ठावीसं च होइ नक्खत्ता। एगससीपरिवारो एत्तो ताराण वोच्छामि॥ १॥ छावट्ठि सहस्साइं नव चेव सयाइं पंच सयराइं'ति। 'पुक्खरोदे णं भंते! समुद्दे केवइया चंदा' इत्यादौ प्रश्ने इदमुत्तरं दृश्यं—'संखेज्जा चंदा पभासिसु वा ३' इत्यादि, 'एवं सव्वेसु दीवसमुद्देसु'त्ति पूर्वोक्तेन प्रश्नेन यथासम्भवं सङ्ख्याता असङ्ख्याताश्च चन्द्रादय इत्यादिना चोत्तरेणेत्यर्थः, द्वीपसमुद्रनामानि चैवं-पुष्करोदसमुद्रादनन्तरो वरुणवरो द्वीपस्ततो वरुणोदः समुद्रः, एवं क्षीरवरक्षीरोदौ घृतवरघृतोदौ क्षोदवरक्षोदोदौ नन्दीश्वरवरनन्दीश्वरोदौ अरुणारुणोदौ अरुणवरारुणवरोदौ अरुणवरावभासारुणवरावभासोदौ कुण्डलकुण्डलोदौ कुण्डलवरकुण्डलवरोदौ कुण्डलवरावभासकुण्डलावरावभासोदौ रुचकरुचकोदौ रुचकवररुचकवरोदौ रुचकवरावभासरुचकवरावभासोदौ इत्यादीन्यसङ्ख्यातानि, यतोऽसङ्ख्याता द्वीपसमुद्रा इति॥ नवमशते द्वितीयः॥९–२॥

द्वितीयोद्देशके द्वीपवरवक्तव्यतोक्ता, तृतीयेऽपि प्रकारान्तरेण सैवोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी—कहि णं भंते! दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे णामं दीवे पन्नत्ते?, गोयमा! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ लवणसमुद्दं उत्तरपुरच्छिमे णं तिन्नि जोयणसयाइं ओगाहित्ता एत्थ णं दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे नामं दीवे पण्णत्ते, तं गोयमा! तिन्नि जोयणसयाइं आयामविक्खंभेणं णवएक्कोणवन्ने जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं पन्नत्ते, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता सपरिक्खित्ते, दोण्हवि पमाणं वन्नओ य, एवं एएणं कमेणं जहा जीवाभिगमे जाव सुद्धदंतदीवे जाव देवलोगपरिग्गहिया णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!। एवं अट्ठावीसंपि अंतरदीवा सएणं २ आयामविक्खंभेणं भाणियव्वा, नवरं दीवे २ उद्देसओ, एवं सव्वेवि अट्ठावीसं उद्देसगा भाणियव्वा। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति (सूत्रं ३६४) नवमस्स तईयाइआ तीसंताउद्देसा संमत्ता ॥ ३० ॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'दाहिणिल्लाणं' ति उत्तरान्तरद्वीपव्यवच्छेदार्थम्, 'एवं जहा जीवाभिगमे' त्ति, तत्र चेदमेवं सूत्रं— 'चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरपुरच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ लवणसमुद्दं तिन्नि जोयणसयाइं ओगाहित्ता एत्थ णं दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयनामं दीवे पन्नत्ते, तिन्नि जोयणसयाइं आयामविक्खंभेणं नवएगूणवन्ने जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते' इत्यादि, इह च वेदिकावनखण्डकल्पवृक्षमनुष्यम-

नुष्यीवर्णकोऽभिधीयते, तथा तन्मनुष्याणां चतुर्थभक्तादाहारार्थ उत्पद्यते, ते च पृथिवीरसपुष्पफलाहाराः, तत्पृथिवी च रसतः खण्डादितुल्या, ते च मनुष्या वृक्षगेहाः, तत्र च गेहाद्यभावः, तन्मनुष्याणां च स्थितिः पल्योपमासङ्ख्येयभागप्रमाणा, षण्मासावशेषायुषश्च ते मिथुनकानि प्रसुवते, एकाशीतिं च दिनानि तेऽपत्यमिथुनकानि पालयन्ति, उच्छ्वसितादिना च ते मृत्वा देवेषूत्पद्यन्ते, इत्यादयश्चार्था अभिधीयन्ते इति, वाचनान्तरे त्विदं दृश्यते—'एवं जहा जीवाभिगमे उत्तरकुरुवत्तव्वयाए णेयव्वो, नाणत्तं अट्ठधणुसया उस्सेहो चउसट्ठी पिट्ठकरंडया अणुसज्जणा नत्थि'त्ति, तत्रायमर्थः—उत्तरकुरुषु मनुष्याणां त्रीणि गव्यूतान्युत्सेध उक्तःइह त्वष्टौ धनुःशतानि, तथा तेषु मनुष्याणां द्वे शते षट्पञ्चाशदधिके पृष्ठकरण्डकानामुक्ते इह तु चतुःषष्टिरिति, तथा—'उत्तरकुराए णं भंते! कुराए कइविहा मणुस्सा अणुसज्जंति?, गोयमा! छव्विहा मणुस्सा अणुसज्जंति, तंजहा—पम्हगंधा मियगंधा अममा तेयली सहा सणिंचारी'इत्येवं मनुष्याणामनुषञ्जना तत्रोक्ता इह तु सा नास्ति, तथाविधमनुष्याणां तत्राभावात्, एवं चेह त्रीणि नानात्वस्थानान्युक्तानि, सन्ति पुनरन्यान्यपि स्थित्यादीनि, किन्तु तान्यभियुक्तेन भावनीयानीति, अयं चेहैकोरुकद्वीपोद्देशकस्तृतीयः। अथ प्रकृतवाचनामनुसृत्योच्यते—किमन्तमिदं जीवाभिगमसूत्रमिह वाच्यम्? इत्याह—'जावे'त्यादि, 'यावत् शुद्धदन्तद्वीपः' शुद्धदन्ताभिधानाष्टाविंशतितमान्तरद्वीपवक्तव्यतां यावत्, साऽपि कियद्दूरं यावद्वाच्या? इत्याह—'देवलोकपरिग्गहे'त्यादि, देवलोकः परिग्रहो येषां ते देवलोकपरिग्रहाः देवलोकगतिगामिनः इत्यर्थः, इह चैकैकस्मिन्नन्तरद्वीपे एकैक उद्देशकः, तत्र चैकोरुकद्वीपोद्देशकानन्तरमाभासिकद्वीपोद्देशकः, तत्र चैवंसूत्रं—'कहि णं भंते! दाहिणिल्लाणं आभासिकमणूसाणं आभासिए नामं दीवे पन्नत्ते?, गोयमा! जंबुद्दीवे दीवे चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणपुरच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ लवणसमुद्दं तिन्नि जोयणसयाइं ओगाहित्ता एत्थ णं दाहिणिल्लाणं आभासियनामं दीवे

पन्नत्ते' शेषमेकोरुकद्वीपवदिति चतुर्थः । एवं वैषाणिकद्वीपोद्देशकोऽपि नवरं दक्षिणापराचरमान्तादिति पञ्चमः ५ । एवं लाङ्गूलिकद्वीपोद्देशकोऽपि, नवरमुत्तरापराचरमान्तादिति षष्ठः ६ । एवं हयकर्णद्वीपोद्देशको नवरमेकोरुकस्योत्तरपौरस्त्याच्चरमान्तात् लवणसमुद्रं चत्वारि योजनशतान्यवगाह्य चतुर्योजनशतायामविष्कम्भो हयकर्णद्वीपो भवतीति सप्तमः ७ । एवं गजकर्णद्वीपोद्देशकोऽपि, नवरं गजकर्णद्वीप आभासिकद्वीपस्य दक्षिणपौरस्त्याच्चरमान्ताल्लवणसमुद्रमवगाह्य चत्वारि योजनशतानि हयकर्णद्वीपसमो भवतीत्यष्टमः ८ । एवं गोकर्णद्वीपोद्देशकोऽपि, नवरमसौ वैषाणिकद्वीपस्य दक्षिणापराचरमान्तादिति नवमः ९ । एवं शष्कुलीकर्णद्वीपोद्देशकोऽपि, नवरमसौ लाङ्गूलिकद्वीपस्योत्तरापराचरमान्तादिति दशमः १० । एवमादर्शमुखद्वीपमेण्ढमुखद्वीपायोमुखद्वीपगोमुखद्वीपा हयकर्णादीनां चतुर्णां क्रमेण पूर्वोत्तरपूर्वदक्षिणदक्षिणापरापरोत्तरेभ्यश्चरमान्तेभ्यः पञ्च योजनशतानि लवणोदधिमवगाह्य पञ्चयोजनशतायामविष्कम्भा भवन्ति, तत्प्रतिपादकाश्चान्ये चत्वार उद्देशका भवन्तीति १४ । एतेषामेवादर्शमुखादीनां पूर्वोत्तरादिभ्यश्चरमान्तेभ्यः षड् योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य षड्योजनशतायामविष्कम्भाः क्रमेणाश्वमुखद्वीपहस्तिमुखद्वीपसिंहमुखद्वीपव्याघ्रमुखद्वीपा भवन्ति, तत्प्रतिपादकाश्चान्ये चत्वार उद्देशका भवन्तीति १८ । एतेषामेवाश्वमुखादीनां तथैव सप्त योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य सप्तयोजनशतायामविष्कम्भा अश्वकर्णद्वीपहस्तिकर्णद्वीपकर्णद्वीपकर्णप्रावरणद्वीपाः भवन्ति, तत्प्रतिपादकाश्चापरे चत्वार एवोद्देशका इति २२ । एतेषामेवाश्वकर्णादीनां तथैवाष्टयोजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्याष्टयोजनशतायामविष्कम्भा उल्कामुखद्वीपमेघमुखद्वीपविद्युन्मुखद्वीपविद्युद्दन्तद्वीपा भवन्ति, तत्प्रतिपादकाश्चान्ये चत्वार एवोद्देशका इति २६ । एतेषामेवोल्कामुखद्वीपादीनां तथैव नव योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य नवयोजनशतायामविष्कम्भाः घनदन्तद्वीपलष्टदन्तद्वीपगूढदन्तद्वीपशुद्धदन्तद्वीपा भवन्ति, तत्प्रतिपादकाश्चान्ये चत्वार एवोद्देशका इति,

एवमादितोऽत्र त्रिंशत्तमः शुद्धदन्तोद्देशकः ३०. इति ॥

उक्तरूपाश्चार्थाः केवलिधर्माद् ज्ञायन्ते तं चाश्रुत्वाऽपि कोऽपि लभत इत्याद्यर्थप्रतिपादनपरमेकत्रिंशत्तमुद्देशकमप्याह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी-असोचा णं भंते! केवलिस्स वा केवलिसावगस्स वा केवलिसाविथाए वा केवलिउवासगस्स वा केवलिउवासियाएवा तप्पक्खियस्स वा तप्पक्खियसावगस्स वा तप्पक्खियसावियाए वा तप्पक्खियउवासगस्स वा तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए?, गोयमा! असोचा णं केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए॥ से केणट्ठेणं भंते! एवं वुचइ-असोचा णं जाव नो लभेज्जा सवणयाए?, गोयमा! जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोचाकेवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्ज सवणयाए, जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोचा णं केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्ज सवणयाए, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुचइ-तं चेव जाव नो लभेज्ज सवणयाए॥ असोचा णं भंते! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलं बोहिं बुज्झेज्जा?, गोयमा! असोचा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगतिए केवलं बोहिं

बुज्झेज्जा अत्थेगतिए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा ॥ से केणट्ठेणं भंते! जाव नो बुज्झेज्जा?, गोयमा! जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव णो बुज्झेज्जा ॥ असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा?, गोयमा! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइज्जा अत्थेगतिए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं नो पव्वएज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो पव्वएज्जा?, गोयमा! जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवति से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा, जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवति से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव मुंडे भवित्ता जाव णो पव्वएज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव नो पव्वएज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा?, गोयमा! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, अत्थेगतिए केवलं बंभचेरवासं नो आवसेज्जा, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव नो आवसेज्जा?, गोयमा! जस्स णं चरित्तावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, जस्स णं चरित्तावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं

असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो आवसेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो आवसेज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा?, गोयमा! असोच्चा णं केवलिस्स जाव उवासियाए वा जाव अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं नो संजमेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो संजमेज्जा?, गोयमा! जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो संजमेज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव अत्थेगतिए नो संजमेज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा?, गोयमा! असोच्चाणं केवलिस्स जाव अत्थेगतिए केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं जाव नो संवरेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो संवरेज्जा?, गोयमा! जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो संवरेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो संवरेज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा?, गोयमा! असोच्चाणं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियनाणं नो उप्पाडेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो उप्पाडेज्जा?, गोयमा! जस्स णं आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं

आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा, जस्स णं आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं नो उप्पाडेज्जा से तेणट्ठेणं जाव नो उप्पाडेज्जा, असोच्चा णं भंते! केवलि० जाव केवलं सुयनाणं उप्पाडेज्जा एवं जहा आभिणिबोहियनाणस्स वत्तव्वया भणिया तहा सुयनाणस्सवि भाणियव्वा, नवरं सुयनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे। एवं चेव केवलं ओहिनाणं भाणियव्वं, नवरं ओहिणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे, एवं केवलं मणपज्जवनाणं उप्पाडेज्जा, नवरं मणपज्जवणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे, असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलनाणं उप्पाडेज्जा, एवं चेव नवरं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए भाणियव्वे, सेसं तं चेव, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जाव केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा केवलं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा जाव केवलं मणपज्जवनाणं उप्पाडेज्जा केवलनाणं उप्पाडेज्जा?, गोयमा! असोच्चाणं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा अत्थेगतिए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा अत्थेगतिए केवलं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा

असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो आवसेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो आवसेज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा?, गोयमा! असोच्चा णं केवलिस्स जाव उवासियाए वा जाव अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं नो संजमेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो संजमेज्जा?, गोयमा! जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो संजमेज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव अत्थेगतिए नो संजमेज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा?, गोयमा! असोच्चाणं केवलिस्स जाव अत्थेगतिए केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं जाव नो संवरेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो संवरेज्जा?, गोयमा! जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो संवरेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो संवरेज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा?, गोयमा! असोच्चाणं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियनाणं नो उप्पाडेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो उप्पाडेज्जा?, गोयमा! जस्स णं आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं

आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा, जस्स णं आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं नो उप्पाडेज्जा से तेणट्ठेणं जाव नो उप्पाडेज्जा, असोच्चा णं भंते! केवलि० जाव केवलं सुयनाणं उप्पाडेज्जा एवं जहा आभिणिबोहियनाणस्स वत्तव्वया भणिया तहा सुयनाणस्सवि भाणियव्वा, नवरं सुयनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे। एवं चेव केवलं ओहिनाणं भाणियव्वं, नवरं ओहिणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे, एवं केवलं मणपज्जवनाणं उप्पाडेज्जा, नवरं मणपज्जवणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे, असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलनाणं उप्पाडेज्जा, एवं चेव नवरं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए भाणियव्वे, सेसं तं चेव, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जाव केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा। असोच्चा णं भंते! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा केवलं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा जाव केवलं मणपज्जवनाणं उप्पाडेज्जा केवलनाणं उप्पाडेज्जा?, गोयमा! असोच्चाणं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा अत्थेगतिए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा अत्थेगतिए केवलं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा

अत्थेगतिए जाव नो पव्वएज्जा अत्थेगतिए केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा अत्थेगतिए केवलं बंभचेरवासं नो आवसेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं नो संजमेज्जा एवं संवरेणवि, अत्थेगतिए केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगतिए जाव नो उप्पाडेज्जा, एवं जाव मणपज्जवनाणं, अत्थेगतिए केवलनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगतिए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ असोच्चाणं तं चेव जाव अत्थेगतिए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा?, गोयमा! जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ १ जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ २ जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ ३ एवं चरित्तावरणिज्जाणं ४ जयणावरणिज्जाणं ५ अज्झवसाणावरणिज्जाणं ६ आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं ७ जाव मणपज्जवनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ १० जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं जाव खए नो कडे भवइ ११ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए केवलं बोहिं नो बुज्झेज्जा जाव केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा, जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवति जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ जस्स णं धम्मंतराइयाणं एवं जाव जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा जाव केवलणाणं उप्पाडेज्जा ॥ ( सूत्रं ३६९ ) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, तत्र च 'असोच्च'त्ति अश्रुत्वा—धर्मफलादिप्रतिपादकवचनमनाकर्ण्य प्राक्कृतधर्मानुरागादेवेत्यर्थः 'केव-

लिस्स व'त्ति 'केवलिनः' जिनस्य 'केवलिसावगस्स व'त्ति केवली येन स्वयमेव पृष्टः श्रुतं वा येन तद्वचनमसौ केवलिश्रावकस्तस्य 'केवलिउवागस्स व'त्ति केवलिन उपासनां विदधानेन केवलिनैवान्यस्य कथ्यमानं श्रुतं येनासौ केवल्युपासकः, 'तप्पक्खियस्स'त्ति केवलिनः पाक्षिकस्य स्वयंबुद्धस्य 'धम्मं'ति श्रुतचारित्ररूपं 'लभेज्ज'त्ति प्राप्नुयात् 'सवणयाए'त्ति श्रवणतया श्रवणरूपतया श्रोतुमित्यर्थः॥ 'नाणावरणिज्जाणं'ति बहुवचनं ज्ञानावरणीयस्य मतिज्ञानावरणादिभेदेनावग्रहमत्यावरणादिभेदेन च बहुत्वात्, इह च क्षयोपशमग्रहणात् मत्यावरणाद्येव तद् ग्राह्यं, न तु केवलावरणं, तत्र क्षयस्यैव भावात्, ज्ञानावरणीयस्य क्षयोपशमश्च गिरिसरिदुपलघोलनान्यायेनापि कस्यचित्स्यात्, तत्सद्भावे चाश्रुत्वाऽपि धर्म्मं लभते श्रोतुं, क्षयोपशमस्यैव तल्लाभेऽन्तरङ्गकारणत्वादिति॥ 'केवलं बोहिं'ति शुद्धं सम्यग्दर्शनं 'बुज्झेज्ज'त्ति बुद्ध्येतानुभवेदित्यर्थः यथा प्रत्येकबुद्धादिः, एवमुत्तरत्राप्युदाहर्त्तव्यं, 'दरिसणावरणिज्जाणं'ति इह दर्शनावरणीयं दर्शमोहनीयमभिगृह्यते, बोधेः सम्यग्दर्शनपर्यायत्वात् तल्लाभस्य च तत्क्षयोपशमजन्यत्वादिति॥ 'केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं'ति 'केवलां' शुद्धां सम्पूर्णां वाऽनगारितामिति योगः 'धम्मंतराइयाणं'ति अन्तरायो–विघ्नः सोऽस्ति येषु तान्यन्तरायिकाणि धर्म्मस्य–चारित्रप्रतिपत्तिलक्षणस्यान्तरायिकाणि धर्म्मान्तरायिकाणि तेषां, वीर्यान्तरायचारित्रमोहनीयभेदानामित्यर्थः, 'चारित्तावरणिज्जाणं'ति, इह वेदलक्षणानि चारित्रावरणीयानि विशेषतो ग्राह्याणि, मैथुनविरतिलक्षणस्य ब्रह्मचर्यवासस्य विशेषतस्तेषामेवावारकत्वात्, 'केवलेणं संजमेणं संजमेज्ज'त्ति इह संयमः प्रतिपन्नचरित्रस्य तदतिचारपरिहाराय यतनाविशेषः, 'जयणावरणिज्जाणं'ति इह तु यतनावरणीयानि चारित्रविशेषविषयवीर्यान्तरायलक्षणानि मन्तव्यानि 'अज्झवसाणावरणिज्जाणं'ति संवरशब्देन शुभाध्यवसायवृत्तेर्विवक्षितत्वात् तस्याश्च भावचारित्ररूपत्वेन तदावरणक्षयोपशमलभ्य-

त्वात् अध्यवसानावरणीयशब्देनेह भावचारित्रावरणीयान्युक्तानीति । पूर्वोक्तानेवार्थान् पुनः समुदायेनाह—'असोचा णं भंते!'-इत्यादि ॥ अथाश्रुत्वैव केवल्यादिवचनं यथा कश्चित् केवलज्ञानमुत्पादयेत्तथा दर्शयितुमाह—

तस्स णं भंते! छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय सूराभिमुहस्स आयावणभूमीए आयावेमाणस्स पगतिभद्दयाए पगइउवसंतयाए पगतिपयणुकोहमाणमायालोभयाए मिउमद्दवसंपन्नयाए अल्लीणयाए भद्दयाए विणीययाए अन्नया कयाइ सुभेणं अज्झवसाणेणं सुभेणं परिणामेणं लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं २ तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स विब्भंगे नामं अन्नाणे समुप्पज्जइ, से णं तेणं विब्भंगणनाणेणं समुप्पन्नेणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं जाणइ पासए, से णं तेणं विब्भंगनाणेणं समुप्पन्नेणं जीवेवि जाणइ अजीवेवि जाणइ पासंडत्थे सारंभे सपरिग्गहे संकिलिस्समाणेवि जाणइ विसुज्झमाणेवि जाणइ, से णं पुव्वामेव सम्मत्तं पडिवज्जइ, संमत्तं पडिवज्जित्ता समणधम्मं रोएति समणधम्मं रोएत्ता चरित्तं पडिवज्जइ चरित्तं पडिवज्जित्ता लिंगं पडिवज्जइ, तस्स णं तेहिं मिच्छत्तपज्जवेहिं परिहायमाणेहिं २ सम्मदंसणपज्जवेहिं परिवड्ढमाणेहिं २ से विब्भंगे अन्नाणे सम्मत्तपरिग्गहिए खिप्पामेव ओही परावत्तइ ( सूत्रं ३६६ ) ॥

'तस्से'त्यादि 'तस्स'त्ति योऽश्रुत्वैव केवलज्ञानमुत्पादयेत्तस्य कस्यापि 'छट्ठंछट्ठेण'मित्यादि च यदुक्तं तत्प्रायः षष्ठतपश्चरणवतो बालतपस्विनो विभङ्गः—ज्ञानविशेष उत्पद्यत इति ज्ञापनार्थमिति, 'पगिज्झिय'त्ति प्रगृह्य धृत्वेत्यर्थः 'पगतिभद्दयाए'इत्यादीनि

तु प्राग्वत्, 'तयावरणिज्जाणं'ति विभङ्गज्ञानावरणीयानाम् 'ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स'त्ति इहेहा—सदर्थाभिमुखा ज्ञानचेष्टा अपोहस्तु—विपक्षनिरासः मार्गणं च—अन्वयधर्म्मालोचनं गवेषणं तु—व्यतिरेकधर्मालोचनमिति 'से णं'ति असौ बालतपस्वी 'जीवेवि जाणइ'त्ति कथञ्चिदेव, न तु साक्षात्, मूर्त्तगोचरत्वात्तस्य 'पासंडत्थे'त्ति व्रतस्थान् 'सारंभे सपरिग्गहे'त्ति सारम्भान् सपरिग्रहान् सतः, किंविधान् जानाति? इत्याह—'संकिलिस्समाणेवि जाणइ'त्ति महत्या संक्लिश्यमानतया संक्लिश्यमानानपि जानाति 'विसुज्झमाणे जाणइ'त्ति अल्पीयसाऽपि विशुद्धयमानतया विशुद्धयमानानपि जानाति, आरम्भादिमतामेवंस्वरूपत्वात्, 'से णं'ति असौ विभङ्गज्ञानी जीवाजीवस्वरूपपाषण्डस्थसंक्लिश्यमानतादिज्ञायकः सन् 'पुव्वामेव'त्ति चारित्रप्रतिपत्तेः पूर्वमेव 'सम्मत्तं'ति सम्यग्भावं 'समणधम्मं'ति साधुधर्म्मं 'रोएइ'त्ति श्रद्धत्ते चिकीर्षति वा 'ओही परावत्तइ'त्ति अवधिर्भवतीत्यर्थः, इह च यद्यपि चारित्रप्रतिपत्तिमादावभिधाय सम्यक्त्वपरिगृहीतं विभङ्गज्ञानमवधिर्भवतीति पश्चादुक्तं तथाऽपि चारित्रप्रतिपत्तेः पूर्वं सम्यक्त्वप्रतिपत्तिकाल एव विभङ्गज्ञानस्यावधिभावो द्रष्टव्यः, सम्यक्त्वचारित्रभावे विभङ्गज्ञानस्याभावादिति ॥ अथैनमेव लेश्यादिभिर्निरूपयन्नाह—

**से णं भंते ! कतिलेस्सासु होज्जा ?, गोयमा तिसु विसुद्धलेस्सासु होज्जा, तंजहा—तेउलेस्साए पम्हलेस्साए सुक्कलेस्साए। से णं भंते ! कतिसु णाणेसु होज्जा ?, गोयमा ! तिसु आभिणिबोहियनाणसुयनाणओहिनाणेसु होज्जा। से णं भंते! किं सजोगी होज्जा अजोगी होज्जा?, गोयमा! सजोगी होज्जा, नो अजोगी होज्जा, जइ सजोगी होज्जा किं मणजोगी होज्जा वइजोगी होज्जा कायजोगी होज्जा ?, गोयमा ! मणजोगी वा होज्जा**

वइजोगी वा होज्जा कायजोगी वा होज्जा। से णं भंते! किं सागारोवउत्ते होज्जा अणागारोवउत्ते होज्जा?, गोयमा! सागरोवउत्ते वा होज्जा अणागारोवउत्ते वा होज्जा। से णं भंते! कयरंमि संघयणे होज्जा?, गोयमा! वइरोसभनारायसंघयणे होज्जा। से णं भंते! कयरंमि संठाणे होज्जा?, गोयमा! छण्हं संठाणाणं अन्नयरे संठाणे होज्जा। से णं भंते! कयरंमि उच्चत्ते होज्जा?, गोयमा! जहन्नेणं सत्तरयण उक्कोसेणं पंचधणुसतिए होज्जा। से णं भंते! कयरंमि आउए होज्जा?, गोयमा! जहन्नेणं सातिरेगट्ठवासाउए उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउए होज्जा। से णं भंते! किं सवेदए होज्जा अवेदए होज्जा?, गोयमा! सवेदए होज्जा नो अवेदए होज्जा, जइ सवेदए होज्जा किं इत्थीवेयए होज्जा पुरिसवेदए होज्जा नपुंसगवेदए होज्जा पुरिसनपुंसगवेदए होज्जा?, गोयमा! नो इत्थिवेदए होज्जा पुरिसवेदए वा होज्जा नो नपुंसगवेदए होज्जा?, पुरिसनपुंसगवेदए वा होज्जा। से णं भंते! किं सकसाई होज्जा अकसाई होज्जा?, गोयमा! सकसाई होज्जा नो अकसाई होज्जा, जइ सकसाई होज्जा से णं भंते! कतिसु कसाएसु होज्जा?, गोयमा! चउसु संजलणकोहमाणमायालोभेसु होज्जा। तस्स णं भंते! केवतिया अज्झवसाणा पन्नत्ता?, गोयमा! असंखेज्जा अज्झवसाणा पन्नत्ता, ते णं भंते! पसत्था अप्पसत्था?, गोयमा! पसत्था नो अप्पसत्था, से णं भंते! तेहिं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं वट्टमाणेहिं अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ अणंतेहिं तिरिक्खजोणिय जाव विसंजोएइ अणंतेहिं मणुस्सभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ अणंतेहिं देवभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ, जाओवि यसे इमाओ नेरइयतिरि-

क्खजोणियमणुसदेवगतिनामाओ चत्तारि उत्तरपयडीओ, तासिं च णं उवग्गहिए अणंताणुबंधी कोहमाणमायालोभे खवेइ, अणं० २ अपच्चक्खाणकसाए कोहमाणमायालोभे खवेइ अप्प० २ पच्चक्खाणावरणकोहमाणमायालोभे खवेइ पच० २ संजलणकोहमाणमायालोभे खवेइ संज० २ पंचविहं नाणाव० नवविहं दरिसणाव० पंचविहमंतराइयं तालमत्थकडं च णं मोहणिज्जं कट्टु कम्मरयविकरणकरं अपुव्वकरणं अणुपविट्ठस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुन्ने केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने (सूत्रं ३६७) । से णं भंते ! केवलिपन्नत्तं धम्मं आघवेज्ज वा पन्नवेज्ज वा परूवेज्ज वा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, णण्णत्थ एगणाएण वा एगवागरणेण वा, से णं भंते! पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, उवदेसं पुण करेज्जा, से णं भंते ! सिज्झति जाव अंतं करेति ?, हंता सिज्झति जाव अंतं करेति (सूत्रं ३६८) से णं भंते ! किं उड्ढं होज्जा अहो होज्जा तिरियं होज्जा ?, गोयमा ! उड्ढं वा होज्जा अहे वा होज्जा तिरियं वा होज्जा, उड्ढं होज्जमाणे सद्दावइवियडावइगंधावइमालवंतपरियाएसु वट्टवेयड्ढपव्वएसु होज्जा, साहरणं पडुच्च सोमणसवणे वा पंडगवणे वा होज्जा, अहे होज्जमाणे गड्डाए वा दरीए वा होज्जा, साहरणं पडुच्च पायाले वा भवणे वा होज्जा, तिरियं होज्जमाणे पन्नरससु कम्मभूमीसु होज्जा, साहरणं पडुच्च अड्ढाइज्जे दीवसमुद्दे तदेक्कदेसभाए होज्जा, ते णं भंते ! एगसमएणं केवतिया होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं दस, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्ज सवणयाए अत्थेगतिए असोच्चा णं केवलि जाव नो लभेज्ज सवणयाए जाव अत्थे-

गतिए केवलनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगतिए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा ॥ ( सूत्रं ३६९ ) ॥

'से णं भंते !' इत्यादि, तत्र 'से णं'ति स यो विभङ्गज्ञानी भूत्वाऽवधिज्ञानं चारित्रं च प्रतिपन्नः 'तिसु विसुद्धलेसासु होज्ज'त्ति यतो भावलेश्यासु प्रशस्तास्वेव सम्यक्त्वादि प्रतिपद्यते, नाविसुद्धास्विति 'तिसु आभिनिबोहिए'त्यादि, सम्यक्त्वमतिश्रुतावधिज्ञानिनां विभङ्गविनिवर्त्तनकाले तस्य युगपद्भावादाद्ये ज्ञानत्रय एवासौ तदा वर्त्तत इति । 'णो अजोगी होज्ज'त्ति अवधिज्ञानकालेऽयोगित्वस्याभावात्, 'मणजोगी'त्यादि चैकतरयोगप्राधान्यापेक्षयाऽवगन्तव्यं । 'सागारोवउत्ते वे'त्यादि, तस्य हि विभङ्गज्ञानान्निवर्त्तमानस्योपयोगद्वयेऽपि वर्त्तमानस्य सम्यक्त्वावधिज्ञानप्रतिपत्तिरस्तीति, ननु 'सवाओ लद्धीओ सागारोवओगोवउत्तस्स भवंती'त्यागमादनाकारोपयोगे सम्यक्त्वावधिलब्धिविरोधः?, नैवं, प्रवर्द्धमानपरिणामजीवविषयत्वात् तस्यागमस्य, अवस्थितपरिणामापेक्षया चानाकारोपयोगेऽपि लब्धिलाभस्य सम्भवादिति । 'वइरोसभनारायसंघयणे होज्ज'त्ति प्राप्स्यत्केवलज्ञानत्वात्तस्य, केवलज्ञानप्राप्तिश्च प्रथमसंहनन एव भवतीति, एवमुत्तरत्रापीति॥ 'सवेयए होज्ज'त्ति विभङ्गस्यावधिभावकाले न वेदक्षयोऽस्तीत्यसौ सवेद एव, 'नो इत्थिवेयए होज्ज'त्ति स्त्रिया एवंविधस्य व्यतिकरस्य स्वभावत एवाभावात् 'पुरिसनपुंसगवेयए'त्ति वर्द्धितकत्वादित्वे नपुंसकः पुरुषनपुंसकः 'सकसाई होज्ज'त्ति विभङ्गावधिकाले कषायक्षयस्याभावात् 'चउसु संजलणकोहमाणमायालोभेसु होज्ज'त्ति स ह्यवधिज्ञानतापरिणतविभङ्गज्ञानश्चरणं प्रतिपन्नः उक्तः, तस्य च तत्काले चरणयुक्तत्वात्सञ्ज्वलना एव क्रोधादयो भवन्तीति । 'पसत्थ'त्ति विभङ्गस्यावधिभावो हि नाप्रशस्ताध्यवसानस्य भवतीत्यत उक्तं–प्रशस्तान्यध्यवसायस्थानानीति । 'अणंतेहिं'ति 'अनन्तै.' अनन्तानागतकालभाविभिः 'विसंजोएइ'त्ति विसंयोजयति, तत्प्राप्तियोग्यताया अपनोदादिति । 'जाओऽवि य'त्ति याअपि

च 'नेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवगतिनामाओ'त्ति एतदभिधानाः 'उत्तरपयडीओ'त्ति नामकर्माभिधानाया मूलप्रकृ रुत्तरभेदभूताः 'तासिं च णं'ति तासां च नैरयिकगत्याद्युत्तरप्रकृतीनां चशब्दादन्यासां च 'उवग्गहिए'त्ति औपग्रहिकान्-उपष्टम्भप्रयोजनान् अनन्तानुबन्धिनः क्रोधमानमायालोभान् क्षपयति, तथाऽप्रत्याख्यानादींश्च तथाविधानेव क्षपयतीति, 'पंचविहं नाणावरणिज्जं'ति मतिज्ञानावरणादिभेदात् 'नवविहं दंसणावरणिज्जं'ति चक्षुर्दर्शनाद्यावरणचतुष्कस्य निद्रापञ्चकस्य च मीलनान्नवविधत्वमस्य 'पंचविहं अंतराइयं'ति दानलाभभोगोपभोगवीर्यविशेषितत्वादिति पञ्चविधत्वमन्तरायस्य, तत्र क्षपयतीति सम्बन्धः, किं कृत्वा? इत्यत आह-'तालमत्थकडं च णं मोहणिज्जं कट्टु'त्ति मस्तकं-मस्तकशूची कृत्तं-छिन्नं यस्यासौ मस्तककृत्तः, तालश्चासौ मस्तककृत्तश्च तालमस्तककृत्तः, छान्दसत्वाच्चैवं निर्देशः, तालमस्तककृत्त इव यत्तत्तालमस्तककृत्तम्, अयमर्थः-छिन्नमस्तकतालकल्पं च मोहनीयं कृत्वा, यथा हि छिन्नमस्तकस्तालः क्षीणो भवति एवं मोहनीयं च क्षीणं कृत्वेति भावः, इदं चोक्तमोहनीयभेदशेषापेक्षया द्रष्टव्यमिति, अथवाऽथ कस्मादनन्तानुबन्ध्यादिस्वभावे तत्र क्षपिते सति ज्ञानावरणीयादि क्षपयत्येव? इति, अत आह—'तालमत्थे'त्यादि, तालमस्तकस्येव कृत्त्वं-क्रिया यस्य तत्तालमस्तककृत्त्वं तदेवंविधं च मोहनीयं 'कट्टु'त्ति इतिशब्दस्येह गम्यमानत्वादितिकृत्वा-इतिहेतोस्तत्र क्षपिते ज्ञानावरणीयादि क्षपयत्येवेति, तालमस्तकमोहनीययोश्च क्रियासाधर्म्यमेव, यथा हि तालमस्तकविनाशक्रियाऽवश्यम्भावितालविनाशा एवं मोहनीयकर्मविनाशक्रियाऽप्यवश्यम्भाविशेषकर्म्मविनाशेति, आह च-"मस्तकसूचिविनाशे तालस्य यथा ध्रुवो भवति नाशः। तद्वत्कर्मविनाशोऽपि मोहनीयक्षये नित्यम् ॥ १ ॥" ततश्च कर्मरजोविकिरणकरं-तद्विक्षेपकम् अपूर्वकरणम्-असदृशाध्यवसायविशेषमनुप्रविष्टस्य, अनन्तं विषयानन्त्यात् अनुत्तरं सर्वोत्तमत्वात् निर्व्याघातं कटकुड्यादिभिरप्रतिहननात्

निरावरणं सर्वथा स्वावरणक्षयात् कृत्स्नं सकलार्थग्राहकत्वात् प्रतिपूर्णं सकलस्वांशयुक्ततयोत्पन्नत्वात् केवलवरज्ञानदर्शनं-केवलमभिधानतो वरं ज्ञानान्तरापेक्षया ज्ञानं च दर्शनं च ज्ञानदर्शनं समाहारद्वन्द्वस्ततः केवलादीनां कर्मधारयः, इह च क्षपणाक्रमः—अणमिच्छमीससम्मं अट्ठ नपुंसित्थिवेयछक्कं च । पुमवेयं च खवेई कोहाईए य संजलणे ॥ १ ॥" इत्यादिग्रन्थान्तरप्रसिद्धो, न चायमिहाश्रितो यथा कथञ्चित्क्षपणामात्रस्यैव विवक्षितत्वादिति । 'आघवेज्ज'त्ति आग्राहयेच्छिष्यान् अर्पयेद्वा-प्रतिपादनतः पूजां प्रापयेत् 'पन्नवेज्ज'त्ति प्रज्ञापयेद् भेदभणनतो बोधयेद्वा 'परूवेज्ज'त्ति उपपत्तिकथनतः 'नन्नत्थ एगनाएण व'त्ति न इति योऽयं निषेधः सोऽन्यत्रैकज्ञाताद्, एकमुदाहरणं वर्जयित्वेत्यर्थः, तथाविधकल्पत्वादस्येति, 'एगवागरणेण व'त्ति एकव्याकरणादेकोत्तरादित्यर्थः, 'पव्वावेज्ज व'त्ति प्रव्राजयेद्रजोहरणादिद्रव्यलिङ्गदानतः 'मुंडावेज्ज व'त्ति मुण्डयेच्छिरोलुञ्चनतः 'उवएसं पुण करेज्ज'त्ति अमुष्य पार्श्वे प्रव्रजेत्यादिकमुपदेशं कुर्यात् । 'सद्दावई'त्यादि शब्दापातिप्रभृतयो यथाक्रमं जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्यभिप्रायेण हैमवतहरिवर्षरम्यकैरण्यवतेषु क्षेत्रसमासाभिप्रायेण तु हैमवतैरण्यवतहरिवर्षरम्यकेषु भवन्ति, तेषु च तस्य भाव आकाशगमनलब्धिसम्पन्नस्य तत्र गतस्य केवलज्ञानोत्पादसद्भावे सति, 'साहरणं पडुच'त्ति देवेन नयनं प्रतीत्य 'सोमणसवणे'त्ति सौमनसवनं मेरौ तृतीयं 'पंडगवणे'त्ति मेरौ चतुर्थं 'गड्डाए व'त्ति गर्त्ते-निम्ने भूभागेऽधोलोकग्रामादौ 'दरिए व'त्ति तत्रैव निम्नतरप्रदेशे 'पायाले व'त्ति महापातालकलशे वलयामुखादौ 'भवणे व'त्ति भवनवासिदेवनिवासे 'पन्नरससु कम्मभूमीसु'त्ति पञ्च भरतानि पञ्च ऐरवतानि पञ्च महाविदेहा इत्येवंलक्षणासु कर्माणि—कृषिवाणिज्यादीनि तत्प्रधाना भूमयः कर्मभूमयस्तासु 'अड्डाइज्जे'त्यादि अर्द्धं तृतीयं येषां तेऽर्द्धतृतीयास्ते च ते द्वीपाश्चेति समासः, अर्द्धतृतीयद्वीपाश्च समुद्रौ च तत्परिमिता अर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रास्तेषां स चासौ विवक्षितो देशरूपो भागः—

अंशोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रतदेकदेशभागस्तत्र ॥ अनन्तरं केवल्यादिवचनाश्रवणे यत्स्यात्तदुक्तमथ तच्छ्रवणे यत्स्यात्तदाह—

सोच्चाणं भंते! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए?, गोयमा! सोच्चाणं केवलिस्स वा जाव अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं एवं जा चेव असोच्चाए वत्तव्वया सा चेव सोच्चाएवि भाणियव्वा, नवरं अभिलावो सोच्चेति, सेसं तं चेव निरवसेसं जाव जस्स णं मणपज्जवनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए कडे भवइ से णं सोच्चा केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभइ सवणयाए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा, तस्स णं अट्ठमंअट्ठमेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स पगइभद्दयाए तहेव जाव गवेसणं करेमाणस्स ओहिणाणे समुप्पज्जइ, से णं तेणं ओहिनाणेणं समुप्पन्नेणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं अलोए लोयप्पमाणमेत्ताइं खण्डाइं जाणइ पासइ॥ से णं भंते! कतिसु लेस्सासु होज्जा?, गोयमा! छसु लेस्सासु होज्जा, तंजहा—कण्हलेसाए जाव सुक्कलेसाए। से णं भंते! कतिसु णाणेसु होज्जा?, गोयमा! तिसु वा चउसु वा होज्जा, तिसु होज्जमाणे तिसु आभिणिबोहियनाणसुयनाणओहिनाणेसु होज्जा, चउसु होज्जमाणे आभि० सुय० ओहि० मणप० होज्जा। से णं भंते! किं सयोगी होज्जा अयोगी होज्जा?, एवं जोगोवओगो संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च, एयाणि सव्वाणि जहा असोच्चाए तहेव भाणियव्वाणि। से णं भंते! किं सवेदए० ?, पुच्छा, गोयमा! सवेदए होज्जा अवेदए वा, जइ अवेदए होज्जा किं

उवसंतवेयए होज्जा खीणवेयए होज्जा?, गोयमा! नो उवसंतवेयए होज्जा, खीणवेदए होज्जा, जइ सवेदए होज्जा किं इत्थीवेदए होज्जा पुरिसवेदए होज्जा नपुंसगवेदए वा होज्जा पुरिसनपुंसगवेदए होज्जा ?, पुच्छा, गोयमा! इत्थीवेदए वा होज्जा पुरिसवेदए वा होज्जा पुरिसनपुंसगवेदए वा होज्जा। से णं भंते! किं सकसाई होज्जा अकसाई वा होज्जा ?, गोयमा! सकसाई वा होज्जा अकसाई वा होज्जा, जइ अकसाई होज्जा किं उवसंतकसाई होज्जा खीणकसाई होज्जा?, गोयमा! नो उवसंतकसाई होज्जा, खीणकसाई होज्जा, जइ सकसाई होज्जा से णं भंते! कतिसु कसाएसु होज्जा?, गोयमा! चउसु वा तिसु वा दोसु वा एक्कंमि वा होज्जा, चउसु होज्जमाणे चउसु संजलणकोहमाणमायालोभेसु होज्जा, तिसु होज्जमाणे तिसु संजलणमाणमायालोभेसु होज्जा, दोसु होज्जमाणे दोसु संजलणमायालोभेसु होज्जा, एगंमि होज्जमाणे एगंमि संजलणे लोभे होज्जा। तस्स णं भंते! केवतिया अज्झवसाणा पण्णत्ता ?, गोयमा! असंखेज्जा, एवं जहा असोचाए तहेव जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जइ, से णं भंते! केवलिपन्नत्तं धम्मं आघवेज्ज वा पन्नवेज्ज वा परूवेज्ज वा ?, हंता आघवेज्ज वा पन्नवेज्ज वा परूवेज्ज वा, से णं भंते! पव्वावेज वा मुंडावेज्ज वा ?, हंता गोयमा! पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा, तस्स णं भंते! सिस्सावि पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा?, हंता पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा, तस्स णं भंते! पसिस्सावि पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा ?, हंता पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा। से णं भंते! सिज्झति बुज्झति जाव अंतं करेइ ?, हंता सिज्झइ वा जाव अंतं करेइ, तस्स णं भंते! सिस्सावि सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति ?, हंता सिज्झंति जाव अंतं

करेन्ति, तस्स णं भंते! पसिस्सावि सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति, एवं चेव जाव अंतं करेन्ति। से णं भंते! किं उड्ढं होज्जा जहेव असोच्चाए जाव तदेक्कदेसभाए होज्जा। ते णं भंते! एगसमएणं केवतिया होज्जा?, गोयमा! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं अट्ठसयं १०८, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-सोच्चाणं केवलिस्स वा जाव केवलिउवासियाए वा जाव अत्थेगतिए केवलनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगतिए नो केवलनाणं उप्पाडेज्जा। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ३७०) नवमसयस्स इगतीसइमो उद्देसो ॥ ९-३१ ॥

'सोच्चाण'मित्यादि, अथ यथैव केवल्यादिवचनाश्रवणावाप्तबोध्यादेः केवलज्ञानमुत्पद्यते न तथैव तच्छ्रवणावाप्तबोध्यादेः, किन्तु प्रकारान्तरेणेति दर्शयितुमाह—'तस्स ण'मित्यादि, 'तस्स'त्ति यः श्रुत्वा केवलज्ञानमुत्पादयेत्तस्य कस्यापि अर्थात् प्रतिपन्नसम्यग्दर्शनचारित्रलिङ्गस्य 'अट्ठमंअट्ठमेण'मित्यादि च यदुक्तं तत्प्रायो विकृष्टतपश्चरणवतः साधोरवधिज्ञानमुत्पद्यत इति ज्ञापनार्थमिति, 'लोयप्पमाणमेत्ताइं'ति लोकस्य यत्प्रमाणं तदेव मात्रा—परिमाणं येषां तानि तथा ॥ अथैनमेव लेश्यादिभिर्निरूपयन्नाह—'से णं भंते!'इत्यादि, तत्र 'से णं'ति सोऽनन्तरोक्तविशेषणोऽवधिज्ञानी 'छसु लेसासु होज्ज'त्ति यद्यपि भावलेश्यासु प्रशस्तास्वेव तिसृष्ववधिज्ञानं लभते तथाऽपि द्रव्यलेश्याः प्रतीत्य षट्स्वपि लेश्यासु लभते सम्यक्त्वश्रुतवत्, यदाह—'सम्मत्तसुयं सव्वासु लब्भइ'त्ति, तल्लाभे चासौ षट्स्वपि भवतीत्युच्यत इति, 'तिसु व'त्ति अवधिज्ञानस्याद्यज्ञानद्वयाविनाभूतत्वादधिकृतावधिज्ञानी त्रिषु ज्ञानेषु भवेदिति, 'चउसु वा होज्ज'त्ति मतिश्रुतमनःपर्यायज्ञानिनोऽवधिज्ञानोत्पत्तौ ज्ञानचतुष्टयभावाच्चतुर्षु ज्ञानेष्वधिकृतावधिज्ञानी भवेदिति। 'सवेयए वा'इत्यादि, अक्षीणवेदस्यावधिज्ञानोत्पत्तौ सवेदकः सन्नवधिज्ञानी भवेत्, क्षीणवेदस्य चानधिज्ञानोत्पत्ताववेदकः

सन्नयं स्यात, 'नो उवसंतवेयए होज्ज'त्ति उपशान्तवेदोऽयमवधिज्ञानी न भवति, श्रामण्यकेवलज्ञानस्यास्य विवक्षितत्वादिति । 'सकसाइ वा'इत्यादि, यः कषायाक्षये सत्यवधिं लभते स सकषायी सन्नवधिज्ञानी भवेत्, यस्तु कषायक्षयेऽसावकषायीति । 'चउसु वे'त्यादि, यद्यक्षीणकषायः सन्नवधिं लभते तदाऽयं चारित्रयुक्तत्वाच्चतुर्षु सञ्ज्वलनकषायेषु भवति, यदा तु क्षपकश्रेणिवर्त्तित्वेन सञ्ज्वलनक्रोधे क्षीणेऽवधिं लभते तदा त्रिषु सञ्ज्वलनमानादिषु, यदा तु तथैव सञ्ज्वलनक्रोधमानयोः क्षीणयोस्तदा द्वयोः, एवमेकत्रेति ॥ नवमशते एकत्रिंशत्तम उद्देशकः समाप्तः ॥ ९-३१ ॥

---

अनन्तरोद्देशके केवल्यादिवचनं श्रुत्वा केवलज्ञानमुत्पादयेदित्युक्तम् , इह तु येन केवलिवचनं श्रुत्वा तदुत्पादितं स दर्श्यते, इत्येवंसंबंधस्य द्वात्रिंशत्तमोद्देशकस्येदमादिसूत्रम् —

तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियग्गामे नगरे होत्था वन्नओ, दूतिपलासे चेइए, सामी समोसढे, परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जे गंगेए नामं अणगारे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छइत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा समणं भगवं महावीरं एवं वयासी—संतरं भंते! नेरइया उववज्जंति निरंतरं नेरइया उववज्जंति ?, गंगेया! संतरंपि नेरइया उववज्जंति निरंतरंपि नेरइया उववज्जंति, संतरं भंते! असुरकुमारा उववज्जंति?, निरंतरं असुरकुमारा उववज्जंति ?, गंगेया! संतरंपि असुरकुमारा उववज्जंति निरंतरंपि असुरकुमारा उववज्जंति, एवं जाव थणियकु-

मारा, संतरं भंते! पुढविकाइया उववज्जंति निरंतरं पुढविकाइया उववज्जंति ?, गंगेया! नो संतरं पुढविकाइया उववज्जंति, निरंतरं पुढविकाइया उववज्जंति, एवं जाव वणस्सइकाइया, वेइंदिया जाव वेमाणिया एते जहा णेरइया (सूत्रं ३७१) संतरं भंते! नेरइया उववट्टंति निरंतरं नेरइया उववट्टंति ?, गंगेया! संतरंपि नेरइया उववट्टंति निरंतरंपि नेरइया उववट्टंति, एवं जाव थणियकुमारा, संतरं भंते! पुढविक्काइया उववट्टंति? पुच्छा, गंगेया! णो संतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति, निरंतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति एवं जाव वणस्सइक्काइया नो संतरं, निरंतरं उव्वट्टंति, संतरं भंते! वेइंदिया उव्वट्टंति निरंतरं वेंदिया उव्वट्टंति ?, गंगेया! संतरंपि वेइंदिया उव्वट्टंति निरंतरंपि वेइंदिया उव्वट्टंति, एवं जाव वाणमंतरा, संतरं भंते! जोइसिया चयंति? पुच्छा, गंगेया! संतरंपि जोइसिया चयंति निरंतरंपि जोइसिया चयंति एवं जाव वेमाणियावि ( सूत्रं ३७२ ) ॥

'ते ण'मित्यादि, 'संतरं'ति समयादिकालापेक्षया सविच्छेदं, तत्र चैकेन्द्रियाणामनुसमयमुत्पादात् निरन्तरत्वम्, अन्येषां तूत्पादे विरहस्यापि भावात् सान्तरत्वं निरन्तरत्वं च वाच्यमिति ॥ उत्पन्नानां च सतामुद्वर्त्तना भवतीत्यतस्तां निरूपयन्नाह—'संतरं भंते! नेरइया उववट्टंती'त्यादि ॥ उद्वृत्तानां च केषाञ्चिद्गत्यन्तरे प्रवेशनं भवतीत्यतस्तन्निरूपणायाह—

कइविहे णं भंते! पवेसणए पन्नत्ते?, गंगेया! चउव्विहे पवेसणए पन्नत्ते, तंजहा—नेरइयपवेसणए तिरियजोणियपवेसणए मणुस्सपवेसणए देवपवेसणए। नेरइयपवेसणए णं भंते! कइविहे पन्नत्ते?, गंगेया! सत्तविहे पन्नत्ते, तंजहा—रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणए जाव अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणए ॥ एगे णं भंते! नेरइए

नेरइयपवेसणएणं पविसमाणे किं रयणप्पभाए होज्जा सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?, गंगेया! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा। दो भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?, गंगेया! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा, अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा जाव एगे रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, एवं एक्केक्का पुढवी छड्डेयव्वा जाव अहवा एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा॥ तिन्नि भंते! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा?, गंगेया! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा, अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयणप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा६ अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२ अहवा एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा १७ अहवा दो सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा दो सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २२ एवं जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया भणिया तहा सव्वपुढवीणं भाणियव्वा जाव अहवा दो तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, ४-४-३-३-२-२-१-१ (४२) अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वा-

लुयप्पभाए होज्जा १ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा २ जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा ६ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा ७ एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुय० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९, अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा १० जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा १३ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १४ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा १६ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा १७ जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा २० जाव अहवा एगे सक्कर० एगे पंक०एगे अहेसत्तमाए होज्जा २२ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा २३ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्प० एगे अहेसत्तमाए होज्जा २४ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २५ अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा २६ अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए होज्जा २७ अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २८ अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा २९ अहवा एगे

वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३० अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३१ अहवा एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ३२ अहवा एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३३ अहवा एगे पंकप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३४ अहवा एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३५ चत्तारि भंते! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा? पुच्छा, गंगेया! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७, अहवा एगे रयणप्पभाए तिन्नि सक्करप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयणप्पभाए तिन्नि वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए तिन्नि अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा दो रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा १२, अहवा तिन्नि रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा तिन्नि रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८, अहवा एगे सक्करप्पभाए तिन्नि वालुयप्पभाए होज्जा, एवं जहेव रयणप्पभाए उवरिमाहिं समं चारियं तहा सक्करप्पभाएवि उवरिमाहिं समं चारेयव्वं ५, एवं एक्केक्काए समं चारियव्वं जाव अहवा तिन्नि तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२-६-३-(६३) अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्कर० दो पंक० होज्जा एवं जाव एगे रयणप्पभाए एगे सक्कर० दो अहेसत्तमाए होज्जा ५ अहवा एगे रयण० दो सक्कर० एगे वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० दो सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १० अहवा दो रयण० एगे सक्कर० एगे वालुयप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा दो

रयण० एगे सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० दो पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुय० दो अहेसत्तमाए होज्जा ४ एवं एएणं गमएणं जहा तिण्हं तियजोगो तहा भाणियव्वो जाव अहवा दो धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०५ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा १ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे धूमप्पभाए होज्जा २ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे तमाए होज्जा ३ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे धूमप्पभाए ५ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंकप्पभा० एगे तमाए होज्जा ६ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ७ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्कर० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा ८ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९ अहवा एगे रयण० एगे सक्करप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १० अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूमप्पभाए होज्जा ११ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे तमाए होज्जा १२ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १३ अहवा एगे रयण० एगे वालुया० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा १४ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुय० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १६ अहवा एगे रयण० एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा १७ अहवा एगे रयण० एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८ अहवा

एगे रयण० एगे पंक० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९ अहवा एगे रयण०एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २० अहवा एगे सक्कर० एगे वालुय०एगे पंक० एगे धूमप्पभाए होज्जा २१ एवं जहा रयणप्पभाए उवरिमाओ पुढवीओ चारियाओ तहा सक्करप्पभाएवि उवरिमाओ चारियव्वाओ जाव अहवा एगे सक्कर० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३० अहवा एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा ३१ अहवा एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३२ अहवा एगे वालुय० एगे पंक० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३३ अहवा एगे वालुय०एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३४ अहवा एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३५ ॥

'कइविहे ण'मित्यादि 'पवेसणए'त्ति गत्यन्तरादुद्वृत्तस्य विजातीयगतौ जीवस्य प्रवेशनं, उत्पाद इत्यर्थः, 'एगे भंते! नेरइए'इत्यादौ सप्त विकल्पाः । 'दो भंते! नेरइए'त्यादावष्टाविंशतिर्विकल्पाः, तत्र रत्नप्रभाद्याः सप्तापि पृथिवीक्रमेण पट्टादौ व्यवस्थाप्याक्षसञ्चारणया पृथिवीनामेकत्वद्विकसंयोगाभ्यां तेऽवसेयाः, तत्रैकैकपृथिव्यां नारकद्वयोत्पत्तिलक्षणैकत्वे सप्त विकल्पाः, पृथिवीद्वये नारकद्वयोत्पत्तिलक्षणद्विकयोगे त्वेकविंशतिरित्येवमष्टाविंशतिः 'एवं एक्केक्का पुढवी छड्डेयव्वे'ति अक्षसञ्चारणापेक्षयेदमुक्तमिति ॥ 'तिन्नि भंते ! नेरइए'त्यादौ चतुरशीतिर्विकल्पाः, तथाहि—पृथिवीनामेकत्वे सप्त विकल्पाः, द्विकसंयोगे तु तासामेको द्वावित्यनेन नारकोत्पादविकल्पेन रत्नप्रभया सह शेषाभिः क्रमेण चारिताभिर्लब्धाः षड् द्वावेक इत्यनेनापि नारकोत्पादविकल्पेन षडेव, तदेवं द्वादश १२, एवं शर्कराप्रभया पञ्च पञ्चेति दश एवं वालुकाप्रभयाऽष्टौ पङ्कप्रभया षट् धूमप्रभया चत्वारः तमःप्रभया द्वाविति द्विक-

योगे द्विचत्वारिंशत्, त्रिकयोगे तु तासां पञ्चत्रिंशद्विकल्पास्ते चाक्षसञ्चारणया गम्यास्तदेवमेते सर्वेऽपि चतुरशीतिरिति ।७।४२। ३५–८४ ॥ 'चत्तारि भंते! नेरइया'इत्यादौ दशोत्तरे द्वे शते विकल्पानां, तथाहि—पृथिवीनामेकत्वे सप्त विकल्पाः, द्विकसंयोगे तु तासामेकस्त्रय इत्यनेन नारकोत्पादविकल्पेन रत्नप्रभया सह शेषाभिः क्रमेण चारिताभिर्लब्धाः षट्, द्वौ द्वावित्यनेनापि षट्, त्रय एक इत्यनेनापि षडेव. तदेवमेतेऽष्टादश, शर्कराप्रभया तु तथैव त्रिपु पूर्वोक्तनारकोत्पादविकल्पेपु पञ्च पञ्चेति पञ्चदश, एवं वालुकाप्रभया चत्वारश्चत्वार इति द्वादश, पङ्कप्रभया त्रयस्त्रय इति नव, धूमप्रभया द्वौ द्वाविति षट्, तमःप्रभयैकैक इति त्रयः. तदेवमेते द्विकसंयोगे त्रिषष्टिः ६३, तथा पृथिवीनां त्रिकयोगे एक एको द्वौ चेत्येवं नारकोत्पादविकल्पे रत्नप्रभाशर्कराप्रभाभ्यां सहान्याभिः क्रमेण चारिताभिर्लब्धाः पञ्च, एको द्वावेकश्चेत्येवं नारकोत्पादविकल्पान्तरेऽपि पञ्च, द्वावेक एकश्चेत्येवमपि नारकोत्पादविकल्पान्तरे पञ्चैवेति पञ्चदश १५, एवं रत्नप्रभावालुकाप्रभाभ्यां सहोत्तराभिः क्रमेण चारिताभिर्लब्धा द्वादश १२, एवं रत्नप्रभापङ्कप्रभाभ्यां नव, रत्नप्रभाधूमप्रभाभ्यां षट्, रत्नप्रभातमःप्रभाभ्यां त्रयः, शर्कराप्रभावालुकाप्रभाभ्यां द्वादश १२, शर्कराप्रभापङ्कप्रभाभ्यां नव, शर्कराप्रभाधूमप्रभाभ्यां षट् शर्कराप्रभातमःप्रभाभ्यां त्रयः, वालुकाप्रभापङ्कप्रभाभ्यां नव, वालुकाप्रभाधूमप्रभाभ्यां षट्, वालुकाप्रभातमःप्रभाभ्यां त्रयः, पङ्कप्रभाधूमप्रभाभ्यां षट्, पङ्कप्रभातमःप्रभाभ्यां त्रयः, धूमप्रभादिभिस्तु त्रय इति, तदेवं त्रिकयोगे पञ्चोत्तरं शतं, चतुष्कसंयोगे तु पञ्चत्रिंशदिति, एवं सप्तानां त्रिषष्टेः पञ्चोत्तरशतस्य पञ्चत्रिंशतश्च मीलने द्वे शते दशोत्तरे भवत इति ॥

| चतुष्प्रवेशे त्रिकयोगे |
| --- |
| ४५ रत्न |
| ३० शर्करा |
| १८ वालुका० |
| ९ पंकप्रभा |
| ३ धूमप्रभा |

पंच भंते! नेरइया नेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा? पुच्छा, गंगेया! रयणप्पभाए

वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा अहवा एगे रयण० चत्तारि सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण० चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० तिन्नि सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए तिन्नि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा तिन्नि रयण० दो सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहेसत्तमाए होज्जा अहवा चत्तारि रयण० एगे सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा चत्तारि रयण० एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे सक्कर० चत्तारि वालुयप्पभाए होज्जा एवं जहा रयणप्पभाए समं उवरिमपुढवीओ चारियाओ तहा सक्करप्पभाएवि समं चारेयव्वाओ जाव अहवा चत्तारि सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा एवं एक्केक्काए समं चारेयव्वाओ जाव अहवा चत्तारि तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० तिन्नि वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० तिन्नि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो सक्कर० दो वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० दो सक्कर० दो अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० तिन्नि सक्कर० एगे वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० तिन्नि सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० दो सक्कर० एगे वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहेसत्तमाए अहवा तिन्नि रयण० एगे सक्कर० एगे वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा तिन्नि रयण०

| र | स |
|---|---|
| १ | ४ |
| २ | ३ |
| ३ | २ |
| ४ | १ |

| एवं पंचजीवानां द्विकसंयोगे भागाः ८४ |
|---|
| २४ रत्नप्रभा |
| २० शर्कराप्रभा |
| १६ वालुकाप्रभा |
| १२ पंकप्रभा |
| ८ धूमप्रभा |
| ४ तमःप्रभा |

एगे सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे वालुय तिन्नि पंकप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं जहा चउण्हं तियासंजोगो भणितो तहा पंचण्हवि तियासंजोगो भाणियव्वो, नवरं तत्थ एगो संचारिज्जइ, इह दोन्नि, सेसं तं चेव जाव अहवा तिन्नि धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० दो पंकप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० दो अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० दो वालुय० एगे पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहेसत्तमाए ८, अहवा एगे रयण० दो सक्करप्पभाए एगे वालुय० एगे पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० दो सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२ अहवा दो रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दो रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १६ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० दो धूमप्पभाए होज्जा एवं जहा चउण्हं चउक्कसंजोगो भणिओ तहा पंचण्हवि चउक्कसंजोगो भाणियव्वो, नवरं अब्भहियं एगो संचारेयव्वो, एवं जाव अहवा दो पंक० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूमप्पभाए होज्जा १ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे पंक० एगे तमाए होज्जा २ अहवा एगे रयण० जाव एगे पंक० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ४ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे धूमाए एगे

| त्रिकसंयोगे | |
|---|---|
| ९० | रत्न |
| ६० | शर्करा |
| ३६ | वालुकप्रभा |
| १८ | पंकप्रभा |
| ६ | धूमप्रभा |
| | एवं २१० |

अहेसत्तमाए होज्जा ५ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा ७ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ८ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे तम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे धूम० एगे तम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १० अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा ११ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १३ अहवा एगे रयण० एगे वालुय०एगे धूम० एगे तम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १४ अहवा एगे रयण० एगे पंक० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५ अहवा एगे सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे तमाए होज्जा १६ अहवा एगे सक्कर० जाव एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १७ अहवा एगे सक्कर०जाव एगे पंक० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८ अहवा एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९ अहवा एगे सक्कर० एगे पंक० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा २० अहवा एगे वालुय० जाव एगे अहे सत्तमाए होज्जा २१ ॥

'पंच भंते ! नेरइया'इत्यादि, पूर्वोक्तक्रमेण भावनीयं, नवरं सङ्क्षेपेण विकल्पसङ्ख्या दर्श्यते–एकत्वे सप्त विकल्पाः, द्विकसंयोगे तु चतुरशीतिः, कथं ?, द्विकसंयोगे सप्तानां पदानामेकविंशतिर्भङ्गाः, पञ्चानां च नारकाणां द्विधाकरणेऽक्षसञ्चारणावगम्याश्चत्वारो विकल्पा भवन्ति, तद्यथा–एकश्चत्वारश्च, द्वौ त्रयश्च, त्रयो द्वौ च, चत्वार एकश्चेति, तदेवमेकविंशतिश्चतुर्भिर्गुणिता चतुरशी-

तिर्भवतीति, त्रिकयोगे तु सप्तानां पदानां पञ्चत्रिंशद्विकल्पाः, पञ्चानां च त्रित्वेन स्थापने षड् विकल्पास्तद्यथा–एक एकस्त्रयश्च, एको द्वौ द्वौ च, द्वावेको द्वौ च, एकस्त्रय एकश्च, द्वौ द्वावेकश्च, त्रय एक एकश्चेति, तदेवं पञ्चत्रिंशतः षड्भिर्गुणने दशोत्तरं भङ्गकशतद्वयं भवति, चतुष्कसंयोगे तु सप्तानां पञ्चत्रिंशद्विकल्पाः, पञ्चानां चतूराशितया स्थापने चत्वारो विकल्पास्तद्यथा–११११२ । ११२१ । १२११ । २१११ । तदेवं पञ्चत्रिंशतश्चतुर्भिर्गुणने चत्वारिंशदधिकं शतं भवतीति, पञ्चकयोगे त्वेकविंशतिरिति, सर्वमीलने च चत्वारि शतानि द्विषष्ट्यधिकानि भवन्तीति ॥

छब्भंते ! नेरइया नेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा ? पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७ अहवा एगे रयण० पंच सक्करप्पभाए वा होज्जा अहवा एगे रयण० पंच वालुयप्पभाए वा होज्जा जाव अहवा एगे रयण० पंच अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० चत्तारि सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा दो रयण० चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा तिन्नि रयण० तिन्नि सक्कर० एवं एएणं कमेणं जहा पंचण्हं दुयासंजोगो तहा छण्हवि भाणियव्वो नवरं एक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव अहवा पंच तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे रयण०एगे सक्कर० चत्तारि वालुयप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० चत्तारि पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो सक्कर० तिन्नि वालुयप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं जहा पंचण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा छण्हवि भाणियव्वो नवरं एक्को अहिओ उच्चारेयव्वो, सेसं तं चेव ३४, चउक्कसंजोगोवि तहेव, पंचगसंजोगोवि

तहेव, नवरं एक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव पच्छिमो भंगो अहवा दो वालुय० एगे पंक०एगे धूम०एगे तम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० जाव एगे तमाए होज्जा १ अहवा एगे रयण० जाव एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा २ अहवा एगे रयण० जाव एगे पंक० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३ अहवा एगे रयण० जाव एगे वालुय० एगे धूम० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ७ ॥

सर्वमीलने ९२४ भङ्गाः
एक०७ द्विकसंयोगाः १०५
त्रिकसंयोगाः ३०५
चतुष्कसंयोगाः ३५०
पंचकसंयोगाः १०५
षट्कसंयोगाः ७

'छब्भंते नेरइये'त्यादि ॥ इहैकत्वे सप्त, द्विकयोगे तु षण्णां द्वित्वे पञ्च विकल्पास्तद्यथा— । १५ । २४ । ३३ । ४२ । ५१ । तैश्च सप्तपदद्विकसंयोगैरेकविंशतेर्गुणनात् पञ्चोत्तरं भङ्गकशतं भवति, त्रिकयोगे तु षण्णां त्रित्वे दश विकल्पास्तद्यथा— । ११४ । १२३ । २१३ । १३२ । २२२ । ३१२ । १४१ । २३१ । ३२१ । ४११ । एतैश्च पञ्चत्रिंशतः सप्तपदत्रिकसंयोगानां गुणनात् त्रीणि शतानि पञ्चाशदधिकानि भवन्ति, चतुष्कसंयोगे तु षण्णां चतूराशितया स्थापने दश विकल्पास्तद्यथा— । ११११३ । ११२२ । १२१२ । २११२ । ११३१ । १२२१ । २१२१ । १३११ । २२११ । ३१११ ।

३०
२५
२०
१५
१०
५
१०५

पञ्चत्रिंशतश्च सप्तपदचतुष्कसंयोगानां दशभिर्गुणनात्रीणि शतानि पञ्चाशदधिकानि भवन्ति, पञ्चकसंयोगे तु षण्णां पञ्चधाकरणे पञ्च विकल्पास्तद्यथा—१११२ । ११२२१ । ११२११ । १२१११ । २११११ । सप्तानां च पदानां पञ्चकसंयोगे एकविंशतिर्विकल्पाः,

तेषां च पञ्चभिर्गुणने पञ्चोत्तरं शतमिति, षट्कसंयोगे तु सप्तैव, ते च सर्वमीलने नव शतानि चतुर्विंशत्युत्तराणि भवन्तीति ॥

| सप्तप्रवेशे संयोगाः १७१६ |
|---|
| एक० ७ भङ्गाः |
| द्विकसंयोगाः १२६ |
| त्रिकसंयोगाः ५२५ |
| चतुष्कसंयोगाः ७०० |
| पंचकसंयोगाः ३१५ |
| षट्कसंयोगाः ४२ |
| सप्तकसंयोगः १ |

सत्त भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७, अहवा एगे रयणप्पभाए छ सक्करप्पभाए होज्जा एवं एएणं कमेणं जहा छण्हं दुयासंजोगो तहा सत्तण्हवि भाणियव्वं नवरं एगो अब्भहिओ संचारिज्जइ, सेसं तं चेव, तियासंजोगो चउक्कसंजोगो पंचसंजोगो छक्कसंजोगो य छण्हं जहा तहा सत्तण्हवि भाणियव्वं, नवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव छक्कगसंजोगो अहवा दो सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ॥

'सत्त भंते !' इत्यादि, इहैकत्वे सप्त, द्विकयोगे तु सप्तानां द्वित्वे षड् विकल्पास्तद्यथा—१६ । २५ । ३४ । ४३ । ५२ । ६१ । षड्भिश्च सप्तपदद्विकसंयोगएकविंशतेर्गुणनात् षड्विंशत्युत्तरं भङ्गकशतं भवति, त्रिकयोगे तु सप्तानां त्रित्वे पञ्चदश विकल्पास्तद्यथा—११५ । १२४ । २१४ । १३३ । २२३ । ३१३ । १४२ । २३२ । ३२२ । ४१२ । १५१ । २४१ । ३३१ । ४२१ । ५११ । एतैश्च पञ्चत्रिंशतः सप्तपदत्रिकसंयोगानां गुणनात् पञ्च शतानि पञ्चविंशत्यधिकानि भवन्तीति, चतुष्कयोगे तु सप्तानां चतूराशितया स्थापने एक एक एकश्चत्वारश्चेत्यादयो विंशतिर्विकल्पाः, ते च वक्ष्यमाणाश्च पूर्वोक्तभङ्गकानुसारेणाक्षसञ्चारणाकुशलेन स्वयमेवावगन्तव्याः, विंशत्या च पञ्चत्रिंशतः सप्तपदचतुष्कसंयोगानां गुणनात् सप्त शतानि विकल्पानां भवन्ति, पञ्चकसंयोगे तु सप्तानां पञ्चतया स्थापने एक एक एक एकस्त्रयश्चेत्यादयः पञ्चदश विकल्पाः, एतैश्च सप्तपदपञ्चकसंयोगएकविंशतेर्गुणनात्रीणि शतानि

पञ्चदशोत्तराणि भवन्ति, पट्कसंयोगे तु सप्तानां षोढाकरणे पञ्चैकका द्वौ चेत्यादयः १११११२ षड् विकल्पाः, सप्तानां च पदानां पट्कसंयोगे सप्त विकल्पाः, तेषां च षड्भिर्गुणने द्विचत्वारिंशद्विकल्पा भवन्ति, सप्तकसंयोगे त्वेक एवेति, सर्वमीलने च सप्तदश शतानि षोडशोत्तराणि भवन्ति ॥

'अट्ठ भंते! नेरतिया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा पुच्छा, गंगेया! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा अहवा एगे रयण० सत्त सक्करप्पभाए होज्जा एवं दुयासंजोगो जाव छक्कसंजोगो य जहा सत्तण्हं भणिओ तहा अट्ठण्हवि भाणियव्वो नवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो सेसं तं चेव जाव छक्कसंजोगस्स अहवा तिन्नि सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० जाव एगे तमाए दो अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० जाव दो तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा एवं संचारेयव्वं जाव अहवा दो रयण० एगे सक्कर० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ॥

| अष्टानां जीवानां भङ्गाः ३००३ |
|---|
| एकयोगे ७ |
| द्विक० १४७ |
| त्रिक० ७३५ |
| चतु० १२२५ |
| पंच० ७३५ |
| पट्० १४७ |
| सप्त० ७ |

'अट्ठ भंते!' इत्यादि, इहैकत्वे सप्त विकल्पाः, द्विकसंयोगे त्वष्टानां द्वित्वे एकः सप्तेत्यादयः सप्त विकल्पाः प्रतीता एव, तैश्च सप्तपदद्विकसंयोगैकविंशतेर्गुणनाच्छतं सप्तचत्वारिंशदधिकानां भवतीति, त्रिकसंयोगे त्वष्टानां त्रित्वे एक एकः षड् इत्यादय एकविंशतिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदत्रिकसंयोगे पञ्चत्रिंशतो गुणने सप्त शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि भवन्ति, चतुष्कसंयोगे त्वष्टानां चतुर्द्धात्वे एक एक एकः पञ्चेत्यादयः पञ्चत्रिंशद्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदचतुष्कसंयोगानां पञ्चत्रिंशतो गुणने द्वादश शतानि पञ्चविंश-

त्र्युत्तराणि भङ्गकानां भवन्तीति, पञ्चकसंयोगे त्वष्टानां पञ्चत्वे एक एक एक एकश्चत्वारश्चेत्यादयः पञ्चत्रिंशद्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदपञ्चकसंयोगैकविंशतेर्गुणने सप्त शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि भवन्तीति, षट्कसंयोगे त्वष्टानां षोढात्वे पञ्चैककास्त्रयश्चेत्यादयः १११११३ एकविंशतिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदषट्कसंयोगानां सप्तकस्य गुणने सप्तचत्वारिंशदधिकं भङ्गकशतं भवतीति, सप्तसंयोगे पुनरष्टानां सप्तधात्वे सप्त विकल्पाः प्रतीता एव, तैश्चैकैकस्य सप्तकसंयोगस्य गुणने सप्तैव विकल्पाः, एषां च मीलने त्रीणि सहस्राणि त्र्युत्तराणि भवन्तीति ॥

| | |
|---|---|
| असंयोगाः | ७ |
| द्विकसं० | १६८ |
| त्रिकसं० | ९८० |
| चतुष्कसं० | १९६० |
| पंचकसं० | १४७० |
| षट्कसं० | ३९२ |
| सप्तकसं० | २८ |
| | ५००५ |

नव भंते! नेरतिया नेरतियपवेसणएणं पविसमाणा किं पुच्छा, गंगेया! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा अहवा एगे रयण० अट्ठ सक्करप्पभाए होज्जा एवं दुयासंजोगो जाव सत्तगसंजोगे य जहा अट्ठण्हं भणियं तहा नवण्हंपि भाणियव्वं नवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो सेसं तं चेव पच्छिमो आलावगो अहवा तिन्नि रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय जाव एगे अहेसत्तमाए वा होज्जा ॥

'नव भंते!' इत्यादि, इहाप्येकत्वे सप्तैव. द्विकसंयोगे तु नवानां द्वित्वेऽष्टौ विकल्पाः प्रतीता एव, तैश्चैकविंशतेः सप्तपदद्विकसंयोगानां गुणनेऽष्टषष्ट्यधिकं भङ्गकशतं भवतीति, त्रिकसंयोगे तु नवानां द्वावेककौ तृतीयश्च सप्तकः ११७ इत्येवमादयोऽष्टाविंशतिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदत्रिकसंयोगपञ्चत्रिंशतो गुणने नव शतान्यशीत्युत्तराणि भङ्गकानां भवन्तीति, चतुष्कयोगे तु नवानां चतुर्द्धात्वे त्रय एककाः षट् चेत्यादयः १११६ षट्पञ्चाशद्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदचतुष्कसंयोगपञ्चत्रिंशतो गुणने सहस्रं नव शतानि षष्टिश्च

भङ्गकानां भवन्तीति, पञ्चकसंयोगे तु नवानां पञ्चधात्वे चत्वार एककाः पञ्चकश्चेत्यादयः ११११५ सप्ततिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदपञ्चकसंयोगएकविंशतेर्गुणने सहस्रं चत्वारि शतानि सप्ततिश्च भङ्गकानां भवन्तीति, पट्संयोगे तु नवानां षोढात्वे पञ्चैककाश्चतुष्ककश्चेत्यादयः १११११४ पट्पञ्चाशद्विकल्पा भवन्ति, तैश्च सप्तपदपट्कसंयोगसप्तकस्य गुणने शतत्रयं द्विनवत्यधिकं भङ्गकानां भवन्तीति, सप्तपदसंयोगे पुनर्नवानां सप्तत्वे एककाः पट् त्रिकश्चेत्यादयो ११११११३ ऽष्टाविंशतिर्विकल्पा भवन्तीति, तैश्चैकस्य सप्तकसंयोगस्य गुणनेऽष्टाविंशतिरेव भङ्गकाः, एषां च सर्वेषां मीलने पञ्च सहस्राणि पञ्चोत्तराणि विकल्पानां भवन्तीति ॥

दस भंते! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा पुच्छा, गंगेया! रयणप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७ अहवा एगे रयणप्पभाए नव सक्करप्पभाए होज्जा एवं दुयासंजोगो जाव सत्तसंजोगो य जहा नवण्हं नवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो सेसं तं चेव अपच्छिमआलावगो अहवा चत्तारि रयण० एगे सक्करप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ॥

| ७ असंयोगी |
|---|
| १८९ द्विकसं० |
| १२६० त्रिकसं |
| २९४० चतुष्कसं० |
| २६४६ पञ्चकसं० |
| ८८२ पट्कसं० |
| ८४ सप्तसं० |
| सर्वं ८००८ |

'दस भंते!' इत्यादि, इहाप्येकत्वे सप्तैव, द्विकसंयोगे तु दशानां द्विधात्वे एको नव चेत्येवमादयो नव विकल्पाः, तैश्चैकविंशतेः सप्तपदद्विकसंयोगानां गुणने एकोननवत्यधिकं भङ्गकशतं भवतीति, त्रिकयोगे तु दशानां त्रिधात्वे एक एकोऽष्टौ चेत्येवमादयः पट्त्रिंशद्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदत्रिकसंयोगपञ्चत्रिंशतो गुणने द्वादश शतानि पष्ट्यधिकानि भङ्गकानां भवन्तीति, चतुष्कसंयोगे तु दशानां चतुर्धात्वे एककत्रयं सप्तकश्चेत्येवमादयश्चतुरशीतिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदचतुष्कसंयोगपञ्चत्रिंशतो गुणने एकोनत्रिंच्छतानि चत्वारिंशदधिकानि भङ्गकानां भवन्तीति पञ्चकसंयोगे

तु दशानां पञ्चधात्वे चत्वार एककाः षट्कश्चेत्यादयः षड्विंशत्युत्तरंशतसङ्ख्या विकल्पा भवन्ति, तैश्च सप्तपदपञ्चकसंयोगैकविंशतेर्गुणने षड्विंशतिः शतानि षट्चत्वारिंशदधिकानि भङ्गकानां भवन्तीति, षट्कसंयोगे तु दशानां षोढात्वे पञ्चैकका: पञ्चकश्चेत्यादयः षड्विंशत्युत्तरशतसङ्ख्या विकल्पा भवन्ति, तैश्च सप्तपदषट्कसंयोगसप्तकस्य गुणनेऽष्टौ शतानि द्व्यशीत्यधिकानि भङ्गकानां भवन्तीति, सप्तकसंयोगे तु दशानां सप्तधात्वे षडेककाश्चतुष्कश्चेत्येवमादयश्चतुरशीतिर्विकल्पाः, तैश्चैकस्य सप्तकसंयोगस्य गुणने चतुरशीतिरेव भङ्गकानां भवन्ति, सर्वेषां चैषां मीलनेऽष्ट सहस्राणि अष्टोत्तराणि विकल्पानां भवन्तीति ॥

संखेज्जा भंते! नेरइया नेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा पुच्छा, गंगेया! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७ अहवा एगे रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए वा होज्जा एवं जाव अहवा दो रयण० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा तिन्नि रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा एवं एएणं कमेणं एक्केको संचारेयव्वो जाव अहवा दस रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दस रयण० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा संखेज्जा रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा संखेज्जा रयणप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा एवं जहा रयणप्पभाए उवरिमपुढवीएहिं समं संचारिया एवं सक्करप्पभाएवि उवरिमपुढवीएहिं समं चारेयव्वा, एवं एक्केक्का पुढवी उवरिमपुढवीएहिं समं चारेयव्वा जाव अहवा संखेज्जा तमाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो सक्कर० संखेज्जा

वालुयप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो सक्कर० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० तिन्नि सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं एक्केक्को संचारेयव्वो अहवा एगे रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण० संखेज्जा वालुय० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा दो रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा तिन्नि रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं एक्केक्को रयणप्पभाए संचारेयव्वो जाव अहवा संखेज्जा रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा संखेज्जा रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे वालुय० संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण० एगे वालुय० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो वालुय० संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं तियासंजोगो चउक्कसंजोगो जाव सत्तगसंजोगो य जहा दसण्हं तहेव भाणियव्वो पच्छिमो आलावगो सत्तसंजोगस्स अहवा संखेज्जा रयण० संखेज्जा सक्कर० जाव संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा ॥



'संखेज्जा भंते!' इत्यादि, तत्र सङ्ख्याता एकादशादयः शीर्षप्रहेलिकान्ताः, इहाप्येकत्वे सप्तैव द्विकसंयोगे तु सङ्ख्यातानां द्विधात्वे एकः सङ्ख्याताश्चेत्यादयो दश सङ्ख्याताः सङ्ख्याताः सङ्ख्याताश्चेत्येतदन्ता एकादश विकल्पाः, एते चोपरितनपृथिव्यामेकादीनामेकादशानां पदानामुच्चारणे अधस्तनपृथिव्या तु सङ्ख्यातपदस्यैवोच्चारणे सत्यवसेयाः, ये त्वन्ये उपरितनपृथिव्यां सङ्ख्यातपदस्याधस्तनपृथिव्यां त्वेकादीनामेकादशानां पदानामुच्चारणे लभ्यन्ते ते इह न विवक्षिताः, पूर्वसूत्रक्रमाश्रयणात्, पूर्वसूत्रेषु हि दशादिराशीनां द्वैवि-

ध्यंकल्पनायामुपर्येकादयो लघवः सङ्ख्याभेदाः पूर्वं न्यस्ता अधस्तु नवादयो महान्तः एवमिहाप्येकादय उपरि ह्यातराशिश्चाधः, तत्र च सङ्ख्यातराशेरधस्तनस्यैकाद्याकर्षणेऽपि सङ्ख्यातत्वमवस्थितमेव, प्रचुरत्वात्; न पुनः पूर्वसूत्रेषु नवादीनामिवैकादितया तस्यात्र-स्थानगित्यतो नेहाध एकादिभावः, अपि तु सङ्ख्यातसम्भव एवेति नाधिकविकल्पविवक्षेति, तत्र रत्नप्रभा एकादिभिः सङ्ख्यातान्तै-रेकादशभिः पदैः क्रमेण विशेषिता सङ्ख्यातपदविशेषिताभिः शेषाभिः सह क्रमेण चारिता षट्षष्टिभङ्गकांल्लभते एवमेव शर्कराप्रभा पञ्चपञ्चाशतं वालुकाप्रभा चतुश्चत्वारिंशतं पङ्कप्रभा त्रयस्त्रिंशतं धूमप्रभा द्वाविंशतिं तमःप्रभा त्वेकादशेति, एवं च द्विकसंयोगविकल्पानां शतद्वयमेकत्रिंशदधिकं भवति, त्रिकयोगे तु विकल्पपरिमाणमात्रमेव दर्श्यते—रत्नप्रभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा चेति प्रथमस्त्रिकयोगः, तत्र चैक एकः सङ्ख्याताश्चेति प्रथमविकल्प-स्ततः प्रथमायामेकस्मिन्नेव तृतीयायां सङ्ख्यातपद एव स्थिते द्वितीयायां क्रमेणाक्षविन्यासे च द्व्याद्यक्षभावेन दशमवारे सङ्ख्यातपदं भवति, एवमेते पूर्वेण सहैकादश, ततो द्वितीयायां तृतीयायां च सङ्ख्यातपद एव स्थिते प्रथमायां तथैव द्व्याद्यक्षभावेन दशमवारे सङ्ख्यातपदं भवति, एवं चैते दश, समाप्यते चेतोऽक्षविन्यासो-ऽन्त्यपदस्य प्राप्तत्वात्, एवं चैते सर्वेऽप्येकत्र त्रिकसंयोगे एकविंशतिः, अनया च पञ्चत्रिंशतः सप्तपदत्रिक-संयोगानां गुणने सप्त शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि भवन्ति, चतुष्कसंयोगेषु पुनराद्याभिश्चतसृभिः प्रथमश्चतुष्क-संयोगः, तत्र चाद्यासु तिसृष्वेकैकः चतुर्थ्यां तु सङ्ख्याता इत्येको विकल्पस्ततः पूर्वोक्तक्रमेण तृतीयायां दश-मवारे सङ्ख्यातपदं, एवं द्वितीयायां प्रथमायां च, तत एते सर्वेऽप्येकत्र चतुष्कयोगे एकत्रिंशत्, अनया च

| | |
|---|---|
| १ | सङ्ख्याताः |
| २ | सङ्ख्याताः |
| ३ | सङ्ख्याताः |
| ४ | सङ्ख्याताः |
| ५ | सङ्ख्याताः |
| ६ | सङ्ख्याताः |
| ७ | सङ्ख्याताः |
| ८ | सङ्ख्याताः |
| ९ | सङ्ख्याताः |
| १० | सङ्ख्याताः |
| ११ | सङ्ख्याताः |
| एवं ११ भाग | |

सप्तपदचतुष्कसंयोगानां पञ्चत्रिंशतो गुणने सहस्रं पञ्चाशीत्यधिकं भवति, पञ्चकसंयोगेषु त्वाद्याभिः पञ्चभिः प्रथमः पञ्चकसंयोगः, तत्र चाद्यासु चतसृष्वेकैकः पञ्चम्यां तु सङ्ख्याता इत्येको विकल्पः, ततः पूर्वोक्तक्रमेण चतुर्थ्यां दशमवारे सङ्ख्यातपदं, एवं शेषास्वपि, तत एते सर्वेऽप्येकत्र पञ्चकयोगे एकचत्वारिंशत्, अस्याश्च प्रत्येकं सप्तपदपञ्चकसंयोगानामेकविंशतेर्लाभादष्ट शतानि एकषष्ट्यधिकानि भवन्ति, षट्कसंयोगेषु तु पूर्वोक्तक्रमेणैकत्र षट्संयोगे एकपञ्चाशद्विकल्पा भवन्ति, अस्याश्च प्रत्येकं सप्तपदषट्कयोगे सप्तकलाभात्त्रीणि शतानि सप्तपञ्चाशदधिकानि भवन्ति, सप्तकसंयोगे तु पूर्वोक्तभावनयैकपष्टिर्विकल्पा भवन्ति, सर्वेषां चैषां मीलने त्रयस्त्रिंशच्छतानि सप्तत्रिंशदधिकानि भवन्ति ॥

असंखेज्जा भंते! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पुच्छा. गंगेया! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे रयण० असंखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा, एवं दुयासंजोगो जाव सत्तगसंजोगो य जहा संखिज्जाणं भणिओ तहा असंखेज्जाणवि भाणियव्वो, नवरं असंखेज्जाओ अब्भहिओ भाणियव्वो, सेसं तं चेव जाव सत्तगसंजोगस्स पच्छिमो आलावगो अहवा असंखेज्जा रयण० असंखेज्जा सक्कर० जाव असंखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा॥



'असंखेज्जा भंते!' इत्यादि, संख्यातप्रवेशनकवदेत्वैतदसंख्यातप्रवेशनकं वाच्यं, नवरमिहासंख्यातपदं द्वादशमभिधीयते, तत्र चैकत्वे सप्तैव, द्विकसंयोगादौ तु विकल्पप्रमाणवृद्धिर्भवति, सा चैवं—द्विकसंयोगे द्वे शते द्विपञ्चाशदधिके २५२, त्रिकसंयोगेऽष्टौ शतानि पञ्चोत्तराणि ८०५, चतुष्कसंयोगे त्वेकादश शतानि नवत्यधिकानि ११९०, पञ्चकसंयोगे पुनर्नव शतानि पञ्चचत्वारिंशदधिकानि ९४५, षट्कसंयोगे तु त्रीणि शतानि द्विनवत्यधिकानि ३९२, सप्तकसंयोगे पुनः सप्तपष्टिः, एतेषां च सर्वेषां मीलने षट्-

त्रिंशच्छतानि अष्टपञ्चाशदधिकानि भवन्तीति ॥ अथ प्रकारान्तरेण नारकप्रवेशनकमेवाह—

उक्कोसेणं भंते ! नेरइया नेरतियपवेसणएणं पुच्छा, गंगेया ! सव्वेवि ताव रयणप्पभाए होज्जा अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य होज्जा अहवा रयणप्पभाए य वालुयप्पभाए य होज्जा जाव अहवा रयणप्पभाए य अहेसत्तमाए होज्जा अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य वालुयप्पभाए य होज्जा एवं जाव अहवा रयण० सक्करप्पभाए य अहेसत्तमाए य होज्जा ५ अहवा रयण० वालुय० पंकप्पभाए य होज्जा जाव अहवा रयण० वालुय० अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा रयण० पंकप्पभाए धूमाए होज्जा एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा तिण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण० तमाए य अहेसत्तमाए य होज्जा १५ अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुय० पंकप्पभाए य होज्जा अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुय० धूमप्पभाए य होज्जा जाव अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुय य अहेसत्तमाए य होज्जा ४ अहवा रयण० सक्कर० पंक० धूमप्पभाए य होज्जा एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा चउण्हं चउक्कसंजोगो भणितो तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण० धूम० तमाए अहेसत्तमाए होज्जा अहवा रयण० सक्कर० वालुय० पंक० धूमप्पभाए य होज्जा १ अहवा रयणप्पभाए जाव पंक० तमाए य होज्जा २ अहवा रयण० जाव पंक० अहेसत्तमाए य होज्जा ३ अहवा रयण० सक्कर० वालुय० धूम० तमाए य होज्जा ४ एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा पंचण्हं पञ्चकसंजोगो तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण० पंकप्पभा० जाव अहेसत्तमाए होज्जा अहवा रयण० सक्कर० जाव धूमप्पभाए तमाए य

होज्जा १ अहवा रयण० जाव धूम० अहेसत्तमाए य होज्जा २ अहवा रयण० सक्कर० जाव पंक० तमाए य अहेसत्तमाए य होज्जा ३ अहवा रयण० सक्कर० वालुय० धूमप्पभाए तमाए अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा रयण० सक्कर० पंक० जाव अहेसत्तमाए य होज्जा ५ अहवा रयण० वालुय० जाव अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा रयणप्पभाए य सक्कर० जाव अहेसत्तमाए य होज्जा ७ ॥

| द्विकयोगे षड्भङ्गाः |
| --- |
| १ २ |
| १ ३ |
| १ ४ |
| १ ५ |
| १ ६ |
| १ ७ |

| त्रिकयोगे पञ्चदश भङ्गाः |
| --- |
| १ २ ३ |
| १ २ ४ |
| १ २ ५ |
| १ २ ६ |
| १ २ ७ |
| १ ३ ४ |
| १ ३ ५ |
| १ ३ ६ |
| १ ३ ७ |
| १ ४ ५ |
| १ ४ ६ |
| १ ४ ७ |
| १ ५ ६ |
| १ ५ ७ |
| १ ६ ७ |

| चतुष्कसंयोगे विंशतिभङ्गाः |
| --- |
| १ २ ३ ४ |
| १ २ ३ ५ |
| १ २ ३ ६ |
| १ २ ३ ७ |
| १ २ ४ ५ |
| १ २ ४ ६ |
| १ २ ४ ७ |
| १ २ ५ ६ |
| १ २ ५ ७ |
| १ २ ६ ७ |
| १ ३ ४ ५ |
| १ ३ ४ ६ |
| १ ३ ४ ७ |
| १ ३ ५ ६ |
| १ ३ ५ ७ |
| १ ३ ६ ७ |
| १ ४ ५ ६ |
| १ ४ ५ ७ |
| १ ४ ६ ७ |

| सप्तयोगे | एवं २० |
| --- | --- |
| १ [illegible] ६ ७ | |

| पञ्चकसंयोगे पञ्चदश भङ्गाः |
| --- |
| १ २ ३ ४ ५ |
| १ २ ३ ४ ६ |
| १ २ ३ ४ ७ |
| १ २ ३ ५ ६ |
| १ २ ३ ५ ७ |
| १ २ ३ ६ ७ |
| १ २ ४ ५ ६ |
| १ २ ४ ५ ७ |
| १ २ ४ ६ ७ |
| १ २ ५ ६ ७ |
| १ ३ ४ ५ ६ |
| १ ३ ४ ५ ७ |
| १ ३ ४ ६ ७ |
| १ ३ ५ ६ ७ |
| १ ४ ५ ६ ७ |

एवं १५

| षड्योगे ६ भङ्गाः |
| --- |
| १ २ ३ ४ ५ ६ |
| १ २ ३ ४ ५ ७ |
| १ २ ३ ४ ६ ७ |
| १ २ ३ ५ ६ ७ |
| १ २ ४ ५ ६ ७ |
| १ ३ ४ ५ ६ ७ |

एयस्स णं भंते ! रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणगस्स सक्करप्पभापुढवि० जाव अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणगस्स य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गंगेया ! सव्वत्थोवे अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणए तमापुढविनेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे एवं पडिलोमगं जाव रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे ॥ ( सूत्रं ३७३ ) ॥

'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कर्षा—उत्कृष्टपदिनो येनोत्कर्षत उत्पद्यन्ते 'ते सव्वेवि'त्ति ये उत्कृष्टपदिनस्ते सर्वेऽपि रत्नप्रभायां भवेयुः तद्गामिनां तत्स्थानानां च बहुत्वात्, इह प्रक्रमे द्विकयोगे षड् भङ्गास्त्रिकयोगे पञ्चदश चतुष्कसंयोगे विंशतिः पञ्चकसंयोगे पञ्चदश षड्योगे षट् सप्तकयोगे त्वेक इति ॥ अथ रत्नप्रभादिष्वेव नारकप्रवेशनकस्याल्पत्वादिनिरूपणायाह—'एयस्स णं'मित्यादि, तत्र सर्वस्तोकं सप्तमपृथिवीनारकप्रवेशनकं, तद्गामिनां शेषापेक्षया स्तोकत्वात्, ततः षष्ठ्यामसङ्ख्यातगुणं, तद्गामिनामसङ्ख्यातगुणत्वात्, एवमुत्तरत्रापि ॥ अथ तिर्यग्योनिकप्रवेशनकप्ररूपणायाह—

तिरिक्खजोणियपवेसणए णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते ?, गंगेया! पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा—एगिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए जाव पंचेंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए। एगे भंते! तिरिक्खजोणिए तिरिक्खजोणियपवेसणएणं पविसमाणे किं एगिंदिएसु होज्जा जाव पंचिंदिएसु होज्जा ?, गंगेया! एगिंदिएसु वा होज्जा जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा। दो भंते! तिरिक्खजोणिया पुच्छा, गंगेया! एगिंदिएसु वा होज्जा जाव पंचिंदियएसु वा होज्जा, अहवा एगे एगिंदिएसु होज्जा एगे बेइंदिएसु होज्जा एवं जहा नेरइयपवेसणए तहा तिरिक्खजोणियपवेसणएवि भाणियव्वे जाव असंखेज्जा। उक्कोसा भंते! तिरिक्खजोणिया पुच्छा, गंगेया! सव्वेवि ताव एगिंदिएसु होज्जा अहवा एगिंदिएसु वा बेइंदिएसु वा होज्जा, एवं जहा नेरतिया चारिया तहा तिरिक्खजोणियावि चारेयव्वा, एगिंदियं अमुञ्चंतेसु दुयासंजोगो तियासंजोगो चउक्कसंजोगो पंचसंजोगो य उवउज्जिऊण भाणियव्वो जाव अहवा एगिंदिएसु वा

| द्वयोस्त्रिश्चोर्द्विक-योगे १० भङ्गाः | | |
|---|---|---|
| १२ | २४ | १५ |
| १३ | २५ | एवं |
| १४ | ३४ | भङ्गाः |
| १४ | ३५ | |
| २३ | ४५ | |

बेइंदिय जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा ॥ एयस्स णं भंते! एगिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणगस्स जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणयस्स य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गंगेया! सव्वत्थोवा पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए चउरिंदियतिरिक्खजोणिय० विसेसाहिए तेइंदिय० विसेसाहिए बेइंदिय० विसेसाहिए एगिंदियतिरि-० क्ख विसेसाहिए ॥ ( सूत्रं ३७४ ) ॥

'तिरिक्खे'त्यादि, इहैकस्तिर्यग्योनिक एकेन्द्रियेषु भवेदित्युक्तं, तत्र च यद्यप्येकेन्द्रियेष्वेकः कदाचिदप्युत्पद्यमानो न लभ्यतेऽनन्तानामेव तत्र प्रतिसमयमुत्पत्तेस्तथाऽपि देवादिभ्य उद्वृत्त्य यस्तत्रोत्पद्यते तदपेक्षयैकोऽपि लभ्यते, एतदेव च प्रवेशनकमुच्यते यद्विजातीयेभ्य आगत्य विजातीयेषु प्रविशति, सजातीयस्तु सजातीयेषु प्रविष्ट एवेति किं तत्र प्रवेशनकमिति, तत्र चैकस्य क्रमेणैकेन्द्रियादिषु पञ्चसु पदेषूत्पादे पञ्च विकल्पाः, द्वयोरप्येकैकस्मिन्नुत्पादे पञ्चैव, द्विकयोगे तु दश, एतदेव सूचयता 'अहवा एगे एगिंदिएसु' इत्याद्युक्तम् । अथ सङ्क्षेपार्थं त्र्यादीनामसङ्ख्यातपर्यन्तानां तिर्यग्योनिकानां प्रवेशनकमतिदेशेन दर्शयन्नाह–'एवं जहे'त्यादि, नारकप्रवेशनकसमानमिदं सर्वं, परं तत्र सप्तसु पृथिवीष्वेकादयो नारका उत्पादिताः तिर्यञ्चस्तु तथैव पञ्चसु स्थानेषूत्पादनीयाः, ततो विकल्पनानात्वं भवति, तच्चाभियुक्तेन पूर्वोक्तन्यायेन स्वयमवगन्तव्यमिति, इह चानन्तानामेकेन्द्रियाणामुत्पादेऽप्यनन्तपदं नास्ति, प्रवेशनकस्योक्तलक्षणस्यासङ्ख्यातानामेव लाभादिति, 'सव्वेऽवि ताव एगिंदिएसु होज्ज'त्ति एकेन्द्रियाणामतिबहूनामनुसमयमुत्पादात्, 'दुयासंजोगो'इत्यादि, इह प्रक्रमे द्विकसंयोगश्चतुर्द्धा त्रिकसंयोगः षोढा चतुष्कसंयोगश्चतुर्द्धा पञ्चकसंयोगस्त्वेक एवेति ॥ 'सव्वथोवा पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए'त्ति पञ्चेन्द्रियजीवानां स्तोकत्वादिति, ततश्चतुरिन्द्रियादिप्रवेशनकानि परस्परेण

विशेषाधिकानीति ॥

मणुस्सपवेसणए णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते ?, गंगेया! दुविहे पन्नत्ते, तंजहा-संमुच्छिममणुस्सपवेसणए गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणए य। एगे भंते! मणुस्से मणुस्सपवेसणएणं पविसमाणे किं संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा ?, गंगेया! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा। दो भंते! मणुस्सा० पुच्छा, गंगेया! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा अहवा एगे संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा एगे गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा, एवं एएणं कमेणं जहा नेरइयपवेसणए तहा मणुस्सपवेसणएवि भाणियव्वो जाव दस ॥ संखेज्जा भंते! मणुस्सा पुच्छा, गंगेया! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा अहवा एगे संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा अहवा दो संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा एवं एक्केक्कं उस्सारिंतेसु जाव अहवा संखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा ॥ असंखेज्जा भंते! मणुस्सा पुच्छा, गंगेया! सव्वेवि ताव संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा अहवा असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु एगे गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा अहवा असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु दो गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा एवं जाव असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा ॥ उक्कोसा भंते! मणुस्सा पुच्छा, गंगेया! सव्वेवि ताव संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा अहवा संमुच्छिममणुस्सेसु य गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा।

एयस्स णं भंते! संमुच्छिममणुस्सपवेसणगस्स गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणगस्स य कयरे २ जाव विसेसाहिया ?, गंगेया! सव्वत्थोवा गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणए संमुच्छिममणुस्सपवेसणए असंखेज्जगुणे ॥ ( सूत्रं ३७८ ) ॥ देवपवेसणए णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते ?, गंगेया! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—भवणवासिदेवपवेसणए जाव वेमाणियदेवपवेसणए। एगे भंते! देवपवेसणएणं पविसमाणे किं भवणवासीसु होज्जा वाणमंतरजोइसियवेमाणिएसु होज्जा ?, गंगेया! भवणवासीसु वा होज्जा वाणमंतरजोइसियवेमाणिएसु वा होज्जा। दो भंते! देवा देवपवेसणए पुच्छा, गंगेया! भवणवासीसु वा होज्जा वाणमंतरजोइसियवेमाणिएसु वा होज्जा अहवा एगे भवणवासीसु एगे वाणमंतरजोइसियवेमाणिएसु होज्जा एवं जहा तिरिक्खजोणियपवेसणए तहा देवपवेसणएवि भाणियव्वे जाव असंखेज्जत्ति। उक्कोसा भंते! पुच्छा, गंगेया! सव्वेवि ताव जोइसिएसु होज्जा अहवा जोइसियभवणवासीसु य होज्जा अहवा जोइसियवाणमंतरेसु य होज्जा अहवा जोइसियवेमाणिएसु य होज्जा अहवा जोइसिएसु य भवणवासीसु य वाणमंतरेसु य होज्जा अहवा जोइसिएसु य भवणवासिसु य वेमाणिएसु य होज्जा अहवा जोइसिएसु वाणमंतरेसु वेमाणिएसु य होज्जा अहवा जोइसिएसु य भवणवासीसु य वाणमंतरेसु य वेमाणिएसु य होज्जा। एयस्स णं भंते! भवणवासिदेवपवेसणगस्स वाणमंतरदेवपवेसणगस्स जोइसियदेवपवेसणगस्स वेमाणियदेवपवेसणगस्स य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गंगेया! सव्वत्थोवे वेमाणियदेवपवेसणए भवणवासिदेवपवेसणए असंखेज्जगुणे वाणमंतरदेवपवेसणए असंखेज्जगुणे जोइसियदेवपवेसणए संखेज्जगुणे ॥ ( सूत्रं ३७९ ) ॥ एयस्स

णं भंते ! नेरइयपवेसणगस्स तिरिक्ख० मणुस्स० देवपवेसणगस्स कयरे कयरे जाव विसेसाहिए वा ?, गंगेया ! सव्वत्थोवे मणुस्सपवेसणए नेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे देवपवेसणए असंखेज्जगुणे तिरिक्खजोणियपवेसणए असंखेज्जगुणे ॥ ( सूत्रं ३७७ ) ॥

मनुष्यप्रवेशनकं देवप्रवेशनकं च सुगमं, तथाऽपि किञ्चिल्लिख्यते-मनुष्याणां स्थानकद्वये संमूर्च्छिमगर्भजलक्षणे प्रविशतीति द्वयमाश्रित्यैकादिसङ्ख्यातान्तेषु पूर्ववद्विकल्पाः कार्याः, तत्र चातिदेशानामन्तिमं सङ्ख्यातपदमिति तद्विकल्पान् साक्षाद्दर्शयन्नाह— 'संखेज्जे'त्यादि, इह द्विकयोगे पूर्ववदेकादश विकल्पाः, असङ्ख्यातपदे तु पूर्वं द्वादश विकल्पा उक्ता इह पुनरेकादशैव, यतो यदि संमूर्च्छिमेषु गर्भजेषु चासङ्ख्यातत्वं स्यात्तदा द्वादशोऽपि विकल्पो भवेत्, न चैवं, इह गर्भजमनुष्याणां स्वरूपतोऽप्यसङ्ख्यातानामभावेन तत्प्रवेशनकेऽसङ्ख्यातासम्भवाद्, अतोऽसङ्ख्यातपदेऽपि विकल्पैकादशकदर्शनायाह—'असंखेज्जा' इत्यादि ॥ 'उक्कोसा भंते'- इत्यादि, 'सव्वेवि ताव संमुच्छिममणुस्सेसु होज्ज'त्ति संमूर्च्छिमानामसङ्ख्यातानां भावेन प्रविशतामप्यसङ्ख्यतानां सम्भवः, ततश्च मनुष्यप्रवेशनकं प्रत्युत्कृष्टपदिनस्तेषु सर्वेऽपि भवन्तीति, अत एव संमूर्च्छिममनुष्यप्रवेशनकमितरापेक्षयाऽसङ्ख्यातगुणमवगन्तव्यमिति ॥ देवप्रवेशनके 'सव्वेवि ताव जोइसिएसु होज्ज'त्ति ज्योतिष्कगामिनो बहव इति तेषूत्कृष्टपदिनो देवप्रवेशनकवन्तः सर्वेऽपि भवन्तीति,'सव्वत्थोवे वेमाणियदेवप्पवेसणए'त्तितद् गामिनां तत्स्थानानां चाल्पत्वादिति ॥ अथ नारकादिप्रवेशनकस्यैवाल्पत्वादि निरूपयन्नाह—'एयस्स णं'मित्यादि, तत्र सवस्तोकं मनुष्यप्रवेशनकं, मनुष्यक्षेत्र एव तस्य भावात्, तस्य च स्तोकत्वात्, नैरयिकप्रवेशनकं त्वसङ्ख्यातगुणं, तद्गामिनामसङ्ख्यातगुणत्वात्, एवमुत्तरत्रापीति ॥ अनन्तरं प्रवेशनकमुक्तं, तत्पुनरुत्पादोद्व-

तेनारूषमिति नारकादीनामुत्पादमुद्वर्त्तनां च सान्तरनिरन्तरतया निरूपयन्नाह—

संतरं भंते! नेरइया उववज्जंति निरंतरं नेरइया उववज्जंति संतरं असुरकुमारा उववज्जंति निरंतरं असुरकुमारा जाव संतरं वेमाणिया उववज्जंति निरंतरं वेमाणिया उववज्जंति संतरं नेरइया उववट्टंति निरंतरं नेरतिया उववट्टंति जाव संतरं वाणमंतरा उववट्टंति निरंतरं वाणमंतरा उववट्टंति संतरं जोइसिया चयंति निरंतरं जोइसिया चयंति संतरं वेमाणिया चयंति निरंतरं वेमाणिया चयंति?, गंगेया! संतरंपि नेरतिया उववज्जंति निरंतरंपि नेरतिया उववज्जंति जाव संतरंपि थणियकुमारा उववज्जंति निरंतरंपि थणियकुमारा उववज्जंति नो संतरंपि पुढविकाइया उववज्जंति निरंतरं पुढविक्काइया उववज्जंति एवं जाव वणस्सइकाइया सेसा जहा नेरइया जाव संतरंपि वेमाणिया उववज्जंति निरंतरंपि वेमाणिया उववज्जंति, संतरंपि नेरइया उववट्टंति निरंतरंपि नेरइया उववट्टंति एवं जाव थणियकुमारा नो संतरं पुढविक्काइया उववट्टंति निरंतरं पुढविक्काइया उववट्टंति एवं जाव वणस्सइकाइया सेसा जहा नेरइया,नवरं जोइसियवेमाणिया चयंति अभिलावो, जाव संतरंपि वेमाणिया चयंति निरंतरंपि वेमाणिया चयंति ॥ संतो भंते! नेरतिया उववज्जंति असंतो भंते! नेरइया उववज्जंति ?, गंगेया! संतो नेरइया उववज्जंति नो असंतो नेरइया उववज्जंति. एवं जाव वेमाणिया, संतो भंते! नेरतिया उववट्टंति असंतो नेरइया उववट्टंति ?, गंगेया! संतो नेरइया उववट्टंति नो असंतो नेरइया उववट्टंति, एवं जाव वेमाणिया नवरं जोइसियवेमाणिएसु चयंति भाणियव्वं। सओ भंते! नेरइया उववज्जंति असतो भंते! नेरइया उववज्जंति सतो असुरकुमारा उववज्जंति

जाव सतो वेमाणिया उववज्जंति असतो वेमाणिया उववज्जंति सतो नेरतिया उववट्टंति असतो नेरइया उववट्टंति सतो असुरकुमारा उववट्टंति जाव सतो वेमाणिया चयंति असतो वेमाणिया चयंति ?, गंगेया! सतो नेरइया उववज्जंति नो असओ नेरइया उववज्जंति सओ असुरकुमारा उववज्जंति नो असतो असुरकुमारा उववज्जंति जाव सओ वेमाणिया उववज्जंति नो असतो वेमाणिया उववज्जंति सतो नेरतिया उववट्टंति नो असतो नेरइया उववट्टंति जाव सतो वेमाणिया चयंति नो असतो वेमाणिया०, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ सतो नेरइया उववट्टंति नो असतो नेरइया उववज्जंति जाव सओ वेमाणिया चयंति नो असओ वेमाणिया चयंति ?, से नूणं भंते! गंगेया! पासेणं अरहया पुरिसादाणीएणं सासए लोए बुइए अणादीए अणवयग्गे जहा पंचमसए जाव जे लोकइ से लोए, से तेणट्ठेणं गंगेया! एवं वुच्चइ जाव सतो वेमाणिया चयंति नो असतो वेमाणिया चयंति ॥ सयं भंते! एवं जाणइ उदाहु असयं असोच्चा एते एवं जाणइ उदाहु सोच्चा सतो नेरइया उववज्जंति नो असतो नेरइया उववज्जंति जाव सओ वेमाणिया चयंति नो असओ वेमाणिया चयंति ?, गंगेया! सयं एते एवं जाणामि नो असयं, असोच्चा एते एवं जाणामि, नो सोच्चा, सतो नेरइया उववज्जंति नो असओ नेरइया उववज्जंति जाव सतो वेमाणिया चयंति, नो असतो वेमाणिया चयंति, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ तं चेव जाव नो असतो वेमाणिया चयंति ?, गंगेया! केवली णं पुरच्छिमेणं मियंपि जाणइ अमियंपि जाणइ दाहिणेणं एवं जहा सद्दुद्देसए जाव निव्वुडे नाणे केवलिस्स, से तेणट्ठेणं गंगेया! एवं वुच्चइ तं चेव जाव नो असतो वेमाणिया चयंति ॥

सयं भंते! नेरइया नेरइएसु उववज्जन्ति असयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति?, गंगेया! सयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति नो असयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति?, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव उववज्जंति?, गंगेया! कम्मोदएणं कम्मगुरुयत्ताए कम्मभारियत्ताए कम्मगुरुसंभारियत्ताए असुभाणं कम्माणं उदएणं असुभाणं कम्माणं विवागेणं असुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति, नो असयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति, से तेणट्ठेणं गंगेया! जाव उववज्जंति॥ सयं भंते! असुरकुमारा पुच्छा, गंगेया! सयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति नो असयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं तं चेव जाव उववज्जंति?, गंगेया! कम्मोदएणं कम्मोवसमेणं कम्मविगतीए कम्मविसोहीए कम्मविसुद्धीए सुभाणं कम्माणं उदएणं सुभाणं कम्माणं विवागेणं सुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं असुरकुमारा असुरकुमारत्ताए जाव उववज्जंति, नो असयं असुरकुमारा असुरकुमारत्ताए उववज्जंति, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति, एवं जाव थणियकुमारा॥ सयं भंते! पुढविक्काइया० पुच्छा, गंगेया! सयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति नो असयं पुच्छा जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव उववज्जंति?, गंगेया! कम्मोदएणं कम्मगुरुयत्ताए कम्मभारियत्ताए कम्मगुरुसंभारियत्ताए सुभासुभाणं कम्माणं उदएणं सुभासुभाणं कम्माणं विवागेणं सुभासुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति नो असयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति, एवं जाव मणुस्सा, वाणमंतरजोइसिया वेमाणिया जहा असुरकुमारा, से तेणट्ठेणं गंगेया! एवं वुच्चइ सयं वेमाणिया जाव उववज्जंति

नो असयं जाव उववज्जंति ॥ ( सूत्रं ३७८ ) ॥ तप्पभिइं च णं से गंगेये अणगारे समणं भगवं महावीरं पच्चभिजाणइ सव्वन्नु सव्वदरिसी, तए णं से गंगेये अणगारे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करेत्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते ! तुज्झं अंतियं चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं एवं जहा कालासवेसियपुत्तो तहेव भाणियव्वं जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ ( सूत्रं ३७९ ) ॥ गंगेयो समत्तो ॥ ९ । ३२ ॥

'संतरं भंते ! ' इत्यादि, अथ नारकादीनामुत्पादादेः सान्तरादित्वं प्रवेशनकात्पूर्वं निरूपितमेवेति किं पुनस्तन्निरूप्यते ? इति, अत्रोच्यते, पूर्वं नारकादीनां प्रत्येकमुत्पादस्य सान्तरत्वादि निरूपितं, ततश्च तथैवोद्वर्त्तनायाः, इह तु पुनर्नारकादिसर्वजीवभेदानां समुदायतः समुदितयोरेव चोत्पादोद्वर्त्तनयोस्तन्निरूप्यत इति ॥ अथ नारकादीनामेव प्रकारान्तरेणोत्पादोद्वर्त्तने निरूपयन्नाह—'सओ भंते!' इत्यादि, तत्र च 'सओ नेरइया उववज्जंति'त्ति 'सन्तः' विद्यमाना द्रव्यार्थतया, नहि सर्वथैवासत् किञ्चिदुत्पद्यते, असत्त्वादेव खरविषाणवत्, सत्त्वं च तेषां जीवद्रव्यापेक्षया नारकपर्यायापेक्षया वा, तथाहि–भाविनारकपर्यायापेक्षया द्रव्यतो नारकाः सन्तो नारका उत्पद्यन्ते, नारकायुष्कोदयाद्वा भावनारका एव नारकत्वेनोत्पद्यन्त इति । अथवा 'सओ'त्ति विभक्तिपरिणामात् सत्सु प्रागुत्पन्नेष्वन्ये समुत्पद्यन्ते, नासत्सु, लोकस्य शाश्वतत्वेन नारकादीनां सर्वदैव सद्भावादिति । 'से णूणं भंते! गंगेया'इत्यादि, अनेन च तत्सिद्धान्तेनैव स्वमतं पोषितं, यतः पार्श्वनार्हता शाश्वतो लोक उक्तोऽतो लोकस्य शाश्वतत्वात्सन्त एव सत्स्वेव वा नारकादय उत्पद्यन्ते च्यवन्ते चेति साध्वेवोच्यत इति ॥ अथ गाङ्गेयो भगवतोऽतिशायिनीं ज्ञानसम्पदं सम्भावयन् विकल्पयन्नाह—'सयं भंते !' इत्यादि,

स्वयम्, आत्मना लिङ्गानपेक्षमित्यर्थः 'एवं'ति वक्ष्यमाणप्रकारं वस्तु 'असयं'ति अस्वयं, परतो लिङ्गत इत्यर्थः, तथा 'असोच्चं'त्ति अश्रुत्वाऽऽगमानपेक्षम् 'एते एवं'ति एतदेवमित्यर्थः 'सोच्च'त्ति पुरुषान्तरवचनं श्रुत्वाऽऽगमत इत्यर्थः 'सयं एतेवं जाणामि'त्ति स्वयमेतदेवं जानामि, पारमार्थिकप्रत्यक्षसाक्षात्कृतसमस्तवस्तुस्तोमस्वभावत्वान्मम 'सयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति'त्ति स्वयमेव नारका उत्पद्यन्ते, नास्वयं–नेश्वरपारतन्त्र्यादेः, यथा कैश्चिदुच्यते—"अज्ञो जन्तुरनीशोऽयमात्मनः सुखदुःखयोः । ईश्वरप्रेरितो गच्छेत्स्वर्गं वा श्वभ्रमेव वा ॥१॥" इति, ईश्वरस्य हि कालादिकारणकलापव्यतिरिक्तस्य युक्तिभिर्विचार्यमाणस्याघटनादिति, 'कम्मोदएणं'ति कर्म्मणामुदितत्वेन, न च कर्म्मोदयमात्रेण नारकेषूत्पद्यन्ते, केवलिनामपि तस्य भावाद्, अत आह–'कम्मगुरुयत्ताए'त्ति कर्म्मणां गुरुकता कर्म्मगुरुकता तया 'कम्मभारियत्ताए'त्ति भारोऽस्ति येषां तानि भारिकाणि तद्भावो भारिकता कर्म्मणां भारिकता कर्म्मभारिकता तया चेत्यर्थः, तथा महदपि किञ्चिदल्पभारं दृष्टं तथाविधभारमपि च किञ्चिदमहदित्यत आह–'कम्मगुरुसंभारियत्ताए'त्ति गुरोः सम्भारिकस्य च भावो गुरुसम्भारिकता, गुरुता सम्भारिकता चेत्यर्थः, कर्म्मणां गुरुसम्भारिकता कर्म्मगुरुसम्भारिकता तया, अतिप्रकर्षावस्थयेत्यर्थः, एतच्च त्रयं शुभकर्म्मापेक्षयाऽपि स्यादत आह–'असुभाण'मित्यादि, उदयः प्रदेशतोऽपि स्यादत आह–'विवागेणं'ति विपाको यथाबद्धरसानुभूतिः, स च मन्दोऽपि स्यादत आह–'फलविवागेणं'ति फलस्येवालाबुकादेर्विपाको–विपच्यमानता रसप्रकर्षावस्था फलविपाकस्तेन ॥ असुरकुमारसूत्रे 'कम्मुदएणं'ति असुरकुमारोचितकर्म्मणामुदयेन, वाचनान्तरेषु 'कम्मोवसमेणं'ति दृश्यते, तत्र चाशुभकर्म्मणामुपशमेन सामान्यतः 'कम्मविगईए'त्ति कर्म्मणामशुभानां विगत्या–विगमेन स्थितिमाश्रित्य 'कम्मविसोहीए'त्ति रसमाश्रित्य 'कम्मविसुद्धीए'त्ति प्रदेशापेक्षया, एकार्था वैते शब्दा इति ॥ पृथ्वीकायिकसूत्रे 'सुभासुभाणं'ति

शुभानां शुभवर्णगन्धादीनाम् अशुभानां तेषामेकेन्द्रियजात्यादीनां च। 'तप्पभिइं च'त्ति यस्मिन् समयेऽनन्तरोक्तं वस्तु भगवता प्रतिपादितं स एव समयः प्रभृतिः आदिः यस्य प्रत्यभिज्ञानस्य तत्तथा, चशब्दः पुनरर्थे समुच्चये वा 'से'त्ति असौ 'पच्चभिजाणइ'त्ति प्रत्यभिजानाति स्म, किं कृत्वा? इत्याह–सर्वज्ञं सर्वदर्शिनं, जातप्रत्ययत्वादिति ॥ नवमशते द्वात्रिंशत्तमोद्देशकः ॥ ९ । ३२ ॥ [ग्रन्थाग्रम् १००००]

---

गाङ्गेयो भगवदुपासनातः सिद्धः, अन्यस्तु कर्मवशाद्विपर्ययमप्यवाप्नोति यथा जमालिरित्येतद्दर्शनाय त्रयस्त्रिंशत्तमोद्देशकः, तस्य चेदं प्रस्तावनासूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं माहणकुंडग्गामे नयरे होत्था, वन्नओ, बहुसालए चेतिए, वन्नओ, तत्थ णं माहणकुंडग्गामे नयरे उसभदत्ते नामं माहणे परिवसति अड्ढे दित्ते वित्ते जाव अपरिभूए रिउवेदजजुवेदसामवेदअथव्वणवेद जहा खंदओ जाव अन्नेसु य बहुसु बंभन्नएसु नएसु सुपरिनिट्ठिए समणोवासए अभिगयजीवाजीवे उवलद्धपुण्णपावे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तस्स णं उसभदत्तमाहणस्स देवाणंदा नामं माहणी होत्था, सुकुमालपाणिपाया जाव पियदंसणा सुरूवा समणोवासिया अभिगयजीवाजीवा उवलद्धपुन्नपावा जाव विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे, परिसा जाव पज्जुवासति, तए णं से उसभदत्ते माहणे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठ जाव हियए जेणेव देवाणंदा माहणी तेणेव उवागच्छति २ देवाणंदं माहणिं एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिए! समणे भगवं महावीरे आदिगरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी आगासगएणं चक्केणं जाव सुहंसुहेणं

विहरमाणे जाव बहुसालए चेइए अहापडिरूवं जावविहरति, तं महाफलं खलु देवाणुप्पिए! जाव तहारूवाणं अरिहंताणं भगवंताणं नामगोयस्सवि सवणयाए, किमंग पुण अभिगमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए? एगस्सवि आयरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए, किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए?, तं गच्छामो णं देवाणुप्पिए! समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो, एयण्णं इहभवे य परभवे य हियाए सुहाए खमाए निस्सेसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ। तए णं सा देवाणंदा माहणी उसभदत्तेणं माहणेणं एवं वुत्ता समाणी हट्ठजाव हियया करयलजावकट्टु उसभदत्तस्स माहणस्स एयमट्ठं बिणएणं पडिसुणेइ, तए णं से उसभदत्ते माहणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ कोडुंबियपुरिसे सद्दावेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! लहुकरणजुत्तजोइयसमखुरवालिहाणसमलिहियसिंगेहिं जंबूणयामयकलावजुत्त परिविसिट्ठेहिं रययामयघंटासुत्तरज्जुयपवरकंचणनत्थपग्गहोग्गहियएहिं नीलुप्पलकयामेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिरयणघंटियजालपरिगयं सुजायजुगजोत्तरज्जुयजुगपसत्थसुविरचियनिम्मियं पवरलक्खणोववेयं [ग्रन्थाग्रम् ६०००] धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेह २ मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा उसभदत्तेणं माहणेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव हियया करयल० एवं सामी! तहत्ति आणाए विणएणं वयणं जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव लहुकरणजुत्त जाव धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेत्ता जाव तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से उसभदत्ते माहणे ण्हाए जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे साओ गिहाओ पडिनिक्खमति साओ गिहाओ

पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवाग-च्छित्ता धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढे। तए णं सा देवाणंदा माहणी अंतो अंतेउरंसि ण्हाया कयबलिकम्मा कय-कोउयमंगलपायच्छित्ता, किं च वरपादपत्तनेउरमणिमेहलाहारविरइयउचियकडगखुड्डायएकावलीकंठसुत्तउरत्थ-गेवेज्जसोणिसुत्तगनाणामणिरयणभूसणविराइयंगी चीणंसुयवत्थपवरपरिहिया दुगुल्लसुकुमालउत्तरिज्जा सव्वोउ-यसुरभिकुसुमवरियसिरया वरचंदणवंदिया वराभरणभूसियंगी कालागुरुधूवधूविया सिरिसमाणवेसा जाव अ-प्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा बहूहिं खुज्जाहिं चिलाइयाहिं वामणियाहिं वडहियाहिं बब्बरियाहिं ईसिगणियाहिं जोण्हियाहिं चारुगणियाहिं पल्लवियाहिं ल्हासियाहिं लउसियाहिं आरबीहिं दमिलीहिं सिंघलीहिं पुलिंदीहिं पुक्खलीहिं मुरुंडीहिं सबरीहिं पारसीहिं नाणादेसीहिं विदेसपरिपंडियाहिं इंगितचिंतितपत्थियवियाणियाहिं स-देसनेवत्थगहियवेसाहिं कुसलाहिं विणीयाहि य चेडियाचक्कवालवरिसधरथेरकंचुइज्जमहत्तरगवंदपरिक्खित्ता अं-तेउराओ निग्गच्छति अंतेउराओ निगच्छित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता जाव धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा॥ तए णं से उसभदत्ते माहणे देवाणंदाए माहणीए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढे समाणे णियगपरियालसंपरिवुडे माहणकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छइत्ता जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छइत्ता छत्तादीए तित्थकरातिसए पासइ छ० २ धम्मियं जाणप्पवरं ठवेइ २ त्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ प० २ समणं भगवं महा-

वीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छति, तंजहा–सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए एवं जहा बितियसए जाव तिविहाए पज्जुवासणयाए पज्जुवासति, तए णं सा देवाणंदा माहणी धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुभति, धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुभित्ता बहूहिं खुज्जाहिं जाव महत्तरगवंदपरिक्खित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ, तंजहा–सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए अचित्ताणं दव्वाणं अविमोयणयाए विणयोणयाए गायलट्ठीए चक्खुफासे अंजलिपग्गहेणं मणस्स एगत्तीभावकरणेणं, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २ त्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता उसभदत्तं माहणं पुरओ कट्टु ठिया चेव सपरिवारा सुस्समाणी णमंसमाणी अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा जाव पज्जुवासइ ॥ ( सूत्रं ३८० ) ॥ तए णं सा देवाणंदा माहणी आगयपण्हाया पप्फुयलोयणा संवरियवलयबाहा कंचुयपरिक्खित्तिया धाराहयकलंबगंपिव समूसवियरोमकूवा समणं भगवं महावीरं अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणी चिट्ठति ॥ भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–किण्णं भंते ! एसा देवाणंदा माहणी आगयपण्हया तं चेव जाव रोमकूवा देवाणुप्पिए अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणी चिट्ठइ ?, गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! देवाणंदा माहणी मम अम्मा, अहन्नं देवाणंदाए माहणीए अत्तए, तए णं सा देवाणंदा माहणी तेणं पुव्वपुत्तसिणेहाणुराएणं आगयपण्हया जाव समूसवियरोमकूवा मम अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणी २ चिट्ठइ ।

॥ (सूत्रं ३८१) ॥ तए णं समणे भगवं महावीरे उसभदत्तस्स माहणस्स देवाणंदाए माहणीए तीसे य महतिमहालियाए इसिपरिसाए जाव परिसा पडिगया। तए णं से उसभदत्ते माहणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वदासी–एवमेयं भंते! तहमेयं! भंते! जहा खंदओ जाव से जहेयं तुज्झे वदहत्तिकट्टु उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ उत्तरपु०२त्ता सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ सयमे०२त्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेति सयमे०२त्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासी--आलित्ते णं भंते! लोए पलित्ते णं भंते! लोए आलित्तपलित्ते णं भंते! लोए जराए मरणेण य, एवं एएणं कमेणं इमं जहा खंदओ तहेव पव्वइओ जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ जाव बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमजाव विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ २ मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेति मास० २ सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेति सट्ठिं २ त्ता जस्सट्ठाए कीरति नग्गभावे जाव तमट्ठं आराहेइ जाव तमट्ठं आराहेत्ता जाव सव्वदुक्खप्पहीणे। तए णं सा देवाणंदा माहणी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठा समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासी–एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! एवं जहा उसभदत्तो तहेव जाव धम्माइक्खियं। तए णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदं माहणिं सयमेव पव्वावेति सय०२

सयमेव अज्जचंदणाए अज्जाए सीसिणित्ताए दलयइ ॥ तए णं सा अज्जचंदणा अज्जा देवाणंद माहणिं सयमेव पव्वावेति सयमेव मुंडावेति सयमेव सेहावेति एवं जहेव उसभदत्तो तहेव अज्जचंदणाए अज्जाए इमं एयारूवं धम्मियं उवदेसं सम्मं संपडिवज्जइ तमाणाए तह गच्छइ जाव संजमेणं संजमति, तए णं सा देवाणंदा अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अंतियं सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ सेसं तं चेव जाव सव्वदुक्खप्पहीणा ॥(सूत्रं ३८२)॥

'तेणं कालेण'मित्यादि, 'अड्ढे'त्ति समृद्धः 'दित्ते'त्ति दीप्तः—तेजस्वी दृप्तो वा दर्पवान् 'वित्ते'त्ति प्रसिद्धः, यावत्करणात् 'विच्छिन्नविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइन्ने'इत्यादि दृश्यं 'हियाए'त्ति हिताय पथ्यान्नवत् 'सुहाए'त्ति सुखाय—शर्म्मणे 'खमाए'त्ति क्षमत्वाय सङ्गतत्वायेत्यर्थः 'आणुगामियत्ताए'त्ति अनुगामिकत्वाय शुभानुबन्धायेत्यर्थः 'हट्ठ' इह यावत्करणादेवं दृश्यं—'हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया' हृष्टतुष्टम्—अत्यर्थं तुष्टं हृष्टं वा—विस्मितं तुष्टं—तोषवच्चित्तं यत्र तत्तथा, तद्यथा भवत्येवमानंदिता—ईषन्मुखसौम्यतादिभावैः समृद्धिमुपगता, ततश्च नन्दिता—समृद्धतरतामुपगता, 'पीइमणा'प्रीतिः—प्रीणनं—आप्यायनं मनसि यस्याः सा प्रीतिमनाः 'परमसोमणस्सिया' परमसौमनस्यं—सुष्ठु सुमनस्कता सञ्जातं यस्याः सा परमसौमनस्यिता 'हरिसवसविसप्पमाणहियया' हर्षवशेन विसर्प्पद्—विस्तारयायि हृदयं यस्याः सा तथा 'लहुकरणजुत्तजोइए'इत्यादि, लघुकरणं—शीघ्रक्रियादक्षत्वं तेन युक्तौ यौगिकौ च—प्रशस्तयोगवन्तौ प्रशस्तसदृशरूपत्वाद्यौ तौ तथा, समाः खुराश्चप्रतीताः 'वालिहाण'त्ति वालधाने—पुच्छौ ययोस्तौ तथा, समानि लिखितानि—उल्लिखितानि शृङ्गाणि ययोस्तौ तथा, ततः कर्मधारयोऽतस्ताभ्यां लघुकरणयुक्तयौगिकसमखुरवालिधानसमलिखितशृङ्गकाभ्यां, गोयुवभ्यां युक्तमेव यानप्रवरमुपस्थापयतेति सम्बन्धः, पुनः किंभूताभ्याम् ? इत्याह—जाम्बूनदमयौ—सुवर्णनि-

वृत्तौ यौ कलापौ–कण्ठाभरणविशेषौ ताभ्यां युक्तौ प्रतिविशिष्टकौ च–प्रधानौ जवादिभिर्यौ तौ तथा ताभ्यां जाम्बूनदमयकलापयुक्त-
प्रतिविशिष्टकाभ्यां रजतमय्यौ–रूप्यविकारौ घण्टे ययोस्तौ तथा, सूत्ररज्जुके–कार्प्पासिकसूत्रदवरकमय्यौ वरकाञ्चने–प्रवरसुवर्णमण्डि-
तत्वेन प्रधानसुवर्णे ये नस्ते–नासिकारज्जू तयोः प्रग्रहेण–रश्मिनाऽवगृहीतकौ–बद्धौ यौ तौ तथा ततः कर्मधारयोऽतस्ताभ्यां रजतम-
यघण्टसूत्ररज्जुकवरकाञ्चननस्ताप्रग्रहावगृहीतकाभ्यां, नीलोत्पलैः—जलजविशेषैः कृतो–विहितः 'आमेल'त्ति आपीडः–शेखरो ययो-
स्तौ तथा ताभ्यां नीलोत्पलकृतापीडकाभ्यां 'पवरगोणजुवाणएहिं'ति प्रवरगोयुवभ्यां नानामणिरत्नानां सत्कं यद् घण्टिकाप्रधानं
जालं–जालकं तेन परिगतं–परिक्षिप्तं यत्तत्तथा, सुजातं–सुजातदारुमयं यद् युगं–यूपस्तत् सुजातयुगं तच्च यौक्त्ररज्जुकायुगंच–योक्त्रा-
भिधानरज्जुकायुग्मं सुजातयुगयोक्त्ररज्जुकायुगे ते प्रशस्ते–अतिशुभे सुविरचिते–सुघटिते निर्मिते–निवेशिते यत्रयत् सुजातयुगयोक्त्रर-
ज्जुकायुगप्रशस्तसुविरचितनिर्मितम् । 'एव'मित्यादि, एवं स्वामिन् ! तथेत्याज्ञया इत्येवं ब्रुवाणा इत्यर्थः 'विनयेन' अञ्जलिकरणा-
दिना ॥ 'तए णं सा देवाणंदा माहणी'त्यादि, इह च स्थाने वाचनान्तरे देवानन्दावर्णक एवं दृश्यते—'अतो अंतेउरंसि
ण्हाया' 'अन्तः' मध्येऽन्तःपुरस्य स्नाता, अनेन च कुलीनाः स्त्रियः प्रच्छन्नाः स्नान्तीति दर्शितं, 'कयबलिकम्मा' गृहदेवताः प्रतीत्य
'कयकोउयमंगलपायच्छित्ता' कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तान्यवश्यंकार्यत्वात् यया सा तथा, तत्र कौतुकानि–मषीतिल-
कादीनि मङ्गलानि–सिद्धार्थकदूर्वादीनि 'किञ्च'त्ति किञ्चान्यद् 'वरपादपत्तनेउरमणिमेहलाहारविरइयउचियकडगखुड्डयए-
गावलीकंठसुत्तउरत्थगेवेज्जसोणिसुत्तगणाणामणिरयणभूसणविराइयंगी' वराभ्यां पादप्राप्तनूपुराभ्यां मणिमेखलया हारेण
विरचितैः रतिदैर्वा उचितैः–युक्तैः कटकैश्च 'खुड्डाग'त्ति अङ्गुलीयकैश्च एकावल्या च–विचित्रमणिकमय्या कण्ठसूत्रेण च–उरःस्थेन

रूढिगम्येन ग्रैवेयकेण च–प्रतीतेन उरःस्थग्रैवेयकेण वा श्रोणिसूत्रकेण च–कटीसूत्रेण नानामणिरत्नानां भूषणैश्च विराजितमङ्गं–शरीरं यस्याः सा तथा, 'चीणंसुयवत्थपवरपरिहिया' चीनांशुकं नाम यद्वस्त्राणां मध्ये प्रवरं तत्परिहितं–निवसनीकृतं यया सा तथा 'दुगुल्लसुकुमालउत्तरिज्जा' दुकूलो–वृक्षविशेषस्तद्वल्काज्जातं दुकूलं–वस्त्रविशेषस्तत् सुकुमारमुत्तरीयम्–उपरिकायाच्छादनं यस्याः सा तथा 'सव्वोउयसुरभिकुसुमवरियसिरया' सर्वर्त्तुकसुरभिकुसुमैर्वृता–वेष्टिताः शिरोजा यस्याः सा तथा 'वरचंदणवंदिया' वरचन्दनं वन्दितं–ललाटे निवेशितं यया सा तथा 'वराभरणभूसियंगी'ति व्यक्तं 'कालागुरुधूवधूविया'इत्यपि व्यक्तं 'सिरीसमाणवेसा' श्रीः–देवता तया समाननेपथ्या, इतः प्रकृतवाचनाऽनुश्रियते–'खुज्जाहिं'ति कुब्जिकाभिर्वक्रजङ्घाभिरित्यर्थः 'चिलाइयाहिं'ति चिलातदेशोत्पन्नाभिः, यावत्करणादिदं दृश्यं—'वामणियाहिं' ह्रस्वशरीराभिः 'वडहियाहिं' मडहकोष्ठाभिः 'बब्बरियाहिं पओसियाहिं ईसिगणियाहिं वासगणियाहिं जोण्हियाहिं पल्हवियाहिं ल्हासियाहिं लउसियाहिं आरबीहिं दमिलाहिं सिंहलीहिं पुलिंदीहिं पक्कणीहिं बहलीहिं मुरुंडीहिं सबरीहिं पारसीहिं नाणादेसविदेसपरिपिंडियाहिं'–नानादेशेभ्यो–बहुविधजनपदेभ्यो विदेशे–तद्देशापेक्षया देशान्तरे परिपिण्डिता यास्तास्तथा 'सदेसनेवत्थगहियवेसाहिं' स्वदेशनेपथ्यमेव गृहीतो वेषो यकाभिस्तास्तथा ताभिः 'इंगियचिंतियपत्थियवियाणियाहिं' इङ्गितेन–नयनादिचेष्टया चिन्तितं च परेण प्रार्थितं च–अभिलषितं विजानन्ति यास्तास्तथा ताभिः 'कुसलाहिं विणीयाहिं' युक्ता इति गम्यते 'चेडियाचक्कवालवरिसधरथेरकंचुइज्जमहत्तरयवंदपरिक्खित्ता' चेटीचक्रवालेनार्थात्स्वदेशसम्भवेन वर्षधराणां–वर्धितककरणेन नपुंसकीकृतानामन्तःपुरमहल्लकानां 'थेरकंचुइज्ज'त्ति स्थविरकञ्चुकिनां–अन्तःपुरप्रयोजननिवेदकानां प्रतीहाराणां वा महत्तरकाणां च–अन्तःपुरकार्यचिन्तकानां वृन्देन परिक्षिप्ता या सा

तथा, इदं च सर्वं वाचनान्तरे साक्षादेवास्ति। 'सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए'त्ति पुष्पताम्बूलादिद्रव्याणां व्युत्सर्जनया त्यागेनेत्यर्थः 'अचित्ताणं दव्वाणं अविमोयणयाए'त्ति वस्त्रादीनामत्यागेनेत्यर्थः 'मणस्स एगत्तीभावकरणेणं' अनेकस्य सत एकतालक्षणभावकरणेन 'ठिया चेव'त्ति ऊर्ध्वस्थानस्थितैव अनुपविष्टेत्यर्थः 'आगयपण्हय'त्ति 'आयातप्रश्रवा' पुत्रस्नेहादागतस्तन्मुखस्तन्येत्यर्थः 'पप्फुयलोयणा' प्रप्लुतलोचना पुत्रदर्शनात् प्रवर्त्तितानन्दजलेन 'संवरियवलयबाहा' संवृतौ-हर्षातिरेकादतिस्थूरीभवन्तौ निषिद्धौ वलयैः-कटकैर्बाहू-भुजौ यस्याः सा तथा 'कंचुयपरिक्खित्तिया' कञ्चुको-वारबाणः परिक्षिप्तो-विस्तारितो हर्षातिरेकस्थूरीभूतशरीरतया यया सा तथा 'धाराहयकयंबगंपिव समूसवियरोमकूवा' मेघधाराभ्याहतकदम्बपुष्पमिव समुच्छ्वसितानि रोमाणि कूपेषु-रोमरन्ध्रेषु यस्याः सा तथा 'देहमाणी'ति प्रेक्षमाणा, आभीक्ष्ण्ये चात्र द्विरुक्तिः॥ 'भंते'त्ति भदन्त! इत्येवमामन्त्रणवचसाऽऽमन्त्र्येत्यर्थः 'गोयमाइ'त्ति गौतम इति एवमामन्त्र्येत्यर्थः अथवा गौतम इति नामोच्चारणम् 'अहे'ति आमन्त्रणार्थो निपातः हे भो इत्यादिवत् 'अत्तए'त्ति आत्मजः-पुत्रः 'पुव्वपुत्तसिणेहाणुराएणं'त्ति पूर्वः-प्रथमगर्भाधानकालसम्भवो यः पुत्रस्नेहलक्षणोऽनुरागः स पूर्वपुत्रस्नेहानुरागस्तेन 'महतिमहालियाए'त्ति महती चासावतिमहती चेति महातिमहती तस्यै, आलप्रत्ययश्चेह प्राकृतप्रभवः, 'इसिपरिसाए'त्ति पश्यन्तीति ऋषयो-ज्ञानिनस्तद्रूपा पर्षत्—परिवार ऋषिपर्षत्तस्यै, यावत्करणादिदं दृश्यं—'मुणिपरिसाए जइपरिसाए अणेगसयाए अणेगसयविंदपरिवाराए' इत्यादि, तत्र मुनयो-वाचंयमा यतयस्तु-धर्मक्रियासु प्रयतमानाः अनेकानि शतानि यस्याः सा तथा तस्यै, अनेकशतप्रमाणानि वृन्दानि-परिवारो यस्याः सा तथा तस्यै॥ 'तए णं सा अज्जचंदणा अज्जे'त्यादि, इह च देवानन्दाया भगवता प्रव्राजनकरणेऽपि यदार्यचन्दनया पुनस्तत्करणं तत्तत्रैवानवगतावग-

मकरणादिना विशेषाधानमित्यवगन्तव्यमिति 'तमाणाए'त्ति तदाज्ञया–आर्यचन्दनाज्ञया ॥

तस्स णं माहणकुंडग्गामस्स नगरस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं खत्तियकुंडग्गामे नामं नगरे होत्था, वन्नओ, तत्थ णं खत्तियकुंडग्गामे नयरे जमालीनामं खत्तियकुमारे परिवसति अड्ढे दित्ते जाव अपरिभूए उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्तीसतिबद्धेहिं नाडएहिं णाणाविहवरतरुणीसंपउत्तेहिं उवनच्चिज्जमाणे उवनच्चिज्जमाणे उवगिज्जमाणे २ उवलालिज्जमाणे उव० २ पाउसवासारत्तसरदहेमंतवसंतगिम्हपज्जंते छप्पि उऊ जहाविभवेणं माणमाणे २ कालं गालेमाणे इट्ठे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरइ। तए णं खत्तियकुंडग्गामे नगरे सिंघाडगतियचउक्कचच्चरजाव बहुजणसद्दे इ वा जहा उववाइए जाव एवं पन्नवेइ एवं परूवेइ–एवं खलु देवाणुप्पिया! समणे भगवं महावीरे आइगरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी माहणकुंडग्गामस्स नगरस्स बहिया बहुसालए चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ, तं महप्फलं खलु देवाणुप्पिया! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं जहा उववाइए जाव एगाभिमुहे खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छंति निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नगरे जेणेव बहुसालए चेइए एवं जहा उववाइए जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासंति। तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स तं महया जणसद्दं वा जाव जणसन्निवायं वा सुणमाणस्स वा पासमाणस्स वा अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–किन्नं अज्ज खत्तियकुंडग्गामे नगरे इंदमहेइ वा खंदमहेइ वा मुगुंदमहेइ वा णागमहेइ वा जक्खमहेइ वा भूयमहेइ वा कूवमहेइ वा तडागमहेइ वा नईमहेइ वा

दहमहेइ वा पव्वयमहेइ वा रुक्खमहेइ वा चेइयमहेइ वा थूभमहेइ वा जण्णं एए बहवे उग्गा भोगा राइन्ना इक्खागा णाया कोरव्वा खत्तिया खत्तियपुत्ता भडा भडपुत्ता जहा उववाइए जाव सत्थवाहप्पभिइए ण्हाया कयबलिकम्मा जहा उववाइए जाव निग्गच्छंति ?, एवं संपेहेइ एवं संपेहित्ता कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेति कंचु० २ एवं वयासी-किण्णं देवाणुप्पिया ! अज्ज खत्तियकुंडग्गामे नगरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छंति ?, तए णं से कंचुइज्जपुरिसे जमालिणा खत्तियकुमारेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणस्स भगवओ महावीरस्स आगमणगहियविणिच्छए करयल० जमालिं खत्तियकुमारं जएणं विजएणं वद्धावेइ वद्धावेत्ता एवं वयासी-णो खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज खत्तियकुंडग्गामे नयरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छइ, एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज समणे भगवं महावीरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी माहणकुंडगामस्स नयरस्स बहिया बहुसालए चेइए अहापडिरूवं उग्गहं जाव विहरति, तए णं एए बहवे उग्गा भोगा जाव अप्पेगइया वंदणवत्तियं जाव निग्गच्छंति । तए णं से जमाली खत्तियकुमारे कंचुइज्जपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ कोडुंबियपुरिसे सद्दावइत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिणा खत्तियकुमारेणं एवं वुत्ता समाणा जाव पच्चप्पिणंति, तए णं जमाली खत्तियकुमारे जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता ण्हाए कयबलिकम्मे जहा उववाइए परिसावन्नओ तहा भाणियव्वं जाव चंदणाकिन्नगायसरीरे सव्वालंकारविभूसिए मज्जणघराओ पडि-

निक्खमइ मज्जणघराओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहेइ चाउ० २ त्ता सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं महया भडचडकरपहकरवंदपरिक्खित्ते खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नगरे जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवाच्छित्ता तुरए निगिण्हेइ तुरए २ त्ता रहं ठवेइ रहं ठवेत्ता रहाओ पच्चोरुहति रहा० २ त्ता पुप्फतंबोलाउहमादीयं वाहणाओ य विसज्जेइ २ त्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ उत्तरासंगं करेत्ता आयंते चोक्खे परमसुइब्भूए अंजलिमउलियहत्थे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ २ तिक्खुत्तो २ जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ। तए णं समणे भगवं महावीरे जमालिस्स खत्तियकुमारस्स तीसे य महतिमहालियाए इसिजावधम्मकहा जाव परिसा पडिगया, तए णं से जमाली खत्तियकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी–सद्दहामि णं भंते! निग्गंथं पावयणं पत्तयामि णं भंते! निग्गंथं पावयणं रोएमि णं भंते! निग्गंथं पावयणं अब्भुट्ठेमि णं भंते! निग्गंथं पावयणं एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेयं भंते! जाव से जहेयं तुज्झे वदह, जं नवरं देवाणुप्पिया! अम्मापियरो आपुच्छामि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयामि, अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबन्धं

'फुट्टमाणेहिं'ति अतिरभसाऽऽस्फालनात्स्फुटद्भिरिव विदलद्भिरिवेत्यर्थः 'मुइंगमत्थएहिं'ति मृदङ्गानां-मर्दलानां मस्तकानीव मस्तकानि-उपरिभागाः पुटानीत्यर्थः मृदङ्गमस्तकानि 'बत्तीसतिबद्धेहिं'ति द्वात्रिंशताऽभिनेतव्यप्रकारैः पात्रैरित्येके बद्धानि द्वात्रिंशद्बद्धानि तैः 'उवनच्चिज्जमाणे'त्ति उपनृत्यमानः तमुपाश्रित्य नर्त्तनात् 'उवगिज्जमाणे'त्ति तद्गुणगानात् 'उवलालिज्जमाणे'त्ति उपलाल्यमान ईप्सितार्थसम्पादनात 'पाउसे'त्यादि, तत्र प्रावृट् श्रावणादिः वर्षारात्रोऽश्वयुजादिः शरत् मार्गशीर्षादिः हेमन्तो माघादिः वसन्तः चैत्रादिः ग्रीष्मो ज्येष्ठादिः, ततश्च प्रावृट् च वर्षारात्रश्च शरच्च हेमन्तश्च वसन्तश्चेति प्रावृड्वर्षारात्रशरद्धेमन्तवसन्तास्ते च ते ग्रीष्मपर्यन्ताश्चेति कर्म्मधारयोऽतस्तान् षडपि 'ऋतून्' कालविशेषान् 'माणमाणे'त्ति मानयन् तदनुभावमनुभवन् 'गालेमाणे'त्ति 'गालयन्' अतिवाहयन् ॥ 'सिंघाडगतिगचउक्कचच्चर' इह यावत्करणादिदं दृश्यं-'चउम्मुहमहापहपहेसु'त्ति 'बहुजणसद्दे इ वा'त्ति यत्र श्रृङ्गाटकादौ बहूनां जनानां शब्दः, स्तत्र बहुजनोऽन्योऽन्यस्यैवमाख्यातीति वाक्यार्थः, तत्र च बहुजनशब्दः परस्परालापादिरूपः, इतिशब्दो वाक्यालङ्कारे वाशब्दो विकल्पे, 'जहा उववाइए'त्ति, तत्र चेदं सूत्रमेवं लेशतः—'जणवूहेइ वा जणबोलेइ वा जणकलकलेति वा जणुम्मीइ वा जणुक्कलियाइ वा जणसन्निवाएइ वा बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ एवं भासइ'त्ति, अस्यायमर्थः—'जनव्यूहः' जनसमुदायः बोलः-अव्यक्तवर्णो ध्वनिः कलकलः-स एवोपलभ्यमानवचनविभागः ऊर्म्मिः-सम्बाधः उत्कलिका-लघुतरः समुदायः संनिपातः-अपरापरस्थानेभ्यो जनानामेकत्र मीलनं आख्याति सामान्यतः भाषते व्यक्तपर्यायवचनतः, एतदेवार्थद्वयं पर्यायतः क्रमेणाह—एवं प्रज्ञापयति एवं प्ररूपयतीति, 'अहापडिरूवं' इह यावत्करणादिदं दृश्यम्—'उग्गहं ओगिण्हति ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे'त्ति, 'जहा उववाइए'त्ति, तदेव लेशतो दृश्यते—'नामगोयस्सवि सवणयाए,

किमंग पुण अभिगमणवंदणणमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए?, एगस्सवि आयरियस्स सुवयणस्स सवणयाए? किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए ?, तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया! समणं ३ वंदामो ४, एयं णे पेच्च भवे हियाए ५ भविस्सइत्तिकट्टु बहवे उग्गा उग्गपुत्ता एवं भोगा राइन्ना खत्तिया भडा अप्पेगइया वंदणवत्तियं एवं पूयणवत्तियं सक्कारवत्तियं ( सम्माणवत्तियं ) कोउहलवत्तियं अप्पेगतिया जीयमेयंतिकट्टु ण्हाया कयबलिकम्मा' इत्यादि, 'एवं जहा उववाइए' तत्र चैतदेवं सूत्रं—'तेणामेव उवागच्छंति, तेणामेव उवागच्छित्ता छत्ताइए तित्थयरातिसए पासंति जाणवाहणाइं ठवेंति' इत्यादि ॥ 'अयमेयारूवे'त्ति अयमेतद्रूपो वक्ष्यमाणस्वरूपः 'अज्झत्थिए'त्ति आध्यात्मिकः-आत्माश्रितः, यावत्करणादिदं दृश्यं—'चिंतिए'त्ति स्मरणरूपः 'पत्थिए'त्ति प्रार्थितः—लब्धुं प्रार्थितः 'मणोगए'त्ति अबहिःप्रकाशितः 'संकप्पे'त्ति विकल्पः, 'इंदमहेइ व'त्ति इन्द्रमह-इन्द्रोत्सवः 'खंदमहेइ व'त्ति स्कन्दमहः-कार्त्तिकेयोत्सवः 'मुगुंदमहेइ व'त्ति इह मुकुन्दो वासुदेवो बलदेवो वा, 'जहा उववाइए'त्ति तत्र चेदमेवं सूत्रं—'माहणा भडा जोहा मल्लई लेच्छई अन्ने य बहवे राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसेणावइ'त्ति तत्र 'भटा' शूराः 'योधाः' सहस्रयोधादयः, मल्लई लेच्छई राजविशेषाः 'राजानः' सामन्ताः 'ईश्वराः' युवराजादयः 'तलवराः' राजवल्लभाः 'माडम्बिकाः' संनिवेशविशेषनायकाः 'कोडुम्बिकाः' कतिपयकुटुम्बनायकाः 'इभ्याः' महाधनाः, 'जहा उववाइए'त्ति अनेन चेदं सूचितं—'कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सिरसाकंठेमालाकडा' इत्यादि, शिरसा कंठे च माला कृता-धृता यैस्ते तथा, प्राकृतत्वाच्चैवं निर्देशः, 'आगमणगहियविणिच्छए'त्ति आगमने गृहीतः-कृतो विनिश्चयो-निर्णयो येन स तथा 'जएणं विजएणं वद्धावेइ' त्ति जय त्वं विजयस्व त्वमित्येवमाशीर्वचनेन भगवतः समागमनसूचनेन तमानन्देन वर्द्धयतीति भावः । 'अप्पेगतिया वंदणवत्तियं जाव निग्गच्छंति

इह यावत्करणादिदं दृश्यम्—'अप्पेगइया पूयणवत्तियं एवं सक्कारवत्तियं सम्माणवत्तियं कोउहल्लवत्तियं असुयाइं सुणिस्सामो सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो, अप्पेगइया हयगया एवं गयरहसिबियासंदमाणियागया अप्पेगइया पायविहारचारिणो पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता महता उक्कट्ठिसीहणायबोलकलकलरवेणं समुद्दरवभूयंपिव करेमाणा खत्तिय-कुंडग्गामस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं'ति ॥ 'चाउग्घंटं'ति चतुर्घण्टोपेतम् 'आसरहं'ति अश्ववाह्यरथं 'जुत्तामेव'त्ति युक्तमेव 'जहा उववाइए परिसावन्नओ'त्ति यथा कौणिकस्यौपपातिके परिवारवर्णक उक्तः तथाऽस्यापीत्यर्थः, स चायम्—'अणेगगणनाय-गदंडनायगराईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियमंतिमहामंतिगणगदोवारियअमच्चचेडपीढमद्दनगरनिगमसेट्ठिसत्थवाहदूयसंधिवाल सद्धिं संप-रिवुडे'त्ति, तत्रानेके ये गणनायकाः—प्रकृतिमहत्तराः दण्डनायकाः—तन्त्रपालकाः राजानो—माण्डलिकाः ईश्वरा—युवराजानः तलवराः—परितुष्टनरपतिप्रदत्तपट्टबन्धविभूषिता राजस्थानीयाः माडम्बिकाः—छिन्नमडम्बाधिपाः कोडुम्बिकाः कतिपयकुटुम्बप्रभवः अवलगकाः-सेवकाः मन्त्रिणः प्रतीताः महामन्त्रिणो—मन्त्रिमण्डलप्रधानाः हस्तिसाधनोपरिका इति च वृद्धाः गणकाः—गणितज्ञाः भाण्डागारिका इति च वृद्धाः दौवारिकाः—प्रतीहाराः अमात्या—राज्याधिष्ठायकाः चेटाः—पादमूलिकाः पीठमर्दाः—आस्थाने आसनासीनसेवकाः वय-स्या इत्यर्थः नगरं—नगरवासिप्रकृतयः निगमाः—कारणिकाः श्रेष्ठिनः—श्रीदेवताऽध्यासितसौवर्णपट्टविभूषितोत्तमाङ्गाः सेनापतयः—सैन्य-नायकाः दूताः—अन्येषां राजादेशनिवेदकाः सन्धिपाला—राज्यसन्धिरक्षकाः, एषां द्वन्द्वस्ततस्तैः, इह तृतीयाबहुवचनलोपो द्रष्टव्यः 'साद्धं' सह, न केवलं सहितत्वमेव अपि तु तैः समिति—समन्तात् परिवृतः—परिकरित इति। 'चंदणुक्खित्तगायसरीरे'त्ति' चन्दनो-पलिताङ्गदेहा इत्यर्थः 'महयाभडचडगरपहकरवंदपरिक्खित्ते'त्ति 'महय'त्ति महता—बृहता प्रकारेणेति गम्यते, भटानां प्राकृ-

तत्वान्महाभटानां वा 'चडगर'त्ति चटकरवन्तो—विस्तरवन्तः 'पहकर'त्ति समूहास्तेषां यद् वृन्दं तेन परिक्षिप्तो यः स तथा 'पुप्फतंबोलाउहमाइयं'ति इहादिशब्दाच्छेखरच्छत्रचामरादिपरिग्रहः 'आयंते'त्ति शौचार्थं कृतजलस्पर्शः 'चोक्खे'त्ति आचमनादपनीताशुचिद्रव्यः 'परमसुइब्भूए'त्ति अत एवात्यर्थं शुचीभूतः 'अंजलिमउलियहत्थे'त्ति अञ्जलिना मुकुलमिव कृतौ हस्तौ येन स तथा॥

तए णं से जमाली खत्तियकुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता तमेव चाउग्घंटं आसरहं दुरूहेइ दुरूहित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ बहुसालाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता सकोरंटजाव धरिज्जमाणेणं महया भडचडगरजावपरिक्खित्ते जेणेव खत्तियकुंडग्गामे नयरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता तुरए निगिण्हइ तुरए निगिण्हित्ता रहं ठवेइ रहं ठवेत्ता रहाओ पच्चोरुहइ रहाओ पच्चोरुहित्ता जेणेव अब्भिंतरिया उवट्ठाणसाला जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता अम्मापियरो जएणं विजएणं वद्धावेइ वद्धावेत्ता एवं वयासी—एवं खलु अम्मताओ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मे निसंते, सेविय मे धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—धन्नेसि णं तुमं जाया! कयत्थेसि णं तुमं जाया! कयपुन्नेसि णं तुमं जाया! कयलक्खणेसि णं तुमं जाया! जन्नं तुमे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मे निसंते सेवि य धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, तए णं से

जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो दोच्चंपि एवं वयासी-एवं खलु मए अम्मताओ! समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे निसंते जाव अभिरुइए, तए णं अहं अम्मताओ! संसारभउव्विग्गे भीए जम्मजरामरणाणं तं इच्छामि णं अम्मताओ! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए। तए णं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माता तं अणिट्ठं अकंतं अप्पियं अमणुन्नं अमणामं असुयपुव्वं गिरं सोच्चा निसम्म सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगत्ता सोगभरपवेवियंगमंगी नित्तेया दीणविमणवयणा करयलमलियव्व कमलमाला तक्खणओलुग्गदुब्बलसरीरलायन्नसुन्ननिच्छाया गयसिरीया पसिढिलभूसणपडंतखुण्णियसंचुन्नियधवलवलयपब्भट्ठउत्तरिज्जा मुच्छावसणट्ठचेतगुरुई सुकुमालविकिन्नकेसहत्था परसुणियत्तव्व चंपगलया निव्वत्तमहे व्व इंदलट्ठी विमुक्कसंधिबंधणा कोट्टिमतलंसि धसत्ति सव्वंगेहिं संनिवडिया, तए णं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया ससंभमोयत्तियाए तुरियं कंचणभिंगारमुहविणिग्गयसीयलविमलजलधारापरिसिंचमाणनिव्ववियगायलट्ठी उक्खेवयतालियंटवीयणगजणियवाएणं सफुसिएणं अंतेउरपरिजणेणं आसासिया समाणी रोयमाणी कंदमाणी सोयमाणी विलवमाणी जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी-तुमंसि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए मणुन्ने मणामे थेज्जे वेसासिए संमए बहुमए अणुमए भंडकरंडगसमाणे रयणे रयणब्भूए जीविऊसविये हिययानंदिजणणे उंबरपुप्फमिव दुल्लभे सवणयाए, किमंग पुण पासणयाए?, तं नो खलु जाया! अम्हे इच्छामो तुज्झं खणमवि विप्पओगं, तं अच्छाहि ताव

जाया! जाव ताव अम्हे जीवामो, तओ पच्छा अम्हेहिं कालगएहिं समाणेहिं परिणयवये वड्डियकुलवंसतंतुकज्जंमि निरवयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइहिसि। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी–तहावि णं तं अम्मताओ! जण्णं तुज्झे मम एवं वदह तुमंसि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते तं चेव जाव पव्वइहिसि, एवं खलु अम्मताओ! माणुस्सए भवे अणेगजाइजरामरणरोगसारीरमाणसपकामदुक्खवेयणवसणसतोवद्दवाभिभूए अधुए अणितिए असासए संझब्भरागसरिसे जलबुब्बुदसमाणे कुसग्गजलबिंदुसन्निभे सुविणगदंसणोवमे विज्जुलयाचंचले अणिच्चे सडणपडणविद्धंसणधम्मे पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सविप्पजहियव्वे भविस्सइ, से केस णं जाणइ अम्मताओ! के पुव्विं गमणयाए?, के पच्छा गमणयाए?, तं इच्छामि णं अम्मताओ! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए। तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी–इमं च ते जाया! सरीरगं पविसिट्ठरूवलक्खणवंजणगुणोववेयं उत्तमबलवीरियसत्तजुत्तं विण्णाणवियक्खणं ससोहग्गगुणसमुस्सियं अभिजायमहक्खमं विविहवाहिरोगरहियं निरुवहयउदत्तलट्ठं पंचिंदियपडुपढमजोव्वणत्थं अणेगउत्तमगुणेहिं संजुत्तं तं अणुहोहि ताव जाव जाया! नियगसरीररूवसोहग्गजोव्वणगुणे, तओ पच्छा अणुभूयनियगसरीररूवसोहग्गजोव्वणगुणे अम्हेहिं कालगएहिं समाणेहिं परिणयवये वड्डियकुलवंसतंतुकज्जंमि निरवयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिसि, तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-

पियरो एवं वयासी-तहावि णं तं अम्मताओ! जन्नं तुज्झे ममं एवं वदह-इमं च णं ते जाया! सरीरगं तं चेव जाव पव्वइहिसि, एवं खलु अम्मताओ! माणुस्सगं सरीरं दुक्खाययणं विविहवाहिसयसंनिकेतं अट्ठियकट्ठुट्ठियं छिराण्हारुजालओणद्धसंपिणद्धं मत्तियभंडं व दुब्बलं असुइसंकिलिट्ठं अणिट्ठवियसव्वकालसंठप्पियं जराकुणिमजज्जरघरं व सडणपडणविद्धंसणधम्मं पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सविप्पजहियव्वं भविस्सइ, से केस णं जाणति ? अम्मताओ ! के पुव्विं तं चेव जाव पव्वइत्तए । तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी-इमाओ य ते जाया! विपुलकुलबालियाओ सरित्तयाओ सरिव्वयाओ सरिसलावन्नरूवजोव्वणगुणोववेयाओ सरिसएहिंतो कुलेहिंतो आणिएल्लियाओ कलाकुसलसव्वकाललालियसुहोचियाओ मद्दवगुणजुत्तनिउणविणओवयारपंडियवियक्खणाओ मंजुलमियमहुरभणियविहसियविप्पेक्खियगतिविसालचिट्ठियविसारदाओ अविकलकुलसीलसालिणीओ विसुद्धकुलवंससंताणतंतुवद्धणप्पग (ब्भु) ब्भवप्पभाविणीओ मणाणुकूलहियइच्छियाओ अट्ठ तुज्झ गुणवल्लहाओ उत्तमाओ निच्चं भावाणुत्तरसव्वंगसुंदरीओ भारियाओ, तं भुंजाहि ताव जाया ! एताहिं सद्धिं विउले माणुस्सए कामभोगे, तओ पच्छा भुत्तभोगी विसयविगयवोच्छिन्नकोउहल्ले अम्हेहिं कालगएहिं जाव पव्वइहिसि। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी— तहावि णं तं अम्मताओ ! जन्नं तुज्झे ममं एवं वयह-इमाओ ते जाया विपुलकुलजावपव्वइहिसि, एवं खलु अम्मताओ ! माणुस्सय कामभोगा असुई असासया वंतासवा पित्तासवा खेलासवा सुक्कासवा सोणियासवा उच्चारपासवणखेलसिंघाणगवंतपित्तपूयसुक्कसोणि-

यसमुब्भवा अमणुन्नदुरूवमुत्तपूइयपुरीसपुन्ना मयगंधुस्सासअसुभनिस्सासा उव्वेयणगा बीभत्था अप्पकालिया लहूसगा कलमलाहिया सदुक्खबहुजणसाहारणा परिकिलेसकिच्छदुक्खसज्झा अबुहजणणिसेविया सदा साहुगरहणिज्जा अणंतसंसारवद्धणा कडुगफलविवागा चुडलिव्व अमुच्चमाणदुक्खाणुबंधिणो सिद्धिगमणविग्घा, से केस णं जाणति अम्मताओ! के पुव्विं गमणयाए?, के पच्छा गमणयाए?, तं इच्छामि णं अम्मताओ! जाव पव्वइत्तए। तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—इमे य ते जाया! अज्जयपज्जयपिउपज्जयागएसु बहु हिरन्ने य सुवन्ने य कंसे य दूसे य विउलधणकणगजाव संतसारसावएज्ज अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं दाउं पकामं भोत्तुं पकामं परिभाएउं तं अणुहोहि ताव जाया! विउले माणुस्सए इड्ढिसक्कारसमुदए, तओ पच्छा अणुहूयकल्लाणे वड्ढियकुलतंतु जाव पव्वइहिसि। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—तहावि णं तं अम्मताओ! जन्नं तुज्झे ममं एवं वदह—इमं च ते जाया! अज्जगपज्जगजावपव्वइहिसि, एवं खलु अम्मताओ! हिरन्ने य सुवन्ने य जाव सावएज्जे अग्गिसाहिए चोरसाहिए रायसाहिए मच्चुसाहिए दायसाहिए एवं अग्गिसामन्ने जाव दाइयसामन्ने अधुवे अणितिए असासए पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सविप्पजहियव्वे भविस्सइ, से केस णं जाणइ तं चेव जाव पव्वइत्तए। तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मताओ जाहे नो संचाएन्ति विसयाणुलोमाहिं बहूहिं आघवणाहि य पन्नवणाहि य सन्नवणाहि य विन्नवणाहि य आघवेत्तए वा पन्नवेत्तए वा सन्नवेत्तए वा विन्नवेत्तए वा ताहे विसयपडिकूलाहिं संजमभयुव्वेयणकराहिं पन्नवणाहिं पन्नवेमाणा एवं वयासी—

एवं खलु जाया! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवले जहा आवस्सए जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति अहीव एगंतदिट्ठीए खुरो इव एगंतधाराए लोहमया जवा चावेयव्वा वालुयाकवले इव निस्साए गंगा वा महानदी पडिसोयगमणयाए महासमुद्दे वा भुयाहिं दुत्तरो तिक्खं कमियव्वं गरुयं लंबेयव्वं असिधारगं वतं चरियव्वं, नो खलु कप्पइ जाया! समणाणं निग्गंथाणं आहाकम्मिएत्ति वा उद्देसिएइ वा मिस्सजाएइ वा अज्झोयरएइ वा पूइएइ वा कीएइ वा पामिच्चेइ वा अच्छेज्जेइ वा अणिसट्ठेइ वा अभिहडेइ वा कंतारभत्तेइ वा दुब्भिक्खभत्तेइ वा गिलाणभत्तेइ वा वद्दलियाभत्तेइ वा पाहुणगभत्तेइ वा सेज्जायरपिंडेइ वा रायपिंडेइ वा मूलभोयणेइ वा कंदभोयणेइ वा फलभोयणेइ वा बीयभोयणेइ वा हरियभोयणेइ वा भुत्तए वा पायए वा, तुमं च णं जाया! सुहसमुचिए, णो चेव णं दुहसमुचिते, नालं सीयं नालं उण्हं नालं खुहा नालं पिपासा नालं चोरा नालं वाला नालं दंसा नालं मसया नालं वाइयपित्तियसेंभियसन्निवाइए विविहे रोगायंके परिसहोवसग्गे उदिन्ने अहियासेत्तए, तं नो खलु जाया! अम्हे इच्छामो तुज्झं खणमवि विप्पओगं, तं अच्छाहि ताव जाया! जाव ताव अम्हे जीवामो, तओ पच्छा अम्हेहिं जाव पव्वइहिसि। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—तहावि णं तं अम्मताओ! जन्नं तुज्झे ममं एवं वयह-एवं खलु जाया! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवले तं चेव जाव पव्वइहिसि, एवं खलु अम्मताओ! निग्गंथे पावयणे कीवाणं कायराणं कापुरिसाणं इहलोगपडिबद्धाणं परलोगपरंमुहाणं विसयतिसियाणं दुरणुचरे पागयजणस्स, धीरस्स निच्छियस्स ववसियस्स नो खलु एत्थं किंचिवि दुक्करं करणयाए, तं

इच्छामि णं अम्मताओ! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए। तए णं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो जाहे नो संचाएंति विसयाणुलोमाहि य विसयपडिकूलाहि य बहूहि य आघवणाहि य पन्नवणाहि य ४ आघवेत्तए वा जाव विन्नवेत्तए वा ताहे अकामए चेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स निक्खमणं अणुमन्नित्था ॥ (सूत्रं ३८४) ॥

'सद्दहामि'त्ति श्रद्दधे सामान्यतः 'पत्तियामि'त्ति प्रत्येमि प्रीतिविषयं वा करोमि 'रोएमि'त्ति चिकीर्षामि 'अब्भुट्ठेमि'त्ति अभ्युत्तिष्ठामि 'एवमेयं'ति उपलभ्यमानप्रकारवत् 'तहमेयं'ति आप्तवचनावगतपूर्वाभिमतप्रकारवत् 'अवितहमेयं'ति पूर्वमभिमतप्रकारयुक्तमपि सदन्यदा विगताभिमतप्रकारमपि किञ्चित्स्यादत उच्यते—'अवितथमेतत्' न कालान्तरेऽपि विगताभिमतप्रकारमिति ॥ 'अम्म! ताओ'त्ति हे अम्ब! हे-मातरित्यर्थः हे तात! हे पितरित्यर्थः 'निसंते'त्ति निशमितः श्रुत इत्यर्थः 'इच्छिए'त्ति इष्टः 'पडिच्छिए'त्ति पुनः पुनरिष्टः भावतो वा प्रतिपन्नः 'अभिरुइए'त्ति स्वादुभावमिवोपगतः 'धन्नेऽसि'त्ति धनं लब्धा 'असि' भवसि 'जाय'त्ति हे पुत्र! 'कयत्थेऽसि'त्ति 'कृतार्थः' कृतस्वप्रयोजनोऽसि 'कयलक्खणे'त्ति कृतानि-सार्थकानि लक्षणानि-देहचिह्नानि येन स कृतलक्षणः॥ 'अनिट्ठं'ति अवाञ्छिताम् 'अकंतं'ति अकमनीयाम् 'अप्पियं'ति अप्रीतिकरीम् 'अमणुन्नं'ति न मनसा ज्ञायते सुन्दरतयेत्यमनोज्ञा ताम् 'अमणामं'ति न मनसा अम्यते-गम्यते पुनः पुनः संसरणेनेत्यमनोज्ञा तां 'सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगत्ता' स्वेदेनागतेन रोमकूपेभ्यः प्रगलन्ति-क्षरन्ति विलीनानि च क्लिन्नानि गात्राणि यस्याः सा तथा 'सोगभरपवेवियंगमंगी' शोकभरेण प्रवेपितं-प्रकम्पितमङ्गमङ्गं यस्याः सा तथा 'नित्तेया' निर्वीर्या 'दीणविमणवयणा' दीनस्येव विमनस

इव (च) वदनं यस्याः सा तथा 'तक्खणओलुग्गदुब्बलसरीरलावन्नसुन्ननिच्छाय'त्ति तत्क्षणमेव–प्रव्रजामीतिवचनश्रवणक्षण एव अवरुग्णं–म्लानं दुर्बलं च शरीरं यस्याः सा तथा, लावण्येन शून्या लावण्यशून्या, निश्छाया—निष्प्रभा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः, 'गयसिरीय'त्ति निःशोभा 'पसिढिलभूसणपडंतखुन्नियसंचुन्नियधवलवलयपब्भट्ठउत्तरिज्जा' प्रशिथिलानि भूषणानि दुर्बलत्वाद्यस्याः सा तथा पतन्ति–कृशीभूतबाहुत्वाद्विगलन्ति 'खुन्निय'त्ति भूमिपतनात् प्रदेशान्तरेषु नमितानि संचूर्णितानि च—भग्नानि कानिचिद्धवलवलयानि–तथाविधकटकानि यस्याः सा तथा, प्रभ्रष्टं व्याकुलत्वादुत्तरीयं–वसनविशेषो यस्याः सा तथा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः, 'मुच्छावसणट्ठचेयगरुई'त्ति मूर्च्छावशान्नष्टे चेतसि गुर्वी–अलघुशरीरा या सा तथा 'सुकुमालविकिन्नकेसहत्थ'त्ति सुकुमारः स्वरूपेण विकीर्णो व्याकुलचित्ततया केशहस्तो–धम्मिल्लो यस्याः सा तथा, सुकुमाला वा विकीर्णाः केशा हस्तौ च यस्याः सा तथा 'परसुनियत्तव्व चंपगलय'त्ति परशुच्छिन्नेव चम्पकलता 'निव्वत्तमहे व्व इंदलट्ठि'त्ति निवृत्तोत्सवेवेन्द्रयष्टिः 'विमुक्कसंधिबंधण'त्ति श्लथीकृतसन्धिबन्धना 'ससंभमोयत्तियाए तुरियं कंचणभिंगारमुहविणिग्गयसीयलजलविमलधारपरिसिंचमाणनिव्ववियगायलट्ठि'त्ति ससम्भ्रमं व्याकुलचित्ततया अपवर्त्तयति–क्षिपति या सा तथा तया ससम्भ्रमापवर्त्तिकया चेटचेति गम्यते त्वरितं–शीघ्रं काञ्चनभृङ्गारमुखविनिर्गता या शीतजलविमलधारा तया परिषिच्यमाना निर्व्वापिता—स्वस्थीकृता गात्रयष्टिर्यस्याः सा तथा, अथवा ससम्भ्रमापवर्त्तितया–ससम्भ्रमक्षिप्तया काञ्चनभृङ्गारमुखविनिर्गतशीतलजलविमलधारयेत्येवं व्याख्येयं, लुप्ततृतीयैकवचनदर्शनात्, 'उक्खेवगतालियंटवीयणगजणियवाएणं'ति उत्क्षेपको–वंशदलादिमयो मुष्टिग्राह्यदण्डमध्यभागः तालवृन्तं–तालाभिधानवृक्षपत्रवृन्तं तत्पत्रच्छोट इत्यर्थः तदाकारं वा चर्म्ममयं वीजनकं तु–वंशादिमयमेवान्तर्ग्राह्यद-

ण्डं एतैर्जनितो यो वातः स तथा तेन 'सफुसिएणं' सोदकबिन्दुना 'रोयमाणी' अश्रुविमोचनात् 'कंदमाणी'महाध्वनिकरणात 'सोयमाणी' मनसा शोचनात् 'विलवमाणी' आर्त्तवचनकरणात् ॥ 'इट्ठे'इत्यादि पूर्ववत् 'थेज्जे'त्ति स्थैर्यगुणयोगात्स्थैर्यः 'वेसासिए'त्ति विश्वासस्थानं 'संमए'त्ति संमतस्तत्कृतकार्याणां संमतत्वात् 'बहुमए'त्ति बहुमतः-बहुष्वपि कार्येषु बहु वा-अनल्पतयाऽस्तोकतया मतो बहुमतः 'अणुमए'त्ति कार्य्यव्याघातस्य पश्चादपि मतोऽनुमतः 'भंडकरण्डगसमाणे' भाण्डं-आभरणं करण्डकः-तद्भाजनं तत्समानस्तस्यादेयत्वात् 'रयणे'त्ति रत्नं मनुष्यजातावुत्कृष्टत्वात् रजनो वा रञ्जक इत्यर्थः 'रयणभूए'त्ति चिन्तारत्नादिविकल्पः 'जीविऊसविए'त्ति जीवितमुत्सूते-प्रसूत इति जीवितोत्सवः स एव जीवितोत्सविकः जीवितविपये वा उत्सवो-महः स इव यः स जीवितोत्सविकः, जीवितोच्छ्वासिक इति पाठान्तरं 'हिययाणंदिजणणे' मनःसमृद्धिकारकः 'उंबरे'त्यादि, उदुम्बरपुष्पं ह्यलभ्यं भवत्यतस्तेनोपमानं 'सवणयाए'त्ति श्रवणतायै श्रोतुमित्यर्थः 'किमंग पुण'त्ति किं पुनः अंगेत्यामन्त्रणे 'अच्छाहि ताव जाया! जाव ताव अम्हे जीवामो'त्ति. इत्यत्राऽऽस्व तावद् हे जात! यावद्वयं जीवाम इत्येतावतैव विवक्षितसिद्धौ यत्पुनस्तावच्छब्दस्योच्चारणं तद्भाषामात्रमेवेति 'वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जम्मि निरयवक्खे'त्ति 'वड्ढिय'त्ति सप्तम्येकवचनलोपदर्शनाद्वर्द्धिते-पुत्रपौत्रादिभिर्वृद्धिमुपनीते कुलरूपो वंशो, न वेणुरूपः, कुलवंशः-सन्तानः स एव तन्तुदीर्घत्वसाधर्म्यात् कुलवंशतन्तुः स एव कार्यं-कृत्यं कुलवंशतन्तुकार्यं तत्र, अथवा वर्द्धितशब्दः कर्म्मधारयेण सम्बन्धनीयस्तत्र सति 'निरवकाङ्क्षः' निरपेक्षः सन् सकलप्रयोजनानाम्॥ 'तहावि णं तं'ति तथैव नान्यथेत्यर्थः यदुक्तं 'अम्हेहिं कालगएहिं पव्वइहिसि' तदाश्रित्यासावाह—'एवं खलु'इत्यादि, एवं वक्ष्यमाणेन न्यायेन 'अणेगजाइजरामरणरोगसारीरमाणसपकामदुक्खवेयणवसणसओवद्दवाभिभूए'त्ति अनेकानि यानि

जातिजरामरणरोगरूपाणि शारीराणि मानसिकानि च प्रकामं—अत्यर्थं दुःखानि तानि तथा तेषां यद्वेदनं, व्यसनानां च-चौर्यद्यूता-
दीनां यानि शतानि उपद्रवाश्च-राजचौर्यादिकृतास्तैरभिभूतो यः स तथा, अत एव 'अधुवे'त्ति न ध्रुवः—सूर्योदयवन्न प्रतिनिय-
तकालेऽवश्यम्भावी 'अणितिए'त्ति इतिशब्दो नियतरूपोपदर्शनपरः ततश्च न विद्यत इति यत्रासावनितिकः, अविद्य माननियतस्व-
रूप इत्यर्थः, ईश्वरादेरपि दारिद्र्यादिभावात्, 'असासए'त्ति क्षणनश्वरत्वात्, अशाश्वतत्वमेवोपमानैर्दर्शयन्नाह—'संझे'त्यादि, किं-
मुक्तं भवति ? इत्याह—'अणिच्चे'त्ति, अथवा प्राग् जीवितापेक्षयाऽनित्यत्वमुक्तमथ शरीरस्वरूपापेक्षया तदाह-'अणिच्चे' 'सडण-
पडणविद्धंसणधम्मे'त्ति शटनं-कुष्ठादिनाऽङ्गुल्यादेः पतनं बाह्वादेः खड्गच्छेदादादिना विध्वंसनं—क्षयः एत एव धर्मा यस्य स
तथा 'पुव्विं वि'त्ति विवक्षितकालात्पूर्वं वा 'पच्छा वि'त्ति विवक्षितकालात्पश्चाद्वा 'अवस्सविप्पजहियव्वे'त्ति अवश्यं 'विप्र-
हातव्यः' त्याज्यः 'से केस णं जाणइ'त्ति अथ कोऽसौ जानात्यस्माकं, न कोऽपीत्यर्थः, 'के पुव्विं गमणयाए'त्ति कः पूर्वं पित्रोः
पुत्रस्य वाऽन्यतो गमनाय परलोके उत्सहते कः पश्चाद्गमनाय तत्रैवोत्सहते, कः पूर्वं को वा पश्चान्म्रियत इत्यर्थः ॥ 'पविसिट्ठरूवं'ति
प्रविशिष्टरूपं 'लक्खणवंजणगुणोववेयं' लक्षणम् 'अस्थिष्वर्थः सुखं मांसे, त्वचि भोगाः स्त्रियोऽक्षिषु। गतौ यानं स्वरे चाज्ञा, सर्वं
सत्त्वे प्रतिष्ठितम् ॥ १ ॥" इत्यादि, व्यञ्जनं-मषतिलकादिकं तयोर्यो गुणः-प्रशस्तत्वं तेनोपपेतं-सङ्गतं यत्तत्तथा 'उत्तमबलवीरिय-
सत्तजुत्तं' उत्तमैर्बलवीर्यसत्त्वैर्युक्तं यत्तत्तथा, तत्र बलं-शारीरः प्राणो वीर्यं-मानसोऽवष्टम्भः सत्त्वं-चित्तविशेष एव, यदाह—"सत्त्व-
मवैक्लव्यकरमध्यवसानकरं च' अथवा उत्तमयोर्बलवीर्ययोर्यत्सत्त्वं-सत्ता तेन युक्तं यत्तत्तथा 'ससोहग्गगुणसमूसियं'ति ससौभाग्यं
गुणसमुच्छ्रितं चेत्यर्थः 'अभिजायमहक्खमं'ति अभिजातं-कुलीनं महती क्षमा यत्र तत्तथा, ततः कर्म्मधारयः, अथवाऽभिजातानां

ष्ठ्ये महत्-पूज्यं क्षमं-समर्थं च यत्तत्तथा, 'निरुवहयउदत्तलट्ठपंचिंदियपडुं'ति निरुपहतानि-अविद्यमानवाताद्युपघातानि-उदात्तानि-उत्तमवर्णादिगुणानि अत एव लष्टानि-मनोहराणि पञ्चापीन्द्रियाणि पटूनि च—स्वविषयग्रहणदक्षाणि यत्र तत्तथा 'विविहवाहिसयसंनिकेयं'ति इह संनिकेतं-स्थानम् 'अट्ठियकट्ठुट्ठियं'ति अस्थिकान्येव काष्ठानि काठिन्यसाधर्म्यात्तेभ्यो यदुत्थितं तत्तथा 'छिराण्हारुजालओणद्धसंपिणद्धं'ति शिरा-नाड्यः 'ण्हारु'त्ति स्नायवस्तासां यज्जालं-समूहस्तेनोपनद्धं संपिनद्धं-अत्यर्थं वेष्टितं यत्तथा 'असुइसंकिलिट्ठं'ति अशुचिना-अमेध्येन सङ्क्लिष्टं-दुष्टं यत्तत्तथा 'अणिट्ठवियसव्वकालसंठप्पयं'ति अनिष्ठापिता-असमापिता सर्वकालं-सदा संस्थाप्यता-तत्कृत्यकरणं यस्य स तथा 'जराकुणिमजज्जरघरं व'जराकुणपश्च-जीर्णताप्रधानशवो जर्जरगृहं च-जीर्णगेहं समाहारद्वन्द्वाज्जराकुणपजर्जरगृहं, तदेवं किम् ? इत्याह—'सडणे'त्यादि ॥ 'विपुले'त्यादि, विपुलकुलाश्च ता बालिकाश्चेति विग्रहः कलाकुशलाश्च ताः सर्वकाललालिताश्चेति कलाकुशलसर्वकाललालिताः ताश्च ताः सुखोचिताश्चेति विग्रहः, मार्दवगुणयुक्तो निपुणो यो विनयोपचारस्तत्र पण्डितविचक्षणा-अत्यन्तविशारदा यास्तास्तथा ततः कर्म्मधारयः, 'मंजुलमियमहुरभणियविहसियविप्पेक्खियगइविलासविट्ठियविसारयाओ' मञ्जुलं-कोमलं शब्दतः मितं-परिमितं मधुरं-अकठोरमर्थतो यद्भणितं तत्तथा तच्च विहसितं च विप्रेक्षितं च गतिश्च विलासश्च-नेत्रविकारो गतिविलासो वा-विलसन्ती गतिः विस्थितं च-विशिष्टा स्थितिरिति द्वन्द्वः एतेषु विशारदा यास्तास्तथा, 'अविकलकुलसीलसालिणीओ' अविकलकुलाः-ऋद्धिपरिपूर्णकुलाः शीलशालिन्यश्च-शीलशोभिन्य इति विग्रहः, 'विसुद्धकुलवंससंताणतंतुवद्धणपगब्भवयभाविणीओ' विशुद्धकुलवंश एव सन्तानतन्तुः-विस्तारितन्तुस्तद्वर्द्धनेन-पुत्रोत्पादनद्वारेण तद्वृद्धौ प्रगल्भं-समर्थं यद्वयो यौवनं तस्य भावः-सत्ता विद्यते यासां तास्तथा 'विसुद्धकुलवंससंताणतंतुवद्ध-

णपगब्भुब्भवपभाविणीओ'त्ति पाठान्तरं तत्र च विशुद्धकुलवंशसन्तानतन्तुवर्द्धना ये प्रगल्भाः–प्रकृष्टगर्भास्तेषां य उद्भवः–सम्भूतिस्तत्र यः प्रभावः–सामर्थ्यं स यासामस्ति तास्तथा 'मणाणुकूलहियइच्छियाओ' मनोऽनुकूलाश्च ता हृदयेनेप्सिताश्चेति कर्म्मधारयः 'अट्ठ तुज्झ गुणवल्लभाओ'त्ति गुणैर्वल्लभा यास्तास्तथा 'विसयविगयवोच्छिन्नकोउहल्ले'त्ति विषयेषु–शब्दादिषु विगतव्यवच्छिन्नम्–अत्यन्तक्षीणं कौतूहलं यस्य स तथा ॥ 'माणुस्सगा कामभोग'त्ति, इह कामभोगग्रहणेन तदाधारभूतानि स्त्रीपुरुषशरीराण्यभिप्रेतानि, 'उच्चारे'त्यादि, उच्चारादिभ्यः समुद्भवो येषां ते तथा 'अमणुन्नदुरूवमुत्तपूयपुरीसपुन्ना' अमनोज्ञाश्च ते दूरूपमूत्रेण पूतिकपुरीषेण च पूर्णाश्चेति विग्रहः, इह च दूरूपं–विरूपं पूतिकं च–कुथितं, 'मयगंधुस्सासअसुभनिस्सासउव्वेयणगा' मृतस्येव गन्धो यस्य स मृतगन्धिः स चासावुच्छ्वासश्च मृतगन्ध्युच्छ्वासस्तेनाशुभनिःश्वासेन चोद्वेगजनका–उद्वेगकारिणो जनस्य ये ते तथा, उच्छ्वासश्च–मुखादिना वायुग्रहणं निःश्वासस्तु–तन्निर्गमः 'बीभच्छ'त्ति जुगुप्सोत्पादकाः 'लहुस्सग' त्ति लघुस्वकाः–लघुस्वभावाः 'कलमलाहिवासदुक्खबहुजणसाहारणा' कलमलस्य–शरीरसत्काशुभद्रव्यविशेषस्याधिवासेन–अवस्थानेन दुःखा–दुःखरूपा ये ते तथा तथा बहुजनानां साधारणा भोग्यत्वेन ये ते तथा, तत , कर्म्मधारयः, 'परिकिलेसकिच्छदुक्खसज्झा' परिक्लिशेन–महामानसायासेन कृच्छ्रदुःखेन च–गाढशरीरायासेन ये साध्यन्ते–वशीक्रियन्ते ये ते तथा 'कडुयफलविवागा' विपाकः पाकोऽपि स्यादतो विशेष्यते–फलरूपो विपाकः फलविपाकः कटुकः फलविपाको येषां ते तथा 'चुडलिव्व'त्ति प्रदीप्ततृणपूलिकेव 'अमुच्चमाणे'त्ति इह प्रथमाबहुवचनलोपो दृश्यः ॥ 'इमे य ते जाया ! अज्जयपज्जयपिउपज्जयागए' इदं च तव पुत्र ! आर्यः–पितामहः प्रार्यकः–पितुः पितामहः पितृप्रार्यकः–पितुः प्रपितामहस्तेभ्यः सकाशादागतं यत्तत्तथा, अथवाऽऽर्यकप्रार्यकपितॄणां यः पर्ययः–पर्यायः परि-

पाटिरित्यर्थः तेनागतं यत्तत्तथा 'विपुलधणकणग' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'रयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइए'त्ति तत्र 'विपुलधणे'ति प्रचुरं गवादि 'कणग'त्ति धान्यं 'रयण'त्ति कर्केतनादीनि 'मणि'त्ति चन्द्रकान्ताद्याः मौक्तिकानि शङ्खाश्च प्रतीताः 'सिलप्पवाल'त्ति विद्रमाणि 'रत्तरयण'त्ति पद्मरागास्तान्यादिर्यस्य तत्तथा 'संतसारसावएज्जे'त्ति 'संत'त्ति विद्यमानं स्वायत्तमित्यर्थः 'सार'त्ति प्रधानं 'सावएज्ज'त्ति स्वापतेयं-द्रव्यं, ततः कर्मधारयः, किम्भूतं तत्? इत्याह'अलाहि'त्ति अलं-पर्याप्तं भवति 'धाव'त्ति यत्परिमाणम् 'आसत्तमाओ कुलवंसाओ'त्ति आसप्तमात् कुलवंश्यात्-कुललक्षणवंशे भवः कुलवंश्यस्तस्मात्, सप्तमं पुरुषं यावदित्यर्थः 'पकामं दाउ'न्ति अत्यर्थं दीनादिभ्यो दातुम्, एवं भोक्तुं-स्वयं भोगेन 'परिभाएउं'ति परिभाजयितुं दायादादीनां, प्रकामदानादिषु यावत् स्वापतेयमलं तावदस्तीति हृदयम् 'अग्गिसाहिए'इत्यादि, अग्न्यादेः साधारणमित्यर्थः 'दाइयसाहिए'त्ति दायादाः-पुत्रादयः, एतदेव द्रव्यस्यातिपारवश्यप्रतिपादनार्थं पर्यायान्तरेणाह—'अग्गिसामन्ने'इत्यादि, 'विसयाणुलोमाहिं'ति विषयाणां-शब्दादीनामनुलोमाः-तेषु प्रवृत्तिजनकत्वेनानुकूला विषयानुलोमास्ताभिः 'आघवणाहि य'त्ति आख्यापनाभिः-सामान्यतो भणनैः 'पन्नवणाहि य'त्ति प्रज्ञापनाभिश्च—विशेषकथनैः 'सन्नवणाहि य'त्ति सञ्ज्ञापनाभिश्च—सम्बोधनाभिः 'विन्नवणाहि य'त्ति विज्ञापनाभिश्च-विज्ञप्तिकाभिः सप्रणयप्रार्थनैः, चकाराः समुच्चयार्थाः, 'आघवित्तए व'त्ति आख्यातुम्, एवमन्यान्यपि पूर्वपदेषु क्रमेणोत्तराणि योजनीयानि, 'विसयपडिकूलाहिं'ति विषयाणां प्रतिकूलाः-तत्परिभोगनिषेधकत्वेन प्रतिलोमा यास्तास्तथा ताभिः 'संजमभउव्वेयणकरीहिं'ति संयमाद्भयं भीतिं उद्वेजनं च-चलनं कुर्वन्तीत्येवंशीला यास्तास्तथा ताभिः। 'सच्चे'त्ति सद्भ्यो हितत्वात् 'अणुत्तरे'त्ति अविद्यमानप्रधानतरम्, अन्यदपि तथाविधं भविष्यतीत्याह—'केवल'त्ति केवलं—अद्वितीयं

'जहावस्सए'त्ति एवं चेदं तत्र सूत्रं–'पडिपुन्ने' अपवर्गप्रापकगुणैर्भृतं 'नेयाउए' नायकं मोक्षगमकमित्यर्थः नैयायिकं वा न्यायानपेतत्वात् 'संसुद्धे' सामस्त्येन शुद्धं 'सल्लगत्तणे' मायादिशल्यकर्त्तनं 'सिद्धिमग्गे' हितार्थप्राप्त्युपायः 'मुत्तिमग्गे' अहितविच्युतेरुपायः 'निज्जाणमग्गे' सिद्धिक्षेत्रगमनोपायः, 'निव्वाणमग्गे' सकलकर्मविरहजसुखोपायः 'अवितहे' कालान्तरेऽप्यनपगततथाविधाभिमतप्रकारम् 'अविसंधि' प्रवाहेणाव्यवच्छिन्नं 'सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे' सकलाशर्मक्षयोपायः 'एत्थं ठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिनिव्वायंति'त्ति 'अहीवेगंतदिट्ठीए' अहेरिव एकोऽन्तो–निश्चयो यस्याः सा दृष्टिः–बुद्धिर्यस्मिन् निर्ग्रन्थप्रवचने चारित्रपालनं प्रति तदेकान्तदृष्टिकम्, अहिपक्षे आमिषग्रहणैकतानतालक्षणा एकान्ता–एकनिश्चया दृष्टिः–दृग् यस्य स एकान्तदृष्टिकः 'खुरो इव एगंतधाराए'त्ति एकान्ता–उत्सर्गलक्षणैकविभागाश्रया धारेव धारा–क्रिया यत्र तत्तथा, 'लोहमये'त्यादि, लोहमया यवा इव चर्वयितव्याः, नैर्ग्रन्थं प्रवचनं दुष्करमिति हृदयं, 'वालुये'त्यादि, वालुकाकवल इव निरास्वादं वैषयिकसुखास्वादनापेक्षया, प्रवचनमिति, 'गंगे'त्यादि, गङ्गा वा–गङ्गेव महानदी प्रतिश्रोतसा गमनं प्रतिश्रोतोगमनं तद्भावस्तत्ता तया, प्रतिश्रोतोगमनेन गङ्गेव दुस्तरं प्रवचनमिति भावः, एवं समुद्रोपमं प्रवचनमपि, 'तिक्खं कमियव्वं'ति यदेतत् प्रवचनं तत्तीक्ष्णं खड्गादि क्रमितव्यं, यथा हि खड्गादि क्रमितुमशक्यमेवमशक्यं प्रवचनमनुपालयितुमितिभावः 'गरुयं लंबेयव्वं'ति 'गुरुकं' महाशिलादिकं 'लम्बयितव्यम्' अवलम्बनीयं रज्ज्वादिनिबद्धं हस्तादिना धरणीयं प्रवचनं, गुरुकलम्बनमिव दुष्करं तदिति भावः, 'असी'त्यादि, असेर्धारा यस्मिन् व्रते आक्रमणीयतया तदसिधाराकं 'व्रतं' नियमः 'चरितव्यम्' आसेवितव्यं यदेतत् प्रवचनानुपालनं तद् बहुदुष्करमित्यर्थः। अथ कस्मादेतस्य दुष्करत्वम्?, अत्रोच्यते 'नो'इत्यादि, आधाकर्मिकमिति, एतद्वा 'अज्झोयरएइ वा' अध्यवपूरक इति वा,

तल्लक्षणं नेदं-स्वार्थं मूलाद्ग्रहणे कृते साध्वाद्यर्थमधिकृतरकणक्षेपणमिति 'कंतारभत्तेइ व'त्ति कान्तारं-अरण्यं तत्र यद्भिक्षुकार्थं संस्क्रियते तत्कान्तारभक्तम्, एवमन्यान्यपि, 'भोत्तए व'त्ति भोक्तुं 'पायए व'त्ति पातुं वा 'नालं' न समर्थः शीताद्यधिसोढुमिति योगः, इह च क्वचित्प्राकृतत्वेन द्वितीयार्थे प्रथमा दृश्या, 'वाल'त्ति व्यालान्—श्वापदभुजगलक्षणान् 'रोगायंके'त्ति इह रोगाः-कुष्ठादयः आतङ्का-आशुघातिनः शूलादयः 'कीवाणं'ति मन्दसंहननानां 'कायराणं'ति चित्तावष्टम्भवर्जितानाम्, अत एव 'कापुरिसाणं'ति, पूर्वोक्तमेवार्थमन्वयव्यतिरेकाभ्यां पुनराह—'दुरणु'इत्यादि, 'दुरनुचरं' दुःखासेव्यं प्रवचनमिति प्रकृतं 'धीरस्स'त्ति साहसिकस्य, तत्रापि 'निश्चितस्य' कर्त्तव्यमेवेदमितिकृतनिश्चयस्य तस्यापि 'व्यवसितस्य' उपायप्रवृत्तस्य, 'एत्थं'ति प्रवचने लोके वा, दुष्करत्वं च ज्ञानोपदेशापेक्षयाऽपि स्यादत आह—'करणतया' करणेन संयमस्य अनुष्ठानेनेत्यर्थः ॥

तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! खत्तियकुंडग्गामं नगरं सब्भितरबाहिरियं आसियसंमज्जिओवलित्तं जहा उववाइए जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया दोच्चंपि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावइत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! जमालिस्स खत्तियकुमारस्स महत्थं महग्घं महरिहं विपुलं निक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव जाव पच्चप्पिणंति, तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहं निसीयावेंति निसीयावेत्ता अट्ठसएणं सोवन्नियाणं कलसाणं एवं जहा रायप्पसेणइज्जे जाव अट्ठसएणं भोमेज्जाणं कलसाणं सव्विड्ढीए जाव रवेणं महया महया निक्खमणाभिसेगेणं अभिसिंचन्ति

निक्खमणाभिसेगेणं अभिसिंचित्ता करयल जाव जएणं विजएणं वद्धावेन्ति, जएणं विजएणं वद्धावेत्ता एवं व-यासी—भण जाया! किं देमो? किं पयच्छामो? किंणा वा ते अट्ठो?, तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी—इच्छामि णं अम्मताओ! कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणिउं कासवगं च सद्दाविउं, तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सिरिघराओ तिन्नि सयसहस्साइं गहाय दोहिं सयसहस्सेहिं कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणेह सयसहस्सेणं कासवगं च सद्दावेइ, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा करयल जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सिरिघराओ तिन्नि सयसहस्साइं तहेव जाव कासवगं सद्दावेंति। तए णं से कासवए जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविए समाणे हट्ठे तुट्ठे ण्हाए कयबलिकम्मे जाव सरीरे जेणेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता करयल० जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पियरं जएणं विजएणं वद्धावेइ जएणं विजएणं वद्धावित्ता एवं वयासी—संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! जं मए करणिज्जं, तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तं कासवगं एवं वया-सी-तुमं देवाणुप्पिया! जमालिस्स खत्तियकुमारस्स परेणं जत्तेणं चउरंगुलवज्जे निक्खमणपयोगे अग्गकेसे पडिकप्पेह, तए णं से कासवे जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे करयल जाव एवं सामी! तहत्ताणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ २ त्ता सुरभिणा गंधोदएणं हत्थपादे पक्खालेइ सुरभिणा २

सुद्धाए अट्ठपडलाए पोत्तीए मुहं बंधइ मुहं बंधित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स परेणं जत्तेणं चउरंगुलवज्जे निक्खमणपयोगे अग्गकेसे कप्पइ। तए णं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडसाडएणं अग्गकेसे पडिच्छइ अग्गकेसे पडिच्छित्ता सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेइ सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेत्ता अग्गेहिं वरेहिं गंधेहिं मल्लेहिं अच्चेति २ सुद्धवत्थेणं बंधेइ सुद्धवत्थेणं बंधित्ता रयणकरंडगंसि पक्खिवति २ हारवारिधारासिंदुवारछिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं सुयवियोगदूसहाइं अंसूइं विणिम्मुयमाणी २ एवं वयासी— एस णं अम्हं जमालिस्स खत्तियकुमारस्स बहूसु तिहीसु य पव्वणीसु य उस्सवेसु य जन्नेसु य छणेसु य अपच्छिमे दरिसणे भविस्सतीतिकट्टु ओसीसगमूले ठवेति, तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मापियरो दोचंपि उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेंति २ दोचंपि जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयापीयएहिं कलसेहिं नाण्हेंति सीयापीयएहिं कलसेहिं नाण्हेत्ता पम्हसुकुमालाए सुरभिए गंधकासाइए गायाइं लूहेंति सुरभिए गंधकासाइए गायाइं लूहेत्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपित्ता नासानिस्सासवायवोज्झं चक्खुहरं वन्नफरिसजुत्तं हयलालापेलवातिरेगं धवलं कणगखचियंतकम्मं महरिहं हंसलक्खणपडसाडगं परिहिंति २ हारं पिणद्धेंति २ अद्धहारं पिणद्धेंति २ एवं जहा सूरियाभस्स अलंकारो तहेव जाव चित्तं रयणसंकडुक्कडं मउडं पिणद्धंति, किं बहुणा?, गंथिमवेढिमपूरिमसंघातिमेणं चउव्विहेणं मल्लेणं कप्परुक्खगं पिव अलंकियविभूसियं करेंति। तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अणेगखंभसयसन्निविट्ठं

लीलट्ठियसालभंजियागं जहा रायप्पसेणइज्जे विमाणवन्नओ जाव मणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं पुरिससहस्स-वाहणीयं सीयं उवट्ठवेह उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे केसालंकारेणं वत्थालंकारेणं मल्लालंकारेणं आभरणालंकारेणं चउव्विहेणं अलंकारेणं अलंकारिए समाणे पडिपुन्नालंकारे सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ सीहासणाओ अब्भुट्ठेत्ता सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणे सीयं दुरूहइ २ सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सन्निसण्णे। तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया ण्हाया कयबलि जाव सरीरा हंसलक्खणं पडसाडगं गहाय सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणी सीयं दुरूहइ सीयं दुरूहित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स दाहिणे पासे भद्दासणवरंसि संनिसन्ना, तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मधाई ण्हाया जाव सरीरा रयहरणं च पडिग्गहं च गहाय सीयं अणुप्पदाहिणी करेमाणी सीयं दुरूहइ सीयं दुरूहित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स वामे पासे भद्दासणवरंसि संनिसन्ना। तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिट्ठओ एगा वरतरुणी सिंगारागारचारुवेसा संगयगय जाव रूवजोव्वणविलासकलिया सुंदरथण० हिमरययकुमुदकुंदेंदुप्पगासं सकोरेंटमल्लदामं धवलं आयवत्तं गहाय सलीलं उवरि धारेमाणी २ चिट्ठति, तए णं तस्स जमालिस्स उभओपासिं दुवे वरतरुणीओ सिंगारागारचारुजावकलियाओ नाणामणिकणगरयणविमलमहरिहतवणिज्जुज्जलविचित्तदंडाओ चिल्लियाओ संखंककुंदेंदुदगरयअमयमहियफेणपुंजसंनिकासाओ धवलाओ चामराओ गहाय सलीलं वीयमाणीओ चिट्ठंति, तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स उत्तरपुरच्छिमेणं एगा

वरतरुणी सिंगारागारजाव कलिया सेतरययामयविमलसलिलपुण्णं मत्तगयमहामुहाकितिसमाणं भिंगारं गहाय चिट्ठइ, तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स दाहिणपुरच्छिमेणं एगा वरतरुणी सिंगारागारजाव कलिया चित्तकणगदंडं तालवेंटं गहाय चिट्ठति, तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ को० २ त्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सरिसयं सरित्तयं सरिव्वयं सरिसलावन्नरूवजोव्वणगुणोववेयं एगाभरणं वसणगहियनिज्जोयं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं सद्दावेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सरिसयं सरित्तयं जाव सद्दावेंति, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठ० ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता एगाभरणवसणगहियनिज्जोया जेणेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तेणेव उवागच्छन्ति ते० २ त्ता करयलजाव वद्धावेत्ता एवं वयासी—संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! जं अम्हेहिं करणिज्जं, तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तं कोडुंबियवरतरुणसहस्संपि एवं वदासी—तुज्झे णं देवाणुप्पिया! ण्हाया कयबलिकम्मा जाव गहियनिज्जोगा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयं परिवहह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स जाव पडिसुणेत्ता ण्हाया जाव गहियनिज्जोगा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयं परिवहंति। तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणीं सीयं दुरूढस्स समाणस्स तप्पढमयाए इमे अट्ठट्ठमंगलगा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तं०—सोत्थिय सिरिवच्छ जाव दप्पणा, तदाणंतरं च णं पुन्नकलसभिंगारं जहा उववाइए जाव

गगगतलमणुलिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, एवं जहा उववाइए तहेव भाणियव्वं जाव आलोयं वा करेमाणा जय २ सद्दं च पउंजमाणा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया। तदाणंतरं च णं बहवे उग्गा भोगा जहा उववाइए जाव महापुरिसवग्गुरपरिक्खित्ता जमालिस्स खत्तियस्स पुरओ य मग्गओ य पासओ य अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया। तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया ण्हाए कयबलिकम्मे जाव विभूसिए हत्थिखंधवरगए सकोरेंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणे २ हयगयरहपवरजोहकलियाए चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे महयाभडचडगर जाव परिक्खित्ते जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिट्ठओ २ अणुगच्छइ। तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरओ महं आसा आसवरा उभओ पासिं णागा णागवरा पिट्ठओ रहा रहसंगेल्ली। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अब्भुग्गयभिंगारे परिग्गहियतालियंटे ऊसवियसेतछत्ते पवीइयसेतचामरवालवीयणीए सव्विड्ढीए जाव णादितरवेणं। तयाणंतरं च णं बहवे लट्ठिग्गाहा कुंतग्गाहा जाव पुत्थयगाहा जाव वीणगाहा, तयाणंतरं च णं अट्ठसयं गयाणं अट्ठसयं तुरयाणं अट्ठसयं रहाणं, तयाणंतरं च णं लउडअसिकोंतहत्थाणं बहूणं पायत्ताणीणं पुरओ संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं बहवे राईसरतलवरजावसत्थवाहप्पभिइओ पुरओ संपट्ठिया जाव णादितरवेणं खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव माहणकुंडग्गामे नयरे जेणेव बहुसालए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए। तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छमाणस्स सिंघाडगतियचउक्कजाव पहेसु बहवे अत्थत्थिया

जहा उववाइए जाव अभिनंदंता य अभित्थुणंता य एवं वयासी—जय जय णंदा ! धम्मेणं जय जय णंदा तवेणं जय जय णंदा ! भद्दं ते अभग्गेहिं णाणदंसणचरित्तमुत्तमेहिं अजियाइं जिणाहि इंदियाइं जियं च पालेहि समणधम्मं जियविग्घोऽवि य वसाहि तं देव ! सिद्धिमज्झे णिहणाहि य रागदोसमल्ले तवेण धितिधणियबद्धकच्छे महाहि अट्ठ कम्मसत्तू झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं अप्पमत्तो हराहि याराहणपडागं च धीर ! तेलोक्करंगमज्झे पावय वितिमिरमणुत्तरं केवलं च णाणं गच्छय मोक्खं परं पदं जिणवरोवदिट्ठेणं सिद्धिमग्गेणं अकुडिलेणं हंता परीसहचमूं अभिभविय गामकंटकोवसग्गाणं धम्मे ते अविग्घमत्थु त्तिकट्टु अभिनंदंति य अभिथुणंति य । तए णं से जमाली खत्तियकुमारे नयणमालासहस्सेहिं पिच्छिज्जमाणे २ एवं जहा उववाइए कूणिओ जाव णिग्गच्छति निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नयरे जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता छत्तादीए तित्थगरातिसए पासइ पासित्ता पुरिससहस्सवाहिणीं सीयं ठवेइ २ पुरिससहस्सवाहिणीओ सीयाओ पच्चोरुहइ, तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो पुरओ काउं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वदासी—एवं खलु भंते ! जमाली खत्तियकुमारे अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते जाव किमंग पुण पासणयाए ? से जहानामए—उप्पलेइ वा पउमेइ वा जाव पउमसहस्सपत्तेइ वा पंके जाए जले संवुड्ढे णोवलिप्पति पंकरएणं णोवलिप्पइ जलरएणं एवामेव जमालीवि खत्तियकुमारे कामेहिं जाए भोगेहिं संवुड्ढे णोवलिप्पइ कामरएणं णोवलिप्पइ भोगरएणं णोवलिप्पइ मित्तणाइ-

नियगसयणसंबंधिपरिजणेणं, एस णं देवाणुप्पिया! संसारभउव्विग्गे भीए जम्मणमरणाणं देवाणुप्पियाणं अं-
तिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए, तं एयन्नं देवाणुप्पियाणं अम्हे भिक्खं दलयामो, पडिच्छंतु णं
देवाणुप्पिया! सीसभिक्खं, तए णं सम० ३ तं जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी–अहासुहं देवाणुप्पिया! मा
पडिबंधं। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणं भगवं
महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ २ सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ,
तते णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडसाडएणं आभरणमल्लालंकारं पडिच्छति पडिच्छित्ता
हारवारिजाव विणिम्मुयमाणा वि० २ जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी—घडियव्वं जाया! जइयव्वं जाया!
परिक्कमियव्वं जाया! अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायेतव्वंतिकट्टु जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मापियरो समणं
भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया। तए णं से ज-
मालिखत्तियए सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेति २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवाग-
च्छित्ता एवं जहा उसभदत्तो तहेव पव्वइओ नवरं पंचहिं पुरिससएहिं सद्धिं तहेव जाव सव्वं सामाइयमाइयाइं
एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ सामाइयमा० अहिज्जेत्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमजावमासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवो-
कम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ ( सूत्रं ३८५ ) ॥

'सब्भिंतरबाहिरियं'ति सहाभ्यन्तरेण बाहिरिकया च–बहिर्भागेन यत्तत्तथा 'आसियसम्मज्जिओवलित्तं'ति आसिक्तमुद-

केन संमार्जितं प्रमार्जनिकादिना उपलिप्तं च गोमयादिना यत्तत्तथा 'जहा उववाइए'त्ति एवं चैतत्तत्र—'सिंघाडगतियचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु आसित्तसित्तसुइयसंमट्ठरत्थंतरावणवीहियं' आसिक्तानि—ईषत्सिक्तानि सिक्तानि च—तदन्यान्यत एव शुचिकानि—पवित्राणि संमृष्टानि कचवरापनयनेन रथ्यान्तराणि—रथ्यामध्यानि आपणवीथयश्च—हट्टमार्गा यत्र तत्तथा 'मंचाइमंचकलियं णाणाविहरागभूसियज्झयपडागाइपडागमंडियं' नानाविधरागैरुच्छ्रितैर्ध्वजैः—चक्रसिंहादिलाञ्छनोपेतैः पताकाभिश्च—तदितराभिरतिपताकाभिश्च—पताकोपरिवर्तिनीभिर्मण्डितं यत्तत्तथा इत्यादि 'महत्थं'ति महाप्रयोजनं 'महग्घं'ति महामूल्यं 'महरिहं'ति महार्हं—महापूज्यं महतां वा योग्यं 'निक्खमणाभिसेयं'ति निष्क्रमणाभिषेकसामग्रीम् 'एवं जहा रायप्पसेणइज्जे'त्ति एवं चैतत्तत्र—'अट्ठसएणं सुवन्नमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं रुप्पमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं मणिमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं सुवन्नरुप्पमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं सुवन्नमणिमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं रुप्पमणिमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं सुवन्नरुप्पमणिमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं 'भोमेज्जाणं'ति मृन्मयानां 'सव्विड्ढीए'त्ति सर्वर्द्ध्या—समस्तच्छत्रादिराजचिह्नरूपया, यावत्करणादिदं दृश्यं—'सव्वजुईए' सर्वद्युत्या—आभरणादिसम्बन्धिन्या सर्वयुक्त्या वा—उचितेष्टवस्तुघटनालक्षणया 'सव्वबलेणं' सर्वसैन्येन 'सव्वसमुदएणं' पौरादिमीलनेन 'सव्वायरेणं' सर्वोचितकृत्यकरणरूपेण 'सव्वविभूईए' सर्वसम्पदा 'सव्वविभूसाए' समस्तशोभया 'सव्वसंभमेणं' प्रमोदकृतौत्सुक्येन 'सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारेणं सव्वतुडियसद्दसंनिनाएणं' सर्वतूर्यशब्दानां मीलने यः सङ्गतो निनादो—महाघोषः स तथा तेन, अल्पेष्वपि ऋद्ध्यादिषु सर्वशब्दप्रवृत्तिर्दृष्टेत्यत आह—'महया इड्ढीए महया जुईए महया बलेणं महया समुदएणं' 'महया वरतुडियजमगसमगप्पवाइएणं' यमकसमकं युगपदित्यर्थः 'संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुरयमुइंगदुंदुहि-

निग्घोसनाइय'त्ति पणवो–भाण्डपटहः भेरी–महती ढका महाकाहला वा झल्लरी–अल्पोच्छ्रया महामुखा चर्म्मावनद्धा खरमुखी–काहला मुरजो–महामर्द्दलः मृदङ्गो–मर्द्दलः दुन्दुभी–ढकाविशेष एव ततः शङ्खादीनां निर्घोषो–महाप्रयत्नोत्पादितः शब्दो नादितं तु–ध्वनिमात्रं एतद्द्वयलक्षणो यो रवः स तथा तेन ॥ 'किं देमो'त्ति किं दद्मो भवदभिमतेभ्यः 'किं पयच्छामो'त्ति भवते एव, अथवा दद्मः सामान्यतः प्रयच्छामः प्रकर्षेणेति विशेषः 'किंणा व'त्ति केन वा 'कुत्तियावणाओ'त्ति कुत्रिकं–स्वर्गमर्त्यपातालक्षणं भूत्रयं तत्सम्भवि वस्त्वपि कुत्रिकं तत्सम्पादको य आपणो–हट्टो देवाधिष्ठितत्वेनासौ कुत्रिकापणस्तस्मात् 'कासवगं'ति नापितं 'सिरिघराओ'त्ति भाण्डागारात् 'अग्गकेसे'त्ति अग्रभूताः केशा अग्रकेशास्तान् 'हंसलक्खणेणं' शुक्लेन हंसचिह्नेन वा 'पडसाडएणं'ति पटरूपः शाटकः पटशाटकः, शाटको हि शटनकारकोऽप्युच्यत इति तद्व्यवच्छेदार्थं पटग्रहणम्, अथवा शाटको वस्त्रमात्रं स च पृथुलः पटोऽभिधीयत इति पटशाटकः, 'अग्गेहिं'ति 'अग्र्यैः' प्रधानैः, एतदेव व्याचष्टे–'वरेहिं'ति 'हारवारिधारसिंदुवारच्छिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं'ति इह 'सिंदुवार'त्ति वृक्षविशेषो निर्गुण्डीति केचित् तत्कुसुमानि सिन्दुवाराणि तानि च शुक्लानीति 'एस णं'ति एतत् अग्रकेशवस्तु अथवैतद्दर्शनमिति योगो णमित्यलङ्कारे 'तिहीसु य'त्ति मदनत्रयोदशादितिथिषु 'पव्वणीसु य'त्ति पर्वणीषु च कार्त्तिक्यादिषु 'उस्सवेसु य'त्ति प्रियसङ्गमादिमहेषु 'जन्नेसु य'त्ति नागादिपूजासु 'छणेसु य'त्ति इन्द्रोत्सवादिलक्षणेषु 'अपच्छिमे'त्ति अकारस्यामङ्गलपरिहारार्थत्वात् पश्चिमं दर्शनं भविष्यति, एतत्केशदर्शनमपनीतकेशावस्थस्य जमालिकुमारस्य यद्दर्शनं सर्वदर्शनपाश्चात्यं तद्भविष्यतीति भावः, अथवा न–पश्चिमं पौनःपुन्येन जमालिकुमारस्य दर्शनमेतद्दर्शने भविष्यतीत्यर्थः 'दोच्चंपि'त्ति द्वितीयं वारं 'उत्तरावक्कमणं' उत्तरस्यां दिश्यपक्रमणं–अवतरणं यस्मात्तद् उत्तरापक्रमणम्–उत्तराभिमुखं पूर्वं तु पूर्वाभिमुखमासीदिति

'सीयापीयएहिं'ति रूप्यमयैः सुवर्णमयैश्चेत्यर्थः 'पम्हलसुकुमालाए'त्ति पक्ष्मवत्या सुकुमालया चेत्यर्थः 'गंधकासाइए'त्ति गन्धप्रधानया कपायरक्तया शाटिकयेत्यर्थः 'नासानीसासे'त्यादि नासानिःश्वासवातवाह्यमतिलघुत्वात् चक्षुर्हरं लोचनानन्ददायकत्वात् चक्षूरोधकं वा घनत्वात् 'वन्नफरिसजुत्तं'ति प्रधानवर्णस्पर्शमित्यर्थः हयलालायाः सकाशात् पेलवं-मृदु अतिरेकेण-अतिशयेन यत्तत्तथा कनकेन खचितं-मण्डितं अन्तयोः-अञ्चलयोः कर्म-वानलक्षणं यत्तत्तथा 'हारं'ति अष्टादशसरिकं 'पिणद्धंति'पिनह्यतः पितराविति शेषः 'अद्धहारं'ति नवसरिकम् 'एवं जहा सूरियाभस्स अलंकारो तहेव'त्ति, स चैवम्-'एगावलिं पिणद्धंति एवं मुत्तावलिं कणगावलिं रयणावलिं अंगयाइं केऊराइं कडगाइं तुडियाइं कडिसुत्तयं दसमुद्दयाणंतय वच्छसुत्तं मुरविं कंठमुरविं पालंबं कुंडलाइं चूडामणिं'ति तत्रैकावली-विचित्रमणिकमयी मुक्तावली-केवलमुक्ताफलमयी कनकावली-सौवर्णमणिकमयी रत्नावली-रत्नमयी अङ्गदं केयूरं च बाह्वाभरणविशेषः, एतयोश्च यद्यपि नामकोशे एकार्थतोक्ता तथाऽपीहाऽऽकारविशेषाद् भेदोऽवगन्तव्यः, कटकं-कलाचिकाभरणविशेषः त्रुटिकं-बाहुरक्षिका दशमुद्रिकानन्तकं-हस्ताङ्गुलीमुद्रिकादशकं वक्षःसूत्रं-हृदयाभरणभूतसुवर्णसङ्कलकं 'वेगच्छासुत्तं'ति पाठान्तरं तत्र वैकक्षिकासूत्रम्-उत्तरासङ्गपरिधानीयं सङ्कलकं-मुरवीमुरजाकारमाभरणं कण्ठमुरवी-तदेव कण्ठासन्नतरावस्थानं प्रालम्बं-झुम्बनकं, वाचनान्तरे त्वयमलङ्कारवर्णकः साक्षाल्लिखित एव दृश्यत इति, 'रयणसंकडुक्कडं'ति रत्नसङ्कटं च तदुत्कटं च-उत्कृष्टं रत्नसङ्कटोत्कटं 'गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमेणं'ति इह ग्रन्थिमं-ग्रन्थननिर्वृत्तं सूत्रग्रथितमालादि वेष्टिमं-वेष्टितनिष्पन्नं पुष्पलम्बूसकादि पूरिमं-येन वंशशलाकामयपञ्जरकादि कूर्चादि वा पूर्यते सङ्घातिमं तु यत्परस्परतो नालसङ्घातनेन सङ्घात्यते 'अलंकियविभूसियं'ति अलङ्कृतश्चासौ कृतालङ्कारोऽत एव विभूषितश्च-सञ्जातविभूषश्चेत्यलङ्कृतविभूषितस्तं, वाचनान्तरे पुनरिदमधिकं

'दद्दरमलयसुगंधिगंधिएहिं गायाइं भुकुंडेंति'त्ति दृश्यते, तत्र च दर्दरमलयाभिधानपर्वतयोः सम्बन्धिनस्तदुद्भूतचन्दनादिद्रव्यजत्वेन ये सुगन्धयो गन्धिका-गन्धावासास्ते तथा. अन्यैस्त्वाहुः-दर्दरः-चीवरावनद्धं कुण्डिकादिभाजनमुखं तेन गालितास्तत्र पक्का वा ये 'मलय'त्ति मलयोद्भवत्वेन मलयजस्य-श्रीखण्डस्य सम्बन्धिनः सुगन्धयो गन्धिका-गन्धास्ते तथा तैर्गात्राणि 'भुकुंडेंति'त्ति उद्धूलयन्ति ॥ 'अणेगखंभसयसन्निविट्ठं'ति अनेकेषु स्तम्भशतेषु सन्निविष्टा या सा तथा, अनेकानि वा स्तम्भशतानि संनिविष्टानि यस्यां सा तथा तां 'लीलट्ठियसालिभंजियागं'ति लीलास्थिताः शालिभञ्जिकाः-पुत्रिकाविशेषा यत्र सा तथा तां, वाचनान्तरे पुनरिदमेवं दृश्यते-'अब्भुग्गयसुकयवइरवेइयतोरणवररइयलीलट्ठियसालिभंजियागं'ति तत्र चाभ्युद्गते-उच्छ्रिते सुकृतवज्रवेदिकायाः सम्बन्धिनि तोरणवरे रचिता लीलास्थिता शालभञ्जिका यस्यां सा तथा तां 'जहा रायप्पसेणइज्जे विमाणवन्नओ'त्ति एवमस्या अपि वाच्य इत्यर्थः, स चायम्—'ईहामियउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं' ईहामृगादिभिर्भक्तिभिः-विच्छित्तिभिश्चित्रा-चित्रवती या सा तथा तां, तत्र ईहामृगा-वृकाः ऋषभाः-वृषभाः व्यालकाः श्वापदा भुजङ्गा वा किन्नरा-देवविशेषाः रुरवो-मृगविशेषाः सरभाः-परासराः वनलता-चम्पकलतादिकाः पद्मलता-मृणालिकाः शेषपदानि प्रतीतानीति 'खंभुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामं'स्तम्भेषु उद्गता-निविष्टा या वज्रवेदिका तया परिगता-परिकरिता अत एवाभिरामा च-रम्या या सा तथा तां 'विज्जाहरजमलजुयलजंतजुत्तंपिव' विद्याधरयोर्यद् यमलं-समश्रेणीकं युगलं-द्वयं तेनेव यन्त्रेण-सञ्चरिष्णुपुरुषप्रतिमाद्वयरूपेण युक्ता या सा तथा ताम्, आर्षत्वाच्चैवंविधः समासः, 'अच्चीसहस्समालिणीयं' अर्चिःसहस्रमालाः-दीप्तिसहस्राणामावल्यः सन्ति यस्यां सा तथा, स्वार्थिककप्रत्यये च अर्चिःसहस्रमालिनीका तां, 'रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं'



प्र०आ०४७७

दीप्यमानां 'भिब्भिसमाणां' अत्यर्थं दीप्यमानां 'चक्खुलोयणलेसं' चक्षुः कर्तृ लोकने-अवलोकने सति लिशतीव-दर्शनीयत्वातिशयात् श्लिष्यतीव यस्यां सा तथा तां 'सुहफासं सस्सिरीयरूवं' सशोभरूपकां 'घंटावलिचलियमहुरमणहरसरं' घण्टावल्याश्चलिते-चलने मधुरो मनोहरश्च स्वरो यस्यां सा तथा तां 'सुहं कंतं दरिसणिज्जं निउणोवियमिसिमिसंतमणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं' निपुणेन-शिल्पिना ओपितं-परिकर्म्मितं 'मिसिमिसंतं' चिकचिकायमानं मणिरत्नानां सम्बन्धि यद् घण्टिकाजालं-किङ्किणीवृन्दं तेन परिक्षिप्ता-परिकरिता या सा तथा तां, वाचनान्तरे पुनरयं वर्णकः साक्षाद् दृश्यत एवेति ॥ 'केसालंकारेणं'ति केशा एवालङ्कारः केशालङ्कारस्तेन, यद्यपि तस्य तदानीं केशाः कल्पिता इति केशालङ्कारो न सम्यक् तथाऽपि कियतामपि सद्भावात्तद्भाव इति, अथवा केशानामलङ्कारः पुष्पादि केशालङ्कारस्तेन, 'वत्थालंकारेणं'ति वस्त्रलक्षणालङ्कारेण 'सिंगारागारचारुवेस'त्ति शृङ्गाररस्य-रसविशेषस्यागारमिव यश्चारुश्च वेषो-नेपथ्यं यस्याः सा तथा, अथवा शृङ्गारप्रधान आकारश्चारुश्च वेषो यस्याः सा तथा 'संगते'त्यादौ यावत्करणादेवं दृश्यं-'संगयगयहसियभणियचिट्ठियविलाससंलावुल्लावनिउणजुत्तोवयारकुसल'त्ति तत्र च सङ्गतेषु गतादिषु निपुणा युक्तेषूपचारेषु कुशला च या सा तथा, इह च विलासो नेत्रविकारो, यदाह-"हावो मुखविकारः स्याद्भावश्चित्तसमुद्भवः। विलासो नेत्रजो ज्ञेयो, विभ्रमो भ्रूसमुद्भवः ॥ १ ॥" इति, तथा संलापो-मिथोभाषा उल्लापस्तु काकुवर्णनं, यदाह-"अनुलापो मुहुर्भाषा, प्रलापोऽनर्थकं वचः। काक्वा वर्णनमुल्लापः, संलापो भाषणं मिथः ॥ १ ॥" इति, 'रूवजोव्वणविलासकलिय'त्ति इह विलासशब्देन स्थानासनगमनादीनां सुश्लिष्टो यो विशेषोऽसावुच्यते, यदाह-"स्थानासनगमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्म्मणां चैव। उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टोऽसौ विलासः स्यात् ॥ १ ॥" 'सुन्दरथण'इत्यनेन 'सुंदरथणजहणवयणकरचरणणयणलावण्णरू-

वजोव्वणगुणोववेय'त्ति सूचितं, तत्र च सुन्दरा ये स्तनादयोऽर्थास्तैरुपेता या सा तथा, लावण्यं चेह स्पृहणीयता रूपं-आकृतिर्यौवनं-तारुण्यं गुणा-मृदुस्वरत्वादयः 'हिमरययकुमुयकुंदेंदुप्पगासं'ति हिमं च रजतं च कुमुदं च कुन्दश्चेन्दुश्चेति द्वन्द्वस्तेषामिव प्रकाशो यस्य तत्तथा 'सकोरेंटमल्लदामं'ति सकोरेण्टकानि-कोरण्टपुष्पगुच्छयुक्तानि माल्यदामानि-पुष्पमाला यत्र तत्तथा 'नाणामणिकणगरयणविमलमहरिहतवणिज्जउज्जलविचित्तदंडाओ'त्ति नानामणिकनकरत्नानां विमलस्य महार्हस्य महार्घस्य वा तपनीयस्य च सत्कावुज्ज्वलौ विचित्रौ दण्डकौ ययोस्ते तथा, अथात्र कनकतपनीययोः को विशेषः?, उच्यते, कनकं पीतं तपनीयं रक्तमिति, 'चिल्लियाओ'त्ति दीप्यमाने लीने इत्येके 'संखंककुंददगरयअमयमहियफेणपुंजसंनिगासाओ'त्ति शङ्खाङ्ककुन्ददकरजसाममृतस्य मथितस्य सतो यः फेनपुञ्जस्तस्य च संनिकाशे—सदृशे ये ते तथा, इह चाङ्को रत्नविशेष इति, 'चामराओ'त्ति यद्यपि चामरशब्दो नपुंसकलिङ्गो रूढस्तथाऽपीह स्त्रीलिङ्गतया निर्दिष्टस्तथैव क्वचिद्रूढत्वादिति ॥ 'मत्तगयमहामुहाकिइसमाणं'ति मत्तगजस्य यन्महामुखं तस्य याऽऽकृतिः-आकारस्तया समानं यत्तत्तथा 'एगाभरणवसणगहियणिज्जोय'त्ति एकः—एकादृश आभरणवसनलक्षणो गृहीतो निर्योगः—परिकरो यैस्ते तथा ॥ 'तप्पढमयाए'त्ति तेषां विवक्षितानां मध्ये प्रथमता तत्प्रथमता तया 'अट्ठट्ठमंगलग'त्ति अष्टावष्टाविति वीप्सायां द्विवचनं मङ्गलकानि-माङ्गल्यवस्तूनि, अन्ये त्वाहुः-अष्टसङ्ख्यानि अष्टमङ्गलकसञ्ज्ञानि वस्तूनि 'जाव दप्पणं'ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं-'नंदियावत्तवद्धमाणगभद्दासणकलसमच्छ'त्ति तत्र वर्द्धमानकं-शरावं पुरुषारूढपुरुष इत्यन्ये स्वस्तिकपञ्चकमित्यन्ये प्रासादविशेषमित्यन्ये 'जहा उववाइए'त्ति, अनेन च यदुपात्तं तद्वाचनान्तरे साक्षादेवास्ति, तच्चेदं—'दिव्वा य छत्तपडागा'दिव्येव दिव्या प्रधाना छत्रसहिता पताका छत्रपताका, तथा 'सचामरादंसरइयआलोयदरिसणिज्जा

वाउद्धुयविजयवेजयंती य ऊसिय'त्ति सह चामराभ्यां या सा सचामरा आदर्शो रचितो यस्यां साऽऽदर्शरचिता आलोकं— दृष्टिगोचरं यावद्दृश्यतेऽत्युच्चत्वेन या साऽऽलोकदर्शनीया, ततः कर्म्मधारयः, सचामरा 'दंसणरइयआलोयदरिसणिज्ज'त्ति पाठान्तरे तु सचामरेति भिन्नपदं, तथा दर्शने-जमालेर्दृष्टिपथे रचिता विहिता दर्शनरचिता दर्शने वा सति रतिदा-सुखप्रदा दर्शनरतिदा सा चासावालोकदर्शनीया चेति कर्म्मधारयः, काऽसौ ? इत्याह-वातोद्धूता विजयसूचिका वैजयन्ती-पार्श्वतो लघुपताकिकाद्वययुक्ता पताकाविशेषा वातोद्धूतविजयवैजयन्ती 'उच्छ्रिता' उच्चा, कथमिव ?-'गगणतलमणुलिहंती'ति गगनतलं-आकाशतलमनुलिखन्तीवानुलिखन्ती अत्युच्चतयेति 'जहा उववाइए'त्ति अनेन यत्सूचितं तदिदं-'तयाणंतरं च णं वेरुलियभिसंतविमलदंडं' 'भिसंत'त्ति दीप्यमानं 'पलंबकोरंटमल्लदामोवसोहियं चंदमंडलनिभं समूसियं विमलमायवत्तं पवरं सीहासणं च मणिरयणपायपीढं' 'सपाउयाजुगसमाउत्तं' स्वकीयपादुकायुगसमायुक्तं 'बहुकिंकरकम्मगरपुरिसपायत्तपरिक्खित्तं' बहवो ये किङ्कराः-प्रतिकर्म्म प्रभोः पृच्छाकारिणः कर्म्मकराश्च तदन्यथाविधास्ते च ते पुरुषाश्चेति समासः पादातं च-पत्तिसमूहः बहुकिङ्करादिभिः परिक्षिप्तं यत्तत्तथा 'पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं बहवे लट्ठिग्गाहा कुंतग्गाहा चामरग्गाहा पासग्गाहा चावग्गाहा पोत्थयग्गाहा फलगग्गाहा पीढयग्गाहा वीणग्गाहा कूवयग्गाहा' कुतपः-तैलादिभाजनविशेषः 'हडप्पगाहा' हडप्पो-द्रम्मादिभाजनं ताम्बूलार्थं पूगफलादिभाजनं वा 'पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तयाणंतरं च णं बहवे दंडिणो मुंडिणो सिहंडिणो-शिखाधारिणः जडिणो-जटाधराः पिच्छिणो-मयूरादिपिच्छवाहिनः हासकरा ये हसन्ति डमरकरा-विड्वरकारिणः दवकराः-परिहासकारिणः चाडुकराः-प्रियवादिनः कंदप्पिया-कामप्रधानकेलिकारिणः कुक्कुइया-भाण्डाः भाण्डप्राया वा 'वायंता गायंता य नच्चंता य हासंता य भासंता य सासिंता य शिक्षयन्तः

'साविंता य' इदं चेदं भविष्यतीत्येवंभूतवचांसि श्रावयन्तः 'रक्खंता य' अन्यायं रक्षन्तः 'आलोकं च करेमाणे'त्यादि तु लिखितमेवास्ति इति, एतच्च वाचनान्तरे प्रायः साक्षादृश्यत एव, तथेदमपरं तत्रैवाधिकं–'तयाणंतरं च णं जच्चाणं वरमल्लिहाणाणं चंचुच्चियललियपुलयविक्कमविलासियगईणं हरिमेलामउलमल्लियच्छाणं थासगअमिलाणचमरगंडपरिमंडियकडीणं अट्ठसयं वरतुरगाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं ईसिं दंताणं ईसिं मत्ताणं ईसिं उच्छंगउन्नयविसालधवलदंताणं कंचणकोसीपविट्ठदंतोवसोहियाणं अट्ठसयं गयकलहाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं सच्छत्ताणं सज्झयाणं सघंटाणं सपडागाणं सतोरणवराणं सखिंखिणीहेमजालपेरंतपरिक्खित्ताणं सनन्दिघोसाणं हेमवयचित्ततिणिसकणगनिज्जुत्तदारुगाणं सुसंविद्धचक्कमंडलधुराणं कालायससुकयनेमिजंतकम्माणं आइन्नवरतुरगसुसंपउत्ताणं कुसलनरच्छेयसारहिसुसंपग्गहियाणं सरसयबत्तीसतोणपरिमंडियाणं सकंकडवडेंसगाणं सचावसरपहरणावरणभरियजुद्धसज्जाणं अट्ठसयं रहाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं असिसत्तिकोंततोमरसूललउडभिंडिमालधणुबाणसज्जं पायत्ताणीयं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं बहवे राईसरतलवरकोडुंबियमाडंबियइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहपभिइओ अप्पेगइया हयगया अप्पेगइया गयगया अप्पेगइया रहगया पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिय'त्ति, तत्र च 'वरमल्लिहाणाणं'ति वरं माल्याधानं–पुष्पबन्धनस्थानं शिरःकेशकलापो येषां ते वरमाल्याधानास्तेषाम्, इकारः प्राकृतप्रभवो 'वालिहाण'मित्यादाविवेति, अथवा वरमल्लिकावद् शुक्लत्वेन प्रवरविचकिलकुसुमवद् घ्राणं–नासिका येषां ते तथा तेषां, क्वचित् 'तरमल्लिहायणाणं'ति दृश्यते तत्र च तरो–वेगो बलं, तथा 'मल मल्ल धारणे' ततश्च तरोमल्ली–तरोधारको वेगादिधारको हायनः–संवत्सरो वर्त्तते येषां ते तरोमल्लिहायनाः–यौवनवन्त इत्यर्थः अतस्तेषां वरतुरगाणामितियोगः 'वरमल्लिभासणाणं'ति क्वचिद्दृश्यते, तत्र तु प्रधानमा-

ल्यवतामत एव दीप्तिमतां चेत्यर्थः 'चंचुच्चियललियपुलियविक्कमविलासियगईणं'ति 'चंचुच्चियं'ति प्राकृतत्वेन चञ्चुरितं-कुटिलगमनम्, अथवा चञ्चुः-शुकचञ्चुस्तद्वद्वक्रतया उच्चितम्-उच्चताकरणं पदस्योत्पाटनं वा पादस्येवेति चञ्चुच्चितं तच्च ललितं क्रीडितं पुलितं च-गतिविशेषः प्रसिद्ध एव विक्रमश्च-विशिष्टं क्रमणं क्षेत्रलङ्घनमिति द्वंद्वस्तदेतत्प्रधाना विलासिता-विशेषेणोल्लासिता गतिर्यैस्ते तथा तेषां, क्वचिदिदं विशेषणमेवं दृश्यते-'चंचुच्चियललियपुलियचलचवलचंचलगईणं'ति तत्र च चञ्चुरितललितपुलितरूपा चलानां-अस्थिराणां सतां चञ्चलेभ्यः सकाशाच्चञ्चला-अतीवचटुला गतिर्येषां तें तथा तेषां 'हरिमेलमउलमल्लियच्छाणं'ति हरिमेलको-वनस्पतिविशेषस्तस्य मुकुलं-कुड्मलं मल्लिका च-विचकिलस्तद्वदक्षिणी येषां, शुक्लाक्षाणामित्यर्थः, 'थासगअमिलाणचामरगंडपरिमंडियकडीणं'ति स्थासका-दर्पणाकारा अश्वालङ्कारविशेषास्तैरम्लानचामरैर्गण्डैश्च-अमलिनचामरदण्डैः परिमण्डिता कटिर्येषां ते तथा तेषां, क्वचित्पुनरेवमिदं विशेषणमेवं दृश्यते-'मुहभंडगओचूलगथासगमिलाणचामरगण्डपरिमंडियकडीणं'ति तत्र तु मुखभाण्डकं-मुखाभरणम् अवचूलाश्च-प्रलम्बमानपुच्छाः स्थासकाः-प्रतीताः 'मिलाण'त्ति पर्याणानि च येषां सन्ति ते तथा, मत्वर्थीयलोपदर्शनात्, चमरीगण्डपरिमण्डितकटय इति पूर्ववत्, ततश्च कर्म्मधारयोऽतस्तेषां, क्वचित्पुनरेवमिदं दृश्यते-'थासगअहिलाणचामरगंडपरिमंडियकडीणं'ति तत्र तु अहिलाणं-मुखसंयमनं, ततश्च 'थासगअहिलाण' इत्यत्र मत्वर्थीयलोपेनोत्तरपदेन सह कर्म्मधारयः कार्यः, तथा 'ईसिं दंताणं'ति 'ईषद्दान्तानां' मनाग्ग्राहितशिक्षाणां गजकलभानामिति योगः 'ईसिं उच्छंगउन्नयविसालधवलदंताणं'ति उत्संग इव उत्सङ्ग-इह पृष्ठदेशः ईषदुत्सङ्गे उन्नता विशालाश्च ये यौवनारम्भवर्त्तित्वात्ते तथा ते च ते धवलदन्ताश्चेति समासोऽतस्तेषां 'कंचणकोसीपविट्ठदंतोवसोहियाणं'ति इह काञ्चनकोशी-सुवर्णमयी खोला, रथवर्णके तु 'मज्झयाणं सपडागाणं'

इत्यत्र गरुडादिरूपयुक्तो ध्वजः तदितरा तु पताका 'सखिंखिणीहेमजालपेरंतपरिक्खित्ताणं' सकिङ्किणीकं-क्षुद्रघण्टिकोपेतं यद् हेमजालं-सुवर्णमयस्तदाभरणविशेषस्तेन पर्यन्तेषु परिक्षिप्ता ये ते तथा तेषां, 'सनंदिघोसाणं'ति इह नन्दी-द्वादशतूर्यसमुदायः, तानि चेमानि-"भंभा १ मउंद २ मद्दल ३ कडंब ४ झल्लरि ५ हुडुक्क ६ कंसाला ७। काहल ८ तलिमा ९ वंसो १० संखो ११ पणवो १२ य बारसमो ॥१॥" इति, 'हेमवयचित्ततिणिसकणगनिजुत्तदारुगाणं'ति हैमवतानि-हिमवद्गिरिसम्भवानि चित्राणि-विविधानि तैनिशानि-तिनिशाभिधानतरुसम्बन्धीनि कनकनियुक्तानि-सुवर्णखचितानि दारुकाणि-काष्ठानि येषु ते तथा तेषां, 'सुसंविद्धचक्कमंडलधाराणं'ति सुष्ठु संविद्धानि चक्राणि मण्डलाश्च-वृत्ता धारा येषां ते तथा तेषां 'सुसिलिट्ठचित्तमंडलधुराणं'ति क्वचिद् दृश्यते तत्र सुष्ठु संश्लिष्टाः चित्रवत्कुर्वत्यो मण्डलाश्च-वृत्ता धुरो येषां ते तथा तेषां 'कालायससुकयनेमिजंतकम्माणं'ति कालायसेन-लोहविशेषेण सुष्ठु कृतं नेमेः-चक्रमण्डनधाराया यन्त्रकर्म-बन्धनक्रिया येषां ते तथा तेषाम् 'आइन्नवरतुरगसुसंपउत्ताणं'-ति आकीर्णैः-जात्यैर्वरतुरगैः सुष्ठु संप्रयुक्ता ये ते तथा तेषां 'कुसलनरच्छेयसारहिसुसंपग्गहियाणं'ति कुशलनरैः-विज्ञपुरुषैश्छेकसारथिभिश्च-दक्षप्राजितृभिः सुष्ठु संप्रगृहीता ये ते तथा तेषां 'सरसयबत्तीसतोणपरिमंडियाणं'ति शरशतप्रधाना ये द्वात्रिंशत्तोणा-भस्त्रकास्तैः परिमण्डिता ये ते तथा तेषां 'सकंकडवडेंसगाणं'ति सह कङ्कटैः-कवचैरवतंसकैश्च-शेखरकैः शिरस्त्राणैर्वा ये ते तथा तेषां 'सचावसरपहरणावरणभरियजुद्धसज्जाणं'ति सह चापैः शरैश्च यानि प्रहरणानि-कुन्तादीनि आवरणानि च-स्फुरकादीनि तेषां भरिता युद्धसज्जाश्च-युद्धप्रगुणा ये ते तथा तेषां, शेषं तु प्रतीतार्थमेवेति। अथाधिकृतवाचनाऽनुश्रियते-'तयाणंतरं च णं बहवे उग्गा'इत्यादि, तत्र 'उग्राः' आदिदेवेनारक्षकत्वे नियुक्तास्तद्वंश्याश्च भोगास्तेनैव गुरुत्वेन व्यवहृतास्तद्वंश्याश्च 'जहा

उववाइए'त्ति करणादिदं दृश्यं—'राइन्ना खत्तिया इक्खागा नाया कोरव्वा'इत्यादि, तत्र 'राजन्याः' आदिदेवेनैव वयस्यतया व्यवहृतास्तद्वंश्याश्च क्षत्रियाश्च प्रतीताः 'इक्ष्वाकवः' नाभेयवंशजाः 'ज्ञाता' इक्ष्वाकुवंशविशेषभूताः 'कोरव्व'त्ति कुरवः—कुरुवंशजाः, अथ कियदन्तमिदं सूत्रमिहाध्येयम्? इत्याह—'जाव महापुरिसवग्गुरापरिक्खित्ते'त्ति वागुरा—मृगबन्धनं वागुरेव वागुरा सर्वतः परिवारणसाधर्म्यात् पुरुषाश्च ते वागुरा च पुरुषवागुरा महती चासौ पुरुषवागुरा च महापुरुषवागुरा तया परिक्षिप्ता ये ते तथा 'महंआस'त्ति महाश्वाः, किम्भूताः? इत्याह—'आसवरा' अश्वानां मध्ये वराः 'आसवार'त्ति पाठान्तरं तत्र 'अश्ववाराः' अश्वारूढपुरुषाः 'उभओ पासिं'ति उभयोः पार्श्वयोः 'नाग'त्ति नागा—हस्तिनः नागवरा—हस्तिनां प्रधानाः 'रहसंगेल्लि'त्ति रथसमुदायः 'अब्भुग्गयभिंगारे'त्ति अभ्युद्गतः—अभिमुखमुत्पाटितो भृङ्गारो यस्य स तथा 'पग्गहियतालियंटे' प्रगृहीतं तालवृन्तं यं प्रति स तथा 'ऊसवियसेयच्छत्ते' उच्छ्रितश्वेतच्छत्रः 'पवीइयसेयचामरवालवीयणीए' प्रवीजिता श्वेतचामरवालाना सत्का व्यंजनिका यं अथवा प्रवीजिते श्वेतचामरे वालव्यजनिके च यं स तथा, 'जहा उववाइए'त्ति करणादिदं दृश्यं—'कामत्थिया भोगत्थिया' कामौ—शुभशब्दरूपे भोगाः—शुभगन्धादयः 'लाभत्थिया' धनादिलाभार्थिनः 'इड्डिसिय'त्ति रूढिगम्याः 'किव्विसिय'त्ति किल्बिषिका भाण्डादय इत्यर्थः क्वचित् किट्टिसिकस्थाने 'किब्बिसिय'त्ति पठ्यते 'कारोडिया' कापालिकाः 'कारवाहिया' कारं—राजदेयं द्रव्यं वहन्तीत्येवंशीलाः कारवाहिनस्त एव कारवाहिकाः करबाधिता वा 'संखिया' चन्दनगर्भशङ्खहस्ता माङ्गल्यकारिणः शङ्खवादका वा 'चक्किया' चाक्रिकाः—चक्रप्रहरणाः कुम्भकारादयो वा 'नंगलिया' गलावलम्बितसुवर्णादिमयलाङ्गलप्रतिकृतिधारिणो भट्टविशेषाः कर्षका वा 'मुहमंगलिया' मुखे मङ्गलं येषामस्ति ते मुखमङ्गलिकाः—चाटुकारिणः 'वद्धमाणा' स्कन्धारोपितपुरुषाः

'पूसमाणवा' मागधाः 'इज्जिसिया पिंडिसिया घंटिय'त्ति क्वचिद् दृश्यते,तत्र च इज्यां—पूजामिच्छन्त्येषयन्ति वा ये ते इज्यैषास्त एव स्वार्थिकेकप्रत्ययविधानाद् इज्यैषिकाः, एवं पिण्डैषिका अपि, नवरं पिण्डो-भोजनं, घाण्टिकास्तु ये घण्टया चरन्ति तां वा वादयन्तीति, 'ताहिं'ति ताभिर्विवक्षिताभिरित्यर्थः, विवक्षितत्वमेवाह—'इट्ठाहिं' इष्यन्ते स्मेतीष्टास्ताभिः, प्रयोजनवशादिष्टमपि किञ्चित् स्वरूपतः कान्तं स्यादकान्तं चेत्यत आह—'कंताहिं' कमनीयशब्दाभिरित्यर्थः 'पियाहिं' प्रियार्थाभिः 'मणुन्नाहिं' मनसा ज्ञायन्ते सुन्दरतया यास्ता मनोज्ञा भावतः सुन्दरा इत्यर्थः ताभिः 'मणामाहिं' मनसाऽगम्यन्ते—गम्यन्ते पुनः पुनर्याः सुन्दरत्वातिशयात्ता मनोऽमास्ताभिः 'ओरालाहिं' उदाराभिः शब्दतोऽर्थतश्च 'कल्लाणाहिं' कल्याणप्राप्तिसूचिकाभिः 'सिवाहिं' उपद्रवरहिताभिः शब्दार्थदूषणरहिताभिरित्यर्थः 'धन्नाहिं' धनलम्भिकाभिः 'मंगल्लाहिं' मङ्गले—अनर्थप्रतिघाते साध्वीभिः 'सस्सिरीयाहिं' शोभायुक्ताभिः 'हिययगमणिज्जाहिं' गम्भीरार्थतः सुबोधाभिरित्यर्थः 'हिययपल्हायणिज्जाहिं' हृदयगतकोपशोकादिग्रन्थिविलयनकरीभिरित्यर्थः 'मियमहुरगंभीरगाहियाहिं' मिताः—परिमिताक्षरा मधुराः—कोमलशब्दाः गम्भीरा—महाध्वनयो दुरवधार्यमप्यर्थं श्रोतॄन् ग्राहयन्ति यास्ता ग्राहिकास्ततः पदचतुष्टयस्य कर्म्मधारयोऽतस्ताभिः 'मियमहुरगंभीरसस्सिरीयाहिं'ति क्वचिद् दृश्यते, तत्र च मिताः अक्षरतो मधुराः शब्दतो गम्भीरा अर्थतो ध्वनितश्च स्वश्रीः—आत्मसम्पद् यासां तास्तथा ताभिः 'अट्ठसइयाहिं' अर्थशतानि यासु सन्ति ता अर्थशतिकास्ताभिः, अथवा सइ—बहुफलत्वं अर्थतः 'सइयाओ अट्ठसइयाओ ताहिं अपुणरुत्ताहिं वग्गूहिं' वाग्भिः—तीभिःएकार्थिकानि वा प्राय इष्टादीनि वाग्विशेषणानीति 'अणवरयं' सन्ततम् 'अभिनंदंता ये'त्यादि तु लिखितमेवास्ते, तत्र चाभिनन्दयन्तो—जय जीवेत्यादि भणन्तोऽभिवृद्धिमाचक्षाणाः 'जय जये'त्याशीर्वचनं भक्तिसम्भ्रमे च द्विर्वचनं

'नंदा धम्मेणं'ति 'नन्द' वर्द्धस्व धर्मेण एवं तपसाऽपि, अथवा जय जय विपक्षं, केन ?-धर्मेण हे नन्द ! इत्येवमक्षरघटनेति 'जय जय २ नंदा ! भद्दं ते' जय त्वं हे जगन्नन्द-जगन्नन्दिकर ! भद्रं ते भवतादिति गम्यं 'जियविग्घोऽविय'त्ति जितविघ्नश्च 'वसाहि तं देव ! सिद्धिमज्झे'त्ति वस त्वं हे देव ! सिद्धिमध्ये देवसिद्धिमध्ये वा 'निहणाहि ये'त्यादि निर्घातय च रागद्वेषमल्लौ तपसा, कथम्भूतः सन् ? इत्याह—धृतिरेव धनिकं-अत्यर्थं बद्धा कक्षा येन स तथा, मल्लो हि मल्लान्तरजयसमर्थो भवति गाढबद्धकक्षः सन्निति कृत्वोक्तं 'धिइधणिये'त्यादि, तथा 'अप्पमत्तो'इत्यादि, 'हराहि'त्ति गृहाण आराधना-ज्ञानादिसम्यक्पालना सैव पताका जयप्रापनटग्राह्या आराधनापताका तां त्रैलोक्यमेव रङ्गमध्यं-मल्लयुद्धद्रष्टृमहाजनमध्यं तत्र, 'हंता परीसहचमूं'ति हत्वा परीषहसैन्यं, अथवा 'हन्ता' घातकः परीषहचम्वा इति विभक्तिपरिणामात्, शीलार्थकतृन्नन्तत्वाद्वा हन्ता परीषहचमूमिति 'अभिभविय'त्ति अभिभूय-जित्वा 'गामकंटकोवसग्गाणं'ति इन्द्रियग्रामप्रतिकूलोपसर्गानित्यर्थः णं वाक्यालङ्कारे अथवा 'अभिभवित्ता' जेता ग्रामकण्टकोपसर्गाणामिति, किं बहुना ?-'धम्मे ते' इत्यादि ॥ 'नयणमालासहस्सेहिं'ति नयनमालाः-श्रेणीभूतजननेत्रपङ्क्तयः 'एवं जहा उववाइए'त्ति अनेन यत्सूचितं तदिदं-'वयणमालासहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे २ हिययमालासहस्सेहिं अभिनंदिज्जमाणे २' जनमनःसमूहैः समृद्धिमुपनीयमानो,जय जीव नन्देत्यादिपर्यालोचनादिति भावः 'मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे २' एतस्य पादमूले वत्स्याम इत्यादिभिर्जनविकल्पैर्विशेषेण स्पृश्यमान इत्यर्थः 'कंतिरूवसोहग्गजोव्वणगुणेहिं पत्थिज्जमाणे २' कान्त्यादिभिर्गुणैर्हेतुभूतैः प्रार्थ्यमानो भर्तृतया स्वामितया वा जनैरिति 'अंगुलिमालासहस्सेहिं दाइज्जमाणे २' 'दाहिणहत्थेणं बहूणं नरनारिसहस्साणं अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छेमाणे २ भवणभित्ती(पन्ति)सहस्साइं 'समच्छिमाणे २' समतिक्रामन्नित्यर्थः 'तंतीतलतालगी-

यवाइयरवेणं' तन्त्री-वीणा तलाः-हस्ताः तालाः-कांसिकाः तलताला वा-हस्ततालाः गीतवादिते प्रतीते एषां यो रवः स तथा तेन 'महुरेणं मणहरेणं' 'जय २ सद्दुग्घोसमीसएणं' जयेतिशब्दस्य यद् उद्घोषणं तेन मिश्रो यः स तथा तेन तथा 'मंजुमंजुणा घोसेणं' अतिकोमलेन ध्वनिना स्तावकलोकसम्बन्धिना नूपुरादिभूषणसम्बन्धिना वा 'अप्पडिवुज्झमाणे'त्ति अप्रतिबुद्ध्यमानः— शब्दान्तराण्यनवधारयन् अप्रत्युह्यमानो वा-अनपह्रियमाणमानसो वैराग्यगतमानसत्वादिति 'कंदरगिरिविवरकुहरगिरिवरपासादुद्धघणभवणदेवकुलसिंघाडगतिगचउक्कचच्चरआरामुज्जाणकाणणसभप्पवप्पदेसदेसभागे'त्ति कन्दराणि-भूमिविवराणि गिरीणां विवरकुहराणि-गुहाः पर्वतान्तराणि वा गिरिवराः-प्रधानपर्वता प्रासादाः-सप्तभूमिकादयः ऊर्द्ध्वघनभवनानि-उच्चाविरलगेहानि देवकुलानि, प्रतीतानि शृङ्गाटकत्रिकचतुष्कचत्वराणि प्राग्वत् आरामाः-पुष्पजातिप्रधाना वनखण्डाः उद्यानानि-पुष्पादिमद्वृक्षयुक्तानि काननानि-नगराद् दूरवर्त्तीनि सभा-आस्थायिकाः प्रपा-जलदानस्थानानि एतेषां ये प्रदेशदेशरूपा भागास्ते तथा तान्, तत्र प्रदेशा लघुतरा भागाः देशास्तु महत्तराः, अयं पुनर्दण्डकः क्वचिदन्यथा दृश्यते— 'कंदरदरिकुहरविवरगिरिपायारट्टालचरियदारगोउरपासायदुवारभवणदेवकुलआरामुज्जाणकाणणसभपएस'त्ति प्रतीतार्थश्चायं, 'पडिसुयासयसहस्ससंकुले करेमाणे'त्ति प्रतिश्रुच्छतसहस्रसङ्कुलान् प्रतिशब्दलक्षसङ्कुलानित्यर्थः कुर्वन् २ निर्गच्छतीति सम्बन्धः 'हयहेसियहत्थिगुलुगुलाइयरहघणघणाइयसद्दमीसिएणं महया कलकलरवेण य जणस्स सुमहुरेणं पूरेंतोऽबरं समंता सुयंधवरकुसुमचुन्नउविद्धवासरेणुमइलं णभं करेंते' सुगन्धीनां-वरकुसुमानां चूर्णानां च 'उविद्धः' ऊर्द्ध्वं गतो यो वासरेणुः-वासकं रजस्तेन मलिनं यत्तत्तथा 'कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवनिवहेण जीवलोगमिव वासयंते' कालागुरुः-गन्धद्रव्यविशेषः प्रवरकुन्दुरुक्कं-वरचीडा तुरुक्कं-सिल्हकं धूपः-तदन्यः एतल्लक्षणो वा एषामेतस्य वा यो निवहः

स तथा तेन जीवलोकं वासयन्निवेति 'समंतओ खुभियचक्कवालं' क्षुभितानि चक्रवालानि-जनमण्डलानि यत्र गमने तत्तथा तद्यथा भवत्येवं निर्गच्छतीति सम्बन्धः 'पउरजणबालवुड्ढपमुइयतुरियपहावियविउलाउलबोलबहुलं नभं करेंते' पौरजनाश्च अथवा प्रचुरजनाश्च बाला वृद्धाश्च ये प्रमुदिताः त्वरितप्रधाविताश्च-शीघ्रं गच्छन्तस्तेषां व्याकुलाकुलानां-अतिव्याकुला तां यो बोलः स बहुलो यत्र तत्तथा तदेवम्भूतं नभः कुर्वन्निति 'खत्तियकुंडग्गामस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं'ति शेषं तु लिखितमेवास्त इति॥ 'पउमेइ व'त्ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं-'कुमुदेइ वा नलिणेइ वा सुभगेइ वा सोगंधिएइवा'इत्यादि, एषां च भेदो रूढिगम्यः, 'कामेहिं जाए'त्ति कामेषु-शब्दादिरूपेषु जातः 'भोगेहिं संवुड्ढे'त्ति भोगा-गन्धरसस्पर्शास्तेषु मध्ये संवृद्धो-वृद्धिमुपगतः 'नोवलिप्पइ कामरएण'त्ति कामलक्षणं रजः कामरजस्तेन कामरजसा कामरतेन वा-कामानुरागेण 'मित्तनाई'इत्यादि, मित्राणि प्रतीतानि ज्ञातयः-स्वजातीयाः निजका-मातुलादयः स्वजनाः-पितृपितृव्यादयः सम्बन्धिनः-श्वशुरादयः परिजनो-दासादिः, इह समाहारद्वन्द्वस्ततस्तेन नोपलिप्यते-स्नेहतः सम्बद्धो न भवतीत्यर्थः 'हारवारि' इह यावत्करणादिदं दृश्यं-'धारासिंदुवारच्छिन्नमुत्तावलिपयासाइं अंसूणि'त्ति ॥ 'जइयव्वं'ति प्राप्तेषु संयमयोगेषु प्रयत्नः कार्यः 'जाया!' हे पुत्र! 'घडियव्वं'ति अप्राप्तानां संयमयोगानां प्राप्तये घटना कार्या 'परिक्कमियव्वं'ति पराक्रमः कार्यः, पुरुषत्वाभिमानः सिद्धफलः कर्त्तव्य इति भावः, किमुक्तं भवति ?-'अस्सिं च'त्यादि, अस्मिंश्चार्थे-प्रव्रज्यानुपालनलक्षणे न प्रमादयितव्यमिति, 'एवं जहा उसभदत्तो' इत्यनेन यत्सूचितं तदिदं-'तेणामेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं पकरेइ २ वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-आलित्ते णं भंते! लोए' इत्यादि, व्याख्यातं चेदं प्रागिति ।

तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयाइं जेणेव समणं भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छइत्ता समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता २ एवं वयासी-इच्छामि णं भंते ! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं बहिया जणवयविहारं विहरित्तए, तए णं से समणे भगवं महावीरे जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं णो आढाइ णो परिजाणाइ तुसिणीए संचिट्ठइ। तए णं से जमाली अणगारे समणं भगवं महावीरं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वयासी-इच्छामि णं भंते ! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं जाव विहरित्तए, तए णं समणे भगवं महावीरे जमालिस्स अणगारस्स दोच्चंपि तच्चंपि एयमट्ठं णो आढाइ जाव तुसिणीए संचिट्ठइ। तए णं से जमाली अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ बहुसालाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं बहिया जणवयविहारं विहरइ, तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थीनामं णयरी होत्था वन्नओ, कोट्ठए चेइए वन्नओ, जाव वणसंडस्स, तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नाम नयरी होत्था वन्नओ पुन्नभद्दे चेइए वन्नओ, जाव पुढविसिलावट्टओ। तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयाइ पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव सावत्थीनयरी जेणेव कोट्ठए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हति अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयावि पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव सुहंसुहेणं विहरमाणे जेणेव चंपानगरी

जेणेव पुन्नभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हति अहा० २ संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ तए णं तस्स जमालिस्स अणगारस्स तेहिं अरसेहि य विरसेहि य अंतेहि य पंतेहि य लूहेहि य तुच्छेहि य कालाइक्कंतेहि य पमाणाइक्कंतेहि य सीतएहि य पाणभोयणेहिं अन्नया कयावि सरीरगंसि विउले रोगातंके पाउब्भूए उज्जले विउले पगाढे कक्कसे कडुए चंडे दुक्खे दुग्गे दुरहियासे पित्तज्जरपरिगतसरीरे दाहवक्कंतिए यावि विहरइ। तए णं से जमाली अणगारे वेयणाए अभिभूए समाणे समणे णिग्गंथे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–तुज्झे णं देवाणुप्पिया! मम सेज्जासंथारगं संथरेह, तए णं ते समणा णिग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति पडिसुणेत्ता जमालिस्स अणगारस्स सेज्जासंथारगं संथरेंति, तए णं से जमाली अणगारे बलियतरं वेदणाए अभिभूए समाणे दोच्चंपि समणे निग्गंथे सद्दावेइ २ त्ता दोच्चंपि एवं वयासी–ममन्नं देवाणुप्पिया! सेज्जासंथारए किं कडे कज्जइ?, एवं वुत्ते समाणे समणा निग्गंथा बिंति–भो सामी! कीरइ, जए णं ते समणा निग्गंथा जमालिं अणगारं एवं वयासी–णो खलु देवाणुप्पियाणं सेज्जासंथारए कडे कज्जति तए णं तस्स जमालिस्स अणगारस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–जन्नं समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ जाव एवं परूवेइ–एवं खलु चलमाणे चलिए उदीरिज्जमाणे उदीरिए जाव निज्जरिज्जमाणे णिज्जिन्ने तं णं मिच्छा, इमं च णं पच्चक्खमेव दीसइ सेज्जासंथारए कज्जमाणे अकडे संथरिज्जमाणे असंथरिए, जम्हा णं सेज्जासंथारए कज्जमाणे अकडे संथरिज्जमाणे असंथरिए तम्हा चलमाणेवि अचलिए जाव

निज्जरिज्जमाणेवि अणिज्जिन्ने, एवं संपेहेइ एवं संपेहेत्ता समणे निग्गंथे सद्दावेइ समणे निग्गंथे सद्दावेत्ता एवं वयासी–जन्नं देवाणुप्पिया! समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ जाव परूवेइ–एवं खलु चलमाणे चलिए तं चेव सव्वं जाव णिज्जरिज्जमाणे अणिज्जिन्ने। तए णं जमालिस्स अणगारस्स एवं आइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स अत्थेगइया समणा निग्गंथा एयमट्ठं सद्दहंति पत्तियंति रोयंति अत्थेगइया समणा निग्गंथा एयमट्ठं णो सद्दहंति ३, तत्थ णं जे ते समणा निग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं सद्दहंति ३ ते णं जमालिं चेव अणगारं उवसंपज्जित्ताणं विहरंति, तत्थ णं जे ते समणा णिग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं णो सद्दहंति णो पत्तियंति णो रोयंति ते णं जमालिस्स अणगारस्स अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमंति २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइ० जेणेव चंपानयरी जेणेव पुन्नभद्दे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति २ त्ता वंदइ णमंसइ २ समणं भगवं महावीरं उवसंपज्जित्ता णं विहरंति। ( सूत्रं ३८६ ) तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयावि ताओ रोगायंकाओ विप्पमुक्के हट्ठे तुट्ठे जाए अरोए बलियसरीरे सावत्थीओ नयरीओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव चंपा नयरी जेणेव पुन्नभद्दे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा समणं भगवं महावीरं एवं वयासी—जहा णं देवाणुप्पियाणं बहवे अंतेवासी समणा निग्गंथा छउमत्था भवेत्ता छउमत्थावक्कमणेणं अवक्कंता णो खलु अहं

तहा छउमत्थे भवित्ता छउमत्थावक्कमणेणं अवक्कमिए, अहन्नं उप्पन्नणाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली भवित्ता केवलिअवक्कमणेणं अवक्कमिए, तए णं भगवं गोयमे जमालिं अणगारं एवं वयासी—णो खलु जमाली! केवलिस्स णाणे वा दंसणे वा सेलंसि वा थंभंसि वा थूभंसि वा आवरिज्जइ वा णिवारिज्जइ वा, जइ णं तुमं जमाली! उप्पन्नणाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली भवित्ता केवलिअवक्कमणेणं अवक्कंते तो णं इमाइं दो वागरणाइं वागरेहि–सासए लोए जमाली! असासए लोए जमाली?, सासए जीवे जमाली! असासए जीवे जमाली?, तए णं से जमाली अणगारे भगवया गोयमेणं एवं वुत्ते समाणे संकिए कंखिए जाव कलुससमावन्ने जाए यावि होत्था, णो संचाएति भगवओ गोयमस्स किंचिवि पमोक्खमाइक्खित्तए तुसिणीए संचिट्ठइ, जमालीति समणे भगवं महावीरे जमालिं अणगारं एवं वयासी–अत्थि णं जमाली! ममं बहवे अंतेवासी समणा निग्गंथा छउमत्था जे णं एयं वागरणं वागरित्तए जहा णं अहं नो चेव णं एयप्पगारं भासं भासित्तए जहा णं तुमं, सासए लोए जमाली! जन्न कयावि णासी णो कयावि ण भवति ण कदावि ण भविस्सइ भुविं च भवइ य भविस्सइ य धुवे णितिए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे, असासए लोए जमालि! जओ ओसप्पिणी भवित्ता उस्सप्पिणी भवइ उस्सप्पिणी भवित्ता ओसप्पिणी भवइ, सासए जीवे जमालि! जं न कयाइ णासि जाव णिच्चे असासए जीवे जमाली! जन्न नेरइए भवित्ता तिरिक्खजोणिए भवइ तिरिक्खजोणिए भवित्ता मणुस्से भवइ मणुस्से भवित्ता देवे भवइ, तए णं से जमाली अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स एवमाइक्खमाणस्स जाव एवं

परूवेमाणस्स एयमट्ठं णो सद्दहइ णो पत्तिएइ णो रोएइ एयमट्ठं असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोएमाणे दोच्चंपि समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ आयाए अवक्कमइ दोच्चंपि आयाए अवक्कमित्ता बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणे वुप्पाएमाणे बहूयाइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ २ अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेइ अ० २ तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेति २ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे तेरससागरोवमठितिएसु देवकिब्बिसिएसु देवेसु देवकिब्बिसियत्ताए उववन्ने। ( सूत्रं० ३८७ )

'नो आढाइ'त्ति नाद्रियते तत्रार्थे नादरवान् भवति 'नो परिजाणइ'त्ति न परिजानातीत्यर्थः भाविदोषत्वेनोपेक्षणीयत्वात्तस्येति॥ 'अरसेहि य'त्ति हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतत्वादविद्यमानरसैः 'विरसेहि य'त्ति पुराणत्वाद्विगतरसैः 'अंतेहि य'त्ति अरसतया सर्वधान्यान्तवर्त्तिभिर्वल्लचणकादिभिः 'पंतेहि य'त्ति तैरेव भुक्तावशेषत्वेन पर्युषितत्वेन वा प्रकर्षेणान्तवर्त्तित्वात्प्रान्तैः 'लूहेहि य'त्ति रूक्षैः 'तुच्छेहि य'त्ति अल्पैः 'कालाइक्कंतेहिं य'त्ति तृष्णाबुभुक्षाकालाप्राप्तैः पमाणाइक्कंतेहि य'त्ति बुभुक्षापिपासामात्रानुचितैः 'रोगायंके'त्ति रोगो–व्याधिः स चासावातङ्कश्च–कृच्छ्रजीवितकारीति रोगातङ्कः 'उज्जले'त्ति उज्ज्वलो–विपक्षलेशेनाप्यकलङ्कितत्वात् 'तिउले'त्ति त्रीनपि मनःप्रभृतिकानर्थान् तुलयति–जयतीति त्रितुलः, क्वचिद्विपुल इत्युच्यते, तत्र विपुलः सकलकायव्यापकत्वात्, 'पगाढे'त्ति प्रकर्षवृत्तिः 'कक्कसे'त्ति कर्कशद्रव्यमिव कर्कशोऽनिष्ट इत्यर्थः 'कडुए'त्ति कटुकं नागरादि तदिव यः स कटुकोऽनिष्ट एवेति 'चंडे'त्ति रौद्रः दुक्खे'त्ति दुःखहेतुः 'दुग्गे'त्ति कष्टसाध्य इत्यर्थः 'तिव्वे'त्ति तीव्र–तिक्तं निम्बादिद्रव्यं तदिव तीव्रः,

किमुक्तं भवति ?—'दुरहियासे'त्ति दुरधिसह्यः 'दाहवक्कंतिए'त्ति दाहो व्युत्क्रान्तः—उत्पन्नो यस्यासौ दाहव्युत्क्रान्तः स एव दाहव्युत्क्रान्तिकः 'सेज्जासंथारगं'ति शय्यायै—शयनाय संस्तारकः शय्यासंस्तारकः ॥ 'बलियतरं'त्ति गाढतरं 'किं कडे कज्जइ'त्ति किं निष्पन्न उत निष्पाद्यते ?, अनेनातीतकालनिर्देशेन वर्त्तमानकालनिर्देशेन च कृतक्रियमाणयोर्भेद उक्तः, उत्तरेऽप्येवमेव, तदेवं संस्तारककर्तृसाधुभिरपि क्रियमाणस्याकृततोक्ता, ततश्चासौ स्वकीयवचनसंस्तारकर्तृसाधुवचनयोर्विमर्शात् प्ररूपितवान्—क्रियमाणं कृतं यदभ्युपगम्यते तन्न सङ्गच्छते, यतो येन क्रियमाणं कृतमित्यभ्युपगतं तेन विद्यमानस्य करणक्रिया प्रतिपन्ना, तथा च बहवो दोषाः, तथाहि—यत्कृतं तत्क्रियमाणं न भवति, विद्यमानत्वाच्चिरन्तनघटवत्, अथ कृतमपि क्रियते ततः क्रियतां नित्यं कृतत्वात् प्रथमसमय इवेति, न च क्रियासमाप्तिर्भवति सर्वदा क्रियमाणत्वादादिसमयवदिति, तथा यदि क्रियमाणं कृतं स्यात्तदा क्रियावैफल्यं स्याद् अकृतविषय एव तस्याः सफलत्वात्, तथा पूर्वमसदेव भवद्दृश्यते इत्यध्यक्षविरोधश्च, तथा घटादिकार्यनिष्पत्तौ दीर्घः क्रियाकालो दृश्यते, यतो नारम्भकाल एव घटादिकार्यं दृश्यते नापि स्थासकादिकाले, किं तर्हि, तत्क्रियाऽवसाने, यतश्चैवं ततो न क्रियाकालेषु युक्तं कार्यं किन्तु क्रियाऽवसान एवेति, आह च भाष्यकारः—"जस्सेह कज्जमाणं कयंति तेणेह विज्जमाणस्स। करणकिरिया पवन्ना तहा य बहुदोसपडिवत्ती ॥ १ ॥ कयमिह न कज्जमाणं तब्भावाओ चिरंतणघडोव्व। अहवा कयंपि कीरइ कीरउ निच्चं न य समत्ती ॥२॥ किरियावेफल्लंपि य पुव्वमभूयं च दीसए हुंतं। दीसइ दीहो य जओ किरियाकालो घडाईणं ॥ ३ ॥ नारंभे च्चिय दीसइ न सिवादद्धाइ दीसइ तदंते। तो नहि किरियाकाले जुत्तं कज्जं तदंतंमि ॥ ४ ॥" इति। 'अत्थेगइया समणा णिग्गंथा एयमट्ठं णो सद्दहंति'त्ति ये च न श्रद्दधति तेषां मतमिदं—नाकृतं अभूतमविद्यमानमित्यर्थः क्रियते अभावात् खपुष्पवत्, यदि पुनरकृतमपि

असदपीत्यर्थः क्रियते तदा खरविषाणमपि क्रियतामसत्त्वाविशेषात्, अपि च-ये कृतकरणपक्षे नित्यक्रियादयो दोषा भणितास्ते च अकृतकरणपक्षेऽपि तुल्या वर्त्तन्ते, तथाहि-नात्यन्तमसत् क्रियतेऽसद्भावात् खरविषाणमिव, अथात्यन्तासदपि क्रियते तदा नित्यं तत्करणसङ्गः, न चात्यन्तासतः करणे क्रियासमाप्तिर्भवति, तथाऽत्यन्तासतः करणे क्रियावैफल्यं च स्यादसत्त्वादेव खरविषाणवत्, अथ च अविद्यमानस्य करणाभ्युपगमे नित्यक्रियादयो दोषाः कष्टतरका भवन्ति, अत्यन्ताभावरूपत्वात् खरविषाण इवेति, विद्यमानपक्षे तु पर्यायविशेषेणापर्ययणात् स्यादपि क्रियाव्यपदेशो यथाऽऽकाशं कुरु, तथा च नित्यक्रियादयो दोषा न भवन्ति, न पुनरयं न्यायोऽत्यन्तासति खरविषाणादावस्तीति, यच्चोक्तं-'पूर्वमसदेवोत्पद्यमानं दृश्यत इति प्रत्यक्षविरोधः', तत्रोच्यते, यदि पूर्वमभूतं सद्भवद्दृश्यते तदा पूर्वमभूतं सद्भवत् कस्मात्त्वया खरविषाणमपि न दृश्यते, यच्चोक्तं—'दीर्घः क्रियाकालो दृश्यते, तत्रोच्यते', प्रतिसमयमुत्पन्नानां परस्परेणोपद्विलक्षणानां सुबह्वीनां स्थासकोसादीनामारम्भसमयेष्वेव निष्ठानुयायिनीनां कार्यकोटीनां दीर्घः क्रियाकालो यदि दृश्यते तदा किमत्र घटस्यायातं ? येनोच्यते-दृश्यते दीर्घश्च क्रियाकालो घटादीनामिति, यच्चोक्तं-'नारम्भ एव दृश्यते' इत्यादि, तत्रोच्यते, कार्यान्तरारम्भे कार्यान्तरं कथं दृश्यतां पटारम्भे घटवत् ?, शिवकस्थासकादयश्च कार्यविशेषा घटस्वरूपा न भवन्ति, ततः शिवकादिकाले कथं घटो दृश्यतामिति ?, किंच-अन्त्यसमय एव घटः समारब्धः ?, तत्रैव च यद्यसौ दृश्यते तदा को दोषः ?, एवं च क्रियमाण एव कृतो भवति, क्रियमाणसमयस्य निरंशत्वात्, यदि च संप्रतिसमये क्रियाकालेऽप्यकृतं वस्तु तदाऽतिक्रान्ते कथं क्रियतां कथं वा एष्यति ?, क्रियाया उभयोरपि विनष्टत्वानुत्पन्नत्वेनासत्त्वादसम्बध्यमानत्वात्, तस्मात् क्रियाकाल एव क्रियमाणं कृतमिति, आह च—"थेराण मयं नाकयमभावओ कीरए खपुप्फंव। अहव अकयंपि कीरइ कीरउ तो खरविसाणंपि ॥ १ ॥ निच्चकिरियाइ



प्र०आ०४८७

दोसा नणु तुह्मा असइ कट्ठतरया वा । पुव्वमभूयं च न ते दीसइ किं खरविसाणंपि ? ॥ २ ॥ पडसमउप्पन्नाणं परोप्परविलक्खणाण सुबहूणं । दीहो किरियाकालो जइ दीसइ किं च कुंभस्स ॥ ३ ॥ अन्नारंभे अन्नं किह दीसउ ? जह घडो पडारंभे । सिवगादओ न कुंभो किह दीसउ सो तदद्धाए ? ॥ ४ ॥ अंते च्चिय आरद्धो जइ दीसइ तंमि चेव को दोसो ? । अकयं च संपइ गए किहु कीरउ किह व एसंमि ? ॥ ५ ॥ " इत्यादि बहु वक्तव्यं तच्च विशेषावश्यकादवगन्तव्यमिति । 'छउमत्थावक्कमणेणं'ति छद्मस्थानां सतामपक्रमणं–गुरुकुलान्निर्गमनं छद्मस्थापक्रमणं तेन, "आयरिज्जइ'त्ति ईषद्व्रियते 'निवारिज्जइ'त्ति नितरां वार्यते प्रतिहन्यत इत्यर्थः 'न कयाइ नासी'त्यादि तत्र न कदाचिन्नासीदनादित्वात् न कदाचिन्न भवति सदैव भावात् न कदाचिन्न भविष्यति अपर्यवसितत्वात्, किं तर्हि ?, 'भुविं चे'त्यादि, ततश्चायं त्रिकालभावित्वेनाचलत्वात् ध्रुवो मेर्वादिवत् ध्रुवत्वादेव 'नियतः' नियताकारो नियतत्वादेव शाश्वतः प्रतिक्षणमप्यसत्त्वस्याभावात् शाश्वतत्वादेव 'अक्षयः' निर्विनाशः, अक्षयत्वादेवाव्ययः प्रदेशापेक्षया, अवस्थितो द्रव्यापेक्षया, नित्यस्तदुभयापेक्षया, एकार्था वैते शब्दाः ।

तए णं से भगवं गोयमे जमालिं अणगारं कालगयं जाणित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ ते० २ समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कुसिस्से जमालिणामं अणगारे से णं भंते ! जमाली अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए कहिं उववन्ने ?, गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! मम अंतेवासी कुसिस्से जमाली नामं से णं तदा मम एवं आइक्खमाणस्स ४ एयमट्ठं णो सद्दहइ ३ एयमट्ठं असद्दहमाणे ३ दोच्चंपि ममं अंतियाओ

आयाए अवक्कमइ २ बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं तं चेव जाव देवकिब्बिसियत्ताए उववन्ने ॥ ( सूत्रं ३८८ ) ॥

कतिविहा णं भंते ! देवकिब्बिसिया पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा देवकिब्बिसिया पण्णत्ता, तंजहा–तिपलिओवमट्ठिइया तिसागरोवमट्ठिइया तेरससागरोवमट्ठिइया, कहिं णं भंते ! तिपलिओवमट्ठितीया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?, गोयमा ! उप्पिं जोइसियाणं हिट्ठिं सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु एत्थ णं तिपलिओवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति । कहिं णं भंते ! तिसागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?, गोयमा ! उप्पिं सोहम्मीसाणाणं कप्पाणं हिट्ठिं सणंकुमारमाहिंदेसु कप्पेसु एत्थ णं तिसागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति, कहिं णं भंते ! तेरससागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?, गोयमा ! उप्पिं बंभलोगस्स कप्पस्स हिट्ठिं लंतए कप्पे एत्थ णं तेरससागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया देवा परिवसंति । देवकिब्बिसिया णं भंते ! केसु कम्मादाणेसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति ?, गोयमा ! जे इमे जीवा आयरियपडिणीया उवज्झायपडिणीया कुलपडिणीया गणपडिणीया संघपडिणीया आयरियउवज्झायाणं अयसकरा अवन्नकरा अकित्तिकरा बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य अप्पाणं च ३ वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणंति पा० तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवकिब्बिसिएसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति, तंजहा—तिपलिओवमट्ठितीएसु वा तिसागरोवमट्ठितीएसु वा तेरससागरोवमट्ठितीएसु वा । देवकिब्बिसियाणं भंते ! ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं

चइत्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति ?, गोयमा ! जाव चत्तारि पंच नेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवभवग्गहणाइं संसारं अणुपरियट्टित्ता तओ पच्छा सिज्झंति बुज्झंति जाव अंतं करेंति, अत्थेगइया अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टंति ॥ जमाली णं भंते ! अणगारे अरसाहारे विरसाहारे अंताहारे लूहाहारे तुच्छाहारे अरसजीवी विरसजीवी जाव तुच्छजीवी उवसंतजीवी पसंतजीवी विवित्तजीवी ?, हंता गोयमा ! जमाली णं अणगारे अरसाहारे विरसाहारे जाव विवित्तजीवी । जति णं भंते ! जमाली अणगारे अरसाहारे विरसाहारे जाव विवित्तजीवी कम्हा णं भंते ! जमाली अणगारे कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे तेरससागरोवमट्ठितिएसु देवकिव्विसिएसु देवेसु देवकिव्विसियत्ताए उववन्ने ?, गोयमा ! जमाली णं अणगारे आयरियपडिणीए उवज्झायपडिणीए आयरियउवज्झायाणं अयसकारए जाव वुप्पाएमाणे जाव बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेति तीसं० २ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे जाव उववन्ने ॥ ( सूत्रं० ३८९ ) ॥ जमाली णं भंते ! देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं जाव कहिं उववज्जिहिइ ?, गोयमा ! चत्तारि पंच तिरिक्खजोणियमणुस्सदेवभवग्गहणाइं संसारं अणुपरियट्टित्ता तओ पच्छा सिज्झिहिति जाव अंतं काहेति । सेवं भंते २ त्ति ॥ ( सूत्रं० ३९० ) ॥ जमाली समत्तो ॥ ९ । ३३ ॥

'आयाए'त्ति आत्मना 'असब्भावुब्भावणाहिं'ति असद्भावानां-वितथार्थानामुद्भावना-उत्प्रेक्षणानि असद्भावोद्भावनास्ता

भिः 'मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य'त्ति मिथ्यात्वात्–मिथ्यादर्शनोदयाद् येऽभिनिवेशा–आग्रहास्ते तथा तैः 'वुग्गाहेमाणे'त्ति व्युद्ग्राहयन्, विरुद्धग्रहवन्तं कुर्वन्नित्यर्थः 'वुप्पाएमाणे'त्ति व्युत्पादयन् दुर्विदग्धीकुर्वन्नित्यर्थः । 'केसु कम्मादाणेसु'त्ति केषु कर्महेतुषु सत्स्वित्यर्थः 'अजसकारगे'त्यादौ सर्वदिग्गामिनी प्रसिद्धिर्यशस्तत्प्रतिषेधादयशः, अवर्णस्त्वप्रसिद्धिमात्रम्, अकीर्त्तिः पुनरेकदिग्गामिन्यप्रसिद्धिरिति 'अरसाहारे'त्यादि, इह च 'अरसाहारे' इत्याद्यपेक्षया 'अरसजीवी'त्यादि न पुनरुक्तं, शीलादिप्रत्ययार्थेन भिन्नार्थत्वादिति. 'उवसंतजीवि'त्ति उपशान्तोऽन्तर्वृत्त्या जीवतीत्येवंशील उपशान्तजीवी, एवं प्रशान्तजीवी, नवरं प्रशान्तो बहिर्वृत्त्या, 'विवित्तजीवि'त्ति इह विविक्तः स्त्र्यादिसंसक्तासनादिवर्जनत इति । अथ भगवता श्रीमन्महावीरेण सर्वज्ञत्वादमुं तद्व्यतिकरं जानताऽपि किमिति प्रव्राजितोऽसौ? इति, उच्यते, अवश्यम्भाविभावानां महानुभावैरपि प्रायो लङ्घयितुमशक्यत्वाद्, इत्थमेव वा गुणविशेषदर्शनाद्, अमूढलक्षा हि भगवन्तोऽर्हन्तो न निष्प्रयोजनं क्रियासु प्रवर्त्तन्त इति ॥ नवमशते त्रयस्त्रिंशत्तम उद्देशकः समाप्तः ॥ ९ । ३३ ॥

---

अनन्तरोद्देशके गुरुप्रत्यनीकतया स्वगुणव्याघात उक्तः, चतुस्त्रिंशतमे तु पुरुषव्याघातेन तदन्यजीवव्याघात उच्यत इत्येवंसंबद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी–पुरिसे णं भंते ! पुरिसं हणमाणे किं पुरिसं हणइ नो पुरिसं हणइ?, गोयमा ! पुरिसंपि हणइ नोपुरिसेवि हणति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ पुरिसंपि हणइ नोपुरिसेवि हणइ?, गोयमा ! तस्स णं एवं—भवइ एवं खलु अहं एगं पुरिसं हणामि, से णं एगं पुरिसं हणमाणे अणेगा-

जीवा हणइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ पुरिसंपि हणइ नोपुरिसेवि हणति। पुरिसे णं भंते! आसं हणमाणे किं आसं हणइ नोआसेवि हणइ?, गोयमा! आसंपि हणइ नोआसेवि हणइ, से केणट्ठेणं अट्ठो तहेव, एवं हत्थिं सीहं वग्घं जाव चिल्ललगं। पुरिसे णं भंते! अन्नयरं तसपाणं हणमाणे किं अन्नयरं तसपाणं हणइ नोअन्नयरे तसपाणे हणइ?, गोयमा! अन्नयरंपि तसपाणं हणइ नोअन्नयरेवि तसे पाणे हणइ, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ अन्नयरंपि तसं पाणं नोअन्नयरेवि तसे पाणे हणइ?, गोयमा! तस्स णं एवं भवइ एवं खलु अहं एगं अन्नयरं तसं पाणं हणामि, से णं एगं अन्नयरं तसं पाणं हणमाणे अणेगे जीवे हणइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! तं चेव एए सव्वेवि एक्कगमा। पुरिसे णं भंते! इसिं हणमाणे किं इसिं हणइ नोइसिं हणइ?, गोयमा! इसिंपि हणइ नोइसिंपि हणइ, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव नोइसिंपि हणइ?, गोयमा! तस्स णं एवं भवइ एवं खलु अहं एगं इसिं हणामि, से णं एगं इसिं हणमाणे अणंते जीवे हणइ से तेणट्ठेणं निक्खेवओ। पुरिसे णं भंते! पुरिसं हणमाणे किं पुरिसवेरेणं पुट्ठे नो पुरिसवेरेणं पुट्ठे?, गोयमा! नियमा ताव पुरिसवेरेणं पुट्ठे अहवा पुरिसवेरेण य णोपुरिसवेरेण य पुट्ठे अहवा पुरिसवेरेण य नोपुरिसवेरेहि य पुट्ठे, एवं आसं एवं जाव चिल्ललगं जाव अहवा चिल्ललगवेरेण य णोचिल्ललगवेरेहि य पुट्ठे, पुरिसे णं भंते! इसिं हणमाणे किं इसिवेरेणं पुट्ठे नोइसिवेरेणं पुट्ठे?, गोयमा! नियमा इसिवेरेण य नोइसिवेरेहि य पुट्ठे॥ ( सूत्रं० ३९१ )॥

'तेण'मित्यादि, 'नो पुरिसं हणइ'त्ति पुरुषव्यतिरिक्तं जीवान्तरं हन्ति 'अणेगे जीवे हणइ'त्ति 'अनेकान् जीवान्' यूका-

शतपदिकाकृमिगण्डोलकादीन् तदाश्रितान् तच्छरीरावष्टब्धांस्तद्रुधिरप्लावितादींश्च हन्ति, अथवा स्वकायस्याकुञ्चनप्रसरणादिनेति, 'छणइ'त्ति क्वचित्पाठस्तत्रापि स एवार्थः, क्षणधातोर्हिंसार्थत्वात्, बाहुल्याश्रयं चेदं सूत्रं, तेन पुरुषं घ्नन् तथाविधसामग्रीवशात् कश्चित्तमेव हन्ति कश्चिदेकमपि जीवान्तरं हन्तीत्यपि द्रष्टव्यं, वक्ष्यमाणभङ्गकत्रयान्यथाऽनुपपत्तेरिति, 'एते सव्वे एक्कगमा' 'एते' हस्त्यादयः 'एक्कगमाः' सदृशाभिलापाः' 'इसिं'ति ऋषिम् 'अणंते जीवे हणइ'त्ति ऋषिं घ्नन्ननन्तान् जीवान् हन्ति, यतस्तद्घातेऽनन्तानां घातो भवति, मृतस्य तस्य विरतेरभावेनानन्तजीवघातकत्वभावात्, अथवा ऋषिर्जीवन् बहून् प्राणिनः प्रतिबोधयति, ते च प्रतिबुद्धाः क्रमेण मोक्षमासादयन्ति, मुक्ताश्चानन्तानामपि संसारिणामघातका भवन्ति, तद्वधे चैतत्सर्वं न भवत्यतस्तद्वधेऽनन्तजीववधो भवतीति, 'निक्खेवओ'त्ति निगमनं। 'नियमा पुरिसवेरेणे'त्यादि, पुरुषस्य हतत्वान्नियमात्पुरुषवधपापेन स्पृष्ट इत्येको भङ्गः, तत्र च यदि प्राण्यन्तरमपि हतं तदा पुरुषवैरेण नोपुरुषवैरेण चेति द्वितीयः, यदि तु बहवः प्राणिनो हतास्तत्र तदा पुरुषवैरेण नोपुरुषवैरैश्चेति तृतीयः, एवं सर्वत्र त्रयम्, ऋषिपक्षे तु ऋषिवैरेण नोऋषिवैरैश्चेत्येवमेक एव, ननु यो मृतो मोक्षं यास्यत्यविरतो न भविष्यति तस्यर्षेर्वधे ऋषिवैरमेव भवत्यतः प्रथमविकल्पसम्भवः, अथ चरमशरीरस्य निरुपक्रमायुष्कत्वान्न हननसम्भवस्ततोऽचरमशरीरापेक्षया यथोक्तभङ्गकसम्भवो, नैवं, यतो यद्यपि चरमशरीरो निरुपक्रमायुष्कस्तथाऽपि तद्वधाय प्रवृत्तस्य यमुनराजस्येव वैरमस्त्येवेति प्रथमभङ्गकसम्भव इति, सत्यं, किन्तु यस्य ऋषेः सोपक्रमायुष्कत्वात् पुरुषकृतो वधो भवति तमाश्रित्येदं सूत्रं प्रवृत्तं, तस्यैव हननस्य मुख्यवृत्त्या पुरुषकृतत्वादिति ॥ प्राग् हननमुक्तं, हननं चोच्छ्वासादिवियोगोऽत उच्छ्वासादिवक्तव्यमाह—

**पुढविकाइया णं भंते! पुढविकायं चेव आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा?, हंता**

गोयमा! पुढविक्काइए पुढविक्काइयं चेव आणमंति वा जाव नीससंति वा। पुढवीक्काइए णं भंते! आउक्काइयं आणमंति वा जाव नीससंति?, हंता गोयमा! पुढविक्काइए आउक्काइयं आणमंति वा जाव नीससंति वा, एवं तेउक्काइयं वाउक्काइयं एवं वणस्सइकाइयं। आउक्काइए णं भंते! पुढवीक्काइयं आणमंति वा पाणमंति वा?, एवं चेव, आउक्काइए णं भंते! आउक्काइयं चेव आणमंति वा?, एवं चेव, एवं तेउवाऊवणस्सइकाइयं। तेऊक्काइए णं भंते! पुढविक्काइयं आणमंति वा?, एवं जाव वणस्सइकाइए णं भंते! वणस्सइकाइयं चेव आणमंति वा तहेव। पुढविक्काइए णं भंते! पुढविकाइयं चेव आणममाणे वा पाणममाणे वा ऊससमाणे वा नीससमाणे वा कइकिरिए?, गोयमा! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए, पुढविक्काइए णं भंते! आउक्काइयं आणममाणे वा०? एवं चेव, एवं जाव वणस्सइकाइयं, एवं आउकाइएणवि सव्वेवि भाणियव्वा, एवं तेउक्काइएणवि, एवं वाउक्काइएणवि, जाव वणस्सइकाइए णं भंते! वणस्सइकाइयं चेव आणममाणे वा?, पुच्छा, गोयमा! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए ॥(सूत्रं० ३९२)॥ वाउक्काइए णं भंते! रुक्खस्स मूलं पचालेमाणे वा पवाडेमाणे वा कतिकिरिए?, गोयमा! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए। एवं कंदं, एवं जाव मूलं बीयं पचालेमाणे वा पुच्छा, गोयमा! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ ( सूत्रं ३९३ ) ॥ नवमं सयं समत्तं ॥ ९ । ३४ ॥

'पुढविक्काइए णं भंते!'इत्यादि, इह पूज्यव्याख्या यथा वनस्पतिरन्यस्योपर्यन्यः स्थितस्तत्तेजोग्रहणं करोति एवं पृथिवीका-

कायिकादयोऽप्यन्योऽन्यसंबद्धत्वात्तत्तद्रूपं प्राणापानादि कुर्वन्तीति, तत्रैकः पृथिवीकायिकोऽन्यं स्वसंबद्धं पृथिवीकायिकम् अनिति— तद्रूपमुच्छ्वासं करोति यथोदरस्थितकर्पूरः पुरुषः कर्पूरस्वभावमुच्छ्वासं करोति, एवमप्कायादिकानिति, एवं पृथिवीकायिकसूत्राणि पञ्च, एवमेवाप्कायादयः प्रत्येकं पञ्च सूत्राणि लभन्त इति पञ्चविंशतिः सूत्राण्येतानीति। क्रियासूत्राण्यपि पञ्चविंशतिस्तत्र 'सिय तिकिरिए'त्ति यदा पृथिवीकायिकादिः पृथिवीकायिकादिरूपमुच्छ्वासं कुर्वन्नपि न तस्य पीडामुत्पादयति स्वभावविशेषात्तदाऽसौ कायिकादित्रिक्रियः स्यात्, यदा तु तस्य पीडामुत्पादयति तदा पारितापनिकीक्रियाभावाच्चतुष्क्रियः, प्राणातिपातसद्भावे तु पञ्चक्रिय इति ॥ क्रियाधिकारादेवेदमाह—'वाउक्काइए ण'मित्यादि, इह च वायुना वृक्षमूलस्य प्रचालनं प्रपातनं वा तदा संभवति यदा नदीभित्त्यादिषु पृथिव्याऽनावृत्तं तत्स्यादिति । अथ कथं प्रपातेन त्रिक्रियत्वं परितापादेः सम्भवात्?, उच्यते, अचेतनमूलापेक्षयेति॥ नवमशते चतुस्त्रिंशत्तमः ॥९-३४॥ अस्मन्मनोव्योमतलप्रचारिणा, श्रीपार्श्वसूर्यस्य विसर्पितेजसा। दुर्धृष्यसंमोहतमोऽपसारणाद्, विभक्तमेवं नवमं शतं मया१

॥ समाप्तं नवम शतम् ॥

॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिविरचितवृत्तियुतं नवमं शतकं समाप्तं ॥

व्याख्यातं नवमं शतम्, अथ दशमं व्याख्यायते, अस्य चायमभिसम्बन्धः—अनन्तरशते जीवादयोऽर्थाः प्रतिपादिताः इहापि त एव प्रकारान्तरेण प्रतिपाद्यन्ते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्योद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथेयम्—

**दिसि १ संवुडअणगारे २ आयड्ढी ३ सामहत्थि ४ देवि ५ सभा ६। उत्तरअंतरदीवा ७८ दसमंमि सयंमि चोत्तीसा ॥ ३४ ॥**

'दिसे'त्यादि, 'दिस'त्ति दिशमाश्रित्य प्रथम उद्देशकः १ 'संवुडअणगारे'त्ति संवृतानगारविषयो द्वितीयः २ 'आइड्ढि'त्ति आत्मद्धर्या देवो देवी वा वासान्तराणि व्यतिक्रामेदित्याद्यर्थाभिधायकस्तृतीयः ३ 'सामहत्थि'त्ति श्यामहस्त्यभिधानश्रीमन्महावीरशिष्यप्रश्नप्रतिबद्धश्चतुर्थः ४ 'देवि'त्ति चमराद्यग्रमहिषीप्ररूपणार्थः पञ्चमः ५ 'सभ'त्ति सुधर्म्मसभाप्रतिपादनार्थः षष्ठः ६ 'उत्तरअंतरदीवि'त्ति उत्तरस्यां दिशि येऽन्तरद्वीपास्तत्प्रतिपादनार्था अष्टाविंशतिरुद्देशकाः, एवं चादितो दशमे शते चतुस्त्रिंशदुद्देशका भवन्तीति ॥

**रायगिहे जाव एवं वयासी–किमियं भंते! पाईणात्ति पवुच्चई?, गोयमा! जीवा चेव अजीवा चेव, किमियं भंते! पडीणाति पवुच्चई?, गोयमा! एवं चेव, एवं दाहिणा एवं उदीणा एवं उड्ढा एवं अहोवि। कति णं भंते! दिसाओ पण्णत्ताओ?, गोयमा! दस दिसाओ पण्णत्ताओ, तंजहा–पुरच्छिमा १ पुरच्छिमदाहिणा २ दाहिणा ३ दाहिणपच्चत्थिमा ४ पच्चत्थिमा ५ पच्चत्थिमुत्तरा ६ उत्तरा ७ उत्तरपुरच्छिमा ८ उड्ढा ९ अहो १०। एयासि णं भंते! दसण्हं दिसाणं कति णामधेज्जा पण्णत्ता?, गोयमा! दस नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–इंदा १ अग्गेयी २**

जमा य३ नेरती४ वारुणी५ य वायव्वा६। सोमा७ ईसाणी य८ विमला या९ तमा य१० बोद्धव्वा ॥१॥ (६२३२०) इंदा णं भंते! दिसा किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा ?, गोयमा! जीवावि ३ तं चेव जाव अजीवपएसावि, जे जीवा ते नियमा एगिंदिया बेइंदिया जाव पंचिंदिया अणिंदिया, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा जाव अणिंदियदेसा, जे जीवपएसा ते एगिंदियपएसा वेइंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा, जे अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-रूवी अजीवा य अरूवी अजीवा य, जे रूवी अजीवा ते चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा-खंधा १ खंधदेसा २ खंधपएसा ३ परमाणुपोग्गला ४, जे अरूवी अजीवा ते सत्तविहा पन्नत्ता, तंजहा-नोधम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा नोअधम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकायस्स देसे अधम्मत्थियस्स पएसा नोआगासत्थिकाए आगासत्थिकायस्स देसे आगासत्थिकायस्स पएसा अद्धासमए ॥ अग्गेई णं भंते! दिसा किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा? पुच्छा, गोयमा! णो जीवा जीवदेसावि १ जीवपएसावि २ अजीवावि १ अजीवदेसावि २ अजीवपएसावि ३, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसे १ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसा २ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा ३ अहवा एगिंदियदेसा तेइंदियस्स देसे एवं चेव तियभंगो भाणियव्वो एवं जाव अणिंदियाणं तियभंगो, जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियस्स पएसा अहवा एगिंदियपदेसा य बेइंदियाण य पएसा एवं आइल्लविरहिओ जाव अणिंदियाणं, जे अजीवा ते दुविहा

पन्नत्ता,तंजहा–रूविअजीवा य अरूवीअजीवा य, जे रूवीजीवा ते चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा–खंधा जाव परमाणुपोग्गला ४, जे अरूवी अजीवा ते सत्तविहा पन्नत्ता, तंजहा–नोधम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा एवं अधम्मत्थिकायस्सवि जाव आगासत्थिकायस्स पएसा अद्धासमए । विदिसासु नत्थि जीवा देसे भंगो य होइ सव्वत्थ ॥ जमा णं भंते ! दिसा किं जीवा जहा इंदा तहेव निरवसेसा, नेरई य जहा अग्गेयी, वारुणी जहा इंदा,वायव्वा जहा अग्गेयी, सोमा जहा इंदा, ईसाणी जहा अग्गेयी, विमलाए जीवा जहा अग्गेयी, अजीवा जहा इंदा, एवं तमाएवि, नवरं अरूवी छव्विहा, अद्धासमयो न भन्नति ॥ ( सूत्रं ३९४ )

'किमियं भंते ! पाईणत्ति पवुचइ'त्ति किमेतद्वस्तु यत् प्रागेव प्राचीनं दिग्विवक्षायां 'प्राची वा' प्राची पूर्वेति प्रोच्यते, उत्तरं तु जीवाश्चैव अजीवाश्चैव, जीवा–जीवरूपा प्राची, तत्र जीवा–एकेन्द्रियादयः, अजीवास्तु--धर्मास्तिकायादिदेशादयः, इदमुक्तं भवति–प्राच्यां दिशि जीवा अजीवाश्च सन्तीति । 'इंदे'त्यादि, इन्द्रो देवता यस्याः सैन्द्री 'अग्निर्देवता यस्याः साऽऽग्नेयी, एवं यमो देवता याम्या निर्ऋतिर्देवता नैर्ऋती वरुणो देवता वारुणी वायुर्देवता वायव्या सोमदेवता सौम्या ईशानदेवता ऐशानी विमलतया विमला तमा–रात्रिस्तदाकारत्वात्तमाऽन्धकारेत्यर्थः, अत्र ऐन्द्री पूर्वा शेषाः क्रमेण, विमला तूर्ध्वा तमा पुनरधोदिगिति, इह च दिशः शकटोद्धिसंस्थिताः विदिशस्तु मुक्तावल्याकाराः ऊर्ध्वाधोदिशौ च रुचकाकारे, आह च–"सगडुद्धिसंठियाओ महादिसाओ हवंति चत्तारि । मुत्तावलीव चउरो दो चेव य होंति रुयगनिभे ॥ १ ॥" इति । 'जीवावी'त्यादि, ऐन्द्री दिग् जीवा तस्यां जीवानामस्तित्वात्, एवं जीवदेशा जीवप्रदेशाश्चेति, तथाऽजीवानां पुद्गलादीनामस्तित्वादजीवा, धर्मास्तिकायादिदेशानां पुनरस्तित्वादजीवदेशाः एवमजी-

वप्रदेशा अपीति, तत्र ये जीवास्त एकेन्द्रियादयोऽनिन्द्रियाश्च केवलिनः, ये तु जीवदेशास्त एकेन्द्रियादीनाम् ६, एवं जीवप्रदेशा अपि, 'जे अरूवी अजीवा ते सत्तविह'त्ति, कथं ?, नोधम्मत्थिकाए, अयमर्थः-धर्मास्तिकायः समस्त एवोच्यते, स च प्राचीदिग् न भवति, तदेकदेशभूतत्वात्तस्याः, किन्तु धर्मास्तिकायस्य देशः, सा तदेकदेशभागरूपेति १, तथा तस्यैव प्रदेशाः सा भवति, असङ्ख्येयप्रदेशात्मकत्वात्तस्याः २, एवमधर्मास्तिकायस्य देशः प्रदेशाश्च ३-४, एवमाकाशास्तिकायस्यापि देशः प्रदेशाश्च ५-६, अद्धासमयश्चेति ७, तदेवं सप्तप्रकाराऽरूप्यजीवरूपा ऐन्द्री दिगिति॥ 'अग्गेयी णं' मित्यादिप्रश्नः, उत्तरे तु जीवा निषेधनीयाः, विदिशामेकप्रदेशिकत्वादेकप्रदेशे च जीवानामवगाहाभावात्, असङ्ख्यातप्रदेशावगाहित्वात्तेषां, तत्र 'जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेस'त्ति एकेन्द्रियाणां सकललोकव्यापकत्वादाग्नेय्यां नियमादेकेन्द्रियदेशाः सन्तीति, 'अहवे'त्यादि, एकेन्द्रियाणां सकललोकव्यापकत्वादेव द्वीन्द्रियाणां चाल्पत्वेन क्वचिदेकस्यापि तस्य सम्भवादुच्यते एकेन्द्रियाणां देशाश्च द्वीन्द्रियस्य देशश्चेति द्विकयोगे प्रथमः, अथवैकेन्द्रियपदं तथैव द्वीन्द्रियपदे त्वेकवचनं देशपदे पुनर्बहुवचनमिति द्वितीयः, अयं च यदा द्वीन्द्रियो द्व्यादिभिर्देशैस्तां स्पृशति तदा स्यादिति, अथवैकेन्द्रियपदं तथैव द्वीन्द्रियपदं देशपदं च बहुवचनान्तमिति तृतीयः, स्थापना-एगिं० ३ देसा ३ बेइं १ देसे एगिं० ३ देसा३ बेइं १ देसा३ एगिं० ३ देसा ३ बेइं० ३ देसा ३।' एवं त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियपञ्चेन्द्रियानिन्द्रियैः सह प्रत्येकं भङ्गकत्रयं दृश्यम्, एवं प्रदेशपक्षोऽपि वाच्यो नवरमिह द्वीन्द्रियादिषु प्रदेशपदं बहुवचनान्तमेव, यतो लोकव्यापकावस्थानिन्द्रियवर्जजीवानां यत्रैकः प्रदेशस्तत्रासङ्ख्यातास्ते भवन्ति, लोकव्यापकावस्थानिन्द्रियस्य पुनर्यद्यप्येकत्र क्षेत्रप्रदेशे एक एव प्रदेशस्तथाऽपि तत्प्रदेशपदे बहुवचनमेवाग्नेय्यां तत्प्रदेशानामसङ्ख्यातानामवगाढत्वाद्, अतः सर्वेषु द्विकयोगेष्वाद्यविरहितं भङ्गकद्वयमेव भवतीत्येतदेवाह-'आइल्लविरहिओ'-

त्ति द्विकभङ्ग इति शेषः । 'विमलाए जीवा जहा अग्गेईए'त्ति विमलायामपि जीवानामनवगाहात् 'अजीवा जहा इंदाए'त्ति समानवक्तव्यत्वात्, 'एवं तमावि'त्ति विमलावत्तमाऽपि वाच्येत्यर्थः, अथ विमलायामनिन्द्रियसम्भवात्तद्देशादयो युक्तास्तमायां तु तस्यासम्भवात्कथं ते ? इति, उच्यते, दण्डाद्यवस्थं तमाश्रित्य तस्य देशो देशाः प्रदेशाश्च विवक्षायां तत्रापि युक्ता एवेति । अथ तमायां विशेषमाह–'नवर'मित्यादि, 'अद्धासमयो न भन्नइ'त्ति समयव्यवहारो हि सञ्चरिष्णुसूर्यादिप्रकाशकृतः, स च तमायां नास्तीति तत्राद्धासमयो न भण्यत इत्यर्थः । अथ विमलायामपि नास्त्यसाविति कथं तत्र समयव्यवहारः ? इति, उच्यते, मन्दरावयवभूतस्फटिककाण्डे सूर्यादिप्रभासङ्क्रान्तिद्वारेण तत्र सञ्चरिष्णुसूर्यादिप्रकाशभावादिति ॥ अनन्तरं जीवादिरूपा दिशः प्ररूपिताः, जीवाश्च शरीरिणोऽपि भवन्तीति शरीरप्ररूपणायाह—

**कति णं भंते ! सरीरा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंच सरीरा पन्नत्ता, तंजहा–ओरालिए जाव कम्मए । ओरालियसरीरे णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, एवं ओगाहणसंठाणं निरवसेसं भाणियव्वं जाव अप्पाबहुगंति । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ( सूत्रं० ३९५ ) दसमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥ १० । १ ॥**



'कइ णं भंते !' इत्यादि, 'ओगाहणसंठाणं'ति प्रज्ञापनायामेकविंशतितमं पदं, तच्चैवं–'पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–एगिंदियओरालियसरीरे जाव पंचिंदियओरालियसरीरे' इत्यादि, पुस्तकान्तरे त्वस्य संग्रहगाथोपलभ्यते, सा चेयम्–" कइसंठाणपमाणं पोग्गलचिणणा सरीरसंजोगो । दव्वपएसप्पबहुं सरीरओगाहणाए या ॥ १ ॥ " तत्र च कतीति कति शरीराणीति वाच्यं, तानि पुनरौदारिकादीनि पञ्च, तथा 'संठाणं'ति औदारिकादीनां संस्थानं वाच्यं, यथा नानासंस्थानमौदारिकं, तथा 'पमाणं'ति

एषामेव प्रमाणं वाच्यं, यथा—औदारिकं जघन्यतोऽङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्रमुत्कृष्टतस्तु सातिरेकयोजनसहस्रमानं, तथैषामेव पुद्गलचयो वाच्यो, यथौदारिकस्य निर्व्याघातेन षट्सु दिक्षु व्याघातं प्रतीत्य स्यात्रिदिशीत्यादि, तथैषामेव संयोगो वाच्यो, यथा यस्यौदारिकशरीरं तस्य वैक्रियं स्यादस्तीत्यादि, तथैषामेव द्रव्यार्थप्रदेशार्थतयाऽल्पबहुत्वं वाच्यं, यथा 'सव्वत्थोवा आहारगसरीरा दव्वट्ठयाए'इत्यादि, तथैषामेवावगाहनाया अल्पबहुत्वं वाच्यं, यथा 'सव्वत्थोवा ओरालियसरीरस्स जहन्निया ओगाहणा'इत्यादि ॥ दशमशते प्रथमोद्देशकः ॥ १० । १ ।

---

अनन्तरोद्देशकान्ते शरीराण्युक्तानि, शरीरी च क्रियाकारी भवतीति क्रियाप्ररूपणाय द्वितीय उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी—संवुडस्स णं भंते ! अणगारस्स वीयीपंथे ठिच्चा पुरओ रूवाइं निज्झायमाणस्स मग्गओ रूवाइं अवयक्खमाणस्स पासओ रूवाइं अवलोएमाणस्स उड्ढं रूवाइं ओलोएमाणस्स अहे रूवाइं आलोएमाणस्स तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइया किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! संवुडस्स णं अणगारस्स वीयीपंथे ठिच्चा जाव तस्स णं णो ईरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइया किरिया कज्जइ, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ संवुड० जाव संपराइया किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! जस्स णं कोहमाणमायालोभा एवं जहा सत्तमसए पढमोद्देसए जाव से णं उस्सुत्तमेव रीयति, से तेणट्ठेणं जाव संपराइया किरिया कज्जइ । संवुडस्स णं भंते ! अणगारस्स अवीयीपंथे ठिच्चा पुरओ रूवाइं निज्झायमाणस्स जाव तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया

कज्जइ ?, पुच्छा, गोयमा ! संवुड० जाव तस्स णं ईरियावहिया किरिया कज्जइ नो संपराइया किरिया कज्जइ, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहा सत्तमे सए पढमोद्देसए जाव से णं अहासुत्तमेव रीयति से तेणट्ठेणं जाव नो संपराइया किरिया कज्जइ ॥ ( सूत्रं० ३९६ ) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, तत्र 'संवुडस्स'त्ति संवृतस्य सामान्येन प्राणातिपाताद्याश्रवद्वारसंवरोपेतस्य 'वीईपंथे ठिच्चे'ति वीचिशब्दः सम्प्रयोगे, स च सम्प्रयोगोर्द्वयोर्भवति, ततश्चेह कषायाणां जीवस्य च सम्बन्धो वीचिशब्दवाच्यः, ततश्च वीचिमतः कषायवतो, मतुप्प्रत्ययस्य षष्ठ्याश्च लोपदर्शनात्, अथवा 'विचिर् पृथग्भावे'इति वचनाद् विविच्य–पृथग्भूय यथाऽऽख्यातसंयमात् कषायोदयमनपवार्येत्यर्थः, अथवा विचिन्त्य रागादिविकल्पादित्यर्थः, अथवा विरूपा कृतिः–क्रिया सरागत्वात् यस्मिन्नवस्थाने तद्विकृति यथा भवतीत्येवं स्थित्वा 'पंथे'त्ति मार्गे 'अवयक्खमाणस्स'त्ति अवकाङ्क्षतोऽपेक्षमाणस्य वा, पथिग्रहणस्य चोपलक्षणत्वादन्यत्राप्याधारे स्थित्वेति द्रष्टव्यं, 'नो ईरियावहिया किरिया कज्जइ'त्ति न केवलयोगप्रत्यया कर्मबन्धक्रिया भवति सकषायत्वात्तस्येति । 'जस्स णं कोहमाणमायालोभा'इह 'एवं जहे'त्याद्यतिदेशादिदं दृश्यं–वोच्छिन्ना भवंति तस्स णं इरियावहिया किरिया कज्जइ, जस्स णं कोहमाणमायालोभा अवोच्छिन्ना भवंति तस्स णं संपराइया किरिया कज्जइ, अहासुत्तं रीयं रीयमाणस्स ईरियावहिया किरिया कज्जइ, उस्सुत्तं रीयं रीयमाणस्स संपराइया किरिया कज्जइ'त्ति, व्याख्या चास्य प्राग्वदिति । 'से णं उस्सुत्तमेव'त्ति स पुनरुत्सूत्रमेवागमातिक्रमणत एव 'रीयइ'त्ति गच्छति । 'संवुडस्से'त्याद्युक्तविपर्ययसूत्रं, तत्र च 'अवीइ'त्ति 'अवीचिमतः' अकषायसम्बन्धवतः 'अविविच्य' वा अपृथग्भूय यथाऽऽख्यातसंयमात्, अविचिन्त्य वा रागविकल्पाभावेनेत्यर्थः अविकृति वा यथा भवतीति ॥ अनन्तरं

क्रियोक्ता, क्रियावतां च प्रायो योनिप्राप्तिर्भवतीति योनिप्ररूपणायाह—

कइविहा णं भंते! जोणी पन्नत्ता ?, गोयमा! तिविहा जोणी पण्णत्ता, तंजहा—सीया उसिणा सीतोसिणा, एवं जोणीपयं निरवसेसं भाणियव्वं ॥ ( सूत्रं ३९७ ) कतिविहा णं भंते! वेयणा पन्नत्ता ?, गोयमा! तिविहा वेयणा पन्नत्ता, तंजहा—सीया उसिणा सीओसिणा, एवं वेयणापयं निरवसेसं भाणियव्वं जाव नेरइयाणं भंते! किं दुक्खं वेदणं वेदेंति सुहं वेयणं वेयंति अदुक्खमसुहं वेयणं वेयंति ?, गोयमा! दुक्खंपि वेयणं वेयंति सुहंपि वेयणं वेयंति अदुक्खमसुहंपि वेयणं वेयंति ॥ ( सूत्रं ३९८ )

'कतिविहा ण'मित्यादि, तत्र च 'जोणि'त्ति 'यु मिश्रणे' इतिवचनाद् युवन्ति—तैजसकार्म्मणशरीरवन्त औदारिकादिशरीरयोग्यस्कन्धसमुदायेन मिश्रीभवन्ति जीवा यस्यां सा योनिः, सा च त्रिविधा शीतादिभेदात्, तत्र 'सीय' त्ति शीतस्पर्शा 'उसिण'त्ति उष्णस्पर्शा 'सीओसिण'त्ति द्विस्वभावा 'एवं जोणिपयं निरवसेसं भाणियव्वं'ति योनिपदं च प्रज्ञापनायां नवमं पदं, तच्चेदं—'नेरइयाणं भंते! किं सीया जोणी उसिणा जोणी सीओसिणा जोणी ?, गोयमा! सीयावि जोणी उसिणावि जोणी नो सीओसिणा जोणी'त्यादि, अयमर्थः—'सीयावि जोणी'त्ति आद्यासु तिसृषु नरकपृथिवीषु चतुर्थ्यां च केषुचिन्नरकावासेषु नारकाणां यदुपपातक्षेत्रं तच्छीतस्पर्शपरिणतमिति तेषां शीताऽपि योनिः, 'उसिणावि जोणि'त्ति शेषासु पृथिवीषु चतुर्थपृथिवीनरकावासेषु च केषुचिन्नारकाणां यदुपपातक्षेत्रं तदुष्णस्पर्शपरिणतमिति तेषामुष्णाऽपि योनिः, 'नो सीओसिणा जोणि'त्ति न मध्यमस्वभावा योनिस्तथास्वभावत्वात्, शीतादियोनिप्रकरणार्थसंग्रहस्तु प्रायेणैवं—" सीओसिणजोणीया सव्वे देवा य गब्भवक्कंती। उसिणा य तेउकाए दुह

निरए तिविह सेसेसु ॥ १ ॥ " 'गब्भवक्कंति'त्ति गर्भोत्पत्तिकाः, तथा-'कतिविहा णं भंते! जोणी पन्नत्ता?, गोयमा! तिविहा जोणी पन्नत्ता, तंजहा-सच्चित्ता अचित्ता मीसिया'इत्यादि, सचित्तादियोनिप्रकरणार्थसंग्रहस्तु प्रायेणैवम्-" अच्चित्ता खलु जोणी नेरइयाणं तहेव देवाणं । मीसा य गब्भवासे तिविहा पुण होइ सेसेसु ॥ २ ॥ " सत्यप्येकेन्द्रियसूक्ष्मजीवनिकायसम्भवे नारकदेवानां यदुपपातक्षेत्रं तन्न केनचिज्जीवेन परिगृहीतमित्यचित्ता तेषां योनिः, गर्भवासयोनिस्तु मिश्रा शुक्रशोणितपुद्गलानामचित्तानां गर्भाशयस्य सचेतनस्य भावादिति, शेषाणां पृथिव्यादीनां संमूर्छनजानां च मनुष्यादीनामुपपातक्षेत्रे जीवेन परिगृहीतेऽपरिगृहीते उभयरूपे चोत्पत्तिरिति त्रिविधाऽपि योनिरिति । तथा—'कतिविहा णं भंते! जोणी पन्नत्ता?, गोयमा! तिविहा जोणी पन्नत्ता, तंजहा-संवुडा जोणी वियडा जोणी संवुडवियडा जोणी'त्यादि, संवृत्तादियोनिप्रकरणार्थसंग्रहस्तु प्राय एवम्-" एगिंदियनेरइया संवुडजोणी तहेव देवा य । विगलिंदिएसु वियडा संवुडवियडा य गब्भंमि ॥ १ ॥ " एकेन्द्रियाणां संवृता योनिस्तथास्वभावत्वात्, नारकाणामपि संवृतैव, यतो नरकनिष्कुटाः संवृतगवाक्षकल्पास्तेषु च जातास्ते वर्द्धमानमूर्तयस्तेभ्यः पतन्ति शीतेभ्यो निष्कुटेभ्य उष्णेषु नरकेषु उष्णेभ्यस्तु शीतेष्विति, देवानामपि संवृतैव यतो देवशयनीये दूष्यान्तरितोऽङ्गुलासङ्ख्यातभागमात्रावगाहनो देव उत्पद्यत इति । तथा-'कतिविहा णं भंते! जोणी पन्नत्ता?, गोयमा! तिविहा जोणी पन्नत्ता, तंजहा-कुम्मुन्नया संखावत्ता वंसीपत्ते'त्यादि, एतद्वक्तव्यतासंग्रहश्चैवं-संखावत्ता जोणी इत्थीरयणस्स होति विन्नेया । तीए पुण उप्पन्नो नियमा उ विणस्सई गब्भो ॥ १ ॥ कुम्मुन्नयजोणीए तित्थयरा चक्किवासुदेवा य । रामावि य जायंते सेसाए सेसगजणो उ ॥ २ ॥ " अनन्तरं योनिरुक्ता, योनिमतां च वेदना भवन्तीति तत्प्ररूपणायाह-'कइविहा णं'मित्यादि, 'एवं वेयणापयं भाणियव्वं'ति वेदनापदं च प्रज्ञापनायां पञ्चत्रिंशत्तमं,

तच्च लेशतो दर्श्यते-'नेरइयाणं भंते! किं सीयं वेयणं वेयंति ३? गोयमा! सीयंपि वेयणं वेयंति एवं उसिणंपि णो सीओसिणं' एवमसुरादयो वैमानिकान्ताः 'एवं चउव्विहा वेयणा दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ' तत्र पुद्गलद्रव्यसम्बन्धाद् द्रव्यवेदना नारकादिक्षेत्रसम्बन्धात्क्षेत्रवेदना नारकादिकालसम्बन्धात्कालवेदना शोकक्रोधादिभावसम्बन्धाद्भाववेदना, सर्वे संसारिणश्चतुर्विधामपि, तथा 'तिविहा वेयणा-सारीरा माणसा सारीरमाणसा' समनस्कास्त्रिविधामपि असञ्ज्ञिनस्तु शारीरीमेव, तथा 'तिविहा वेयणा साया असाया सायासाया' सर्वे संसारिणस्त्रिविधामपि, तथा 'तिविहा वेयणा-दुक्खा सुहा अदुक्खमसुहा' सर्वे त्रिविधामपि, सातासातसुखदुःखयोश्चायं विशेषः-सातासाते अनुक्रमेणोदयप्राप्तानां वेदनीयकर्मपुद्गलानामनुभवरूपे, सुखदुःखे तु परोदीर्यमाणवेदनीयानुभवरूपे, तथा 'दुविहा वेयणा-अब्भुवगमिया उवक्कमिया' आभ्युपगमिकी या स्वयमभ्युपगम्य वेद्यते यथा साधवः केशोल्लुञ्चनातापनादिभिर्वेदयन्ति औपक्रमिकी तु स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन चोदयमुपनीतस्य वेद्यस्यानुभवात्, द्विविधामपि पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च शेषास्त्वौपक्रमिकीमेवेति, तथा 'दुविहा वेयणा-निदा य अनिदा य' निदा-चित्तवती विपरीता त्वनिदेति, सञ्ज्ञिनो द्विविधामसञ्ज्ञिनस्त्वनिदामेवेति। इह च प्रज्ञापनायां द्वारगाथाऽस्ति, सा चेयं-"सीया य दव्व सारीर साय तह वेयणा हवइ दुक्खा। अब्भुवगमुवक्कमिया निदा य अनिदा य नायव्वा॥१॥" अस्याश्च पूर्वार्द्धोक्तान्येव द्वाराण्यधिकृतवाचनायां सूचितानि यतस्तत्राप्युक्तं 'निदा य अनिदा य वज्जं'ति॥ वेदनाप्रस्तावाद्वेदनाहेतुभूतां प्रतिमां निरूपयन्नाह—

मासियण्णं भंते! भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चं वोसट्ठे काये चियत्ते देहे, एवं मासिया भिक्खुपडिमा निरवसेसा भाणियव्वा [ जाव दसाहिं ] जाव आराहिया भवइ। ( सूत्रं ३९९ ) भिक्खू य अन्नयरं

अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेइ नत्थि तस्स आराहणा, से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स आराहणा, भिक्खू य अन्नयरं अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता तस्स णं एवं भवइ पच्छावि णं अहं चरमकालसमयंसि एयस्स ठाणस्स आलोएस्सामि जाव पडिवज्जिस्सामि, से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते जाव नत्थि तस्स आराहणा, से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स आराहणा, भिक्खू य अन्नयरं अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता तस्स णं एवं भवइ—जइ ताव समणोवासगावि कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति किमंग पुण अहं अन्नपन्नियदेवत्तणंपि नो लभिस्सामित्तिकट्टु से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेइ नत्थि तस्स आराहणा, से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स आराहणा। सेवं सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति। (सूत्र ४००) १०।२

'मासियण्ण'मित्यादि, मासः परिमाणं यस्याः सा मासिकी तां 'भिक्षुप्रतिमां' साधुप्रतिज्ञाविशेषं 'वोसट्ठे काए'त्ति व्युत्सृष्टे स्नानादिपरिकर्म्मवर्जनात् 'चियत्ते देहे'त्ति त्यक्ते वधबन्धाद्यवारणात्, अथवा 'चियत्ते' संमते प्रीतिविषये धर्मसाधनेषु प्रधानत्वाद्देहस्येति 'एवं मासिया भिक्खुपडिमा'इत्यादि, अनेन च यदतिदिष्टं तदिदं—'जे केइ परीसहोवसग्गा उप्पज्जंति, तंजहा—दिव्वा वा माणुसा वा तिरिक्खजोणिया वा ते उप्पन्ने सम्मं सहइ खमइ तितिक्खइ अहियासेई'त्यादि, तत्र सहते स्थानाविचलनतः क्षमते क्रोधाभावात् तितिक्षते दैन्याभावात् क्रमेण वा मनःप्रभृतिभिः, किमुक्तं भवति?—अधिसहत इति ॥ आराहिय। भवतीत्युक्तमथाराधना यथा न स्याद्यथा च स्यात्तद्दर्शयन्नाह—'भिक्खू य अन्नयरं अकिच्चट्ठाण'मित्यादि, इह

चशब्दश्चेदित्येतस्यार्थे वर्त्तते, स च भिक्षोरकृत्यस्थानासेवनस्य प्रायेणासम्भवप्रदर्शनपरः, 'पडिसेवित्त'त्ति अकृत्यस्थानं प्रतिषेविता भवतीति गम्यं, वाचनान्तरे त्वस्य स्थाने 'पडिसेविज्ज'त्ति दृश्येत, 'से णं'ति स भिक्षुः 'तस्स ठाणस्स'त्ति तत् स्थानम् 'अणपन्नियदेवत्तणंपि नो लभिस्सामि'त्ति अणपन्निका—व्यन्तरनिकायविशेषास्तत्सम्बन्धिदेवत्वं तदपि नोपलत्स्ये इति ॥ दशमशतस्य द्वितीयोद्देशकः ॥ १० । २ ॥

---

द्वितीयोद्देशकान्ते देवत्वमुक्तम्, अथ तृतीये देवस्वरूपमभिधीयते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी—आइड्ढीए णं भंते! देवे जाव चत्तारि पंच देवा वासंतराइं वीतिकंते तेण परं परिड्ढीए?, हंता गोयमा! आइड्ढीए णं तं चेव, एवं असुरकुमारेवि, नवरं असुरकुमारावासंतराइं सेसं तं चेव, एवं एएणं कमेणं जाव थणियकुमारे, एवं वाणमंतरे जोइसवेमाणिय जाव तेण परं परिड्ढीए। अप्पड्ढीए णं भंते! देवे से महिड्ढीयस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवइज्जा?, णो तिणट्ठे समट्ठे। समिड्ढीए णं भंते! देवे समड्ढीयस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा?, णो तिणट्ठे समट्ठे, पमत्तं पुण वीइवइज्जा, से णं भंते! किं विमोहित्ता पभू अविमोहित्ता पभू?, गोयमा! विमोहेत्ता पभू, नो अविमोहेत्ता पभू। से भंते! किं पुव्विं विमोहेत्ता पच्छा वीइवएज्जा पुव्विं वीइवएत्ता पच्छा विमोहेज्जा?, गोयमा! पुव्विं विमोहेत्ता पच्छा वीइवएज्जा, णो पुव्विं वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा। महिड्ढीए णं भंते! देवे अप्पड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा?, हंता वीइवएज्जा, से णं

भंते! किं विमोहित्ता पभू अविमोहेत्ता पभू ?, गोयमा! विमोहेत्तावि पभू अविमोहेत्तावि पभू, से भंते! किं पुव्विं विमोहेत्ता पच्छा वीइवइज्जा पुव्विं वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा ?, गोयमा! पुव्विं वा विमोहेत्ता पच्छा वीइवएज्जा पुव्विं वीइवएज्जा पच्छा विमोहेज्जा। अप्पड्ढीए णं भंते! असुरकुमारे महड्ढीयस्स असुरकुमारस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, णो इणट्ठे समट्ठे, एवं असुरकुमारेवि तिन्नि आलावगा भाणियव्वा जहा ओहिएणं देवेणं भणिया, एवं जाव थणियकुमाराणं, वाणमंतरजोइसियवेमाणिएणं एवं चेव। अप्पड्ढिए णं भंते! देवे महड्ढियाए देवीए मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, णो इणट्ठे समट्ठे, समड्ढिए णं भंते! देवीए मज्झंमज्झेणं०; एवं तहेव देवेण य देवीण य दंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणियाए। अप्पड्ढिया णं भंते! देवी महड्ढीयस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं एवं एसोवि तइओ दंडओ भाणियव्वो जाव महड्ढिया वेमाणिणी अप्पड्ढियस्स वेमाणियस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, हंता वीइवएज्जा। अप्पड्ढिया णं भंते! देवी महिड्ढीयाए देवीए मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, णो इणट्ठे समट्ठे, एवं समड्ढिया देवी समड्ढियाए देवीए, तहेव, महड्ढियावि देवी अप्पड्ढियाए देवीए तहेव, एवं एक्केके तिन्नि २ आलावगा भाणियव्वा जाव महड्ढीया णं भंते! वेमाणिणी अप्पड्ढीयाए वेमाणिणीए मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, हंता वीइवएज्जा, सा भंते! किं विमोहित्ता पभू तहेव जाव पुव्विं वा वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा एए चत्तारि दंडगा ॥ (सू० ४०१) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'आइड्ढीए णं' आत्मर्द्ध्या–स्वकीयशक्त्या, अथवाऽऽत्मन एव ऋद्धिर्यस्यासावात्मर्द्धिकः 'देवे'त्ति सामान्यः

'देवावासंतराइं'ति देवावासविशेषान् 'वीइक्कंते'त्ति 'व्यतिक्रान्तः' लङ्घितवान्, क्वचिद् व्यतिव्रजतीति पाठः, 'तेण परं'ति ततः परं 'परिड्ढीए'त्ति परद्ध्या परर्द्धिको वा 'विमोहित्ता पभु'त्ति 'विमोह्य' महिकाद्यन्धकारकरणेन मोहमुत्पाद्य अपश्यन्तमेव तं व्यतिक्रामेदिति भावः। 'एवं असुरकुमारेणवि तिन्नि आलावग'त्ति अल्पर्द्धिकमहर्द्धिकयोरेकः समर्द्धिकयोरन्यः महर्द्धिकाल्पर्द्धिकयोरपर इत्येवं त्रयः, 'ओहिएणं देवेणं'ति सामान्येन देवेन १, एवमालापकत्रयोपेतो देवदेवीदण्डको वैमानिकान्तोऽन्यः २, एवमेव च देवीदेवदण्डको वैमानिकान्त एवापरः ३, एवमेव च देव्योर्दण्डकोऽन्यः ४ इत्येवं चत्वार एते दण्डकाः॥ अनन्तरं देवक्रियोक्ता, सा चातिविस्मयकारिणीति विस्मयकरं वस्त्वन्तरं प्रश्नयन्नाह—

आसस्स णं भंते! धावमाणस्स किं खुखुत्ति करेति?, गोयमा! आसस्स णं धावमाणस्स हिदयस्स य जगयस्स य अंतरा एत्थ णं कव्वडए नामं वाए संमुच्छइ जेणं आसस्स धावमाणस्स खुखुत्ति करेइ॥ (सू० ४०२) अह भंते! आसइस्सामो सइस्सामो चिट्ठिस्सामो निसिइस्सामो तुयट्टिस्सामो आमंतणि आणवणी जायणि तह पुच्छणी य पण्णवणी। पच्चक्खाणी भासा भासा इच्छाणुलोमा य॥१॥ अणभिग्गहिया भासा भासा य अभिग्गहंमि बोद्धव्वा। संसयकरणी भासा वोयडमव्वोयडा चेव॥२॥ पन्नवणी णं एसा न एसा, भासा मोसा?, हंता गोयमा! आसइस्सामो तं चेव जाव न एसा भासा मोसा। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति॥ (सूत्रं ४०३) दसमे सए तईओ उद्देसो॥ १०—३॥

'आसस्से'त्यादि, 'हिययस्स य जगयस्स य'त्ति हृदयस्य यकृतश्च-दक्षिणकुक्षिगतोदरावयविशेषस्य 'अन्तरा' अन्तराले॥

अनन्तरं 'खुखु'त्ति प्ररूपितं तच्च शब्दः, स च भाषारूपोऽपि स्यादिति भाषाविशेषान् भाषणीयत्वेन प्रदर्शयितुमाह—'अह भंते!' इत्यादि, अथेति परिप्रश्नार्थः 'भंते!'ति भदन्त! इत्येवं भगवन्तं महावीरमामन्त्र्य गौतमः पृच्छति—'आसइस्सामो'त्ति आश्रयिष्यामो वयमाश्रयणीयं वस्तु 'सइस्सामो'त्ति शयिष्यामहे 'चिट्ठिस्सामो'त्ति ऊर्ध्वस्थानेन स्थास्यामः 'निसिइस्सामो'त्ति निषेत्स्याम उपवेक्ष्याम इत्यर्थः 'तुयट्टिस्सामो'त्ति संस्तारके भविष्याम इत्यादिका भाषा किं प्रज्ञापनी? इति योगः॥ अनेन चोपलक्षणपरवचनेन भाषाविशेषाणामेवंजातीयानां प्रज्ञापनीयत्वं पृष्टमथ भाषाजातीनां तत्पृच्छति—'आमंतणि'गाहा, तत्र 'आमन्त्रणी' हे देवदत्त! इत्यादिका, एषा च किल वस्तुनोऽविधायकत्वादनिषेधकत्वाच्च सत्यादिभाषात्रयलक्षणवियोगतश्चासत्यामृषेति प्रज्ञापनादावुक्ता, एवमाज्ञापन्यादिकामपि, 'आणवणि'त्ति आज्ञापनी कार्ये परस्य प्रवर्त्तनी यथा घटं कुरु 'जायणि'त्ति याचनी—वस्तुविशेषस्य देहीत्येवंमार्गणरूपा तथेति समुच्चये 'पुच्छणी य'त्ति प्रच्छनी—अविज्ञातस्य संदिग्धस्य वाऽर्थस्य ज्ञानार्थं तदभियुक्तप्रेरणरूपा 'पण्णवणि'त्ति प्रज्ञापनी—विनेयस्योपदेशदानरूपा, यथा—"पाणवहाओ नियत्ता भवंति दीहाउया अरोगा य। एमाई पन्नवणी पन्नत्ता वीयरागेहिं॥१॥" 'पच्चक्खाणी भास'त्ति प्रत्याख्यानी याचमानस्यादित्सा मे अतो मां मा याचस्वेत्यादिप्रत्याख्यानरूपा भाषा 'इच्छाणुलोम'त्ति प्रतिपादयितुर्या इच्छा तदनुलोमा—तदनुकूला इच्छानुलोमा यथा कार्ये प्रेरितस्य एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतदिति वचः। 'अणभिग्गहिया भासा'गाहा, अनभिगृहीता—अर्थानभिग्रहेण योच्यते डित्थादिवत् 'भासा य अभिग्गहंमि बोद्धव्वा'भाषा चाभिग्रहे बोद्धव्या—अर्थमभिगृह्य योच्यते घटादिवत्, 'संसयकरणी भास'त्ति याऽनेकार्थप्रतिपत्तिकरी सा संशयकरणी यथा सैन्धवशब्दः पुरुषलवणवाजिषु वर्त्तमान इति 'वोयड'त्ति व्याकृता लोकप्रतीतशब्दार्था 'अव्वोयड'त्ति अव्याकृता गम्भीरशब्दार्था मन्मनाक्षर-

प्रयुक्ता वाऽनाविर्भावितार्था 'पन्नवणी णं'ति प्रज्ञाप्यतेऽर्थोऽनयेति प्रज्ञापनी—अर्थकथनी वक्तव्येत्यर्थः 'न एसा मोस'त्ति नैषा मृषा-नार्थानभिधायिनी नावक्तव्येत्यर्थः, पृच्छतोऽयमभिप्रायः-आश्रयिष्याम इत्यादिका भाषा भविष्यत्कालविषया, सा चान्तरायसम्भवेन व्यभिचारिण्यपि स्यात्, तथैकार्थविषयाऽपि बहुवचनान्ततयोक्तेत्येवमयमथार्था, तथा आमन्त्रणीप्रभृतिका विधिप्रतिषेधाभ्यां न सत्यभाषावद्वस्तुनि नियतेत्यतः किमियं वक्तव्या स्यात् ? इति, उत्तरं तु 'हंता'इत्यादि, इदमत्र हृदयम्-आश्रयिष्याम इत्यादिकाऽनवधारणत्वाद्वर्त्तमानयोगेनेत्येतद्विकल्पगर्भत्वादात्मनि गुरौ चैकार्थत्वेऽपि बहुवचनस्यानुमतत्वात्प्रज्ञापन्येव, तथाऽऽमन्त्रण्यादिकाऽपि वस्तुनो विधिप्रतिषेधाविधायकत्वेऽपि या निरवद्यपुरुषार्थसाधनी सा प्रज्ञापन्येवेति ॥ दशमशते तृतीयोद्देशकः ॥ १० । ३ ॥

---

तृतीयोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, चतुर्थेऽप्यसावेवोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियग्गामे नामं नयरे होत्था वन्नओ, दूतिपलासए चेइए, सामी समोसढे, जाव परिसा पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे जाव उड्ढंजाणू जाव विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी सामहत्थी नामं अणगारे पयइभद्दए जहा रोहे जाव उड्ढंजाणू जाव विहरइ, तए णं से सामहत्थी अणगारे जायसड्ढे जाव उट्ठाए उट्ठेत्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता भगवं गोयमं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—अत्थि णं भंते! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमारस्स तायत्तीसगा देवा ?, हंता

अत्थि, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगा देवा २?, एवं खलु सामहत्थी! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुदीवे २ भारहे वासे कायंदी नामं नयरी होत्था वन्नओ, तत्थ णं कायंदीए नयरीए तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासगा परिवसन्ति अड्ढा जाव अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा उवलद्धपुण्णपावा जाव विहरंति तए णं ते तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासया पुव्विं उग्गा उग्गविहारी संविग्गा संविग्गविहारी भवित्ता तओ पच्छा पासत्थविहारी ओसन्ना ओसन्नविहारी कुसीला कुसीलविहारी अहाछंदा अहाछंदविहारी बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणंति २ अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेंति अत्ताणं झूसेत्ता तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति २ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसगदेवत्ताए उववन्ना, जप्पभिइं च णं भंते! कायंदगा तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासगा चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसदेवत्ताए उववन्ना तप्पभिइं च णं भंते! एवं वुच्चइ चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसगा देवा?, तए णं भगवं गोयमे सामहत्थिणा अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे संकिए कंखिए वितिगिच्छिए उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठेत्ता सामहत्थिणा अणगारेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–अत्थि णं भंते! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगा देवा ता०२?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ?, एवं तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव तप्पभिइं च णं एवं वुच्चइ चमरस्स

असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसगा देवा २ ?, णो इणट्ठे समट्ठे, गोयमा ! चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसगाणं देवाणं सासए नामधेज्जे पण्णत्ते, जं न कयाइ नासी न कदावि न भवति ण कयाई ण भविस्सई जाव निच्चे अव्वोच्छित्तिनयट्ठयाए अन्ने चयंति अन्ने उववज्जंति। अत्थि णं भंते ! बलिस्स वइरोयणिंदस्स वइरोयणरन्नो तायत्तीसगा देवा ? ता० २ ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ बलिस्स वइरोयणिंदस्स जाव तायत्तीसगा देवा ? ता० २ ?, एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे बिभेले णामं संनिवेसे होत्था वन्नओ, तत्थ णं बिभेले संनिवेसे जहा चमरस्स जाव उववन्ना, जप्पभिइं च णं भंते ! ते बिभेलगा तायत्तीसं सहाया गाहावइसमणोवासगा बलिस्स वइ० सेसं तं चेव जाव निच्चे अव्वोच्छित्तिणयट्ठयाए अन्ने चयंति अन्ने उववज्जंति। अत्थि णं भंते ! धरणस्स णागकुमारिंदस्स नागकुमाररन्नो तायत्तीसगा देवा ता० २ ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं जाव तायत्तीसगा देवा २ ?, गोयमा ! धरणस्स नागकुमारिंदस्स नागकुमाररन्नो तायत्तीसगाणं देवाणं सासए नामधेज्जे पन्नत्ते जं न कयाइ नासी जाव अन्ने चयंति अन्ने उववज्जंति, एवं भूयाणंदस्सवि एवं जाव महाघोसस्स। अत्थि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो पुच्छा, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं जाव तायत्तीसगा देवा ?, एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पालासए नामं संनिवेसे होत्था वन्नओ, तत्थ णं पालासए सन्निवेसे तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासया जहा चमरस्स जाव विहरंति, तए णं तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासगा पुव्विंपि पच्छावि उग्गा उग्ग-

विहारी संविग्गा संविग्गविहारी बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेइ झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति २ आलोइयपडिकंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा जाव उववन्ना, जप्पभिइं च णं भंते! पालासिगा तायत्तीससहाया गाहावई समणोवासगा सेसं जहा चमरस्स जाव उववज्जंति। अत्थि णं भंते! ईसाणस्स एवं जहा सक्कस्स नवरं चंपाए नयरीए जाव उववन्ना, जप्पभिइं च णं भंते! चंपिज्जा तायत्तीसं सहाया, सेसं तं चेव जाव अन्ने उववज्जंति। अत्थि णं भंते! सणंकुमारस्स देविंदस्स देवरन्नो पुच्छा, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं जहा धरणस्स तहेव एवं जाव पाणयस्स एवं अच्चुयस्स जाव अन्ने उववज्जंति। सेवं भंते! सेवं भंते! ॥ ( सूत्रं ४०४ ) ॥ दसमस्स चउत्थो ॥ १० । ४ ॥

'तेण'मित्यादि, 'तायत्तीसग'त्ति त्रायस्त्रिंशा–मन्त्रिविकल्पाः 'तायत्तीसं सहाया गाहावइ'त्ति त्रयस्त्रिंशत्परिमाणाः 'सहायाः' परस्परेण साहायककारिणः 'गृहपतयः' कुटुम्बनायकाः 'उग्ग'त्ति उग्रा उदात्ता भावतः 'उग्गविहारि'त्ति उदात्ताचाराः सदनुष्ठानत्वात् 'संविग्ग'त्ति संविग्नाः–मोक्षं प्रति प्रचलिताः संसारभीरवो वा 'संविग्गविहारि'त्ति संविग्नविहारः–संविग्नानुष्ठानमस्ति येषां ते तथा 'पासत्थि'त्ति ज्ञानादिबहिर्वर्तिनः 'पासत्थविहारी'त्ति आकालं पार्श्वसमाचाराः 'ओसण्ण'त्ति अवसन्ना इव–श्रान्ता इवावसन्ना आलस्यादनुष्ठानासम्यक्करणात् 'ओसन्नविहार'त्ति आजन्म शिथिलाचारा इत्यर्थः 'कुसील'त्ति ज्ञानाद्याचारविराधनात् 'कुसीलविहारि'त्ति आजन्मापि ज्ञानाद्याचारविराधनात् 'अहाछंद'त्ति यथाकथञ्चित् नागमपरतन्त्रतया छन्दः–अभिप्रायो बोधः प्रवचनार्थेषु येषां ते यथाच्छन्दाः, ते चैकदाऽपि भवन्तीत्यत आह–'अहाछंदविहारि'त्ति आजन्मापि यथाछन्दा

एवेति । 'तप्पभिइं च णं'त्ति यत्प्रभृति त्रयस्त्रिंशत्सङ्ख्योपेतास्ते श्रावकास्तत्रोत्पन्नास्तत्प्रभृति न पूर्वमिति ॥ दशमशते चतुर्थोद्देशकः समाप्तः ॥ १० । ४ ॥



चतुर्थोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, पञ्चमे तु देवीवक्तव्यतोच्यते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नगरे गुणसिलए चेइए जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अंतेवासी थेरा भगवंतो जाइसंपन्ना जहा अट्ठमे सए सत्तमुद्देसए जाव विहरंति । तए णं ते थेरा भगवंतो जायसड्ढा जाव संसया जहा गोमयसामी जाव पज्जुवासमाणा एवं वयासी—चमरस्स णं भंते! असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ?, अज्जो! पंच अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा—काली रायी रयणी विज्जु मेहा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए अट्ठट्ठ देवीसहस्सा परिवारो पन्नत्तो, पभू णं भंते! ताओ एगमेगा देवी अन्नाइं अट्ठट्ठदेवीसहस्साइं परिवारं विउव्वित्तए?, एवामेव सपुव्वावरेणं चत्तालीसं देवीसहस्सा, से तं तुडिए, पभू णं भंते! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंपाए रायहाणीए सभाए चमरंसि सीहासणंसि तुडिएणं सद्धिं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ नो पभू चमरे असुरिंदे चमरचंचाए रायहाणीए जाव विहरित्तए?, अज्जो चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए माणवए चेइयखंभे वइरामएसु गोलवट्ट-

समुग्गएसु बहूओ जिणसकहाओ संनिक्खित्ताओ चिट्ठंति, जाओ णं चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो अन्नेसिं च बहूणं असुरकुमाराणं देवाण य देवीण य अच्चणिज्जाओ वंदणिज्जाओ नमंसणिज्जाओ पूयणिज्जाओ सक्कारणिज्जाओ सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासणिज्जाओ भवंति तेसिं पणिहाए नो पभू, से तेणट्ठेणं अज्जो! एवं वुच्चइ–नो पभू चमरे असुरिंदे जाव राया चमरचंचाए जाव विहरित्तए, पभू णं अज्जो! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्ठीए सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए जाव अन्नेहिं च बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे महयाहय जाव भुंजमाणे विहरित्तए० केवलं परियारिड्ढीए नो चेव णं मेहुणवत्तियं। (सूत्रं ४०५) चमरस्स णं भंते! असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो सोमस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ?, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–कणगा कलगलया चित्तगुत्ता वसुंधरा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए एगमेगंसि देविसहस्सं परिवारो पन्नत्तो, पभू णं ताओ एगमेगाए देवीए अन्नं एगमेगं देवीसहस्सं परियारं विउव्वित्तए, एवामेव सपुव्वावरेणं चत्तारि देविसहस्सा, सेत्तं तुडिए, पभू णं भंते! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो सोमे महाराया सोमाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए सोमंसि सीहासणंसि तुडिएणं अवसेसं जहा चमरस्स नवरं परियारो जहा सूरियाभस्स, सेसं तं चेव, जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं। चमरस्स णं भंते! जाव रन्नो जमस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ?, एवं चेव नवरं जमाए रायहाणीए सेसं जहा सोमस्स, एवं वरुणस्सवि, नवरं वरुणाए रायहाणीए,

एवं वेसमणस्सवि नवरं वेसमणाए रायहाणीए, सेसं तं चेव जाव मेहुणवत्तियं। बलिस्स णं भंते! वइरोयणिंदस्स पुच्छा, अज्जो! पंच २ अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-सुभा निसुंभा रंभा निरंभा मदणा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए अट्ठट्ठ सेसं जहा चमरस्स, नवरं बलिचंचाए रायहाणीए, परियारो जहा मोउद्देसए, सेसं तं चेव, जाव मेहुणवत्तियं। बलिस्स णं भंते! वइरोयणिंदस्स वइरोयणरन्नो सोमस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ? अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-मीणगा सुभद्दा विजया असणी, तत्थ णं एगमेगाए देवीए सेसं जहा चमरसोमस्स, एवं जाव वेसमणस्स॥ धरणस्स णं भंते! नागकुमारिंदस्स नागकुमाररन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ?, अज्जो! छ अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ,तंजहा-इला सुक्का सदारा सोदामणी इंदा घणविज्जुया, तत्थ णं एगमेगाए देवीए छ छ देविसहस्सा परिवारो पन्नत्तो, पभू णं भंते! ताओ एगमेगाए देवीए अन्नाइं छ छ देविसहस्साइं परियारं विउव्वित्तए एवामेव सपुव्वावरेणं छत्तीसं देविसहस्साइं, सेत्तं तुडिए, पभू णं भंते! धरणे सेसं तं चेव, नवरं धरणाए रायहाणीए धरणंसि सीहासणंसि सओ परियाओ सेसं तं चेव। धरणस्स णं भंते! नागकुमारिंदस्स कालवालस्स लोगपालस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ?, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-असोगा विमला सुप्पभा सुदंसणा, तत्थ णं एगमेगाए अवसेसं जहा चमरस्स लोगपालाणं,एवं सेसाणं तिण्हवि। भूयाणंदस्स णं भंते! पुच्छा, अज्जो! छ अग्गमहिस्सीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-रूया रूयंसा सुरूया रुयगावती रुयकंता रुयप्पभा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए अवसेसं जहा धरणस्स,

भूयाणंदस्स णं भंते! नागवित्तस्स पुच्छा अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तंजहा-सुणंदा सुभद्दा सुजाया सुमणा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए अवसेसं जहा चमरलोगपालाणं एवं सेसाणं तिण्हवि लोगपालाणं, जे दाहिणिल्लाणिंदा तेसिं जहा धरणिंदस्स, लोगपालाणंपि तेसिं जहा धरणस्स लोगपालाणं, उत्तरिल्लाणं, इंदाणं जहा भूयाणंदस्स, लोगपालाणवि तेसिं जहा भूयाणंदस्स लोगपालाणं, नवरं इंदाणं सव्वेसिं रायहाणीओ सीहासणाणि य सरिसणामगाणि परियारो जहा तइयसए पढमे उद्देसए,लोगपालाणं सव्वेसिं रायहाणीओ सीहासणाणि य सरिसनामगाणि परियारो जहा चमरस्स लोगपालाणं। कालस्स णं भंते! पिसायिंदस्स पिसायरन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ?, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-कमला कमलप्पभा उप्पला सुदंसणा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए एगमेगं देविसहस्सं सेसं जहा चमरलोगपालाणं, परियारो तहेव, नवरं कालाए रायहाणीए कालंसि सीहासणंसि, सेसं तं चेव, एवं महाकालस्सवि। सुरूवस्स णं भंते! भूइंदस्स रन्नो पुच्छा, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ,तंजहा-रूववती बहुरूवा सुरूवा सुभगा, तत्थ णं एगमेगाए सेसं जहा कालस्स, एवं पडिरूवस्सवि। पुन्नभद्दस्स णं भंते! जक्खिंदस्स पुच्छा अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-पुन्ना बहुपुत्तिया उत्तमा तारया, तत्थ णं एगमेगाए सेसं जहा कालस्स, एवं माणिभद्दस्सवि। भीमस्स णं भंते! रक्खसिंदस्स पुच्छा, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा—पउमा पउमावती कणगा रयणप्पभा, तत्थ णं एगमेगा सेसं जहा कालस्स। एवं महाभीमस्सवि। किन्नरस्स णं

भंते! पुच्छा अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–वडेंसा केतुमती रतिसेणा रइप्पिया तत्थ णं सेसं तं चेव, एवं किंपुरिसस्सवि। सप्पुरिसस्स णं पुच्छा अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–रोहिणी नवमिया हिरी पुप्फवती, तत्थ णं एगमेगा०, सेसं तं चेव, एवं महापुरिसस्सवि। अतिकायस्स णं पुच्छा, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–भुयंगा भुयंगवती महाकच्छा फुडा, तत्थ णं०, सेसं तं चेव, एवं महाकायस्सवि। गीयरइस्स णं भंते! पुच्छा, अज्जो चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–सुघोसा विमला सुस्सरा सरस्सई, तत्थ णं०, सेसं तं चेव, एवं गीयजसस्सवि, सव्वेसिं एएसिं जहा कालस्स, नवरं सरिसनामियाओ रायहाणीओ सीहासणाणि य, सेसं तं चेव। चंदस्स णं भंते! जोइसिंदस्स जोइसरन्नो पुच्छा, अज्जो चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–चंदप्पभा दोसिणाभा अच्चिमाली पभंकरा एवं जहा जीवाभिगमे जोइसियउद्देसए तहेव, सूरस्सवि सूरप्पभा आयवाभा अच्चिमाली पभंकरा, सेसं तं चेव, जहा (जाव) नो चेव णं मेहुणवत्तियं। इंगालस्स णं भंते! महग्गहस्स कति अग्ग० पुच्छा, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–विजया वेजयंती जयंती अपराजिया, तत्थ णं एगमेगाए देवीए सेसं तं चेव जहा चंदस्स, नवरं इंगालवडेंसए विमाणे इंगालगंसि सीहासणंसि सेसं तं चेव, एवं जाव वियालगस्सवि, एवं अट्ठासीतीएवि महागहाणं भाणियव्वं जाव भावकेउस्स, नवरं वडेंसगा सीहासणाणि य सरिसनामगाणि, सेसं तं चेव। सक्कस्स णं भंते! देविंदस्स देवरन्नो पुच्छा, अज्जो! अट्ठ अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–पउमा सिवा सेया अंजू अमला अच्छरा नवमिया रोहिणी, तत्थ णं एगमेगाए

देवीए सोलस सोलस देविसहस्सा परिवारो पन्नत्तो, पभू णं ताओ एगमेगा देवी अन्नाइं सोलस देविसहस्सपरियारं विउव्वित्तए, एवामेव सपुव्वावरेणं अट्ठावीसुत्तरं देविसयसहस्सं परियारं विउव्वित्तए, सेत्तं तुडिए। पभू णं भंते! सक्के देविंदे देवराया सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि तुडिएणं सद्धिं सेसं जहा चमरस्स, नवरं परियारो जहा मोउद्देसए। सक्कस्स णं देविंदस्स देवरन्नो सोमस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ?, पुच्छा, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा—रोहिणी मदणा चित्ता सोमा, तत्थ णं एगमेगा० सेसं जहा चमरलोगपालाणं, नवरं सयंपभे विमाणे सभाए सुहम्माए सोमंसि सीहासणंसि, सेसं तं चेव एवं जाव वेसमणस्स, नवरं विमाणाइं जहा तइयसए। ईसाणस्स णं भंते! पुच्छा, अज्जो! अट्ठ अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा—कण्हा कण्हराई रामा रामरक्खिया वसू वसुगुत्ता वसुमित्ता वसुंधरा, तत्थ णं एगमेगाए०, सेसं जहा सक्कस्स। ईसाणस्स णं भंते! देविंदस्स सोमस्स महारण्णो कति अग्गमहिसीओ?, पुच्छा, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा—पुढवी रायी रयणी विज्जू, तत्थ णं०, सेसं जहा सक्कस्स लोगपालाणं, एवं जाव वरुणस्स, नवरं विमाणा जहा चउत्थसए, सेसं तं चेव जाव नो चेव णं मेहुणवत्तियं। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ॥ (सूत्रं ४०६)॥ १०-५॥

'तेण'मित्यादि, 'से तं तुडिए'त्ति तुडिकं नाम वर्गः, 'वइरामएसु'त्ति वज्रमयेषु 'गोलवट्टसमुग्गएसु'त्ति गोलकाकारा वृत्तसमुद्गकाः गोलवृत्तसमुद्गकास्तेषु 'जिणसकहाओ'त्ति 'जिनसक्थीनि' जिनास्थीनि 'अच्चणिज्जाओ'त्ति चन्दनादिना 'वंदणि-

ज्जाओ'त्ति स्तुतिभिः 'नमंसणिज्जाओ' प्रणामतः 'पूयणिज्जाओ' पुष्पैः 'सक्कारणिज्जाओ' वस्त्रादिभिः 'सम्माणणिज्जाओ' प्रतिपत्तिविशेषैः कल्याणमित्यादिबुद्ध्या 'पज्जुवासणिज्जाओ'त्ति, 'महयाहय' इह यावत्करणादिदं दृश्यं–नट्टगीयवाइयतंतीतलताल-तुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं'ति तत्र च महता–बृहता अहतानि–अच्छिन्नानि आख्यानकप्रतिबद्धानि वा यानि नाट्यगीतवादितानि तेषां तन्त्रीतलतालानां च 'तुडिय'त्ति शेषतूर्याणां च घनमृदङ्गस्य च–मेघसमानध्वनिमर्दलस्य पटुना पुरुषेण प्रवा-दितस्य यो रवः स तथा तेन प्रभुर्भोगभोगान् भुञ्जानो विहर्तुमित्युक्तं, तत्रैव विशेषमाह–'केवलं परियारिड्ढीए'त्ति 'केवलं' नवरं परि-चारः–परिचारणा स चेह स्त्रीशब्दश्रवणरूपसंदर्शनादिरूपः स एव ऋद्धिः–सम्पत् परिवारर्द्धिस्तया परिवारर्द्ध्या वा कलत्रादिपरिजन-परिचारणामात्रेणेत्यर्थः 'नो चेव णं मेहुणवत्तियं'ति नैव च मैथुनप्रत्ययं यथा भवति एवं भोगभोगान् भुञ्जानो विहर्तुं प्रभुरिति प्रकृतमिति॥ 'परियारो जहा मोउद्देसए'त्ति तृतीयशतस्य प्रथमोद्देशके इत्यर्थः 'सओ परिवारो'त्ति धरणस्य स्वकः परिवारो वाच्यः, स चैवं—'छहिं सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए तायत्तीसएहिं चउहिं लोगपालेहिं छहिं अग्गमहिसीहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं चउवीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहि य बहूहिं नागकुमारेहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे'त्ति 'एवं जहा जीवाभिगमे'इत्यादि, अनेन च यत्सूचितं तदिदं–'तत्थ णं एगमेगाए देवीए चत्तारि २ देविसाहस्सीओ परिवारो पन्नत्तो, पहू णं ताओ एगमेगा देवी अन्नाइं चत्तारि २ देवीसहस्साइं परिवारं विउव्वित्तए, एवामेव सपुव्वावरेणं सोलस देविसाहस्सीओ पन्नत्ताओ' इति 'सेत्तं तुडिय'मित्यादीति. 'एवं अट्ठासीतिएवि महागहाणं भाणियव्वं'ति, तत्र द्वयोर्वक्तव्यतोक्तैव शेषाणां तु लोहिता-क्षशनैश्चराघुणिकप्राघुणिककणककणकणादीनां सा वाच्येति। 'विमाणाइं जहा तइयसए'त्ति तत्र सोमस्योक्तमेव यमवरुणवैश्रमणानां

तु क्रमेण वरसिट्ठे सयंजले वग्गुत्ति विमाणा 'जहा चउत्थसए'त्ति क्रमेण च तानीशानलोकपालानामिमानि—'सुमणे सव्वओभद्दे वग्गू सुवग्गू'इति ॥ दशमशते पञ्चमोद्देशकः ॥ १०-५ ॥

---

पञ्चमोद्देशके देववक्तव्योक्ता, षष्ठे तु देवाश्रयविशेषं प्रतिपादयन्नाह—

कहिं णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो सभा सुहम्मा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जंबुद्दीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए एवं जहा रायप्पसेणइज्जे जाव पंच वडेंसगा पन्नत्ता, तंजहा—असोगवडेंसए जाव मज्झे सोहम्मवडेंसए, से णं सोहम्मवडेंसए महाविमाणे अद्धतेरस य जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं—एवं जह सूरियाभे तहेव माणं तहेव उववाओ । सक्कस्स य अभिसेओ तहेव जह सूरियाभस्स ॥ १ ॥ अलंकारअच्चणिया तहेव जाव आयरक्खत्ति, दो सागरोवमाइं ठिती । सक्के णं भंते ! देविंदे देवराया केमहिड्ढीए जाव गोयमा ! महिड्ढीए जाव महसोक्खे, से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं जाव विहरति केमहसोक्खे ?, एवं महड्ढिए जाव एवं महासोक्खे सक्के देविंदे देवराया । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ ( सूत्रं ४०७ ) ॥ १०-६ ॥

'कहिं ण'मित्यादि, 'एवं जहा रायप्पसेणएज्जे'इत्यादिकरणादेवं दृश्यं—'पुढवीए बहुसमरणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियगहगणनक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणाइं बहूइं जोयणसयाइं एवं सहस्साइं एवं सयसहस्साइं बहूओ जोयणकोडीओ बहूओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं वीइवइत्ता एत्थ णं सोहम्मे नामं कप्पे पन्नत्ते'इत्यादि, 'असोगवडेंसए' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—

सत्तवन्नवडेंसए चंपगवडेंसए चूयवडेंसए'त्ति, विवक्षिताभिधेयसूचिका चेयमतिदेशगाथा—'एवं जह सूरियाभे तहेव माणं तहेव उववाओ। सक्कस्स य अभिसेओ तहेव जह सूरियाभस्स ॥ १ ॥' इति, 'एवम्' अनेन क्रमेण यथा सूरिकाभे विमाने राजप्रश्नकृताख्यग्रन्थोक्तं प्रमाणमुक्तं तथैवास्मिन् वाच्यं, तथा यथा सूरिकाभाभिधानदेवस्य देवत्वेन तत्रोपपात उक्तस्तथैवोपपातः शक्रस्येह वाच्योऽभिषेकश्चेति, तत्र प्रमाणं—आयामविष्कम्भसम्बन्धि दर्शितं, शेषं पुनरिदम्—'ऊयालीसं च सयसहस्साइं बावन्नं सहस्साइं अट्ठ अडयाले जोयणसए परिक्खेवेणं'ति । उपपातश्चैवं—'तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के देविंदे देवराया अहुणोववन्नमेत्ते चेव समाणे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गच्छइ, तंजहा—आहारपज्जत्तीए ५' इत्यादि । अभिषेकः पुनरेवं—'तए णं सक्के देविंदे देवराया जेणेव अभिसेयसभा तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता अभिसेयसभं अणुप्पयाहिणीकरेमाणे २ पुरच्छिमिल्लेणं दारेणं अणुपविसइ जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सीहासणवरगते पुरच्छाभिमुहे निसन्ने, तए णं तस्स सक्कस्स ३ सामाणियपरिसोववन्नगा देवा आभिओगिए देवे सद्दावेंति सद्दवेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सक्कस्स ३ महत्थं महरिहं विउलं इंदाभिसेयं उवट्ठवेह'इत्यादि, 'अलंकार अच्चणिया य तहेव'त्ति यथा सूरिकाभस्य तथैवालङ्कारः अर्चनिका चेन्द्रस्य वाच्या, तत्रालङ्कारः—'तए णं से सक्के ३ तप्पढमयाए पम्हलसूमालाए सुरभीए गंधकासाईयाए गायाइं लूहेइ २ सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपइ २ नासानीसासवायवोज्झं चक्खुहरं वन्नफरिसजुत्तं हयलालापेलवातिरेगं धवलकणगखचियंतकम्मं आगासफालियसमप्पभं दिव्वं देवदूसजुयलं नियंसेति २ हारं पिणद्धेती'त्यादीति, अर्चनिकालेशस्त्वेवं—'तए णं से सक्के ३ सिद्धायतणं पुरच्छिमिल्लेणं दारेणं अणुप्पविसइ २ जेणेव देवच्छंदए जेणेव जिणपडिमा तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता जिणपडिमाणं आलोए पणामं करेइ २ लोमहत्थगं

गेण्हइ २ जिणपडिमाओ लोमहत्थएणं पमज्जइ २ जिणपडिमाओ सुरभिणा गंधोदएणं ण्हाणेइ'त्ति, 'जाव आयरक्ख'त्ति अर्चनिकायाः परो ग्रन्थस्तावद्वाच्यो यावदात्मरक्षाः, स चैवं लेशतः—'तए णं से सक्के ३ सभं सुहम्मं अणुप्पविसइ २ सीहासणे पुरच्छाभिमुहे निसीयइ, तए णं तस्स सक्कस्स ३ अवरुत्तरेणं उत्तरपुरच्छिमेणं चउरासीई सामाणियसाहस्सीओ निसीयंति पुरच्छिमेणं अट्ठ अग्गमहिसीओ दाहिणपुरच्छिमेणं अब्भितरिया परिसा बारस देवसाहस्सीओ निसीयंति दाहिणेणं मज्झिमियाए परिसाए चोद्दस देवसाहस्सीओ दाहिणपच्चत्थिमेणं बाहिरियाए परिसाए सोलस देवसाहस्सीओ पच्चत्थिमेणं सत्त अणियाहिवईणो, तए णं तस्स सक्कस्स ३ चउदिसिं चत्तारि आयरक्खदेवचउरासीसाहस्सीओ निसीयंती'त्यादीति, 'केमहड्ढीए' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'केमहज्जुइए केमहाणुभागे केमहायसे केमहाबले?'त्ति 'बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'चउरासीए सामाणियसाहस्सीणं तायत्तीसगाणं [ ग्रन्थाग्रम् ११००० ] अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं जाव अन्नेसिं च बहूणं जाव देवाणं देवीण य आहेवच्चं जाव कारेमाणे पालेमाणे'त्ति ॥ दशमशते षष्ठोद्देशकः ॥ १०-६ ॥

---

षष्ठोद्देशके सुधर्म्मसभोक्ता, सा चाश्रय इत्याश्रयाधिकारादाश्रयविशेषानन्तरद्वीपाभिधानान् मेरोरुत्तरदिग्वर्त्तिशिखरिपर्वतदंष्ट्रागतान् लवणसमुद्रान्तर्वर्त्तिनोऽष्टाविंशतिमभिधित्सुरष्टाविंशतिमुद्देशकानाह—

कहिन्नं भंते! उत्तरिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे नामं दीवे पन्नत्ते?, एवं जहा जीवाभिगमे तहेव निरवसेसं जाव सुद्धदंतदीवोत्ति, एए अट्ठावीसं उद्देसगा भाणियव्वा। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति ॥

॥ १०-३४ ॥ दसमं सयं समत्तं ॥ १० ॥

'कहि णं भंते! उत्तरिल्लाण'मित्यादि ॥ 'जहा जीवाभिगमे'इत्ययमतिदेशः पूर्वोक्तदाक्षिणात्यान्तरद्वीपवक्तव्यताऽनुसारेणावगन्तव्यः ॥ दशमशते चतुस्त्रिंशत्तम उद्देशकः समाप्तः ॥ १०-३४ ॥ समाप्तं दशमं शतम् ॥ १० ॥

इति गुरुजनशिक्षापार्श्वनाथप्रसादप्रसृततरपतत्रद्वन्द्वसामर्थ्यमाप्य ।
दशमशतविचारक्ष्माधराग्र्येऽधिरूढः, शकुनिशिशुरिवाहं तुच्छबोधाङ्गकोऽपि ॥ १ ॥

॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिवरविहितभगवतीवृत्तौ दशमं शतकं समाप्तम् ॥

## ॥ अथैकादशं शतकम् ॥

व्याख्यातं दशमं शतं, अथैकादशं व्याख्यायते, अस्य चायमभिसम्बन्धः-अनन्तरशतस्यान्तेऽन्तरद्वीपा उक्ताः, ते च वनस्पतिबहुला इति वनस्पतिविशेषप्रभृतिपदार्थस्वरूपप्रतिपादनायैकादशं शतं भवतीत्येवंसम्बद्धस्यास्योद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथा—

उप्पल १ सालु २ पलासे ३ कुंभी ४ नाली य ५ पउम ६ कन्नी ७ य। नलिण ८ सिव ९ लोग १० काला ११ ऽऽलंभिय १२ दस दो य एक्कारे ॥६६॥ उववाओ १ परिमाणं २ अवहारु ३ च्चत्त ४ बंध ५ वेदे ६ य। उदए ७ उदीरणाए ८ लेसा ९ दिट्ठी १० य नाणे ११ य ॥ ६७ ॥ जोगु १२ वओगे १३ वन्न १४ रसमाई १५ ऊसासगे १६ य आहारे १७। विरई १८ किरिया १९ बंधे २० सन्न २१ कसायि २२ त्थि २३ बंधे २४ य ॥६८॥ सन्नि २५ दिय २६

अणुबंधे २७ संवेहा २८ हार २९ ठिइ ३० समुग्घाए ३१ । चयणं ३२ मूलादीसु य उववाओ ३३ सव्वजीवाणं ॥३९॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—उप्पले णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, गोयमा ! एगजीवे नो अणेगजीवे, तेण परं जे अन्ने जीवा उववज्जंति ते णं णो एगजीवा अणेगजीवा । ते णं भंते ! जीवा कओहिंतो उववज्जंति ? किं नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरि० मणु० देवेहिंतो उववज्जंति? गोयमा ! नो नेरतिएहिंतो उववज्जंति तिरिक्खजोणिएहिंतोवि उववज्जन्ति माणुस्सेहिंतो० देवेहिंतोवि उववज्जंति, एवं उववाओ भाणियव्वो, जहा वक्कंतीए वणस्सइकाइयाणं जाव ईसाणेति १ । ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति २ । ते णं भंते ! जीवा समए २ अवहीरमाणा २ केवतिकालेणं अवहीरंति ?, गोयमा ! ते णं असंखेज्जा समए २ अवहीरमाणा २ असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणिओसप्पिणीहिं अवहीरंति, नो चेव णं अवहिया सिया ३ । तेसि णं भंते ! जीवाणं केमहालिया सरीरोगाहणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं सातिरेगं जोयणसहस्सं ४ । ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधगा अबंधगा ?, गोयमा ! नो अबंधगा, बंधए वा बंधगा वा एवं जाव अंतराइयस्स, नवरं आउयस्स पुच्छा गोयमा ! बंधए वा अबंधए वा बंधगा वा अबंधगा वा अहवा बंधए य अबंधए य अहवा बंधए य अबंधगा य अहवा बंधगा य अबंधए य अहवा बंधगा य अबंधगा य ८ एते अट्ठ भंगा ५ । ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं वेदगा अवेदगा ?, गोयमा ! नो अवे-

दगा, वेदए वा वेदगा वा एवं जाव अंतराइयस्स, ते णं भंते! जीवा किं सायावेयगा असायावेयगा?, गोयमा! सायावेदए वा असायावेयए वा अट्ठ भंगा ६। ते णं भंते! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं उदई अणुदई?, गोयमा! नो अणुदई, उदई वा उदइणो वा, एवं जाव अंतराइयस्स ७॥ ते णं भंते! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं उदीरगा०?, गोयमा! नो अणुदीरगा, उदीरए वा उदीरगा वा, एवं जाव अंतराइयस्स, नवरं वेयणिज्जाउएसु अट्ठ भंगा ८। ते णं भंते! जीवा किं कण्हलेसा नीललेसा काउलेसा तेउलेसा?, गोयमा! कण्हलेसे वा जाव तेउलेसे वा कण्हलेस्सा वा नीललेस्सा वा काउलेस्सा वा तेउलेसा वा अहवा कण्हलेसे य नीललेस्से य एवं एए दुयासंजोगतियासंजोगचउक्कसंजोगेणं असीती भंगा भवंति ९॥ ते णं भंते! जीवा किं सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी?, गोयमा! नो सम्मदिट्ठी नो सम्मामिच्छादिट्ठी मिच्छादिट्ठी वा मिच्छादिट्ठिणो वा १०। ते णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! नो नाणी अण्णाणी वा अन्नाणिणो वा ११। ते णं भंते! जीवा किं मणजोगी वयजोगी कायजोगी?, गोयमा! नो मणजोगी णो वयजोगी कायजोगी वा कायजोगिणो वा १२। ते णं भंते! जीवा किं सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता?, गोयमा! सागारोवउत्ते वा अणागारोवउत्ते वा अट्ठ भंगा १३। तेसि णं भंते! जीवाणं सरीरगा कतिवन्ना कतिगंधा कतिरसा कतिफासा पन्नत्ता?, गोयमा! पंचवन्ना पंचरसा दुगंधा अट्ठफासा पन्नत्ता, ते पुण अप्पणा अवन्ना अगंधा अरसा अफासा पन्नत्ता १४-१५॥ ते णं भंते! जीवा किं उस्सासा निस्सासा नो उस्सासनिसासा?, गोयमा! उस्सासए वा १ निस्सासए वा २ नो

उस्सासनिस्सासए वा ३ उस्सासगा वा ४ निस्सासगा वा ५ नो उस्सासनीसासगा वा ६, अहवा उस्सासए य निस्सासए य ४ अहवा उस्सासए य नो उस्सासनिस्सासए य ४ अहवा निस्सासए य नो उस्सासनीसासए य ४, अहवा ऊसासए य नीसासए य नो उस्सासनिस्सासए य अट्ठ भंगा ८ एए छव्वीसं भंगा भवंति २६ ॥

| कृ. | नी. | का. |
|---|---|---|
| १ | १ | १ |
| १ | १ | ३ |
| १ | ३ | १ |
| १ | ३ | ३ |
| ३ | ३ | ३ |
| ३ | १ | ३ |
| ३ | ३ | १ |
| ३ | ३ | ३ |

| | | |
|---|---|---|
| १ | २ | ३ |
| १ | २ | ३ |
| १ | ३ | ४ |
| २ | ३ | ४ |

चतुर्षु स्थानेष्वेतेऽष्टौ संयोज्याः तथा च ३२ भङ्गाः

एकयोगे एकत्व-बहुत्वाभ्यामष्टौ ८

द्विकयोगे चतुर्विंशति २४

त्रिकसंयोगे द्वात्रिंशत् ३२

चतुष्कसंयोगे षोडश भवन्ति १६

एवं सर्व-८०-

| | | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| २ | ३ | ४ | ३ | ४ | ४ | चत्वारः | १ | ३ | १ | ३ | एवं २४ |
| १ | १ | १ | २ | २ | ३ | षट्सु | १ | १ | ३ | ३ | |

| कृ. | नी. | का. | तै. |
|---|---|---|---|
| ३ | ३ | ३ | ३ |
| १ | १ | १ | १ |

चतुष्कसंयोगे १६ भङ्गाः

| | | | | | | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | ३ | १ | ३ | १ | ३ | १ | ३ | १ | ३ | १ | ३ | १ | ३ | १ | ३ |
| १ | १ | ३ | ३ | १ | १ | ३ | ३ | १ | १ | ३ | ३ | १ | १ | ३ | ३ |
| १ | १ | १ | १ | ३ | ३ | ३ | ३ | १ | १ | १ | १ | ३ | ३ | ३ | ३ |
| १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ |

एवं १६ भङ्गा ज्ञातव्या

एकयोगे ६

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| नी. | १ | ३ | १ | ३ |
| उ. | १ | १ | ३ | ३ |
| नी. | १ | ३ | १ | ३ |
| उ. | १ | १ | ३ | ३ |
| नी. | १ | ३ | १ | ३ |
| नी. | १ | १ | ३ | ३ |

एवं १२

त्रिकयोगे ८ भङ्गाः

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | ३ | १ | ३ | १ | ३ | १ | ३ |
| १ | १ | ३ | ३ | १ | १ | ३ | ३ |
| १ | १ | १ | १ | ३ | ३ | ३ | ३ |

एवं ८ सर्व २६ भङ्गाः

ते णं भंते! जीवा किं आहारगा अणाहारगा ?, गोयमा! नो अणाहारगा आहारए वा अणाहारए वा एवं अट्ठ भंगा १७। ते णं भंते! जीवा किं विरता अविरता विरताविरता ?, गोयमा! नो विरता नो विरयाविरया अविरए वा अविरया वा १८। ते णं भंते! जीवा किं सकिरिया अकिरिया ?, गोयमा! नो अकिरिया, सकिरिए वा सकिरिया वा १९। ते णं भंते! जीवा किं सत्तविहबंधगा अट्ठ-

विहवंधगा, ?, गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा अट्ठ भंगा २० । ते णं भंते ! जीवा किं आहारसन्नोवउत्ता भयसन्नोवउत्ता मेहुणसन्नोवउत्ता परिग्गहसन्नोवउत्ता ?, गोयमा ! आहारसन्नोवउत्ता वा असीती भंगा २१ । ते णं भंते ! जीवा किं कोहकसाई माणकसाई मायाकसाई लोभकसाई ?, असीती भंगा २२ । ते णं भंते ! जीवा किं इत्थीवेदगा पुरिसवेदगा नपुंसगवेदगा ?, गोयमा ! नो इत्थिवेदगा नो पुरिसवेदगा नपुंसगवेदए वा नपुंसगवेदगा वा २३ । ते णं भंते ! जीवा किं इत्थीवेदबंधगा पुरिसवेदबंधगा नपुंसगवेदबंधगा ?, गोयमा ! इत्थिवेदबंधए वा पुरिसवेदबंधए वा नपुंसगवेयबंधए वा छव्वीसं भंगा २४ । ते णं भंते ! जीवा किं सन्नी असन्नी ?, गोयम ! नो सन्नी असन्नी वा असन्निणो वा २५ । ते णं भंते ! जीवा किं सइंदिया अणिंदिया ?, गोयमा ! नो अणिंदिया, सइंदिए वा सइंदिया वा २६ । से णं भंते ! उप्पलजीवेति कालतो केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं २७ । से णं भंते ! उप्पलजीवे पुढविजीवे पुणरवि उप्पलजीवेत्ति केवतियं कालं सेवेज्जा ?, केवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा, से णं भंते ! उप्पलजीवे आउजीवे एवं चेव एवं जहा पुढविजीवे भणिए तहा जाव वाउजीवे भाणियव्वे, से णं भंते ! उप्पलजीवे से वणस्सइजीवे से पुणरवि उप्पलजीवेत्ति केवइयं कालं सेवेज्जा केवतियं कालं गतिरागतिं कज्जइ ?, गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अणंताइं भवग्गहणाइं, काला-

एसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं अणंतं कालं—तरुकालं, एवइयं कालं सेवेज्जा एवइयं कालं गतिरागतिं कज्जइ, से णं भंते ! उप्पलजीवे बेइंदियजीवे पुणरवि उप्पलजीवेत्ति केवइयं कालं सेवेज्जा केवइयं कालं गतिरागतिं कज्जइ ?, गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं संखेज्जाइं भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं संखेज्जं कालं एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं कज्जइ, एवं तेइंदियजीवे, एवं चउरिंदियजीवेवि, से णं भंते ! उप्पलजीवे पंचेंदियतिरिक्खजोणियजीवे पुणरवि उप्पलजीवेत्ति पुच्छा, गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ताइं उक्कोसेणं पुव्वकोडिपुहुत्ताइं एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा, एवं मणुस्सेणवि समं जाव एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा २८। ते णं भंते ! जीवा किमाहारमाहारेंति ?, गोयमा ! दव्वओ अणंतपएसियाइं दव्वाइं एवं जहा आहारुद्देसए वणस्सइकाइयाणं आहारो तहेव जाव सव्वप्पणयाए आहारमाहारेंति नवरं नियमा छद्दिसिं सेसं तं चेव २९। तेसि णं भंते ! जीवाणं केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं दस वाससहस्साइं ३०। तेसि णं भंते ! जीवाणं कति समुग्घाया पण्णत्ता ?, गोयमा ! तओ समुग्घाया पण्णत्ता, तंजहा—वेदणासमुग्घाए कसायस० मारणंतियस० ३१। ते णं भंते ! जीवा मारणंतियसमुग्घाएणं किं समोहया मरंति असमोहया मरंति ?, गोयमा ! समोहयावि मरंति असमोहयावि मरंति ३२। ते णं भंते ! जीवा अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति किं नेरइएसु उववज्जंति तिरिक्खजो-

णिएसु उवव० एवं जहा वक्कंतीए उव्वट्टणाए वणस्सइकाइयाणं तहा भाणियव्वं। अह भंते! सव्वपाणा सव्वभूया सव्वजीवा सव्वसत्ता उप्पलमूलत्ताए उप्पलकंदत्ताए उप्पलनालत्ताए उप्पलपत्तत्ताए उप्पलकेसरत्ताए उप्पलकन्नियत्ताए उप्पलथिभुगत्ताए उववन्नपुव्वा?, हंता गोयमा! असतिं अदुवा अणंतक्खुत्तो। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ३३॥ ( सूत्रं ४०९ )॥ उप्पलुद्देसए॥ ११-१॥

'उप्पले'त्यादि, उत्पलार्थः प्रथमोद्देशकः १ 'सालु'त्ति शालूकं-उत्पलकन्दस्तदर्थो द्वितीयः २ 'पलासे'त्ति पलाशः-किंशुकस्तदर्थस्तृतीयः ३ 'कुंभो'ति वनस्पतिविशेषस्तदर्थश्चतुर्थः ४ 'नाडीय'त्ति नाडीवद्यस्य फलानि स नाडीको वनस्पतिविशेष एव तदर्थः पञ्चमः ५ 'पउम'त्ति पद्मार्थः षष्ठः ६ 'कन्नीय'त्ति कर्णिकार्थः सप्तमः ७ 'नलिण'त्ति नलिनार्थोऽष्टमः ८ यद्यपि चोत्पलपद्मनलिनानां नामकोशे एकार्थतोच्यते तथाऽपीह रूढेर्विशेषोऽवसेयः, 'सिव'त्ति शिवराजर्षिवक्तव्यतार्थो नवमः ९ 'लोग'त्ति लोकार्थो दशमः १० 'कालालभिए'त्ति कालार्थ एकादशः ११ आलभिकायां नगर्यां यत्प्ररूपितं तत्प्रतिपादक उद्देशकोऽप्यालभिक इत्युच्यते ततोऽसौ द्वादश १२, 'दस दो य एक्कारि'त्ति द्वादशोद्देशका एकादशे शते भवन्तीति। तत्र प्रथमोद्देशकद्वारसङ्ग्रहगाथा वाचनान्तरे दृष्टास्ताश्चेमाः 'उववाओ'इत्यादि, एतासां चार्थ उद्देशकार्थाधिगमगम्य इति॥ 'उप्पले णं भंते! एगपत्तए'इत्यादि, 'उत्पलं' नीलोत्पलादि एकं पत्रं यत्र तदेकपत्रकं अथवा एकं च तत्पत्रं चैकपत्रं तदेवैकपत्रकं तत्र सति, एकपत्रकं चेह किशलयावस्थाया उपरि द्रष्टव्यम्, 'एगजीवे'त्ति यदा हि एकपत्रावस्थं तदैकजीवं तत्, यदा तु द्वितीयादिपत्रं तेन समारब्धं भवति तदा नैकपत्रावस्था तस्येति बहवो जीवास्तत्रोत्पद्यन्त इति, एतदेवाह—'तेण पर'मित्यादि, 'तेण परं'ति ततः-प्रथमपत्रात् परतः 'जे अन्ने जीवा उववज्जंति'त्ति

येऽन्ये—प्रथमपत्रव्यतिरिक्ता जीवा जीवाश्रयत्वात्पत्रादयोऽवयवा उत्पद्यन्ते ते 'नैकजीवाः' नैकजीवाश्रयाः किन्त्वनेकजीवाश्रया इति, अथवा 'तेणे'त्यादि, ततः—एकपत्रात्परतः शेषपत्रादिष्वित्यर्थः येऽन्ये जीवा उत्पद्यन्ते ते 'नैकजीवाः' नैकका: किन्त्वनेकजीवा अनेके इत्यर्थः ॥ 'ते णं भंते! जीव'त्ति ये उत्पले प्रथमपत्राद्यवस्थायामुत्पद्यन्ते 'जहा वक्कंतीए'त्ति प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे, स चैवमुपपातः—'जइ तिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा! एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतोवि उववज्जंति'इत्यादि, एवं मनुष्यभेदा वाच्याः, 'जइ देवेहिंतो उववज्जंति किं भवणवासी'त्यादि प्रश्नो निर्वचनं च ईशानान्तदेवेभ्य उत्पद्यन्त इत्युपयुज्य वाच्यमिति, तदेतेनोपपात उक्तः ॥ 'जहन्नेणं एक्को वे'-त्यादिना तु परिमाणम् २। 'ते णं असंखेज्जा समए'इत्यादिना त्वपहार उक्तः, एवं द्वारयोजना कार्या ३। उच्चत्वद्वारे 'साइरेगं जोयणसहस्सं'ति तथाविधसमुद्रगोतीर्थकादाविदमुच्चत्वमुत्पलस्यावसेयम् ४। बन्धद्वारे 'बंधए बंधया व'त्ति एकपत्रावस्थायां बन्धक एकत्वात् द्व्यादिपत्रावस्थायां च बन्धका बहुत्वादिति, एवं सर्वकर्मसु, आयुष्के तु तदबन्धावस्थाऽपि स्यात् तदपेक्षया चाबन्धकोऽपि अबन्धका अपि च भवन्तीति, एतदेवाह—'नवर'मित्यादि, इह बन्धकाबन्धकपदयोरेकत्वयोगे एकवचनेन द्वौ विकल्पौ बहुवचनेन च द्वौ, द्विकयोगे तु यथायोगमेकत्वबहुत्वाभ्यां चत्वारः इत्येवमष्टौ विकल्पाः, स्थापना—बं १, अ १, बं ३, अ ३, बं १ अ १, बं १ अ ३, बं ३ अ १, बं ३ अबं ३। ५। वेदनद्वारे ते भदन्त! जीवा ज्ञानावरणीयस्य कर्मणः किं वेदका अवेदकाः?, अत्रापि एकपत्रतायामेकवचनान्तता अन्यत्र तु बहुवचनान्तता एवं यावदन्तरायस्य, वेदनीये सातासाताभ्यां पूर्ववदष्टौ भङ्गाः, इह च सर्वत्र प्रथमपत्रापेक्षयैकवचनान्तता, ततः परं तु बहुवचनान्तता, वेदनं अनुक्रमोदितस्योदीरणोदीरितस्य वा कर्म्मणोऽनुभवः, उदयश्चानुक्र-

मोदितस्यैवेति वेदकत्वप्ररूपणेऽपि भेदेनोदयित्वप्ररूपण ७ मिति ॥ उदीरणाद्वारे 'नो अणुदीरग'त्ति तस्यामवस्थायां तेषामनुदीरकत्वस्यासम्भवात्। 'वेयणिज्जाउएसु अट्ठ भंग'त्ति वेदनीये—सातासातापेक्षया आयुषि पुनरुदीरकत्वानुदीरकत्वापेक्षयाऽष्टौ भङ्गाः, अनुदीरकत्वं चायुष उदीरणायाः कादाचित्कत्वादिति ॥ लेश्याद्वारेऽशीतिर्भङ्गाः, कथम्?, एककयोगे एकवचनेन चत्वारो बहुवचनेनापि चत्वार एव, द्विकयोगे तु यथायोगमेकवचनबहुवचनाभ्यां चतुर्भङ्गी, चतुर्णां च पदानां षड् द्विकयोगास्ते च चतुर्गुणाश्चतुर्विंशतिः, त्रिकयोगे तु त्रयाणां पदानामष्टौ भङ्गाः, चतुर्णां च पदानां चत्वारस्त्रिकसंयोगास्ते चाष्टाभिर्गुणिता द्वात्रिंशत्, चतुष्कसंयोगे तु षोडश भङ्गाः, सर्वमीलने चाशीतिरिति, अत एवोक्तं 'गोयमा! कण्हलेसे वे'त्यादि ॥ वर्णादिद्वारे 'ते पुण अप्पणा अवन्न'त्ति शरीराण्येव तेषां पञ्चवर्णादीनि ते पुनरुत्पलजीवाः 'अप्पण'त्ति स्वरूपेण 'अवर्णा' वर्णादिवर्जिताः अमूर्त्तत्वात्तेषामिति ॥ उच्छ्वासकद्वारे 'नो उस्सासनिस्सासए'त्ति अपर्याप्तावस्थायाम्, इह च षड्विंशतिर्भङ्गाः, कथम्?, एककयोगे एकवचनान्तास्त्रयः बहुवचनान्ता अपि त्रयः, द्विकयोगे तु यथायोगमेकत्वबहुत्वाभ्यां तिस्रश्चतुर्भङ्गिका इति द्वादश, त्रिकयोगे त्वष्टाविति, अत एवाह—'एए छव्वीसं भंगा भवंति'त्ति ॥ आहारकद्वारे 'आहारए वा अणाहारए व'त्ति विग्रहगतावनाहारकोऽन्यदा त्वाहारकस्तत्र चाष्टौ भङ्गाः पूर्ववत्। सञ्ज्ञाद्वारे कषायद्वारे चाशीतिर्भङ्गाः लेश्याद्वारवद्याख्येयाः। 'से णं भंते! उप्पलजीवे'त्ति इत्यादिनोत्पलत्वस्थितिरनुबन्धपर्यायतयोक्ता। 'से णं भंते! उप्पलजीवे पुढवीजीवे'त्ति इत्यादिना तु संवेधस्थितिरुक्ता, तत्र च 'भवादेसेणं'ति भवप्रकारेण भवमाश्रित्येत्यर्थः 'जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं'ति एकं पृथिवीकायिकत्वे ततो द्वितीयमुत्पलत्वे ततः परं मनुष्यादिगतिं गच्छेदिति। 'कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्त'त्ति पृथिवीत्वेनान्तर्मुहूर्त्तं पुनरुत्पलत्वेनान्तर्मुहूर्त्तमित्येवं कालादेशेन

जघन्यतो द्वे अन्तर्मुहूर्त्ते इति, एवं द्वीन्द्रियादिषु नेयम्, उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं'ति चत्वारि पञ्चेन्द्रियतिरश्चश्चत्वारि चोत्पलस्येत्येवमष्टौ भवग्रहणान्युत्कर्षत इति, 'उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहुत्तं'ति चतुर्षु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्भवग्रहणेषु चतस्रः पूर्वकोट्यः, उत्कृष्टकालस्य विवक्षितत्वेनोत्पलकायोद्वृत्तजीवयोग्योत्कृष्टपञ्चेन्द्रियतिर्यक्स्थितेर्ग्रहणात्, उत्पलजीवितं त्वेतास्वधिकमित्येवमुत्कृष्टतः पूर्वकोटीपृथक्त्वं भवतीति । 'एवं जहा आहारुद्देसए वणस्सइकाईयाण'मित्यादि, अनेन च यदतिदिष्टं तदिदं—'खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं कालओ अन्नयरकालट्ठिइयाइं भावओ वन्नमंताइं'इत्यादि, 'सव्वप्पणयाए'त्ति सर्वात्मना'नवरं नियमा छद्दिसिं'ति पृथिवीकायिकादयः सूक्ष्मतया निष्कुटगतत्वेन स्यादिति स्यात् तिसृषु दिक्षु स्याच्चतसृषु दिक्षु इत्यादिनापि प्रकारेणाहारमाहारयन्ति, उत्पलजीवास्तु बादरत्वेन तथाविधनिष्कुटेष्वभावान्नियमात्षट्सु दिक्ष्वाहारयन्तीति। 'वक्कंतीए'त्ति प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे 'उव्वट्टणाए'त्ति उद्वर्त्तनाधिकारे, तत्र चेदमेवं सूत्रं—'मणुएसु उववज्जंति देवेसु उववज्जंति ?, गोयमा ! नो नेरइएसु उववज्जंति तिरिएसु उववज्जंति मणुएसु उववज्जंति नो देवेसु उववज्जंति' 'उप्पलकेसरताए'त्ति इह केसराणि—कर्णिकायाः परितोऽवयवाः 'उप्पलकन्नियत्ताए'त्ति इह तु कर्णिका—बीजकोशः 'उप्पलथिभुगत्ताए'त्ति थिभुगा च यतः पत्राणि प्रभवन्ति ॥ एकादशशते प्रथमोद्देशकः ॥ ११-१ ॥

---

सालुए णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, गोयमा ! एगजीवे एवं उप्पलुद्देसगवत्तव्वया अपरिसेसा भाणियव्वा जाव अणंतखुत्तो, नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं धणुपुहुत्तं, सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ ( सूत्र ४१० ) ११-२ ॥

पलासे णं भंते! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे?, एवं उप्पलुद्देसगवत्तव्वया अपरिसेसा भाणियव्वा, नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं गाउयपुहुत्ता, देवा एएसु न उववज्जंति। लेसासु ते णं भंते! जीवा किं कण्हलेसे नीललेसे काउलेसे०?, गोयमा! कण्हलेसे वा नीललेस्से वा काउलेस्से वा छव्वीसं भंगा, सेसं तं चेव। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ( सूत्रं ४११ ) ॥ ११-३ ॥

कुंभिए णं भंते! जीवे एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे?, एवं जहा पलासुद्देसए तहा भाणियव्वे, नवरं ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं वासपुहुत्तं, सेसं तं चेव। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ (सू०४१२) ॥ ११-४ ॥

नालिए णं भंते! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे?, एवं कुंभिउद्देसगवत्तव्वया निरवसेसा भाणियव्वा। सेवं भंते! सेवं भंते त्ति ॥ ( सूत्रं ४१३ ) ॥ ११-५ ॥

पउमे णं भंते! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे?, उप्पलुद्देसगवत्तव्वया निरवसेसा भाणियव्वा। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ ( सूत्रं ४१४ ) ॥ ११-६ ॥

कन्निए णं भंते! एगपत्तए किं एगजीवे०?, एवं चेव निरवसेसं भाणियव्वं। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति ॥ ( सूत्रं ४१५ ) ११-७ ॥

नलिणे णं भंते! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे?, एवं चेव निरवसेसं जाव अणंतक्खुत्तो ॥ सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ( सूत्रं ४१६ ) ॥ ११-८ ॥



प्र०आ०५१३

शाल्कोद्देशकादयः सप्तोद्देशकाः प्राय उत्पलोद्देशकसमानगमाः, विशेषः पुनर्यो यत्र स तत्र सूत्रसिद्ध एव, नवरं पलाशोद्देशके यदुक्तं 'देवेसु न उववज्जंति'त्ति तस्यायमर्थः–उत्पलोद्देशके हि देवेभ्य उद्वृत्ता उत्पद्यन्त इत्युक्तमिह तु पलाशे नोत्पद्यन्त इति वाच्यम्, अप्रशस्तत्वात्तस्य, यतस्ते प्रशस्तेष्वेवोत्पलादिवनस्पतिषूत्पद्यन्त इति। तथा 'लेसासु'त्ति लेश्याद्वारे इदमध्येयमिति वाक्यशेषः, तदेव दर्श्यते—'ते णं'मित्यादि, इयमत्र भावना–यदा किल तेजोलेश्यायुतो देवो देवभवादुद्वृत्त्य वनस्पतिषूत्पद्यते तदा तेषु तेजोलेश्या लभ्यते, न च पलाशे देवत्वोद्वृत्त उत्पद्यते पूर्वोक्तयुक्तेः, एवं चेह तेजोलेश्या न संभवति, तदभावादाद्या एव तिस्रो लेश्या इह भवन्ति, एतासु च षड्विंशतिर्भङ्गकाः, त्रयाणां पदानामेतावतामेव भावादिति। एतेषु चोद्देशकेषु नानात्वसङ्ग्रहार्थास्तिस्रो गाथाः–"सालंमि धणुपुहुत्तं होइ पलासे य गाउयपुहत्तं। जोयणसहस्समहियं अवसेसाणं तु छण्हंपि ॥१॥ कुंभीइ नालियाए वासपुहुत्तं ठिई उ बोद्धवा। दस वाससहस्साइं अवसेसाणं तु छण्हंपि ॥ २ ॥ कुंभीइ नालियाए होंति पलासे य तिन्नि लेसाओ। चत्तारि उ लेसाओ अवसेसाणं तु पंचण्हं ॥ ३ ॥" एकादशशते द्वितीयादयोऽष्टमान्ताः ॥ ११–८ ॥

---

अनन्तरमुत्पलादयोऽर्था निरूपिताः, एवंभूतांश्चार्थान् सर्वज्ञ एव यथावज्ज्ञातुं समर्थो, न पुनरन्यो, द्वीपसमुद्रानिव शिवराजर्षिः, इति सम्बन्धेन शिवराजर्षिसंविधानकं नवमोद्देशकं प्राह, तस्य चेदमादिसूत्रम्

तेणं कालेणं तेणं समएणं हत्थिणापुरे नामं नगरे होत्था वन्नओ, तस्स णं हत्थिणागपुरस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभागे एत्थ णं सहसंबवणे णामं उज्जाणे होत्था सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे रम्मे णंदणवणसं-

निप्पगासे सुहसीयलच्छाए मणोरमे सादुफले अकंटए पासादीए जाव पडिरूवे, तत्थ णं हत्थिणापुरे नगरे सिवे नामं राया होत्था महयाहिमवंत० वन्नओ, तस्स णं सिवस्स रन्नो धारिणी नामं देवी होत्था सुकुमालपाणिपाया वन्नओ, तस्स णं सिवस्स रन्नो पुत्ते धारणीए अत्तए सिवभद्दए नामं कुमारे होत्था सुकुमाल० जहा सूरियकंत जाव पच्चुवेक्खमाणे पच्चुवेक्खमाणे विहरइ, तए णं तस्स सिवस्स रन्नो अन्नया कयावि पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि रज्जधुरं चिंतेमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–अत्थि ता मे पुरा पोराणाणं जहा तामलिस्स जाव पुत्तेहिं वड्ढामि पसूहिं वड्ढामि रज्जेणं वड्ढामि एवं रट्ठेणं बलेणं वाहणेणं कोसेणं कोट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं वड्ढामि विपुलधणकणगरयणजावसंतसारसावएज्जेणं अतीव २ अभिवड्ढामि तं किन्नं अहं पुरा पोराणाणं जाव एगंतसोक्खयं उव्वेहमाणे विहरामि ? तं जाव ताव अहं हिरन्नेणं वड्ढामि तं चेव जाव अभिवड्ढामि जाव मे सामंतरायाणोऽवि वसे वट्टंति ताव ता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते सुबहुं लोहीलोहकडाहकडुच्छुयं तंबियं तावसभंडगं घडावेत्ता सिवभद्दं कुमारं रज्जे ठावेत्ता तं सुबहुं लोहीलोहकडाहकडुच्छुयं तंबियं तावसभंडगं गहाय जे इमे गंगाकूले वाणपत्था तावसा भवंति, तं :—होत्तिया पोत्तिया कोत्तिया जन्नई सड्ढई थालई हुंबउट्ठ दंतुक्खलिया उम्मज्जया संमज्जगा निमज्जगा संपक्खाला उद्धकंडूयगा अहोकंडूयगा दाहिणकूलगा उत्तरकूलगा संखधमया कूलधमगा मितलुद्धा हत्थितावसा जलाभिसेयकिढिणगाया अंबुवासिणो वाउवासिणो वक्कलवासिणो जलवासिणो चेलवासिणो अंबुभक्खिणो वायभक्खिणो सेवालभक्खिणो मूलाहारा कंदाहारा पत्ताहारा तयाहारा

पुप्फाहारा फलाहारा बीयाहारा परिसडियकंदमूलपंडुपत्तपुप्फफलाहारा उदंडा रुक्खमूलिया मंडलिया वणवासिणो दिसापोक्खिया आयावणाहिं पंचग्गितावेहिं इंगालसोल्लियंपिव कंडुसोल्लियंपिव कट्ठसोल्लियंपिव अप्पाणं जाव करेमाणा विहरंति [जहा उववाइए जाव कट्ठसोल्लियंपिव अप्पाणं करेमाणा विहरंति] ॥ तत्थ णं जे ते दिसापोक्खियतावसा तेसिं अंतियं मुंडे भवित्ता दिसापोक्खियतावसत्ताए पव्वइत्तए, पव्वइएवि य णं समाणे अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हिस्सामि–कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं दिसाचक्कवालेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ जाव विहरित्तएत्तिकट्टु, एवं संपेहेति संपेहेत्ता कल्लं जाव जलंते सुबहुं लोहीलोह जाव घडावेत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हत्थिणागपुरं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं आसिय जाव तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से सिवे राया दोच्चंपि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेंत्ति २ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सिवभद्दस्स कुमारस्स महत्थं ३ विउलं रायाभिसेयं उवट्ठवेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव जाव उवट्ठवेंति, तए णं से सिवे राया अणेगगणनायगदंडनायग जाव संधिपाल सद्धिं संपरिवुडे सिवभद्दं कुमारं सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहं निसीयावेन्ति २ अट्ठसएणं सोवन्नियाणं कलसाणं जाव अट्ठसएणं भोमेज्जाणं कलसाणं सव्विड्ढीए जाव रवेणं महया २ रायाभिसेएणं अभिसिंचइ २ पम्हलसुकुमालाए सुरभिए गंधकासाईए गायाइं लूहेइ पम्ह० २ सरसेणं गोसीसेणं एवं जहेव जमालिस्स अलंकारो तहेव जाव कप्परुक्खगंपिव अलंकियविभूसियं करेंति २ करयल जाव कट्टु सिवभद्दं कुमारं जएणं विजएणं वद्धावेंति जएणं विजएणं

वद्धावेत्ता ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं जहा उववाइए कोणियस्स जाव परमाउं पालयाहि इट्ठजणसंपरिवुडे हत्थिणपुरस्स नगरस्स अन्नेसिं च बहूणं गामागरनगर जाव विहराहित्तिकट्टु जयजयसद्दं पउंजंति, तए णं से सिवभद्दे कुमारे राया जाए महया हिमवंत० वन्नओ जाव विहरइ, तए णं से सिवे राया अन्नया कयाइं सोभणंसि तिहिकरणदिवसमुहुत्तनक्खत्तंसि विपुलं असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडावेंति उवक्खडावेत्ता मित्तणाइनियगजावपरिजणं रायाणो य खत्तिया आमंतेति आमंतेत्ता तओ पच्छा ण्हाए जाव सरीरे भोयणवेलाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए तेणं मित्तणातिनियगसयण जाव परिजणेणं राएहि य खत्तिएहि य सद्धिं विपुलं असणपाणखाइमसाइमं एवं जहा तामली जाव सक्कारेति संमाणेति सक्कारेत्ता संमाणेत्ता तं मित्तणाति जाव परिजणं रायाणो य खत्तिए य सिवभद्दं च रायाणं आपुच्छइ आपुच्छित्ता सुबहुं लोहीलोहकडाहकडुच्छुयं जाव भंडगं गहाय जे इमे गंगाकूलगा वाणपत्था तावसा भवंति तं चेव जाव तेसिं अंतियं मुंडे भवित्ता दिसापोक्खियतावसत्ताए पव्वइए, पव्वइएऽविय णं समाणे अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ—कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठं तं चेव जाव अभिग्गहं अभिगिण्हइ २ पढमं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तए णं से सिवे रायरिसी पढमछट्ठक्खमणपारणगंसि आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ आयावणभूमिओ पच्चोरुहित्ता वागलवत्थनियत्थे जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता किढिणसंकाइयगं गिण्हइ गिण्हित्ता पुरच्छिमं दिसं पोक्खेइ पुरच्छिमाए दिसाए सोमे महाराया पत्थाणे पत्थियं अभिरक्खउ सिवं रायरिसिं अभि० २, जाणि य

तत्थ कंदाणि य मूलाणि य तयाणि य पत्ताणि य पुप्फाणि य फलाणि य बीयाणि य हरियाणि य ताणि अणुजाणउत्ति कट्टु पुरच्छिमं दिसं पसरति पुर० २ जाणि य तत्थ कंदाणि य जाव हरियाणि य ताइं गेण्हइ २ किढिणसंकाइयं भरेइ कढि० २ दब्भे य कुसे य समिहाओ य पत्तामोडं च गेण्हेइ २ जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ २ किढिणसंकाइयगं ठवेइ किढि० २ वेदिं वड्ढेइ २ उवलेवणसंमज्जणं करेइ उ० २ दब्भसगब्भकलसाहत्थगए जेणेव गंगा महानदी तेणेव उवागच्छइ गंगामहानदीं ओगाहेति २ जलमज्जणं करेइ २ जलकीडं करेइ २ जलाभिसेयं करेति २ आयंते चोक्खे परमसुइभूए देवयपितिकयकज्जे दब्भसगब्भकलसाहत्थगए गंगाओ महानईओ पच्चुत्तरइ २ जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता दब्भेहि य कुसेहि य वालुयाएहि य वेतिं रएति वेतिं रएत्ता सरएणं अरणिं महेति सर० २ अग्गिं पाडेति २ अग्गिं संधुक्केइ २ समिहाकट्ठाइं पक्खिवइ समिहाकट्ठाइं पक्खिवित्ता अग्गिं उज्जालेइ अग्गिं उज्जालेत्ता—'अग्गिस्स दाहिणे पासे, सत्तंगाइं समादहे । तं०–सकहं वक्कलं ठाणं, सिज्जाभंडं कमंडलुं ॥ ७० ॥ दंडदारुं तहा पाणं, अहे ताइं समादहे ॥ महुणा य घएण य तंदुलेहि य अग्गिं हुणइ, अग्गिं हुणित्ता चरुं साहेइ, चरुं साहेत्ता बलिं वइस्सदेवं करेइ बलिं वइस्सइदेवं करेत्ता अतिहिपूयं करेइ अतिहिपूयं करेत्ता तओ पच्छा अप्पणा आहारमाहारेति, तए णं से सिवे रायरिसी दोच्चं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तए णं से सिवे रायरिसी दोच्चे छट्ठक्खमणपारणगंसि आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ आयावण० २ एवं जहा पढमपारणगं नवरं दाहिणगं दिसं पोक्खेति २ दाहिणाए

दिसाए जमे महाराया पत्थाणे पत्थियं सेसं तं चेव आहारमाहारेइ, तए णं से सिवरायरिसी तच्चं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरति, तए णं से सिवे रायरिसी सेसं तं चेव नवरं पच्चच्छिमाए दिसाए वरुणे महाराया पत्थाणे पत्थियं सेसं तं चेव जाव आहारमाहारेइ, तए णं से सिवे रायरिसी चउत्थं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तए णं से सिवे रायरिसी चउत्थं छट्ठक्खमणं एवं तं चेव नवरं उत्तरदिसं पोक्खेइ उत्तराए दिसाए वेसमणे महाराया पत्थाणे पत्थियं अभिरक्खउ सिवं, सेसं तं चेव जाव तओ पच्छा अप्पणा आहारमाहारेइ (सूत्रं ४१७) तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं दिसाचक्कवालेणं जाव आयावेमाणस्स पगइभद्दयाए जाव विणीययाए अन्नया कयावि तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स विब्भंगे नामं अन्नाणे समुप्पन्ने, से णं तेणं विब्भंगनाणेणं समुप्पन्नेणं पासइ अस्सिं लोए सत्त दीवे सत्त समुद्दे तेण परं न जाणति न पासति, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था— अत्थि णं ममं अइसेसे नाणदंसणे समुप्पन्ने, एवं खलु अस्सिं लोए सत्त दीवा सत्त समुद्दा, तेण परं वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, एवं संपेहेइ एवं० २ आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ आ० २ वागलवत्थनियत्थे जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ २ सुबहुं लोहीलोहकडाहकडुच्छुयं जाव भंडगं किढिणसंकाइयं च गेण्हइ २ जेणेव हत्थिणापुरे नगरे जेणेव तावसावसहे तेणेव उवागच्छइ उवा० २ भंडनिक्खेवं करेइ २ हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडगतिग-जावपहेसु बहुजणस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ—अत्थि णं देवाणुप्पिया! ममं अतिसेसे नाणदंसणे समु-

रूपन्ने, एवं खलु अस्सिं लोए जाव दीवा य समुद्दा य, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडगतिगजाव पहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ-एवं खलु देवाणुप्पिया! सिवे रायरिसी एवं आइक्खइ जाव परूवेइ— अत्थि णं देवाणुप्पिया! ममं अतिसेसे नाणदंसणे जाव तेण परं वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, से कहमेयं मन्ने एवं?। तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे परिसा जाव पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी जहा बितियसए नियंठुद्देसए जाव अडमाणे बहुजणसद्दं निसामेइ बहुजणो अन्नमन्नस्स एवं आइक्खइ एवं जाव परूवेइ— एवं खलु देवाणुप्पिया! सिवे रायरिसी एवं आइक्खइ जाव परूवेइ—अत्थि णं देवाणुप्पिया! तं चेव जाव वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, से कहमेयं मन्ने एवं?, तए णं भगवं गोयमे बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म जाव सड्ढे जहा नियंठुद्देसए जाव तेण परं वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, से कहमेयं भंते! एवं?, गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी—जन्नं गोयमा! से बहुजणे अन्नमन्नस्स एवमातिक्खइ तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव भंडनिक्खेवं करेति हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडग० तं चेव जाव वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव तेण परं वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य तण्णं मिच्छा, अहं पुण गोयमा! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि-एवं खलु जंबुद्दीवादीया दीवा लवणादीया समुद्दा संठाणओ एगविहिविहाणा वित्थारओ अणेगविहिविहाणा एवं जहा जीवा-

भिगमे जाव सयंभूरमणपज्जवसाणा अस्सिं तिरियलोए असंखेज्जे दीवसमुद्दे पन्नत्ते समणाउसो ! ॥ अत्थि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दव्वाइं सवन्नाइंपि अवन्नाइंपि सगंधाइंपि अगंधाइंपि सरसाइंपि अरसाइंपि सफासाइंपि अफासाइंपि अन्नमन्नबद्धाइं अन्नमन्नपुट्ठाइं जाव घडत्ताए चिट्ठंति ?, हंता अत्थि । अत्थि णं भंते ! लवणसमुद्दे दव्वाइं सवन्नाइंपि अवन्नाइंपि सगंधाइंपि अगंधाइंपि सरसाइंपि अरसाइंपि सफासाइंपि अफासाइंपि अन्नमन्नबद्धाइं अन्नमन्नपुट्ठाइं जाव घडत्ताए चिट्ठंति ?, हंता अत्थि । अत्थि णं भंते ! धायइसंडे दीवे दव्वाइं सवन्नाइंपि० एवं चेव एवं जाव सयंभूरमणसमुद्दे ? जाव हंता अत्थि । तए णं सा महतिमहालिया महच्चपरिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया, तए णं हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडगजावपहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ—जन्नं देवाणुप्पिया ! सिवे रायरिसी एवमाइक्खइ जाव परूवेइ–अत्थि णं देवाणुप्पिया ! ममं अतिसेसे नाणे जाव समुद्दा य तं नो इणट्ठे समट्ठे, समणे भगवं महावीरे एवमाइक्खइ जाव परूवेइ–एवं खलु एयस्स सिवस्स रायरिसिस्स छट्ठंछट्ठेणं तं चेव जाव भंडनिक्खेवं करेइ भंडनिक्खेवं करेत्ता हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडग जाव समुद्दा य, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म जाव समुद्दा य तण्णं मिच्छा, समणे भगवं महावीरे एवमाइक्खइ०–एवं खलु जंबुद्दीवादीया दीवा लवणादीया समुद्दा तं चेव जाव असंखेज्जा दीवसमुद्दा पन्नत्ता समणाउसो ! । तए णं से सिवे रायरिसी बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा

निसम्म संकिए कंखिए वितिगिच्छिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने जाए यावि होत्था, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स संकियस्स कंखियस्स जाव कलुससमावन्नस्स से विभंगे अन्नाणे खिप्पामेव परिवडिए, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु समणे भगवं महावीरे आदिगरे तित्थगरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी आगासगएणं चक्केणं जाव सहसंबवणे उज्जाणे अहापडिरूवं जाव विहरइ, तं महाफलं खलु तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं नामगोयस्स जहा उववाइए जाव गहणयाए, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि जाव पज्जुवासामि, एयं णे इहभवे य परभवे य जाव भविस्सइत्तिकट्टु एवं संपेहेति एवं २ त्ता जेणेव तावसावसहे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता तावसावसहं अणुप्पविसति २ त्ता सुबहुं लोहीलोहकडाह जाव किढिणसंकातिगं च गेण्हइ गेण्हित्ता तावसावसहाओ पडिनिक्खमति ताव० २ परिवडियविब्भंगे हत्थिणागपुरं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता नच्चासन्ने नाइदूरे [ग्रन्थाग्रम् ७०००] जाव पंजलिउडे पज्जुवासइ, तए णं समणे भगवं महावीरे सिवस्स रायरिसिस्स तीसे य महतिमहालियाए जाव आणाए आराहए भवइ, तए णं से सिवे रायरिसी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोचा निसम्म जहा खंदओ जाव उत्तरपुरच्छिमं दिसिभागं अवक्कमइ २ सुबहुं लोहीलोहकडाह जाव किढिणसंकातिगं एगंते एडेइ ए० २ सयमेव पंच-

मुट्ठियं लोयं करेति सयमे० २ समणं भगवं महावीरं एवं जहेव उसभदत्ते तहेव पव्वइओ तहेव इक्कारस अंगाइं अहिज्जति तहेव सव्वं जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ ( सूत्रं ४१८ ) ॥

तेणं कालेण'मित्यादि, 'महया हिमवंत वन्नओ'त्ति अनेन'महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे'इत्यादि राजवर्णको वाच्य इति सूचितं, तत्र महाहिमवानिव महान् शेषराजापेक्षया तथा मलयः-पर्वतविशेषो मन्दरो-मेरुः महेन्द्रः-शक्रादिर्देवस्तद्वत्सारः-प्रधानो यः स तथा, 'सुकुमाल० वन्नओ'त्ति अनेन च 'सुकुमालपाणिपाये'त्यादी राज्ञीवर्णको वाच्य इति सूचितं, 'सुकुमालजहा सूरियकंते जाव पच्चुवेक्खमाणे २ विहरइ'त्ति अस्यायमर्थः-'सुकुमालपाणिपाए लक्खणवंजणगुणोववेए' इत्यादिना यथा राजप्रश्नकृताभिधाने ग्रन्थे सूर्यकान्तो राजकुमारः'पच्चुवेक्खमाणे २ विहरइ'इत्येतदन्तेन वर्णकेन वर्णितस्तथाऽयं वर्णयितव्यः, 'पच्चुवेक्खमाणे २ विहरइ' इत्येतच्चैवमिह सम्बन्धनीयं-'से णं सिवभद्दे कुमारे जुवराया यावि होत्था सिवस्स रन्नो रज्जं च रट्ठं च बलं च वाहणं च कोसं च कोट्ठागारं च पुरं च अंतेउरं च जणवयं च सयमेव पच्चुवेक्खमाणे विहरइ'त्ति । 'वाणपत्थ'त्ति वने भवा वानी प्रस्थानं प्रस्था-अवस्थितिर्वानी प्रस्था येषां ते वानप्रस्थाः, अथवा-"ब्रह्मचारी गृहस्थश्च, वानप्रस्थो यतिस्तथा" इति चत्वारो लोकप्रतीता आश्रमाः, एतेषां च तृतीयाश्रमवर्त्तिनो वानप्रस्थाः, 'होत्तिय'त्ति अग्निहोत्रिकाः पोत्तिय'त्ति वस्त्रधारिणः सोत्तिय'त्ति क्वचित्पाठस्तत्राप्ययमेवार्थः 'जहा उववाइए' इत्येतस्मादतिदेशादिदं दृश्यं-'कोत्तिया जन्नई सड्ढई थालई हुंबउट्ठा दंतुक्खलिया उम्मज्जगा सम्मज्जगा निमज्जगा संपक्खला दक्खिणकूलगा उत्तरकूलगा संखधमगा कूलधमगा मिगलुद्धया हत्थितावसा उद्दंडगा दिसापोक्खिणो वक्कवासिणो चेलवासिणो जलवासिणो रुक्खमूलिया अंबुभक्खिणो वाउभक्खिणो सेवालभक्खिणो मूलाहारा

कंदाहारा तयाहारा पत्ताहारा पुप्फाहारा फलाहारा बीयाहारा परिसडियकंदमूलतयपत्तपुप्फफलाहारा जलाभिसेयकढिणगाया आयावणाहिं पंचग्गितावेहिं इंगालसोल्लियं कंदुसोल्लियं'ति तत्र 'कोत्तिय'त्ति भूमिशायिनः 'जन्नइ'त्ति यज्ञयाजिनः 'सड्डइ'त्ति श्राद्धाः 'थालइ'त्ति गृहीतभाण्डाः 'हुंबउट्ठ'त्ति कुण्डिकाश्रमणाः 'दंतुक्खलिय'त्ति फलभोजिनः 'उम्मज्जग'त्ति उन्मज्जनमात्रेण ये स्नान्ति 'संमज्जग'त्ति उन्मज्जनस्यैवासकृत्करणेन ये स्नान्ति 'निमज्जग'त्ति स्नानार्थं निमग्ना एव ये क्षणं तिष्ठन्ति 'संपक्खाल'त्ति मृत्तिकादिघर्षणपूर्वकं येऽङ्गं क्षालयन्ति 'दक्खिणकूलग'त्ति यैर्गङ्गाया दक्षिणकूल एव वास्तव्यम् 'उत्तरकूलग'त्ति उक्तविपरीताः 'संखधमग'त्ति शङ्खं ध्मात्वा ये जेमन्ति यद्यन्यः कोऽपि नागच्छतीति 'कूलधमग'त्ति ये कूले स्थित्वा शब्दं कृत्वा भुञ्जते 'मियलुद्धय'त्ति प्रतीता एव 'हत्थितावस'त्ति ये हस्तिनं मारयित्वा तेनैव बहुकालं भोजनतो यापयन्ति 'उद्दंडग'त्ति ऊर्द्ध्वकृतदण्डा ये संचरन्ति 'दिसापोक्खिणो'त्ति उदकेन दिशः प्रोक्ष्य ये फलपुष्पादि समुच्चिन्वन्ति 'वक्कलवासिणो'त्ति वल्कलवाससः 'चेलवासिणो'त्ति व्यक्तं पाठान्तरे 'वेलवासिणो'त्ति समुद्रवेलासंनिधिवासिनः 'जलवासिणो'त्ति ये जलनिमग्ना एवासते, शेषाः प्रतीता, नवरं 'जलाभिसेयकिढिणगाय'त्ति येऽस्नात्वा न भुंजते स्नानाद्वा पाण्डुरीभूतगात्रा इति वृद्धा, क्वचित् 'जलाभिसेयकढिणगायभूय'त्ति दृश्यते तत्र जलाभिषेककठिनं गात्रं भूताः-प्राप्ता ये ते तथा, 'इंगालसोल्लियं'ति अङ्गारैरिव पक्वं 'कंदुसोल्लियं'ति कन्दुपक्वमिवेति । 'दिसाचक्कवालएणं तवोकम्मेणंति' एकत्र पारणके पूर्वस्यां दिशि यानि फलादीनि तान्याहृत्य भुङ्क्ते द्वितीये तु दक्षिणस्यामित्येवं दिक्चक्रवालेन यत्र तपःकर्मणि पारणककरणं तत्तपःकर्म्म दिक्चक्रवालमुच्यते तेन तपःकर्म्मणेति 'ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं' इत्यत्र 'एवं जहा उववाइए' इत्येतत्करणादिदं दृश्यं—'मणुन्नाहिं मणामाहिं जाव वग्गूहिं अणवरयं अभिनंदंता

य अभिथुणंता य एवं वयासी–जय २ नंदा जय जय भद्दा ! जय २ नंदा ! भद्दं ते अजियं जिणाहि जियं पालियाहि जियमज्झे वसाहि अजियं च जिणाहि सत्तुपक्खं जियं च पालेहिमित्तपक्खं जियविग्घोऽविय वसाहि तं देव! सयणमज्झे इंदो इव देवाणं चंदो इव ताराणं धरणो इव नागाणं भरहो इव मणुयाणं बहूइं वासाइं बहूइं वाससयाइं बहूइं वाससहस्साइं अणहसमग्गे य हट्ठतुट्ठो'त्ति, एतच्च व्यक्तमेवेति ॥ 'वागलवत्थनियत्थे'त्ति वल्कलं–वल्कस्तस्येदं वाल्कलं तद्वस्त्रं निवसितं येन स वाल्कलवस्त्रनिवसितः 'उडए'त्ति उटजः–तापसगृहं 'किढिणसंकाइयगं'त्ति किढिण'त्ति वंशमयस्तापसभाजनविशेषस्ततश्च तयोः साङ्कायिकं–भारोद्वहनयन्त्रं किढिणसाङ्कायिकं 'महाराय'त्ति लोकपालः 'पत्थाणे पत्थियं'ति 'प्रस्थाने' परलोकसाधनमार्गे 'प्रस्थितं' प्रवृत्तं फलाद्याहरणार्थं गमने वा प्रवृत्तं शिव राजर्षि 'दब्भे य'त्ति समूलान् 'कुसे य'त्ति दर्भानेव निर्मूलान् 'समिहाओ य'त्ति समिधः–काष्ठिकाः 'पत्तामोडं च' तरुशाखामोटितपत्राणि 'वेदिंवड्ढेइ'त्ति वेदिकां–देवार्चनस्थानं वर्द्धनी–बहुकरिका तां प्रयुङ्क्त इति वर्द्धयती–प्रमार्जयतीत्यर्थः 'उवलेवणसंमज्जणं करेइ'त्ति इहोपलेपनं गोमयादिना संमर्ज्जनं तु जलेन संमार्जनं वा शोधनं 'दब्भकलसाहत्थगए'त्ति दर्भाश्च कलशश्च हस्ते गता यस्य स तथा 'दब्भसगब्भकलसगहत्थगए'त्ति क्वचित् तत्र दर्भेण सगर्भो यः कलशकः स हस्ते गतो यस्य स तथा 'जलमज्जणं'ति जलेन देहशुद्धिमात्रं 'जलकीडं'ति देहशुद्धावपि जलेनाभिरतं 'जलाभिसेयं'ति जलक्षरणम् 'आयंते'त्ति जलस्पर्शात् 'चोक्खे'त्ति अशुचिद्रव्यापगमात्, किमुक्तं भवति?–'परमसुइभूए'त्ति, 'देवयपिइकयकज्जे'त्ति देवतानां पितॄणां च कृतं कार्यं–जलाञ्जलिदानादिकं येन स तथा, 'सरएणं अरणिं महेइ'त्ति 'शरकेन' निर्मन्थनकाष्ठेन 'अरणिं' निर्मन्थनीयकाष्ठं 'मथ्नाति' घर्षयति, 'अग्गिस्स दाहिणे'इत्यादि सार्द्धः श्लोकस्तद्यथाशब्दवर्जः, तत्र च 'सत्तंगाइं' सप्ताङ्गानि' समादधाति' संनिधापयति सकथां १ वल्कलं २ स्थानं

३ शय्याभाण्डं ४ कमण्डलुं ५ दंडदारु ६ तथाऽऽत्मान ७ मिति, तत्र सकथा-तत्समयप्रसिद्ध उपकरणविशेषः स्थानं-ज्योतिःस्थानं पात्रस्थानं वा शय्याभाण्डं-शय्योपकरणं दण्डदारु-दण्डकः आत्मा-प्रतीत इति, 'चरुं साहेति'त्ति चरुः-भाजनविशेषस्तत्र पच्यमानद्रव्यमपि चरुरेव तं चरुं बलिमित्यर्थः 'साधयति' रन्धयति 'बलिवइस्सदेवं करेइ'त्ति बलिना वैश्वानरं पूजयतीत्यर्थः, 'अतिहिपूयं करेइ'त्ति अतिथेः-आगन्तुकस्य पूजां करोतीति। 'से कहमेयं मन्ने एवं'त्ति अत्र मन्येशब्दो वितर्कार्थः 'बिलियसए नियंठुदेसए'त्ति द्वितीयशते पञ्चमोद्देशक इत्यर्थः 'एगविहिविहाण'त्ति एकेन विधिना-प्रकारेण विधानं-व्यवस्थानं येषां ते तथा, सर्वेषां वृत्तत्वात्, 'वित्थारओ अणेगविहिविहाण'त्ति द्विगुण २ विस्तारत्वात्तेषामिति 'एवं जहाजीवाभिगमे' इत्यनेन यदिह सूचितं तदिदं-'दुगुणादुगुणं पडुप्पाएमाणा पवित्थरमाणा ओभासमाणवीइया' अवभासमानवीचयः-शोभमानतरङ्गाः, समुद्रापेक्षमिदं विशेषणं, 'बहुप्पलकुमुदनलिणसुभगसोगंधियपुंडरीयमहापुंडरीयसयपत्तसहस्सपत्तसयसहस्सपत्तपफुल्लकेसरोववेया' बहूनामुत्पलादीनां प्रफुल्लानां-विकसितानां यानि केशराणि तैरुपचिताः-संयुक्ता ये ते तथा, तत्रोत्पलानि-नीलोत्पलादीनि कुमुदानि-चन्द्रबोध्यानि पुण्डरीकाणि-सितानि शेषपदानि तु रूढिगम्यानि'पत्तेयं पत्तेयं पउमवरवेइयापरिक्खित्ता पत्तेयं २ वणसंडपरिक्खित्त'त्ति ॥ 'सवन्नाइंपि'त्ति पुद्गलद्रव्याणि 'अवन्नाइंपि'त्ति धर्म्मास्तिकायादीनि 'अन्नमन्नबद्धाइं'ति परस्परेण गाढाश्लेषाणि 'अन्नमन्नपुट्ठाइं'ति परस्परेण गाढाश्लेषाणि, इह यावत्करणादिदमेवं दृश्यम्—'अन्नमन्नबद्धपुट्ठाइं अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठति' तत्र चान्योऽन्यबद्धस्पृष्टान्यनन्तरोक्तगुणद्वययोगात्, किमुक्तं भवति?-अन्योऽन्यघटतया-परस्परसम्बद्धतया तिष्ठन्ति 'तावसावसहे'त्ति तापसावसथः-तापसमठ इति ॥ अनन्तरं शिवराजर्षेः सिद्धिरुक्ता, तां च संहननादिभिर्निरूपयन्निदमाह—



प्र०आ०५२०

भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-जीवा णं भंते! सिज्झमाणा कयरंमि संघयणे सिज्झंति ?, गोयमा! वयरोसभणारायसंघयणे सिज्झंति एवं जहेव उववाइए तहेव संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च परिवसणा, एवं सिद्धिगंडिया निरवसेसा भाणियव्वा जाव अव्वाबाहं सोक्खं अणुहवं (हुंती) ति सासया सिद्धा। सेवं भंते! २ त्ति ॥ ( सूत्रं ४१९ ) सिवो समत्तो ॥ ११-९ ॥

'भंते त्ति'इत्यादि, अथ लाघवार्थमतिदेशमाह-'एवं जहेवे'त्यादि, 'एवम्' अनन्तरदर्शितेनाभिलापेन यथौपपातिके सिद्धानधिकृत्य संहननाद्युक्तं तथैवेहापि वाच्यं, तत्र च संहननादिद्वाराणां सङ्ग्रहाय गाथापूर्वार्द्धं-'संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च परिवसण'त्ति, संहननमुक्तमेव, संस्थानादि त्वेवं-तत्र संस्थाने षण्णां संस्थानानामन्यतरस्मिन् सिद्ध्यन्ति, उच्चत्वे तु जघन्यतः सप्तरत्निप्रमाणे उत्कृष्टतस्तु पञ्चधनुःशतके, आयुषि पुनर्जघन्यतः सातिरेकाष्टवर्षप्रमाणे उत्कृष्टतस्तु पूर्वकोटीमाने, परिवसना पुनरेवं-रत्नप्रभादिपृथिवीनां सौधर्मादीनां चेषत्प्राग्भारान्तानां क्षेत्रविशेषाणामधो न परिवसन्ति सिद्धाः, किन्तु सर्वार्थसिद्धमहाविमानस्योपरितनात् स्तूपिकाग्रादूर्ध्वं द्वादश योजनानि व्यतिक्रम्येषत्प्राग्भारा नाम पृथिवी पञ्चचत्वारिंशद्योजनलक्षप्रमाणाऽऽयामविष्कम्भाभ्यां वर्णतः श्वेताऽत्यन्तरम्याऽस्ति तस्याश्चोपरि योजने लोकान्तो भवति, तस्य च योजनस्योपरितनगव्यूतोपरितनषड्भागे सिद्धाः परिवसन्तीति, 'एवं सिद्धिगंडिया निरवसेसा भाणियव्व'त्ति एवमिति-पूर्वोक्तसंहननादिद्वारनिरूपणक्रमेण 'सिद्धिगण्डिका' सिद्धिस्वरूपप्रतिपादनपरा वाक्यपद्धतिरौपपातिकप्रसिद्धाऽध्येया, इयं च परिवसनद्वारं यावदर्थलेशतो दर्शिता, तत्परतस्त्वेवं-'कहिं पडिहया सिद्धा? कहिं सिद्धा पइट्ठिया ?'इत्यादिका, अथ किमन्तेयम्? इत्याह—'जावे'त्यादि, 'अव्वाबाहं सोक्ख'मित्यादि चेह गाथाया उत्तरार्द्धम-

धीतं, समग्रगाथा पुनरियं—' निच्छिन्नसव्वदुक्खा जाइजरामरणबंधणविमुक्का । अव्वाबाहं सोक्खं अणुहुंती सासयं सिद्धा ॥ १ ॥ ” इति ॥ एकादशशते नवमोद्देशकः ॥ ११-९ ॥

---

नवमोद्देशकस्यान्ते लोकान्ते सिद्धपरिवसनोक्तेत्यतो लोकस्वरूपमेव दशमे आह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी—कतिविहे णं भंते! लोए पन्नत्ते?, गोयमा! चउव्विहे लोए पन्नत्ते, तंजहा—दव्वलोए खेत्तलोए काललोए भावलोए। खेत्तलोए णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! तिविहे पन्नत्ते, तंजहा—अहोलोयखेत्तलोए १ तिरियलोयखेत्तलोए २ उड्ढलोयखेत्तलोए ३। अहोलोयखेत्तलोए णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते?, गोयमा! सत्तविहे पन्नत्ते, तंजहा—रयणप्पभापुढविअहेलोयखेत्तलोए जाव अहेसत्तमापुढविअहोलोयखेत्तलोए। तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते?, गोयमा! असंखेज्जविहे पन्नत्ते, तंजहा—जंबुद्दीवे तिरियखेत्तलोए जाव सयंभूरमणसमुद्दे तिरियलोयखेत्तलोए। उड्ढलोगखेत्तलोए णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते?, गोयमा! पन्नरसविहे पन्नत्ते, तंजहा—सोहम्मकप्पउड्ढलोगखेत्तलोए जाव अच्चुयउड्ढलोए गेवेज्जविमाणउड्ढलोए अणुत्तरविमाण० इसिंपब्भारपुढविउड्ढलोगखेत्तलोए। अहोलोगखेत्तलोए णं भंते! किंसंठिए पन्नत्ते?, गोयमा! तप्पागारसंठिए पन्नत्ते। तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते! किंसंठिए पन्नत्ते?, गोयमा! झल्लरिसंठिए पन्नत्ते। उड्ढलोयखेत्तलोयपुच्छा उड्ढ-

मुइंगाकारसंठिए पन्नत्ते । लोए णं भंते ! किंसंठिए पन्नत्ते ?, गोयमा ! सुपइट्ठगसंठिए लोए पन्नत्ते, तंजहा—हेट्ठा विच्छिन्ने मज्झे संखित्ते जहा सत्तमसए पढमुद्देसए जाव अंतं करेंति । अलोए णं भंते ! किंसंठिए पन्नत्ते ?, गोयमा ! झुसिरगोलसंठिए पन्नत्ते ॥ अहेलोगखेत्तलोए णं भंते ! किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा ? एवं जहा इंदा दिसा तहेव निरवसेसं भाणियव्वं जाव अद्धासमए । तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते ! किं जीवा० ?, एवं चेव, एवं उड्ढलोयखेत्तलोएवि, नवरं अरूवी छव्विहा, अद्धासमओ नत्थि॥ लोए णं भंते ! किं जीवा जहा बितियसए अत्थिउद्देसए लोयागासे, नवरं अरूवी सत्तवि जाव अहम्मत्थिकायस्स पएसा नो आगासत्थिकाये आगासत्थिकायस्स देसे आगासत्थिकायस्सपएसा अद्धासमए सेसं तं चेव ॥ अलोए णं भंते ! किं जीवा० ? एवं जहा अत्थिकायउद्देसए अलोयागासे तहेव निरवसेसं जाव अणंतभागूणे॥ अहेलोगखेत्तलोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे किं जीवा जीवदेसा जीवप्पएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा ?, गोयमा ! नो जीवा जीवदेसावि जीवपएसावि अजीवावि अजीवदेसावि अजीवपएसावि, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा १ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसे २ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा ३ एवं मज्झिल्लविरहिओ जाव अणिंदिएसु जाव अहवा एगिंदियदेसा य अणिंदियाण य देसा य, जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा १ अहवा एगिंदियपएसा य बेंदियस्स पएसा २ अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियाण य पएसा ३ एवं आइल्लविरहिओ जाव पंचिंदिएसु, अणिंदिएसु तियभंगो. जे अरूवी अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—रूवी अजीवा य अरूवी अजीवा

य, रूवी तहेव, जे अरूवी अजीवा ते पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा—नो धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे १ धम्मत्थिकायस्स पएसे २ एवं अहम्मत्थिकायस्सवि ४ अद्धासमए ५। तिरियलोगखेत्तलोगस्स णं भंते! एगंमि आगासपएसे किं जीवा० ?, एवं जहा अहोलोगखेत्तलोगस्स तहेव, एवं उड्ढलोगखेत्तस्सवि, नवरं अद्धासमओ नत्थि, अरूवी चउव्विहा। लोगस्स जहा अहेलोगखेत्तलोगस्स एगंमि आगासपएसे॥ अलोगस्स णं भंते! एगंमि आगासपएसे पुच्छा, गोयमा! नो जीवा नो जीवदेसा तं चेव जाव अणंतेहिं अगुरुयलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासस्स अणंतभागूणे॥ दव्वओ णं अहेलोगखेत्तलोए अणंताइं जीवदव्वाइं अणंताइं अजीवदव्वाइं अणंता जीवाजीवदव्वा एवं तिरियलोयखेत्तलोएवि, एवं उड्ढलोयखेत्तलोएवि, दव्वओ णं अलोए णेवत्थि जीवदव्वा नेवत्थि अजीवदव्वा नेवत्थि जीवाजीवदव्वा एगे अजीवदव्वदेसे जाव सव्वागासअणंतभागूणे। कालओ णं अहेलोयखेत्तलोए न कयाइ नासि जाव निच्चे एवं जाव अहोलोगे। भावओ णं अहेलोगखेत्तलोए अणंता वन्नपज्जवा जहा खंदए जाव अणंता अगुरुयलहुयपज्जवा एवं जाव लोए, भावओ णं अलोए नेवत्थि वन्नपज्जवा जाव नेवत्थि अगुरुलहुयपज्जवा एगे अजीवदव्वदेसे जाव अणंतभागूणे॥ (सूत्रं ४२०)॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'दव्वलोए'त्ति द्रव्यलोक आगमतो नोआगमतश्च, तत्रागमतो द्रव्यलोको लोकशब्दार्थज्ञस्तत्रानुपयुक्तः 'अनुपयोगो द्रव्य'मिति वचनात्, आह च मङ्गलं प्रतीत्य द्रव्यलक्षणम्—"आगमओऽणुवउत्तो मंगलसद्दाणुवासिओ वत्ता। तन्नाणलद्धिजुत्तो उ नोवउत्तोत्ति दव्वं॥ १॥" ति, नोआगमतस्तु ज्ञशरीरभव्यशरीरतद्व्यतिरिक्तभेदात्त्रिविधः, तत्र लोकशब्दार्थज्ञस्य

शरीरं मृतावस्थं ज्ञानापेक्षया भूतलोकपर्यायतया घृतकुम्भवल्लोकः, स च ज्ञशरीररूपो द्रव्यभूतो लोको ज्ञशरीरद्रव्यलोकः, नोशब्दश्चेह सर्वनिषेधे, तथा लोकशब्दार्थं ज्ञास्यति यस्तस्य शरीरं सचेतनं भाविलोकभावत्वेन मधुघटवद् भव्यशरीरद्रव्यलोकः, नोशब्द इहापि सर्वनिषेध एव, ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तश्च द्रव्यलोको द्रव्याण्येव धर्मास्तिकायादीनि, आह च—"जीवमजीवे रूविमरूवि सपएस अप्पएसे य। जाणाहि दव्वलोयं निच्चमणिच्चं च जं दव्वं ॥१॥" इहापि नोशब्दः सर्वनिषेधे आगमशब्दवाच्यस्य ज्ञानस्य सर्वथा निषेधात्, 'खेत्तलोए'त्ति क्षेत्ररूपो लोकः स क्षेत्रलोकः, आह च—"आगासस्स पएसा उड्ढं च अहे य तिरियलोए य। जाणाहि खेत्तलोयं अणंतजिणदेसियं सम्मं ॥ १ ॥" 'काललोए'त्ति कालः-समयादिः तद्रूपो लोकः काललोकः, आह च—"समयावली मुहुत्ता दिवसअहोरत्तपक्खमासा य। संवच्छरजुगपलिया सागरउस्सप्पिपरियट्टा ॥१॥" 'भावलोए'त्ति भावलोको द्वेधा—आगमतो नोआगमतश्च तत्रागमतो लोकशब्दार्थज्ञस्तत्र चोपयुक्तः भावरूपो लोको भावलोक इति, नोआगमतस्तु भावा—औदयिकादयस्तद्रूपो लोको भावलोकः, आह च—"ओदइए उवसमिए खइए य तहा खओवसमिए य। परिणामसन्निवाए य छव्विहो भावलोगो उ ॥ १ ॥" इति, इह नोशब्दः सर्वनिषेधे मिश्रवचनो वा, आगमस्य ज्ञानत्वात् क्षायिकक्षायोपशमिकज्ञानस्वरूपभावविशेषेण च मिश्रत्वादौदयिकादिभावलोकस्येति। 'अहेलोयखेत्तलोए'त्ति अधोलोकरूपः क्षेत्रलोकोऽधोलोकक्षेत्रलोकः, इह किलाष्टप्रदेशो रुचकस्तस्य चाधस्तनप्रतरस्याधो नव योजनशतानि यावत्तिर्यग्लोकस्ततः परेणाधःस्थितत्वादधोलोकः साधिकसप्तरज्जुप्रमाणः, 'तिरियलोयखेत्तलोए'त्ति रुचकापेक्षयाऽध उपरि च नव २ योजनशतमानस्तिर्यग्रूपत्वात्तिर्यग्लोकस्तद्रूपः क्षेत्रलोकस्तिर्यग्लोकक्षेत्रलोकः, 'उड्ढलोयखेत्तलोए'त्ति तिर्यग्लोकस्योपरि देशोनसप्तरज्जुप्रमाण ऊर्ध्वभागवर्त्तित्वादूर्ध्वलोकस्तद्रूपः क्षेत्रलोक ऊर्ध्वलोकक्षेत्रकोकः, अथवा-

ऽधः-अशुभः परिणामो बाहुल्येन क्षेत्रानुभावाद् यत्र लोके द्रव्याणामसावधोलोकः, तथा तिर्यङ्—मध्यमानुभावं क्षेत्रं नातिशुभं नाप्यत्यशुभं तद्रूपो लोकस्तिर्यग्लोकः, तथा ऊर्ध्वं-शुभः परिणामो बाहुल्येन द्रव्याणां यत्रासावूर्ध्वलोकः, आह च-"अहव अहोपरिणामो खेत्तणुभावेण जेण ओसन्नं । असुहो अहोत्ति भणिओ दव्वाणं तेणऽहोलोगो ॥१॥ "इत्यादि, 'तप्पागारसंठिए'त्ति तप्रः-उडुपकः,अधोलोकक्षेत्रलोकोऽधोमुखशरावाकारसंस्थान इत्यर्थः, स्थापना चेयं, 'झल्लरिसंठिए'त्ति अल्पोच्छ्रायत्वान्महाविस्तारत्वाच्च तिर्यग्लोकक्षेत्रलोको झलरीसंस्थितः, स्थापना चात्र— 'उड्ढमुइंगागारसंठिए'त्ति ऊर्ध्वः-ऊर्ध्वमुखो यो मृदङ्गस्तदाकारेण संस्थितो यः स तथा शरावसंपुटाकार इत्यर्थः, स्थापना चेयम्— 'सुपइट्ठगसंठिए'त्ति सुप्रतिष्ठकं-स्थापनकं तच्चेहारोपितवारकादि गृह्यते, तथाविधेनैव लोकसादृश्योपपत्तेरिति, स्थापना चेयं— 'जहा सत्तमसए'इत्यादौ यावत्करणादिदं दृश्यम्—'उप्पिं विसाले अहे पलियंकसंठाणसंठिए मज्झे वरवइरविग्गहिए उप्पिं उद्धमुइंगागारसंठिए तेसिं च णं सासयंसि लोगंसि हेट्ठा विच्छिन्नंसि जाव उप्पिं उड्ढमुइंगागारसंठियंसि उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली जीवेवि जाणइ अजीवेवि जाणइ तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ'इत्यादीति, 'झुसिरगोलसंठिए'त्ति अन्तःशुषिरगोलकाकारो, यतोऽलोकस्य लोकः शुषिरमिवाभाति, स्थापना चेयम्— ॥ 'अहेलोयखेत्तलोए णं भंते !'इत्यादि, 'एवं जहा इंदा दिसा तहेव निरवसेसं भाणियव्वं'त्ति दशमशते प्रथमोद्देशके यथा ऐन्द्री दिगुक्ता तथैव निरवशेषमधोलोकस्वरूपं भणितव्यं, तच्चैवम्—'अहोलोयखेत्तलोए णं भंते ! किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा ?, गोयमा ! जीवावि जीवदेसावि जीवपएसावि अजीवावि अजीवदेसावि अजीवपएसावि'इत्यादि, नवरमित्यादि, अधोलोकतिर्यग्लोकयोररूपिणः सप्तविधाः प्रागुक्ताः धर्माधर्माकाशास्तिकायानां

देशाः ३ प्रदेशाः ३ कालश्चेत्येवम्, ऊर्ध्वलोके तु रविप्रकाशाभिव्यङ्ग्यः कालो नास्ति, तिर्यगधोलोकयोरेव रविप्रकाशस्य भावाद्, अतः षडेव त इति ॥ 'लोए णं'मित्यादि, 'जहा बीयसए अत्थिउद्देसए'त्ति यथा द्वितीयशते दशमोद्देशक इत्यर्थः 'लोयागासे'त्ति लोकाकाशे विषयभूते जीवाद्य उक्ता एवमिहापीत्यर्थः 'नवर'मिति केवलमयं विशेषः—तत्रारूपिणः पञ्चविधा उक्ता इह तु सप्तविधा वाच्याः, तत्र हि लोकाकाशमाधारतया विवक्षितमत आकाशभेदास्तत्र नोच्यन्ते, इह तु लोकोऽस्तिकायसमुदायरूप आधारतया विवक्षितोऽत आकाशभेदा अप्याधेया भवन्तीति सप्त, ते चैवं—धर्मास्तिकायः, लोके परिपूर्णस्य तस्य विद्यमानत्वात्, धर्म्मास्तिकायदेशस्तु न भवति, धर्मास्तिकायस्यैव तत्र भावात्, धर्मास्तिकायप्रदेशाश्च सन्ति, तद्रूपत्वात् धर्मास्तिकायस्येति द्वयं, एवमधर्मास्तिकायेऽपि द्वयं४, तथा नो आकाशास्तिकायो, लोकस्य तस्यैतद्देशत्वात्, आकाशदेशस्तु भवति, तदंशत्वात् लोकस्य, तत्प्रदेशाश्च सन्ति ६, कालश्चे-७ ति सप्त ॥ 'अलोए णं भंते!'इत्यादि, इदं च 'एवं जहे'त्याद्यतिदेशादेवं दृश्यम्—'अलोए णं भंते! किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा?, गोयमा! नो जीवदेसा नो जीवपएसा नो अजीवदेसा नो अजीवपएसा एगे अजीवदव्वदेसे अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासे अणंतभागूणे'त्ति तत्र सर्वाकाशमनन्तभागोनमित्यस्यायमर्थः—लोकलक्षणेन समस्ताकाशस्यानन्तभागेन न्यूनं सर्वाकाशमलोक इति ॥ 'अहोलोगखेत्तलोगस्स णं भंते! एगंमि आगासपएसे'इत्यादि, नो जीवा एकप्रदेशे तेषामनवगाहनात्, बहूनां पुनर्जीवानां देशस्य प्रदेशस्य चावगाहनात् उच्यते 'जीवदेसावि जीवपएसावि'त्ति यद्यपि धर्मास्तिकायाद्यजीवद्रव्यं नैकत्राकाशप्रदेशेऽवगाहते तथाऽपि परमाणुकादिद्रव्याणां कालद्रव्यस्य चावगाहनादुच्यते—'अजीवावि'त्ति, द्व्यणुकादिस्कन्धदेशानां त्ववगाहनादुक्तम्—'अजीवदेसावि'त्ति धर्माधर्मास्तिकायप्रदेशयोः पुद्गलद्रव्यप्रदेशानां चावगाहना-

:दुच्यते–'अजीवपएसावि'त्ति, 'एवं मज्झिल्लविरहिओ'त्ति दशमशतप्रदर्शितत्रिकभङ्गे 'अहवा एगिंदियदेसा बेइंदियदेसा य' इत्येवंरूपो यो मध्यभङ्गस्तद्विरहितोऽसौ त्रिकभङ्गः, 'एव'मिति सूत्रप्रदर्शितभङ्गद्वयरूपोऽध्येतव्यो, मध्यभङ्गस्येहासम्भवात्, तथाहि–द्वीन्द्रियस्यैकस्यैकत्राकाशप्रदेशे बहवो देशा न सन्ति, देशस्यैव भावात्, 'एवं आइल्लविरहिओ'त्ति 'अहवा एगिंदियस्स पएसा य बेंदियस्स पएसे य' इत्येवंरूपाद्यभङ्गकविरहितस्त्रिभङ्गः, 'एव'मिति सूत्रप्रदर्शितभङ्गद्वयरूपोऽध्येतव्यः, आद्यभङ्गकस्येहासम्भवात्, तथाहि–नास्त्येवैकत्राकाशप्रदेशे केवलिसमुद्घातं विनैकस्य जीवस्यैकप्रदेशसम्भवोऽसङ्ख्यातानामेव भावादिति, 'अणिंदिएसु तियभंगो'त्ति अनिन्द्रियेपूक्तभङ्गकत्रयमपि सम्भवतीतिकृत्वा तेषु तद्वाच्यमिति। 'रूवी तहेव'त्ति स्कन्धाः देशाः प्रदेशा अणवश्चेत्यर्थः 'नो धम्मत्थिकाये'त्ति नो धर्मास्तिकाय एकत्राकाशप्रदेशे संभवत्यसङ्ख्यातप्रदेशावगाहित्वात्तस्येति, 'धम्मत्थिकायस्स देसे'त्ति यद्यपि धर्मास्तिकायस्यैकत्राकाशप्रदेशे प्रदेश एवास्ति तथाऽपि देशोऽवयव इत्यनर्थान्तरत्वेनावयवमात्रस्यैव विवक्षितत्वात् निरंशतायाश्च तत्र सत्या अपि अविवक्षितत्वाद्धर्मास्तिकायस्य देश इत्युक्तं, प्रदेशस्तु निरुपचरित एवास्तीत्यत उच्यते–'धम्मत्थिकायस्स पएसे'त्ति, 'एवमहम्मत्थिकायस्सवि'त्ति 'नो अधम्मत्थिकाए अहम्मत्थिकायस्स देसे अहम्मत्थिकायस्स पएसे' इत्येवमधर्मास्तिकायसूत्रं वाच्यमित्यर्थः, 'अद्धासमओ नत्थि, अरूवी चउव्विह'त्ति ऊर्ध्वलोकेऽद्धासमयो नास्तीति अरूपिणश्चतुर्विधाः–धर्मास्तिकायदेशादयः ऊर्ध्वलोक एकत्राकाशप्रदेशे सम्भवन्तीति। 'लोगस्स जहा अहोलोगखेत्तलोगस्स एगंमि आगासपएसे'त्ति अधोलोकक्षेत्रलोकस्यैकत्राकाशप्रदेशे यद्वक्तव्यमुक्तं तल्लोकस्याप्येकत्राकाशप्रदेशे वाच्यमित्यर्थः, तच्चेदं–लोगस्स णं भंते! एगंमि आगासपएसे किं जीवा० पुच्छा, गोयमा! 'नो जीवे'त्यादि प्राग्वत्। 'अहेलोयखेत्तलोए अणंता वन्नपज्जव'त्ति अधो-

लोकक्षेत्रलोकेऽनन्ता वर्णपर्यवाः, एकगुणकालकादीनामनन्तगुणकालाद्यवसानानां पुद्गलानां तत्र भावात् ॥ अलोकसूत्रे 'नेवत्थि अगुरुलहुयपज्जव'त्ति अगुरुलघुपर्यवोपेतद्रव्याणां पुद्गलादीनां तत्राभावात् ॥

लोए णं भंते! केमहालए पन्नत्ते?, गोयमा! अयन्नं जंबुद्दीवे २ सव्वदीवा० जाव परिक्खेवेणं, तेणं कालेणं तेणं समएणं छ देवा महिड्ढीया जाव महेसक्खा जंबुद्दीवे २ मंदरे पव्वए मंदरचूलियं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ताणं चिट्ठेज्जा, अहे णं चत्तारि दिसाकुमारीओ महत्तरियाओ चत्तारि बलिपिंडे गहाय जंबुद्दीवस्स २ चउसुवि दिसासु बहियाभिमुहीओ ठिच्चा ते चत्तारि बलिपिंडे जमगसमगं बहिगाभिमुहे पक्खिवेज्जा पभू णं गोयमा! ताओ एगमेगे देवे ते चत्तारि बलिपिंडे धरणितलमसंपत्ते खिप्पामेव पडिसाहरित्तए, ते णं गोयमा! देवा ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए एगे देवे पुरच्छाभिमुहे पयाते एवं दाहिणाभिमुहे एवं पच्चत्थाभिमुहे एवं उत्तराभिमुहे एवं उड्ढाभि० एगे अहोभिमुहे पयाए, तेणं कालेणं तेणं समएणं वाससहस्साउए दारए पयाए, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पहीणा भवंति, णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तए णं तस्स दारगस्स आउए पहीणे भवति, णो चेव णं जाव संपाउणंति, तए णं तस्स दारगस्स अट्ठिमिंजा पहीणा भवंति णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तए णं तस्स दारगस्स आसत्तमेवि कुलवंसे पहीणे भवति णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तए णं तस्स दारगस्स नामगोएवि पहीणे भवति णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तेसि णं भंते! देवाणं किं गए बहुए अगए बहुए?, गोयमा! गए बहुए, नो अगए बहुए, गयाउ से अगए असंखेज्जइभागे

अगयाउ से गए असंखेज्जगुणे, लोए णं गोयमा! एमहालए पन्नत्ते। अलोए णं भंते! केमहालए पन्नत्ते?, गोयमा! अयन्नं समयखेत्ते पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं जहा खंदए जाव परिक्खेवेणं, तेणं कालेणं तेणं समएणं दस देवा महिड्डिया तहेव जाव संपरिक्खित्ताणं संचिट्ठेज्जा, अहे णं अट्ठ दिसाकुमारीओ महत्तरियाओ अट्ठ बलिपिंडे गहाय माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स चउसुवि दिसासु चउसुवि विदिसासु बहियाभिमुहीओ ठिच्चा अट्ठ बलिपिंडे गहाय माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जमगसमगं बहियाभिमुहीओ पक्खिवेज्जा, पभू णं गोयमा! तओ एगमेगे देवे ते अट्ठ बलिपिंडे धरणितलमसंपत्ते खिप्पामेव पडिसाहरित्तए, ते णं गोयमा! देवा ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए लोगंसि ठिच्चा असब्भावपट्ठवणाए एगे देवे पुरच्छाभिमुहे पयाए एगे देवे दाहिणपुरच्छाभिमुहे पयाए एवं जाव उत्तरपुरच्छाभिमुहे एगे देवे उड्ढाभिमुहे एगे देवे अहोभिमुहे पयाए, तेणं कालेणं तेणं समएणं वाससयसहस्साउए दारए पयाए, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पहीणा भवंति नो चेव णं ते देवा अलोयंतं संपाउणंति, तं चेव०, तेसि णं देवाणं किं गए बहुए अगए बहुए?, गोयमा! नो गए बहुए, अगए बहुए, गयाउ से अगए अणंतगुणे अगयाउ से गए अणंतभागे, अलोए णं गोयमा! एमहालए पन्नत्ते॥ (सूत्रं ४२१)॥ लोगस्स णं भंते! एगंमि आगासपएसे जे एगिंदियपएसा जाव पंचिंदियपएसा अणिंदियपएसा अन्नमन्नबद्धा अन्नमन्नपुट्ठा जाव अन्नमन्नसमभरघडत्ताए चिट्ठंति, णत्थि णं भंते! अन्नमन्नस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पायंति छविच्छेदं वा करेंति?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ लोगस्स णं एगंमि

आगासपएसे जे एगिंदियपएसा जाव चिट्ठंति णत्थि णं भंते! अन्नमन्नस्स किंचि आबाहं वा जाव करेंति ?, गोयमा ! से जहानामए नट्टिया सिया सिंगारागारचारुवेसा जाव कलिया रंगट्ठाणंसि जणसयाउलंसि जणसयसहस्साउलंसि बत्तीसइविहस्स नट्टस्स अन्नयरं नट्टविहिं उवदंसेज्जा, से नूणं गोयमा ! ते पेच्छगा तं नट्टियं अणिमिसाए दिट्ठीए सव्वओ समंता समभिलोएंति ?, हंता समभिलोएंति, ताओ णं गोयमा ! दिट्ठीओ तंसि नट्टियंसि सव्वओ समंता संनिवडियाओ ?, हंता संन्निवडियाओ, अत्थि णं गोयमा ! ताओ दिट्ठीओ तीसे नट्टियाए किंचिवि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएंति छविच्छेदं वा करेंति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, अहवा सा नट्टिया तासिं दिट्ठीणं किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएंति छविच्छेदं वा करेइ ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, ताओ वा दिट्ठीओ अन्नमन्नाए दिट्ठीए किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएंति छविच्छेदं वा करेन्ति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ तं चेव जाव छविच्छेदं वा करेंति ॥ (सूत्रं ४२२) ॥ लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे जहन्नपए जीवपएसाणं उक्कोसपए जीवपएसाणं सव्वजीवाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा लोगस्स एगंमि आगासपएसे जहन्नपए जीवपएसा, सव्वजीवा असंखेज्जगुणा, उक्कोसपए जीवपएसा विसेसाहिया, सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ ( सूत्रं ४२३ ) ॥ एकारससयस्स दसमोउद्दसो समत्तो ॥ ११-१० ॥

प्र०आ०५२१

'सव्वदीव'त्ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'समुद्दाणं अब्भंतरए सव्वखुड्डाए वट्टे तेल्लापूयसंठाणसंठिए वट्टे रहचक्कवालसंठाणसंठिए वट्टे पुक्खरकन्नियासंठाणसंठिए वट्टे पडिपुन्नचंदसंठाणसंठिए एक्कं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं तिन्नि जोयणसयसहस्साइं

सोलस य सहस्साइं दोन्नि य सत्तावीसे जोयणसए तिन्नि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचि विसेसाहियं'ति, 'ताए उक्किट्ठाए'त्ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'तुरियाए चवलाए चंडाए सिंहाए उद्धुयाए जयणाए छेयाए दिव्वाए'त्ति तत्र 'त्वरितया' आकुलया 'चपलया' कायचापल्येन 'चण्डया' रौद्रया गत्युत्कर्षयोगात् 'सिंहया' दाढर्यस्थिरतया 'उद्धुतया' दर्पातिशयेन 'जयिन्या' विपक्षजेतृत्वेन 'छेकया' निपुणया 'दिव्यया' दिवि भवयेति, 'पुरच्छाभिमुहे'त्ति मेर्वपेक्षया, 'आसत्तमे कुलवंसे पहीणे'त्ति कुलरूपो वंशः प्रहीणो भवति आसप्तमादपि वंश्यात्, सप्तममपि वंश्यं यावदित्यर्थः, 'गयाउ से अगए असंखेज्जइभागे अगयाउ से गए असंखेज्जगुणे'त्ति, ननु पूर्वादिषु प्रत्येकमर्द्धरज्जुप्रमाणत्वाल्लोकस्योर्ध्वाधश्च किञ्चिन्न्यूनाधिकसप्तरज्जुप्रमाणत्वात्तुल्यया गत्या गच्छतां देवानां कथं षट्स्वपि दिक्षु गतादगतं क्षेत्रमसङ्ख्यातभागमात्रं अगताच्च गतमसङ्ख्यातगुणमिति ?, क्षेत्रवैषम्यादिति भावः, अत्रोच्यते, घनचतुरस्रीकृतस्य लोकस्यैव कल्पितत्वान्न दोष, ननु यद्युक्तस्वरूपयाऽपि गत्या गच्छन्तो देवा लोकान्तं बहुनाऽपि कालेन न लभन्ते तदा कथमच्युताज्जिनजन्मादिषु द्रागवतरन्ति ?, बहुत्वात्क्षेत्रस्याल्पत्वादवतरणकालस्येति, सत्यं, किन्तु मन्देयं गतिः जिनजन्माद्यवतरणगतिस्तु शीघ्रतमेति। 'असब्भावपट्ठवणाए'त्ति असद्भूतार्थकल्पनयेत्यर्थः ॥ पूर्वं लोकालोकवक्तव्यतोक्ता, अथ लोकैकप्रदेशगतं वक्तव्यविशेषं दर्शयन्नाह—'लोगस्स णं'मित्यादि, 'अत्थि णं भंते !'त्ति अस्त्ययं भदन्त ! पक्षः, इह च त इति शेषो दृश्यः 'जाव कलिय'त्ति इह यावत्करणादेवं दृश्यं—'संगयगयहसियभणियचिट्ठियविलाससललियसंलावनिउणजुत्तोवयारकलिय'त्ति 'बत्तीसइविहस्स नट्टस्स'त्ति द्वात्रिंशद् विधा—भेदा यस्य तत्तथा तस्य नाट्यस्य, तत्र ईहामृगऋषभतुरगनरमकरविहगव्यालककिन्नरादिभक्तिचित्रो नामैको नाट्यविधिः, एतच्चरिताभिनयनमिति संभाव्यते, एवमन्येऽप्येकत्रिंशद्विधयो राज-

प्रश्नकृतानुसारतो वाच्याः । लोकैकप्रदेशाधिकारादेवेदमाह–'लोगस्स ण'मित्यादि, अस्य व्याख्या–यथा किलैतेषु त्रयोदशसु प्रदेशेषु त्रयोदशप्रदेशकानि दिग्दशकस्पर्शानि त्रयोदश द्रव्याणि स्थितानि, तेषां च प्रत्याकाशप्रदेशं त्रयोदश त्रयोदश प्रदेशा भवन्ति, एवं लोकाकाशप्रदेशेऽनन्तजीवावगाहेनैकैकस्मिन्नाकाशप्रदेऽनन्ता जीवप्रदेशा भवन्ति, लोके च सूक्ष्मा अनन्तजीवात्मका निगोदाः पृथिव्यादिसर्वजीवासङ्ख्येयकतुल्याः सन्ति, तेषां चैकैकस्मिन्नाकाशप्रदेशे जीवप्रदेशा अनन्ता भवन्ति, तेषां च जघन्यपदे एकत्राकाशप्रदेशे सर्वस्तोका जीवप्रदेशाः, तेभ्यश्च सर्वजीवा असङ्ख्येयगुणाः, उत्कृष्टपदे पुनस्तेभ्यो विशेषाधिका जीवप्रदेशा इति ॥ अयं च सूत्रार्थोऽमूभिर्वृद्धोक्तगाथाभिर्भावनीयः–लोगस्सेगपएसे जहन्नयपयंमि जियपएसाणं । उक्कोसपए य तहा सव्वजियाणं च के बहुया ? ॥ १ ॥ इति प्रश्नः, उत्तरं पुनरत्र–थोवा जहण्णयपए जियप्पएसा जिया असंखगुणा । उक्कोसपयपएसा तओ विसेसाहिया भणिया ॥ २ ॥ अथ जघन्यपदमुत्कृष्टपदं चोच्यते—तत्थ पुण जहन्नपयं लोगंतो जत्थ फासणा तिदिसिं । छद्दिसिमुक्कोसपयं समत्तगोलंमि णण्णत्थ ॥ ३ ॥ तत्र–तयोर्जघन्येतरपदयोर्जघन्यपदं लोकान्ते भवति 'जत्थ'त्ति यत्र गोलके स्पर्शना निगोददेशैस्तिसृष्वेव दिक्षु भवति, शेषदिशामलोकेनावृतत्वात्, सा च खण्डगोल एव भवतीति भावः, 'छद्दिसिं'ति यत्र पुनर्गोलके षट्स्वपि दिक्षु निगोददेशैः स्पर्शना भवति तत्रोत्कृष्टपदं भवति, तच्च समस्तगोले–परिपूर्णे गोलके भवति, नान्यत्र, खण्डगोलके न भवतीत्यर्थः, सम्पूर्णगोलकश्च लोकमध्य एव स्यादिति ॥ अथ परवचनमाशङ्कमान आह—उक्कोसमसंखगुणं जहन्नयाओ पयं हवइ किंनु ? । नणु तिदिसिंफुसणाओ छद्दिसि फुसणा भवे दुगुणा ॥ ४ ॥ उत्कर्षं–उत्कृष्टपदमसङ्ख्यातगुणं जीवप्रदेशापेक्षया जघन्यकात्पदादिति गम्यं, भवति 'किन्नु' कथं नु, न भवतीत्यर्थः, कस्मादेवम् ? इत्याह–'ननु'निश्चितम्, अक्षमायां वा ननुशब्दः, त्रिदिक्स्पर्शनायाः सकाशात् षड्दिक्स्पर्शना भवेद्

द्विगुणेति, इह च काकुपाठाद्धेतुत्वं प्रतीयत इति, अतो द्विगुणमेवोत्कृष्टं पदं स्यादसङ्ख्यातगुणं च तदिष्यते, जघन्यपदाश्रितजीवप्रदेशापेक्षयाऽसङ्ख्यातगुणसर्वजीवेभ्यो विशेषाधिकजीवप्रदेशोपेतत्वात्तस्येति, इहोत्तरम्–थोवा जहन्नयपए निगोयमित्तावगाहणाफुसणा। फुसणासंखगुणत्ता उक्कोसपए असंखगुणा ॥ ५ ॥ स्तोका जीवप्रदेशा जघन्यपदे, कस्मात् ? इत्याह—निगोदमात्रे क्षेत्रेऽवगाहना येषां ते तथा, एकावगाहना इत्यर्थः, तैरेव यत्स्पर्शनं–अवगाहनं जघन्यपदस्य तन्निगोदमात्रावगाहनस्पर्शनं तस्मात्, खण्डगोलकनिष्पादकनिगोदैस्तस्यासंस्पर्शनादित्यर्थः, भूम्यासन्नापवरककोणान्तिमप्रदेशसदृशो हि जघन्यपदाख्यः प्रदेशः, तं चालोकसम्बन्धादेकावगाहना एव निगोदाः स्पृशन्ति, न तु खण्डगोलनिष्पादकाः, तत्र किल जघन्यपदं कल्पनया जीवशतं स्पृशति, तस्य च प्रत्येकं कल्पनयैव प्रदेशलक्षं तत्रावगाढमित्येवं जघन्यपदे कोटी जीवप्रदेशानामवगाढेत्येवं स्तोकास्तत्र जीवप्रदेशा इति। अथोत्कृष्टपदजीवप्रदेशपरिमाणमुच्यते–'फुसणासंखगुणत्त'त्ति स्पर्शनायाः–उत्कृष्टपदस्य पूर्णगोलकनिष्पादकनिगोदैः संस्पर्शनाया यदसङ्ख्यातगुणत्वं जघन्यपदापेक्षया तत्तथा तस्माद्धेतोरुत्कृष्टपदेऽसङ्ख्यातगुणा जीवप्रदेशा जघन्यपदापेक्षया भवन्ति, उत्कृष्टपदं हि सम्पूर्णगोलकनिष्पादकनिगोदैरेकावगाहनैरसङ्ख्येयैः तथोत्कृष्टपदाविमोचनेनैकैकप्रदेशपरिहानिभिः प्रत्येकमसङ्ख्येयैरेव स्पृष्टं, तच्च किल कल्पनया कोटीसहस्रेण जीवानां स्पृश्यते, तत्र च प्रत्येकं जीवप्रदेशलक्षस्यावगाहनाज्जीवप्रदेशानां दशकोटीकोट्योऽवगाढाः स्युरित्येवमुत्कृष्टपदे तेऽसङ्ख्येयगुणा भावनीया इति। अथ गोलकप्ररूपणायाह—उक्कोसपयममोत्तुं निगोयओगाहणाएँ सव्वत्तो। निप्फाइज्जइ गोलो पएसपरिवुड्डिहाणीहिं ॥ ६ ॥ 'उत्कृष्टपदं' विवक्षितप्रदेशं अमुञ्चद्भिः निगोदावगाहनाया एकस्याः 'सर्वतः' सर्वासु दिक्षु निगोदान्तराणि स्थापयद्भिर्निष्पाद्यते गोलः, कथं ?, प्रदेशपरिवृद्धिहानिभ्यां–कांश्चित् प्रदेशान् विवक्षितावगाहनाया आक्रामद्भिः कांश्चिद्विमुञ्चद्भिरित्यर्थः, एव-

मेकगोलकनिष्पत्तिः, स्थापना चेयम्—० गोलकान्तरकल्पनायाह—तत्तोच्चिय गोलाओ उक्कोसपयं मुइत्तु जो अन्नो । होइ निगोओ तंमिवि अन्नो निप्फज्जती गोलो ॥७॥ तमेवोक्तलक्षणं गोलकमाश्रित्यान्यो गोलको निष्पद्यते, कथम्?, उत्कृष्टपदं प्राक्तनगोलकसम्बन्धि विमुच्य योऽन्यो भवति निगोदस्तस्मिन्नुत्कृष्टपदकल्पनेनेति । तथा च यत्स्यात्तदाह—एवं निगोयमेत्ते खेत्ते गोलस्स होइ निप्फत्ती । एवं निप्फज्जंते लोगे गोला असंखिज्जा ॥ ८ ॥ 'एवम्' उक्तक्रमेण निगोदमात्रे क्षेत्रे गोलकस्य भवति निष्पत्तिः, विवक्षितनिगोदावगाहातिरिक्तनिगोददेशानां गोलकान्तरानुप्रवेशात्, एवं च निष्पद्यन्ते लोके गोलका असंख्येयाः, असंख्येयत्वात् निगोदावगाहनानां, प्रतिनिगोदावगाहनं च गोलकनिष्पत्तेरिति ॥ अथ किमिदमेव प्रतिगोलकं यदुक्तमुत्कृष्टपदं तदेवेह ग्राह्यमुतान्यत्? इत्यस्यामाशङ्कायामाह—ववहारनएण इमं उक्कोसपयावि एत्तिया चेव । जं पुण उक्कोसपयं नेच्छइयं होइ तं वोच्छं ॥ ९ ॥ 'व्यवहारनयेन' सामान्येन 'इदम्' अनन्तरोक्तमुत्कृष्टपदमुक्तं, काका चेदमध्येयं, तेन नेहेदं ग्राह्यमित्यर्थः स्यात्, अथ कस्मादेवम्? इत्याह—'उक्कोसपयावि एत्तिया चेव'त्ति न केवलं गोलका असंख्येयाः, उत्कर्षपदान्यपि परिपूर्णगोलकप्ररूपितानि एतावन्त्येव-असंख्येयान्येव भवन्ति यस्मात्ततो न नियतमुत्कृष्टपदं किञ्चन स्यादिति भावः, यत्पुनरुत्कृष्टपदं नैश्चयिकं भवति सर्वोत्कर्षयोगाद् यदिह ग्राह्यमित्यर्थः तद्वक्ष्ये । तदेवाह—बायरनिगोयविग्गहगइयाई जत्थ समहिया अन्ने । गोला हुज्ज सुबहुला नेच्छइयपयं तदुक्कोसं ॥ १० ॥ बादरनिगोदानां—कन्दादीनां विग्रहगतिकादयो बादरनिगोदविग्रहगतिकादयः, आदिशब्दश्चेहाविग्रहगतिकावरोधार्थः, यत्रोत्कृष्टपदे समधिका अन्ये—सूक्ष्मनिगोदगोलकेभ्योऽपरे गोलका भवेयुः सुबहवो नैश्चयिकपदं तदुत्कर्षं, बादरनिगोदा हि पृथिव्यादिषु पृथ्व्यादयश्च स्वस्थानेषु स्वरूपतो भवन्ति न सूक्ष्मनिगोदवत्सर्वत्रेत्यतो यत्र क्वचित्ते भवन्ति तदुत्कृष्टपदं तात्त्विकमिति भावः । एतदेव दर्शयन्नाह—इहरा

पडुच्च सुहुमा बहुतुल्ला पायसो सगलगोला । तो बायराइगहणं कीरइ उक्कोसयपयंमि ॥ ११ ॥ 'इहर'त्ति बादरनिगोदाश्रयणं विना सूक्ष्मनिगोदान् प्रतीत्य बहुतुल्याः—निगोदसङ्ख्यया समानाः प्रायशः, प्रायोग्रहणमेकादिना न्यूनाधिकत्वे व्यभिचारपरिहारार्थं, क एते? इत्याह-सकलगोलाः, न तु खण्डगोलाः, अतो न नियतं किञ्चिदुत्कृष्टपद लभ्यते, यत एवं ततो बादरनिगोदादिग्रहणं क्रियते उत्कृष्टपदे ॥ अथ गोलकादीनां प्रमाणमाह-गोला य असंखेज्जा होंति निओया असंखया गोले, एक्केक्को उ निगोओ अणंतजीवो मुणेयव्वो ॥ १२ ॥ अथ जीवप्रदेशपरिमाणप्ररूपणापूर्वकं निगोदादीनामवगाहनामानमभिधित्सुराह-लोगस्स य जीवस्स य होन्ति पएसा असंखया तुल्ला । अङ्गुलअसंखभागो निगोयजियगोलगोगाहो ॥१३॥ लोकजीवयोः प्रत्येकमसंख्येयाः प्रदेशाः भवन्ति, ते च परस्परेण तुल्या एव, एषां च सङ्कोचविशेषाद् अङ्गुलासंख्येयभागो निगोदस्य तज्जीवस्य गोलस्य चावगाह इति निगोदादिसमावगाहना । तामेव समर्थयन्नाह—जंमि जिओ तंमेव उ निगोअतो तम्मि चेव गोलोवि । निप्फज्जइ जं खेत्ते तो ते तुल्लावगाहणया ॥ १४ ॥ यस्मिन् क्षेत्रे जीवोऽवगाहते तस्मिन्नेव निगोदो निगोदव्याप्त्या जीवस्यावस्थानात्, 'तो'त्ति ततः-तदनन्तरं तस्मिन्नेव गोलोऽपि निष्पद्यते, विवक्षितनिगोदावगाहनातिरिक्तायाः शेषनिगोदावगाहनाया गोलकान्तरप्रवेशेन निगोदमात्रत्वाद् गोलकावगाहनाया इति, यद्-यस्मात्क्षेत्रे-आकाशे ततस्ते-जीवनिगोदगोलाः 'तुल्यावगाहनाकाः' समानावगाहनाका इति । अथ जीवाद्यवगाहनासमतासामर्थ्येन यदेकत्र प्रदेशे जीवप्रदेशमानं भवति तद्भिभणिषुस्तत्प्रस्तावनार्थं प्रश्नं कारयन्नाह—उक्कोसपयपएसे किमेगजीवप्पएसरासिस्स । होज्जगनिगोयस्स व गोलस्स व किं समोगाढं? ॥ १५ ॥ तत्र जीवमाश्रित्योत्तरम्-जीवस्स लोगमेत्तस्स सुहुमओगाहणावगाढस्स । एक्कंमि पएसे होंति पएसा असंखेज्जा ॥१६॥ ते च किल कल्पनया कोटीशतसङ्ख्यस्य जीवप्रदेशराशेः प्रदेशदशसहस्रीस्वरूपजीवावगा-

हनया भागे हृते लक्षमाना भवन्तीति । अथ निगोदमाश्रित्याह—लोगस्स हिए भागे निगोयओगाहणाएँ जं लद्धं । उक्कोसपएऽतिगयं एत्तियमेक्केक्कजीवाओ ॥ १७ ॥ 'लोकस्य' कल्पनया प्रदेशकोटीशतमानस्य हृते भागे निगोदावगाहनया कल्पनातः प्रदेशदशसहस्रीमानया यल्लब्धं तच्च किल लक्षपरिमाणमुत्कृष्टपदेऽतिगतं—अवगाढमेतावदेकैकजीवात्, अनन्तजीवात्मकनिगोदसम्बन्धिन एकैकजीवसत्कमित्यर्थः । अनेन निगोदसत्कमुत्कृष्टपदे यदवगाढं तद्दर्शितमथ गोलकसत्कं यत्तत्रावगाढं तद्दर्शयति—एवं दव्वट्ठाओ सव्वेसिं एक्कगोलजीवाणं । उक्कोसपयमइगया होंति पएसा असंखगुणा ॥ १८ ॥ यथा निगोदजीवेभ्योऽसङ्ख्येयगुणास्तत्प्रदेशा उत्कृष्टपदेऽतिगता एवं 'द्रव्यार्थात्' द्रव्यार्थतया न तु प्रदेशार्थतया 'सव्वेसिं'ति सर्वेभ्य एकगोलगतजीवद्रव्येभ्यः सकाशादुत्कृष्टपदमतिगता भवन्ति प्रदेशा असङ्ख्यातगुणाः । इह किलानन्तजीवोऽपि निगोदः कल्पनया लक्षजीवः, गोलकश्चासङ्ख्यातनिगोदोऽपि कल्पनया लक्षनिगोदः, ततश्च लक्षस्य लक्षगुणने कोटीसहस्रसङ्ख्याः कल्पनया गोलके जीवा भवन्ति, तत्प्रदेशानां च लक्षं लक्षमुत्कृष्टपदेऽतिगतं, अतश्चैकगोलकजीवसङ्ख्यया लक्षगुणने कोटीकोटीदशकसङ्ख्या एकत्र प्रदेशे कल्पनया जीवप्रदेशा भवन्तीति । गोलकजीवेभ्य सकाशादेकत्र प्रदेशेऽसङ्ख्येयगुणा जीवप्रदेशा भवन्तीत्युक्तमथ तत्र गुणकारराशेः परिमाणनिर्णयार्थमुच्यते—तं पुण केवइएणं गुणियमसंखेज्जयं भवेज्जाहि । भन्नइ दव्वट्ठाए जावइया सव्वगोलत्ति ॥ १९ ॥ तत्पुनरनन्तरोक्तमुत्कृष्टपदातिगतजीवप्रदेशराशिसम्बन्धि 'कियता' किंपरिमाणेनासङ्ख्येयराशिना गुणितं सत् 'असंखेज्जयं'ति असङ्ख्येयकम्—असङ्ख्यातगुणनाद्धारायातं 'भवेत्' स्यादिति ?, भण्यते अत्रोत्तरं, द्रव्यार्थतया, न तु प्रदेशार्थतया, यावन्तः 'सर्वगोलकाः' सकलगोलकास्तावन्त इति गम्यं, स चोत्कृष्टपदगतैकजीवप्रदेशराशिर्मन्तव्यः, सकलगोलकानां तत्तुल्यत्वादिति ॥ किं कारणमोगाहणतुल्लत्ता जियनिगोयगोलाणं । गोला उक्कोसपएक्कजियपएसेहिं तो तुल्ला ॥२०॥

'किं कारणं'ति कस्मात्कारणाद् यावन्तः सर्वगोलास्तावन्त एवोत्कृष्टपदगतैकजीवप्रदेशाः ? इति प्रश्नः, अत्रोत्तरम्—अवगाहनातुल्यत्वात्, ते पामियमित्याह—जीवनिगोदगोलानाम्, अवगाहनातुल्यत्वं चैषामङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्रावगाहित्वादिति प्रश्नः, यस्मादेवं 'तो'त्ति तस्माद्गोलाः सकललोकसम्बन्धिनः उत्कृष्टपदे ये एकस्य जीवस्य प्रदेशास्ते तथा तैरुत्कृष्टपदैकजीवप्रदेशैस्तुल्या भवन्ति । एतस्यैव भावनार्थमुच्यते—गोलेहि हिए लोगे आगच्छइ जं तमेगजीवस्स । उक्कोसपयगयपएसरासितुल्लं हवइ जम्हा ॥ २१ ॥ 'गोलैः' गोलावगाहनाप्रदेशैः कल्पनया दशसहस्रसङ्ख्यैः 'हृते' विभक्ते हृतभाग इत्यर्थः 'लोके' लोकप्रदेशराशौ कल्पनया एककोटीशतप्रमाणे 'आगच्छति' लभ्यते 'यत्' सर्वगोलसङ्ख्यास्थानं कल्पनया लक्षमित्यर्थः तदेकजीवस्य सम्बन्धिना पूर्वोक्तप्रकारतः कल्पनया लक्षप्रमाणेनैवोत्कृष्टपदगतप्रदेशराशिना तुल्यं भवति यस्मात्तस्माद्गोला उत्कृष्टपदैकजीवप्रदेशैस्तुल्या भवन्तीति प्रकृतमेवेति । एवं गोलकानामुत्कृष्टपदगतैकजीवप्रदेशानां च तुल्यत्वं समर्थितं, पुनस्तदेव प्रकारान्तरेण समर्थयति—अहवा लोगपएसे एक्केक्के ठविय गोलमेक्केक्कं । एवं उक्कोसपएक्कजियपएसेसु मायंति ॥ २२ ॥ अथवा लोकस्यैव प्रदेशे एकैकस्मिन् 'स्थापय' निधेहि विवक्षितसमत्वबुभुत्सो ! गोलकमेकैकं, ततश्च 'एवम्' उक्तक्रमस्थापने उत्कृष्टपदे ये एकजीवप्रदेशास्ते तथा तेषु तत्परिमाणेष्वाकाशप्रदेशेष्वित्यर्थः मान्ति गोला इति गम्यं, यावन्त उत्कृष्टपदे एकजीवप्रदेशास्तावन्तो गोलका अपि भवन्तीत्यर्थः, ते च कल्पनया किल लक्षप्रमाणा उभयेऽपीति । अथ सर्वजीवेभ्य उत्कृष्टपदजीवप्रदेशा विशेषाधिका इति विभणिषुस्तेषां सर्वजीवानां च तावत्समतामाह—गोलो जीवो य समा पएसओ जं च सव्वजीवावि । होंति समोगाहणया मज्झिमओगाहणं पप्प ॥ २३ ॥ गोलको जीवश्च समौ प्रदेशतः—अवगाहनाप्रदेशानाश्रित्य, कल्पनया द्वयोरपि प्रदेशदशसहस्रामवगाढत्वात्, 'जं च'त्ति यस्माच्च सर्वजीवा अपि सूक्ष्मा भवन्ति समावगाहनका मध्यमावगाह-

नामाश्रित्य, कल्पनया हि जघन्यावगाहना पञ्च प्रदेशसहस्राणि उत्कृष्टा तु पञ्चदशेति द्वयोश्च मीलनेनार्द्धीकरणेन च दश सहस्राणि मध्यमा भवतीति ॥ तेण फुडं चिय सिद्धं एगपएसंमि जे जियपएसा । ते सव्वजीवतुल्ला सुणसु पुणो जह विसेसहिया ॥ २४ ॥ इह किलासद्भावस्थापनया कोटीशतसङ्ख्यप्रदेशस्य जीवस्याकाशप्रदेशदशसहस्र्यामवगाढस्य जीवस्य प्रतिप्रदेशं प्रदेशलक्षं भवति. तच्च पूर्वोक्तप्रकारतो निगोदवर्त्तिना जीवलक्षेण गुणितं कोटीसहस्रं भवति, पुनरपि च तदेकगोलवर्त्तिना निगोदलक्षेण गुणितं कोटीकोटीदशकप्रमाणं भवति, जीवप्रमाणमप्येतदेव, तथाहि—कोटीशतसंख्यप्रदेशे लोके दशसहस्रावगाहिनां गोलानां लक्षं भवति, प्रतिगोलकं च निगोदलक्षकल्पनात् निगोदानां कोटीसहस्रं भवति, प्रतिनिगोदं च जीवलक्षकल्पनात् सर्वजीवानां कोटीकोटीदशकं भवतीति ॥ अथ सर्वजीवेभ्य उत्कृष्टपदगतजीवप्रदेशा विशेषाधिका इति दर्श्यते—जं संति केइ खंडा गोला लोगंतवत्तिणो अन्ने । बायरविग्गहिएहि य उक्कोसपयं जमब्भहियं ॥ २५ ॥ यस्माद्विद्यन्ते केचित्खण्डा गोला लोकान्तवर्त्तिन 'अन्ने'त्ति पूर्णगोलकेभ्योऽपरेऽतो जीवराशिः कल्पनया कोटीकोटीदशकरूप ऊनो भवति, पूर्णगोलकतायामेव तस्य यथोक्तस्य भावात्, ततश्च येन जीवराशिना खण्डगोलका पूर्णीभूताः स सर्वजीवराशेरपनीयते असद्भूतत्वात्तस्य. स च किल कल्पनया कोटीमानः, तत्र चापनीते सर्वजीवराशिः स्तोकतरो भवति, उत्कृष्टपदं तु यथोक्तप्रमाणमेवेति तत्त्वतो विशेषाधिकं भवति, समता पुनः खण्डगोलानां पूर्णताविवक्षणादुक्तेति, तथा बादरविग्रहिकैश्च—बादरनिगोदादिजीवप्रदेशैश्चोत्कृष्टपदं यद्—यस्मात्सर्वजीवराशेरभ्यधिकं ततः सर्वजीवेभ्य उत्कृष्टपदे जीवप्रदेशा विशेषाधिका भवन्तीति, इयमत्र भावना—बादरविग्रहगतिकादीनामनन्तानां जीवानां सूक्ष्मजीवासङ्ख्येयभागवर्त्तिनां कल्पनया कोटीप्रायसङ्ख्यानां पूर्वोक्तजीवराशिप्रमाणे प्रक्षेपणेन समताप्राप्तावपि तस्य बादरादिजीवराशेः कोटीप्रायसङ्ख्यस्य मध्यादुत्कर्षतोऽसङ्ख्येयभागस्य कल्पनया शतस-

प्र०आ०४३१

द्रव्यस्य विवक्षितसूक्ष्मगोलकावगाहनायामवगाहनात् एकैकस्मिंश्च प्रदेशे प्रत्येकं जीवप्रदेशलक्षस्यावगाढत्वात् लक्षस्य च शतगुणत्वेन कोटीप्रमाणत्वात् तस्याश्चोत्कृष्टपदे प्रक्षेपात्पूर्वोक्तमुत्कृष्टपदजीवप्रदेशमानं कोट्याऽधिकं भवतीति। यस्मादेवं—तम्हा सव्वेहिंतो जीवेहिंतो फुडं गहेयव्वं। उक्कोसपयपएसा होंति विसेसाहिया नियमा ॥ २६ ॥ इदमेव प्रकारान्तरेण भाव्यते—अहवा जेण बहुसमा सुहुमा लोएऽवगाहणाए य। तेणेक्कं जीवं बुद्धीए विरल्लए लोए ॥ २७ ॥ यतो बहुसमाः—प्रायेण समाना जीवसङ्ख्यया कल्पनया एकैकावगाहनायां जीवकोटीसहस्रस्यावस्थानात्, खण्डगोलकैर्व्यभिचारपरिहारार्थं चेह बहुग्रहणं, 'सूक्ष्माः' सूक्ष्मनिगोदगोलकाः कल्पनया लक्षकल्पाः 'लोके' चतुर्दशरज्ज्वात्मके, तथाऽवगाहनया च समाः, कल्पनया दशसु दशसु प्रदेशसहस्रेष्ववगाढत्वात, तस्मादेकप्रदेशावगाढजीवप्रदेशानां सर्वजीवानां च समतापरिज्ञानार्थमेकैकं जीवं बुद्ध्या 'विरल्लए' केवलिसमुद्घातगत्या विस्तारयेल्लोके, अयमत्र भावार्थः—यावन्तो गोलकस्यैकत्र प्रदेशे जीवप्रदेशा भवन्ति कल्पनया कोटीदशकप्रमाणास्तावन्त एव विस्तारितेषु जीवेषु लोकस्यैकत्र प्रदेशे ते भवन्ति, सर्वजीवा अप्येतत्समाना एवेति, अत एवाह—एवंपि समा जीवा एगपएसगयजियपएसेहिं। बायरबाहुल्ला पुण होंति पएसा विसेसहिया ॥ २८ ॥ एवमपि न केवलं 'गोलो जीवो य समा' इत्यादिना पूर्वोक्तन्यायेन समा जीवा एकप्रदेशगतैर्जीवप्रदेशैरिति, उत्तरार्द्धस्य तु भावना प्राग्वदवसेयेति। अथ पूर्वोक्तराशीनां निदर्शनान्यभिधित्सुः प्रस्तावयन्नाह—तेसिं पुण रासीणं निदरिसणमिणं भणामि पच्चक्खं। सुहगहणगाहणत्थं ठवणारासिप्पमाणेहिं ॥ २९ ॥ गोलाण लक्खमेक्कं गोले २ निगोयलक्खं तु। एक्केक्के य निगोए जीवाणं लक्खमेक्केक्कं ॥ ३० ॥ कोडिसयमेगजीवप्पएसमाणं तमेव लोगस्स। गोलनिगोयजियाणं दस उ सहस्सा समोगाहो ॥३१॥ जीवस्सेक्केक्कस्स य दससाहस्सावगाहिणो लोगे। एक्केक्कंमि पएसे पएसलक्खं समोगाढं ॥ ३२ ॥ जीवसयस्स जहन्ने पयंमि कोडी

जियप्पएसाणं । ओगाढा उक्कोसे पयंमि वोच्छं पएसग्गं ॥ ३३ ॥ कोडिसहस्सजियाणं कोडाकोडीदसप्पएसाणं । उक्कोसे ओगाढा सव्वजियाऽवेत्तिया चेव ॥ ३४ ॥ कोडी उक्कोसपयंमि बायरजियप्पएसपक्खेवो । सोहणयमेत्तियं चिय कायव्वं खंडगोलाणं ॥३५॥ उत्कृष्टपदे सूक्ष्मजीवप्रदेशराशेरुपरि कोटीप्रमाणो बादरजीवप्रदेशानां प्रक्षेपः कार्यः, शतकल्पत्वाद्विवक्षितसूक्ष्मगोलकावगाढबादरजीवानां, तेषां च प्रत्येकं प्रदेशलक्षस्योत्कृष्टपदेऽवस्थितत्वात्, तन्मीलने च कोटीसद्भावादिति, तथा सर्वजीवराशेर्मध्याच्छोधनकं-अपनयनम् 'एत्तियं चिय'त्ति एतावतामेव-कोटीसङ्ख्यानामेव कर्त्तव्यं, 'खण्डगोलानां' खण्डगोलकपूर्णताकरणे नियुक्तजीवानां तेषामसद्भाविकत्वादिति ॥ एएसि जहासंभवमत्थोवणयं करेज्ज रासीणं । सब्भावओ य जाणिज्ज ते अणंता असंखा वा ॥ ३६ ॥ इहार्थोपनयो यथावस्थानं प्रायः प्राग् दर्शित एव, 'अणंत'त्ति निगोदे जीवा यद्यपि लक्षमाना उक्तास्तथाऽप्यनन्ताः, एवं सर्वजीवा अपि, तथा निगोदादयो ये यथास्थानं लक्षमाना उक्तास्तेऽप्यसङ्ख्येया अवसेया इति ॥ एकादशशते दशमोद्देशकः समाप्तः ॥ ११-१० ॥

---

अनन्तरोद्देशके लोकवक्तव्यतोक्ता, इह तु लोकवर्त्तिकालद्रव्यवक्तव्यतोच्यते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्यैकादशोद्देशकस्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नामं नगरे होत्था, वन्नओ, दूतिपलासे चेइए, वन्नओ, जाव पुढविसिलापट्टओ, तत्थ णं वाणियगामे नगरे सुदंसणे नामं सेट्ठी परिवसति अड्ढे जाव. अपरिभूए समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ, सामी समोसढे जाव परिसा पज्जुवासइ, तए णं से सुदंसणे सेट्ठी इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठे ण्हाए कय जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए साओ गिहाओ पडिनिक्खमइ साओ गिहाओ पडिनि-

क्खभित्ता सकोरेंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं पायविहारचारेणं महया पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ते वाणियगामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव दूतिपलासे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छति, तं०—सच्चित्ताणं दव्वाणं जहा उसभदत्तो जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ। तए णं समणे भगवं महावीरे सुदंसणस्स सेट्ठिस्स तीसे य महतिमहालयाए जाव आराहए भवइ। तए णं से सुदंसणे सेट्ठी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० उट्ठाए उट्ठेइ २त्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी—कइविहे णं भंते! काले पन्नत्ते ?, सुदंसणा! चउव्विहे काले पन्नत्ते, तंजहा—पमाणकाले१ अहाउनिव्वत्तिकाले२ मरणकाले ३ अद्धाकाले ४, से किं तं पमाणकाले ?, २ दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—दिवसप्पमाणकाले १ राइप्पमाणकाले य २, चउपोरिसिए दिवसे चउपोरिसिया राई भवइ ( सू० ४२४ ) ॥

'तेण'मित्यादि, 'पमाणकाले'त्ति प्रमीयते—परिच्छिद्यते येन वर्षशतादि तत् प्रमाणं स चासौ कालश्चेति प्रमाणकालः प्रमाणं वा—परिच्छेदनं वर्षादेस्तत्प्रधानस्तदर्थो वा कालः प्रमाणकालः—अद्धाकालस्य विशेषो दिवसादिलक्षणः, आह च—"दुविहो पमाणकालो दिवसपमाणं च होइ राई य। चउपोरिसिओ दिवसो राई चउपोरिसी चेव ॥१॥" 'अहाउनिव्वत्तिकाले'त्ति यथा—येन प्रकारेणायुषो निर्वृत्तिः—बन्धनं तथा यः कालः—अवस्थितिरसौ यथायुर्निर्वृत्तिकालो—नारकाद्यायुष्कलक्षणः, अयं चाद्धाकाल एवायुःकर्मानुभवविशिष्टः सर्वेषामेव संसारिजीवानां स्यात्, आह च—"नेरइयतिरियमणुया देवाण अहाउयं तु जं जेणं। निव्वत्तियमन्नभवे पालेंति अहा-

उ.ालो सो ॥ १ ॥" 'मरणकाले'त्ति मरणेन विशिष्टः कालः मरणकालः–अद्धाकाल एव, मर.मेव वा कालो मरणस्य कालपर्यायत्वान्मरणकालः, 'अद्धाकाले'त्ति अद्धाः समयादयो विशेषास्तद्रूपः कालोऽद्धाकालः–चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्ती समयादिः, आह च—"समयावलियमुहुत्ता दिवसअहोरत्तपक्खमासा य। संवच्छरजुगपलिया सागरओसप्पिपरियट्टा ॥ १ ॥" इति। अनन्तरं चतुष्पौरुषीको दिवसश्चतुष्पौरुषीका च रात्रिर्भवतीत्युक्तमथ पौरुषीमेव प्ररूपयन्नाह—

उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, जदा णं भंते! उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवति तदा णं कतिभागमुहुत्तभागेणं परिहायमाणी परि० २ जहन्निया तिमुहुत्ता दिवमस्स वा राईए वा पोरिसी भवति ?, जदा णं जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवति तदा णं कतिभागमुहुत्तभागेणं परिवड्ढमाणी २ उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ ?, सुदंसणा! जदा णं उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ तदा णं बावीससयभागमुहुत्तभागेणं परिहायमाणी परि० २ जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, जदा णं जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ तया णं बावीससयभागमुहुत्तभागेणं परिवड्ढमाणी परि० २ उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवति। कदा णं भंते! उक्कोसिआ अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसीभवइ ? कदा वा जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ ?, सुदंसणा! जदा णं उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ जह-

न्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ तदा णं उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स पोरिसी भवइ जहन्निया तिमुहुत्ता राइए पोरिसी भवइ, जया णं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्तिआ राई भवति जहन्निए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ तदा णं उक्कोसिया अद्धपंचमुहुत्ता राईए पोरिसी भवइ जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स पोरिसी भवइ। कदा णं भंते! उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ? कदा वा उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ?, सुदंसणा! आसाढपुन्निमाए उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ, पोसस्स पुन्निमाए णं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ॥ अत्थि णं भंते! दिवसा य राईओ य समा चेव भवन्ति?, हंता! अत्थि, कदा णं भंते! दिवसा य राईओ य समा चेव भवन्ति?, सुदंसणा! चित्तासोयपुन्निमासु णं, एत्थ णं दिवसा य राईओ य समा चेव भवन्ति, पन्नरसमुहुत्ते दिवसे पन्नरसमुहुत्ता राई भवइ चउभागमुहुत्तभागूणा चउमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, सेत्तं पमाणकाले॥ (सूत्र ४२५)॥

'उक्कोसिये'त्यादि, 'अद्धपंचममुहुत्त'त्ति अष्टादशमुहूर्त्तस्य दिवसस्य रात्रेर्वा चतुर्थो भागो यस्मादर्द्धपञ्चममुहूर्त्ता नवघटीका इत्यर्थः ततोऽर्द्धपञ्चमा मुहूर्त्ता यस्यां सा तथा, 'तिमुहुत्त'त्ति द्वादशमुहूर्त्तस्य दिवसादेश्चतुर्थो भागस्त्रिमुहूर्त्तो भवति अतस्त्रयो मुहूर्त्ताः—षट् घटिका यस्यां सा तथा, 'कइभागमुहुत्तभागेणं'ति कतिभागः—कतिथभागस्तद्रूपो मुहूर्त्तभागः कतिभागमुहूर्त्तभागस्तेन, कतिथेन मुहूर्त्तांशेनेत्यर्थः 'बावीससयभागमुहुत्तभागेणं'ति इहार्द्धपञ्चमानां त्रयाणां च मुहूर्त्तानां विशेषः सार्द्धो मुहूर्त्तः, स च त्र्यशीत्य-

धिकेन दिवसशतेन वर्द्धते हीयते च, स च सार्द्धो मुहूर्त्तस्त्र्यशीत्यधिकशतभागतया व्यवस्थाप्यते, तत्र च मुहूर्त्ते द्वाविंशत्यधिकं भागशतं भवत्यतोऽभिधीयते—'बावीसे'त्यादि, द्वाविंशत्यधिकशततमभागरूपेण मुहूर्त्तभागेनेत्यर्थः । 'आसाढपुन्निमाए'इत्यादि, इह 'आषाढपौर्णमास्या'मिति यदुक्तं तत् पञ्चसंवत्सरिकयुगस्यान्तिमवर्षापेक्षयाऽवसेयं, यतस्तत्रैवाषाढपौर्णमास्यामष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति, अर्द्धपञ्चममुहूर्त्ता च तत्पौरुषी भवति, वर्षान्तरे तु यत्र दिवसे कर्कसङ्क्रान्तिर्जायते तत्रैवासौ भवतीति समवसेयमिति, एवं पौषपौर्णमास्यामप्यौचित्येन वाच्यमिति ॥ अनन्तरं रात्रिदिवसयोर्वैषम्यमभिहितं, अथ तयोरेव समतां दर्शयन्नाह—'अत्थि ण'मित्यादि, इह च 'चेत्तासोयपुन्निमाएसु ण'मित्यादि यदुच्यते तद्व्यवहारनयापेक्षं, निश्चयतस्तु कर्कमकरसङ्क्रान्तिदिनादारभ्य यद् द्विनवतितममहोरात्रं तस्यार्द्धे समा दिवसरात्रिप्रमाणतेति, तत्र च पञ्चदशमुहूर्त्ते दिने रात्रौ वा पौरुषीप्रमाणं त्रयो मुहूर्त्तास्त्रयश्च मुहूर्त्तचतुर्भागा भवन्ति, दिनरात्रिचतुर्भागरूपत्वात्तस्याः, एतदेवाह—'चउभागे'त्यादि, चतुर्भागरूपो यो मुहूर्त्तभागस्तेनोना चतुर्भागमुहूर्त्तभागोना चत्वारो मुहूर्त्ता यस्यां पौरुष्यां सा तथेति ॥

से किं तं अहाउनिव्वत्तिकाले ?, अहा० २ जन्नं जेणं नेरइएण वा तिरिक्खजोणिएण वा मणुस्सेण वा देवेण वा अहाउयं निव्वत्तियं सेत्तं पालेमाणे अहाउनिव्वत्तिकाले । से किं तं मरणकाले ?, २ जीवो वा सरीराओ सरीरं वा जीवाओ, सेत्तं मरणकाले ॥ से किं तं अद्धाकाले ?, अद्धा० २ अणेगविहे पन्नत्ते, से णं समयट्ठयाए आवलियट्ठयाए जाव उस्सप्पिणीट्ठयाए । एस णं सुदंसणा ! अद्धा दोहारच्छेदेणं छिज्जमाणी जाहे विभागं नो हव्वमागच्छइ सेत्तं समए, समयट्ठयाए असंखेज्जाणं समयाणं समुदयसमिइसमागमेणं सा एगा आवलियत्ति पवुच्चइ,

संखेज्जाओ आवलियाओ जहा सालिउद्देसए जाव सागरोवमस्स उ एगस्स भवे परिमाणं। एएहि णं भंते! पलिओवमसागरोवमेहिं किं पयोयणं?, सुदंसणा! एएहिं पलिओवमसागरोवमेहिं नेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवाणं आउयाइं मविज्जंति ॥ (सू० ४२५) ॥ नेरइयाणं भंते! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता?, एवं ठिइपदं निरवसेसं भाणियव्वं जाव अजहन्नमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता ॥ (सूत्र ४२६) ॥

'से किं तं अहाउनिव्वत्तियकाले'इत्यादि, इह च 'जेणं'ति सामान्यनिर्देशे ततश्च येन केनचिन्नारकाद्यन्यतमेन 'अहाउयं निव्वत्तियं'ति यत्प्रकारमायुष्कं—जीवितमन्तर्मुहूर्त्तादि यथाऽऽयुष्कं 'निर्वर्त्तितं' निबद्धं। 'जीवो वा सरीरे'त्यादि, जीवो वा शरीरात् शरीरं वा जीवात् वियुज्यत इति शेषः, वाशब्दौ शरीरजीवयोरवधिभावस्येच्छानुसारिताप्रतिपादनार्थाविति ॥ 'से किं तं अद्धाकाले'इत्यादि, अद्धाकालोऽनेकविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—'समयट्ठयाए'त्ति समयरूपोऽर्थः समयार्थस्तद्भावस्तत्ता तया, समयभावेनेत्यर्थः, एवमन्यत्रापि, यावत्करणात् 'मुहुत्तट्ठयाए'इत्यादि दृश्यमिति। अथानन्तरोक्तस्य समयादिकालस्य स्वरूपमभिधातुमाह—'एस णं'मित्यादि, एषा अनन्तरोक्तोत्सर्पिण्यादिका 'अद्धा दोहारच्छेयणेणं'ति द्वौ हारौ—भागौ यत्र छेदने द्विधा वा कारः—करणं यत्र तद् द्विहारं द्विधाकारं वा तेन 'जाहे'त्ति यदा तदा समय इति शेषः 'सेत्त'मित्यादि निगमनम्। 'असंखेज्जाण'मित्यादि, असङ्ख्यातानां समयानां सम्बन्धिनो ये समुदया—वृन्दानि तेषां याः समितयो—मीलनानि तासां यः समागमः—संयोगः स समुदयसमितिसमागमस्तेन यत्कालमानं भवतीति गम्यते सैकावलिकेति प्रोच्यते, 'सालिउद्देसए'त्ति षष्ठशतस्य सप्तमोद्देशके ॥ पल्योपमसागरोपमाभ्यां नैरयिकादीनामायुष्काणि मीयन्त इत्युक्तमथ तदायुष्कमानमेव प्रज्ञापयन्नाह—'नेरइयाण'मित्यादि, 'ठितिपयं'ति प्रज्ञापनायां चतुर्थं पदं॥

अत्थि णं भंते ! एएसिं पलिओवमसागरोवमाणं खएति वा अवचयेति वा ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ अत्थि णं एएसि णं पलिओवमसागरोवमाणं जाव अवचयेति वा ? । एवं खलु सुदंसणा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं हत्थिणागपुरे नामं नगरे होत्था वन्नओ, सहस्संबवणे उज्जाणे वन्नओ, तत्थ णं हत्थिणागपुरे नगरे बले नामं राया होत्था वन्नओ, तस्स णं बलस्स रन्नो पभावई नामं देवी होत्था सुकुमाल० वन्नओ जाव विहरइ । तए णं सा पभावई देवी अन्नया कयाई तंसि तारिसगंसि वासवरंसि अब्भिंतरओ सचित्तकम्मे बाहिरओ दूमियघट्ठमट्ठे विचित्तउल्लोयचिल्लियतले मणिरयणपणासियंधयारे बहुसमसुविभत्तदेसभाए पंचवन्नसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे सुगंधिवरगंधिए गंधवट्टिभूए तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए उभओ बिब्बोयणे दुहओ उन्नए मज्झेणयगंभीरे गंगापुलिणवालुयउद्दालसालिसए उवचियखोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छन्ने सुविरइयरयत्ताणे रत्तंसुयसंवुए सुरम्मे आइणगरूयबूरणवणीयतूलफासे सुगंधवरकुसुमचुन्नसयणोवयारकलिए अद्धरत्तकालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी २ अयमेयारूवं ओरालं कल्लाणं सिवं धन्नं मंगल्लं सस्सिरीयं महासुविणं पासित्ताणं पडिबुद्धा हाररययखीरसागरससंककिरणदगरयरययमहासेलपंडुरतरोरुरमणिज्जपेच्छणिज्जं थिरलट्ठपउट्ठवट्टपीवरसुसिलिट्ठविसिट्ठतिक्खदाढाविडंबियमुहं परिकम्मियजच्चकमलकोमलमाइयसोभंतलट्ठउट्ठं रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुजीहं मूसागयपवरकणगतावियआवत्तायंतवट्टतडिविमलसरिसनयणं विसालपीवरोरुं पडिपुन्नविमलखंधं मिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थवि-



प्र०आ०५३५

च्छिन्नकेसरसडोवसोभियं ऊसियसुनिम्मियसुजायअप्फोडियंलगूलं सोमं सोमाकारं लीलायंतं जंभायंतं नहयलाओ ओवयमाणं नियगवयणमतिवयंतं सीहं सुविणे पासित्ताणं पडिवुद्धा । तए णं सा पभावती देवी अयमेयारूवं ओरालं जाव सस्सिरीयं महासुविणं पासित्ता णं पडिवुद्धा समाणी हट्ठतुट्ठ जाव हियया धाराहयकलंबपुप्फगंपिव समूससियरोमकूवा तं सुविणं ओगिण्हति ओगिण्हित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव बलस्स रन्नो सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता बलं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरीयाहिं मियमहुरमंजुलाहिं गिराहिं संलवमाणी संलवमाणी पडिबोहेति पडिबोहेत्ता बलेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि भद्दासणंसि णिसीयति णिसीयित्ता आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया बलं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव संलवमाणी २ एवं वयासी—एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगण० तं चेव जाव नियगवयणमइवयंतं सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिवुद्धा, तणं देवाणुप्पिया ! एयस्स ओरालस्स जाव महासुविणस्स के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ?, तए णं से बले राया पभावईए देवीए अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हयहियये धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयतणुयऊसवियरोमकूवे तं सुविणं ओगिण्हइ ओगिण्हित्ता ईहं पविसइ ईहं पविसित्ता अप्पणो साभाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविन्नाणेणं तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करेइ तस्स २ त्ता पभावइं देविं

ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव मंगल्लाहिं मियमहुरसस्सि० संलवमाणे २ एवं वयासी—ओराले णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे कल्लाणे णं तुमे जाव सस्सिरीए णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे आरोगतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारए णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे अत्थलाभो देवाणुप्पिए ! भोगलाभो देवाणुप्पिए ! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए ! रज्जलाभो देवाणुप्पिए ! एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए ! णवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण राइंदियाणं विइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं कुलपव्वयं कुलवडेंसयं कुलतिलगं कुलकित्तिकरं कुलनंदिकरं कुलजसकरं कुलाधारं कुलपायवं कुलविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं अहीण पडिपुन्नपंचिंदियसरीरं जाव ससिसोमाकारं कंत पियदंसणं सुरूवं देवकुमारसमप्पभे दारगं पयाहिसि, सेऽवि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कंते वित्थिन्नविउलबलबाहणे रज्जवई राया भविस्सइ, तं उराले णं तुमे जाव सुमिणे दिट्ठे आरोग्गतुट्ठि जाव मंगल्लकारए णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठेत्ति कट्टु पभावतिं देविं ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं दोच्चंपि तच्चंपि अणुवूहति । तए णं सा पभावती देवी बलस्स रन्नो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० करयल जाव एवं वयासी—एवमेयं देवाणुप्पिया ! तहमेयं देवाणुप्पिया ! अवितहमेयं देवाणुप्पिया ! असंदिद्धमेयं दे० इच्छियमेयं देवाणुप्पिया ! पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया ! इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया ! से जहेयं तुज्झे वदहत्ति कट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ पडिच्छित्ता बलेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी णाणामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवल जाव गतीए जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सयणिज्जंसि निसीयति निसीइत्ता एवं

वयासी–मा मे से उत्तमे पहाणे मंगल्ले सुविणे अन्नेहिं पावसुमिणेहिं पडिहम्मिस्सइत्ति कट्टु देवगुरुजणसंबद्धाहिं पसत्थाहिं मंगल्लाहिं धम्मियाहिं कहाहिं सुविणजागरियं पडिजागरमाणी २ विहरति। तए णं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अज्ज सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं गंधोदयसित्तसुइयसंमज्जिओवलित्तं सुगंधवरपंचवन्नपुप्फोवयारकलियं कालागुरुपवरकुंदुरुक्क जाव गंधवट्टिभूयं करेह य करावेह य करेत्ता करावेत्ता सीहासणं रएह सीहासणं रयावेत्ता ममेतं जाव पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबिय जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से बले राया पचूसकालसमयंसि सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेत्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ पायपीढाओ पच्चोरुहित्ता जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छति अट्टणसालं अणुपविसइ जहा उववाइए तहेव अट्टणसाला तहेव मज्जणघरे जाव ससिव्व पियदंसणे नरवई मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरच्छाभिमुहे निसीयइ निसीइत्ता अप्पणो उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए अट्ठ भद्दासणाइं सेयवत्थपच्चुत्थुयाइं सिद्धत्थगकयमंगलोवयाराइं रयावेइ रयावेत्ता अप्पणो अदूरसामंते णाणामणिरयणमंडियं अहियपेच्छणिज्जं महग्घवरपट्टणुग्गयं सण्हपट्टबहुभत्तिसयचित्तताणं ईहामियउसभजावभत्तिचित्तं अब्भिंतरियं जवणियं अंछावेइ अंछावेत्ता नाणामणिरयणभत्तिचित्तं अच्छरयमउयमसूरगोच्छगं सेयवत्थपच्चुत्थुयं अंगसुहफासुयं सुमउयं पभावतीए देवीए भद्दासणं रयावेई रयावेत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ

सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अट्ठंगमहानिमित्तसुत्तत्थधारए विविहसत्थकुसले सुविणलक्खणपाढए सद्दावेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणेत्ता बलस्स रन्नो अंतियाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता सिग्घं तुरियं चवलं चंडं वेइयं हत्थिणपुरं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव तेसिं सुविणलक्खणपाढगाणं गिहाइं तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता ते सुविणलक्खणपाढए सद्दावेंति। तए णं ते सुविणलक्खणपाढगा बलस्स रन्नो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठ० ण्हाया कय जाव सरीरा सिद्धत्थगहरियालियाकयमंगलमुद्धाणा सएहिं २ गिहेहिंतो निग्गच्छंति स० २ हत्थिणापुरं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव बलस्स रन्नो भवणवरवडेंसए तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता भवणवरवडेंसगपडिदुवारंसि एगओ मिलंति एगओ मिलित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता करयल० बलरायं जएणं विजएणं वद्धावेंति । तए णं सुविणलक्खणपाढगा बलेणं रन्ना वंदियपूइयसक्कारियसंमाणिया समाणा पत्तेयं २ पुव्वन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति, तए णं से बले राया पभावतिं देविं जवणियंतरियं ठावेइ ठावेत्ता पुप्फफलपडिपुन्नहत्थे परेणं विणएणं ते सुविणलक्खणपाढए एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! पभावती देवी अज्ज तंसि तारिसगंसि वासघरंसि जाव सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा तण्णं देवाणुप्पिया ! एयस्स ओरालस्स जाव के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ?, तए णं सुविणलक्खणपाढगा बलस्स रन्नो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० तं सुविणं ओगिण्हइ २ ईहं अणुप्पविसइ अणुप्पविसित्ता तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करेइ तस्स० २ त्ता अन्नमन्नेणं

सद्धिं संचालेंति २ तस्स सुविणस्स लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अभिगयट्ठा बलस्स रन्नो पुरओ सुविणसत्थाइं उच्चारेमाणा उ० २ एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं सुविणसत्थंसि बायालीसं सुविणा तीसं महासुविणा बावत्तरि सव्वसुविणा दिट्ठा, तत्थ णं देवाणुप्पिया! तित्थगरमायरो वा चक्कवट्टिमायरो वा तित्थगरंसि वा चक्कवट्टिंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुविणाणं इमे चोद्दस महासुविणे पासित्ताणं पडिवुज्झंति, तंजहा–गयवसहसीहअभिसेयदामससिदिणयरं झयं कुंभं। पउमसरसागरविमाणभवणरयणुच्चयसिहिं च १४ ॥ १ ॥ वासुदेवमायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुविणाणं अन्नयरे सत्त महासुविणे पासित्ता णं पडिवुज्झंति, बलदेवमायरो वा बलदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुविणाणं अन्नयरे चत्तारि महासुविणे पासित्ता णं पडिवुज्झंति, मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कममाणंसि एतेसि णं चउदसण्हं महासुविणाणं अन्नयरं एगं महासुविणं पासित्ता णं पडिवुज्झन्ति, इमे य णं देवाणुप्पिया! पभावतीए देवीए एगे महासुविणे दिट्ठे, तं ओराले णं देवाणुप्पिया! पभावतीए देवीए सुविणे दिट्ठे जाव आरोग्गतुट्ठ जाव मंगल्लकारए णं देवाणुप्पिया! पभावतीए देवीए सुविणे दिट्ठे, अत्थलाभो देवाणुप्पिए! भोग० पुत्त० रज्जलाभो देवाणुप्पिए!, एवं खलु देवाणुप्पिए! पभावती देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं जाव वीतिक्कंताणं तुम्हं कुलकेउं जाव पयाहिति, सेऽविय णं दारए उम्मुक्कबालभावे जाव रज्जवई राया भविस्सइ अणगारे वा भावियप्पा, तं ओराले णं देवाणुप्पिया! पभावतीए देवीए सुविणे दिट्ठे जाव

आरोग्गतुट्ठदीहाउयकल्लाणजाव दिट्ठे। तए णं से बले राया सुविणलक्खणपाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ करयल जाव कट्टु ते सुविणलक्खणपाढगे एवं वयासी–एवमेयं देवाणुप्पिया! जाव से जहेयं तुब्भे वदहत्तिकट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ तं० त्ता सुविणलक्खणपाढए विउलेणं असणपाणखाइमसाइमपुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेति संमाणेति सक्कारेत्ता संमाणेत्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयति २ विपुलं २ पडिवसज्जेति पडिविसज्जेत्ता सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ सी० अब्भुट्ठेत्ता जेणेव पभावती देवी तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता पभावतीं देवीं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव संलवमाणे संलवमाणे एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया! सुविणसत्थंसि बायालीसं सुविणा तीसं महासुविणा बावत्तरि सव्वसुविणा दिट्ठा, तत्थ णं देवाणुप्पिए! तित्थगरमायरो वा चक्कवट्टिमायरो वा तं चेव जाव अन्नयरं एगं महासुविणं पासित्ता णं पडिवुज्झंति, इमे य णं तुमे देवाणुप्पिए! एगे महासुविणे दिट्ठे तं ओराले तुमे देवी! सुविणे दिट्ठे जाव रज्जवई राया भविस्सइ अणगारे वा भावियप्पा, तं ओराले णं तुमे देवी! सुविणे दिट्ठे जाव दिट्ठेत्तिकट्टु पभावतिं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव दोच्चंपि तच्चंपि अणुबूहइ, तए णं सा पभावती देवी बलस्स रन्नो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठकरयलजाव एवं वयासी—एयमेयं देवाणुप्पिया! जाव तं सुविणं सम्मं पडिच्छति तं सुविणं सम्मं पडिच्छित्ता बलेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाणामणिरयणभत्तिचित्त जाव अब्भुट्ठेति अतुरियमचलजावगतीए जेणेव सए भवणे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सयं भवणमणुपविट्ठा। तए णं सा पभावती देवी पहाया कयब-

लिकम्मा जाव सव्वालंकारविभूसिया तं गब्भं णाइसीएहिं नाइउण्हेहिं नाइतित्तेहिं नाइकडुएहिं नाइकसाएहिं नाइअंबिलेहिं नाइमहुरेहिं उउभयमाणसुहेहिं भोयणच्छायणगंधमल्लेहिं जं तस्स गब्भस्स हियं मितं पत्थं गब्भपोसणं तं देसे य काले य आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएहिं सयणासणेहिं पइरिक्कसुहाए मणोणुकूलाए विहारभूमीए पसत्थदोहला संपुन्नदोहला सम्माणियदोहला अवमाणियदोहला वोच्छिन्नदोहला ववणीयदोहला ववगयरोगमोहभयपरित्तासा तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति । तए णं सा पभावती देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण राइंदियाणं वीतिक्कंताणं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारयं पयाया । तए णं तीसे पभावतीए देवीए अंगपडियारियाओ पभावतिं देविं पसूयं जाणेत्ता जेणेव बले राया तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता करयल जाव बलं रायं जयेणं विजएणं वद्धावेंति जएणं विजएणं वद्धावेत्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया ! पभावती० पियट्ठयाए पियं निवेदेमो पियं भे भवउ । तए णं से बले राया अंगपडियारियाणं अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव धाराहयणीव जावरोमकूवे तासिं अंगपडियारियाणं मउडवज्जं जहामालियं ओमोयं दलयति २ सेतं रययामयं विमलसलिलपुन्नं भिंगारं च गिण्हइ गिण्हित्ता मत्थए धोवइ मत्थए धोवित्ता विउलं जीवियारिहं दलयति पीइदाणं पीइदाणं दलयित्ता सक्कारेति सम्माणेति ॥ ( सूत्रं ४२८ ) ॥

अथ पल्योपमसागरोपमयोरतिप्रचुरकालत्वेन क्षयमसम्भावयन् प्रश्नयन्नाह—'अत्थि ण'मित्यादि, 'खये'त्ति सर्वविनाशः

'अवचए'त्ति देशतोऽपगम इति ॥ अथ पल्योपमादिक्षयं तस्यैव सुदर्शनस्य चरितेन दर्शयन्निदमाह— एवं खलु सुदंसणे'त्यादि, 'तंसि तारिसगंसि'त्ति तस्मिंस्तादृशके-वक्तुमशक्यस्वरूपे पुण्यवतां योग्य इत्यर्थः 'दूमियघट्ठमट्ठ'त्ति दूमितं-धवलितं घृष्टं कोमलपाषाणादिना अत एव मृष्टं-मसृणं यत्तत्तथा तस्मिन् 'विचित्तउल्लोयचिल्लियतले'त्ति विचित्रो-विविधचित्रयुक्तः उल्लोकः-उपरिभागो यत्र 'चिल्लियं'ति दीप्यमानं तलं च-अधोभागो यत्र तत्तथा तत्र 'पंचवन्नसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए'त्ति पञ्चवर्णेन सरसेन सुरभिणा च मुक्तेन-क्षिप्तेन पुष्पपुञ्जलक्षणेनोपचारेण-पूजया कलितं यत्तत्तथा तत्र 'कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे'त्ति कालागुरुप्रभृतीनां धूपानां यो मघमघायमानो गन्ध उद्धूतः-उद्भूतस्तेनाभिरामं-रम्यं यत्तत्तथा तत्र, कुन्दुरुक्का-चीडा तुरुक्कं-सिल्हकं, 'सुगंधिवरगंधिए'त्ति सुगन्धयः-सद्गन्धाः वरगन्धाः-वरवासाः सन्ति यत्र तत्तथा तत्र, 'गंधवट्टिभूए'त्ति सौरभ्यातिशयाद्गन्धद्रव्यगुटिकाकल्पे 'सालिंगणवट्टिए'त्ति सहालिङ्गनवर्त्या-शरीरप्रमाणोपधानेन यत्तत्तथा तत्र 'उभओ विब्बोयणे' उभयतः-शिरोऽन्तपादान्तावाश्रित्य विब्बोयणे-उपधानके यत्र तत्तथा तत्र 'दुहओ उन्नए' उभयत उन्नते 'मज्झेणयगंभीरे' मध्ये नतं च-निम्नं गम्भीरं च महत्त्वाद् यत्तत्तथा तत्र, अथवा मध्येन च-मध्यभागेन च गम्भीरे यत्तत्तथा, (पण्णत्त)'गंडविब्बोयणे'त्ति क्वचिद् दृश्यते तत्र च सुपरिकर्मितगण्डोपधाने इत्यर्थः 'गंगापुलिणवालुउद्दालसालिसए' गङ्गापुलिनवालुकाया योऽवदालः-अवदलन पादादिन्यासेऽधोगमनमित्यर्थः तेन सदृशकमतिमृदुत्वाद्यत्तत्तथा तत्र, दृश्यते च हंसतूल्यादीनामयं न्याय इति, 'उवचियखोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छायणे''उवचिय'त्ति परिकर्मितं यत् क्षौमिकं दुकूलं-कार्पासिकमतसीमयं वा वस्त्रं युगलापेक्षया यः पट्टः-शाटकः स प्रतिच्छादनं-आच्छादनं यस्य तत्तथा तत्र 'सुविरइयरयत्ताणे' सुष्ठु विरचितं-रचितं

रजस्त्राणं—आच्छादनविशेषोऽपरिभोगावस्थायां यस्मिंस्तत्तथा तत्र 'रत्तंसुयसंवुए' रक्तांशुकसंवृते—मशकगृहाभिधानवस्त्रविशेषावृते 'आइणगरूयबूरनवणीयतूलफासे' आजिनकं—चर्म्ममयो वस्त्रविशेषः स च स्वभावादतिकोमलो भवति रूतं च—कर्पासपक्ष्म बूरं च—वनस्पतिविशेषः नवनीतं च—म्रक्षणं तूलश्च—अर्कतूल इति द्वन्द्वस्तत एषामिव स्पर्शो यस्य तत्तथा तत्र 'सुगंधवरकुसुमचुन्नसयणोवयारकलिए'त्ति सुगन्धीनि यानि वरकुसुमानि चूर्णा एतद्व्यतिरिक्ततथाविधशयनोपचाराश्च तैः कलित यत्तत्तथा तत्र 'अद्धरत्तकालसमयंसि'त्ति समयः समाचारोऽपि भवतीति कालेन विशेषितः कालरूपः समयः कालसमयः स चानर्द्धरात्रिरूपोऽपि भवतीत्यतोऽर्द्धरात्रिशब्देन विशेषितस्ततश्चार्द्धरात्ररूपः कालसमयोऽर्द्धरात्रकालसमयस्तत्र 'सुत्तजागर'त्ति नातिसुप्ता नातिजागरेति भावः, किमुक्तं भवति ?-'ओहीरमाणी'त्ति प्रचलायमाना, ओरालादिविशेषणानि पूर्ववत् 'सुविणे'त्ति स्वप्नक्रियायां 'हाररययखीरसागरससंककिरणदगरयरययमहासेलपंडुरतरोरुरमणिज्जपेच्छणिज्जं' हारादय इव पाण्डुरतरः—अतिशुक्लः उरुः—विस्तीर्णो रमणीयो—रम्योऽत एव प्रेक्षणीयश्च—दर्शनीयो यः स तथा तम्, इह च रजतमहाशैलो वैताढ्य इति, 'थिरलट्ठपउट्ठवट्टपीवरसुसिलिट्ठविसिट्ठतिक्खदाढाविडंबियमुहं' स्थिरौ—अप्रकम्पौ लष्टौ—मनोज्ञौ प्रकोष्ठौ—कर्पूराग्रेतनभागौ यस्य स तथा तं वृत्ता—वर्त्तुलाः पीवराः—स्थूलाः सुश्लिष्टा—अविशर्वराः विशिष्टा—वराः तीक्ष्णा—भेदिका या दंष्ट्रास्ताभिः कृत्वा विडम्बितं मुखं यस्य स तथा ततः कर्म्मधारयोऽतस्तं 'परिकम्मियजच्चकमलकोमलमाइयसोहंतलट्ठउट्ठं' परिकर्मितं—कृतपरिकर्म्म यज्जात्यकमलं तद्वत्कोमलौ मात्रिकौ—प्रमाणोपपन्नौ शोभमानानां मध्ये लष्टौ—मनोज्ञौ ओष्ठौ—दशनच्छदौ यस्य स तथा तं 'रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुजीहं' रक्तोत्पलपत्रवत् मृदूनां मध्ये सुकुमाले तालुजिह्वे यस्य स तथा तं, वाचनान्तरे तु 'रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुनिल्लालियग्गजीहं महुगु-

लियाभिसंतपिंगलच्छं'ति तत्र च रक्तोत्पलपत्रवत् सुकुमालं तालु निर्लालिताग्रा च जिह्वा यस्य स तथा तं मधुगुटिकादिवत् 'भिसंत'त्ति दीप्यमाने पिङ्गले अक्षिणी यस्य स तथा तं 'मूसागयपवरकणगतावियआवत्तायंतवट्टतडिविमलसरिसनयणं' मूषा-स्वर्णादितापनभाजनं तद्गतं यत्प्रवरकनकं तापितं-कृताग्नितापम् 'आवत्तायंत'त्ति आवर्त्तं कुर्वाणं तद्वद् ये वर्णतः वृत्ते च तडिदिव विमले च सदृशे च परस्परेण नयने-लोचने यस्य स तथा तं 'विसालपीवरोरुपडिपुन्नविपुलखंधं' विशाले-विस्तीर्णे पीवरे-उपचिते उरू-जङ्घे यस्य परिपूर्णो विपुलश्च स्कन्धो यस्य स तथा तं 'मिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थविच्छिन्नकेसरसडोवसोहियं' मृदवः 'विसद'त्ति स्पष्टाः सूक्ष्माः 'लक्खणपसत्थ'त्ति प्रशस्तलक्षणाः विस्तीर्णाः पाठान्तरेण विकीर्णा याः केशरसटाः-स्कन्धकेशच्छटास्ताभिरुपशोभितो यः स तथा तम् 'ऊसियसुनिम्मियसुजायअप्फोडियलंगूलं' उच्छ्रितं-ऊर्ध्वीकृतं सुनिर्मितं-सुष्ठु अधोमुखीकृतं सुजातं-शोभनतया जातं आस्फोटितं च-भूमावास्फालितं लाङ्गूलं येन स तथा तम्॥ 'अतुरियमचवलं'ति देहमनश्चापल्यरहितं यथा भवत्येवम् 'असंभंताए'त्ति अनुत्सुकया 'रायहंससरिसीए'त्ति राजहंसगतिसदृश्येत्यर्थः 'आसत्थ'त्ति आश्वस्ता गतिजनितश्रमाभावात् 'वीसत्थ'त्ति विश्वस्ता सङ्क्षोभाभावात् अनुत्सुका वा 'सुहासणवरगय'त्ति सुखेन सुखं वा शुभं वा आसनवरं गता या सा तथा, 'धाराहयनीवसुरहिकुसुमचंचुमालइयतणु'त्ति धाराहतनीपसुरभिकुसुममिव 'चंचुमालइय'त्ति पुलकिता तनुः-शरीरं यस्य स तथा, किमुक्तं भवति?-'ऊसवियरोमकूवे'त्ति उच्छ्रितानि रोमाणि कूपेषु-तद्रन्ध्रेषु यस्य स तथा, 'मइपुव्वेणं'ति आभिनिबोधिकप्रभवेन 'बुद्धिविन्नाणेणं'ति मतिविशेषभूतौत्पत्तिक्यादिबुद्धिरूपपरिच्छेदेन 'अत्थोग्गहणं'ति फलनिश्चयम् 'आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारए णं'ति इह कल्याणानि-अर्थप्राप्तयो मङ्गलानि-अनर्थप्रतिघाताः 'अत्थलाभो देवाणुप्पिए!'

भविष्यतीति शेषः 'कुलकेउं'ति केतुः चिह्नं ध्वज इत्यनर्थान्तरं केतुरिव केतुरद्भुतत्वात् कुलस्य केतुः कुलकेतुस्तं, एवमन्यत्रापि, 'कुलदीवं'ति दीप इव दीपः प्रकाशकत्वात् 'कुलपव्वयं'ति पर्वतोऽनभिभवनीयस्थिराश्रयतासाधर्म्यात् 'कुलवडेंसयं'ति कुलावतंसकं कुलस्यावतंसकः-शेखर उत्तमत्वात् 'कुलतिलगं'ति तिलको-विशेषको भूषकत्वात् 'कुलकित्तिकरं'ति इह कीर्त्तिरेकदिग्गामिनी प्रसिद्धिः 'कुलनंदिकरं'ति तत्समृद्धिहेतुत्वात् 'कुलजसकरं'ति इह यशः-सर्वदिग्गामी प्रसिद्धिविशेषः 'कुलपायवं'ति पादपआश्रयणीयच्छायत्वात् 'कुलविवड्ढणकरं'ति विविधैः प्रकारैर्वर्धनं विवर्धनं तत्करणशीलं 'अहीणपुन्नपंचिंदियसरीरं'ति अहीनानि स्वरूपतः पूर्णानि सङ्ख्यया पुण्यानि वा-पूतानि पञ्चेन्द्रियाणि यत्र तत्तथा तदेवंविधं शरीरं यस्य स तथा तं, यावत्करणात् 'लक्खणवंजणगुणोववेय'मित्यादि दृश्यं, तत्र लक्षणानि-स्वस्तिकादीनि व्यञ्जनानि-मषतिलकादीनि तेषां यो गुणः-प्रशस्तता तेनोपपेतो-युक्तो यः स तथा तं 'ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं' शशिवत् सौम्याकारं कान्तं च-कमनीयं अत एव प्रियं द्रष्टॄणां दर्शनं-रूपं यस्य स तथा तं 'विन्नायपरिणयमित्ते'त्ति विज्ञ एव विज्ञकः स चासौ परिणतमात्रश्च कलादिष्विति गम्यते विज्ञकपरिणतमात्रः 'सूरे'त्ति दानतोऽभ्युपेतनिर्वाहणतो वा 'वीरे'त्ति सङ्ग्रामतः 'विक्कंते'त्ति विक्रान्तः-परकीयभूमण्डलाक्रमणतः 'वित्थिन्नविपुलबलवाहणे'त्ति विस्तीर्णविपुले-अतिविस्तीर्णे बलवाहने-सैन्यगजादिके यस्य स तथा 'रज्जवइ'त्ति स्वतन्त्र इत्यर्थः 'मा मे से'त्ति मा ममासौ स्वप्न इत्यर्थः 'उत्तमे'त्ति स्वरूपतः 'पहाणे'त्ति अर्थप्राप्तिरूपप्रधानफलतः 'मंगल्ले'त्ति अनर्थप्रतिघातरूपफलापेक्षयेति 'सुमिणजागरियं'ति स्वप्नसंरक्षणाय जागरिका-निद्रानिषेधः स्वप्नजागरिका तां 'पडिजागरमाणी २'ति प्रतिजाग्रती-कुर्वन्ती, आभीक्ष्ण्ये च द्विर्वचनम्। 'गंधोदयसित्तसुइयसम्मज्जिओवलित्तं'ति गन्धोदकेन सिक्ता शुचिका-पवित्रा

प्र० आ० ५४१

संमार्जिता कचवरापनयनेन उपलिप्ता छगणादिना या सा तथा तां, इदं च विशेषणं गन्धोदकसिक्तसंमार्जितोपलिप्तशुचिकामित्येवं दृश्यं, सिक्ताद्यनन्तरभावित्वाच्छुचिकत्वस्येति, 'अट्टणसाल'त्ति व्यायामशाला 'जहा उववाइए तहेव अट्टणसाला तहेव मज्जणघरे'त्ति यथौतिपपातिकेऽट्टणशालाव्यतिकरो मज्जनगृहव्यतिकरश्चाधीतस्तथेहाप्यध्येतव्य इत्यर्थः, स चायम्—'अणेगवायामजोग्गवग्गणवामद्दणमल्लजुद्धकरणेहिं संते'इत्यादि, तत्र चानेकानि व्यायामार्थं यानि योग्यादीनि तानि तथा तैः, तत्र योग्या—गुणनिका वल्गनं—उल्ललनं व्यामर्दनं—परस्परेणाङ्गमोटनमिति, मज्जनगृहव्यतिकरस्तु 'जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ समंतजालाभिरामे' समन्ततो जालकाभिरमणीये 'विचित्तमणिरयणकुट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहनिसण्णे'इत्यादिरिति। 'महग्घवरपट्टणुग्गयं'ति महार्घा च सा वरपत्तनोद्गता च—वरवस्त्रोत्पत्तिस्थानसम्भवेति समासोऽतस्तां वरपट्टनाद्वा—प्रधानवेष्टनकाद् उद्गता—निर्गता या सा तथा तां 'सण्हपट्टभत्तिसयचित्तताणं'ति 'सण्हपट्ट'त्ति सूक्ष्मपट्टः सूत्रमयो भक्तिशतचित्रस्तानः—तानको यस्यां सा तथा ताम् 'ईहामिए'त्यादि यावत्करणादेवं दृश्यम्—'ईहामियउसभणरतुरगमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं'ति तत्रेहामृगा-वृका ऋषभाः-वृषभाः नरतुरगमकरविहगाः प्रतीताः व्यालाः—श्वापदभुजगाः किन्नराः-व्यन्तरविशेषाः रुरवो—मृगविशेषाः शरभा—आटव्या महाकायाः पशवः परासरेति पर्यायाः चमरा—आटव्या गावः कुञ्जरा—गजाः वनलता -अशोकादिलताः पद्मलताः—पद्मिन्यः एतासां यका भक्तयो—विच्छित्तयस्ताभिश्चित्रा या सा तथा तां 'अब्भिंतरियं'ति अभ्यन्तरां 'जवणियं'ति यवनिकाम् 'अंछावेइ'त्ति आकर्षयति 'अत्थरयमउयमसूरगोत्थयं'ति आस्तरकेण प्रतीतेन मृदुमसूरकेण वा अथवाऽस्तरजसा—निर्मलेन मृदुमसूरकेणावस्तृतं—आच्छादितं यत्तत्तथा

'अंगसुहफासयं' अङ्गसुखो–देहस्य शर्महेतुः स्पर्शो यस्य तदङ्गसुखखस्पर्शकम् ॥ 'अट्ठंगमहानिमित्तसुत्तत्थधारए'त्ति अष्टाङ्ग-अष्टावयवं यन्महानिमित्तं–परोक्षार्थप्रतिपत्तिकारणव्युत्पादकं महाशास्त्रं तस्य यौ सूत्रार्थौ तौ धारयन्ति ये ते तथा तान्, निमित्ताङ्गानि चाष्टाविमानि—" अट्ठ निमित्तंगाइं दिव्वु १ प्पातं २ तरिक्ख ३ भोमं च ४। अंग ५ सर ६ लक्खण ७ वंजणं च ८ तिविहं पुणेक्कं ॥१॥" 'सिग्घ'मित्यादीन्येकार्थानि पदानि औत्सुक्योत्कर्षप्रतिपादनपराणि 'सिद्धत्थगहरियालियाकयमंगलमुद्धाण'त्ति सिद्धार्थकाः–सर्षपाः हरितालिका–दूर्वा तल्लक्षणानि कृतानि मङ्गलानि मूर्ध्नि यैस्ते तथा 'संचालेंति'त्ति सञ्चारयन्ति 'लद्धट्ठ'त्ति स्वतः 'गहियट्ठ'त्ति परस्मात् 'पुच्छियट्ठ'त्ति संशये सति परस्परतः 'विणिच्छियट्ठ'त्ति प्रश्नानन्तरं अत एवाभिगतार्था इति ॥ 'सुविण'-त्ति सामान्यफलत्वात् 'महासुविण'त्ति महाफलत्वात् 'बावत्तरिं'ति त्रिंशतो द्विचत्वारिंशतश्च मीलनादिति 'गब्भं वक्कममाणंसि'-त्ति गर्भं व्युत्क्रामति–प्रविशति सतीत्यर्थः, 'गयवसहे'त्यादि, इह च 'अभिसेय'त्ति लक्ष्म्या अभिषेकः 'दाम'त्ति पुष्पमाला, 'विमाणभवण'त्ति एकमेव, तत्र विमानाकारं भवनं विमानभवनं, अथवा देवलोकाद्योऽवतरति तन्माता विमानं पश्यति, यस्तु नरकात् तन्माता भवनमिति, इह च गाथायां केषुचित्पदेष्वनुस्वारस्याश्रवणं गाथाऽनुलोम्याद् दृश्यमिति 'जीवियारिहं'ति जीविकोचितम्। 'उउभुयमाणसुहेहिं'ति ऋतौ २ भज्यमानानि यानि सुखानि–सुखहेतवः शुभानि वा तानि तथा तैः 'हियं'ति तमेव गर्भमपेक्ष्य 'मियं'ति परिमितं–नाधिकमूनं वा 'पत्थं'ति सामान्येन पथ्यं, किमुक्तं भवति ?—'गब्भपोसणं'ति गर्भपोषकमिति 'देसे य'त्ति उचितभूप्रदेशे 'काले य'त्ति तथाविधावसरे 'विवित्तमउएहिं'ति विविक्तानि–दोषवियुक्तानि लोकान्तरासङ्कीर्णानि वा मृदुकानि च–कोमलानि यानि तानि तथा तैः 'पइरिक्कसुहाए'त्ति प्रतिरिक्तत्वेन तथाविधजनापेक्षया विजनत्वेन सुखा शुभा वा

या सा तथा तया 'पसत्थदोहल'त्ति अनिन्द्यमनोरथा 'संपुन्नदोहला' अभिलषितार्थपूरणात् 'संमाणियदोहला' प्राप्तस्याभिलषितार्थस्य भोगात् 'अविमाणियदोहल'त्ति क्षणमपि लेशेनापि च नापूर्णमनोरथेत्यर्थः अत एव 'वोच्छिन्नदोहल'त्ति त्रुटितवाञ्छेत्यर्थः, दोहदव्यवच्छेदस्यैव प्रकर्षाभिधानायाह–'विणीयदोहल'त्ति 'ववगए'इत्यादि, इह च मोहो–मूढता भयं–भीतिमात्रं परित्रासः–अकस्माद्भयम्, इह स्थाने वाचनान्तरे 'सुहंसुहेणं आसयइ सुयइ चिट्ठइ निसीयइ तुयट्टइ'त्ति दृश्यते तत्र च 'सुहंसुहेणं'ति गर्भानाबाधया 'आसयइ'त्ति आश्रयत्याश्रयणीयं वस्तु 'सुयइ'त्ति शेते 'चिट्ठइ'त्ति ऊर्द्ध्वस्थानेन तिष्ठति 'निसीयइ'त्ति उपविशति 'तुयट्टइ'त्ति शय्यायां वर्त्तत इति॥ 'पियट्ठयाए'त्ति प्रियार्थतायै–प्रीत्यर्थमित्यर्थः 'पियं निवेएमो'त्ति 'प्रियम्' इष्टवस्तु पुत्रजन्मलक्षणं निवेदयामः 'पियं भे भवउ'त्ति एतच्च प्रियनिवेदनं प्रियं भवतां भवतु तदन्यद्वा प्रियं भवत्विति। 'मउडवज्जं'ति मुकुटस्य राजचिह्नत्वात् स्त्रीणां चानुचितत्वात्तस्येति तद्वर्जनं 'जहामालियं'ति यथामालितं–यथा धारितं यथा परिहितमित्यर्थः 'ओमोयं'ति अवमुच्यते–परिधीयते यः सोऽवमोकः–आभरणं तं 'मत्थए धोवइ'त्ति अङ्गप्रतिचारिकाणां मस्तकानि क्षालयति दासत्वापनयनार्थं, स्वामिना धौतमस्तकस्य हि दासत्वमपगच्छतीति लोकव्यवहारः ॥

तए णं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हत्थिणापुरे नयरे चारगसोहणं करेह चारग० २ माणुम्माणवड्ढणं करेह मा० २ हत्थिणापुरं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं आसियसंमज्जिओवलित्तं जाव करेह कारवेह करेत्ता य कारवेत्ता य जूयसहस्सं वा चक्कसहस्सं वा पूयामहामहिमसक्कारं वा उस्सवेह २ ममेतमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा बलेणं रन्ना एवं वुत्ता० जाव पच्च-

रिपणंति। तए णं से बले राया जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छति तेणेव उवागच्छित्ता तं चेव जाव मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता उस्सुक्कं उक्करं उक्किट्ठं अदिज्जं अभिज्जं अभडप्पवेसं अदंडकोदंडिमं अधरिमं गणियावरनाडइज्जकलियं अणेगतालाचराणुचरियं अणुद्धुयमुइंगं अमिलायमल्लदामं पमुइयपक्कीलियं सपुरजणजाणवयं दसदिवसे ठिइवडियं करोति। तए णं से बले राया दसाहियाए ठिइवडियाए वट्टमाणीए सईए य साहस्सिए य सयसाहस्सिए य दाए य भाए य दलमाणे य दवावेमाणे य सए य सयसाहस्सिए य लंभे पडिच्छेमाणे पडिच्छावेमाणे एवं विहरइ। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे ठिइवडियं करेइ तइए दिवसे चंदसूरदंसणियं करेइ छट्ठे दिवसे जागरियं करेइ एक्कारसमे दिवसे वीतिक्कंते निव्वत्ते असुइजायकम्मकरणे संपत्ते बारसाहदिवसे विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति उ० २ जहा सिवो जाव खत्तिए य आमंतेति आ० २ तओ पच्छा ण्हाया कय० तं चेव जाव सक्कारेंति सम्माणेंति २ तस्सेव मित्तणातिजाव राईण य खत्तियाण य पुरओ अज्जयपज्जयपिउपज्जयागयं बहुपुरिसपरंपरप्परूढं कुलाणुरूवं कुलसरिसं कुलसंताणतंतुवद्धणकरं अयमेयारूवं गोन्नं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं करेंति-जम्हा णं अम्हं इमे दारए बलस्स रन्नो पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए तं होउ णं अम्हं एयस्स दारगस्स नामधेज्जं महब्बले, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्जं करेंति महब्बलेत्ति। तए णं से महब्बले दारए पंचधाईपरिग्गहिए, तंजहा-खीरधाईए एवं जहा दढपइन्ने जाव निवाय० निव्वाघायंसि सुहंसुहेणं परिवड्ढति। तए णं तस्स महब्बलस्स दारगस्स अम्मापियरो अणुपुव्वेणं ठितिवडियं

११ शतके उद्देशः ११ प्र० आ० ५४३ महाबलनामकरणं सू० ४२९

वा चंडसूरदंसावणियं वा जागरियं वा नामकरणं वा परंगामणं वा पयचंकामणं वा जेमाणं वा पिंडवद्धणं वा पज्जावणं वा कण्णवेहणं वा संवच्छरपडिलेहणं वा चोलोयणगं च उवणयणं च अन्नाणि य बहूणि गब्भाधाणजम्मणमादियाइं कोउयाइं करेंति। तए णं तं महब्बलं कुमारं अम्मापियरो सातिरेगट्ठवासगं जाणित्ता सोभणंसि तिहिकरणमुहुत्तंसि एवं जहा दढप्पइन्नो जाव अलं भोगसमत्थे जाए यावि होत्था। तए णं तं महब्बलं कुमारं उम्मुक्कबालभावं जाव अलं भोगसमत्थं विजाणित्ता अम्मापियरो अट्ठ पासायवडेंसए करेंति २ अब्भुग्गयमूसियपहसिए इव वन्नओ जहा रायप्पसेणइज्जे जाव पडिरूवे, तेसि णं पासायवडेंसगाणं बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं महेगं भवणं करेंति अणेगखंभसयसंनिविट्ठं वन्नओ जहा रायप्पसेणइज्जे पेच्छाघरमंडवंसि जाव पडिरूवे (सूत्रं ४२९)॥

'चारगसोहणं'ति बन्दिविमोचनमित्यर्थः 'माणुम्माणवद्धणं करेह'त्ति इह मानं-रसधान्यविषयम् उन्मानं तुलारूपम् 'उस्सुक्कं'ति 'उच्छुल्कां' मुक्तशुल्कां स्थितिपतितां कारयतीति सम्बन्धः, शुल्कं तु विक्रयभाण्डं प्रति राजदेयं द्रव्यम्, 'उक्करं'ति उन्मुक्तकरां, करस्तु गवादीन् प्रति प्रतिवर्षं राजदेयं द्रव्यं, 'उक्किट्ठं'ति उत्कृष्टां-प्रधानां कर्पणनिषेधाद्वा 'अदिज्जं'ति विक्रयनिषेधेनाविद्यमानदातव्यां 'अमिज्जं'ति विक्रयप्रतिषेधादेवाविद्यमानमातव्यां अविद्यमानमेयां वा 'अभडप्पवेसं'ति अविद्यमानो भटानां-राजाज्ञादायिनां पुरुषाणां प्रवेशः कुटुम्बिगेहेषु यस्यां सा तथा तां 'अदण्डकोदंडिम'ति दण्डलभ्यं द्रव्यं दण्ड एव कुदण्डेन निर्वृत्तं द्रव्यं कुदण्डिमं तन्नास्ति यस्यां साऽदण्डकुदण्डिमा तां, तत्र दण्डः-अपराधानुसारेण राजग्राह्यं द्रव्यं कुदण्डस्तु-कारणिकानां प्रज्ञापराधान्महत्यप्यपराधिनोऽपराधे अल्पं राजग्राह्यं द्रव्यमिति, 'अधरिमं'ति अविद्यमानधारणीयद्रव्याम् ऋणमुत्कलनात् 'गणिया-

वरनाडइज्जकलियं' गणिकावरैः-वेश्याप्रधानैर्नाटकीयैः-नाटकसम्बन्धिभिः पात्रैः कलिता या सा तथा ताम् 'अणेगतालाचराणुचरियं' नानाविधप्रेक्षाचारिसेवितामित्यर्थः 'अणुद्धुइयमुइंग'त्ति अनुद्धूता-वादनार्थं वादकैरविमुक्ता मृदङ्गा यस्यां सा तथा ताम् 'अमिलायमल्लदामं' अम्लानपुष्पमालां 'पमुइयपक्कीलियं'ति प्रमुदितजनयोगात्प्रमुदिता प्रक्रीडितजनयोगात्प्रक्रीडिता ततः कर्मधारयोऽतस्तां 'सपुरजणजाणवयं' सह पुरजनेन जानपदेन च-जनपदसम्बन्धिजनेन या वर्त्तते सा तथा तां, वाचनान्तरे 'विजयवेजइयं'ति दृश्यते तत्र चातिशयेन विजयो विजयविजयः स प्रयोजनं यस्याः सा विजयवैजयिकी तां 'ठिइवडियं'ति स्थितौ-कुलस्य लोकस्य वा मर्यादायां पतिता-गता या पुत्रजन्ममहप्रक्रिया सा स्थितिपतिताऽतस्तां 'दसाहियाए'त्ति दशाहिकायां-दशदिवसप्रमाणायां 'जाए य'त्ति यागान्-पूजाविशेषान् 'दाए य'त्ति दायांश्च-दानानि 'भाए य'त्ति भागांश्च-विवक्षितद्रव्यांशान् 'चंदसूरदंसणियं'ति चन्द्रसूर्यदर्शनाभिधानमुत्सवं 'जागरियं'ति रात्रिजागरणरूपमुत्सवविशेषं 'निव्वत्ते असुइजायकम्मकरणे'त्ति 'निवृत्ते' अतिक्रान्ते अशुचीनां जातकर्म्मणां करणमशुचिजातकर्म्मकरणं तत्र 'संपत्ते बारसाहदिवसे'त्ति संप्राप्ते द्वादशाख्यदिवसे, अथवा द्वादशानामह्नां समाहारो द्वादशाहं तस्य दिवसो द्वादशाहदिवसो येन स पूर्यते तत्र, 'कुलाणुरूवं'ति कुलोचितं, कस्मादेवम् ? इत्याह—'कुलसरिसं'ति कुलसदृशं, तत्कुलस्य बलवत्पुरुषकुलत्वान्महाबल इति नाम्नश्च सादृश्यमिति 'कुलसंताणतंतुवद्धणकरं'ति कुलरूपो यः सन्तानः स एव तन्तुर्दीर्घत्वात्तद्वर्द्धनकरं माङ्गल्यत्वाद् यत्र तत्तथा 'अयमेयारूवं'ति इदमेतद्रूपं 'गोणं'ति गौणं तच्चामुख्यमप्युच्यत इत्यत आह—'गुणनिप्फन्नं'ति, 'जम्हा णं अम्हं'इत्यादि असाकमयं दारकः प्रभावतीदव्यात्मजो यस्माद्बलस्य राज्ञः पुत्रस्तस्मात्पितुर्नामानुसारिनामास्य दारकस्यास्तु महाबल इति । 'जहा दढपइन्ने'त्ति यथौपपातिके दृढप्र-

तिज्ञोऽधीतस्तथाऽयं वक्तव्यः, तच्चैवं—'मज्जणधाईए मंडणधाईए कीलावणधाईए अंकधाईए'इत्यादि, 'निवायनिव्वाघायं-
सी'त्यादि च वाक्यमिहैवं सम्बन्धनीयं 'गिरिकंदरमल्लीणेव्व चंपगपायवे निवायनिव्वाघायंसि सुहंसुहेणं परिवड्ढइ'त्ति। 'परंगामणं'ति
भूमौ सर्प्पणं 'पयचंकामणं'ति पादाभ्यां सञ्चारणं 'जेमामणं'ति भोजनकारणं 'पिंडवद्धणं'ति कवलवृद्धिकारणं 'पज्जपावणं'ति
प्रजल्पनकारणं 'कण्णवेहणं'ति प्रतीतं 'संवच्छरपडिलेहणं'ति वर्षग्रन्थिकरणं 'चोलोयणं' चूडाधरणम् 'उवणयणं'ति कलाग्राहणं
'गब्भाहाणजम्मणमाइयाइं कोउयाइं करेंति'त्ति गर्भाधानादिषु यानि कौतुकानि—रक्षाविधानादीनि तानि गर्भाधानादीन्येवो-
च्यन्त इति गर्भाधानजन्मादिकानि कौतुकानीत्येवं समानाधिकरणतया निर्देशः कृतः, 'एवं जहा दढपइन्नो'इत्यनेन यत्सूचितं तदेवं
दृश्यं—'सोहणंसि तिहिकरणनक्खत्तमुहुत्तंसि ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारविभूसियं महया इड्ढिसक्कारसमु-
दएणं कलायरियस्स उवणयंती'त्यादीति। 'अब्भुग्गयमूसियपहसिते इव' अभ्युद्गतोच्छ्रितान्—अत्युच्चान्, इह चैवं व्याख्यानं द्विती-
याबहुवचनलोपदर्शनात्, 'पहसिते इव'त्ति प्रहसितानिव—श्वेतप्रभापटलप्रबलतया हसत इवेत्यर्थः 'वन्नओ जहा रायप्पसेणइज्जे'
इत्यनेन यत्सूचितं तदिदं—'मणिकणगरयणभत्तिचित्तवाउद्धुयविजयवेजयंतीपडागाछत्ताइच्छत्ताइच्छत्तकलिए तुंगे गगणतलमभिलंघमा-
णसिहरे'इत्यादि, एतच्च प्रतीतार्थमेव, नवरं 'मणिकनकरत्नानां भक्तिभिः—विच्छित्तिभिश्चित्रा ये ते तथा, वातोद्धूता या विजयसूचिका
वैजयन्त्यभिधानाः पताकाश्छत्रातिच्छत्राणि च तैः कलिता ये ते तथा ततः कर्मधारयस्ततस्तान् 'अणेगखंभसयसंनिविट्ठे'ति अने-
केषु स्तम्भशतेषु संनिविष्टं यदनेकानि वा स्तम्भशतानि संनिविष्टानि यत्र तत्तथा 'वन्नओ जहा रायप्पसेणइज्जे पेच्छाघरमंडवं-
सि'त्ति यथा राजप्रश्नकृते प्रेक्षागृहमण्डपविषयो वर्णक उक्तस्तथाऽस्य वाच्य इत्यर्थः, स च 'लीलट्ठियसालिभंजियाग'मित्यादिरिति।

तए णं तं महब्बलं कुमारं अम्मापियरो अन्नया कयावि सोभणंसि तिहिकरणदिवसनक्खत्तमुहुत्तंसि ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपाय० सव्वालंकारविभूसियं पमक्खणगण्हाणगीयवाइयपसाहणट्ठंगतिलगकंकण-अविहववहुउवणीयं मंगलसुजंपिएहि य वरकोउयमंगलोवयारकयसंतिकम्मं सरिसयाणं सरित्तयाणं सरिव्वयाणं सरिसलावन्नरूवजोव्वणगुणोववेयाणं विणीयाणं कयकोउयमंगलपायच्छित्ताणं सरिसएहिं रायकुलेहिंतो आणिलियाणं अट्ठण्हं रायवरकन्नाणं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु। तए णं तस्स महाबलस्स कुमारस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं पीइदाणं दलयंति तं०–अट्ठ हिरन्नकोडीओ अट्ठ सुवन्नकोडीओ अट्ठ मउडे मउडप्पवरे अट्ठ कुंडलजुए कुंडलजुयप्पवरे अट्ठ हारे हारप्पवरे अट्ठ अद्धहारे अद्धहारप्पवरे अट्ठ एगावलीओ एगावलिप्पवराओ एवं मुत्तावलीओ एवं कणगावलीओ एवं रयणावलीओ अट्ठ कडगजोए कडगजोयप्पवरे एवं तुडियजोए अट्ठ खोमजुयलाइं खोमजुयलप्पवराइं एवं वडगजुयलाइं एवं पट्टजुयलाइं एवं दुगुल्लजुयलाइं अट्ठ सिरीओ अट्ठ हिरीओ एवं धिईओ कित्तीओ बुद्धीओ लच्छीओ अट्ठ नंदाइं अट्ठ भद्दाइं अट्ठ तले तलप्पवरे सव्वरयणामए णियगवरभवणकेऊ अट्ठ झए झयप्पवरे अट्ठ वये वयप्पवरे दसगोसाहस्सिएणं वएणं अट्ठ नाडगाइं नाडगप्पवराइं बत्तीसबद्धेणं नाडएणं अट्ठ आसे आसप्पवरे सव्वरयणामए सिरिघरपडिरूवए अट्ठ हत्थी हत्थिप्पवरे सव्वरयणामए सिरिघरपडिरूवए अट्ठ जाणाइं जाणप्पवराइं अट्ठ जुगाइं जुगप्पवराइं एवं सिवियाओ एवं संदमाणीओ एवं गिल्लीओ थिल्लीओ अट्ठ वियडजाणाइं वियडजाणप्पवराइं अट्ठ रहे पारिजाणिए अट्ठ रहे संगामिए अट्ठ आसे आसप्पवरे

अट्ठ हत्थी हत्थिप्पवरे अट्ठ गामे गामप्पवरे दसकुलसाहस्सिएणं गामेणं अट्ठ दासे दासप्पवरे एवं चेव दासीओ एवं किंकरे एवं कंचुइज्जे एवं वरिसधरे एवं महत्तरए अट्ठ सोवन्निए ओलंबणदीवे अट्ठ रूप्पामए ओलंबणदीवे अट्ठ सुवन्नरूप्पामए ओलंबणदीवे अट्ठ सोवन्निए उक्कंचणदीवे एवं चेव तिन्निवि अट्ठ सोवन्निए थाले अट्ठ रूप्पमए थाले अट्ठ सुवन्नरूप्पमए थाले अट्ठ सोवन्नियाओ पत्तीओ ३ अट्ठ सोवन्नियाइं थासयाइं ३ अट्ठ सोवन्नियाइं मंगलाइं ३ अट्ठ सोवन्नियाओ तलियाओ अट्ठ सोवन्नियाओ कावइआओ अट्ठ सोवन्निए अवएडए अट्ठ सोवन्नियाओ अव-यक्काओ अट्ठ सोवण्णिए पायपीढए ३ अट्ठ सोवन्नियाओ भिसियाओ अट्ठ सोवन्नियाओ करोडियाओ अट्ठ सो-वन्निए पल्लंके अट्ठ सोवन्नियाओ पडिसेज्जाओ अट्ठ हंसासणाइं अट्ठ कोंचासणाइं एवं गरुलासणाइं उन्नयासणाइं पणयासणाइं दीहासणाइं भद्दासणाइं पक्खासणाइं मगरासणाइं अट्ठ पउमासणाइं अट्ठ दिसासोवत्थियासणाइं अट्ठ तेल्लसमुग्गे जहा रायप्पसेणइज्जे जाव अट्ठ सरिसवसमुग्गे अट्ठ खुज्जाओ जहा उववाइए जाव अट्ठ पारिसीओ अट्ठ छत्ते अट्ठ छत्तधारीओ चेडीओ अट्ठ चामराओ अट्ठ चामरधारीओ चेडीओ अट्ठ तालियंटे अट्ठ तालियंटधा-रीओ चेडीओ अट्ठ करोडियाधारीओ चेडीओ अट्ठ खीरधातीओ जाव अट्ठ अंकधातीओ अट्ठ अंगमद्दियाओ अट्ठ उम्मद्दियाओ अट्ठ ण्हावियाओ अट्ठ पसाहियाओ अट्ठ वन्नगपेसीओ अट्ठ चुन्नगपेसीओ अट्ठ कोट्ठागारीओ अट्ठ दव्वकारीओ अट्ठ उवत्थाणियाओ अट्ठ नाइडज्जाओ अट्ठ कोडुंबिणीओ अट्ठ महाणसिणीओ अट्ठ भंडागारिणीओ अट्ठ अज्झाधारिणीओ अट्ठ पुप्फधारणीओ अट्ठ पाणिधारणीओ अट्ठ बलिकारीओ अट्ठ सेज्जाकारीओ अट्ठ अब्भिं-



प्र० आ० ५४१

तरियाओ पडिहारीओ अट्ठ बाहिरियाओ पडिहारीओ अट्ठ मालाकारीओ अट्ठ पेसणकारीओ अन्नं वा सुबहुं हिरन्नं वा सुवन्नं वा कंसं वा दूसं वा विउलधणकणगजावसंतसारसावएज्जं अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं दाउं पकामं भोत्तुं पकामं परिभाएउं । तए णं से महब्बले कुमारे एगमेगाए भज्जाए एगमेगं हिरन्नकोडिं दलयति एगमेगं सुवन्नकोडिं दलयति एगमेगं मउडं मउडप्पवरं दलयति एवं तं चेव सव्वं जाव एगमेगं पेसणकारिं दलयति अन्नं वा सुबहुं हिरन्नं वा जाव परिभाएउं, तए णं से महब्बले कुमारे उप्पिं पासायवरगए जहा जमाली जाव विहरति ॥ ( सूत्रं ४३० ) ॥

'पमक्खणगण्हाणगीयवाइयपसाहणट्ठंगतिलगकंकणअविहववहुउवणीयं'ति प्रम्रक्षणकं-अभ्यञ्जनं स्नानगीतवादितानि प्रतीतानि प्रसाधनं-मण्डनं अष्टस्वङ्गेषु तिलकाः-पुण्ड्राणि अष्टाङ्गतिलकाः कङ्कणं च-रक्तदवरकरूपं एतानि अविधववधूभिः-जीवत्पतिकनारीभिरुपनीतानि यस्य स तथा तं 'मंगलसुजंपिएहि य'त्ति मङ्गलानि-दध्यक्षतादीनि गीतगानविशेषा वा तासु जल्पितानि च-आशीर्वचनानीति द्वन्द्वस्तैः करणभूतैः 'पाणिं गिण्हाविंसु'त्ति सम्बन्धः, किं भूतं तम्? इत्याह—'वरकोउयमङ्गलोवयारकयसंतिकम्मं' वराणि यानि कौतुकानि-भूतिरक्षादीनि मङ्गलानि च—सिद्धार्थकादीनि तद्रूपो य उपचारः-पूजा तेन कृतं शान्तिकर्म्म-दुरितोपशमक्रिया यस्य स तथा तं 'सरिसियाणं'ति सदृशीनां परस्परतो महाबलापेक्षया वा 'सरित्तयाणं'ति सदृक्त्वचां-सदृशच्छवीनां 'सरिव्वयाणं'ति सदृग्वयसां, 'सरिसलावन्ने'त्यादि, इह च लावण्यं-मनोज्ञता रूपं-आकृतिर्यौवनं-युवता गुणाः-प्रियभाषित्वादयः, 'कुण्डलजोए' कुण्डलयुगानि 'कडगजोए'त्ति कलाचिकाभरणयुगानि 'तुडिय'त्ति बाह्वाभरणं

'खोमे'त्ति कार्प्पासिकं अतसीमयं वा वस्त्रं 'वडग'त्ति त्रसरीमयं 'पट्ट'त्ति पट्टसूत्रमयं 'दुगुल्ल'त्ति दुकूलाभिधानवृक्षत्वग्निष्पन्नं श्रीप्रभृतयः षड्देवताप्रतिमाः नन्दादीनि मङ्गलवस्तूनि,अन्ये त्वाहुः-नन्दं-वृत्तं लोहासनं भद्रं-शरासनं मूढक इति यत्प्रसिद्धं 'तले'त्ति तालवृक्षान् 'वय'त्ति व्रजान्-गोकुलानि 'सिरिघरपडिरूवए'त्ति भाण्डागारतुल्यान् रत्नमयत्वात् 'जाणाइं'ति शकटादीनि 'जुग्गाइं'ति गोल्लविषयप्रसिद्धानि जम्पानानि 'सिबियाओ'त्ति शिबिकाः-कूटाकाराच्छादितजम्पानरूपाः 'संदमाणियाओ'त्ति स्यन्दमानिकाः पुरुषप्रमाणजम्पानविशेषानेव 'गिल्लीओ'त्ति हस्तिन उपरि कोल्लराकाराः 'थिल्लीओ'त्ति लाटानां यानि अड्डपल्यानानि तान्यन्यविषयेषु थिल्लीओ अभिधीयन्तेऽतस्ताः 'वियडजाणाइं'ति विवृतयानानि तल्लटकवर्जितशकटानि,'पारिजाणिए'त्ति परियानप्रयोजनाः पारियानिकास्तान् 'संगामिए'त्ति सङ्ग्रामप्रयोजनाः साङ्ग्रामिकास्तान्,तेषां च कटीप्रमाणा फलकवेदिका भवति, 'किंकरे'त्ति प्रतिकर्म्म पृच्छाकारिणः 'कंचुइज्जे'त्ति प्रतीहारान् 'वरसधरे'त्ति वर्षधरान्-वर्द्धितकमहल्लकान् 'महत्तरान्' अन्तःपुरकार्यचिन्तकान् 'ओलंबणदीवे'त्ति शृङ्खलाबद्धदीपान् 'उक्कंचणदीवे'त्ति उत्कञ्चनदीपान् ऊर्ध्वदण्डवतः 'एवं चेव तिन्निवि'त्ति रूप्यसुवर्णसुवर्णरूप्यभेदात् 'पंजरदीवे'त्ति अभ्रपटलादिपञ्जरयुक्तान् 'थासगाइं'ति आदर्शकाकारान् 'तलियाओ'त्ति पात्रीविशेषान् 'कवचियाओ'त्ति कलाचिकाः 'अवएडए'त्ति तापिकाहस्तान् 'अवयक्काओ'त्ति अवपाक्यास्तापिका इति संभाव्यते 'भिसियाओ'त्ति आसनविशेषान् 'पडिसेज्जाओ'त्ति उत्तरशय्याः हंसासनादीनि हंसाद्याकारोपलक्षितानि उन्नताद्याकारोपलक्षितानि च शब्दतोऽवगन्तव्यानि, 'जहा रायप्पसेणइज्जे'इत्यनेन यत्सूचितं तदिदम्—'अट्ठ कुट्ठसमुग्गे एवं पत्तचोयतगरएलहरियालहिंगुलयमणोसिलअंजणसमुग्गे'त्ति,'जहा उववाइए'इत्यनेन यत्सूचितं तदिहैव देवानन्दाव्यतिकरेऽस्तीति तत एव दृश्यं, 'करो-

डियाधारीओ'त्ति स्थगिकाधारिणीः 'अङ्क अंगमद्दियाओ अङ्क ओमद्दियाओ'त्ति इहाङ्गमर्दिकानामुन्मर्दिकानां चाल्पबहुमर्दनकृतो विशेषः 'पसाहियाओ'त्ति मण्डनकारिणीः 'वन्नगपेसीओ'त्ति चन्दनपेषणकारिका हरितालादिपेषिका वा 'चुन्नगपेसीओ'त्ति इह चूर्णः-ताम्बूलचूर्णो गन्धद्रव्यचूर्णो वा 'दवकारीओ'त्ति परिहासकारिणीः 'उवत्थाणियाओ'त्ति या आस्थानगतानां समीपे वर्त्तन्ते 'नाडइज्जाओ'त्ति नाटकसम्बन्धिनीः 'कुडुंबिणीओ'त्ति पदातिरूपाः 'महाणसिणीओ'त्ति रसवतीकारिकाः, शेषपदानि रूढिगम्यानि।

तेणं कालेणं २ विमलस्स अरहओ पओप्पए धम्मघोसे नामं अणगारे जाइसंपन्ने वन्नओ जहा केसिसामिस्स जाव पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूतिज्जमाणे जेणेव हत्थिणागपुरे नगरे जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ २ अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हति २ संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति। तए णं हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडगतिय जाव परिसा पज्जुवासइ। तए णं तस्स महब्बलस्स कुमारस्स तं महया जणसद्दं वा जणवूहं वा एवं जहा जमाली तहेव चिंता तहेव कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेति, कंचुइज्जपुरिसोवि तहेव अक्खाति, नवरं धम्मघोसस्स अणगारस्स आगमणगहियविणिच्छए करयलजाव निग्गच्छइ, एवं खलु देवाणुप्पिया! विमलस्स अरहओ पउप्पए धम्मघोसे नामं अणगारे सेसं तं चेव जाव सोऽवि तहेव रहवरेणं निग्गच्छति, धम्मकहा जहा केसिसामिस्स, सोवि तहेव अम्मापियरो आपुच्छइ, नवरं धम्मघोसस्स अणगारस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए तहेव वुत्तपडिवुत्तया नवरं इमाओ य ते जाया विउलरायकुलबालियाओ कला० सेसं तं चेव जाव ताहे अकामाइं चेव महब्बलकुमारं एवं वयासी-तं इच्छामो

ते जाया! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए, तए णं से महब्बले कुमारे अम्मापियराण वयणमणुयत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठति। तए णं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ एवं जहा सिवभद्दस्स तहेव रायाभिसेओ भाणियव्वो जाव अभिसिंचति करयलपरिग्गहियं महब्बलं कुमारं जएणं विजएणं वद्धावेंति जएणं विजएणं वद्धावित्ता जाव एवं वयासी-भण जाया! किं देमो किं पयच्छामो सेसं जहा जमालिस्स तहेव जाव तए णं से महब्बले अणगारे धम्मघोसस्स अणगारस्स अंतियं सामाइयमाइयाइं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जति अ० २ बहूहिं चउत्थजाव विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुन्नाइं दुवालस वासाइं सामन्नपरियागं पाउणति बहु० मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए० आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिमसूरियजहा अम्मडो जाव बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववन्ने, तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं दस सागरोवमाइं ठिती पणत्ता, तत्थ णं महबलस्सवि दस सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता, से णं तुमं सुदंसणा! बंभलोगे कप्पे दस सागरोवमाइं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्ता ताओ चेव देवलोगाओ आउक्खएणं ३ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव वाणियगामे नगरे सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाए॥ ( सूत्रं ४३१ )॥ तए णं तुमे सुदंसणा! उम्मुक्कबालभावेणं विन्नायपरिणयमेत्तेणं जोव्वणगमणुप्पत्तेणं तहारूवाणं थेराणं अंतियं केवलिपन्नत्ते धम्मे निसंते, सेऽविय धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए तं सुट्ठु णं तुमं सुदंसणा! इदाणिं पकरेसि। से तेणट्ठेणं सुदंसणा! एवं वुच्चइ-अत्थि णं एतेसिं पलिओवमसागरोवमाणं खयेति वा अवचयेति वा, तए णं तस्स सुदंसणस्स सेट्ठिस्स

समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म सुभेणं अज्झवसाणेणं सुभेणं परिणामेणं लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स सन्नीपुव्वे समुप्पन्ने एयमट्ठं सम्मं अभिसमेति, तए णं से सुदंसणे सेट्ठी समणेणं भगवया महावीरेणं संभारियपुव्वभवे दुगुणाणीयसड्ढासंवेगे आणंदंसुपुन्ननयणे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आ० २ वं० नमं २ त्ता एवं वयासी—एवमेयं भंते ! जाव से जहेयं तुज्झे वदहत्तिकट्टु उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ सेसं जहा उसभदत्तस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, नवरं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ बहुपडिपुन्नाइं दुवालस वासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ, सेसं तं चेव। सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ ( सूत्रं ४३२ ) ॥ महब्बलो समत्तो ॥ ११-११ ॥

'विमलस्स'त्ति अस्यामवसर्पिण्यां त्रयोदशजिनेन्द्रस्य 'पउप्पए'त्ति प्रपौत्रकः—प्रशिष्यः अथवा प्रपौत्रिके—शिष्यसन्ताने 'जहा केसिसामिस्स'त्ति यथा केशिनाम्न आचार्यस्य राजप्रश्नकृताधीतस्य वर्णक उक्तस्तथाऽस्य वाच्यः, स च 'कुलसंपन्ने बलसंपन्ने रूवसंपन्ने विणयसंपन्ने'इत्यादिरिति, 'वुत्तपडिवुत्तय'त्ति उक्तप्रत्युक्तिका भणितानि मातुः प्रतिभणितानि च महाबलस्येत्यर्थः, नवरमित्यादि, जमालिचरिते हि विपुलकुलबालिका इत्यधीतमिह तु विपुलराजकुलबालिका इत्येतदध्येतव्यं, कला इत्यनेन चेदं सूचितं—'कलाकुसलसव्वकाललालियसुहोइयाओ'त्ति, 'सिवभद्दस्स'त्ति एकादशशतनवमोद्देशकाभिहितस्य शिवराजर्षिपुत्रस्य, 'जहा अम्मडो'त्ति यथौपपातिके अम्मडोऽधीतस्तथाऽयमिह वाच्यः, तत्र च यावत्करणादेतत् सूत्रमेवं दृश्यं—'गहगणनक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणाइं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं बहूइं जोयणकोडीओ बहूइं जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं उप्पइत्ता

सोहम्ममीसाणसणंकुमारमाहिंदे कप्पे वीईवइत्त'त्ति, इह च किल चतुर्दशपूर्वधरस्य जघन्यतोऽपि लान्तके उपपात इष्यते "जावंत लंतगाओ चउदसपुव्वी जहन्नउववाओ"त्ति वचनाद् एतस्य चतुर्दशपूर्वधरस्यापि यद् ब्रह्मलोके उपपात उक्तस्तत् केनापि मनाग् विस्मरणादिना प्रकारेण शपूर्वाणामपरिपूर्णत्वादिति संभावयन्तीति । 'सन्नी पुव्वजाईसरणे'त्ति सञ्ज्ञिरूपा या पूर्वा जातिस्तस्याः स्मरणं यत्तत्तथा 'अहिसमेइ'त्ति अधिगच्छतीत्यर्थः 'दुगुणाणीयसड्ढसंवेगे'त्ति पूर्वकालापेक्षया द्विगुणावानीतौ श्रद्धासंवेगौ यस्य स तथा, तत्र श्रद्धातत्त्वश्रद्धानं सदनुष्ठानचिकीर्षा वा संवेगो-भवभयं मोक्षाभिलाषो वेति. 'उसभदत्तस्स'त्ति नवमशते त्रयस्त्रिंशत्तमोद्देशकेऽभिहितस्येति ॥ एकादशशतस्यैकादशः ॥ ११-११ ॥

---

एकादशोद्देशके काल उक्तो, द्वादशेऽपि स एव भङ्ग्यन्तरेणोच्यते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादि सूत्रम्—

तेणं कालेणं २ आलभिया नामं नगरी होत्था, वन्नओ, संखवणे चेइए, वन्नओ, तत्थ णं आलभियाए नगरीए बहवे इसिभद्दपुत्तपामोक्खा समणोवासया परिवसंति अड्ढा जाव अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा जाव विहरंति । तएणं तेसिं समणोवासयाणं अन्नया कयावि एगयओ सहियाणं समुवागयाणं संनिविट्ठाणं सन्निसन्नाणं अयमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था-देवलोगेसु णं अज्जो ! देवाणं केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?, तए णं से इसिभद्दपुत्ते समणोवासए देवट्ठितीगहियट्ठे ते समणोवासए एवं वयासी-देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं जहण्णेणं दसवाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता, तेण परं समयाहिया दुसमयाहिया जाव दससमयाहिया संखेज्जसमयाहिय

असंखेज्जसमयाहिया उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता, तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य । तए णं ते समणोवासया इसिभद्दपुत्तस्स समणोवासगस्स एवमाइक्खमाणस्स जाव एवं परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहंति नो पत्तियंति नो रोयंति एयमट्ठं असद्दहमाणा अपत्तियमाणा अरोएमाणा जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया (सूत्रं ४३३) । तेणं कालेणं २ समणे भगवं महावीरे जाव समोसढे जाव परिसा पज्जुवासइ । तए णं ते समणोवासया इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा हट्ठतुट्ठा एवं जहा तुंगिउद्देसए जाव पज्जुवासंति । तए णं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य महति० धम्मकहा जाव आणाए आराहए भवइ । तए णं ते समणोवासया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठा उट्ठाए उट्ठेइ उ० २ समणं भगवं महावीरं वंदन्ति नमंसन्ति २ एवं वदासी–एवं खलु भंते ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए अम्हं एवं आइक्खइ जाव परूवेइ–देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं दस वाससहस्साइं जहन्नेणं ठिती पन्नत्ता तेण परं समयाहिया जाव तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य, से कहमेयं भंते ! एवं ?, अज्जोत्ति समणे भगवं महावीरे ते समणोवासए एवं वयासी–जन्नं अज्जो ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए तुज्झं एवं आइक्खइ जाव परूवेइ–देवलोगेसु णं अज्जो ! देवाणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं ठिई पन्नत्ता तेण परं समयाहिया जाव तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य, सच्चे णं एसमट्ठे । तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोचा निसम्म समणं भगवं महावीरं वंदन्ति नमंसन्ति २ जेणेव इसिभद्दपुत्ते समणोवासए तेणेव उवागच्छन्ति २ इसिभद्दपुत्तं समणोवासगं वंदंति

नमंसंति २ एयमट्ठं संमं विणएणं भुज्जो २ खामेंति । तए णं समणोवासया पसिणाइं पुच्छंति पु०२ अट्ठाइं परियादे-
यंति अ०२ समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसंति वं० २ जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया (सूत्रं ४३४)।
भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ वं० २ एवं वयासी–पभू णं भंते ! इसिभद्दपुत्ते समणो-
णोवासए देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे,
गोयमा ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए बहूहिं सीलव्वयगुणवयवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं अहापरिग्गहिएहिं
तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउहिति ब० २ मासियाए संलेहणाए अत्ताणं
झूसेहिति मा० २ सट्ठिं भत्ताइं अणसणाइं छेदेहिति २ आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोह
म्मे कप्पे अरुणाभे विमाणे देवत्ताए उववज्जिहिति, तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिती
पण्णत्ता, तत्थ णं इसिभद्दपुत्तस्सवि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिती भविस्सति। से णं भंते! इसिभद्दपुत्ते देवे
ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भव० ठिइक्खएणं जाव कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झि
हिति जाव अंतं काहेति। सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोयमे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ (सूत्रं ४३५)।
तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयावि आलभियाओ नगरीओ संखवणाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडि-
निक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं आलभिया नामं नगरी होत्था, वन्नओ,
तत्थ णं संखवणे णामं चेइए होत्था, वन्नओ, तस्स णं संखवणस्स अदूरसामंते पोग्गले नामं परिव्वायए परिव-

सति रिउव्वेदजजुरवेदजावनएसु सुपरिनिट्ठिए छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ जाव आयावेमाणे विहरति। तए णं तस्स पोग्गलस्स छट्ठंछट्ठेणं जाव आयावेमाणस्स पगतिभद्दयाए जहा सिवस्स जाव विब्भंगे नामं अन्नाणे समुप्पन्ने, से णं तेणं विब्भंगेणं अनाणेणं समुप्पन्नेणं बंभलोए कप्पे देवाणं ठितिं जाणति पासति। तए णं तस्स पोग्गलस्स परिव्वायगस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–अत्थि णं ममं अइसेसे नाणदंसणे समुप्पन्ने, देवलोएसु णं देवाणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता तेण परं समयाहिया दुसमयाहिया जाव [उक्कोसेणं] असंखेज्जसमयाहिया उक्कोसेणं दससागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता, तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य. एवं संपेहेति एवं २ आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ आ० २ तिदंडकुंडिया जाव धाउरत्ताओ य गेण्हइ गे० २ जेणेव आलभिया णगरी जेणेव परिव्वायगावसहे तेणेव उवागच्छइ उव० २ भंडनिक्खेवं करेति भं० २ आलभियाए नगरीए सिंघाडग जाव पहेसु अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ–अत्थि णं देवाणुप्पिया! ममं अतिसेसे नाणदंसणे समुप्पन्ने, देवलोएसु णं देवाणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं तहेव जाव वोच्छिन्ना देवा य दवेलोगा य। तए णं आलभियाए नगरीए एएणं अभिलावेणं जहा सिवस्स तं चेव से कहमेयं मन्ने एवं ?, सामी समोसढे जाव परिसा पडिगया, भगवं गोयमे तहेव भिक्खायरियाए तहेव बहुजणसद्दं निसामेइ तहेव बहुजणसद्दं निसामेत्ता तहेव सव्वं भाणियव्वं जाव अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि एवं भासामि जाव परूवेमि–देवलोएसु णं देवाणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता, तेण परं समयाहिया दुसमयाहिया जाव उक्को-

सेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठित्ती पन्नत्ता, तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य। अत्थि णं भंते! सोहम्मे कप्पे दव्वाइं सवन्नाइंपि अवन्नाइंपि तहेव जाव हंता अत्थि, एवं ईसाणेवि, एवं जाव अच्चुए, एवं गेवेज्जविमाणेसु अणुत्तरविमाणेसुवि, ईसिपब्भाराएवि जाव हंता अत्थि, तए णं सा महतिमहालिया जाव पडिगया, तए णं आलंभियाए नगरीए सिंघाडगतिय० अवसेसं जहा सिवस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणे नवरं तिदंडकुंडियं जाव धाउरत्तवत्थपरिहिए परिवडियविब्भंगे आलंभियं नगरं मज्झं० निग्गच्छति जाव उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमति अ० २ तिदंडकुंडियं च जहा खंदओ जाव पव्वइओ सेसं जहा सिवस्स जाव अव्वाबाहं सोक्खं अणुभवंति सासयं सिद्धा। सेवं भंते! २ त्ति॥ (सूत्रं ४३६)॥ ११-१२॥ एक्कारसमं सयं समत्तं॥ ११-१२॥

'तेण'मित्यादि, 'एगओ'त्ति एकत्र 'समुवागयाणं'ति समायातानां 'सहियाणं' मिलितानां 'समुविट्ठाणं'ति आसनग्रहणेन 'सन्निसन्नाणं'ति संनिहिततया निषण्णानां 'मिहो'त्ति परस्परं 'देवट्ठितिगहियट्ठे'त्ति देवस्थितिविषये गृहीतार्थो-गृहीतपरमार्थो यः स तथा। 'तुंगिउद्देसए'त्ति द्वितीयशतस्य पञ्चमे॥ एकादशशते द्वादशः॥ ११-१२॥ एकादशं शतं समाप्तम्॥ ११॥

---

एकादशशतमेवं व्याख्यातमबुद्धिनाऽपि यन्मयका। हेतुस्तत्राग्रहिता श्रीवाग्देवीप्रसादो वा॥ १॥

॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिवरविवृतायां भगवत्यां शतकमेकादशम्॥

## ॥ अथ द्वादशं शतकम् ॥

व्याख्यातं विविधार्थमेकादशं शतम्, अथ तथाविधमेव द्वादशमारभ्यते, तस्य चोद्देशकार्थाभिधानार्थां गाथेयम्—

संखे १ जयंति २ पुढवि ३ पोग्गल ४ अइवाय ५ राहु ६ लोगे य ७। नागे य ८ देव ९ आया १० बारसमसए दसुद्देसा ॥ १ ॥ तेणं कालेणं २ सावत्थीनामं नगरी होत्था वन्नओ, कोट्ठए चेइए वन्नओ, तत्थ णं सावत्थीए नगरीए बहवे संखप्पामोक्खा समणोवासगा परिवसंति अड्ढा जाव अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा जाव विहरंति, तस्स णं संखस्स समणोवासगस्स उप्पला नामं भारिया होत्था सुकुमाल जाव सुरूवा समणोवासिया अभिगयजीवा २ जाव विहरइ, तत्थ णं सावत्थीए नगरीए पोक्खलीनामं समणोवासए परिवसइ अड्ढे अभिगय जाव विहरइ, तेणं कालेणं २ सामी समोसढे परिसा निग्गया जाव पज्जुवा०, तए णं ते समणोवासगा इमीसे जहा आलभियाए जाव पज्जुवासइ, तए णं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य महति० धम्मकहा जाव परिसा पडिगया, तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० समणं भ० म० वं० न० वं० न० पसिणाइं पुच्छंति प० अट्ठाइं परियादियंति अ०२ उट्ठाए उट्ठेंति उ० २ समणस्स भ० महा० अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनि० प० २ जेणेव सावत्थी नगरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ ( सूत्रं ४३७ ) ॥ तए णं से संखे समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी— तुज्झे णं देवाणु-

प्पिया! विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेह, तए णं अम्हे तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा विसाएमाणा परिभुंजेमाणा परिभाएमाणा पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो, तए णं ते समणोवासगा संखस्स समणोवासगस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणंति, तए णं तस्स संखस्स समणोवास- गस्स अयमेयारूवे,अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–नो खलु मे सेयं तं विउलं असणं जाव साइमं आसाएमाणस्स ४ पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए, सेयं खलु मे पोसहसालाए पोसहियस्स बंभचारिस्स उम्मुक्क मणिसुवन्नस्स ववगयमालावन्नगविलेवणस्स निक्खित्तसत्थमुसलस्स एगस्स अबिइयस्स दब्भसंथारोवगयस्स पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तएत्तिकट्टु एवं संपेहेति२जेणेव सावत्था नगरी जेणेव सए गिहे जेणेव उप्प- ला समणोवासिया तेणेव उवा०२उप्पलं समणोवासियं आपुच्छइ २ जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ २ पोसह- सालं अणुपविसइ २ पोसहसालं पमज्जइ पो०२ उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ उ०२ दब्भसंथारगं संथरति दब्भ० २ दब्भसंथारगं दुरूहइ दु० २ पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणे विहरति, तए णं ते समणोवासगा जेणेव सावत्थी नगरी जेणेव साइं गिहाइं तेणेव उवाग० २ विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति उ० २ अन्नमन्ने सद्दावेंति अ० २ एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हेहिं से विउले असणपाणखाइमसाइमे उवक्खडाविए,संखे य णं समणोवासए नो हव्वमागच्छइ, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं संखं समणोवासगं सद्दावेत्तए। तए णं से पोक्खली समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी—अच्छन्तु

णं तुज्झे देवाणुप्पिया! सुनिव्वुया वीसत्था अहन्नं संखं समणोवासगं सद्दावेमित्तिकट्टु तेसिं समणोवासगाणं अंतियाओ पडिनिक्खमति प० २ सावत्थीए नगरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव संखस्स समणोवासगस्स गिहे तेणेव उवाग० २ संखस्स समणोवासगस्स गिहं अणुपविट्ठे। तए णं सा उप्पला समणोवासिया पोक्खलिं समणोवासयं एज्जमाणं पासइ पा० २ हट्ठतुट्ठ आसणाओ अब्भुट्ठेइ अ० २ त्ता सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ २ पोक्खलिं समणोवासगं वंदति नमंसति वं० न० आसणेणं उवनिमंतेइ आ० २ एवं वयासी-संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किमागमणप्पयोयणं?,तए णं से पोक्खली समणोवासए उप्पलं समणोवासियं एवं वयासी-कहिन्नं देवाणुप्पिए! संखे समणोवासए?,तए णं सा उप्पला समणोवासिया पोक्खलं समणोवासयं एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! संखे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव विहरइ। तए णं से पोक्खली समणोवासए जेणेव पोसहसाला जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ २ गमणागमणाए पडिक्कमइ ग० २ संखं समणोवासगं वंदति नमंसति वं० न० एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हेहिं से विउले असणजाव साइमे उवक्खडाविए तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया! तं विउलं असणं जाव साइमं आसाएमाणा जाव पडिजागरमाणा विहरामो,तए णं से संखे समणोवासए पोक्खलिं समणोवासगं एवं वयासी-णो खलु कप्पइ देवाणुप्पिया! तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणस्स जाव पडिजागरमाणस्स विहरित्तए,कप्पइ मे पोसहसालाए पोसहियस्स जाव विहरित्तए, तं छंदेणं देवाणुप्पिया! तुब्भे तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा जाव

विहरह, तए णं से पोक्खली समणोवासगे संखस्स समणोवासगस्स अंतियाओ पोसहसालाओ पडिनिक्खमइ २ त्ता सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव ते समणोवासगा तेणेव उवागच्छइ २ ते समणोवासए एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया! संखे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए जाव विहरइ, तं छंदेणं देवाणुप्पिया! तुज्झे विउले असणपाणखाइमसाइमे जाव विहरह, संखे णं समणोवासए नो हव्वमागच्छइ। तए णं ते समणोवासगा ते विउले असणपाणखाइमसाइमे आसाएमाणा जाव विहरंति। तए णं तस्स संखस्स समणोवासगस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था–सेयं खलु मे कल्लं जाव जलंते समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता तओ पडिनियत्तस्स पक्खियं पोसहं पारित्तएत्तिकट्टु एवं संपेहेति एवं २ कल्लं जाव जलंते पोसहसालाओ पडिनिक्खमति प० २ सुद्धप्पवेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवर परिहिए सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमति सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमित्ता पादविहारचारेणं सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जाव पज्जुवासति, अभिगमो नत्थि। तए णं ते समणोवासगा कल्लं पादु० जाव जलंते ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सरीरा सएहिं सएहिं गेहेहिंतो पडिनिक्खमंति सएहिं २ एगयओ मिलायंति एगयओ २ सेसं जहा पढमं जाव पज्जुवासंति। तए णं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य० धम्मकहा जाव आणाए आराहए भवति। तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा उट्ठाए उट्ठेंति उ० २ समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति वं० २ त्ता जेणेव संखे समणोवासए तेणेव

उवागच्छन्ति २ संखं समणोवासयं एवं वयासी-तुमं देवाणुप्पिया ! हिज्जा अम्हेहिं अप्पणा चेव एवं वयासी-तुम्हे णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं जाव विहरिस्सामो, तए णं तुमं पोसहसालाए जाव विहरिए, तं सुट्ठु णं तुमं देवाणुप्पिया ! अम्हं हीलसि, अज्जोत्ति समणे भगवं महावीरे ते समणोवासए एवं वयासी-मा णं ! अज्जो तुज्झे संखं समणोवासगं हीलह निंदह खिंसह गरहह अवमन्नह, संखे णं समणोवासए पियधम्मे चेव दढधम्मे चेव सुदक्खुजागरियं जागरिए ( सू० ४३८ ) ॥ भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भ० महा० वं० न० २ एवं वयासी-कइविहा णं भंते ! जागरिया पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा जागरिया पण्णत्ता, तंजहा-बुद्धजागरिया अबुद्धजागरिया सुदक्खुजागरिया, से केण० एव वु० तिविहा जागरिया पण्णत्ता, तंजहा-बुद्धजा० १ अबुद्धजा० २ सुदक्खु० ३?, गोयमा ! जे इमे अरिहंता भगवंता उप्पन्ननाणदंसणधरा जहा खंदए जाव सवन्नू सव्वदरिसी एए णं बुद्धा बुद्धजागरियं जागरंति, जे इमे अणगारा भगवंतो ईरियासमिया भासासमिया जाव गुत्तबंभचारी एए णं अबुद्धा अबुद्धजागरियं जागरंति, जे इमे समणोवासगा अभिगयजीवाजीवा जाव विहरन्ति एते णं सुदक्खुजागरियं जागरिंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ तिविहा जागरिया जाव सुदक्खुजागरिया ( सूत्रं ४३९ ) ॥



'संखे'त्यादि ॥ शङ्खश्रमणोपासकविषयः प्रथम उद्देशकः । 'जयंति'त्ति जयन्त्यभिधानश्राविकाविषयो द्वितीयः । 'पुढवि'त्ति रत्नप्रभापृथिवीविषयस्तृतीयः । 'पुग्गल'त्ति पुद्गलविषयश्चतुर्थः । 'अइवाए'त्ति प्राणातिपातादिविषयः पञ्चमः । 'राहु'त्ति राहुवक्त-

व्यताऽर्थः षष्ठः । 'लोगे य'त्ति लोकविषयः सप्तमः । 'नागे य'त्ति सर्प्पवक्तव्यतार्थोऽष्टमः । 'देव'त्ति देवभेदविषयो नवमः । 'आय'त्ति आत्मभेदनिरूपणार्थो दशम इति ॥ तत्र प्रथमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते—'आसाएमाण'त्ति ईषत्स्वादयन्तो बहु च त्यजन्तः इक्षुखण्डादेरिव 'विस्साएमाण'त्ति विशेषेण स्वादयन्तोऽल्पमेव त्यजन्तः खर्जूरादेरिव 'परिभाएमाण'त्ति ददतः 'परिभुंजेमाण'त्ति सर्वमुपभुञ्जाना अल्पमप्यपरित्यजन्तः, एतेषां च पदानां वार्त्तमानिकप्रत्ययान्तत्वेऽप्यतीतप्रत्ययान्तता द्रष्टव्या, ततश्च तद्विपुलमशनाद्यास्वादितवन्तः सन्तः 'पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो'त्ति पक्षे—अर्द्धमासि भवं पाक्षिकं 'पौषधम्' अव्यापारपौषधं 'प्रतिजाग्रतः' अनुपालयन्तः 'विहरिष्यामः' स्थास्यामः, यच्चेहातीतकालीनप्रत्ययान्तत्वेऽपि वार्त्तमानिकप्रत्ययोपादानं तद्भोजनानन्तरमेवाक्षेपेण पौषधाभ्युपगमप्रदर्शनार्थं, एवमुत्तरत्रापि गमनिका कार्येत्येके, अन्ये तु व्याचक्षते—इह किल पौषधं पर्वदिनानुष्ठानं, तच्च द्वेधा—इष्टजनभोजनदानादिरूपमाहारादिपौषधरूपं च, तत्र शङ्ख इष्टजनभोजनदानरूपं पौषधं कर्तुकामः सन् यदुक्तवांस्तद्दर्शयतेदमुक्तं—'तए णं अम्हे तं विउलं असणपाणखाइमसाइमं अस्साएमाणा' इत्यादि, पुनश्च शङ्ख एव संवेगविशेषवशादाद्यपौषधविनिवृत्तमनाः द्वितीयपौषधं चिकीर्षुर्यच्चिन्तितवांस्तद्दर्शयतेदमुक्तम्—'नो खलु मे सेयं त'मित्यादि, 'एगस्स अबिइयस्स'त्ति 'एकस्य' बाह्यसहायापेक्षया केवलस्य 'अद्वितीयस्य' तथाविधक्रोधादिसहायापेक्षया केवलस्यैव, न चैकस्येति भणनादेकाकिन एव पौषधशालायां पौषधं कर्तुं कल्पत इत्यवधारणीयं, एतस्य चरितानुवादरूपत्वात् तथा ग्रन्थान्तरे बहूनां श्रावकाणां पौषधशालायां मिलनश्रवणाद्दोषाभावात्परस्परेण स्मारणादिविशिष्टगुणसम्भवाच्चेति । 'गमणागमणाए पडिक्कमइ'त्ति ईर्यापथिकीं प्रतिक्रामतीत्यर्थः, 'छंदेणं'ति स्वाभिप्रायेण, न तु मदीयाज्ञयेति । 'पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि'त्ति पूर्वरात्रश्च—रात्रेः पूर्वो भागः अपगता रात्रिरपररात्रः स च

पूर्वरात्रापररात्रस्तल्लक्षणः कालसमयो यः स तथा तत्र 'धम्मजागरियं'ति धर्माय धर्मचिन्तया वा जागरिका—जागरणं धर्म्मजागरिका तां 'पारित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहेइ'त्ति 'पारयितुं' पारं नेतुम् 'एवं सम्प्रेक्षते' इत्यालोचयति, किमित्याह—'इतिकर्त्तुम्' एतस्यैवार्थस्य करणायेति। 'अभिगमो णत्थि'त्ति पञ्चप्रकारः पूर्वोक्तोऽभिगमो नास्त्यस्य, सचित्तादिद्रव्याणां विमोचनीयानामभावादिति। 'जहा पढमं'ति यथा तेषामेव प्रथमनिर्गमस्तथा द्वितीयनिर्गमोऽपि वाच्य इत्यर्थः, 'हिज्जो'त्ति ह्यो—ह्यस्तनदिने 'सुदक्खुजागरियं जागरिए'त्ति सुट्ठु दरिसणं जस्स सो सुदक्खू तस्स जागरिया—प्रमादनिद्राव्यपोहेन जागरणं सुदक्खुजागरिया तां जागरितः, कृतवानित्यर्थः, 'बुद्धा बुद्धजागरियं जागरंति'त्ति बुद्धाः केवलावबोधेन, ते च बुद्धानां—व्यपोढाज्ञाननिद्राणां जागरिका—प्रबोधो बुद्धजागरिका तां जाग्रति कुर्वन्ति 'अबुद्धा अबुद्धजागरियं जागरंति'त्ति अबुद्धाः केवलज्ञानाभावेन यथासम्भवं शेषज्ञानसद्भावाच्च बुद्धसदृशास्ते चाबुद्धानां—छद्मस्थज्ञानवतां या जागरिका सा तथा तां जाग्रति ॥ अथ भगवन्तं शङ्खस्तेषां मनाक्परिकुपितश्रमणोपासकानां कोपोपशमनाय क्रोधादिविपाकं पृच्छन्नाह—

तए णं से संखे समणोवासए समणं भ० महावीरं वंदइ नमं० २ एवं वयासी—कोहवसट्टे णं भंते! जीवे किं बंधइ किं पकरेति किं चिणाति किं उवचिणाति?, संखा! कोहवसट्टे णं जीवे आउयवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ एवं जहा पढमसए असंवुडस्स अणगारस्स जाव अणुपरियट्टइ। माणवसट्टे णं भंते! जीवे एवं चेव, एवं मायावसट्टेवि, एवं लोभवसट्टेवि जाव अणुपरियट्टइ। तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म भीया तत्था तसिया संसारभउव्विग्गा समणं भगवं महावीरं वं०

नमं० २ जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवा० २ संखं समणोवासगं वं० न० २ त्ता एयमट्ठं संमं विणएणं भुज्जो २ खामेंति। तए णं ते समणोवासगा सेसं जहा आलंभियाए जाव पडिगया, भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ २ एवं वयासी–पभू णं भंते! संखे समणोवासए देवाणुप्पियाणं अंतियं सेसं जहा इसिभद्दपुत्तस्स जाव अंतं काहेति। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ ( सूत्रं ४४० ) ॥ १२–१ ॥

'कोहवसट्टे ण'मित्यादि, 'इसिभद्दपुत्तस्स' अणन्तरशतोक्तस्येति ॥ द्वादशशते प्रथमः ॥ १२–१ ॥

---

अनन्तरोद्देशके श्रमणोपासकविशेषप्रश्नितार्थनिर्णयो महावीरकृतो दर्शितः, इह तु श्रमणोपासिकाविशेषप्रश्नितार्थनिर्णयस्तत्कृत एव दर्श्यते, इत्येवंसंबद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ कोसंबी नामं नगरी होत्था वन्नओ, चंदोवतरणे चेइए वन्नओ, तत्थ णं कोसंबीए नगरीए सहस्साणीयस्स रन्नो पोत्ते सयाणीयस्स रन्नो पुत्ते चेडगस्स रन्नो नत्तुए मिगावतीए देवीए अत्तए जयंतीए समणोवासियाए भत्तिज्जइ उदायणे नामं राया होत्था वन्नओ, तत्थ णं कोसंबीए नयरीए सहस्साणीयस्स रन्नो सुण्हा सयाणीयस्स रन्नो भज्जा चेडगस्स रन्नो धूया उदायणस्स रन्नो माया जयंतीए समणोवासियाए भाउज्जा मिगावती नामं देवी होत्था वन्नओ सुकुमालजावसुरूवा समणोवासिया जाव विहरइ, तत्थ णं कोसंबीए नगरीए सहस्साणीयस्स रन्नो धूया सयाणीयस्स रन्नो भगिणी उदायणस्स रन्नो पिउच्छा मिगावतीए देवीए नणंदा वेसालीसावयाणं अर-

हंताणं पुव्वसिज्जायरी जयंती नामं समणोवासिया होत्था सुकुमाल जाव सुरूवा अभिगय जाव वि० (सूत्रं ४४१)। तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे जाव परिसा पज्जुवासइ। तए णं से उदायणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठे तुट्ठे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ को०२ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! कोसंबिं नगरिं सब्भिंतरबाहिरियं एवं जहा कूणिओ तहेव सव्वं जाव पज्जुवासए। तए णं सा जयंती समणोवासिया इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठतुट्ठा जेणेव मियावती देवी तेणेव उवा०२ मियावतीं देवीं एवं वयासी–एवं जहा नवमसए उसभदत्तो जाव भविस्सइ। तए णं सा मियावती देवी जयंतीए समणोवासियाए जहा देवाणंदा जाव पडिसुणेति। तए णं सा मियावती देवी कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ को०२ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! लहुकरणजुत्तजोइयजाव धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेह जाव उवट्ठवेंति जाव पच्चप्पिणंति। तए णं सा मियावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सरीरा बहूहिं खुज्जाहिं जाव अंतेउराओ निग्गच्छति अं० २ जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उ० २ जाव रूढा। तए णं सा मियावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा समाणी नियगपरियालगा जहा उसभदत्तो जाव धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ। तए णं सा मियावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं बहूहिं खुज्जाहिं जहा देवाणंदा जाव वं० नमं० उदायणं रायं पुरओ कट्टु ठितिया चेव जाव पज्जुवासइ। तए णं समणे भगवं महा० उदायणस्स रन्नो मियावईए देवीए जयंतीए समणोवासियाए तीसे य महतिमहा० जाव धम्मं० परिसा पडिगया उदा-

यणे पडिगए मियावती देवीवि पडिगया ( सूत्रं ४४२ ) । तए णं सा जयंती समणोवासिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा समणं भ० महावीरं वं० न० २ एवं वयासी—कहिन्नं भंते ! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छन्ति?, जयंती ! पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं, एवं खलु जीवा गरुयत्तं हव्वं० एवं जहा पढमसए जाव वीयीवयंति । भवसिद्धियत्तणं भंते ! जीवाणं किं सभावओ परिणामओ ?, जयंती ! सभावओ, नो परिणामओ । सव्वेऽवि णं भंते ! भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति ?, हंता ! जयंती ! सव्वेवि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति । जइ भंते ! सव्वे भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति तम्हा णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणं खाइएणं अट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ सव्वेवि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति नो चेव णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ ?, जयंती ! से जहानामए सव्वागाससेढी सिया अणादीया अणवदग्गा परित्ता परिवुडा सा णं परमाणुपोग्गलमेत्तेहिं खंडेहिं समये २ अवहीरमाणी२ अणंताहिं ओसप्पिणीअवसप्पिणीहिं अवहीरंति नो चेव णं अवहिया सिया, से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुचइ सव्वेवि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति नो चेव णं भवसिद्धिअविरहिए लोए भविस्सइ ॥ सुत्तत्तं भंते ! साहू जागरियत्तं साहू ?, जयंती ! अत्थेगइयाणं जीवाणं सुत्तत्तं साहू अत्थेगतियाणं जीवाणं जागरियत्तं साहू, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ अत्थेगइयाणं जाव साहू ?, जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया अहम्माणुया अहम्मिट्ठा अहम्मक्खाई अहम्मपलोई अहम्मपलज्जमाणा अहम्मसमुदायारा अहम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति एएसि णं जीवाणं सुत्तत्तं

साहू, एए णं जीवा सुत्ता समाणा नो बहूणं पाणभूयजीवसत्ताणं दुक्खणयाए जोयणयाए जाव परियावणयाए वट्टंति, एए णं जीवा सुत्ता समाणा अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा नो बहूहिं अहम्मियाहिं संजोयणाहिं संजोएत्तारो भवंति, एएसिं जीवाणं सुत्तत्तं साहू, जयंती ! जे इमे जीवा धम्मिया धम्माणुया जाव धम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति एएसि णं जीवाणं जागरियत्तं साहू, एए णं जीवा जागरा समाणा बहूणं पाणाणं जाव सत्ताणं अदुक्खणयाए जाव अपरियावणियाए वट्टंति, ते णं जीवा जागरमाणा अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा बहूहिं धम्मियाहिं संजोयणाहिं संजोएत्तारो भवंति, एए णं जीवा जागरमाणा धम्मजागरियाए अप्पाणं जागरइत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं जागरियत्तं साहू, से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ अत्थेगइयाणं जीवाणं सुत्तत्तं साहू अत्थेगइयाणं जीवाणं जागरियत्तं साहू ॥ बलियत्तं भंते ! साहू दुब्बलियत्तं साहू ?, जयंती ! अत्थेगइयाणं जीवाणं बलियत्तं साहू अत्थेगइयाणं जीवाणं दुब्बलियत्तं साहू, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव साहू?, जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया जाव विहरंति एएसि णं जीवाणं दुब्बलियत्तं साहू, एए णं जीवा एवं जहा सुत्तस्स तहा दुब्बलियस्स वत्तव्वया भाणियव्वा, बलियस्स जहा जागरस्स तहा भाणियव्वं जाव संजोएत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं बलियत्तं साहू, से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ तं चेव जाव साहू ॥ दक्खत्तं भंते ! साहू आलसियत्तं साहू ?, जयंती ! अत्थेगतियाणं जीवाणं दक्खत्तं साहू अत्थेगतियाणं जीवाणं आलसियत्तं साहू, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ तं चेव जाव साहू ?, जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया जाव विहरंति एएसि णं

जीवाणं अलसियत्तं साहू, एए णं जीवा अलसा समाणा नो बहूणं जहा सुत्ता तहा अलसा भाणियव्वा, जहा जागरा तहा दक्खा भाणियव्वा जाव संजोएत्तारो भवंति, एए णं जीवा दक्खा समाणा बहूहिं आयरियवेयावच्चेहिं जाव उवज्झाय० थेर० तवस्सि० गिलाणवेया० सेहवे० कुलवेया० गणवेया० संघवेयाव० साहम्मियवेयावच्चेहिं अत्ताणं संजोएत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं दक्खत्तं साहू, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव साहू ॥ सोइंदियवसट्टे णं भंते! जीवे किं बंधइ ?, एवं जहा कोहवसट्टे तहेव जाव अणुपरियट्टइ। एवं चक्खिंदियवसट्टेऽवि, एवं जाव फासिंदियवसट्टे जाव अणुपरियट्टइ। तए णं सा जयंती समणोवासिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा सेसं जहा देवाणंदाए तहेव पव्वइया जाव सव्वदुक्खप्पहीणा। सेवं भंते!-२ त्ति ॥ ( सूत्रं ४४३ ) ॥ १२-२ ॥

'तेणं कालेण'मित्यादि, 'पोत्ते'त्ति पौत्रः—पुत्रस्यापत्यं 'चेडगस्स'त्ति वैशालीराजस्य 'नत्तुए'त्ति नप्ता—दौहित्रः 'भाउज्ज'-त्ति भ्रातृजाया 'वेसालीसावगाणं अरहंताणं पुव्वसेज्जायरी'ति वैशालिको—भगवान्महावीरस्तस्य वचनं शृण्वन्ति श्रावयन्ति वा तद्रसिकत्वादिति वैशालिकश्रावकास्तेषाम् 'आर्हतानाम्' अर्हद्देवतानां साधूनामिति गम्यं 'पूर्वशय्यातरा' प्रथमस्थानदात्री, साधवो ह्यपूर्वे समायातास्तद्गृह एव प्रथमं वसतिं याचन्ते तस्याः स्थानदात्रीत्वेन प्रसिद्धत्वादिति सा पूर्वशय्यातरा 'सभावओ'त्ति स्वभावतः पुद्गलानां मूर्त्तत्ववत् 'परिणामओ'त्ति 'परिणामेन' अभूतस्य भवनेन पुरुषस्य तारुण्यवत्। 'सव्वेऽवि णं भंते! भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति'त्ति भवा—भाविनी सिद्धिर्येषां ते भवसिद्धिकास्ते सर्वेऽपि भदन्त! जीवाः सेत्स्यन्ति? इति प्रश्नः,

'हंते'त्यादि तूत्तरम्, अयं चास्यार्थः—समस्ता अपि भवसिद्धिका जीवाः सेत्स्यन्त्यन्यथा भवसिद्धिकत्वमेव न स्यादिति । अथ सर्वभवसिद्धिकानां सेत्स्यमानताऽभ्युपगमे भवसिद्धिकशून्यता लोकस्य स्यात्, नैवं, समयज्ञातात्, तथाहि—सर्व एवानागतकालसमया वर्त्तमानतां लप्स्यन्ते—"भवति स नामातीतः प्राप्तो यो नाम वर्त्तमानत्वम् । एष्यंश्च नाम स भवति यः प्राप्स्यति वर्त्तमानत्वम् ॥१॥" इत्यभ्युपगमात्, न चानागतकालसमयविरहितो लोको भविष्यतीति । अथैतामेवाशङ्कां जयन्तीप्रश्नद्वारेणास्मदुक्तसमयज्ञातापेक्षया ज्ञातान्तरेण परिहर्त्तुमाह—'जइ ण'मित्यादि इत्येके व्याख्यान्ति, अन्ये तु व्याचक्षते—सर्वेऽपि भदन्त ! भवसिद्धिका जीवाः सेत्स्यन्ति—ये केचन सेत्स्यन्ति ते सर्वेऽपि भवसिद्धिका एव, नाभवसिद्धिक एकोऽपि, अन्यथाऽभवसिद्धिकत्वमेव न स्यादित्यभिप्रायः, 'हंते'त्याद्युत्तरम् । अथ यदि ये केचन सेत्स्यन्ति सर्वेऽपि भवसिद्धिका एव नाभवसिद्धिक एकोऽपीत्यभ्युपगम्यते तदा कालेन सर्व भवसिद्धिकानां सिद्धिगमनाद् भव्यशून्यता जगतः स्यादिति जयन्त्याशङ्कां तत्परिहारं च दर्शयितुमाह—'जइ ण'मित्यादि, 'सव्वागाढसेढि'त्ति सर्वाकाशस्य—बुद्धया चतुरस्रप्रतरीकृतस्य श्रेणिः—प्रदेशपङ्क्तिः सर्वाकाशश्रेणिः 'परित्त'त्ति एकप्रदेशिकत्वेन विष्कम्भाभावेन परिमिता 'परिवुड'त्ति श्रेण्यन्तरैः परिकरिता, स्वरूपमेतत्तस्याः, अत्रार्थे वृद्धोक्ता भावनागाथा भवन्ति—"तो भन्नइ किं न सिज्झंति अहव किमभवसावसेसत्ता । निल्लेवणं न जुज्जइ तेसिं तो कारणं अन्नं ॥ १ ॥" अयमर्थः—यदि भवसिद्धिकाः सेत्स्यन्तीत्यभ्युपगम्यते ततो भणति शिष्यः—कस्मान्न ते सर्वेऽपि सिद्ध्यन्ति ?, अन्यथा भवसिद्धिकत्वस्यैवाभावात्, अथवाऽपरं दूषणं—कस्माद् अभव्यसावशेषत्वाद्—अभव्यावशेषत्वेनाभव्यान् विमुच्येत्यर्थः तेषां भव्यानां निर्लेपनं न युज्यते?, युज्यत एवेति भावः, यस्मादेवं ततः कारणं—सिद्धेर्हेतुरन्यद्भव्यत्वातिरिक्तं वाच्यं, तत्र सति सर्वभव्यनिर्लेपनप्रसङ्गादिति ॥ "भन्नइ तेसिमभव्वेवि पइ अनिल्लेवणं

न उ विरोहो । न उ सव्वभवसिद्धी सिद्धा सिद्धंतसिद्धीओ ॥ २ ॥ ” अयमर्थो–भण्यते अत्रोत्तरं–भव्यत्वमेव सिद्धिगमनकारणं, न त्वन्यत्किञ्चित्, तत्र च सत्यपि भव्यत्वे सिद्धिगमनकारणे 'तेषां' भव्यानाम् 'अभव्यानपि प्रति' अभव्यानप्याश्रित्य 'अनिर्लेपनम्' अव्यवच्छेदः, अभव्यानवशिष्य यद्भव्यानां निर्लेपनमुक्तं तदपि नेत्यर्थः 'न तु' न पुनरिहार्थे 'विरोधः' बाधाऽस्ति सिद्धान्तसिद्धत्वात्, एतदेवाह—न तु इत्यादि, न हि सर्वभव्यसिद्धिः सिद्धा सिद्धान्तसिद्धेरिति ॥ “ किह पुण भव्वबहुत्ता सव्वागासप्पएसदिट्ठंता । नवि सिज्झिहिंति तो भणइ किंनु भव्वत्तणं तेसिं ? ॥३॥ जइ होऊणं भव्वावि केइ सिद्धिं न चेव गच्छंति । एवं तेवि अभवा को व विसेसो भवे तेसिं ? ॥ ४ ॥ भन्नइ भव्वो जोगो दारुय दलियंति वावि पज्जाया । जोगोवि पुण न सिज्झइ कोई रुक्खाइदिट्ठंता ॥ ५ ॥ पडिमाईण जोगा बहवो गोसीसचंदणदुमाई । संति अजोगावि इहं अन्ने एरंडभेंडाई ॥ ६ ॥ न य पुण पडिमुप्पायणसंपत्ती होइ सव्वजोगाणं । जेसिंपि असंपत्ती न य तेसि अजोग्गया होइ ॥ ७ ॥ किं पुण जा संपत्ती सा नियमा होइ जोग्गरुक्खाणं । न य होइ अजोग्गाणं एमेव य भव्वसिज्झणया ॥८॥ सिज्झिस्संति य भव्वा सव्वेवित्ति भणियं च जं पहुणा । तंपि य एयाएच्चिय दिट्ठीए जयंतिपुच्छाए ॥ ९ ॥ भव्यानामेव सिद्धिरित्येतया दृष्ट्या–मतेनेति ॥ “ अहवा पडुच्च कालं न सव्वभव्वाण होइ वोच्छित्ती । जं तीतणागयाओ अद्धाओ दोवि तुल्लाओ ॥१०॥ तत्थातीतद्धाए सिद्धो एक्को अणंतभागो सिं । कामं तावइओ च्चिय सिज्झिहिइ अणागयद्धाए ॥ ११ ॥ ते दो अणंतभागा होउं सोच्चिय अणंतभागो सिं । एवंपि सव्वभव्वाण सिद्धिगमणं अणिदिट्ठं ॥ १२ ॥ ” तौ द्वावप्यनन्तभागौ मीलितौ सर्वजीवानामनन्त एव भाग इति, यत्पुनरिदमुच्यते–अतीताद्धातोऽनागताद्धाऽनन्तगुणेति तन्मतान्तरं, तस्य चेदं बीजं–यदि द्वे अपि ते समाने स्यातां तदा मुहूर्त्तादावतिक्रान्तेऽतीताद्धा समधिका अनागताद्धा च हीनेति हतं समत्वम्. एवं च

मुहूर्त्तादिभिः प्रतिक्षणं क्षीयमाणाऽप्यनागताद्धा यतो न क्षीयते ततोऽवसितं ततः साऽनन्तगुणेति, यच्चोभयोः समत्वं तदेवं—यथाऽनागताद्धाया अन्तो नास्ति एवमतीताद्धाया आदिरिति समतेति ॥ जीवाश्च न सुप्ताः सिद्ध्यन्ति किं तर्हि जागरा एवेति सुप्तजागरसूत्रम्- तत्र च 'सुत्तत्तं'ति निद्रावशत्वं 'जागरियत्तं'ति जागरणं जागरः सोऽस्यास्तीति जागरिकस्तद्भावो जागरिकत्वम् 'अहम्मिय'त्ति धर्म्मेण-श्रुतचारित्ररूपेण चरन्तीति धार्मिकास्तन्निषेधादधार्म्मिकाः, कुत एतदेवमित्यत आह-'अहम्माणुया' धर्मं-श्रुतरूपमनुगच्छन्तीति धर्मानुगास्तन्निषेधादधर्मानुगाः, कुत एतदेवमित्यत आह-'अहम्मिट्ठा' धर्म्मः-श्रुतरूप एवेष्टो-वल्लभः पूजितो वा येषां ते धर्मेष्टाः धर्मिणा वेष्टा धर्मेष्टाः अतिशयेन वा धर्म्मिणो धर्मिष्ठास्तन्निषेधादधर्मेष्टा अधर्मेष्टा अधर्म्मिष्ठा वा, अत एव 'अहम्मक्खाई' न धर्ममाख्यान्तीत्येवंशीला अधर्माख्यायिनः अथवा न धर्मात् ख्यातिर्येषां तेऽधर्मख्यातयः 'अहम्मपलोइ'ति न धर्म्ममुपादेयतया प्रलोकयन्ति ये तेऽधर्मप्रलोकिनः 'अहम्मपलज्जण'त्ति न धर्मे प्ररज्यन्ते-आसजन्ति ये तेऽधर्मप्ररञ्जनाः, एवं च 'अहम्मसमुदाचार'त्ति न धर्मरूपः-चारित्रात्मकः समुदाचारः-समाचारः सप्रमोदो वाऽऽचारो येषां ते तथा, अत एव 'अहम्मेण चेवे'त्यादि, 'अधर्मेण' चारित्रश्रुतविरुद्धरूपेण 'वृत्तिं' जीविकां 'कल्पयन्तः' कुर्वाणा इति ॥ अनन्तरं सुप्तजाग्रतां (असाधु)साधुत्वं प्ररूपितम्, अथ दुर्बलादीनां तथैव तदेव प्ररूपयन् सूत्रद्वयमाह-'बलियत्तं भंते!'इत्यादि, 'बलियत्तं'ति बलमस्यास्तीति बलिकस्तद्भावो बलिकत्वं 'दुब्बलियत्तं'ति दुष्टं बलमस्यास्तीति दुर्बलिकस्तद्भावो दुर्बलिकत्वं। दक्षत्वं च तेषां साधु ये नेन्द्रियवशा भवन्तीतीन्द्रियवशानां यद्भवति तदाह—'सोइंदिए'त्यादि, 'सोइंदियवसट्टे'त्ति श्रोत्रेन्द्रियवशेन-तत्पारतन्त्र्येण ऋतः-पीडितः श्रोत्रेन्द्रियवशार्त्तः श्रोत्रेन्द्रियवशं वा ऋतो-गतः श्रोत्रेन्द्रियवशार्त्तः ॥ द्वादशशते द्वितीयः ॥ १२-२ ॥

अनन्तरं श्रोत्रादीन्द्रियवशार्त्ता अष्टकर्म्मप्रकृतीर्बध्नन्तीत्युक्तं, तद्बन्धनाच्च नरकपृथिवीष्वप्युत्पद्यन्त इति नरकपृथिवीस्वरूपप्रतिपादनाय तृतीयोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–कइ णं भंते! पुढवीओ पन्नत्ताओ?, गोयमा! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, तंजहा–पढमा दोच्चा जाव सत्तमा। पढमा णं भंते! पुढवी किंनामा किंगोत्ता पण्णत्ता?, गोयमा! घम्मा नामेणं रयणप्पभा गोत्तेणं एवं जहा जीवाभिगमे पढमो नेरइयउद्देसओ सो चेव निरवसेसो भाणियव्वो जाव अप्पाबहुगंति। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ ( सूत्रं ४४४ ) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'किंनामा किंगोय'त्ति तत्र नाम–यादृच्छिकमभिधानं गोत्रं च–अन्वर्थिकमिति 'एवं जहा जीवाभिगमे'इत्यादिना यत्सूचितं तदिदं—'दोच्चा णं भंते! पुढवी किंनामा किंगोया पन्नत्ता?, गोयमा! वंसा नामेणं सक्करप्पभा गोत्तेण'मित्यादीति ॥ द्वादशशते तृतीयः ॥ १२-३ ॥

---

अनन्तरं पृथिव्य उक्तास्ताश्च पुद्गलात्मिका इति पुद्गलांश्चिन्तयंश्चतुर्थोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–दो भंते! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति एगयओ साहण्णित्ता किं भवति?, गोयमा! दुप्पएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहा कज्जइ एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ। तिन्नि भंते! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति २ किं भवति?, गोयमा! तिपएसिए खंधे भवति, से

भिज्जमाणे दुहावि तिहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति। चत्तारि भंते! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति जाव पुच्छा, गोयमा! चउपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि चउहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा दो दुपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ, चउहा कज्जमाणे चत्तारि परमाणुपोग्गला भवंति। पंच भंते! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा! पंचपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि चउहावि पंचहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे भवति एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ तिप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवति, पंचहा कज्जमाणे पंच परमाणुपोग्गला भवंति। छब्भंते! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा! छप्पएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि जाव छव्विहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा दो तिपएसिया खंधा भवइ, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए

खंधे भवइ अहवा तिन्नि दुपएसिया खंधा भवन्ति चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला भवंति एगयओ दो दुप्पएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवति, छहा कज्जमाणे छ परमाणुपोग्गला भवंति। सत्त भंते! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा! सत्तपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि जाव सत्तहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिप्पएसिए एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति एगयओ तिपएसिए खंधे भवति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, सत्तहा कज्जमाणे सत्त परमाणुपोग्गला भवंति। अट्ठ भंते! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा! अट्ठपए-

सिए खंधे भवइ जाव दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु० एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिपएसिए० एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा दो चउप्पएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दोन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवइ, सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ अट्ठहा कज्जमाणे अट्ठ परमाणुपोग्गला भवंति॥ नव भंते! परमाणुपोग्गला पुच्छा,

गोयमा! जाव नवविहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु० एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवति, एवं एक्केक्कं संचारेंतेहिं जाव अहवा एगयओ चउप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा तिन्नि तिपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि दुप्पएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दुपएसिए० एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, छहा

कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ दुप्पएसिए० एगयओ तिप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ तिन्नि दुप्पएसिया खंधा भवंति, सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणु० एगयओ तिप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ पंच परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे भवति, नवहा कज्जमाणे नव परमाणुपोग्गला भवंति ॥ दस भंते ! परमाणुपोग्गला जाव दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ नवपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ अट्ठ पएसिए खंधे भवइ एवं एक्केक्कं संचारेयव्वंति जाव अहवा दो पंच पएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए० एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ चउप्पएसिए एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दो तिपएसिया खंधा० एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दुपएसि० एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ तिप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा

भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ तिपएसिए एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिन्नि तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा एगयओ चउपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ छपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिन्नि दुपएसिया० एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा पंच दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणु० एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ दुपएसिए० एगयओ चउपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा० एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणु० एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ पंच परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा भवंति, अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा

एगयओ छ परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, नवहा कज्जमाणे एगयओ अट्ठ परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ छ परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, दसहा कज्जमाणे दस परमाणुपोग्गला भवंति। संखेज्जा भंते! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति एगयओ साहणिणत्ता किं भवति?, गोयमा! संखेज्जपएसिए खंधे भवति, से भिज्जमाणे दुहावि जाव दसहावि संखेज्जहावि कज्जंति, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति एवं अहवा एगयओ तिपएसिए एगयओ सं० खंधे भवति एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति जहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ एवं जाव अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दसपएसिए खंधे० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए० एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए० एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ संखेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दुपएसिए० एगयओ संखेज्जपएसिए भवति अहवा



प्र०आ०५१४

एगयओ दो परमाणु० एगयओ तिप्पएसिए० एगयओ संखेज्जपएसिए भवति एवं जाव अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दसपएसिए एगयओ संखेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति जाव अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दसपएसिए एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया भवंति जाव अहवा एगयओ दसपएसिए एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया भवंति अहवा चत्तारि संखेज्जपएसिया भवंति एवं एएणं कमेणं पंचगसंजोगोवि भाणियव्वो जाव नवगसंजोगो, दसहा कज्जमाणे एगयओ नव परमाणु० एगयओ संखेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ अट्ठ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति, एएणं कमेणं एक्केक्को पू० जाव अहवा एगयओ दसपएसिए एगयओ नव संखेज्जपएसिया भवंति अहवा दस संखेज्जपएसिया खंधा भवंति संखेज्जहा कज्जमाणे संखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति। असंखेज्जा भंते! परमाणुपोग्गला एगयओ साहंणंति एगयओ साहण्णित्ता किं भवति?, गोयमा! असंखेज्जपएसिए खंधे भवति, से भिज्जमाणे दुहावि जाव दसहावि संखेज्जहावि असंखेज्जहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु० एगयओ असंखेज्जपएसिए भवति जाव अहवा एगयओ दसपएसिए एगयओ असंखिज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, तिहा

कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ असंखेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ असंखेज्जपएसिए भवति जाव अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दसपएसिए एगयओ असंखेज्जपएसिए भवति अहवा एगे परमाणु० एगे संखेज्जपएसिए एगे असंखेज्जपएसिए भवति अहवा एगे परमाणु० एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगे दुपएसिए एगयओ दो असंखेज्जपएसिया भवंति एवं जाव अहवा एगे संखेज्जपएसिए भवति एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि असंखिज्जपएसिया भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणु० एग० असंखेज्जपएसिए भवति एवं चउक्कगसंजोगो जाव दसगसंजोगो एए जहेव संखेज्जपएसियस्स नवरं असंखेज्जगं एगं अहिगं भाणियव्वं जाव अहवा दस असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, संखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ संखेज्जा परमाणुपोग्गला एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ संखेज्जा दुपएसिया खंधा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवति एवं जाव अहवा एगयओ संखेज्जा दसपएसिया खंधा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ संखिज्जा संखिज्जपएसिया खंधा एगयओ असंखिज्जपएसिए खंधे भवति अहवा संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, असंखिज्जहा कज्जमाणे असंखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति। अणंता णं भंते! परमाणुपोग्गला जाव किं भवंति?, गोयमा! अणंतपएसिए खंधे भवति, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि जाव दसहावि संखिज्जहा असंखिज्जहा अणंतहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ अणंतपएसिए खंधे जाव अहवा दो अणंतपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्ज-

माणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ अणंतपएसिए भवति अहवा एग० परमाणु० एग० दुपएसिए एग० अणंतपएसिए भवति जाव अहवा एग० परमाणु० एग० असंखेज्जपएसिए एग० अणंतपएसिए भवति अहवा एग० परमाणु० एग० दो अणंतपएसिया भवंति अहवा एग० दुपएसिए एग० दो अणंतपएसिया भवंति एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा एग० संखेज्जपदे० एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा एग० असंखेज्जपएसिए खंधे एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि अणंतपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एग० तिन्नि परमाणु० एगयओ अणंतपएसिए भवति एवं चउक्कसंजोगो जाव असंखेज्जगसंजोगो, एते सव्वे जहेव असंखेज्जाणं भणिया तहेव अणंताणवि भाणियव्वा नवरं एक्कं अणंतगं अब्भहियं भाणियव्वं जाव अहवा एगयओ संखेज्जा संखिज्जपएसिया खंधा एग० अणंतपएसिया भवंति अहवा एग० संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा एग० अणंतपएसिए खंधे भवति अहवा संखिज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति, असंखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ असंखेज्जा परमाणु० एग० अणंतपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ असंखिज्जा दुपएसिया खंधा एग० अणंतपएसिए भवति जाव अहवा एग० असंखेज्जा संखिज्जपएसिया एग० अणंतपएसिए भवति अहवा एग० असंखिज्जा असंखिज्जपएसिया खंधा एग० अणंतपएसिए भवति अहवा असंखेज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति अणंतहा कज्जमाणे अणंता परमाणुपोग्गला भवंति ॥ (सूत्रं ४४५)॥

'रायगिहे'इत्यादि 'एगयओ'त्ति एकत्वतः एकतयेत्यर्थः 'साहन्नंति'त्ति संहन्येते, संहतौ भवत इत्यर्थः, द्विप्रदेशिकस्कन्धस्य

भेदे एको विकल्पः, त्रिप्रदेशिकस्य द्वौ, चतुष्प्रदेशिकस्य चत्वारः, पञ्चप्रदेशिकस्य षट्, षट्प्रदेशिकस्य दश, सप्तप्रदेशिकस्य चतुर्दश, अष्टप्रदेशिकस्यैकविंशतिः, नवप्रदेशिकस्याष्टाविंशतिः, दशप्रदेशिकस्य चत्वारिंशत्, सङ्ख्यातप्रदेशिकस्य द्विधाभेदे ११ त्रिधाभेदे २१ चतुर्द्धाभेदे ३१ पञ्चधाभेदे ४१ षोढात्वे ५१ सप्तधात्वे ६१ अष्टधात्वे ७१ नवधात्वे ८१ दशधात्वे ९१ सङ्ख्यातभेदत्वे त्वेक एव विकल्पः, तमेवाह—'संखेज्जहा कज्जमाणे संखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति'त्ति, असङ्ख्यातप्रदेशिकस्य तु द्विधाभावे १२ त्रिधात्वे २३ चतुर्द्धात्वे ३४ पञ्चधात्वे ४५ षोढात्वे ५६ सप्तधात्वे ६७ अष्टधात्वे ७८ नवधात्वे ८९ दशभेदत्वे १०० सङ्ख्यातभेदत्वे द्वादश असङ्ख्यातभेदकरणे त्वेक एव, तमेवाह—'असंखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति'त्ति, अनन्तप्रदेशिकस्य तु द्विधात्वे १३ त्रिधात्वे २५ चतुर्द्धात्वे ३७ पञ्चधात्वे ४९ षड्विधत्वे ६१ सप्तधात्वे ७३ अष्टधात्वे ८५ नवधात्वे ९७ दशधात्वे १०९, सङ्ख्यातत्वे १२ असङ्ख्यातत्वे १३ अनन्तभेदकरणे त्वेक एव विकल्पः, तमेवाह—'अणंतहा कज्जमाणे'इत्यादि ॥ 'दो भंते! परमाणुपोग्गला साहण्णंती'त्यादिना पुद्गलानां प्राक् संहननमुक्तं 'से भिज्जमाणे दुहा कज्जइ'इत्यादिना च तेषां भेद उक्तः, अथ तावेवाश्रित्याह—

एएसि णं भंते! परमाणुपोग्गलाणं साहणणाभेदाणुवाएणं अणंताणंता पोग्गलपरियट्टा समणुगंतव्वा भवंतीति मक्खाया?, हंता गोयमा! एएसि णं परमाणुपोग्गलाणं साहणणा जाव मक्खाया ॥ कइविहे णं भंते! पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते?, गोयमा! सत्तविहा पो० परि० पण्णत्ता, तंजहा—ओरालियपो० परि० वेउव्विय० तेयापो० कम्मापो० मणपो० परियट्टे वइपोग्गलपरियट्टे आणापाणुपोग्गलपरिअट्टे। नेरइयाणं भंते! कतिविहे



प्र०आ०५६४

पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते ?, गोयमा ! सत्तविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते, तंजहा—ओरालियपो० वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे तेयापोग्गलपरियट्टे कम्मापोग्गलपरियट्टे मणपोग्गलपरियट्टे वइपोग्गलपरियट्टे आणापाणपोग्गलपरियट्टे। नेरइयाणं भंते ! कतिविहे पोग्गलपरियट्टे पन्नत्ते?, गोयमा ! सत्तविहे पोग्गलपरियट्टे पं०, तं०—ओरालियपोग्गलपरियट्टे वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे आणापाणुपोग्गलपरियट्टे एवं जाव वेमाणियाणं ॥ एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीया?, अणंता, केवइया पुरेक्खडा?, कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि, जस्सत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा। एगमेगस्स णं भंते ! असुरकुमारस्स केवतिया ओरालियपोग्गला०?, एवं चेव, एवं जाव वेमाणियस्स । एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स केवतिया वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा अतीया ?, अणंता, एवं जहेव ओरालियपोग्गलपरियट्टा तहेव वेउव्वियपोग्गलपरियट्टावि भाणियव्वा, एवं जाव वेमाणियस्स आणापाणुपोग्गलपरियट्टा, एते एगत्तिया सत्त दंडगा भवंति। नेरइयाणं भंते ! केवतिया ओ० पोग्गलपरियट्टा अतीता ?, गोयमा अनंता, केवइया पुरेक्खडा ?, अणंता, एवं जाव वेमाणियाणं, एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टावि एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टा वेमाणियाणं, एवं एए पोहत्तिया सत्त चउव्वीसतिदंडगा ॥ एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स नेर० केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?, नत्थि एक्कोवि, केवतिया पुरेक्खडा ?, नत्थि एक्कोवि, एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स असुरकुमारत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा० एवं चेव, एवं जाव थणियकुमारत्ते जहा असुरकुमारत्ते । एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स पुढविकाइयत्ते

केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता?. अणंता, केवतिया पुरेक्खडा ?, कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि, जस्सत्थि तस्स जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा एवं जाव मणुस्सत्ते, वाणमंतरजोइसियवेमाणियत्ते जहा असुरकुमारत्ते। एगमेगस्स णं भंते! असुरकुमारस्स नेरइयत्ते केवतिया अतीया ओरालियपोग्गलपरियट्टा एवं जहा नेरइयस्स वत्तव्वया भणिया तहा असुरकुमारस्सवि भाणियव्वा जाव वेमाणि०, एवं जाव थणियकुमारस्स, एवं पुढविकायस्सवि, एवं जाव वेमाणियस्स, सव्वेसिं एक्को गमो। एगमेगस्स णं भंते! नेरइयस्स केव० वेउ० पोग्गलपरियट्टा अतीया?, अणंता, केवतिया पुरेक्खडा?, एकोत्तरिया जाव अणंता, एवं जाव थणियकुमारत्ते, पुढविकाइयत्ते पुच्छा, नत्थि एक्कोवि, केवतिया पुरेक्खडा?, नत्थि एक्कोवि, एवं जत्थ वेउव्वियसरीरं अत्थि तत्थ एगुत्तरिओ, जत्थ नत्थि तत्थ जहा पुढविकाइयत्ते तहा भाणियव्वं, जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते। तेयापोग्गलपरियट्टा कम्मापोग्गलपरियट्टा य सव्वत्थ एक्कोत्तरिया भाणियव्वा, मणपोग्गलपरियट्टा सव्वेसु पंचिंदिएसु एगोत्तरिया, विगलिंदिएसु नत्थि, वइपोग्गलपरियट्टा एवं चेव, नवरं एगिंदिएसु नत्थि भाणियव्वा। आणापाणुपोग्गलपरियट्टा सव्वत्थ एकोत्तरिया जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते। नेरइयाणं भंते! नेरइयत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीया?, नत्थि एक्कोवि, केवइया पुरेक्खडा?, नत्थि एक्कोवि, एवं जाव थणियकुमारत्ते, पुढविकाइयत्ते पुच्छा, गोयमा! अणंता, केवइया पुरेक्खडा?, अणंता, एवं जाव मणुस्सत्ते, वाणमंतरजोइसियवेमाणियत्ते जहा नेरइयत्ते, एवं जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते,

प्र०आ०५६७

एवं सत्तवि पोग्गलपरियट्टा भाणियव्वा, जत्थ अत्थि तत्थ अतीयावि पुरेक्खडावि अणंता भाणियव्वा, जत्थ नत्थि तत्थ दोवि नत्थि भाणियव्वा, जाव वेमाणिणयाणं वेमाणियत्ते केवतिया आणापाणुपोग्गलपरियट्टा अतीया ?, अणंता, केवतिया पुरेक्खडा ?, अणंता ( सूत्रं ४४६ ) ॥

'एएसि णं'मित्यादि, 'एतेषाम्'अनन्तरोक्तस्वरूपाणां परमाणुपुद्गलानां, परमाणूनामित्यर्थः, 'साहणणाभेयाणुवाएणं'ति 'साहणण'त्ति प्राकृतत्वात् संहननं-सङ्घातो भेदश्च-वियोजनं तयोरनुपातो-योगः संहननभेदानुपातस्तेन, सर्वपुद्गलद्रव्यैः सह परमाणूनां संयोगेन वियोगेन चेत्यर्थः, 'अणंताणंत'त्ति अनन्तेन गुणिता अनन्ता अनन्तानन्ताः, एकोऽपि हि परमाणुर्द्व्यणुकादिभिरनन्ताणुकान्तैर्द्रव्यैः सह संयुज्यमानोऽनन्तान् परिवर्त्तान् लभते, प्रतिद्रव्यं परिवर्त्तभावात्, अनन्तत्वाच्च परमाणूनां, प्रतिपरमाणु चानन्तत्वात्परिवर्त्तानां परमाणुपुद्गलपरिवर्त्तानामनन्तानन्तत्वं द्रष्टव्यमिति । 'पुग्गलपरियट्ट'त्ति पुद्गलैः-पुद्गलद्रव्यैः सह परिवर्त्ताः-परमाणूनां मीलनानि पुद्गलपरिवर्त्ताः 'समनुगन्तव्याः' अनुगन्तव्या भवन्तीति हेतोः 'आख्याताः' प्ररूपिताः भगवद्भिरिति गम्यते, मकारश्च प्राकृतशैलीप्रभवः ॥ अथ पुद्गलपरावर्त्तस्यैव भेदाभिधानायाह—'कइविहे णं' मित्यादि, 'ओरालियपोग्गलपरियट्टे'त्ति औदारिकशरीरे वर्त्तमानेन जीवेन यदौदारिकशरीरप्रायोग्यद्रव्याणामौदारिकशरीरतया सामस्त्येन ग्रहणमसावौदारिकपुद्गलपरिवर्त्तः, एवमन्येऽपि । 'नेरइयाणं'ति नारकजीवानामनादौ संसारे संसरतां सप्तविधः पुद्गलपरावर्त्तः प्रज्ञप्तः ॥ 'एगमेगस्से'-त्यादि, अतीतानन्ता अनादित्वात् अतीतकालस्य जीवस्य चानादित्वात् अपरापरपुद्गलग्रहणस्वरूपत्वाच्चेति । 'पुरक्खडे'ति पुरस्कृताः भविष्यन्तः 'कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि'त्ति कस्यापि जीवस्य दूरभव्यस्याभव्यस्य वा ते सन्ति, कस्यापि न सन्ति, उद्धृत्य यो

मानुषत्वमासाद्य सिद्धिं यास्यति सङ्ख्येयैरसङ्ख्येयैर्वा भवैर्यास्यति यः सिद्धिं तस्यापि परिवर्त्तो नास्ति, अनन्तकालपूर्यत्वात्तस्येति। 'एगत्तिय'त्ति एकत्विकाः-एकनारकाद्याश्रयाः 'सत्त'त्ति औदारिकादिसप्तविधपुद्गलविषयत्वात्सप्त दण्डकाश्चतुर्विंशतिदण्डका भवन्ति, एकत्वपृथक्त्वदण्डकानां चायं विशेषः-एकत्वदण्डकेषु पुरस्कृतपुद्गलपरावर्त्ताः कस्यापि न सन्त्यपि, बहुत्वदण्डकेषु तु ते सन्ति, जीवसामान्याश्रयणादिति ॥ 'एगमेगस्से'त्यादि 'नत्थि एक्कोवि'त्ति नारकत्वे वर्त्तमानस्यौदारिकपुद्गलग्रहणाभावादिति ॥ 'एगमेगस्स णं भंते! नेरइयस्स असुरकुमारत्ते'इत्यादि, इह च नैरयिकस्य वर्त्तमानकालीनस्य असुरकुमारत्वे चातीतानागतकालसबन्धिनि 'एगुत्तरिया जाव अणंता व'त्ति अनेनेदं सूचितं-'कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि, जस्सत्थि तस्स जहन्नेणं एक्को वा दोन्नि वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा'इति 'एवं जत्थ वेउव्वियसरीरं तत्थ एकोत्तरिओ'त्ति यत्र वायुकाये मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिर्यक्षु व्यन्तरादिषु च वैक्रियशरीरं तत्रैको वेत्यादि वाच्यमित्यर्थः, 'जत्थ नत्थी'त्यादि यत्राप्कायादौ नास्ति वैक्रियं तत्र यथा पृथिवीकायिकत्वे तथा वाच्यं, न सन्ति वैक्रियपुद्गलपरावर्त्ता इति वाच्यमित्यर्थः, 'तेयापोग्गले'त्यादि तैजसकार्म्मणपुद्गलपरावर्त्ता भविष्यन्त एकादयः सर्वेषु नारकादिजीवपदेषु पूर्ववद्वाच्यास्तैजसकार्म्मणयोः सर्वेषु भावादिति। 'मणपोग्गले'त्यादि, मनःपुद्गलपरावर्त्ताः पञ्चेन्द्रियेष्वेव सन्ति, भविष्यन्तश्च ते एकोत्तरिकाः पूर्ववद्वाच्याः, 'विगलिंदिएसु नत्थि'त्ति विकलेन्द्रियग्रहणेन चैकेन्द्रिया अपि ग्राह्याः तेषामपीन्द्रियाणामसम्पूर्णत्वात् मनोवृत्तेश्चाभावाद्, अतस्तेष्वपि मनःपुद्गलपरावर्त्ता न सन्ति। 'वइपोग्गलपरियट्टा एवं चेव'त्ति तैजसादिपरिवर्त्तवत्सर्वनारकादिजीवपदेषु वाच्याः, नवरमेकेन्द्रियेषु वचनाभावान्न सन्तीति वाच्याः। 'नेरइयाण'मित्यादिना पृथक्त्वदण्डकानाह, 'जाव वेमाणियाण'मित्यादिना

न्तिमदण्डको दर्शितः ॥ अथौदारिकादिपुद्गलपरावर्त्तानां स्वरूपमुपदर्शयितुमाह—

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-ओरालियपोग्गलपरियट्टा ओ० ?, गोयमा! जण्णं जीवेणं ओरालियसरीरे वट्टमाणेणं ओरालियसरीरपयोगाइं दव्वाइं ओरालियसरीरत्ताए गहियाइं बद्धाइं पुट्ठाइं कडाइं पट्ठवियाइं निविट्ठाइं अभिनिविट्ठाइं अभिसमन्नागयाइं परियाइयाइं परिणामियाइं निज्जिन्नाइं निसिरियाइं निसिट्ठाइं भवंति से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ ओरालियपोग्गलपरियट्टे ओरा० २, एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टेवि, नवरं वेउव्वियसरीरे वट्टमाणेणं वेउव्वियसरीरप्पयोगाइं सेसं तं चेव सव्वं, एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टे, नवरं आणापाणुपयोगाइं सव्वदव्वाइं आणापाणुत्ताए सेसं तं चेव ॥ ओरालियपोग्गलपरियट्टे णं भंते! केवइकालस्स निव्वत्तिज्जइ ?, गोयमा! अणंताहिं उस्सप्पिणिओसप्पिणीहिं एवतिकालस्स निव्वत्तिज्जइ, एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टेवि, एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टेवि ॥ एयस्स णं भंते! ओरालियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकालस्स वेउव्वियपोग्गल जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकालस्स य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवे कम्मगपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले तेयापोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे ओरालियपोग्गलपरियट्टकाले अणंतगुणे आणापाणुपोग्गल० अणंतगुणे मणपोग्गल० अणंतगुणे वइपो० अणंतगुणे वेउव्वियपो० परियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे ( सूत्रं ४४७ ) ॥

'से केणट्ठेण'मित्यादि, 'गहियाइं'ति स्वीकृतानि 'बद्धाइ'ति जीवप्रदेशैरात्मीकरणात्, कुतः ? इत्याह—'पुट्ठाइं'ति यतः पूर्वं

स्पृष्टानि, तनौ रेणुवत्, अथवा 'पुष्टानि' पोषितान्यपरापरग्रहणतः, 'कडाइं'ति पूर्वपरिणामापेक्षया परिणामान्तरेण कृतानि 'पट्ठवियाइं'ति प्रस्थापितानि-स्थिरीकृतानि जीवेन 'निविट्ठाइं'ति यतः स्थापितानि ततो निविष्टानि जीवेन स्वयम् 'अभिनिविट्ठाइं'ति अभि-अभिविधिना निविष्टानि, सर्वाण्यपि जीवे लग्नानीत्यर्थः, 'अभिसमन्नागयाइं'ति अभिविधिना सर्वाणीत्यर्थः समन्वागतानि-सम्प्राप्तानि जीवेन रसानुभूतिं समाश्रित्य 'परियाइयाइं'ति पर्याप्तानि-जीवेन सर्वावयवैराचानि तद्रसादानद्वारेण 'परिणामियाइं'-ति रसानुभूतित एव परिणामान्तरमापादितानि 'निज्जिण्णाइं'ति क्षीणरसीकृतानि 'निसिरियाइं'ति जीवप्रदेशेभ्यो निःसृतानि, कथं ?-'निसिट्ठाइं'ति जीवेन निःसृष्टानि स्वप्रदेशेभ्यस्त्याजितानि, इहाद्यानि चत्वारि पदान्यौदारिकपुद्गलानां ग्रहणविषयाणि तदुत्तराणि तु पञ्च स्थितिविषयाणि तदुत्तराणि तु चत्वारि विगमविषयाणीति॥ अथ पुद्गलपरावर्त्तानां निर्वर्त्तनकालं तदल्पबहुत्वं च दर्शयन्नाह-'ओरालिये'त्यादि, 'केवइकालस्स'त्ति कियता कालेन निर्वर्त्यते ?, 'अणंताहिं उस्सप्पिणिओसप्पिणीहिं'ति एकस्य जीवस्य ग्राहकत्वात् पुद्गलानां चानन्तत्वात् पूर्वगृहीतानां च ग्रहणस्यागण्यमानत्वादनन्ता अवसर्पिण्य इत्यादि सुष्ठूक्तमिति। 'सव्वत्थोवे कम्मगपोग्गले'त्यादि, सर्वस्तोकः कार्म्मणपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालः, ते हि सूक्ष्मा बहुतमपरमाणुनिष्पन्नाश्च भवन्ति, ततस्ते सकृदपि बहवो गृह्यन्ते, सर्वेषु च नारकादिपदेषु वर्त्तमानस्य जीवस्य तेऽनुसमयं ग्रहणमायान्तीति स्वल्पकालेनापि तत्सकलपुद्गलग्रहणं भवतीति, ततस्तैजसपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणो, यतः स्थूलत्वेन तैजसपुद्गलानामल्पानामेकदा ग्रहणम्, एकदाग्रहणे चाल्पप्रदेशनिष्पन्नत्वेन तेषामल्पानामेव तदणूनां ग्रहणं भवत्यतोऽनन्तगुणोऽसाविति, तत औदारिकपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणो, यत औदारिकपुद्गला अतिस्थूराः, स्थूराणां चाल्पानामेकदा ग्रहणं भवति अल्पतरप्रदेशाश्च ते ततस्त-

द्ग्रहणेऽप्येकदाऽल्पा एवाणवो गृह्यन्ते न च कार्म्मणतैजसपुद्गलवत्तेषां सर्वपदेषु ग्रहणमस्ति, औदारिकशरीरिणामेव तद्ग्रहणाद्, अतो बृहतैव कालेन तेषां ग्रहणमिति, तत आनप्राणपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्तनाकालोऽनन्तगुणः, यद्यपि हि औदारिकपुद्गलेभ्य आनप्राणपुद्गलाः सूक्ष्मा बहुप्रदेशिकाश्चेति तेषामल्पकालेन ग्रहणं संभवति तथाऽप्यपर्याप्तकावस्थायां तेषामग्रहणात्पर्याप्तकावस्थायामप्यौदारिकशरीरपुद्गलापेक्षया तेषामल्पीयसामेव ग्रहणान्न शीघ्रं तद्ग्रहणमित्यौदारिकपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालादनन्तगुणताऽऽनप्राणपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालस्येति, ततो मनःपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणः, कथम्?, यद्यप्यानप्राणपुद्गलेभ्यो मनःपुद्गलाः सूक्ष्मा बहुप्रदेशाश्चेत्यल्पकालेन तेषां ग्रहणं संभवति तथाऽप्येकेन्द्रियादिकायस्थितिवशान्मनसश्चिरेण लाभान्मानसपुद्गलपरिवर्तो बहुकालसाध्य इत्यनन्तगुण उक्तः, ततोऽपि वाक्पुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणः, कथम्?, यद्यपि मनसः सकाशाद्भाषा शीघ्रतरं लभ्यते द्वीन्द्रियाद्यवस्थायां च भवति तथाऽपि मनोद्रव्येभ्यो भाषाद्रव्याणामतिस्थूलतया स्तोकाकानामेवैकदा ग्रहणात्ततोऽनन्तगुणो वाक्पुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकाल इति, ततोऽपि वैक्रियपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणो, वैक्रियशरीरस्यातिबहुकाललभ्यत्वादिति ॥ पुद्गलपरिवर्त्तानामेवाल्पबहुत्वं दर्शयन्नाह—

एएसि णं भंते! ओरालियपोग्गलपरियट्टाणं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टाण य कयरे २ हिंतो जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा वेउव्वियपो० वइपो० परि० अणंतगुणा मणपोग्गलप० अणंत० आणापाणुपोग्गल० अनंतगुणा ओरालियपो० अणंतगुणा तेयापो० अणंत० कम्मगपोग्गल० अणंतगुणा। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति भगवं जाव विहरइ ( सूत्रं ४४८ ) ॥ १२-४ ॥

'एएसि णं'मित्यादि, सर्वस्तोका वैक्रियपुद्गलपरिवर्त्ता बहुतमकालनिर्वर्त्तनीयत्वात्तेषां, ततोऽनन्तगुणा वाग्विषया अल्पतरकालनिर्वर्त्यत्वात, एवं पूर्वोक्तयुक्त्या बहुबहुतराः क्रमेणान्येऽपि वाच्या इति ॥ द्वादशशते चतुर्थः १२-४॥ (ग्रन्थाग्रम् १२०००)॥

---

अनन्तरोद्देशके पुद्गला उक्तास्तत्प्रस्तावात्कर्मपुद्गलस्वरूपाभिधानाय पञ्चमोद्देशकमाह—

रायगिहे जाव एवं वयासी—अह भंते ! पाणाइवा० मुसा० अदि० मेहु० परि० एस णं कतिवन्ने कतिगंधे कतिरसे कतिफासे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचवन्ने दुगंधे पंचरसे चउफासे पण्णत्ते ॥ अह भंते ! कोहे १ कोवे २ रोसे ३ दोसे ४ अखमे ५ संजलणे ६ कलहे ७ चंडिक्के ८ भंडणे ९ विवादे १० एस णं कतिवन्ने जाव कतिफासे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचवन्ने पंचरसे दुगंधे चउफासे पण्णत्ते ॥ अह भंते ! माणे मदे दप्पे थंभे गव्वे अत्तुक्कोसे परपरिवाए उक्कोसे अवक्कोसे उण्णए उन्नामे दुन्नामे १२ एस णं कतिवन्ने ४ ?, गोयमा ! पंचवन्ने जहा कोहे तहेव । अह भंते ! माया उवही नियडी वलये गहणे णूमे कक्के कुरुए जिम्हे किव्विसे १० आयरणया गूहणया वंचणया पलिउंचणया सातिजोगे य १५ एस णं कतिवन्ने ४?, गोयमा ! पंचवन्ने जहेव कोहे ॥ अह भंते ! लोभे इच्छा मुच्छा कंखा गेही तण्हा भिज्झा अभिज्झा आसासणया पत्थणया १० लालप्पणया कामासा भोगासा जीवियासा मरणासा नंदीरागे १६ एस णं कतिवन्ने ?, जहेव कोहे । अह भंते ! पेज्जे दोसे कलहे जाव मिच्छादंसणसल्ले एस णं कतिवन्ने ! जहेव कोहे तहेव चउफासे ॥(सूत्रं ४४९) अह भंते ! पाणाइवायवेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे कोहविवेगे

कंखा गेही तण्हा भिज्झा अभिज्झा आसासणया पत्थणया १० लालप्पणया कामासा भोगासा जीवियासा मरणासा नंदीरागे १६ एस णं कतिवन्ने ?, जहेव कोहे। अह भंते ! पेज्जे दोसे कलहे जाव मिच्छादंसणसल्ले एस णं कतिवन्ने ! जहेव कोहे तहेव चउफासे ॥ (सूत्रं ४४९) अह भंते ! पाणाइवायवेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे कोहविवेगे जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगे एस णं कतिवन्ने जाव कतिफासे पण्णत्ते ?, गोयमा ! अवन्ने अगंधे अरसे अफासे पण्णत्ते ॥ अह भंते ! उप्पत्तिया वेणइया कम्मिया परिणामिया एस णं कतिवन्ना तं चेव जाव अफासा पन्नत्ता ॥अह भंते ! उग्गहे ईहा अवाये धारणा एस णं कतिवन्ना?, एवं चेव जाव अफासा पन्नत्ता ॥ अह भंते ! उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसकारपरक्कमे एस णं कतिवन्ने ? तं चेव जाव अफासे पन्नत्ते। सत्तमे णं भंते ! उवासंतरे कतिवन्ने ? एवं चेव जाव अफासे पन्नत्ते, सत्तमे णं भंते ! तणुवाए कतिवन्ने ?, जहा पाणाइवाए, नवरं अट्ठफासे पण्णत्ते, एवं जहा सत्तमे तणुवाए तहा सत्तमे घणवाए घणोदही पुढवी, छट्ठे उवासंतरे अवन्ने, तणुवाए जाव छट्ठी पुढवी एयाइं अट्ठफासाइं, एवं जहा सत्तमाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया तहा जाव पढमाए पुढवीए भाणियव्वं, जंबुद्दीवे २ सयंभुरमणे समुद्दे सोहम्मे कप्पे जाव ईसिपब्भारा पुढवी नेरतियावासा जाव वेमाणियावासा एयाणि सव्वाणि अट्ठफासाणि। नेरइया णं भंते ! कतिवन्ना जाव कतिफासा पन्नत्ता ?, गोयमा ! वेउव्वियतेयाइं पडुच्च पंचवन्ना पंचरसा दुगंधा अट्ठफासा पण्णत्ता, कम्मगं पडुच्च पंचवन्ना पंचरसा दुगंधा चउफासा पण्णत्ता, जीवं पडुच्च अवन्ना जाव अफासा पण्णत्ता, एवं जाव थणिय०, पुढविकाइयपुच्छा, गोयमा ! ओरालि-

यतेयगाइं पडुच्च पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, कम्मगं पडुच्च जहा नेर०, जीवं पडुच्च तहेव, एवं जाव चउरिंदि०, नवरं वाउक्काइया ओरा० वेउ० तेयगाइं पडुच्च पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, सेसं जहा नेरइयाणं, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा वाउक्काइया, मणुस्साणं पुच्छा ओरालियवेउव्वियआहारगतेयगाइं पडुच्च पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, कम्मगं जीवं च पडुच्च जहा नेर०, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा नेर०, धम्मत्थिकाए जाव पोग्गल० एए सव्वे अवन्ना, नवरं पोग्गल० पंचवन्ने पंचरसे दुगंधे अट्ठफासे पण्णत्ते, णाणावरणिज्जे जाव अंतराइए एयाणि चउफासाणि, कण्हलेसा णं भंते! कइवन्ना०? पुच्छा, दव्वलेसं पडुच्च पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, भावलेसं पडुच्च अवन्ना ४, एवं जाव सुक्कलेस्सा, सम्मदिट्ठी ३ चक्खुदंसणे ४ आभिणिबोहियणाणे जाव विभंगणाणे आहारसन्ना जाव परिग्गहसन्ना एयाणि अवन्नाणि ४, ओरालियसरीरे जाव तेयगसरीरे एयाणि अट्ठफासाणि, कम्मगसरीरे चउफासे, मणजोगे वयजोगे य चउफासे, कायजोगे अट्ठफासे, सागारोवओगे य अणागारोवओगे य अवन्ना। सव्वदव्वा णं भंते! कतिवन्ना? पुच्छा, गोयमा! अत्थेगतिया सव्वदव्वा पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता अत्थेगतिया सव्वदव्वा पंचवन्ना चउफासा पण्णत्ता, अत्थेगतिया सव्वदव्वा एगगंधा एगवण्णा एगरसा दुफासा पन्नत्ता, अत्थेगइया सव्वदव्वा अवन्ना जाव अफासा पन्नत्ता, एवं सव्वपएसावि, सव्वपज्जवावि, तीयद्धा अवन्ना जाव अफासा पण्णत्ता, एवं अणागयद्धावि, एवं सव्वद्धावि ॥ (सूत्रं ४५०)

'रायगिहे' इत्यादि 'पाणाइवाए'त्ति प्राणातिपातजनितं तज्जनकं वा चारित्रमोहनीयं कर्मोपचारात् प्राणातिपात एव, एवमु-

तत्रापि, तस्य च पुद्गलरूपत्वाद्वर्णादयो भवन्तीत्यत उक्तं 'पंचवन्ने'इत्यादि, आह च—"पंचरसपंचवन्नेहिं परिणयं दुविहगंधचउफासं। दवियमणंतपएसं सिद्धेहिं अणंतगुणहीणं ॥ १ ॥" 'चउफासे'त्ति स्निग्धरूक्षशीतोष्णाख्याश्चत्वारः स्पर्शाः सूक्ष्मपरिणामपरिणतपुद्गलानां भवंति, सूक्ष्मपरिणामं च कर्मेति. 'कोहे'त्ति क्रोधपरिणामजनकं कर्म्म, तत्र क्रोध इति सामान्यं नाम, कोपादयस्तु तद्विशेषाः, तत्र कोपः क्रोधोदयात्स्वभावाच्चलनमात्रं, रोषः-क्रोधस्यैवानुबन्धो दोषः-आत्मनः परस्य वा दूषणं, एतच्च क्रोधकार्यं, द्वेषो वाऽप्रीतिमात्रम्, अक्षमा-परकृतापराधस्यासहनं, सञ्ज्वलनो-मुहुर्मुहुः क्रोधाग्निना ज्वलनं, कलहो-महता शब्देनान्योऽन्यमसमञ्जसभाषणं, एतच्च क्रोधकार्यं, चाण्डिक्यं-रौद्राकारकरणं, एतदपि क्रोधकार्यमेव, भण्डनं-दण्डादिभिर्युद्धं, एतदपि क्रोधकार्यमेव, विवादो-विप्रतिपत्तिसमुत्थवचनानि, इदमपि तत्कार्यमेवेति, क्रोधैकार्था वैते शब्दाः। 'माणे'त्ति मानपरिणामजनकं कर्म्म, तत्र मान इति सामान्यं नाम, मदादयस्तु तद्विशेषाः, तत्र मदो-हर्षमात्रं दर्पो-दृप्तता स्तम्भः-अनम्रता गर्व-शौण्डीर्यं 'अत्तुक्कोसे'त्ति आत्मनः परेभ्यः सकाशाद् गुणैरुत्कर्षणम्-उत्कृष्टताऽभिधानं, परपरिवादः-परेषामपवदनं परिपातो वा-गुणेभ्यः परिपातनमिति. 'उक्कासे'त्ति उत्कर्षणं आत्मनः परस्य वा मनाक् क्रिययोत्कृष्टताकरणं उत्काशनं वा-प्रकाशनमभिमानात्स्वकीयसमृद्ध्यादेः 'अवक्कासे'त्ति अपकर्षणमवकर्षणं वा अभिमानादात्मनः परस्य वा क्रियारम्भात् कुतोऽपि व्यावर्तनमिति अप्रकाशो वाऽभिमानादेवेति, 'उण्णए'त्ति उच्छिन्नं नतं-पूर्वप्रवृत्तं नमनमभिमानादुन्नतम्, उच्छिन्नो वा नयो-नीतिरभिमानादेवोन्नयो, नयाभाव इत्यर्थः, 'उण्णामे'त्ति प्रणतस्य मदानुप्रवेशादुन्नमनं 'दुन्नामे'त्ति मदाद् दुष्टं नमनं दुर्नाम इति, इह च स्तम्भादीनि मानकार्याणि, मानवाचका वैते ध्वनय इति। 'माय'त्ति सामान्यं, उपध्यादयस्तद्भेदाः, तत्र 'उवहि'त्ति उपधीयते येनासावुपधिः-वञ्चनीयसमीपगमनहेतुर्भावः 'नियडि'त्ति

नितरां करणं निकृतिः–आदरकरणेन परवञ्चनं पूर्वकृतमायाप्रच्छादनार्थं वा मायान्तरकरणं 'वलए'त्ति येन भावेन वलयमिव वक्रं वचनं चेष्टा वा प्रवर्त्तते स भावो वलयं 'गहणे'त्ति परव्यामोहनाय यद्वचनजालं तद् गहनमिव गहनं 'णूमे'त्ति परवञ्चनाय निम्नताया निम्नस्थानस्य वाऽऽश्रयणं तन्नूमंति 'कक्के'त्ति कल्कं–हिंसादिरूपं पापं तन्निमित्तो यो वञ्चनाभिप्रायः स कल्कमेवोच्यते 'कुरूए'त्ति कुत्सितं यथा भवत्येवं रूपयति–विमोहयति यत्तत्कुरूपं–भाण्डादिकर्म मायाविशेष एव, 'जिम्हे'त्ति येन परवञ्चनाभिप्रायेण जैह्म्यं–क्रियासु मान्द्यमालम्बते स भावो जैह्म्यमेवेति 'किब्बिसे'त्ति यतो मायाविशेषाज्जन्मान्तरेऽत्रैव वा भवे किल्बिषः–किल्बिषिको भवति स किल्बिष एवेति, 'आयरणय'त्ति यतो मायाविशेषादादरणं–अभ्युपगमं कस्यापि वस्तुनः करोत्यसावादरणं, ताप्रत्ययस्य च स्वार्थिकत्वाद् आयरणया, आचरणं वा परप्रतारणाय विविधक्रियाणामाचरणं, 'गूहणया' गूहनं गोपायनं स्वरूपस्य 'वंचणया' वञ्चनं–परस्य प्रतारणं 'पलिउंचणया' प्रतिकुञ्चनं–सरलतया प्रवृत्तस्य वचनस्य खण्डनं 'साइजोगे'त्ति अविश्रम्भसम्बन्धः सातिशयेन वा द्रव्येण निरतिशयस्य योगः, तत्प्रतिरूपकरणमित्यर्थः, मायैकार्था वैते ध्वनय इति। 'लोभे'त्ति सामान्यं, इच्छादयस्तद्विशेषाः, तत्रेच्छा–अभिलापमात्रं 'मुच्छा कंखा गेही'त्ति मूर्च्छा–संरक्षणानुबन्धः काङ्क्षा–अप्राप्तार्थाशंसा 'गेहि'त्ति गृद्धिः–प्राप्तार्थेष्वासक्तिः 'तण्ह'त्ति तृष्णा–प्राप्तार्थानामव्ययेच्छा 'भिज्ज'त्ति अभि–व्याप्त्या विषयाणां ध्यानं–तदेकाग्रत्वमभिध्या, पिधानादिवदकारलोपाद्भिध्या 'अभिज्झ'त्ति न भिध्या अभिध्या–भिध्यासदृशं भावान्तरं, तत्र दृढाभिनिवेशो भिध्या, ध्यानलक्षणत्वात्तस्याः, अदृढाभिनिवेशस्त्वभिध्या, चित्तलक्षणत्वात्तस्याः, ध्यानचित्तयोस्त्वयं विशेषः–"जं थिरमज्झवसाणं तं झाणं जं चलं तयं चित्तं"ति, 'आसासणय'त्ति आशंसनं–मम पुत्रस्य शिष्यस्य वा इदमिदं च भूयादित्यादिरूपा आशीः 'पत्थणय'त्ति प्रार्थनं–परं प्रतीष्टार्थयाच्ञा

'लालप्पणय'त्ति प्रार्थनमेव भृशं लपनतः 'कामास'त्ति शब्दरूपप्राप्तिसम्भावना 'भोगास'त्ति गन्धादिप्राप्तिसम्भावना 'जीवितास'त्ति जीवितव्यप्राप्तिसम्भावना, 'मरणास'त्ति कस्याञ्चिदवस्थायां मरणप्राप्तिसम्भावना, इदं च कचिन्न दृश्यते, 'नंदिरागे'त्ति समृद्धौ सत्यां रागो–हर्षो नन्दिरागः, 'पेज्जे'त्ति प्रेम–पुत्रादिविषयः स्नेहः 'दोसे'त्ति अप्रीतिः, कलहः–इह प्रेमहासादिप्रभवं युद्धं, यावत्करणात् 'अब्भक्खाणे पेसुन्ने अरइरई परपरिवाए मायामोसे'त्ति दृश्यम् ॥ अथोक्तानामेवाष्टादशानां प्राणातिपातादिकानां पापस्थानानां ये विपर्ययास्तेषां स्वरूपाभिधानायाह–'अहे'त्यादि, 'अवन्ने'त्ति वधादिविरमणानि जीवोपयोगस्वरूपाणि जीवोपयोगश्चामूर्त्तोऽमूर्त्तत्वाच्च तस्य वधादिविरमणानाममूर्त्तत्वं तस्माच्चावर्णादित्वमिति ॥ जीवस्वरूपविशेषमेवाधिकृत्याह–'उप्पत्तिय'त्ति उत्पत्तिरेव प्रयोजनं यस्याः सा औत्पत्तिकी, ननु क्षयोपशमः प्रयोजनमस्याः ?, सत्यं, स खल्वन्तरङ्गत्वात्सर्वबुद्धिसाधारण इति न विवक्ष्यते, न चान्यच्छास्त्रकर्माभ्यासादिकमपेक्षत इति, 'वेणइय'त्ति विनयो–गुरुशुश्रूषा स कारणमस्यास्तत्प्रधाना वा वैनयिकी, 'कम्मय'त्ति अनाचार्यकं कर्म्म साचार्यकं शिल्पं कादाचित्कं वा कर्म शिल्पं, तु नित्यव्यापारः ततश्च कर्म्मणो जाता कर्म्मजा, 'पारिणामिय'त्ति परिः–समन्तान्नमनं परिणामः–सुदीर्घकालपूर्वापरार्थावलोकनादिजन्य आत्मधर्मः स कारणं यस्याः सा पारिणामिकी, बुद्धिरिति वाक्यशेषः, इयमपि वर्णादिरहिता जीवधर्म्मत्वेनामूर्त्तत्वात् ॥ जीवधर्माधिकारादवग्रहादिसूत्रं कर्म्मादिसूत्रं च, अमूर्त्ताधिकारादवकाशान्तरसूत्रं अमूर्त्तत्वविपर्ययाच्चतनुवातादिसूत्राणि चाह––तत्र च 'सत्तमे णं भंते! उवासंतरे'त्ति प्रथमद्वितीयपृथिव्योर्यदन्तराले आकाशखण्डं तत्प्रथमं तदपेक्षया सप्तमं सप्तम्या अधस्तात्, तस्योपरिष्टात्सप्तमस्तनुवातस्तस्योपरि सप्तमो घनवातस्तस्याप्युपरि सप्तमो घनोदधिस्तस्याप्युपरि सप्तमी पृथिवी, तनुवातादीनां च पञ्चवर्णादित्वं पौद्गलिकत्वेन मूर्त्तत्वात्, अष्टस्पर्शत्वं च बादरपरिणा-

मत्वात्, अष्टौ च स्पर्शाः शीतोष्णस्निग्धरूक्षमृदुकठिनलघुगुरुभेदादिति। जम्बूद्वीपे इत्यत्र यावत्करणाल्लवणसमुद्रादीनि पदानि वाच्यानि 'जाव वेमाणियावासा' इह यावत्करणादसुरकुमारावासादिपरिग्रहः, ते च भवनानि नगराणि विमानानि तिर्यग्लोके तन्नगर्यश्चेति। 'वेउव्वियतेयाइं पडुच'त्ति वैक्रियतैजसशरीरे हि बादरपरिणामपुद्गलरूपे ततो बादरत्वात्तयोर्नारकाणामष्टस्पर्शत्वं, 'कम्मगं पडुच'त्ति कार्म्मणं हि सूक्ष्मपरिणामपुद्गलरूपमतश्चतुःस्पर्शं, ते च शीतोष्णस्निग्धरूक्षाः, 'धम्मत्थिकाए' इह यावत्करणादेवं दृश्यम्—'अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए अद्धासमए आवलिया मुहुत्ते'इत्यादि, 'दव्वलेसं पडुच'त्ति इह द्रव्यलेश्या वर्णः 'भावलेसं पडुच'त्ति भावलेश्या—आन्तरः परिणामः, इह च कृष्णलेश्यादीनि परिग्रहसञ्ज्ञाऽवसानानि अवर्णादीनि जीवपरिणामत्वात्, औदारिकादीनि चत्वारि शरीराणि पञ्चवर्णादिविशेषणानि अष्टस्पर्शानि च बादरपरिणामपुद्गलरूपत्वात्, सर्वत्र च चतुःस्पर्शत्वे सूक्ष्मपरिणामः कारणं, अष्टस्पर्शत्वे च बादरपरिणामः कारणं वाच्यमिति, 'सव्वदव्व'त्ति सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि 'अत्थेगइया सव्वदव्वा पंचवन्ने'त्यादि बादरपुद्गलद्रव्याणि प्रतीत्योक्तं, सर्वद्रव्याणां मध्ये कानिचित्पञ्चवर्णादीनीति भावार्थः 'चउफासा' इत्येतच्च पुद्गलद्रव्याण्येव सूक्ष्माणि प्रतीत्योक्तं 'एगगंधे'त्यादि च परमाण्वादिद्रव्याणि प्रतीत्योक्तं, यदाह परमाणुद्रव्यमाश्रित्य—"कारणमेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः। एकरसवर्णगन्धो द्विस्पर्शः कार्यलिङ्गश्च ॥ १ ॥" इति, स्पर्शद्वयं च सूक्ष्मसम्बन्धिनां चतुर्णां स्पर्शानामन्यतरदविरुद्धं भवति, तथाहि—स्निग्धोष्णलक्षणं स्निग्धशीतलक्षणं वा रूक्षशीतलक्षणं रूक्षोष्णलक्षणं वेति, 'अवण्णे'त्यादि च धर्मास्तिकायादिद्रव्याण्याश्रित्योक्तं, द्रव्याश्रितत्वात्प्रदेशपर्यवाणां द्रव्यसूत्रानन्तरं तत्सूत्रं, तत्र च प्रदेशा—द्रव्यस्य निर्विभागा अंशाः, पर्यवास्तु धर्माः, ते चैवंकरणादेवं वाच्याः—'सव्वपएसा णं भंते! कइवण्णा?

पुच्छा, गोयमा! अत्थेगइया सव्वपएसा पंचवन्ना जाव अट्ठफासा'इत्यादि । एवं च पर्यवसूत्रमपि, इह च मूर्त्तद्रव्याणां प्रदेशाः पर्यवाश्च मूर्त्तद्रव्यवत्पञ्चवर्णादयः अमूर्त्तद्रव्याणां चामूर्त्तद्रव्यवदवर्णादय इति । अतीताद्धादित्रयं चामूर्त्तत्वादवर्णादिकम् ॥ वर्णाद्यधिकारादेवेदवाह—

जीवे णं भंते! गब्भं वक्कममाणे कतिवन्नं कतिगंधं कतिरसं कतिफासं परिणामं परिणमइ?, गोयमा! पंचवन्नं पंचरसं दुगंधं अट्ठफासं परिणामं परिणमइ ॥ ( सूत्रं ४५१ ) कम्मओ णं भंते! जीवे नो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ, कम्मओ णं जए नो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ?, हंता गोयमा! कम्मओ णं तं चेव जाव परिणमइ, नो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ, सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ४५२) ॥ १२-५ ।

'जीवे ण'मित्यादि, 'परिणामं परिणमइ'त्ति स्वरूपं गच्छति, कतिवर्णादिना रूपेण परिणमतीत्यर्थः 'पंचवन्नं'ति गर्भव्युत्क्रमणकाले जीवशरीरस्य पञ्चवर्णादित्वात् गर्भव्युत्क्रमणकाले जीवपरिणामस्य पञ्चवर्णादित्वमवसेयमिति ॥ अनन्तरं गर्भे व्युत्क्रामन् जीवो वर्णादिभिर्वैचित्र्यं परिणामं परिणमतीत्युक्तम्, अथ विचित्रपरिणाम एव जीवस्य यतो भवति तद्दर्शयितुमाह—'कम्मओ ण'-मित्यादि, कर्म्मतः सकाशात्, नो अकर्म्मतः-न कर्म्माणि विना, जीवो 'विभक्तिभावं' विभागरूपं भावं नारकतिर्यग्मनुष्यामरभवेषु नानारूपं परिणाममित्यर्थः 'परिणमति' गच्छति, तथा 'कम्मओ णं जए'त्ति गच्छति तांस्तान्नरकादिभावानिति 'जगत्' जीवसमूहो, जीवद्रव्यस्यैव वा विशेषो जङ्गमाभिधानो 'जगन्ति जङ्गमान्याहु'रिति वचनादिति ॥ द्वादशशते पञ्चमः ॥ १२-५ ॥

जगतो विभक्तिभावः कर्म्मत इति पञ्चमोद्देशकान्ते उक्तं, स च राहुग्रसने चन्द्रस्यापि स्यादिति शङ्कानिरासाय षष्ठोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–बहुजणे णं भंते ! अन्नमन्नस्स एवमाइक्खति जाव एवं परूवेइ–एवं खलु राहू चंदं गेण्हति एवं० २, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! जन्नं से बहुजणे णं अन्नमन्नस्स जाव मिच्छं ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव एवं परूवेमि–एवं खलु राहू देवे महिड्ढीए जाव महेसक्खे वरवत्थधरे वरमल्लधरे वरगंधधरे वराभरणधारी, राहुस्स णं देवस्स नव नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–सिंघाडए १ जडिलए २ खंभए [ खत्तए ] ३ खरए ४ दद्दुरे ५ मगरे ६ मच्छे ७ कच्छभे ८ कण्हसप्पे ९, राहुस्स णं देवस्स विमाणा पंचवन्ना पण्णत्ता, तंजहा–किण्हा नीला लोहिया हालिद्दा सुक्किल्ला, अत्थि कालए राहुविमाणे खंजणवन्नाभे पण्णत्ते, अत्थि नीलए राहुविमाणे लाउयवन्नाभे प०, अत्थि लोहिए राहुविमाणे मंजिट्ठवन्नाभे पं०, अत्थि पीतए राहुविमाणे हालिद्दवन्नाभे पन्नत्ते, अत्थि सुक्किल्लए राहुविमाणे भासरासिवन्नाभे पन्नत्ते ॥ जया णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं पुरच्छिमेणं आवरेत्ता णं पच्चच्छिमेणं वीतीवयइ तदा णं पुरच्छिमेणं चंदे उवदंसेति पच्चच्छिमेणं राहू, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं पच्चच्छिमेणं आवरेत्ताणं पुरच्छिमेणं वीतीवयति तदा णं पच्चच्छिमेणं चंदे उवदंसेति पुरच्छिमेणं राहू, एवं जहा पुरच्छिमेणं पच्चच्छिमेणं दो आलावगा भणिया एवं दाहिणेणं उत्तरेण

य दो आलावगा भा०, एवं उत्तरपुरच्छिमेणं दाहिणपच्चच्छिमेण य दो आलावगा भा०, दाहिणपुरच्छिमेणं उत्तरपुरच्छिमेणं दो आलावगा भा० एवं चेव जाव तदा णं उत्तरपच्चच्छिमे णं चंदे उवदंसेति दाहिणपुरच्छिमेणं राहू, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे विउव्व० परियारेमाणे चंदस्स लेस्सं आवरेमाणे २ चिट्ठति तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति-एवं खलु राहू चंदं गे० एवं०, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा ४ चंदस्स लेस्सं आवरेत्ताणं पासेणं वीइवयइ तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति-एवं खलु चंदेणं राहुस्स कुच्छी भिन्ना एवं०, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा ४ चंदस्स लेस्सं आवरेत्ताणं पच्चोसक्कइ तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति-एवं खलु राहुणा चंदे वंते एवं०, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा ४ जाव परियारेमाणे वा चंदस्स लेस्सं अहे सपक्खि सपडिदिसिं आवरेत्ताणं चिट्ठति तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति-एवं खलु राहुणा चंदे घत्थे, एवं०॥ कतिविहे णं भंते! राहू पन्नत्ते ?, गोयमा! दुविहे राहू पन्नत्ते ?, तंजहा-धुवराहू पव्वराहू य, तत्थ णं जे से धुवराहू से णं बहुलपक्खस्स पाडिवए (ग्रन्थाग्रम् ८०००) पन्नरसतिभागेणं पन्नरसइभागं चंदस्स लेस्सं आवरेमाणे २ चिट्ठति, तंजहा-पढमाए पढमं भागं बितियाए बितियं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसमं भागं, चरिमसमये चंदे रत्ते भवति, अवसेसे समये चंदे रत्ते वा विरत्ते वा भवति, तमेव सुक्कपक्खस्स उवदंसेमाणे उव० २ चिट्ठति पढमाए पढमं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसमं भागं, चरिमसमये चंदे विरत्ते भवइ, अवसेसे समये चंदे रत्ते वा विरत्ते वा भवइ, तत्थ णं जे से पव्वराहू से जहन्नेणं छण्हं मासाणं उक्कोसेणं बायालीसाए मासाणं चंदस्स, अडयालीसाए

संवच्छराणं सूरस्स ॥ ( सूत्रं ४५३ ) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'मिच्छं ते एवमाहंसु'त्ति, इह तद्वचनमिथ्यात्वमप्रमाणकत्वात् कुप्रवचनसंस्कारोपनीतत्वाच्च, ग्रहणं हि राहुचन्द्रयोर्विमानापेक्षं, न च विमानयोर्ग्रासकग्रसनीयसम्भवोऽस्ति आश्रयमात्रत्वान्नरभवनानामिव, अथेदं गृहमनेन ग्रस्तमिति दृष्टस्तद्व्यवहारः ?, सत्यं, स खल्वाच्छाद्याच्छादकभावे सति, नान्यथा. आच्छादनभावेन च ग्रासविवक्षायामिहापि न विरोध इति । अथ यदत्र सम्यक् तद्दर्शयितुमाह–'अहं पुणे'त्यादि ॥ 'खंजणवन्नाभे'त्ति खञ्जनं–दीपमल्लिकामलस्तस्य यो वर्णस्तद्वदाभा यस्य तत्तथा 'लाउयवन्नाभे'त्ति 'लाउयं'ति तुम्बकं तच्चेहापक्वावस्थं ग्राह्यमिति 'भासरासिवण्णाभे'त्ति भस्मराशिवर्णाभं, ततश्च किमित्याह– 'जया ण'मित्यादि, 'आगच्छमाणे व'त्ति गत्वाऽतिचारेण ततः प्रतिनिवर्त्तमानः कृष्णवर्णादिना विमानेनेति शेषः 'गच्छमाणे व'त्ति स्वभावचारेण चरन्, एतेन च पदद्वयेन स्वाभाविकी गतिरुक्ता, 'विउव्वमाणे व'त्ति विकुर्वणां कुर्वन् 'परियारेमाणे व'त्ति परिचारयन्–कामक्रीडां कुर्वन्, एतस्मिन् द्वयेऽतित्वरया प्रवर्त्तमानो विसंस्थुलचेष्टया स्वविमानमसमञ्जसं वलयति, एतच्च द्वयमस्वाभाविकविमानगतिग्रहणायोक्तमिति, 'चंदलेसं पुरच्छिमेणं आवरेत्ताणं'ति स्वविमानेन चन्द्रविमानावरणे चन्द्रदीसेरावृत्तत्वाचन्द्रलेश्यां पुरस्तादावृत्त्य 'पच्चच्छिमेणं वीइवयइ'त्ति चन्द्रापेक्षया परेण यातीत्यर्थः 'पुरच्छिमेणं चंदे उवदंसेइ पच्चच्छिमेणं राहु'त्ति राह्वपेक्षया पूर्वस्यां दिशि चन्द्र आत्मानमुपदर्शयति चन्द्रापेक्षया च पश्चिमायां राहुरात्मानमुपदर्शयतीत्यर्थः । एवंविधस्वभावतायां च राहोश्चन्द्रस्य यद्भवति तदाह—'जया ण'मित्यादि, 'आवरेमाणे' इत्यत्र द्विर्वचनं तिष्ठतीति क्रियाविशेषणत्वात् 'चंदेण राहुस्स कुच्छी भिन्न'त्ति राहोरंशस्य मध्येन चन्द्रो गत इति वाच्यं, चन्द्रेण राहोः कुक्षिर्भिन्न इति व्यपदिशन्तीति, 'पच्चोसक्कइ'त्ति

'प्रत्यवसर्प्पति' व्यावर्त्तते 'वंते'त्ति 'वान्तः' परित्यक्तः 'सपक्खिं सपडिदिसं'ति सपक्षं-समानदिग् यथा भवति सप्रतिदिक् समानविदिक् च यथा भवतीत्येवं चन्द्रलेश्यां 'आवृत्त्य' अवष्टभ्य तिष्ठतीत्येवं योगः, अत आवरणमात्रमेवेदं वैस्रसिकं चन्द्रस्य राहुणा ग्रसनं, न तु कार्मणमिति ॥ अथ राहोर्भेदमाह-'कइविहे णं'मित्यादि, यश्चन्द्रस्य सदैव संनिहितः संचरति स ध्रुवराहुः, आह च—''किण्हं राहुविमाणं निच्चं चंदेण होइ अविरहियं । चउरंगुलमप्पत्तं हेट्ठा चंदस्स तं चरइ ॥१॥'' इति यस्तु पर्व्वणि-पौर्णमास्य-मावास्ययोश्चन्द्रादित्ययोरुपरागं करोति स पर्वराहुरिति। 'तत्थ णं जे से धुवराहु'इत्यादि 'पाडिवए'त्ति प्रतिपद आरभ्येति शेषः, पञ्चदशभागेन स्वकीयेन करणभूतेन पञ्चदशभागं 'चंदस्स लेस्सं'ति विभक्तिव्यत्ययाच्चन्द्रस्य लेश्यायाः चन्द्रबिम्बसम्बन्धिनमित्यर्थः आवृण्वन् २ प्रत्यहं तिष्ठति, 'पढमाए'त्ति प्रथमतिथौ, 'पन्नरसेसु'त्ति पञ्चदशसु दिनेषु अमावास्यायामित्यर्थः 'पन्नरसमं भागं' आवरित्ताणं चिट्ठइ'त्ति वाक्यशेषः, एवं च यद्भवति तदाह-'चरिमे'त्यादि, चरमसमये पञ्चदशभागोपेतस्य कृष्णपक्षस्यान्तिमे काले कालविशेषे वा चन्द्रो रक्तो भवति-राहुणोपरक्तो भवति, सर्वथाऽप्याच्छादित इत्यर्थः, अवशेषे समये-प्रतिपदादिकाले चन्द्रो रक्तो वा विरक्तो वा भवति, अंशेन राहुणोपरक्तोऽशान्तरेण चानुपरक्तः, आच्छादितानाच्छादित इत्यर्थः । 'तमेव'त्ति तमेव चन्द्रलेश्यापञ्चद-शभागं शुक्लपक्षस्य प्रतिपदादिष्विति गम्यते 'उपदर्शयन् २' पञ्चदशभागेन स्वयमपसरणतः प्रकटयन् प्रकटयंस्तिष्ठति, 'चरिमस-मये'त्ति पौर्णमास्यां चन्द्रो विरक्तो भवति, सर्वथैव शुक्लीभवतीत्यर्थः, सर्वथाऽनाच्छादितत्वादिति, इह चायं भावार्थः-षोडशभागीकृ-तस्य चन्द्रस्य षोडशो भागोऽवस्थित एवास्ते, ये चान्ये भागास्तान् राहुः प्रतितिथ्येकैकं भागं कृष्णपक्षे आवृणोति शुक्लपक्षे तु विमुञ्च-तीति, उक्तञ्च ज्योतिष्करण्डके-''सोलसभागे काऊण उडुवई हायएत्थ पन्नरसं । तत्तियमेत्ते भागे पुणोवि परिवड्ढई जोण्हा ॥१॥''

इति, इह तु षोडशभागकल्पना न कृता, व्यवहारिणां षोडशभागस्यावस्थितस्यानुपलक्षणादिति सम्भावयाम इति, ननु चन्द्रविमानस्य पञ्चैकषष्टिभागन्यूनयोजनप्रमाणत्वाद् राहुविमानस्य च ग्रहविमानत्वेनार्द्धयोजनप्रमाणत्वात्कथं पञ्चदशे दिने चन्द्रविमानस्य महत्त्वे-नेतरस्य च लघुत्वेन सर्वावरणं स्यात् ? इति, अत्रोच्यते, यदिदं ग्रहविमानानामर्द्धयोजनमिति प्रमाणं तत् प्रायिकं, ततश्च राहोर्ग्रह-स्योक्ताधिकप्रमाणमपि विमानं संभाव्यते, अन्ये पुनराहुः-लघीयसोऽपि राहुविमानस्य महता तमिस्ररश्मिजालेन तदाव्रियत इति, ननु कतिपयान् दिवसान् यावद् ध्रुवराहुविमानं वृत्तमुपलभ्यते ग्रहण इव, कतिपयांश्च न तथेति किमत्र कारणम्?, अत्रोच्यते, येषु दिवसे-ष्वत्यर्थं तमसाऽभिभूयते शशी तेषु तद्विमानं वृत्तमाभाति, येषु पुनर्नाभिभूयतेऽसौ विशुद्ध्यमानत्वात् तेषु न वृत्तमाभाति, तथा चोक्तं- "वट्टच्छेओ कइवइदिवसे धुवराहुणो विमाणस्स । दीसइ परं न दीसइ जह गहणे पव्वराहुस्स ॥१॥" आचार्य आह-"अच्चत्थं नहि तमसाऽभिभूयते जं ससी विसुज्झंतो । तेण न वट्टच्छेओ गहणे उ तमो तमोबहुलो ॥ १ ॥" इति । 'तत्थ णं जे से पव्वे'त्यादि, 'बायालीसाए मासाणं' सार्द्धस्य वर्षत्रयस्योपरि चन्द्रस्य लेश्यामावृत्य तिष्ठतीति गम्यं, सूरस्याप्येवं नवरमुत्कृष्टतयाऽष्टचत्वारिंशता संवत्सराणामिति ॥ अथ चन्द्रस्यैव 'ससि'त्ति यदभिधानं तस्यान्वर्थाभिधानायाह—

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-चंदे ससी २ ?, गोयमा ! चंदस्स णं जोइसिंदस्स जोइसरन्नो मियंके विमाणे कंता देवी कंताओ देवीओ कंताइं आसणसयणखंभभंडमत्तोवगरणाइं अप्पणोऽवि य णं चंदे जोइसिंदे जोइसराया सोमे कंते सुभए पियदंसणे सुरूवे से तेणट्ठेणं जाव ससी ॥ (सूत्रं ४५४) से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-सूरे० आइच्चे सूरे २ ?, गोयमा ! सूरादिया णं समयाइ वा आवलियाइ वा जाव उस्सप्पिणीइ वा अवसप्पिणीइ वा से तेणट्ठेणं

जाव आइच्चे० २ ॥ ( सूत्रं ४५५ ) ॥

'से केण' मित्यादि, 'मियंके'त्ति मृगचिह्नत्वात् मृगाङ्के विमानेऽधिकरणभूते 'सोमे'त्ति 'सौम्यः' अरौद्राकारो नीरोगो वा 'कंते'त्ति कान्तियोगात् 'सुभए'त्ति सुभगः-सौभाग्ययुक्तत्वाद्वल्लभो जनस्य 'पियदंसणे'त्ति प्रेमकारिदर्शनः, कस्मादेवम्? अत आह-सुरूपः, 'से तेण'मित्यादि, अथ तेन कारणेनोच्यते 'ससी'ति सह श्रिया वर्त्तत इति सश्रीः तदीयदेवादीनां स्वस्य च कान्त्यादियुक्तत्वादिति, प्राकृतभाषापेक्षया च ससीति सिद्धम्। अथादित्यशब्दस्यान्वर्थाभिधानायाह—'से केण'मित्यादि, 'सूराईय'त्ति सूरः आदिः-प्रथमो येषां ते सूरादिकाः, के? इत्याह-'समयाइ व'त्ति समयाः-अहोरात्रादिकालभेदानां निर्विभागा अंशाः, तथाहि-सूर्योदयमवधिं कृत्वाऽहोरात्रारम्भकः समयो गण्यते आवलिका मुहूर्त्तादयश्चेति 'से तेण'मित्यादि अथ तेनार्थेन सूर आदित्य इत्युच्यते, आदौ अहोरात्रसमयादीनां भव आदित्य इति व्युत्पत्तेः, त्यप्रत्ययश्चेहार्षत्वादिति ॥ अथ तयोरेवाग्रमहिष्यादिदर्शनायाह—

चंदस्स णं भंते! जोइसिंदस्स जोइसरन्नो कति अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ जहा दसमसए जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं। सूरस्सवि तहेव। चंदमसूरिया णं भंते! जोइसिंदा जोइसरायाणो केरिसए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणा विहरंति?, गोयमा! से जहानामए केइ पुरिसे पढमजोव्वणुट्ठाणबलत्थे पढमजोव्वणुट्ठाणबलट्ठाए भारियाए सद्धिं अचिरवत्तविवाहकज्जे अत्थगवेसणयाए सोलसवासविप्पवासिए से णं तओ लद्धट्ठे कयकज्जे अणहसमग्गे पुणरवि नियगगिहं हव्वमागए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए मणुन्नं थालिपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाकुलं भोयणं भुत्ते समाणे तंसि तारिसगंसि वासघरंसि वन्नओ महब्बले कुमारे

जाव सयणोवयारकलिए ताए तारिसियाए भारियाए सिंगारागारचारुवेसाए जाव कलियाए अणुरत्ताए अविरत्ताए मणाणुकूलाए सद्धिं इट्ठे सद्दे फरिसे जाव पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरति, से णं गोयमा ! पुरिसे विउसमणकालसमयंसि केरिसयं सायासोक्खं पच्चणुब्भवमाणो विहरति ?, ओरालं समणाउसो तस्स णं गोयमा ! पुरिसस्स कामभोगेहिंतो वाणमंतराणं देवाणं अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव कामभोगा, वाणमंतराणं देवाणं कामभोगेहिंतो असुरिंदवज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव कामभोगा, असुरिंदवज्जियाणं भवणवासियाणं देवाणं कामभोगेहिंतो असुरकुमाराणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव कामभोगा, असुरकुमाराणं देवाणं कामभोगेहिंतो गहगणनक्खत्ततारारूवाणं जोतिसियाणं देवाणं एत्तो अनंतगुणविसिट्ठतराए चेव कामभोगा, गहगणनक्खत्तजाव कामभोगेहिंतो चंदिमसूरियाणं जोतिसियाणं जोतिसराईणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठयरा चेव कामभोगा, चंदिमसूरियाणं गोयमा ! जोतिसिंदा जोतिसरायाणो एरिसे कामभोगे पच्चणुब्भवमाणा विहरंति । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं जाव विहरइ ( सूत्रं ४५६ ) ॥ १२-६ ॥



'चंदस्से'त्यादि, 'पढमजोव्वणुट्ठाणबलत्थे'त्ति प्रथमयौवनोत्थाने प्रथमयौवनोद्गमे यद्बलं-प्राणस्तत्र यस्तिष्ठति स तथा 'अचिरवत्तविवाहकज्जे' अचिरवृत्तविवाहकार्यः 'वन्नओ महाबले'त्ति महाबलोद्देशके वासगृहवर्णको दृश्य इत्यर्थः 'अणुरत्ताए'त्ति अनुरागवत्या 'अविरत्ताए'त्ति विप्रियकरणेऽप्यविरक्तया 'मणाणुकूलाए'त्ति पतिमनसोऽनुकूलवृत्तिकया 'विउसमण-

कालसमयंसि'त्ति व्यवशमनं—पुंवेदविकारोपशमस्तस्य यः कालसमयः स तथा तत्र, रतावसान इत्यर्थः, इति भगवता पृष्टो गौतम आह—'ओरालं समणाउसो'त्ति, 'तस्स णं गोयमा! पुरिसस्स कामभोगेहिंतो' इहाग्रेतनः 'एत्तो'त्ति शब्दो योज्यते तत-श्चैतेभ्य उक्तस्वरूपेभ्यो व्यन्तराणां देवानामनन्तगुणविशिष्टतया चैव कामभोगा भवन्तीति, कचित्तु एत्तोशब्दो नाभिधीयते एवेति द्वादशशते षष्ठः ॥ १२-६ ॥

---

अनन्तरोद्देशके चन्द्रादीनामतिशयसौख्यमुक्तं, ते च लोकस्यांशे भवन्तीति लोकांशे जीवस्य जन्ममरणवक्तव्यताप्ररूपणार्थः सप्तमोद्देशक उच्यते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ जाव एवं वयासी-केमहालए णं भंते! लोए पन्नत्ते?, गोयमा! महतिमहालए लोए पन्नत्ते, पुरच्छिमेणं असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ दाहिणेणं असंखिज्जाओ एवं चेव एवं पच्चच्छिमेणवि एवं उत्तरेणवि एवं उड्ढंपि अहे असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयामविक्खंभेणं। एयंसि णं भंते! एमहालगंसि लोगंसि अत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जत्थ णं अयं जीवे न जाए वा न मए वावि?, गोयमा! नो इणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ एयंसि णं एमहालगंसि लोगंसि नत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जत्थ णं अयं जीवे ण जाए वा न मए वावि?, गोयमा! से जहानामए-केइ पुरिसे अयासयस्स एगं महं अयावयं करेज्जा, से णं तत्थ जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं अयासहस्सं पक्खिवेज्जा ताओ णं तत्थ पउरगोयराओ

पउरपाणियाओ जहन्नेणं एगाहं वा बियाहं वा तियाहं उक्कोसेणं छम्मासे परिवसेज्जा, अत्थि णं गोयमा ! तस्स अयावयस्स केई परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जे णं तासिं अयाणं उच्चारेण वा पासवणेण वा खेलेण वा सिंघाणएण वा वंतेण वा पित्तेण वा पूएण वा सुक्केण वा सोणिएण वा चम्मेहिं वा रोमेहिं वा सिंगेहिं वा खुरेहिं वा नहेहिं वा अणाक्कंतपुव्वे भवइ ?, भगवं णो तिणट्ठे समट्ठे, होज्जावि णं गोयमा ! तस्स अयावयस्स केई परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जे णं तासिं अयाणं उच्चारेण वा जाव णहेहिं वा अणाक्कंतपुव्वे णो चेव णं एयंसि एमहालगंसि लोगंसि लोगस्स य सासयं भावं संसारस्स य अणादिभावं जीवस्स य णिच्चभावं कम्मबहुत्तं जम्मणमरणबाहुल्लं च पडुच्च नत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जत्थ णं अयं जीवे न जाए वा न मए वावि, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव न मए वावि ॥ ( सूत्रं ४५७ ) ॥

'तेण'मित्यादि, 'परमाणुपोग्गलमेत्तेऽवि'त्ति इहापिः सम्भावनायां 'अयासयस्स'त्ति षष्ठयाश्चतुर्थ्यर्थत्वाद् अजाशताय 'अयावयं'ति अजाव्रजम् अजावाटकमित्यर्थः 'उक्कोसेणं अयासहस्सं पक्खिवेज्ज'त्ति यदिहाजाशतप्रायोग्ये वाटके उत्कर्षेणाजासहस्रप्रक्षेपणमभिहितं तत्तासामतिसङ्कीर्णतयाऽवस्थानख्यापनार्थमिति, 'पउरगोयराओ पउरपाणीयाओ'त्ति प्रचुरचरणभूमयः प्रचुरपानीयाश्च, अनेन च तासां प्रचुरमूत्रपुरीषसम्भवो बुभुक्षापिपासाविरहेण सुस्थतया चिरंजीवित्वं चोक्तं 'नहेहि व'त्ति नखाः—खुराग्रभागास्तैः 'नो चेव णं एयंसि एमहालयंसि लोगंसि' इत्यस्य 'अत्थि केइ पमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे' इत्यादिना पूर्वोक्ताभिलापेन सम्बन्धः, महत्त्वाल्लोकस्य, कथमिदमिति चेदत आह—'लोगस्से'त्यादि, क्षयिणो ह्येवं न संभवतीत्यत उक्तं लोकस्य



प्र०आ०५७१

शाश्वतभावं प्रतीत्येति योगः, शाश्वतत्वेऽपि लोकस्य संसारस्य सादित्वे नैवं स्यादित्यनादित्वं तस्योक्तं, नानाजीवापेक्षया संसारस्यानादित्वेऽपि विवक्षितजीवस्यानित्यत्वे नोक्तोऽर्थः स्यादतो जीवस्य नित्यत्वमुक्तं, नित्यत्वेऽपि जीवस्य कर्माल्पत्वे तथाविधसंसरणाभावान्नोक्तं वस्तु स्यादतः कर्म्मबाहुल्यमुक्तं, कर्म्मबाहुल्येऽपि जन्मादेरल्पत्वे नोक्तोऽर्थः स्यादिति जन्मादिबाहुल्यमुक्तमिति ॥ एतदेव प्रपञ्चयन्नाह—

कति णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ जहा पढमसए पंचमउद्देसए तहेव आवासा ठावेयव्वा जाव अणुत्तरविमाणेत्ति जाव अपराजिए सव्वट्ठसिद्धे । अयन्नं भंते ! जीवे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए नरगत्ताए नेरइयत्ताए उववन्नपुव्वे ?, हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो, सव्वजीवावि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए णिरया० तं चेव जाव अणंतखुत्तो । अयन्नं भंते ! जीवे सक्करप्पभाए पुढवीए पणवीसाए एवं जहा रयणप्पभाए तहेव दो आलावगा भाणियव्वा, एवं जाव धूमप्पभाए । अयन्नं भंते ! जीवे तमाए पुढवीए पंचूणे निरयावाससयसहस्से एगमेगंसि सेसं तं चेव, अयन्नं भंते ! जीवे अहेसत्तमाए पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालएसु महानिरएसु एगमेगंसि निरयावासंसि सेसं जहा रयणप्पभाए, अयन्नं भंते ! जीवे चोसट्ठीए असुरकुमारावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि असुरकुमारावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए देवत्ताए देवीत्ताए आसणसयणभंडमत्तोवगरणत्ताए उववन्नपुव्वे ?, हंता गोयमा ! जाव अणंत-

खुत्तो, सव्वजीवावि णं भंते! एवं चेव, एवं जाव थणियकुमारेसु, नाणत्तं आवासेसु, आवासा पुव्वभणिया, अयन्नं भंते! जीवे असंखेज्जेसु पुढविकाइयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि पुढविकाइयावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वण० उववन्नपुव्वे?, हंता गोयमा! जाव अणंतखुत्तो, एवं सव्वजीवावि, एवं जाव वणस्सइकाइएसु, अयण्णं भंते! जीवे असंखेज्जेसु बेंदियावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि बेंदियावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए बेइंदियत्ताए उववन्नपुव्वे?, हंता गोयमा! जाव खुत्तो, सव्वजीवावि णं एवं चेव, एवं जाव मणुस्सेसु, नवरं तेंदियएसु जाव वणस्सइकाइयत्ताए तेंदियत्ताए चउरिंदिएसु चउरिंदियत्ताए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु पंचिंदियतिरिक्खजोणियत्ताए मणुस्सेसु मणुस्सत्ताए सेसं जहा बेंदियाणं, वाणमंतरजोइसियसोहम्मीसाणेसु य जहा असुरकुमाराणं, अयण्णं भंते! जीवे सणंकुमारे कप्पे बारससु विमाणावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि विमाणियावासंसि पुढविकाइयत्ताए सेसं जहा असुरकुमाराणं जाव अणंतखुत्तो, नो चेव णं देवीत्ताए, एवं सव्वजीवावि, एवं जाव आणयपाणएसु, एवं आरणच्चुएसुवि, अयन्नं भंते! जीवे तिसुवि अट्ठारसुत्तरेसु गेविज्जविमाणावाससयेसु एवं चेव, अयन्नं भंते! जीवे पंचसु अणुत्तरविमाणेसु एगमेगंसि अणुत्तरविमाणंसि पुढवि तहेव जाव अणंतखुत्तो, नो चेव णं देवत्ताए वा देवित्ताए वा, एवं सव्वजीवावि। अयन्नं भंते! जीवे सव्वजीवाणं माइत्ताए पिइत्ताए भाइत्ताए भगिणित्ताए भज्जत्ताए पुत्तत्ताए धूयत्ताए सुण्हत्ताए उववन्नपुव्वे?, हंता गोयमा! असइं अदुवा अणंतखुत्तो, सव्वजीवावि णं भंते! इमस्स जीवस्स माइत्ताए जाव उववन्नपुव्वे?, हंता गोयमा! जाव अणंतखुत्तो,

१२ शतके उद्देशः ७ सर्वत्रोत्पादः सू० ४५८

प्र० आ० ५८०

अयण्णं भंते! जीवे सव्वजीवाणं अरित्ताए वेरियत्ताए घायकत्ताए वहगत्ताए पडिणीयत्ताए पच्चामित्तत्ताए उववन्नपुव्वे?, हंता गोयमा! जाव अणंतखुत्तो, सव्वजीवावि णं भंते! एवं चेव, अयन्नं भंते! जीवे सव्वजीवाणं रायत्ताए जुवरायत्ताए जाव सत्थवाहत्ताए उववन्नपुव्वे?, हंता गोयमा! असतिं जाव अणंतखुत्तो, सव्वजीवाणं एवं चेव। अयन्नं भंते! जीवे सव्वजीवाणं दासत्ताए पेसत्ताए भयगत्ताए भाइल्लगत्ताए भोगपुरिसत्ताए सीसत्ताए वेसत्ताए उववन्नपुव्वे?, हंता गोयमा! जाव अणंतखुत्तो, एवं सव्वजीवावि अणंतखुत्तो। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ॥ ( सूत्रं ४५८ ) १२-७॥

'कइ ण'मित्यादि, 'नरगत्ताए'त्ति नरकावासपृथिवीकायिकतयेत्यर्थः 'असइं'ति असकृद्-अनेकशः 'अदुव'त्ति अथवा 'अणंतखुत्तो'त्ति अनन्तकृत्वः-अनन्तवारान् 'असंखेज्जेसु पुढविकाइयावाससयसहस्सेसु'त्ति इहासङ्ख्यातेषु पृथिवीकायिकावासेषु एतावतैव सिद्धेर्यच्छतसहस्रग्रहणं तत्तेषामतिबहुत्वख्यापनार्थं. नवरं 'तेइंदिएसु'इत्यादि त्रीन्द्रियादिसूत्रेषु द्वीन्द्रियसूत्रात् त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियेत्यादिनैव विशेष इत्यर्थः 'नो चेव णं देवीत्ताए'त्ति ईशानान्तेष्वेव देवस्थानेषु देव्य उत्पद्यन्ते सनत्कुमारादिषु पुनर्नेतिकृत्वा 'नो चेव णं देवीत्ताए' इत्युक्तं 'नो चेव णं देवत्ताए देवीत्ताए व'त्ति अनुत्तरविमानेष्वनन्तकृत्वो देवा नोत्पद्यन्ते देव्यश्च सर्वथैवेति 'नो चेव ण'मित्याद्युक्तमिति, 'अरित्ताए'त्ति सामान्यतः शत्रुभावेन 'वेरियत्ताए'त्ति वैरिकः-शत्रुभावानुबन्धयुक्तस्तत्तया 'घायगत्ताए'त्ति मारकतया 'वहगत्ताए'त्ति व्यधकतया, ताडकतयेत्यर्थः 'पडिणीयत्ताए'त्ति प्रत्यनीकतया-कार्योपघातकतया 'पच्चामित्तत्ताए'त्ति अमित्रसहायतया 'दासत्ताए'त्ति गृहदासीपुत्रतया 'पेसत्ताए'त्ति प्रेष्यतया-

आदेश्यतया 'भयगत्ताए'त्ति भृतकतया दुष्कालादौ पोषिततया 'भाइल्लगत्ताए'त्ति कृष्यादिलाभस्य भागग्राहकत्वेन 'भोगपुरिसत्ताए'त्ति अन्यैरुपार्जितार्थानां भोगकारिनरतया 'सीसत्ताए'त्ति शिक्षणीयतया 'वेसत्ताए'त्ति द्वेष्यतयेति ॥ द्वादशशते सप्तमः ॥१२-७॥

---

सप्तमे जीवानामुत्पत्तिश्चिन्तिता, अष्टमेऽपि सैव भङ्ग्यन्तरेण चिन्त्यते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वयासी–देवे णं भंते! महड्ढीए जाव महेसक्खे अणंतरं चयं चइत्ता बिसरीरेसु नागेसु उववज्जेज्जा?, हंता गोयमा! उववज्जेज्जा, से णं तत्थ अच्चियवंदियपूइयसक्कारियसम्माणिए दिव्वे सच्चे सच्चोवाए संनिहियपाडिहेरे यावि भवेज्जा?, हंता भवेज्जा। से णं भंते! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता सिज्झेज्जा बुज्झेज्जा जाव अंतं करेज्जा?, हंता सिज्झिज्जा जाव अंतं करेज्जा, देवे णं भंते! महड्ढीए एवं चेव जाव बिसरीरेसु मणीसु उववज्जेज्जा, एवं चेव जहा नागाणं। देवे णं भंते! महड्ढीए जाव बिसरीरेसु रुक्खेसु उववज्जेज्जा?, हंता उववज्जेज्जा, एवं चेव, नवरं इमं नाणत्तं जाव सन्निहियपाडिहेरे लाउल्लोइयमहिते यावि भवेज्जा?, हंता भवेज्जा, सेसं तं चेव जाव अंतं करेज्जा ॥ ( सूत्रं ४५९ ) ॥

'तेण' मित्यादि, 'बिसरीरेसु'त्ति द्वे शरीरे येषां ते द्विशरीरास्तेषु, ये हि नागशरीरं त्यक्त्वा मनुष्यशरीरमवाप्य सेत्स्यन्ति ते द्विशरीरा इति, 'नागेसु'त्ति सर्पेषु हस्तिषु वा 'तत्थ'त्ति नागजन्मनि यत्र वा क्षेत्रे जातः 'अच्चिए'त्यादि, इहार्चितादिपदानां पञ्चानां कर्मधारयः, तत्र चार्चितश्चन्दनादिना वन्दितः स्तुत्या पूजितः पुष्पादिना सत्कारितो वस्त्रादिना सन्मानितः प्रतिपत्तिविशेषेण 'दिव्वे'

त्ति प्रधानः 'सच्चे'त्ति स्वप्नादिप्रकारेण तदुपदिष्टस्यावितथत्वात् 'सच्चोवाए'त्ति सत्यावपातः, सफलसेव इत्यर्थः, कुत एतत् ? इत्याह— 'सन्निहियपाडिहेरे'त्ति सन्निहितं—अदूरवर्त्ति प्रातिहार्य—पूर्वसङ्गतिकादिदेवताकृतं प्रतिहारकर्म यस्य स तथा 'मणीसु'त्ति पृथिवीकायविकारेषु । 'लाउल्लोइयमहिए'त्ति 'लाइयं'ति छगणादिना भूमिकायाः संमृष्टीकरणं 'उल्लोइयं'ति सेटिकादिना कुड्यानां धवलनं, एतेनैव द्वयेन महितो यः स तथा, एतच्च विशेषणं वृक्षस्य पीठापेक्षया, विशिष्टवृक्षा हि बद्धपीठा भवन्तीति ।

अह भंते ! गोलंगूलवसभे कुक्कुडवसभे मंडुक्कवसभे एए णं निस्सीला निव्वया निग्गुणा निम्मेरा निप्पच्चक्खाणपोसहोववासा कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोसेणं सागरोवमट्ठितीयंसि नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जेज्जा ? । समणे भगवं महावीरे वागरेइ—उववज्जमाणे उववन्नेत्ति वत्तव्वं सिया । अह भंते ! सीहे वग्घे जहा उस्सप्पिणीउद्देसए जाव परस्सरे एए णं निस्सीला एवं चेव जाव वत्तव्वं सिया, अह भंते ! ढंके कंके विलए मग्गुए सिखीए, एए णं निस्सीला०, सेसं तं चेव जाव वत्तव्वं सिया। सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरइ ॥ ( सूत्र ४६० ) १२-८ ॥

'गोलंगूलवसभे'त्ति गोलाङ्गूलानां—वानराणां मध्ये महान् स एव वा विदग्धो विदग्धपर्यायत्वाद् वृषभशब्दस्य, एवं कुर्कुटवृषभोऽपि, एवं मण्डूकवृषभोऽपि, 'निस्सील'त्ति समाधानरहिताः 'निव्वय'त्ति अणुव्रतरहिताः 'निग्गुण'त्ति गुणव्रतैः क्षमादिभिर्वा रहिताः 'नेरइयत्ताए उववज्जेज्जा' इति प्रश्नः, इह च 'उववज्जेज्जा' इत्येतदुत्तरं, तस्य चासम्भवमाशङ्कमानस्तत्परिहारमाह— 'समणे'इत्यादि, असम्भवश्चैवं—यत्र समये गोलाङ्गूलादयो न तत्र समये नारकास्ते अतः कथं ते नारकतयोत्पद्यन्ते इति वक्तव्यं

स्याद् ?, अत्रोच्यते-श्रमणो भगवान् महावीरो, न तु जमाल्यादिः, एवं व्याकरोति-यदुत उत्पद्यमानमुत्पन्नमिति वक्तव्यं स्यात्, क्रियाकालनिष्ठाकालयोरभेदाद्, अतस्ते गोलाङ्गूलप्रभृतयो नारकतयोत्पत्तुकामा नारका एवेतिकृत्वा सुष्ठूच्यते 'नेरइयत्ताए उववज्जेज्ज'त्ति 'उस्सप्पिणिउद्देसए'त्ति सप्तमशतस्य षष्ठ इति ॥ द्वादशशतेऽष्टमः ॥ १२-८ ॥

अष्टमोद्देशके देवस्य नागादिषूत्पत्तिरुक्ता नवमे तु देवा एव प्ररूप्यन्त इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कइविहा णं भंते ! देवा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा देवा पण्णत्ता, तंजहा-भवियदव्वदेवा १ नरदेवा २ धम्मदेवा ३ देवाहिदेवा ४ भावदेवा ५, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ भवियदव्वदेवा भवियदव्वदेवा ?, गोयमा ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिए वा मणुस्से वा देवेसु उववज्जित्तए से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ भविय-दव्वदेवा २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नरदेवा नरदेवा ?, गोयमा ! जे इमे रायाणो चाउरंतचक्कवट्टी उप्पन्नस-मत्तचक्करयणप्पहाणा नवनिहीपइणो समिद्धकोसा बत्तीसं रायवरसहस्साणुजायमग्गा सागरवरमेहलाहिवइणो मणुस्सिंदा से तेणट्ठेणं जाव नरदेवा २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ धम्मदेवा धम्मदेवा ?, गोयमा ! जे इमे अ-णगारा भगवंतो ईरियासमिया जाव गुत्तबंभयारी से तेणट्ठेणं जाव धम्मदेवा २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ देवाधिदेवा देवाधिदेवा ?, गोयमा ! जे इमे अरिहंता भगवंतो उप्पन्ननाणदंसणधरा जाव सव्वदरिसी से तेणट्ठेणं जाव देवाधिदेवा २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-भावदेवा भावदेवा ?, गोयमा ! जे इमे भवणवइवाणमंतरजो-

इसवेमाणिया देवा देवगतिनामगोयाइं कम्माइं वेदेंति से तेणट्ठेणं जाव भावदेवा ( सूत्रं ४६१ )॥ भवियदव्वदेवा णं भंते! कओहिंतो उववज्जंति? किं नेरइएहिंतो उववज्जंति? तिरिक्ख० मणुस्स० देवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा! नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरि०मणु० देवेहिंतोवि उववज्जंति, भेदो जहा वक्कंतीए सव्वेसु उववाएयव्वा जाव अणुत्तरोववाइयत्ति, नवरं असंखेज्जवासाउयअकम्मभूमगअंतरदीवगसव्वट्ठसिद्धवज्जं जाव अपराजियदेवेहिंतोवि उववज्जंति, णो सव्वट्ठसिद्धदेवेहिंतो उववज्जंति। नरदेवा णं भंते! कओहिंतो उववज्जंति? किं नेरतिए०? पुच्छा, गोयमा! नेरतिएहिंतोवि उववज्जंति नो तिरि० नो मणु० देवेहिंतोवि उववज्जंति, जइ नेरइएहिंतो उववज्जंति किं रयणप्पभापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति जाव अहेसत्तमापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा! रयणप्पभापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति नो सक्करजाव नो अहेसत्तमापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति, जइ देवेहिंतो उववज्जंति किं भवणवासिदेवेहिंतो उववज्जंति वाणमंतर० जोइसिय० वेमाणियदेवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा! भवणवासिदेवेहिंतोवि उववज्जंति वाणमंतर० एवं सव्वदेवेसु उववाएयव्वा वक्कंतीभेदेणं जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति। धम्मदेवा णं भंते! कओहिंतो उववज्जंति किं नेरइए०? एवं वक्कंतीभेदेणं सव्वेसु उववाएयव्वा जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति, नवरं तमा अहेसत्तमाए तेऊवाऊअसंखिज्जवासाउयअकम्मभूमगअंतरदीवगवज्जेसु, देवाधिदेवाणं भंते! कतोहिंतो उववज्जंति?, किं नेरइएहिंतो उववज्जंति? पुच्छा, गोयमा! नेरइएहिंतो उववज्जंति नो तिरि० नो मणु० देवेहिंतोवि उववज्जंति, जइ नेरइएहिंतो एवं तिसु पुढवीसु उववज्जंति, सेसाओ खोडेयव्वाओ, जइ देवेहिंतो०, वेमाणिएसु

सव्वेसु उववज्जंति जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति, सेसा खोडेयव्वा, भावदेवा णं भंते! कओहिंतो उववज्जंति?, एवं जहा वक्कंतीए भवणवासीणं उववाओ तहा भाणियव्वो ॥ (सूत्रं ४६२) भवियदव्वदेवाणं भंते! केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता?, गोयमा! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, नरदेवाणं पुच्छा गोयमा! जहन्नेणं सत्त वाससयाइं उक्कोसेणं चउरासीई पुव्वसयसहस्साइं, धम्मदेवाणं भंते! पुच्छा, गोयमा! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी, देवाधिदेवाणं पुच्छा गोयमा! जहन्नेणं बावत्तरिं वासाइं उक्कोसेणं चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं, भावदेवाणं पुच्छा गोयमा! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ॥(सूत्रं ४६३)॥ भवियदव्वदेवा णं भंते! किं एगत्तं पभू विउव्वित्तए पुहुत्तं पभू विउव्वित्तए?, गोयमा! एगत्तंपि पभू विउव्वित्तए पुहुत्तंपि पभू विउव्वित्तए, एगत्तं विउव्वमाणे एगिंदियरूवं वा जाव पंचिंदियरूवं वा पुहुत्तं विउव्वमाणे एगिंदियरूवाणि वा जाव पंचिंदियरूवाणि वा, ताइं संखेज्जाणि वा असंखेज्जाणि वा संबद्धाणि वा असंबद्धाणि वा सरिसाणि वा असरिसाणि वा विउव्वंति विउव्वित्ता तओ पच्छा अप्पणो जहिच्छियाइं कज्जाइं करेंति, एवं नरदेवावि, एवं धम्मदेवावि, देवाधिदेवाणं पुच्छा, गोयमा! एगत्तंपि पभू विउव्वित्तए पुहुत्तंपि पभू विउव्वित्तए, नो चेव णं संपत्तीए विउव्विंसु वा विउव्विति वा विउव्विस्संति वा। भावदेवाणं पुच्छा जहा भवियदव्वदेवा ॥ (सूत्रं ४६४) ॥ भवियदव्वदेवाणं भंते! अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति?, कहिं उववज्जंति?, किं नेरइएसु उववज्जंति जाव देवेसु उववज्जंति?, गोयमा! नो नेरइएसु उववज्जंति नो तिरि० नो मणु० देवेसु उववज्जंति,

जइ देवेसु उववज्जंति सव्वदेवेसु उववज्जंति जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति। नरदेवा णं भंते! अणंतरं उव्वट्टित्ता पुच्छा, गोयमा! नेरइएसु उववज्जंति नो तिरि० नो मणु० णो देवेसु उववज्जंति, जइ नेरइएसु उववज्जंति०, सत्तसुवि पुढवीसु उववज्जंति। धम्मदेवा णं भंते! अणंतरं पुच्छा, गोयमा! नो नेरइएसु उववज्जेज्जा नो तिरि० नो मणु० देवेसु उववज्जंति, जइ देवेसु उववज्जंति किं भवणवासि पुच्छा, गोयमा! नो भवणवासिदेवेसु उववज्जंति नो वाणमंतर० नो जोइसिय० वेमाणियदेवेसु उववज्जंति, सव्वेसु वेमाणिएसु उववज्जंति जाव सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइएसु उववज्जंति, अत्थेगइया सिज्झंति जाव अंतं करेंति। देवाधिदेवा अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति?, गोयमा! सिज्झंति जाव अंतं करेंति। भावदेवा णं भंते! अणंतरं उव्वट्टित्ता पुच्छा जहा वक्कंतीए असुरकुमाराणं उव्वट्टणा तहा भाणियव्वा॥ भवियदव्वदेवे णं भंते! भवियदव्वदेवेत्ति कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, एवं जच्चेव ठिई सच्चेव संचिट्ठणावि जाव भावदेवस्स, नवरं धम्मदेवस्स जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी॥ भवियदव्वदेवस्स णं भंते! केवतियं कालं अंतरं होइ?, गोयमा! जह० दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो। नरदेवाणं पुच्छा, गोयमा! जहन्नेणं सातिरेगं सागरोवमं उक्कोसेणं अणंतं कालं अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं। धम्मदेवाणं णं पुच्छा, गोयमा! जहन्नेणं पलिओवमपुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं। देवाधिदेवाणं पुच्छा, गोयमा! नत्थि अंतरं। भावदेवस्स णं पुच्छा, गोयमा! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं

उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो ॥ एएसि णं भंते ! भवियदव्वदेवाणं नरदेवाणं जाव भावदेवाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा नरदेवा देवाधिदेवा संखेज्जगुणा धम्मदेवा संखेज्जगुणा भवियदव्वदेवा असंखेज्जगुणा भावदेवा असंखेज्जगुणा ॥ ( सूत्रं ४६५ ) ॥ एएसि णं भंते ! भावदेवाणं भवणवासीणं वाणमंतराणं जोइसियाणं वेमाणियाणं सोहम्मगाणं जाव अच्चुयगाणं गेवेज्जगाणं अणुत्तरोववाइयाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा अणुत्तरोववाइया भावदेवा उवरिमगेवेज्जा भावदेवा संखेज्जगुणा मज्झिमगेवेज्जा संखेज्जगुणा हेट्ठिमगेवेज्जा संखेज्जगुणा अच्चुए कप्पे देवा संखेज्जगुणा जाव आणयकप्पे देवा संखेज्जगुणा एवं जहा जीवाभिगमे तिविहे देवपुरिसे अप्पाबहुयं जाव जोतिसिया भावदेवा असंखेज्जगुणा । सेवं भंते ! २ ॥ ( सूत्रं ४६६ ) ॥ बारसमसयस्स नवमो ॥ १२-९ ॥

'कइविहा ण'मित्यादि. दीव्यन्ति–क्रीडादि कुर्वन्ति दीव्यन्ते वा–स्तूयन्ते वाऽऽराध्यतयेति देवाः 'भवियदव्वदेव'त्ति द्रव्यभूता देवा द्रव्यदेवाः, द्रव्यता चाप्राधान्याद् भूतभावत्वाद्भाविभावत्वाद्वा, तत्राप्राधान्याद्देवगुणशून्या देवा द्रव्यदेवा यथा साध्वाभासा द्रव्यसाधवः, भूतभावपक्षे तु भूतस्य देवत्वपर्यायस्य प्रतिपन्नकारणा भावदेवत्वाच्च्युता द्रव्यदेवाः, भाविभावपक्षे तु भाविनो देवत्वपर्यायस्य योग्या देवतयोत्पत्स्यमाना द्रव्यदेवाः, तत्र भाविभावपक्षपरिग्रहार्थमाह–भव्याश्च ते द्रव्यदेवाश्चेति भव्यद्रव्यदेवाः, 'नरदेव'त्ति नराणां मध्ये देवा–आराध्याः क्रीडाकान्त्यादियुक्ता वा नराश्च ते देवाश्चेति वा नरदेवाः, 'धम्मदेव'त्ति धर्मेण–श्रुतादिना देवा धर्म्मप्रधाना वा देवा धर्मदेवाः, 'देवाइदेव'त्ति देवान् शेषानतिक्रान्ताः पारमार्थिकदेवत्वयोगाद्देवा देवातिदेवाः, 'देवाहि-

देव'त्ति क्वचिद् दृश्यते, तत्र च देवानामधिकाः पारमार्थिकदेवत्वयोगाद् देवा देवाधिदेवाः, 'भावदेव'त्ति भावेन-देवगत्यादिकर्मोदयजातपर्यायेण देवा भावदेवाः। 'जे भविए' इत्यादि, इह जातौ एकवचनमतो बहुवचनार्थे व्याख्येयं, ततश्च ये भव्याः-योग्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका वा मनुष्या वा देवेषूत्पत्तुं ते यस्माद्भाविदेवभवा इति गम्यं अथ 'तेनार्थेन' तेन कारणेन हे गौतम ! तान् प्रत्येवमुच्यते-भव्यद्रव्यदेवा इति। 'जे इमे'इत्यादि, 'चाउरंतचक्कवट्टि'त्ति चतुरन्ताया भरतादिपृथिव्या एते स्वामिन इति चातुरन्ताः चक्रेण वर्त्तनशीलत्वाच्चक्रवर्त्तिनस्ततः कर्म्मधारयः, चतुरन्तग्रहणेन च वासुदेवादीनां व्युदासः, ते यस्मादिति वाक्यशेषः 'उप्पन्नसमत्तचक्करयणप्पहाण'त्ति आर्षत्वान्निर्देशस्योत्पन्नं समस्तरत्नप्रधानं चक्रं येषां ते तथा 'सागरवरमेहलाहिवइणो'त्ति सागर एव वरा मेखला-काञ्ची यस्याः सा सागरवरमेखला-पृथ्वी तस्या अधिपतयो ये ते तथा, सागरमेखलान्तपृथिव्यधिपतय इति भावः, 'से तेणट्ठेणं'ति अथ 'तेनार्थेन' तेन कारणेन गौतम ! तान् प्रत्येवमुच्यते-नरदेवा२इति। 'जे इमे' इत्यादि, ये इमेऽनगारा भगवन्तस्ते यस्मादिति वाक्यशेषः ईर्यासमिता इत्यादि 'से तेणट्ठेणं'ति अथ तेनार्थेन गौतम! तान् प्रत्येवमुच्यते धर्मदेवा २ इति। 'जे इमे' इत्यादि, ये इमेऽर्हन्तो भगवन्तस्ते यस्मादुत्पन्नज्ञानदर्शनधरा इत्यादि 'से तेणट्ठेणं'ति अथ तेनार्थेन तान् प्रति गौतम ! एवमुच्यते-देवातिदेवा २ इति। 'जे इमे'इत्यादि, ये इमे भवनपत्यादयस्ते यस्माद्देवगतिनामगोत्रे कर्मणी वेदयन्ति अनेनार्थेन तान् प्रत्येवमुच्यते-भावदेवा २ इति। एवं देवान् प्ररूप्य तेषामेवोत्पादं प्ररूपयन्नाह-'भवियदव्वदेवा णं भंते !' इत्यादि, 'भेदो'त्ति 'जइ नेरइएहिंतो उववज्जंति किं रयणप्पभापुढविनेरइएहिंतो'इत्यादिर्भेदो वाच्यः, 'जहा वक्कंतीए'त्ति यथा प्रज्ञापनाषष्ठपदे, नवरमित्यादि, 'असंखेज्जवासाउय'त्ति असङ्ख्यातवर्षायुष्काः कर्म्मभूमिजाः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्या असङ्ख्यातवर्षायुषामकर्म्मभूमिजा-

दीनां साक्षादेव गृहीतत्वात् एतेभ्यश्चोद्वृत्ता भव्यद्रव्यदेवा न भवन्ति, भावदेवेष्वेव तेषामुत्पादात्, सर्वार्थसिद्धिकास्तु भव्यद्रव्यसिद्धा एव भवन्तीत्यत एतेभ्योऽन्ये सर्वे भव्यद्रव्यदेवतयोत्पादनीया इति, धर्म्मदेवसूत्रे 'नवर'मित्यादि, 'तम'त्ति षष्ठपृथिवी, तत उद्वृत्तानां चारित्रं नास्ति, तथाऽधःसप्तम्यास्तेजसो वायोरसङ्ख्येयवर्षायुष्ककर्मभूमिजेभ्योऽकर्मभूमिजेभ्योऽन्तरद्वीपजेभ्यश्चोद्वृत्तानां मानुषत्वाभावाच्च चारित्रं, ततश्च न धर्म्मदेवत्वमिति । देवाधिदेवसूत्रे 'तिसु पुढवीसु उववज्जंति'त्ति तिसृभ्यः पृथिवीभ्य उद्वृत्ता देवातिदेवा उत्पद्यन्ते 'सेसाओ खोडेयव्वाओ'त्ति शेषाः पृथिव्यो निषेधयितव्या इत्यर्थः, ताभ्य उद्वृत्तानां देवातिदेवत्वस्याभावादिति । 'भावदेवा ण'मित्यादि, इह च बहुतरस्थानेभ्य उद्वृत्ता भवनवासितयोत्पद्यन्ते असञ्ज्ञिनामपि तेषूत्पादाद्, अत उक्तं 'जहा वक्कंतीए भवणवासीणं उववाओ'इत्यादि ॥ अथ तेषामेव स्थितिं प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वदेवाण'मित्यादि, 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति अन्तर्मुहूर्त्तायुषः पञ्चेन्द्रियतिरश्चो देवेषूत्पादाद्भव्यद्रव्यदेवस्य जघन्याऽन्तर्मुहूर्त्तस्थितिः, 'उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं'ति उत्तरकुर्वादिमनुजादीनां देवेष्वेवोत्पादात्, ते च भव्यद्रव्यदेवाः, तेषां चोत्कर्षतो यथोक्ता स्थितिरिति । 'सत्त वाससयाइं'ति यथा ब्रह्मदत्तस्य 'चउरासीइपुव्वसयसहस्साइं'ति यथा भरतस्य। धर्मदेवानां 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति योऽन्तर्मुहूर्त्तावशेषायुश्चारित्रं प्रतिपद्यते तदपेक्षमिदं, 'उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी'ति तु यो देशोनपूर्वकोट्यायुश्चारित्रं प्रतिपद्यते तदपेक्षमिति, ऊनता च पूर्वकोट्या अष्टाभिर्वर्षैः, अष्टवर्षस्यैव प्रव्रज्यार्हत्वात्, यच्च षड्वर्षस्त्रिवर्षो वा प्रव्रजितोऽतिमुक्तको वैरस्वामी वा तत्कादाचित्कमिति न सूत्रावतारीति । देवातिदेवानां 'जहन्नेणं बावत्तरिं वासाइं'ति श्रीमन्महावीरस्यैव 'उक्कोसेणं चउरासीइ पुव्वसयसहस्साइं'ति ऋषभस्वामिनो यथा । भावदेवानां 'जहन्नेणं दस वाससहस्साइं'ति यथा व्यन्तराणां 'उक्कोसेणं तेत्तीसं

सागरोवमाइं'ति यथा सर्वार्थसिद्धदेवानां ॥ अथ तेषामेव विकुर्वणां प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वदेवा णं'मित्यादि 'एगत्तं पभू विउव्वित्तए'त्ति भव्यद्रव्यदेवो मनुष्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्वा वैक्रियलब्धिसम्पन्नः 'एकत्वम्' एकरूपं 'प्रभुः' समर्थो विकुर्वयितुं 'पुहुत्तं'ति नानारूपाणि, देवातिदेवास्तु सर्वथा औत्सुक्यवर्जितत्वान्न विकुर्वते शक्तिसद्भावेऽपीत्यत उच्यते—'नो चेव णं'मित्यादि, 'संपत्तीए'त्ति वैक्रियरूपसम्पादनेन, विकुर्वणशक्तिस्तु विद्यते, तल्लब्धिमात्रस्य विद्यमानत्वात् ॥ अथ तेषामेवोद्वर्त्तनां प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वे'त्यादि, इह च भविकद्रव्यदेवानां भाविदेवभवस्वभावत्वान्नारकादिभवत्रयनिषेधः । नरदेवसूत्रे तु 'नेरइएसु उववज्जंति'त्ति अत्यक्तकामभोगा नरदेवा नैरयिकेषूत्पद्यन्ते, शेषत्रये तु तन्निषेधः, तत्र च यद्यपि केचिच्चक्रवर्त्तिनो देवेषूत्पद्यन्ते तथाऽपि ते नरदेवत्वत्यागेन धर्मदेवत्वप्राप्ताविति न दोषः, 'जहा वक्कंतीए असुरकुमाराणं उव्वट्टणा तहा भाणियव्व'त्ति असुरकुमारा बहुषु जीवस्थानेषु गच्छन्तीतिकृत्वा तैरतिदेशः कृतः, असुरादयो हीशानान्ताः पृथिव्यादिष्वपि गच्छन्तीति ॥ अथ तेषामेवानुबन्धं प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वदेवे णं'मित्यादि, 'भवियदव्वदेवेइ'त्ति भव्यद्रव्यदेव इत्यमुं पर्यायमत्यजन्नित्यर्थः 'जहन्नेणमंतोमुहुत्त'मित्यादि पूर्ववदिति । 'एवं जच्चेव ठिई सच्चेव संचिट्ठणावि'त्ति 'एवम्' अनेन न्यायेन यैव 'स्थितिः' भवस्थितिः प्राग् वर्णिता सैवैषां संस्थितिरपि, तत्पर्यायानुबन्धोऽपीत्यर्थः, विशेषं त्वाह—'नवर'मित्यादि, धर्मदेवस्य जघन्येनैकं समयं स्थितिः, अशुभभावं गत्वा ततो निवृत्तस्य शुभभावप्रतिपत्तिसमयानन्तरमेव मरणादिति ॥ अथैतेषामेवान्तरं प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वदेवस्स णं भंते !' इत्यादि, 'जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं'ति भव्यद्रव्यदेवस्यान्तरं जघन्येन दशवर्षसहस्राण्यन्तर्मुहूर्त्ताभ्यधिकानि, कथं ?, भव्यद्रव्यदेवो भूत्वा दशवर्षसहस्रस्थितिषु व्यन्तरादिषूत्पद्य च्युत्वा शुभपृथिव्यादौ गत्वाऽन्तर्मुहूर्त्त

स्थित्वा पुनर्भव्यद्रव्यदेव एवोपजायत इत्येवं, एतच्च टीकामुपजीव्य व्याख्यातं, इह कश्चिदाह—ननु देवत्वाच्च्युतस्यानन्तरमेव भव्यद्रव्यदेवतयोत्पत्तिसम्भवाद्दशवर्षसहस्राण्येव जघन्यतस्तस्यान्तरं भवत्यतः कथमन्तर्मुहूर्त्ताभ्यधिकानि तान्युक्तानि इति, अत्रोच्यते, सर्व जघन्यायुर्देवश्च्युतः सन् शुभपृथिव्यादिषूत्पद्य भव्यद्रव्यदेवेषूत्पद्यत इति टीकाकारमतमवसीयते, तथा च यथोक्तमन्तरं भवतीति, अन्ये पुनराहुः—इह बद्धायुरेव भव्यद्रव्यदेवोऽभिप्रेतस्तेन जघन्यस्थितिकाद् देवत्वाच्च्युत्वाऽन्तर्मुहूर्त्तस्थितिकभव्यद्रव्यदेवत्वेनोत्पन्नस्यान्तर्मुहूर्त्तोपरि देवायुषो बन्धनाद् यथोक्तमन्तरं भवतीति, अथवा भव्यद्रव्यदेवस्य जन्मनोर्मरणयोर्वाऽन्तरस्य ग्रहणाद् यथोक्तमन्तरमिति । 'नरदेवाण'मित्यादि, 'जहन्नेणं साइरेगं सागरोवमं'ति, कथम् ?, अपरित्यक्तसङ्गाश्चक्रवर्त्तिनो नरकपृथिवीषूत्पद्यन्ते, तासु च यथास्वमुत्कृष्टस्थितयो भवन्ति, ततश्च नरदेवो मृतः प्रथमपृथिव्यामुत्पन्नस्तत्र चोत्कृष्टां स्थितिं सागरोपमप्रमाणामनुभूय नरदेवो जातः, इत्येवं सागरोपमं, सातिरेकत्वं च नरदेवभवे चक्ररत्नोत्पत्तेरर्वाचीनकालेन द्रष्टव्यं, उत्कृष्टतस्तु देशोनं पुद्गलपरावर्त्तार्द्धं, कथं ?, चक्रवर्त्तित्वं हि सम्यग्दृष्टय एव निर्वर्त्तयन्ति, तेषां च देशोनापार्द्धपुद्गलपरावर्त्त एव संसारो भवति, तदन्त्यभवे च कश्चिन्नरदेवत्वं लभत इत्येवमिति । 'धम्मदेवस्स ण'मित्यादि, 'जहन्नेणं पलिओवमपुहत्तं'ति, कथं ?, चारित्रवान् कश्चित् सौधर्मे पल्योपमपृथक्त्वायुष्केषूत्पद्य ततश्च्युतो धर्म्मदेवत्वं लभत इत्येवमिति, यच्च मनुजत्वे उत्पन्नश्चारित्रं विनाऽऽस्ते तदधिकमपि सत् पल्योपमपृथक्त्वेऽन्तर्भावितमिति । 'भावदेवस्स ण' मित्यादि 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, भावदेवश्च्युतोऽन्तर्मुहूर्त्तमन्यत्र स्थित्वा पुनरपि भावदेवो जात इत्येवं जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तमन्तरमिति ॥ अथैतेषामेवाल्पबहुत्वं प्ररूपयन्नाह—'एएसि ण'मित्यादि, 'सव्वत्थोवा नरदेव'त्ति भरतैरवतेषु प्रत्येकं द्वादशानामेव तेषामुत्पत्तेर्विजयेषु च वासुदेवसम्भवात् सर्वेष्वेकदाऽनुत्पत्तेरिति । 'देवा-

इदेवा संखेज्जगुण'त्ति भरतादिषु प्रत्येकं तेषां चक्रवर्त्तिभ्यो द्विगुणतयोत्पत्तेर्विजयेषु च वासुदेवोपेतेष्वप्युत्पत्तेरिति । 'धम्मदेवा संखेज्जगुण'त्ति साधूनामेकदाऽपि कोटीसहस्रपृथक्त्वसद्भावादिति, 'भवियदव्वदेवा असंखेज्जगुण'त्ति देशविरतादीनां देवगतिगामिनामसङ्ख्यातत्वात्, 'भावदेवा असंखेज्जगुण'त्ति स्वरूपेणैव तेषामतिबहुत्वादिति ॥ अथ भावदेवविशेषाणां भवनपत्यादीनामल्पबहुत्वप्ररूपणायाह–'एएसि णं'मित्यादि, 'जहा जीवाभिगमे तिविहे'इत्यादि, इह च 'तिविहे'त्ति त्रिविधजीवाधिकार इत्यर्थः देवपुरुषाणामल्पबहुत्वमुक्तं तथेहापि वाच्यं, तच्चैवं–'सहस्सारे कप्पे देवा असंखेज्जगुणा महासुक्के असंखेज्जगुणा लंतए असंखेज्जगुणा बंभलोए देवा असंखेज्जगुणा माहिंदे देवा असंखेज्जगुणा सणंकुमारे कप्पे देवा असंखेज्जगुणा ईसाणे देवा असंखेज्जगुणा सोहम्मे देवा संखेज्जगुणा भवणवासिदेवा असंखेज्जगुणा वाणमंतरा देवा असंखेज्जगुण'त्ति ॥ द्वादशशते नवमः ॥ १२-९ ॥



नवमोद्देशके देवा उक्तास्ते चात्मान इत्यात्मस्वरूपं भेदतो निरूपणाय दशमोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्––

कइविहा णं भंते! आया पण्णत्ता?, गोयमा! अट्ठविहा आया पण्णत्ता, तंजहा–दवियाया कसायाया योगाया उवयोगाया णाणाया दंसणाया चरित्ताया वीरियाया ॥ जस्स णं भंते! दवियाया तस्स कसायाया जस्स कसायाया तस्स दवियाया?, गोयमा! जस्स दवियाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण कसायाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि। जस्स णं भंते! दवियाया तस्स जोगाया? एवं जहा दवियाया कसायाया भणिया तहा दवियाया जोगाया य भाणियव्वा। जस्स णं भंते! दवियाया तस्स उवयोगाया एवं

सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा, गोयमा! जस्स दवियाया तस्स उवओगाया नियमं अत्थि, जस्सवि उवओगाया तस्सवि दवियाया नियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स णाणाया भयणाए, जस्स पुण णाणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि, जस्सवि दंसणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स चरित्ताया भयणाए जस्स पुण चरित्ताया तस्स दवियाया नियमं अत्थि, एवं वीरियायाएवि समं। जस्स णं भंते! कसायाया तस्स जोगाया पुच्छा, गोयमा! जस्स कसायाया तस्स जोगाया नियमं अत्थि, जस्स पुण जोगाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय नत्थि, एवं उवओगायाएवि समं कसायाया नेयव्वा, कसायाया य णाणाया य परोप्परं दोवि भइयव्वाओ, जहा कसायाया य उवओगाया य तहा कसायाया य दंसणाया य कसायाया य चरित्ताया य दोवि परोप्परं भइयव्वाओ, जहा कसायाया य जोगाया य तहा कसायाया य वीरियाया य भाणियव्वाओ, एवं जहा कसायायाए वत्तव्वया भणिया तहा जोगायाएवि उवरिमाहिं समं भाणियव्वाओ। जहा दवियायाए वत्तव्वया भणिया तहा उवयोगायाएवि उवरिल्लाहिं समं भाणियव्वा। जस्स नाणाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि, जस्स पुण दंसणाया तस्स णाणाया भयणाए, जस्स नाणाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण चारित्ताया तस्स नाणाया नियमं अत्थि, णाणाया वीरियाया दोवि परोप्परं भयणाए। जस्स दंसणाया तस्स उवरिमाओ दोवि भयणाए, जस्स पुण ताओ तस्स दंसणाया नियमं अत्थि। जस्स चरित्ताया तस्स वीरियाया नियमं अत्थि, जस्स पुण वीरियाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि सिय

नत्थि ॥ एयासि णं भंते ! दवियायाणं कसायायाणं जाव वीरियायाण य कयरे २ जाव विसेसा० ? गोयमा ! सव्वत्थोवाओ चरित्तायाओ नाणायाओ अणंतगुणाओ कसायाओ अणंत० जोगायाओ वि० वीरियायाओ वि० उवयोगदवियदंसणायाओ तिन्निवि तुल्लाओ वि० ॥ ( सूत्रं ४६७ ) आया भंते ! नाणे अन्नाणे ?, गोयमा ! आया सिय नाणे सिय अन्नाणे, णाणे पुण नियमं आया ॥ आया भंते ! नेरइयाणं नाणे अन्ने नेरइयाणं नाणे?, गोयमा ! आया नेरइयाणं सिय नाणे सिय अन्नाणे, नाणे पुण से नियमं आया, एवं जाव थणियकुमाराणं, आया भंते ! पुढवि० अन्नाणे अन्ने पुढविकाइयाणं अन्नाणे ?, गोयमा ! आया पुढविकाइयाणं नियमं अन्नाणे अन्नाणेवि नियमं आया, एवं जाव वणस्सइका०, बेइंदियतेइंदिय जाव वेमाणियाणं जहा नेरइयाणं। आया भंते ! दंसणे अन्ने दंसणे?, गोयमा ! आया नियमं दंसणे दंसणेऽवि नियमं आया। आया भंते ! नेर० दंसणे अन्ने नेरइयाणं दंसणे?, गोयमा ! आया नेरइयाणं नियमा दंसणे दंसणेवि से नियमं आया एवं जाव वेमा० निरंतरं दंडओ ॥ ( सूत्रं ४६८ ) ॥



'कइविहा ण'मित्यादि, 'आय'त्ति अतति-सन्ततं गच्छति अपरापरान् स्वपरपर्यायानित्यात्मा, अथवा अतधातोर्गमनार्थत्वेन ज्ञानार्थत्वादतति-सन्ततमवगच्छति उपयोगलक्षणत्वादित्यात्मा, प्राकृतत्वाच्च सूत्रे स्त्रीलिङ्गनिर्देशः, तस्य चोपयोगलक्षणत्वात्सामान्येनैकविधत्वेऽप्युपाधिभेदादष्टधात्वं, तत्र 'दवियाय'त्ति द्रव्यं-त्रिकालानुगाम्युपसर्जनीकृतकषायादिपर्यायं तद्रूप आत्मा द्रव्यात्मा सर्वेषां जीवानां, 'कसायाय'त्ति क्रोधादिकषायविशिष्ट आत्मा कषायात्मा अक्षीणानुपशान्तकषायाणां, 'जोगाय'त्ति योगा-मनःप्रभृतिव्यापारास्तत्प्रधान आत्मा योगात्मा योगवतामेव, 'उवओगाय'त्ति उपयोगः-साकारानाकारभेदस्तत्प्रधान आत्मा उपयोगात्मा

सिद्धसंसारिस्वरूपः सर्वजीवानां, अथवा विवक्षितवस्तूपयोगापेक्षयोपयोगात्मा, 'नाणाय'त्ति ज्ञानविशेषित उपसर्जनीकृतदर्शनादि-रात्मा ज्ञानात्मा सम्यग्दृष्टेः, एवं दर्शनात्मादयोऽपि नवरं दर्शनात्मा सर्वजीवानां, चारित्रात्मा विरतानां, वीर्य-उत्थानादि तदात्मा सर्वसंसारिणामिति, उक्तञ्च-''जीवानां द्रव्यात्मा ज्ञेयः सकषायिणां कषायात्मा । योगः सयोगिनां पुनरुपयोगः सर्वजीवानाम् ॥१॥ ज्ञानं सम्यग्दृष्टेर्दर्शनमथ भवति सर्वजीवानाम्। चारित्रं विरतानां तु सर्वसंसारिणां वीर्यम् ॥२॥'' इति ॥ एवमष्टधाऽऽत्मानं प्ररूप्याथ यस्यात्मभेदस्य यदन्यदात्मभेदान्तरं युज्यते च न युज्यते च तस्य तद्दर्शयितुमाह-'जस्स ण'मित्यादि, इहाष्टौ पदानि स्थाप्यन्ते, तत्र प्रथमपदं शेषैः सप्तभिः सह चिन्त्यते, तत्र यस्य जीवस्य 'द्रव्यात्मा' द्रव्यात्मत्वं जीवत्वमित्यर्थः तस्य कषायात्मा 'स्यादस्ति' कदाचिदस्ति सकषायावस्थायां 'स्यान्नास्ति' कदाचिन्नास्ति क्षीणोपशान्तकषायावस्थायां, यस्य पुनः कषायात्माऽस्ति तस्य द्रव्यात्मा, द्रव्यात्मत्वं जीवत्वं नियमादस्ति, जीवत्वं विना कषायाणामभावादिति । तथा यस्य द्रव्यात्मा तस्य योगात्माऽस्ति, योगवतामिव, नास्ति चायोगिसिद्धानामिव, तथा यस्य योगात्मा तस्य द्रव्यात्मा नियमादस्ति, जीवत्वं विना योगानामभावात्, एतदेव पूर्वसूत्रोप-मानेन दर्शयन्नाह-'एवं जहा दवियाये'त्यादि । तथा यस्य जीवस्य द्रव्यात्मा तस्य नियमादुपयोगात्मा, यस्याप्युपयोगात्मा तस्य नियमाद् द्रव्यात्मा, एतयोः परस्परेणाविनाभूतत्वाद् यथा सिद्धस्य, तदन्यस्य च द्रव्यात्माऽस्त्युपयोगात्मा चोपयोगलक्षणत्वा-ज्जीवानां, एतदेवाह-'जस्स दवियाये'त्यादि । तथा 'जस्स दवियाया तस्स नाणाया भयणाए जस्स पुण नाणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि'त्ति यस्य जीवस्य द्रव्यात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति यथा सम्यग्दृष्टीनां स्यान्नास्ति यथा मिथ्यादृष्टी-नामित्येवं भजना, यस्य तु ज्ञानात्मा तस्य द्रव्यात्मा नियमादस्ति, यथा सिद्धस्येति । 'जस्स दवियाया तस्स दंसणाया नियमं

अत्थि'त्ति यथा सिद्धस्य केवलदर्शनं 'जस्सवि दंसणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि'त्ति यथा चक्षुर्दर्शनादिदर्शनवतां जीवत्वमिति, तथा 'जस्स दवियाया तस्स चरित्ताया भयणाए'त्ति यतः सिद्धस्याविरतस्य वा द्रव्यात्मत्वे सत्यपि चारित्रात्मा नास्ति विरतानां चास्तीति भजनेति, 'जस्स पुण चरित्ताया तस्स दवियाया नियमं अत्थि'त्ति चारित्रिणां जीवत्वाव्यभिचारित्वादिति, 'एवं वीरियायातेवि समं'ति यथा द्रव्यात्मनश्चारित्रात्मना सह भजनोक्ता नियमश्चैवं वीर्यात्मनाऽपि सहेति. तथाहि-यस्य द्रव्यात्मा तस्य वीर्यात्मा नास्ति, यथा सकरणवीर्यापेक्षया सिद्धस्य तदन्यस्य त्वस्तीति भजना, वीर्यात्मनस्तु द्रव्यात्माऽस्त्येव यथा संसारिणामिति ७ ॥ अथ कषायात्मना सहान्यानि षट् पदानि चिन्त्यन्ते-'जस्स ण'मित्यादि, यस्य कषायात्मा तस्य योगात्माऽस्त्येव, नहि सकषायोऽयोगी भवति, यस्य तु योगात्मा तस्य कषायात्मा स्याद्वा न वा, सयोगानां सकषायाणामकषायाणां च भावादिति, 'एवं उवओगायाएवी'त्यादि, अयमर्थः-यस्य कषायात्मा तस्योपयोगात्माऽवश्यं भवति, उपयोगरहितस्य कषायाणामभावात्, यस्य पुनरुपयोगात्मा तस्य कषायात्मा भजनया, उपयोगात्मतायां सत्यामपि कषायिणामेव कषायात्मा भवति निष्कषायाणां तु नासाविति भजनेति, तथा 'कसायाया य नाणाया य परोप्परं दोवि भइयव्वाओ'त्ति, कथम्?, यस्य कषायात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति, यतः कषायिणः सम्यग्दृष्टेर्ज्ञानात्माऽस्ति मिथ्यादृष्टेस्तु तस्य नास्त्यसाविति भजना, तथा यस्य ज्ञानात्मास्ति तस्य कषायात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति, ज्ञानिनां कषायभावात् तदभावाच्चेति भजनेति, 'जहा कसायाया उवओगाया य तहा कसायाया य दंसणाया य'त्ति अतिदेशः, तस्माच्चेदं लब्धं-'जस्स कसायाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि' दर्शनरहितस्य घटादेः कषायात्मनोऽभावात् 'जस्स पुण दंसणाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय नत्थि' दर्शनवतां कषायसद्भावा-

तदभावाच्चेति, दृष्टान्तार्थस्तु प्राक् प्रसिद्ध एवेति, 'कसायाया य चरित्ताया य दोवि परोप्परं भइयव्वाओ'त्ति, भजना चैवं-यस्य कषायात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति, कथं ?, कषायिणां चारित्रस्य सद्भावात् प्रमत्तयतीनामिव तदभावाच्चासंयतानामिवेति, तथा यस्य चारित्रात्मा तस्य कषायात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति, कथं ?, सामायिकादिचारित्रिणां कषायाणां भावाद् यथाख्यातचारित्रिणां च तदभावादिति, 'जहा कसायाया य जोगाया य तहा कसायाया वीरियाया य भाणियव्वाओ'त्ति दृष्टान्तः प्राक् प्रसिद्धः, दार्ष्टान्तिकस्त्वेवं-यस्य कषायात्मा तस्य वीर्यात्मा नियमादस्ति, न हि कषायवान् वीर्यविकलोऽस्ति, यस्य पुनर्वीर्यात्मा तस्य कषायात्मा भजनया, यतो वीर्यवान् सकषायोऽपि स्याद् यथा संयतः अकषायोऽपि स्याद् यथा केवलीति ६। अथ योगात्माऽग्रेतनपदैः पञ्चभिः सह चिन्तनीयस्तत्र च लाघवार्थमतिदिशन्नाह-'एवं जहा कसायायाए वत्तव्वया भणिया तहा जोगायाएवि उवरिमाहिं समं भाणियव्व'त्ति, सा चैवम्-यस्य योगात्मा तस्योपयोगात्मा नियमाद् यथा सयोगानां, यस्य पुनरुपयोगात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति यथा सयोगानां स्यान्नास्ति यथाऽयोगिनां सिद्धानां चेति, तथा यस्य योगात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति सम्यग्दृष्टीनामिव स्यान्नास्ति मिथ्यादृष्टीनामिव, यस्य ज्ञानात्मा तस्यापि योगात्मा स्यादस्ति सयोगिनामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिवेति, तथा यस्य योगात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव योगिनामिव यस्य च दर्शनात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति योगवतामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिव, तथा यस्य योगात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति विरतानामिव स्यान्नास्त्यविरतानामिव, यस्यापि चारित्रात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति सयोगचारित्रवतामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिवेति, वाचनान्तरे पुनरिदमेवं दृश्यते-'जस्स चरित्ताया तस्स जोगाया नियम'त्ति तत्र च चारित्रस्य प्रत्युपेक्षणादिव्यापाररूपस्य विवक्षितत्वात्तस्य च योगाविनाभावित्वात् यस्य चारित्रात्मा तस्य योगात्मा

प्र० आ० ५१०

नियमादित्युच्यत इति. तथा यस्य योगात्मा तस्य वीर्यात्माऽस्त्येव योगसद्भावे वीर्यस्यावश्यम्भावात्, यस्य तु वीर्यात्मा तस्य योगात्मा भजनया यतो वीर्यविशेषवान् सयोगोपि स्याद् यथा सयोगकेवल्यादिः अयोगोपि स्याद् यथाऽयोगिकेवलीति ५ ॥ अथो पयोगात्मना सहान्यानि चत्वारि चिन्त्यन्ते, तत्रातिदेशमाह–'जह दवियाये'त्यादि, एवं च भावना कार्या–यस्योपयोगात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति यथा सम्यग्दृशां स्यान्नास्ति यथा मिथ्यादृशां, यस्य च ज्ञानात्मा तस्यावश्यमुपयोगात्मा सिद्धानामिवेति १, तथा यस्योपयोगात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव यस्यापि दर्शनात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्येव यथा सिद्धादीनामिवेति २, तथा यस्योपयोगात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति यथा संयतानामसंयतानां च, यस्य तु चारित्रात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्येवेति यथा संयतानां ३, तथा यस्योपयोगात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति संसारिणामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव यस्य पुनर्वीर्यात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्येव संसारिणामिवेति ४। अथ ज्ञानात्मना सहान्यानि त्रीणि चिन्त्यन्ते–'जस्स नाणे'त्यादि, तत्र यस्य ज्ञानात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव सम्यग्दृशामिव, यस्य च दर्शनात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति यथा सम्यग्दृशां स्यान्नास्ति यथा मिथ्यादृशामत एवोक्तं 'भयणाए'त्ति १, तथा 'जस्स नाणाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि'त्ति संयतानामिव 'सिय नत्थि'त्ति असंयतानामिव 'जस्स पुण चरित्ताया तस्स नाणाया नियमं अत्थि'त्ति ज्ञानं विना चारित्रस्याभावादिति २. तथा 'णाणाये'त्यादि अस्यार्थः—यस्य ज्ञानात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति केवल्यादीनामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव, यस्यापि वीर्यात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति सम्यग्दृष्टेरिव स्यान्नास्ति मिथ्यादृश इवेति ३ ॥ अथ दर्शनात्मना सह द्वे चिन्त्येते—'जस्स दंसणाये'त्यादि, भावना चास्य–यस्य दर्शनात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति संयतानामिव स्यान्नास्त्यसंयतानामिव, यस्य च चारित्रात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव साधूनामिवेति १,

तथा यस्य दर्शनात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति संसारिणामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव, यस्य च वीर्यात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव संसारिणामिवेति २ ॥ अथान्तिमपदयोर्योजना—'जस्स चरित्ते'त्यादि' यस्य चारित्रात्मा तस्य वीर्यात्माऽस्त्येव, वीर्यं विना चारित्रस्याभावात्, यस्य पुनर्वीर्यात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति साधूनामिव स्यान्नास्त्यसंयतानामिवेति ॥ अधुनैषामेवात्मनामल्पबहुत्वमुच्यते- 'सव्वत्थोवाओ चरित्तायाओ'त्ति चारित्रिणां सङ्ख्यातत्वात् 'णाणायाओ अणंतगुणाओ'त्ति सिद्धादीनां सम्यग्दृशां चारित्रिभ्योऽनन्तगुणत्वात् 'कसायाओ अणंतगुणाओ'त्ति सिद्धेभ्यः कषायोदयवतामनन्तगुणत्वात् 'जोगायाओ विसेसाहियाओ'त्ति अपगतकषायोदयैर्योगवद्भिरधिका इत्यर्थः 'वीरियायाओ विसेसाहियाओ'त्ति अयोगिभिरधिका इत्यर्थः, अयोगिनां वीर्यवत्त्वादिति, 'उवओगदवियदंसणायाओ तिण्णवि तुल्लाओ विसेसाहियाओ'त्ति परस्परापेक्षया तुल्याः, सर्वेषां सामान्यजीवरूपत्वात्, वीर्यात्मभ्यः सकाशादुपयोगद्रव्यदर्शनात्मानो विशेषाधिकाः, यतो वीर्यात्मानः सिद्धाश्च मीलिता उपयोगाद्यात्मानो भवन्ति, ते च वीर्यात्मभ्यः सिद्धराशिनाऽधिका भवन्तीति, भवन्ति चात्र गाथाः—" कोडीसहस्सपुहुत्तं जईण तो थोवियाओ चरणाया । णाणायाऽणंतगुणा पडुच्च सिद्धे य सिद्धाओ ॥ १ ॥ होंति कसायायाओऽणंतगुणा जेण ते सरागाणं । जोगाया भणियाओ अयोगिवज्जाण तो अहिया ॥ २ ॥ जं सेलेसिगयाणवि लद्धीवीरियं तओ समहियाओ । उवयोगदवियदंसण सव्वजियाणं ततो अहिया ॥ ३ ॥ " इति ॥ अथात्मन एव स्वरूपनिरूपणायाह—'आया भंते ! नाणे'इत्यादि, आत्मा ज्ञानं, योऽयमात्माऽसौ ज्ञानं न तयोर्भेदः, अथात्मनोऽन्यज्ज्ञानमिति प्रश्नः, उत्तरं तु—आत्मा स्याज्ज्ञानं सम्यक्त्वे सति मत्यादिज्ञानस्वभावत्वात्तस्य, स्यादज्ञानं मिथ्यात्वे सति तस्य मत्यज्ञानादिस्वभावत्वात्, ज्ञानं पुनर्नियमादात्मा आत्मधर्मत्वाज्ज्ञानस्य, न च सर्वथा धर्मो धर्मिणो भिद्यते, सर्वथा भेदे

हि विप्रकृष्टगुणिनो गुणमात्रोपलब्धौ प्रतिनियतगुणिविषय एव संशयो न स्यात्, तदन्येभ्योऽपि तस्य भेदाविशेषात्, दृश्यते च यदा कश्चिद्दूरिततरुतरुणशाखाविसररन्ध्रोदरान्तरतः किमपि शुक्लं पश्यति तदा किमियं पताका किमियं बलाका ?, इत्येवं प्रतिनियतगुणिविषयोऽसौ, नापि धर्मिणो धर्मः सर्वथैवाभिन्नः, सर्वथैवाभेदे हि संशयानुत्पत्तिरेव, गुणग्रहणत एव गुणिनोऽपि गृहीतत्वादतः कथञ्चिद्भेदपक्षमाश्रित्य ज्ञानं पुनर्नियमादात्मेत्युच्यत इति, इह चात्मा ज्ञानं व्यभिचरति ज्ञानं त्वात्मानं न व्यभिचरति खदिरवनस्पतिवदिति सूत्रगर्भार्थ इति ॥ अमुमेवार्थं दण्डके निरूपयन्नाह- 'आये'त्यादि, नारकाणां 'आत्मा' आत्मस्वरूपं ज्ञानं उतान्यन्नारकाणां ज्ञानं ? तेभ्यो व्यतिरिक्तमित्यर्थः, इति प्रश्नः, उत्तरं तु आत्मा नारकाणां स्याज्ज्ञानं सम्यग्दर्शनभावात् स्यादज्ञानं मिथ्यादर्शनभावात्, ज्ञानं पुनः 'से'त्ति तन्नारकसम्बन्धि आत्मा, न तद्व्यतिरिक्तमित्यर्थः ॥ 'आया भंते ! पुढविक्काइयाण'मित्यादि, 'आत्मा' आत्मस्वरूपमज्ञानमुतान्यत्तत्तेषां ?, उत्तरं तु-आत्मा तेषामज्ञानरूपो, नान्यत्तत्तेभ्य इति भावार्थः । एवं दर्शनसूत्राण्यपि, नवरं सम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्ट्योर्दर्शनस्याविशिष्टत्वादात्मा दर्शनं दर्शनमप्यात्मैवेति वाच्यं, यत्र हि धर्मे विपर्ययो नास्ति तत्र नियम एवोपनीयते न व्यभिचारो यथैव दर्शने, यत्र तु विपर्ययोऽस्ति तत्र व्यभिचारो नियमश्च यथा ज्ञाने, आत्मा ज्ञानरूपोऽज्ञानरूपश्चेति व्यभिचारः, ज्ञानं त्वात्मैवेति नियम इति ॥

आया भंते ! रयणप्पभापु० अन्ना रयणप्पभा पुढवी ?, गोयमा ! रयणप्पभा पुढवी सिय आया सिय नो आया सिय अवत्तव्वं आयाति य नो आयाइ य, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ रयणप्पभा पुढवी सिय आया सिय नो आया सिय अवत्तव्वं आतातिय नो आतातिय?, गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया परस्स आदिट्ठे नो आया

तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं रयणप्पभा पुढवी आयातिय नो आयाति य, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव नो आयातिय। आया भंते! सक्करप्पभा पुढवी जहा रयणप्पभा पुढवी तहा सक्करप्पभाएवि, एवं जाव अहे सत्तमा। आया भंते! सोहम्मे कप्पे पुच्छा, गोयमा! सोहम्मे कप्पे सिय आया सिय नो आया जाव नो आयाति य, से केणट्ठेणं भंते! जाव नो आयातिय?, गोयमा! अप्पणो आइट्ठे आया परस्स आइट्ठे नो आया तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आताति य नो आताति य, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव नो आयाति य, एवं जाव अच्चुए कप्पे। आया भंते! गेविज्जविमाणे अन्ने गेविज्जविमाणे एवं जहा रयणप्पभा तहेव, एवं अणुत्तरविमाणावि, एवं ईसिपब्भारावि। आया भंते! परमाणुपोग्गले अन्ने परमाणुपोग्गले? एवं जहा सोहम्मे कप्पे तहा परमाणुपोग्गलेवि भाणियव्वे॥ आया भंते! दुपएसिए खंधे अन्ने दुपएसिए खंधे?, गोयमा! दुपएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाइ य नो आयातिय ३ सिय आया य नो आया य ४ सिय आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ५ सिय नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ६, से केणट्ठेणं भंते! एवं तं चेव जाव नो आयाति य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य गोयमा! अप्पणो आदिट्ठे आया १ परस्स आदिट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं दुपएसिए खंधे आयाति य नो आयाति य ३ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे दुप्पएसिए खंधे आया य नो आया य ४ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ५ देसे आदिट्ठे असब्भा-

वपज्जये देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ६, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव नो आयाति य॥ आया भंते! तिपएसिए खंधे अन्ने तिपएसिए खंधे?, गोयमा! तिपएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ सिय आया य नो आया य ४ सिय आया य नो आयाओ य ५ सिय आयाओ य नो आया य ६ सिय आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ७ सिय आयाइय अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य ८ सिय आयाओ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ९ सिय नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १० सिय आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य ११ सिय नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १२ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १३, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ तिपएसिए खंधे सिय आया एवं चेव उच्चारेयव्वं जाव सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य?, गोयमा! अप्पणो आइट्ठे आया १ परस्स आइट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नो आया य४ देसे आदिट्ठे सब्भा-वपज्जवे देसा आइट्ठा असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नो आयाओ य ५ देसा आदिट्ठा सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाओ य नो आया य ६ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ७ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसा

आदिट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य ८ देसा आदिट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाओ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ९ एए तिन्नि भंगा, देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे नो आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाति य १० देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे नो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य ११ देसा आदिट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १२ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाइ य १३ से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ तिपएसिए खंधे सिय आया तं चेव जाव नो आयाति य ॥ आया भंते! चउप्पएसिए खंधे अन्ने पुच्छा, गोयमा! चउप्पएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ सिय आया य नो आया य ४ सिय आया य अवत्तव्वं ४ सिय नो आया य अवत्तव्वं ४ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १६ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य १७ सिय आया य नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १८ सिय आयाओ य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १९। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ चउप्पएसिए खंधे सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं तं चेव अट्ठे पडिउच्चारेयव्वं?, गोयमा! अप्पणो आदिट्ठे आया

१ परस्स आदिट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे चउभंगो, सब्भावपज्जवेणं तदुभयेण य चउभंगो, असब्भावेणं तदुभयेण य चउभंगो, देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य, देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा तदुभयपज्जवा चउप्पएसिए खंधे भवइ आया य नो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य १७ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १७ देसा आइट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे असब्भावप० देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आयाओ य नोआया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १९ से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ चउप्पएसिए खंधे सिय आया सिय नो आया सिय अवत्तव्वं निक्खेवे ते चेव भंगा उच्चारेयव्वा जाव नो आयाति य ॥ आया भंते! पंचपएसिए खंधे अन्ने पंचपएसिए खंधे?, गोयमा! पंचपएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ सिय आया य नो आया य सिय अवत्तव्वं ४ नो आया य अवत्तव्वेण य ४ तियगसंजोगे एक्को ण पडइ, से केणट्ठेणं भंते! तं चेव पडिउच्चारेयव्वं?, गोयमा! अप्पणो आदिट्ठे आया १ परस्स आदिट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं ३ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे एवं दुयगसंजोगे सव्वे पडंति, तियगसंजोगे

एक्को ण पडइ। छप्पएसिए सव्वे पडंति, जहा छप्पएसिए एवं जाव अणंतपएसिए। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति ॥ ( सूत्रं ४६९ ) ॥ दसमो उद्देसो संमत्तो ॥ बारसमं सयं संमत्तं ॥ १२-१० ॥

आत्माधिकाराद्रत्नप्रभादिभावानात्मत्वादिभावेन चिन्तयन्नाह-'आया भंते!'इत्यादि, अतति-सततं गच्छति तांस्तान् पर्यायानित्यात्मा ततश्चात्मा-सद्रूपा रत्नप्रभा पृथिवी 'अन्न'त्ति अनात्मा असद्रूपेत्यर्थः 'सिय आया सिय नोआय'त्ति स्यात्सती स्यादसती 'सिय अवत्तव्वं'ति आत्मत्वेनानात्मत्वेन च व्यपदेष्टुमशक्यं वस्त्विति भावः, कथमवक्तव्यम्? इत्याह—आत्मेति च नो आत्मेति च वक्तुमशक्यमित्यर्थः, 'अप्पणो आइट्ठे'त्ति आत्मनः-स्वस्य रत्नप्रभाया एव वर्णादिपर्यायैः 'आदिट्ठे' आदेशे सति तैर्व्यपदिष्टा सतीत्यर्थः आत्मा भवति, स्वपर्यायापेक्षया सतीत्यर्थः, 'परस्स आइट्ठे नोआय'त्ति परस्य शर्करादिपृथिव्यन्तरस्य पर्यायैरादिष्टे-आदेशे सति तैर्व्यपदिष्टा सतीत्यर्थः नोआत्मा-अनात्मा भवति, पररूपापेक्षयाऽसतीत्यर्थः, 'तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं'ति तयोः-स्वपरयोरुभयं तदेव वोभयं तदुभयं तस्य पर्यायैरादिष्टे-आदेशे सति तदुभयपर्यायैर्व्यपदिष्टेत्यर्थः 'अवक्तव्यम्' अवाच्यं वस्तु स्यात्, तथाहि-न ह्यसौ आत्मेति वक्तुं शक्या, परपर्यायापेक्षयाऽनात्मत्वात्तस्याः, नाप्यनात्मेति वक्तुं शक्या, स्वपर्यायापेक्षया तस्या आत्मत्वादिति, अवक्तव्यत्वं चात्मानात्मशब्दापेक्षयैव, न तु सर्वथा, अवक्तव्यशब्देनैव तस्या उच्यमानत्वाद्, अनभिलाप्यभावानामपि भावपदार्थवस्तुप्रभृतिशब्दैरनभिलाप्यशब्देन वाऽभिलाप्यत्वादिति। एवं परमाणुसूत्रमपि ॥ द्विप्रदेशिकसूत्रे षड् भङ्गाः, तत्राद्यास्त्रयः सकलस्कन्धापेक्षाः पूर्वोक्ता एव, तदन्ये तु त्रयो देशापेक्षाः, तत्र च 'गोयमे'त्यत आरभ्य व्याख्यायते—'अप्पणो'त्ति स्वस्य पर्यायैः 'आदिट्ठे'त्ति आदिष्टे-आदेशे सति आदिष्ट इत्यर्थः द्विप्रदेशिकस्कन्ध आत्मा भवति? एवं परस्य

पर्यायैरादिष्टोऽनात्मा २ तदुभयस्य–द्विप्रदेशिकस्कन्धतदन्यस्कन्धलक्षणस्य पर्यायैरादिष्टोऽसाववक्तव्यं वस्तु स्यात्, कथम्?, आत्मेति चानात्मेति चेति ३। तथा द्विप्रदेशत्वात्तस्य देश एक आदिष्टः, सद्भावप्रधानाः–सत्तानुगताः पर्यवा यस्मिन् स सद्भावपर्यवः, अथवा तृतीयाबहुवचनमिदं स्वपर्यवैरित्यर्थः, द्वितीयस्तु देश आदिष्टः असद्भावपर्यवः परपर्यायैरित्यर्थः, परपर्यवाश्च तदीयद्वितीयदेशसम्बन्धिनो वस्त्वन्तरसम्बन्धिनो वेति, ततश्चासौ द्विप्रदेशिकः स्कन्धः क्रमेणात्मा च नोआत्मा चेति ४, तथा तस्य देश आदिष्टः सद्भावपर्यवो देशश्चोभयपर्यवस्ततोऽसावात्मा चावक्तव्यं चेति ५, तथा तस्यैव देश आदिष्टोऽसद्भावपर्यवो देशस्तूभयपर्यवस्ततोऽसौ नोआत्मा चावक्तव्यं च स्यादिति ६, सप्तमः पुनरात्मा च नोआत्मा चावक्तव्यं चेत्येवंरूपो न भवति द्विप्रदेशिके, द्व्यंशत्वाद् अस्य त्रिप्रदेशिकादौ तु स्यादिति सप्तभङ्गी ॥ त्रिप्रदेशिकस्कन्धे तु त्रयोदश भङ्गास्तत्र पूर्वोक्तेषु सप्तस्वाद्याः सकलादेशास्त्रयस्तथैव, तदन्येषु तु त्रिषु त्रयस्त्रय एकवचनबहुवचनभेदात्, सप्तमस्त्वेकविध एव, स्थापना चेयम्—

| आ १ | नो १ | अव १ |
| --- | --- | --- |
| आ १ १ २ | नो १ २ १ | |
| आ १ १ २ | | अव १ २ १ |
| | नो १ १ २ | अव १ २ १ |
| आ १ | नो १ | अव १ |

यच्चेह प्रदेशद्वयेऽप्येकवचनं क्वचित्तत्तस्य प्रदेशद्वयस्यैकप्रदेशावगाढत्वादिहेतुनैकत्वविवक्षणात्, भेदविवक्षायां च बहुवचनमिति॥ चतुष्प्रदेशिकेऽप्येवं, नवरमेकोनविंशतिर्भङ्गाः, तत्र त्रयः सकलादेशाः तथैव, शेषेषु चतुर्षु प्रत्येकं चत्वारो विकल्पाः, ते चैवं चतुर्थादिषु त्रिषु

| १ | २ | १ | २ |
| --- | --- | --- | --- |
| १ | १ | २ | २ |

सप्तमस्त्वेवम्—

| १ | २ | १ | १ |
| --- | --- | --- | --- |
| १ | १ | २ | १ |
| १ | १ | १ | २ |

॥ पञ्चप्रदेशिके तु द्वाविंशतिस्तत्राद्यास्त्रयस्तथैव, तदुत्तरेषु च त्रिषु प्रत्येकं चत्वारो विकल्पास्तथैव, सप्तमे तु सप्त, तत्र त्रिकसंयोगे किलाष्टौ भङ्गका भवन्ति, तेषु च सप्तैवेह ग्राह्याः, एकस्तु तेषु न पतत्यसम्भवात्, इदमेवाह—'तिगसंजोगे'त्यादि, तत्रैतेषां स्थापना—

| ७ | ४ | ७ | ४ | ७ | ४ | ७ |
|---|---|---|---|---|---|---|
| ७ | ७ | ४ | ४ | ७ | ७ | ४ |
| ७ | ७ | ७ | ७ | ४ | ४ | ४ |

यश्च न पतति स पुनरयम् २२२, षट्प्रदेशिके त्रयोविंशतिरिति ॥ द्वादशशते दशमः ॥ १२–१० ॥ समाप्तं च द्वादशशतविवरणम् ॥ १२ ॥

गम्भीररूपस्य महोदधेर्यत्, पोतः परं पारमुपैति मङ्क्षु । गतावशक्तोऽपि निजप्रकृत्या, कस्याप्यदृष्टस्य विजृम्भितं तत् ॥ १ ॥

व्याख्यातं द्वादशं शतं, तत्र चानेकधा जीवादयः पदार्था उक्ताः, त्रयोदशशतेऽपि त एव भङ्ग्यन्तरेणोच्यन्त इत्येवंसम्बन्धमिदं व्याख्यायते, तत्र पुनरियमुद्देशकसंग्रहगाथा—

पुढवी १ देव २ मणंतर ३ पुढवी ४ आहारमेव ५ उववाए ६ । भासा ७ कम ८ अणगारे केयाघडिया ९ समुग्घाए १० ॥७३॥ रायगिहे जाव एवं वयासी-कति णं भंते ! पुढवीओ पन्नत्ताओ?, गोयमा ! सत्त पुढवीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-रयणप्पभा जाव अहेसत्तमा । इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए केवतिया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता?, गोयमा ! तीसं निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडावि असंखेज्जवित्थडावि, इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं केवतिया नेरइया उववज्जंति १ ? केवतिया काउलेस्सा उववज्जंति २ ? केवइया कण्हपक्खिया उववज्जंति ३ ? केवतिया सुक्कपक्खिया उववज्जंति ४ ? केवतिया सन्नी उववज्जंति ५ ? केवतिया असन्नी उववज्जंति ६ ? केवतिया भवसिद्धीया उव० ७ ? केवतिया अभवसिद्धीया उवव० ८ ? केवतिया

आभिणिबोहियनाणी उव० ९? केवइया सुयनाणी उव० १०? केवइया ओहिनाणी उववज्जंति ११? केवइया मइअन्नाणी उवव० १२? केवइया सुयअन्नाणी उव० १३? केवइया विब्भंगनाणी उवव० १४? केवइया चक्खुदंसणी उव० १५? केवइया अचक्खुदंसणी उवव० १६? केवइया ओहिदंसणी उवव० १७? केवइया आहारसन्नोवउत्ता उवव० १८? केवइया भयसन्नोवउत्ता उव० १९? केवइया मेहुणसन्नोवउत्ता उवव २०? केवइया परिग्गहसन्नोवउत्ता उवव० २१? केवइया इत्थिवेयगा उवव० २२? केवइया पुरिसवेदगा उवव० २३? केवइया नपुंसगवेदगा उवव० २४? केवइया कोहकसाई उवव० २५? जाव केवइया लोभकसायी उवव० २८? केवइया सोइंदियउवउत्ता उव० २९? जाव केवइया फासिंदियोवउत्ता उव० ३३? केवइया नोइंदियोवउत्ता उव० ३४? केवतिया मणजोगी उवव० ३५? केवतिया वइजोगी उवव० ३६? केवतिया कायजोगी उवव० ३७? केवतिया सागारोवउत्ता उवव० ३८? केवतिया अणागारोवउत्ता उवव० ३९?, गोयमा! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नेरइया उ०, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्को० संखेज्जा काउलेस्सा उव०, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा कण्हपक्खिया उव०, एवं सुक्कपक्खियावि, एवं सन्नी एवं असन्नीवि एवं भवसिद्धीया एवं अभवसिद्धिया आभिणिबोहियना० सुयना० ओहिना० मइअन्नाणी सुयअन्नाणी विभंगना०, चक्खुदंसणी ण उवव०, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसे० संखे० अचक्खुदंसणी उवव०, एवं ओहिदंसणीवि आहारसन्नोवउत्तावि जाव

परिग्गहसन्नोवउ०, इत्थीवेयगा न उव० पुरिसवेयगावि न उव०, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नपुंसगवेदगा उवव० एवं कोहकसाई जाव लोभ०, सोइंदियउवउत्ता न उवव० एवं जाव फासिंदिओवउत्ता न उवव०, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नोइंदिओवउत्ता उववज्जंति, मणजोगी ण उववज्जंति एवं वइजोगीवि, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा कायजोगी उववज्जंति, एवं सागारोवउत्तावि, एवं अणागारोवउत्तावि ॥ इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं केवइया नेरइया उववट्टंति ? केवतिया काउलेस्सा उववट्टंति ? जाव केवतिया अणागारोवउत्ता उव्वट्टंति?, गोयमा! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नेरइया उववट्टंति, एवं जाव सन्नी, असन्नी ण उव्वट्टंति, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा भवसिद्धीया उव्वट्टंति एवं जाव सुयअन्नाणी, विभंगनाणी ण उववट्टंति, चक्खुदंसणी ण उववट्टंति, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा अचक्खुदंसणी उव्वट्टंति, एवं जाव लोभकसायी, सोइंदियउवउत्ता ण उव्वट्टंति एवं जाव फासिंदियोवउत्ता न उव्वट्टंति, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नोइंदियोवउत्ता उव्वट्टंति, मणजोगी न उव्वट्टंति एवं वइजोगीवि, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा कायजोगी उव्वट्टंति एवं सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता ॥ इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु

नरएसु केवइया नेरइया पन्नत्ता ? केवइया काउलेस्सा जाव केवतिया अणागारोवउत्ता पन्नत्ता ? केवतिया अणंतरोववन्नगा पन्नत्ता१? केवइया परंपरोववन्नगा पन्नत्ता२ ? केवइया अणंतरोगाढा पन्नत्ता३ ? केवइया परंपरोगाढा प० ४? केवइया अणंतराहारा पं० ५ ? केवतिया परंपराहारा पं०६ ? केवतिया अणंतरपज्जत्ता प० ७ ? केवतिया परंपरपज्जत्ता पन्नत्ता ८? केवतिया चरिमा प० ९ ? केवतिया अचरिमा पं० १० ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु संखेज्जा नेरतिया प० संखेज्जा काउलेसा प० एवं जाव संखेज्जा सन्नी प०, असन्नी सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा प०, संखेज्जा भवसिद्धीया प० एवं जाव संखेज्जा परिग्गहसन्नोवउत्ता प० इत्थिवेदगा नत्थि, पुरिसवेदगा नत्थि, संखेज्जा नपुंसगवेदगा प०, एवं कोहकसायीवि माणकसाई जहा असन्नी, एवं जाव लोभक०, संखेज्जा सोइंदियोवउत्ता प० एवं जाव फार्सिदियोवउत्ता, नोइंदियोवउत्ता जहा असन्नी, संखेज्जा मणजोगी प० एवं जाव अणागारोवउत्ता, अणंतरोववन्नगा सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहा असन्नी, संखेज्जा परंपरोववन्न० प०, एवं जहा अणंतरोववन्नगा तहा अणंतरोगाढगा अणंतराहारगा अणंतरपज्जत्तगा, परंपरोगाढगा जाव अचरिमा जहा परंपरोववन्नगा ॥ इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्जवित्थडेसु एगसमएणं केवतिया नेरइया उववज्जंति जाव केवतिया अणागारोवउत्ता उववज्जंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं जह० एक्को वा दो वा तिन्नि

प्र०आ०५१७

वा उक्को० असंखेज्जा नेरइया उवव०, एवं जहेव संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा तहा असंखेज्जवित्थडेसुवि तिन्नि गमगा, नवरं असंखेज्जा भा०, सेसं तं चेव जाव असंखेज्जा अचरिमा प०, नाणत्तं लेस्सासु, लेसाओ जहा पढमसए नवरं संखेज्जवित्थडेसुवि असंखेज्जवित्थडेसुवि ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा उव्वट्टावेयव्वा, सेसं तं चेव ॥ सक्करप्पभाए णं भंते! पुढवीए केवतिया निरयावास० पुच्छा, गोयमा! पणवीसं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा, एवं जहा रयणप्पभाए तहा सक्करप्पभाएवि, नवरं असन्नी तिसुवि गमएसु न भन्नति, सेसं तं चेव। वालुयप्पभाए णं पुच्छा, गोयमा! पन्नरस निरयावाससयसहस्सा प० सेसं जहा सक्करप्पभाए, णाणत्तं लेसासु, लेसाओ जहा पढमसए॥ पंकप्पभाए पुच्छा, गोयमा! दस निरयावास०, एवं जहा सक्करप्पभाए, नवरं ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उव्वट्टंति, सेसं तं चेव॥ धूमप्पभाए णं पुच्छा, गोयमा! तिन्नि निरयावाससयसहस्सा एवं जहा पंकप्पभाए॥ तमाए णं भंते! पुढवीए केवतिया निरयावास० पुच्छा, गोयमा! एगे पंचूणे निरयावाससयसहस्से पण्णत्ते, सेसं जहा पंकप्पभाए॥ अहेसत्तमाए णं भंते! पुढवीए कति अणुत्तरा महतिमहालया महानिरया पन्नत्ता?, गोयमा! पंच अणुत्तरा जाव अपइट्ठाणे, ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा?, गोयमा! संखेज्जवित्थडे य असंखेज्जवित्थडा य, अहेसत्तमाए णं भंते! पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालय जाव महानिरएसु संखेज्जवित्थडे नरए एगसमएणं केवतिया उ०?, एवं जहा पंकप्पभाए, नवरं तिसु नाणेसु न उवव० न उव्वट्टं०, पन्नत्ता एसु तहेव अत्थि, एवं असंखेज्जवि-

त्थडेसुवि नवरं असंखेज्जा भाणियव्वा ॥ ( सूत्रं ४७० ) ॥ इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवि० नरएसु किं सम्मदिट्ठी नेरतिया उवव० मिच्छादिट्ठी ने० उव० सम्मामिच्छादिट्ठी नेर० उ०?, गोयमा ! सम्मदिट्ठीवि नेरइया उव० मिच्छादिट्ठीवि नेरइया उव० नो सम्मामिच्छादिट्ठी उव० । इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु किं सम्मदिट्ठी नेर० उव्वट्टंति?, एवं चेव। इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडा नरगा किं सम्मदिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया मिच्छादिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया सम्मामिच्छादिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया वा ?, गोयमा ! सम्मदिट्ठीहिवि नेरइएहिं अविरहिया मिच्छादिट्ठीहिवि० अविरहिया, सम्मामिच्छादिट्ठीहिं० अविरहिया विरहिया वा, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि तिन्नि गमगा भाणियव्वा, एवं सक्करप्पभाएवि, एवं जाव तमाएवि। अहेसत्तमाए णं भंते! पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु जाव संखेज्जवित्थडे नरए किं सम्मदिट्ठी नेरइया पुच्छा, गोयमा ! सम्मदिट्ठी नेरया न उवव० मिच्छादिट्ठीनेरइया उवव० सम्मामिच्छादिट्ठी नेरइया न उवव०, एवं उव्वट्टंतिवि, अविरहिए जहेव रयणप्पभाए, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि तिन्नि गमगा ॥(सूत्रं ४७१) से नूणं भंते ! कण्हलेस्से नीललेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता कण्हलेस्सेसु नेरइएसु उवव० ?, हंता गोयमा ! कण्हलेस्से जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ कण्हलेस्से जाव उववज्जंति ?, गोयमा ! लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु संकि० २ कण्हलेसं परिणमइ कण्ह० २ कण्हलेसेसु नेरइएसु उववज्जंति, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति । से नूणं

भंते ! कण्हलेस्से जाव सुक्कलेसे भवित्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति ?, हंता गोयमा ! जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं जाव उववज्जंति ?, गोयमा ! लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु वा विसुज्झमाणेसु वा नीललेस्सं परिणमंति नील० २ नीललेस्सेसु नेरइएसु उवव०, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव उवव०, से नूणं भंते ! कण्हलेस्से नील जाव भवित्ता काउलेस्सेसु नेरइएसु उवव० एवं जहा नीललेस्साए तहा काउलेस्सावि भाणियव्वा जाव से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! ( सूत्रं ४७२ ) ॥ तेरसमे पढमो १३-१ ॥

'पुढवी'त्यादि, 'पुढवी'ति नरकपृथिवीविषयः प्रथमः १, 'देव'त्ति देवप्ररूपणार्थो द्वितीयः २ 'अणंतर'त्ति अनन्तराहारा नारका इत्याद्यर्थप्रतिपादनपरस्तृतीयः ३, 'पुढवि'त्ति पृथिवीगतवक्तव्यताप्रतिबद्धश्चतुर्थः ४, 'आहारे'त्ति नारकाद्याहारप्ररूपणार्थः पञ्चमः ५ 'उववाए'त्ति नारकाद्युपपातार्थः षष्ठः ६, 'भास'त्ति भाषार्थः सप्तमः ७ 'कम्म'त्ति कर्म्मप्रकृतिप्ररूपणार्थोऽष्टमः ८, 'अणगारे केयाघडिय'त्ति अनगारो-भावितात्मा लब्धिसामर्थ्यात् 'केयाघडिय'त्ति रज्जुबद्धघटिकाहस्तः सन् विहायसि व्रजेदित्यर्थप्रतिपादनार्थो नवमः ९ 'समुग्घाए'त्ति समुद्घातप्रतिपादनार्थो दशम इति१० । तत्र प्रथमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते—'केवइया काउलेसा उववज्जंति'त्ति रत्नप्रभापृथिव्यां कापोतलेश्या एवोत्पद्यन्ते, न कृष्णलेश्यादय इति कापोतलेश्यानेवाश्रित्य प्रश्नः कृत इति । 'केवइया कण्हपक्खिए'इत्यादि, एषां च लक्षणमिदं—" जेसिमवड्ढो पोग्गलपरियट्टो सेसओ उ संसारो । ते सुक्कपक्खिया खलु अहिगे पुण कण्हपक्खीया ॥ १ ॥ " इति । 'चक्खुदंसणी न उववज्जंति'त्ति इन्द्रियत्यागेन तत्रोत्पत्तेरिति, तर्हि अचक्षुर्दर्शनिनः कथमुत्पद्यन्ते ?, उच्यते, इन्द्रियानाश्रितस्य सामान्योपयोगमात्रस्याचक्षुर्दर्शनशब्दाभिधेयस्योत्पादसमयेऽपि भावादचक्षुर्दर्श-

निन उत्पद्यन्त इत्युच्यत इति, 'इत्थीवेयगे'त्यादि, स्त्रीपुरुषवेदा नोत्पद्यन्ते भवप्रत्ययान्नपुंसकवेदत्वात्तेषां, 'सोइंदियोवउत्ता'-इत्यादि श्रोत्राद्युपयुक्ता नोत्पद्यन्ते इन्द्रियाणां तदानीमभावात् 'नोइंदिओवउत्ता उववज्जंति'त्ति नोइन्द्रियं-मनस्तत्र च यद्यपि मनःपर्याप्त्यभावे द्रव्यमनो नास्ति तथाऽपि भावमनसश्चैतन्यरूपस्य सदा भावात्तेनोपयुक्तानामुत्पत्तेर्नोइन्द्रियोपयुक्ता उत्पद्यन्त इत्युच्यत इति, 'मणजोगी'त्यादि मनोयोगिनो वाग्योगिनश्च नोत्पद्यन्ते, उत्पत्तिसमयेऽपर्याप्तकत्वेन मनोवाचोरभावादिति, 'कायजोगी उववज्जंति'त्ति सर्वसंसारिणां काययोगस्य सदैव भावादिति ॥ अथ रत्नप्रभानारकाणामेवोद्वर्त्तनामभिधातुमाह—'इमीसे ण'मित्यादि, 'असन्नी न उववट्टंति'त्ति उद्वर्त्तना हि परभवप्रथमसमये स्यात् न च नारका असञ्ज्ञिषूत्पद्यन्तेऽतस्तेऽसञ्ज्ञिनः सन्तो नोद्वर्त्तन्त इत्युच्यते, एवं 'विभंगनाणी न उववट्टंती'त्यपि भावनीयं, शेषाणि तु पदान्युत्पादवद्व्याख्येयानि, उक्तश्च चूर्ण्याम्—"असन्निणो य विब्भंगिणो य उव्वट्टणाइ वज्जेज्जा। दोसुवि य चक्खुदंसणी मणवइ तह इंदियाइं वा ॥ १ ॥" इति ॥ अनन्तरं रत्नप्रभानारकाणामुत्पादे उद्वर्त्तनायां च परिमाणमुक्तमथ तेषामेव सत्तायां तदाह—'इमीसे ण'मित्यादि, 'केवइया अणंतरोववन्नग'त्ति कियन्तः प्रथमसमयोत्पन्नाः? इत्यर्थः 'परंपरोववन्नग'त्ति उत्पत्तिसमयापेक्षया द्व्यादिसमयेषु वर्त्तमानाः 'अणंतरावगाढ'त्ति विवक्षितक्षेत्रे प्रथमसमयावगाढाः 'परंपरोगाढ'त्ति विवक्षितक्षेत्रे द्वितीयादिकः समयोऽवगाढे येषां ते परम्परावगाढाः 'केवइया चरिम'त्ति चरमो नारकभवेषु स एव भवो येषां ते चरमाः, नारकभवस्य वा चरमसमये वर्त्तमानाश्चरमाः, अचरमास्त्वितरे, 'असन्नी सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति असञ्ज्ञिभ्य उद्वृत्य ये नारकत्वेनोत्पन्नास्तेऽपर्याप्तकावस्थायामसञ्ज्ञिनो, भूतभावत्वात्, ते चाल्पा इतिकृत्वा 'सिय अत्थी'त्याद्युक्तं, मानमायालोभकषायोपयुक्तानां नोइन्द्रियोपयुक्तानामनन्तरोपपन्नानामनन्तरावगाढानाम-

नन्तराहारकाणामनन्तरपर्याप्तकानां च कादाचित्कत्वात् 'सिय अत्थि'इत्यादि वाच्यं, शेषाणां तु बहुत्वात्सङ्ख्याता इति वाच्यमिति॥ अनन्तरं सङ्ख्यातविस्तृतनरकावासनारकवक्तव्यतोक्ता, अथ तद्विपर्ययवक्तव्यतामभिधातुमाह—'इमीसे ण'मित्यादि, 'तिन्नि गमग'त्ति 'उववज्जंति उव्वट्टंति पन्नत्त'त्ति एते त्रयो गमाः, 'ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा उव्वट्टावेयव्व'त्ति, कथं?, ते हि तीर्थङ्करादय एव भवन्ति, ते च स्तोकाः स्तोकत्वाच्च सङ्ख्याता एवेति, 'नवरं असन्नी तिसुवि गमएसु न भन्नति' कस्मात्?, उच्यते-असञ्ज्ञिनः प्रथमायामेवोत्पद्यन्ते 'अस्सन्नी खलु पढमं' इति वचनादिति, 'णाणत्तं लेसासु, लेसाओ जहा पढमसए'त्ति, इहाद्यपृथिवीद्वयापेक्षया तृतीयादिपृथिवीषु नानात्वं लेश्यासु भवति, ताश्च यथा प्रथमशते तथाऽध्येयाः, तत्र च सङ्ग्रहगाथेयं-"काऊ दोसु तइयाइ मीसिया नीलिया चउत्थीए। पंचमियाए मीसा कण्हा तत्तो परमकण्हा ॥ १ ॥" इति, 'नवरं ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उव्वट्टंति'त्ति, कस्मात्?, उच्यते, ते हि प्रायस्तीर्थकरा एव, ते च चतुर्थ्या उद्वृत्ता नोत्पद्यन्त इति, 'जाव अपइट्ठाणे'त्ति इह यावत्करणात् 'काले महाकाले रोरुए महारोरुए'त्ति दृश्यम्, इह च मध्यम एव सङ्ख्येयविस्तृत इति, 'नवरं तिसु णाणेसु न उववज्जंति न उव्वट्टंति'त्ति सम्यक्त्वभ्रष्टानामेव तत्रोत्पादात् तत उद्वर्त्तनाच्चाद्येषु त्रिषु ज्ञानेषु नोत्पद्यन्ते नापि चोद्वर्त्तन्त इति 'पन्नत्ता एसु तहेव अत्थि'त्ति एतेषु पञ्चसु नरकावासेषु कियन्त आभिनिबोधिकज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनोऽवधिज्ञानिनश्च प्रज्ञप्ताः? इत्यत्र तृतीयगमे तथैव-प्रथमादिपृथिवीष्विव सन्ति, तत्रोत्पन्नानां सम्यग्दर्शनलाभे आभिनिबोधिकादिज्ञानत्रयभावादिति॥ अथ रत्नप्रभादिनारकवक्तव्यतामेव सम्यग्दृष्ट्यादीनाश्रित्याह—'इमीसे ण'मित्यादि, 'नो सम्मामिच्छादिट्ठी उववज्जंति'त्ति "न सम्ममिच्छो कुणइ काल" मिति वचनात् मिश्रदृष्टयो न म्रियन्ते नापि तद्भवप्रत्ययं तेषामवधिज्ञानं स्यात्

येन मिश्रदृष्टयः सन्तस्ते उत्पद्येरन्, 'सम्मामिच्छदिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया विरहिया व'त्ति कादाचित्कत्वेन तेषां विरहसंभवादिति ॥ अथ नारकवक्तव्यतामेव भङ्ग्यन्तरेणाह—'से नूण'मित्यादि, 'लेसट्ठाणेसु'त्ति लेश्याभेदेषु 'संकिलिस्समाणेसु'त्ति अविशुद्धिं गच्छत्सु 'कण्हलेसं परिणमइ'त्ति कृष्णलेश्यां याति, ततश्च 'कण्हलेसे'त्यादि । 'संकिलिस्समाणेसु वा विसुद्धमाणे व'त्ति प्रशस्तलेश्यास्थानेषु अविशुद्धिं गच्छत्सु अप्रशस्तलेश्यास्थानेषु च विशुद्धिं गच्छत्सु नीललेश्यां परिणमतीति भावः ॥ त्रयोदशशते प्रथमः ॥ १३-१ ॥

---

प्रथमोद्देशके नारका उक्ताः, द्वितीये त्वौपपातिकत्वसाधर्म्याद्देवा उच्यन्ते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदं सूत्रम्—

कइविहा णं भंते ! देवा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चउव्विहा देवा पन्नत्ता, तंजहा-भवणवासी वाणमंतरा जो॰ वेमा॰ । भवणवासी णं भंते ! देवा कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! दसविहा पण्णत्ता, तंजहा--असुरकुमारा एवं भेओ जहा बितियसए देवुद्देसए जाव अपराजिया सव्वट्ठसिद्धगा । केवइया णं भंते ! असुरकुमारावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चोसट्ठिं असुरकुमारावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवि॰ ?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडावि असंखेज्जवि॰, चोसट्ठी णं भंते ! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु असुरकुमारावासेसु एगसमएणं केवतिया असुरकुमारा उवव॰ जाव केवतिया तेउलेसा उवव॰ केवतिया कण्हपक्खिया उववज्जंति एवं जहा रयणप्पभाए तहेव पुच्छा तहेव वागरणं नवरं दोहिं वेदेहिं उववज्जंति,

नपुंसगवेयगा न उवव०, सेसं तं०, उव्वट्टंतगावि तहेव नवरं असन्नी उव्वट्टंति, ओहिनाणी ओहिदंसणी य ण उव्वट्टंति, सेसं तं चेव, पन्नत्त एसु तहेव नवरं संखेज्जगा इत्थिवेदगा पण्णत्ता एवं पुरिसवेदगावि, नपुंसगवेदगा नत्थि, कोहकसाई सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जह० एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा पण्णत्ता एवं माण० माया० संखेज्जा लोभकसाई पण्णत्ता सेसं तं चेव तिसुवि गमएसु संखेज्जेसु चत्तारि लेस्साओ भाणियव्वाओ, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि नवरं तिसुवि गमएसु असंखेज्जा भाणियव्वा जाव असंखेज्जा अचरिमा पण्णत्ता। केवतिया णं भंते! नागकुमारावास० ? एवं जाव थणियकुमारा, नवरं जत्थ जत्तिया भवणा॥ केवत्तिया णं भंते! वाणमंतरावाससयसहस्सा पन्नत्ता ?, गोयमा! असंखेज्जा वाणमंतरावाससयसहस्सा पन्नत्ता, ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा?, गोयमा! संखेज्जवित्थडा, नो असंखेज्जवित्थडा, संखेज्जेसु णं भंते! वाणमंतरावाससयसहस्सेसु एगसमएणं केवतिया वाणमंतरा उवव० ? एवं जहा असुरकुमाराणं संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा तहेव भाणियव्वा वाणमंतराणवि तिन्नि गमगा। केवतिया णं भंते! जोतिसियविमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?, गोयमा! असंखेज्जा जोइसियविमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा० ?, एवं जहा वाणमंतराणं तहा जोइसियाणवि तिन्नि गमगा भाणियव्वा नवरं एगा तेउलेस्सा, उववज्जंतेसु पन्नत्तेसु य असन्नी नत्थि, सेसं तं चेव॥ सोहम्मे णं भंते! कप्पे केवतिया विमाणावाससयसहस्सा पन्नत्ता ?, गोयमा! बत्तीसं विमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ?, गोयमा! संखेज्ज-

वित्थडावि असंखेज्जवित्थडावि, सोहम्मे णं भंते ! कप्पे बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु विमाणेसु एगसमएणं केवतिया सोहम्मा देवा उववज्जंति ? केवइया तेउलेसा उववज्जंति ? एवं जहा जोइसियाणं तिन्नि गमगा तहेव तिन्नि गमगा भाणियव्वा, नवरं तिसुवि संखेज्जा भाणियव्वा, ओहिनाणी ओहिदंसणी य चवावेयव्वा, सेसं तं चेव। असंखेज्जवित्थडेसु एवं चेव तिन्नि गमगा, णवरं तिसुवि गमएसु असंखेज्जा भाणियव्वा, ओहिनाणी य ओहिदंसणी य संखेज्जा चयंति, सेसं तं चेव, एवं जहा सोहम्मे वत्तव्वया भणिया तहा ईसाणेवि छ गमगा भाणियव्वा, सणंकुमारे एवं चेव, नवरं इत्थीवेयगा न उववज्जंति, पन्नत्तेसु य न भण्णंति, असन्नी तिसुवि गमएसु न भण्णंति, सेसं तं चेव, एवं जाव सहस्सारे, नाणत्तं विमाणेसु लेस्सासु य, सेसं तं चेव॥ आणयपाणयेसु णं भंते ! कप्पेसु केवतिया विमाणावाससया पण्णत्ता ?, गोयमा ! चत्तारि विमाणावाससया पण्णत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्ज० असंखेज्ज०, गोयमा ! संखेज्जवित्थ० असंखेज्जवि० एवं संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा जहा सहस्सारे असंखेज्जवित्थडे० उववज्जंतेसु य चयंतेसु य एवं चेव संखेज्जा भाणियव्वा, पन्नत्तेसु असंखेज्जा, नवरं नोइंदियोवउत्ता अणंतरोववन्नगा अणंतरोगाढगा अणंतराहारगा अणंतरपज्जत्तगा य एएसिं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा पं० सेसा असंखेज्जा भाणियव्वा। आरणच्चुएसु एवं चेव जहा आणयपाणएसु, नाणत्तं विमाणेसु, एवं गेवेज्जगावि। कति णं भंते ! अणुत्तरविमाणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंच अणुत्तरविमाणा पन्नत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडे य असंखेज्जवित्थडा य, पंचसु

णं भंते! अणुत्तरविमाणेसु संखेज्जवित्थडे विमाणे एगसमएणं केवतिया अणुत्तरोववाइया देवा उवव० ?, केवतिया सुक्कलेस्सा उवव० ?, पुच्छा, तहेव गोयमा! पंचसु णं अणुत्तरविमाणेसु संखेज्जवित्थडे अणुत्तरविमाणे एगसमएणं जह० एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा अणुत्तरोववाइया देवा उववज्जंति एवं जहा गेवेज्जविमाणेसु संखेज्जवित्थडेसु, नवरं किण्हपक्खिया अभवसिद्धिया तिसु अन्नाणेसु एए न उववज्जंति न चयंति न पन्नत्तएसु भाणियव्वा, अचरिमावि खोडिज्जंति जाव संखेज्जा चरिमा पं० सेसं तं०, असंखेज्जवित्थडेसुवि एए न भन्नंति, नवरं अचरिमा अत्थि, सेसं जहा गेवेज्जएसु असंखेज्जवित्थडेसु जाव असंखेज्जा अचरिमा प०। चोसट्ठीए णं भंते! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु असुरकुमारावासेसु किं सम्मदिट्ठी असुरकुमारा उवव० मिच्छादिट्ठी एवं जहा रयणप्पभाए तिन्नि आलावगा भणिया तहा भाणियव्वा, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि तिन्नि गमगा, एवं जाव गेवेज्जवि० अणुत्तरवि० एवं चेव, नवरं तिसुवि आलावएसु मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी य न भन्नंति, सेसं तं चेव। से नूणं भंते! कण्हलेस्सा नीलजाव सुक्कलेस्से भवित्ता कण्हलेस्सेसु देवेसु उवव० ?, हंता गोयमा! एवं जहेव नेरइएसु पढमे उद्देसए तहेव भाणियव्वं, नीललेसाएवि जहेव नेरइयाणं जहा नीललेसाए, एवं जाव पम्हलेस्सेसु सुक्कलेस्सेसु एवं चेव, नवरं लेसट्ठाणेसु विसुज्झमाणेसु वि० २ सुक्कलेस्सं परिणमति सु० २ सुक्कलेस्सेसु देवेसु उववज्जंति, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति। सेवं भंते! सेवं भंते! (सूत्र ४७३) ॥ १३-२ ॥

'कइविहे'त्यादि, 'संखेज्जवित्थडावि असंखेज्जवित्थडावि'त्ति, इह गाथा—"जंबुद्दीवसमा खलु भवणा जे हुंति सव्वखु-

डागा । संखेज्जवित्थडा मज्झिमा उ सेसा असंखेज्जा ॥१॥'' इति, 'दोहिवि वेएहिं उववज्जंति'त्ति उभयोरपि स्त्रीपुंवेदयोरुत्पद्यमानानां, तयोरेव तेषु भावात्, 'असण्णी उव्वट्टंति'त्ति असुरादीनामनन्तरोद्वृत्तानामसञ्ज्ञिष्वपि पृथिव्यादिषूत्पादात्, 'ओहिनाणी ओहि-दंसणी य न उव्वट्टंति'त्ति असुराद्युद्वृत्तानां तीर्थंकरादित्वालाभात् तीर्थंकरादीनामेवावधिमतामुद्वर्त्तनात्; 'पण्णत्तएसु तहेव'त्ति 'प्रज्ञप्तकेषु' प्रज्ञप्तपदोपलक्षितगमाधीतेष्वसुरकुमारेषु तथैव यथा प्रथमोद्देशके। 'कोहकसाई'इत्यादि, क्रोधमानमायाकषायोदयवन्तो देवेषु कादाचित्का अत उक्तं 'सिय अत्थी'त्यादि, लोभकषायोदयवन्तस्तु सार्वदिका अत उक्तं 'संखेज्जा लोभकसाई पन्नत्ता'-त्ति, 'तिसुवि गमएसु चत्तारि लेसाओ भाणियव्वाओ'त्ति 'उववज्जंति उव्वट्टंति पन्नत्ता'इत्येवंलक्षणेषु त्रिष्वपि गमेषु चतस्रो लेश्यास्तेजोलेश्यान्ता भणितव्याः, एता एव हि असुरकुमारादीनां भवन्तीति. 'जस्स जत्तिया भवणा'त्ति यत्र निकाये यावन्ति भवनलक्षाणि तत्र तावन्त्युच्चारणीयानि, यथा—''चउसट्ठी असुराणं नागकुमाराण होइ चुलसीई । बावत्तरि कणगाणं वाउ-कुमाराण छन्नउई ॥ १ ॥ दीवदिसाउदहीणं विज्जुकुमारिंदथणियमग्गीणं । जुयलाणं पत्तेयं छावत्तरिमो सयसहस्सा ॥ २ ॥'' इति॥ व्यन्तरसूत्रे 'संखेज्जवित्थड'त्ति, इह गाथा—''जंबुद्दीवसमा खलु उक्कोसेणं हवंति ते नगरा । खुड्डा खेत्तसमा खलु विदेहसमगा उ मज्झिमगा ॥ १ ॥'' इति । ज्योतिष्कसूत्रे सङ्ख्यातविस्तृता विमानावासाः 'एगसट्ठिभागं काऊण जोयणं'इत्यादिना ग्रन्थेन प्रमातव्याः 'नवरं एगा तेउलेस्स'त्ति व्यन्तरेषु लेश्याचतुष्टयमुक्तमेतेषु तु तेजोलेश्यैका वाच्या, तथा 'उववज्जंतेसु पन्नत्तेसु य असन्नी नत्थि'त्ति व्यन्तरेष्वसञ्ज्ञिन उत्पद्यन्त इत्युक्तमिह तु तन्निषेधः, प्रज्ञप्तेष्वपीह तन्निषेध उत्पादाभावादिति ॥ सौधर्म-सूत्रे 'ओहिनाणी'त्यादि ततश्च्युता यतस्तीर्थंकरादयो भवन्त्यतोऽवधिज्ञानादयश्च्यावयितव्याः 'ओहिनाणी ओहिदंसणी य

संखेज्जा चयंति'त्ति सङ्ख्यातानामेव तीर्थकरादित्वेनोत्पादादिति। 'छ गमग'त्ति उत्पादादयस्त्रयः सङ्ख्यातविस्तृतानाश्रित्य एत एव च त्रयोऽसङ्ख्यातविस्तृतानाश्रित्य एवं षड् गमाः, 'नवरं इत्थिवेयगे'त्यादि, स्त्रियः सनत्कुमारादिषु नोत्पद्यन्ते न च सन्ति, उद्वृत्तौ तु स्युः 'असन्नी तिसुवि गमएसु न भन्नइ'त्ति सनत्कुमारादिदेवानां सञ्ज्ञिभ्य एवोत्पादेन च्युतानां च सञ्ज्ञिष्वेव गमनेन गमत्रयेऽप्यसञ्ज्ञित्वस्याभावादिति। 'एवं जाव सहस्सारे'त्ति सहस्रारान्तेषु तिरश्चामुत्पादेनासङ्ख्यातानां त्रिष्वपि गमेषु भावादिति । 'णाणत्तं विमाणेसु लेसासु य'त्ति तत्र विमानेषु नानात्वं 'बत्तीसअट्ठवीसे'त्यादिना ग्रन्थेन समवसेयं, लेश्यासु पुनरिदं—तेऊ १ तेऊ २ तह तेउपम्हा ३ पम्हा ४ य पम्हसुक्का य ५। सुक्का य ६ परमसुक्का ७ सुक्काइविमाणवासीणं ॥ १ ॥ इति, इह च सर्वेष्वपि शुक्रादिदेवस्थानेषु परमशुक्लेति ॥ आनतादिसूत्रे 'संखेज्जवित्थडेसु'इत्यादि, उत्पादेऽवस्थाने च्यवने च सङ्ख्यातविस्तृतत्वाद्विमानानां सङ्ख्याता एव भवन्तीति भावः, असङ्ख्यातविस्तृतेषु पुनरुत्पादच्यवनयोः सङ्ख्याता एव, यतो गर्भजमनुष्येभ्य एवानतादिषूत्पद्यन्ते ते च सङ्ख्याता एव, तथाऽऽनतादिभ्यश्च्युता गर्भजमनुष्येष्वेवोत्पद्यन्तेऽतः समयेन सङ्ख्यातानामेवोत्पादच्यवनसम्भवः, अवस्थितिस्त्वसङ्ख्यातानामपि स्यादसङ्ख्यातजीवितत्वेनैकदैव जीवितकालेऽसङ्ख्यातानामुत्पादादिति। 'पन्नत्तेसु असंखेज्जा नवरं नोइंदिओवउत्ते'त्यादि प्रज्ञप्तकगमेऽसङ्ख्येया वाच्याः, केवलं नोइंद्रियोपयुक्तादिषु पञ्चसु पदेषु सङ्ख्याता एव, तेषामुत्पादावसर एव भावाद्, उत्पत्तिश्च सङ्ख्यातानामेवेति दर्शितं प्रागिति, 'पंच अणुत्तरोववाइय'त्ति तत्र मध्यमं सङ्ख्यातविस्तृतं योजनलक्षप्रमाणत्वादिति। 'नवरं कण्हपक्खिए'त्यादि, इह सम्यग्दृष्टीनामेवोत्पादात् कृष्णपाक्षिकादिपदानां गमत्रयेऽपि निषेधः, 'अचरिमावि खोडिज्जंति'त्ति येषां चरमोऽनुत्तरदेवभवः स एव ते चरमास्तदितरे त्वचरमास्ते च निषेधनीयाः, यतश्च-

१३शतके उद्देशः२ प्रज्ञप्त्यादि विचारः सू. ४७३

प्र०आ०६०२

रसा एव मध्यमे विमाने उत्पद्यन्त इति । 'असंखेज्जवित्थडेसुवि एए न भन्नंति'त्ति इहैते कृष्णपाक्षिकादयः, 'नवरं अचरिआ अत्थि'त्ति यतो बाह्यविमानेषु पुनरुत्पद्यन्त इति । 'तिन्नि आलावग'त्ति सम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टिविषया इति । 'नवरं तिसुवि आलावगेसु'इत्यादि, उप्पत्तीए चवणे पन्नत्तालावए य मिथ्यादृष्टिः सम्यग्मिथ्यादृष्टिश्च न वाच्यः, अनुत्तरसुरेषु तस्यासम्भवादिति ॥ त्रयोदशशते द्वितीयः ॥ १३-२ ॥

---

अनन्तरोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, देवाश्च प्रायः परिचारणावन्त इति परिचारणानिरूपणार्थं तृतीयोद्देशकमाह, तस्य चेदमादि सूत्रम्—

नेरइया णं भंते ! अणंतराहारा ततो निव्वत्तणया एवं परियारणापदं निरवसेसं भाणियव्वं । सेवं भंते ! सेवं भंते ! ( सूत्रं ४७४ ) ॥ १३-३ ॥

'नेरइया णं'मित्यादि, 'अणंतराहार'त्ति उपपातक्षेत्रप्राप्तिसमय एवाहारयन्तीत्यर्थः, 'तओ निव्वत्तणय'त्ति ततः शरीरनिर्वृत्तिः, 'एवं परियारणे'त्यादि, परिचारणापदं-प्रज्ञापनायां चतुस्त्रिंशत्तमं, तच्चैवं—'तओ परियाइयणया तओ परिणामणया तओ परियारणया तओ पच्छा विउव्वणया ?, हंता गोयमा'इत्यादि, 'तओ परियाइयणय'त्ति ततः पर्यापानम्-अङ्गप्रत्यङ्गैः समन्तादापानमित्यर्थः 'तओ परिणामणय'त्ति तत आपीतस्य-उपात्तस्य परिणतिरिन्द्रियादिविभागेन 'तओ परीयारणय'त्ति ततः शब्दादिविषयोपभोग इत्यर्थः 'तओ पच्छा विउव्वणय'त्ति ततो विक्रिया नानारूपा इत्यर्थ इति ॥ त्रयोदशशते तृतीयः ॥१३-३॥

---

अनन्तरोद्देशके परिचारणोक्ता, सा च नारकादीनां भवतीति नारकाद्यर्थप्रतिपादनार्थं चतुर्थोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कति णं भंते ! पुढवीओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, तंजहा-रयणप्पभा जाव अहेसत्तमा, अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पंच अणुत्तरा महतिमहालया जाव अपइट्ठाणे, ते णं णरगा छट्ठीए तमाए पुढवीए नरएहिंतो महंततरा चेव १ महाविच्छिन्नतरा चेव २ महावगासतरा चेव ३ महापइरिक्कतरा चेव ४, णो तहा महापवेसणतरा चेव १ नो आइन्नतरा चेव २ नो आउलतरा चेव ३ अणोयणतरा चेव ४, तेसु णं नरएसु नेरतिया छट्ठीए तमाए पुढवीए नेरइएहिंतो महाकम्मतरा चेव १ महाकिरियतरा चेव २ महासवतरा चेव ३ महावेयणतरा चेव ४ नो तहा अप्पकम्मतरा चेव १ नो अप्पकिरियतरा चेव २ नो अप्पासवतरा चेव ३ नो अप्पवेदणतरा चेव ४ अप्पड्ढियतरा चेव १ अप्पजुत्तियतरा चेव २ नो तहा महड्ढियतरा चेव १ नो महज्जुइयतरा चेव २ । छट्ठीए णं तमाए पुढवीए एगे पंचूणे निरयावाससयसहस्से पण्णत्ते, ते णं नरगा अहेसत्तमाए पुढवीए नेरइएहिंतो नो तहा महन्ततरा चेव महाविच्छिन्न० ४ महप्पवेसणतरा चेव आइन्न० ४ तेसु णं नरएसु णं नेरतिया अहेसत्तमाए पुढवीए नेरइएहिंतो अप्पकम्मतरा चेव अप्पकिरि० ४ नो तहा महाकम्मतरा चेव महाकिरिय ४ महड्ढीयतरा चेव महाजुइयतरा चेव नो तहा अप्पड्ढियतरा चेव अप्पजुइयतरा चेव । छट्ठीए णं तमाए पुढवीए नरगा पंचमाए धूमप्पभाए पु० नरएहिंतो महत्तरा चेव ४ नो तहा महप्पवेसणतरा चेव ४, तेसु णं नरएसु नेरतिया पंचमाए धूमप्पभाए पुढवीएहिंतो महाकम्मतरा चेव ४ नो तहा अप्पकम्मतरा चेव ४ अप्पड्ढियतरा चेव २

नो तहा महड्डियतरा चेव २, पंचमाए णं धूमप्पभाए पुढवीए तिन्नि निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता एवं जहा छट्ठीए भणिया एवं सत्तवि पुढवीओ परोप्परं भण्णंति जाव रयणप्पभंति जाव नो तहा महड्डियतरा चेव अप्पजुत्तियतरा चेव ( सूत्रं ४७५ ) ॥

'कइ ण'मित्यादि, इह च द्वारगाथे क्वचिद् दृश्येते, तद्यथा—"नेरइय १ फास २ पणिही ३ निरयंते ४ चेव लोयमज्झे य ५ । दिसिविदिसाण य पवहा ६ पवत्तणं अत्थिकाएहिं ७ ॥ १ ॥ अत्थीपएसफुसणा ८ ओगाहणया य जीवमोगाढा । अत्थिपएसनिसीयण बहुस्समे लोगसंठाणे ॥२॥" इति, अनयोश्चार्थ उद्देशकार्थाधिगमावगम्य एवेति, 'महंततरा चेव'त्ति आयामतः 'विच्छिन्नतरा चेव'त्ति विष्कम्भतः 'महावगासतरा चेव'त्ति अवकाशो—बहूनां विवक्षितद्रव्याणामवस्थानयोग्यं क्षेत्रं महानवकाशो येषु ते महावकाशाः अतिशयेन महावकाशा महावकाशतराः, ते च महाजनसङ्कीर्णा अपि भवन्तीत्यत उच्यते 'महापइरिक्कतरा चेव'त्ति महत्प्रतिरिक्तं—विजनमतिशयेन येषु ते तथा 'नो तहा महापवेसणतरा चेव'त्ति 'नो नैव 'तथा' तेन प्रकारेण यथा षष्ठपृथिवीनरका अतिशयेन महत्प्रवेशनं—गत्यन्तरान्नरकगतौ जीवानां प्रवेशो येषु ते तथा, षष्ठपृथिव्यपेक्षयाऽसङ्ख्यगुणहीनत्वात्तन्नारकाणामिति, नोशब्द उत्तरपदद्वयेऽपि सम्बन्धनीयः, अत एव नो महाप्रवेशनतराः, अत एव 'नो आइन्नतरा चेव'त्ति नात्यन्तमाकीर्णाः—सङ्कीर्णा नारकैः 'नो आउलतरा चेव'त्ति इति कर्त्तव्यतया ये आकुला नारकलोकास्तेषामतिशयेन योगादाकुलतरास्ततो नोशब्दयोगः, किमुक्तं भवति ?—'अणोमाणतरा चेव'त्ति अतिशयेनासङ्कीर्णा इत्यर्थः, क्वचित्पुनरिदमेवं दृश्यते—'अणोयणतरा चेव'त्ति तत्र चानोदनतराः, व्याकुलजनाभावादतिशयेन परस्परं नोदनवर्जिता इत्यर्थः 'महाकम्मतर'त्ति आयुष्कवेदनीयादिकर्म्मणां महत्त्वात्

'महाकिरियतर'त्ति कायिक्यादिक्रियाणां महत्त्वात् तत्काले कायमहत्त्वात्पूर्वकाले च महारम्भादित्वाद् अत एव महाश्रवतरा इति 'महावेयणतर'त्ति महाकर्मत्वात्, 'नो तहे'त्यादिना निषेधतस्तदेवोक्तं, विधिप्रतिषेधतो वाक्यप्रवृत्तेः, नोशब्दश्चेह प्रत्येकं सम्बन्धनीयः पदचतुष्टय इति, तथा 'अप्पड्ढियतर'त्ति अवध्यादिकर्द्धेरल्पत्वात् 'अप्पज्जुइयतर'त्ति दीप्तेरभावात्, एतदेव व्यतिरेकेणोच्यते—'नो तहामहड्ढिए'इत्यादि, नोशब्दः पदद्वयेऽपि सम्बन्धनीयः ॥

रयणप्पभापुढविनेरइया णं भंते! केरिसयं पुढविफासं पच्चणुभवमाणा विहरंति?, गोयमा! अणिट्ठं जाव अमणामं एवं जाव अहेसत्तमपुढविनेरइया एवं आउफासं एवं जाव वणस्सइफासं (सूत्रं ४७६) ॥ इमा णं भंते! रयणप्पभा पुढवी दोच्चं सक्करप्पभं पुढविं पणिहाय सव्वमहंतिया बाहल्लेणं सव्वक्खुड्डिया सव्वंतेसु एवं जहा जीवाभिगमे बितिए नेरइयउद्देसए ॥ ( सूत्रं ४७७ ) ॥ इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए णिरयपरिसामंतेसु जे पुढविक्काइया एवं जहा नेरइयउद्देसए जाव अहेसत्तमाए (सूत्रं ४७८) ॥ कहि णं भंते! लोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते?, गोयमा! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरस्स असंखेज्जतिभागं ओगाहेत्ता एत्थ णं लोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते। कहिं णं भंते! अहेलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते?, गोयमा! चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए उवासंतरस्स सातिरेगं [illegible] ओगाहित्ता एत्थ णं अहेलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते, कहिं णं भंते! उड्ढलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते?, गोयमा! उप्पिं सणंकुमारमाहिंदाणं कप्पाणं हेट्ठिं बंभलोए कप्पे रिट्ठविमाणे पत्थडे एत्थ णं उड्ढलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते। कहिणं भंते! तिरियलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते?, गोयमा! जंबुद्दीवे

२ मंदरस्स पव्वयस्स बहुमज्झदेसभाए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिमहेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु एत्थ णं तिरियलोगस्स मज्झे अट्ठपएसिए रुयए पण्णत्ते, जओ णं इमाओ दस दिसाओ पवहंति, तंजहा–पुरच्छिमा पुरच्छिमदाहिणा एवं जहा दसमसए नामधेज्जत्ति ॥ (सूत्रं ४७९) ॥ इंदा णं भंते! दिसा किमादीया किंपवहा कतिपदेसादीया कतिपदेसुत्तरा कतिपदेसीया किंपज्जवसिया किंसंठिया पन्नत्ता?, गोयमा! इंदा णं दिसा रुयगादीया रुयगप्पवहा दुपएसादीया दुपएसुत्तरा लोगं पडुच्च असंखेज्जपएसिया अलोगं पडुच्च अणंतपएसिया लोगं पडुच्च साईया सपज्जवसिया अलोगं पडुच्च साईया अपज्जवसिया लोगं पडुच्च मुरजसंठिया अलोगं पडुच्च सगडुद्धिसंठिया पन्नत्ता। अग्गेयी णं भंते! दिसा किमादीया किंपवहा कतिपएसादीया कतिपएसविच्छिन्ना कतिपएसीया किंपज्जवसिया किंसंठिया पन्नत्ता?, गोयमा! अग्गेयी णं दिसा रुयगादीया रुयगप्पवहा एगपएसादीया एगपएसविच्छिन्ना अणुत्तरा लोगं पडुच्च असंखेज्जपएसिया अलोगं पडुच्च अणंतपएसिया लोगं पडुच्च साइया सपज्जव० अलोगं पडुच्च साइया अपज्जवसिया छिन्नमुत्तावलिसंठिया पण्णत्ता। जमा जहा इंदा, नेरई जहा अग्गेयी, एवं जहा इंदा तहा दिसाओ चत्तारि, जहा अग्गेई तहा चत्तारिवि विदिसाओ। विमला णं भंते! दिसा किमादीया०? पुच्छा जहा अग्गेयीए, गोयमा! विमला णं दिसा रुयगादीया रुयगप्पवहा चउप्पएसादीया चउपएसविच्छिन्ना अणुत्तरा लोगं पडुच्च सेसं जहा अग्गेयीए नवरं रुयगसंठिया पण्णत्ता, एवं तमावि ॥ ( सूत्रं ४८० ) ॥

स्पर्शद्वारे 'एवं जाव वणस्सइफासं'ति इह यावत्करणात्तेजस्कायिकस्पर्शसूत्रं वायुकायिकस्पर्शसूत्रं च सूचितं, तत्र च कश्चि-

दाह—ननु सप्तस्वपि पृथिवीषु तेजस्कायिकवर्जपृथिवीकायिकादिस्पर्शो नारकाणां युक्तः, तेषां तासु विद्यमानत्वात्, बादरतेजसां तु समयक्षेत्र एव सद्भावात्, सूक्ष्मतेजसां पुनस्तत्र सद्भावेऽपि स्पर्शनेन्द्रियाविषयत्वादिति, अत्रोच्यते, इह तेजस्कायिकस्येव परमाधार्मिकविनिर्मितज्वलनसदृशवस्तुनः स्पर्शः तेजस्कायिकस्पर्श इति व्याख्येयं, न तु साक्षात्तेजस्कायिकस्यैव, असंभवात्, अथवा भवान्तरानुभूततेजस्कायिकपर्यायपृथिवीकायिकादिजीवस्पर्शापेक्षयेदं व्याख्येयमिति ॥ प्रणिधिद्वारे 'पणिहाय'त्ति प्रणिधाय—प्रतीत्य 'सव्वमहंतिय'त्ति सर्वथा महती अशीतिसहस्राधिकयोजनलक्षप्रमाणत्वाद्रत्नप्रभाबाहल्यस्य शर्कराप्रभाबाहल्यस्य च द्वात्रिंशत्सहस्राधिकयोजनलक्षप्रमाणत्वात् 'सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु'त्ति सर्वथा लघ्वी 'सर्वान्तेषु' पूर्वापरदक्षिणोत्तरविभागेषु, आयामविष्कम्भाभ्यां रज्जुप्रमाणत्वाद्रत्नप्रभायास्ततो महत्तरत्वात् शर्कराप्रभायाः, 'एवं जहा जीवाभिगमे'इत्यादि, अनेन च यत्सूचितं तदिदं—'हंता गोयमा ! इमा णं रयणप्पभा पुढवी दोच्चं पुढविं पणिहाय जाव सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु । दोच्चा णं भंते ! पुढवी तच्चं पुढविं पणिहाय सवखुड्डिया जाव सव्वंतेसु, एवं एएणं अभिलावेणं जाव छट्ठिया पुढवी अहे सत्तमं पुढविं पणिहाय जाव सवखुड्डिया सवंतेसु'त्ति ॥ निरयान्तद्वारे 'निरयपरिसामंतेसु'त्ति निरयावासानां पार्श्वत इत्यर्थः 'जहा नेरइयउद्देसए'त्ति जीवाभिगमसम्बन्धिनि, तत्र चैवमिदं सूत्रम्—"आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया वणस्सइकाइया, ते णं जीवा महाकम्मतरा चेव जाव महावेयणतरा चेव ?, हंता गोयमा !' इत्यादि ॥ लोकमध्यद्वारे 'चउत्थीए पंकप्पभाए'इत्यादि, रुचकस्याधो नवयोजनशतान्यतिक्रम्याधोलोको भवति लोकान्तं यावद्, स च सातिरेकाः सप्त रज्जवस्तन्मध्यभागः चतुर्थ्याः पञ्चम्याश्च पृथिव्या यदवकाशान्तरं तस्य सातिरेकमर्द्धमतिवाह्य भवतीति, तथा रुचकस्योपरि नवयोजनशतान्यतिक्रम्योर्ध्वलोको व्यपदिश्यते लोकान्तमेव यावत्, स च सप्त रज्जवः किञ्चिन्न्यूना

तस्य च मध्यभागप्रतिपादनायाह—'उप्पिं सणंकुमारमाहिंदाणं कप्पाण'मित्यादि । तथा 'उवरिमहेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु'त्ति लोकस्य वज्रमध्यत्वाद्रत्नप्रभाया रत्नकाण्डे सर्वक्षुल्लकं प्रतरद्वयमस्ति, तयोश्चोपरिमो यत आरभ्य लोकस्योपरिमुखा वृद्धिः 'हेट्ठिल्ले'त्ति अधस्तनो यत आरभ्य लोकस्याधोमुखा वृद्धिः, तयोरुपरिमाधस्तनयोः 'खुड्डागपयरेसु'त्ति क्षुल्लकप्रतरयोः सर्वलघुप्रदेशप्रतरयोः 'एत्थ णं'ति प्रज्ञापकेनोपाधितः प्रदर्श्यमाने तिर्यग्लोकमध्येऽष्टप्रदेशको रुचकः प्रज्ञप्तः, यत्र तिर्यग्लोकमध्ये प्रज्ञप्तः स सामर्थ्यात्तिर्यग्लोकायाममध्यं भवत्येवेति, किम्भूतोऽसावष्टप्रदेशिको रुचकः ? इत्याह—'जओ णं इमाओ'इत्यादि, तस्य चेयं स्थापना—

॥ दिग्विदिक्प्रवहद्वारे 'किमाइय'त्ति क आदिः—प्रथमो यस्याः सा किमादिका, आदिश्च विवक्षया विपर्ययेणापि स्यादित्यत आह—'किंपवह'त्ति प्रवहति—प्रवर्त्तते अस्मादिति प्रवहः, कः प्रवहो यस्याः सा तथा 'कतिपएसाइय'त्ति कतिप्रदेशा आदिर्यस्याः सा कतिप्रदेशादिका 'कतिपएसुत्तर'त्ति कतिः प्रदेशा उत्तरं—वृद्धौ यस्याः सा तथा 'लोगं पडुच्च मुरजसंठिय'त्ति लोकान्तस्य परिमण्डलाकारत्वेन मुरजसंस्थानता दिशः स्यात्, ततश्च लोकान्तं प्रतीत्य मुरजसंस्थितेत्युक्तं, एतस्य च पूर्वां दिशमाश्रित्य चूर्णिकारकृतेयं भावना—'पुव्वुत्तराए पएसहाणीए, तहा दाहिणपुव्वाए, रुयगदेसे मुरजद्धं दिसि अंते चउप्पएसा दट्ठव्वा मज्झे य तुंडं हवइ'त्ति, एतस्य चेयं स्थापना—'अलोगं पडुच्च सगडुद्धिसंठिय'त्ति रुचके तु तुण्डं कल्पनीयं, आदौ संकीर्णत्वात् तत उत्तरोत्तरं विस्तीर्णत्वादिति, 'एगपएसविच्छिन्न'त्ति,कथम् ? अत आह—'अणुत्तर'त्ति वृद्धिवर्जिता यत इति॥

किमियं भंते ! लोएत्ति पवुच्चइ ?, गोयमा ! पंचत्थिकाया, एस णं एवतिए लोएत्ति पवुच्चइ, तंजहा—धम्मत्थिकाए अहम्मत्थिकाए जाव पोग्गलत्थिकाए । धम्मत्थिकाए णं भंते ! जीवाणं किं पवत्तति ?, गोयमा ! धम्मत्थि-

काएणं जीवाणं आगमणगमणभासुम्मेसमणजोगा वइजोगा कायजोगा जे यावन्ने तहप्पगारा चला भावा सव्वे ते धम्मत्थिकाए पवत्तंति, गइलक्खणे णं धम्मत्थिकाए। अहम्मत्थिकाएणं जीवाणं किं पवत्तति?, गोयमा! अहम्मत्थिकाएणं जीवाणं ठाणनिसीयणतुयट्टण मणस्स य एगत्तीभावकरणता जे यावन्ने० थिरा भावा सव्वे ते अहम्मत्थिकाए पवत्तंति, ठाणलक्खणे णं अहम्मत्थिकाए॥ आगासत्थिकाए णं भंते! जीवाणं अजीवाण य किं पवत्तति?, गो० आगासत्थिकाएणं जीवदव्वाण य अजीवदव्वाण य भायणभूए-एगेणवि से पुन्ने दोहिवि पुन्ने सयंपि माएज्जा। कोडिसएणवि पुन्ने कोडिसहस्संपि माएज्जा॥१॥ अवगाहणालक्खणे णं आगासत्थिकाए। जीवत्थिकाएणं भंते! जीवाणं किं पवत्तति?, गोयमा! जीवत्थिकाएणं जीवे अणंताणं आभिणिबोहियनाणपज्जवाणं अणंताणं सुयनाणपज्जवाणं एवं जहा बितियसए अत्थिकायउद्देसए जाव उवओगं गच्छति, उवओगलक्खणे णं जीवे॥ पोग्गलत्थिकाए णं पुच्छा, गोयमा! पोग्गलत्थिकाएणं जीवाणं ओरालियवेउव्वियआहारए तेयाकम्मए सोइंदियचक्खिंदियघाणिंदियजिब्भिंदियफासिंदियमणजोगवयजोगकायजोगआणापाणूणं च गहणं पवत्तति, गहणलक्खणे णं पोग्गलत्थिकाए॥ (सूत्रं ४८१)॥

प्रवर्त्तनद्वारे 'आगमणगमणे'इत्यादि, आगमनगमने प्रतीते भाषा—व्यक्तवचनं 'भाष व्यक्तायां वाचि' इति वचनात् उन्मेषः—अक्षिव्यापारविशेषः मनोयोगवाग्योगकाययोगाः प्रतीता एव तेषां च द्वन्द्वस्ततस्ते, इह च मनोयोगादयः सामान्यरूपाः आगमनादयस्तु तद्विशेषा इति भेदेनोपात्ताः, भवति च सामान्यग्रहणेऽपि विशेषग्रहणं तत्स्वरूपोपदर्शनार्थमिति 'जे यावन्ने तहप्पगार'त्ति

'ये चाप्यन्ये' आगमनादिभ्योऽपरे 'तथाप्रकाराः' आगमनादिसदृशाः भ्रमणचलनादयः 'चला भाव'त्ति चलस्वभावाः पर्यायाः सर्वे ते धर्मास्तिकाये सति प्रवर्त्तन्ते, कुत ? इत्याह—'गइलक्खणे णं धम्मत्थिकाएत्ति । 'ठाणनिसीयणतुयट्टण'त्ति कायोत्सर्गासनशयनानि प्रथमाबहुवचनलोपदर्शनात् , तथा मनसश्चानेकत्वस्यैकत्वस्य भवनमेकत्वीभावस्तस्य यत्करणं तत्तथा । 'आगासत्थिकाएण'मित्यादि, जीवद्रव्याणां चाजीवद्रव्याणां च भेदेन भाजनभूतः, अनेन चेदमुक्तं भवति—एतस्मिन् सति जीवादीनामवगाहः प्रवर्त्तते, एतस्यैव प्रश्रितत्वादिति, भाजनभावमेवास्य दर्शयन्नाह—'एगेणवी'त्यादि, एकेन—परमाण्वादिना 'से'त्ति असौ आकाशास्तिकायप्रदेश इति गम्यते 'पूर्णः' भृतस्तथा द्वाभ्यामपि ताभ्यामसौ पूर्णः, कथमेतत् ?, उच्यते, परिणामभेदात् , यथाऽपवरकाकाशमेकप्रदीपप्रभापटलेनापि पूर्यते द्वितीयमपि तत्र माति यावच्छतमपि तेषां तत्र माति, तथौषधिविशेषापादितपरिणामादेकत्र पारदकर्षे सुवर्णकर्षशतं प्रविशति, पारदकर्षीभूतं च तदौषधिसामर्थ्यात् पुनः पारदस्य कर्षः सुवर्णस्य च कर्षशतं भवति, विचित्रत्वात्पुद्गलपरिणामस्येति, 'अवगाहणालक्खणे णं'ति इहावगाहना—आश्रयभावः ॥ 'जीवत्थिकाएण'मित्यादि, जीवास्तिकायेनेति अन्तर्भूतभावप्रत्ययत्वाज्जीवास्तिकायत्वेन जीवतयेत्यर्थः भदन्त ! जीवानां किं प्रवर्त्तते ? इति प्रश्नः, उत्तरं तु प्रतीतार्थमेवेति ॥ 'पोग्गलत्थिकाएण'मित्यादि, इहौदारिकादिशरीराणां श्रोत्रेन्द्रियादीनां मनोयोगान्तानामानप्राणानां च ग्रहणं प्रवर्तते इति वाक्यार्थः, पुद्गलमयत्वादौदारिकादीनामिति ॥ अस्तिकायप्रदेशस्पर्शद्वारे—

एगे भंते ! धम्मत्थिकायपदेसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ? गोयमा ! जहन्नपदे तिहिं उक्कोसपदे छहिं । केवतिएहिं अहम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! जहन्नपए चउहिं उक्कोसपए सत्तहिं । केवतिएहिं

आगासत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! सत्तहिं । केवतिएहिं जीवत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! अणंतेहिं । केवतिएहिं पोग्गलत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! अणंतेहिं । केवतिएहिं अद्धासमएहिं पुट्ठे ?, सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं ॥ एगे भंते ! अहम्मत्थिकायपएसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! जहन्नपए चउहिं उक्कोसपए सत्तहिं । केवतिएहिं अहम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे?, जहन्नपए तिहिं उक्कोसपए छहिं, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स ॥ एगे भंते ! आगासत्थिकायपएसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे?, गोयमा ! सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे जहन्नपदे एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा चउहिं वा उक्कोसपए सत्तहिं, एवं अहम्मत्थिकायप्पएसेहिवि । केवतिएहिं आगासत्थिकाय० ? छहिं, केवतिएहिं जीवत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं । एवं पोग्गलत्थिकायपएसेहिवि, अद्धासमएहिवि ॥ एगे भंते ! जीवत्थिकायपएसे केवतिएहिं धम्मत्थि० पुच्छा जहन्नपदे चउहिं उक्कोसपए सत्तहिं एवं अहम्मत्थिकायपएसेहिवि । केवतिएहिं आगासत्थि० ?, सत्तहिं । केवतिएहिं जीवत्थि० ?, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स ॥ एगे भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपए० ? एवं जहेव जीवत्थिकायस्स (सूत्रं ४८२)॥ दो भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा केवतिएहिं धम्मत्थिकायप्पएसेहिं पुट्ठा ?, जहन्नपए छहिं उक्कोसपए बारसहिं, एवं अहम्मत्थिकायप्पएसेहिवि । केवतिएहिं आगासत्थिकाय० ?, बारसहिं, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स ॥ तिन्नि भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा केवतिएहिं धम्मत्थि० ?, जहन्नपए अट्ठहिं उक्कोसपए सत्तरसहिं । एवं अहम्मत्थिकायपएसेहिवि ।

१३ शतके ४ उद्देशः प्रदेशस्पर्शनिरूपणं सू. ४८२

केवतिएहिं आगासत्थि०?, सत्तरसहिं, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। एवं एएणं गमेणं भाणियव्वं जाव दस, नवरं जहन्नपदे दोन्नि पक्खिवियव्वा उक्कोसपए पंच। चत्तारि पोग्गलत्थिकायस्स०, जहन्नपए दसहिं उक्को० बावीसाए, पंच पुग्गल०, जह० बारसहिं उक्कोस० सत्तावीसाए, छ पोग्गल० जह० चोद्दसहिं उक्को० बत्तीसाए, सत्त पो० जहन्नेणं सोलसहिं उक्को० सत्ततीसाए, अट्ठ पो० जहन्न० अट्ठारसहिं उक्कोसेणं बायालीसाए, नव पो० जहन्न० वीसाए उक्को० सीयालीसाए, दस ज० बावीसाए उक्को० बावन्नाए आगासत्थिकायस्स सव्वत्थ उक्कोसगं भाणियव्वं ॥ संखेज्जा भंते! पोग्गलत्थिकायपएसा केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठा? जहन्नपदे तेणेव संखेज्जएणं दुगुणेणं दुरूवाहिएणं उक्कोसपए तेणेव संखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं, केवतिएहिं अधम्मत्थिकायएहिं एवं चेव, केवतिएहिं आगासत्थिकाय० तेणेव संखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं, केवइएहिं जीवत्थिकाय०?, अणंतेहिं। केवइएहिं पोग्गलत्थिकाय०?, अणंतेहिं, केवइएहिं अद्धासमएहिं?, सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे जाव अणंतेहिं। असंखेज्जा भंते! पोग्गलत्थिकायपएसा केवतिएहिं धम्मत्थि०?, जहन्नपए तेणेव असंखेज्जएणं दुगुणेणं दुरूवाहिएणं उक्को० तेणेव असंखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं, सेसं जहा संखेज्जाणं जाव नियमं अणंतेहिं ॥ अणंता भंते! पोग्गलत्थिकायपएसा केवतिएहिं धम्मत्थिकाय०, एवं जहा असंखेज्जा तहा अणंतावि निरवसेसं ॥ एगे भंते! अद्धासमए केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे?, सत्तहिं, केवतिएहिं अहम्मत्थि०?, एवं चेव, एवं आगासत्थिकाएहिवि, केवतिएहिं जीव०?, अणंतेहिं, एवं जाव अद्धासमएहिं ॥ धम्मत्थिकाए णं भंते! केवतिएहिं धम्मत्थिका-

यप्पएसेहिं पुट्ठे?, नत्थि एक्केणवि, केवतिएहिं अधम्मत्थिकायप्पएसेहिं ?, असंखेज्जेहिं, केवतिएहिं आगासत्थि० प० ?, असंखेज्जेहिं, केवतिएहिं जीवत्थिकायपए० ?, अणंतेहिं, केवतिएहिं पोग्गलत्थिकायपएसेहिं ?, अणंतेहिं, केवतिएहिं अद्धासमएहिं ? सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे नियमा अणंतेहिं । अहम्मत्थिकाए णं भंते ! केव० धम्मत्थिकाय० ? असंखेज्जेहिं केवतिएहिं, अहम्मत्थि० ?, णत्थि एक्केणवि, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स, एवं एएणं गमएणं सव्वेवि सट्ठाणए नत्थि एक्केणवि पुट्ठा, परट्ठाणए आदिल्लएहिं तिहिं असंखेज्जेहिं भाणियव्वं, पच्छिल्लएसु तिसु अणंता भाणियव्वा, जाव अद्धासमयोत्ति, जाव केवतिएहिं अद्धासमएहिं पुट्ठे ?, नत्थि एक्केणवि ॥

'एगे भंते ! धम्मत्थिकायप्पएसे'इत्यादि, 'जहन्नपए तिहिं'ति जघन्यपदं लोकान्तनिष्कुटरूपं यत्रैकस्य धर्मास्तिकायादिप्रदेशस्यातिस्तोकैरन्यैः स्पर्शना भवति, तच्च भूम्यासन्नापवरककोणदेशप्रायं [⊽], इहोपरितनेनैकेन द्वाभ्यां च पार्श्वत एको विवक्षितः प्रदेशः स्पृष्टः, एवं जघन्येन त्रिभिरिति । 'उक्कोसपए छहिं'ति विवक्षितस्यैक उपर्येकोऽधस्तनश्चत्वारो दिक्षु इत्येवं षड्भिरिदं च प्रतरमध्ये, स्थापना च— ○ ○○○ ○ । 'जहन्नपदे चउहिं'ति धर्मास्तिकायप्रदेशो जघन्यपदेऽधर्मास्तिकायप्रदेशैश्चतुर्भिः स्पृष्ट इति, कथं ?, तथैव त्रयः, चतुर्थस्तु धर्मास्तिकायप्रदेशस्थानस्थित एवेति, उत्कृष्टपदे सप्तभिरिति, कथं ?, षड् दिक्षट्के, सप्तमस्तु धर्मास्तिकायप्रदेशस्थ एवेति २, आकाशप्रदेशैः सप्तभिरेव, लोकान्तेऽप्यलोकाकाशप्रदेशानां विद्यमानत्वात् ३, 'केवतिएहिं जीवत्थिकाए'इत्यादि 'अणंतेहिं'ति अनन्तैरनन्तजीवसम्बन्धिनाममनन्तानां प्रदेशानां तत्रैकधर्मास्तिकायप्रदेशे पार्श्वतश्च दिक्त्रयादौ विद्यमानत्वादिति ४, एवं पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरपि, 'केवतिएहिं रिद्धासमएहिं'इत्यादि, अद्धासमयः समयक्षेत्र एव न परतोऽतः

स्यात्स्पृष्टः स्याच्चेति 'जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं'ति अनादित्वादद्धासमयानां अथवा वर्त्तमानसमयालिङ्गितान्यनन्तानि द्रव्याण्यनन्ता एव समया इत्यनन्तैस्तैः स्पृष्ट इत्युच्यत इति ६। अधर्मास्तिकायप्रदेशस्य शेषाणां प्रदेशैः स्पर्शना धर्मास्तिकायप्रदेशस्पर्शनाऽनुसारेण णावसेया ६ ॥ 'एगे भंते! आगासत्थिकायपएसे'इत्यादि, 'सिय पुट्ठे'त्ति लोकमाश्रित्य 'सिय नो पुट्ठे'त्ति अलोकमाश्रित्य 'जइ पुट्ठे'इत्यादि, यदि स्पृष्टस्तदा जघन्यपदे एकेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः, कथम्?, एवंविधलोकान्तवर्त्तिना धर्मास्तिकायैकप्रदेशेन शेषधर्मास्तिकायप्रदेशेभ्यो निर्गतेनैकोऽग्रभागवर्त्यलोकाकाशप्रदेशः स्पृष्टो, वक्रगतस्त्वसौ द्वाभ्यां, यस्य चालोकाकाशप्रदेशस्याग्रतोऽधस्तादुपरि च धर्मास्तिकायप्रदेशाः सन्ति स त्रिभिर्धर्मास्तिकायप्रदेशैः स्पृष्टः, स चैवम्, यस्त्वेवं—लोकान्ते कोणगतो व्योमप्रदेशोऽसावेकेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन तदवगाढेनान्येन चोपरिवर्तिना अधोवर्त्तिना वा द्वाभ्यां च दिग्द्वयावस्थिताभ्यां स्पृष्ट इत्येवं चतुर्भिः, यश्चाध उपरि च तथा दिग्द्वये तत्रैव च वर्त्तमानेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स पञ्चभिः, यः पुनरध उपरि च तथा दिक्त्रये तत्रैव च वर्त्तमानेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स षड्भिः, यश्चाध उपरि च तथा दिक्चतुष्टये तत्रैव च वर्त्तमानेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स सप्तभिर्धर्म्मास्तिकायप्रदेशैः स्पृष्टो भवतीति १, एवमधर्मास्तिकायप्रदेशैरपि २ 'केवइएहिं आगासत्थिकाएहिं?, छहिं'ति एकस्य लोकाकाशप्रदेशस्यालोकाकाशप्रदेशस्य वा षड्दिग्व्यवस्थितैरेव स्पर्शनात् षड्भिरित्युक्तम् ३ जीवास्तिकायसूत्रे 'सिय पुट्ठे'त्ति यद्यसौ लोकाकाशप्रदेशो विवक्षितस्ततः स्पृष्टः 'सिय नो पुट्ठे'त्ति यद्यसावलोकाकाशप्रदेशविशेषस्तदा न स्पृष्टो, जीवानां तत्राभावादिति ४-५ एवं पुद्गलाद्धाप्रदेशैः ६ ॥ 'एगे भंते! जीवत्थिकायपएसे'इत्यादि, जघन्यपदे लोकान्तकोणलक्षणे सर्वाल्पत्वात्तत्र स्पर्शकप्रदेशानां चतुर्भिरिति, कथम्?, अध उपरि वा एको द्वौ च दिशोरेकस्तु यत्र जीवप्रदेश एवावगाढ

इत्येवं, एकश्च जीवास्तिकायप्रदेश एकत्राकाशप्रदेशादौ केवलिसमुद्घात एव लभ्यत इति, 'उक्कोसपए सत्तहिं'ति पूर्ववत्, 'एवं अहम्मे'त्यादि पूर्वोक्तानुसारेण भावनीयं ८ ॥ धर्मास्तिकायादीनां ४ पुद्गलास्तिकायस्य चैकैकप्रदेशस्य स्पर्शनोक्ता, अथ तस्यैव द्विप्रदेशादिस्कन्धानां तां दर्शयन्नाह—'दो भंते !'इत्यादि, इह चूर्णिकारव्याख्यानमिदं—लोकान्ते द्विप्रदेशिकः स्कन्ध एकप्रदेशसमवगाढः, स च प्रति द्रव्यावगाहं प्रदेश इति नयमताश्रयणेनावगाहप्रदेशस्यैकस्यापि भिन्नत्वाद् द्वाभ्यां स्पृष्टः, तथा यस्तस्योपर्यधस्ताद्वा प्रदेशस्तस्यापि पुद्गलद्वयस्पर्शनेन नयमतादेव भेदाद् द्वाभ्यां तथा पार्श्वप्रदेशावेकैकमणुं स्पृशतः परस्परव्यवहितत्वाद् इत्येवं जघन्यपदे षड्भिर्धर्मास्तिकायप्रदेशैर्द्व्यणुकस्कन्धः स्पृश्यते, नयमतानङ्गीकरणे तु चतुर्भिरेव द्व्यणुकस्य जघन्यतः स्पर्शना स्यादिति " वृत्तिकृता त्वेवमुक्तम्—" इह यद् बिन्दुद्वयं तत्परमाणुद्वयमितिमन्तव्यं, तत्र चार्वाचीनः परमाणुर्धर्मास्तिकायप्रदेशेनार्वाक्स्थितेन स्पृष्टः परभागवर्त्ती च परतःस्थितेन एवं द्वौ, तथा ययोः प्रदेशयोर्मध्ये परमाणू स्थाप्येते तयोरग्रेतनाभ्यां प्रदेशाभ्यां तौ स्पृष्टौ एकेनैको द्वितीयेन च द्वितीय इति चत्वारो द्वौ चावगाढत्वादेव स्पृष्टावित्येवं षट्। 'उक्कोसपए बारसहिं'ति, कथं ?, परमाणुद्वयेन द्विप्रदेशावगाढत्वात्स्पृष्टौ द्वौ चाधस्तनौ उपरितनौ च द्वौ पूर्वापरपार्श्वयोश्च द्वौ २ दक्षिणोत्तरपार्श्वयोश्चैकैक इत्येवमेते द्वादशेति १ । एवमधर्मास्तिकायप्रदेशैरपि २, 'केवतिएहिं आगासत्थिकायपएसेहिं ?, बारसहिं'ति इह जघन्यपदं नास्ति लोकान्तेऽप्याकाशप्रदेशानां विद्यमानत्वादिति द्वादशभिरित्युक्तं ३, 'सेसं जहा 'धम्मत्थिकायस्स'त्ति, अयमर्थः—'दो भंते ! पोग्गलत्थिकायप्पएसा केवतिएहिं जीवत्थिकायप्पएसेहिं पुट्ठा ?, गोयमा ! अणंतेहिं ४ । एवं पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरपि ५, अद्धासमयैः स्यात् स्पृष्टौ स्यान्न, यदि स्पृष्टौ तदा नियमादनन्तैरिति ६ ॥ 'तिन्नि भंते !'इत्यादि,

'जहन्नपए अट्ठहिं'ति, कथं?, पूर्वोक्तनयमतेनावगाढप्रदेशस्त्रिधा अधस्तनोऽप्युपरितनोऽपि च त्रिधा द्वौ पार्श्वत इत्येवमष्टौ, 'उक्कोसपए सत्तरसहिं'ति प्राग्वद्भावनीयं, इह च सर्वत्र जघन्यपदे विवक्षितपरमाणुभ्यो द्विगुणा द्विरूपाधिकाश्च स्पर्शकाः प्रदेशा भवन्ति, उत्कृष्टपदे तु विवक्षितपरमाणुभ्यः पञ्चगुणा द्विरूपाधिकाश्च ते भवन्ति, तत्र चैकाणोर्द्विगुणत्वे द्वौ द्वयसहितत्वे च चत्वारो जघन्यपदे स्पर्शकाः प्रदेशाः, उत्कृष्टपदे त्वेकाणोः पञ्चगुणत्वे द्विकसहितत्वे च सप्त स्पर्शकाः प्रदेशा भवन्ति, एवं द्व्यणुकत्र्यणुकादिष्वपि, स्थापना चेयम्—

| १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | परमाणुसंङ्ख्या |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| ४ | ६ | ८ | १० | १२ | १४ | १६ | १८ | २० | २२ | जघन्यस्पर्शः |
| ७ | १२ | १७ | २२ | २७ | ३२ | ३७ | ४२ | ४७ | ५२ | उत्कृष्टस्पर्शः |

। एतदेवाह—'एवं एएणं गमएणं'मित्यादि, 'आगासत्थिकायस्स सव्वत्थ उक्कोसपयं भाणियव्वं'ति 'सर्वत्र' एकप्रदेशिकाद्यनन्तप्रदेशिकान्ते सूत्रगणे उत्कृष्टपदमेव, न जघन्यकमित्यर्थः, आकाशस्य सर्वत्र विद्यमानत्वादिति ॥ 'संखेज्जा भंते !'इत्यादि, 'तेणेव'त्ति यत्सङ्ख्येयकमयः स्कन्धस्तेनैव प्रदेशसङ्ख्येयकेन द्विगुणेन द्विरूपाधिकेन स्पृष्टः, इह भावना—विंशतिप्रदेशिकः स्कन्धो लोकान्त एकप्रदेशे स्थितः स च नयमतेन विंशत्याऽवगाढप्रदेशैः विंशत्यैव च नयमते नैवाधस्तनैरुपरितनैर्वा प्रदेशैः द्वाभ्यां च पार्श्वप्रदेशाभ्यां स्पृश्यत इति, उत्कृष्टपदे तु विंशत्या निरुपचरितैरवगाढप्रदेशैः, एवमधस्तनै२०रुपरितनैः विंशत्या२० पूर्वापरपार्श्वयोश्च विंशत्या२० द्वाभ्यां च दक्षिणोत्तरपार्श्वस्थिताभ्यां स्पृष्टस्ततश्च विंशतिरूपः सङ्ख्याताणुकः स्कन्धः पञ्चगुणया विंशत्या प्रदेशानां प्रदेशद्वयेन च स्पृष्ट इति, अत एव चोक्तम्—'उक्कोसपए तेणेव संखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं'ति ॥ 'असंखेज्जा'इत्यादौ षट्सूत्री तथैव ॥ 'अणंता भंते !'इत्यादिरपि षट्सूत्री तथैव, नवरमिह यथा जघन्यपदे औपचारिका अवगाहप्रदेशा अधस्तना उपरितना वा तथोत्कृष्टपदेऽपि, न हि निरुपचरिता अनन्ता आकाशप्रदेशा अवगाहतः सन्ति, लोकस्याप्य-

सङ्ख्यातप्रदेशात्मकत्वादिति। इह च प्रकरणे इमे वृद्धोक्तगाथे भवतः—"धम्माइपएसेहिं दुपएसाई जहन्नयपयम्मि। दुगुणदुरूवहिएणं तेणेव कहं नु हु फुसेज्जा? ॥ १ ॥ एत्थ पुण जहन्नपयं लोगंते तत्थ लोगमालिहिउं। फुसणा दावेयव्वा अहवा खंभाइकोडीए ॥ २ ॥" इति 'एगे भंते! अद्धासमए'इत्यादि, इह वर्त्तमानसमयविशिष्टः समयक्षेत्रमध्यवर्त्ती परमाणुरद्धासमयो ग्राह्यः, अन्यथा तस्य धर्मास्तिकायादिप्रदेशैः सप्तभिः स्पर्शना न स्यात्, इह च जघन्यपदं नास्ति, मनुष्यक्षेत्रमध्यवर्त्तित्वादद्धासमयस्य, जघन्यपदस्य च लोकान्त एव सम्भवादिति, तत्र सप्तभिरिति, कथम्?, अद्धासमयविशिष्टं परमाणुद्रव्यमेकत्र धर्मास्तिकायप्रदेशेऽवगाढमन्ये च तस्य षट्सु दिक्ष्विति सप्तेति, जीवास्तिकायप्रदेशैश्चानन्तैरेकप्रदेशेऽपि तेषामनन्तत्वात्, 'एवं जाव अद्धासमएहिं'ति, इह यावत्करणादिदं सूचितं—एकोऽद्धासमयोऽनन्तैः पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरद्धासमयैश्च स्पृष्ट इति, भावना चास्यैवं—अद्धासमयविशिष्टमणुद्रव्यमद्धासमयः, स चैकः पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरनन्तैः स्पृश्यते, एकद्रव्यस्य स्थाने पार्श्वतश्चानन्तानां पुद्गलानां सद्भावात्, तथाऽद्धासमयैरनन्तैरसौ स्पृश्यते अद्धासमयविशिष्टानामनन्तानामप्यणुद्रव्याणामद्धासमयत्वेन विवक्षितत्वात् तेषां च तस्य स्थाने तत्पार्श्वतश्च सद्भावादिति ॥ धर्मास्तिकायादीनां प्रदेशतः स्पर्शनोक्ताऽथ द्रव्यतस्तामाह—'धम्मत्थिकाएण'मित्यादि, 'नत्थि एगेणवि'त्ति सकलस्य धर्मास्तिकायद्रव्यस्य प्रश्नितत्वात् तद्व्यतिरिक्तस्य च धर्मास्तिकायप्रदेशस्याभावादुक्तं नास्ति—न विद्यतेऽयं पक्षो यदुत एकेनापि धर्मास्तिकायप्रदेशेनासौ धर्मास्तिकायः स्पृष्ट इति, तथा धर्मास्तिकायोऽधर्मास्तिकायप्रदेशैरसङ्ख्येयैः स्पृष्टो, धर्मास्तिकायप्रदेशानन्तरं एव व्यवस्थितत्वादधर्मास्तिकायसम्बन्धिनामसङ्ख्यातानामपि प्रदेशानामिति, आकाशास्तिकायप्रदेशैरप्यसङ्ख्येयैः, असङ्ख्येयप्रदेशस्वरूपलोकाकाशप्रमाणत्वाद्धर्मास्तिकायस्य, जीवपुद्गलप्रदेशैस्तु धर्मास्तिकायोऽनन्तैः स्पृष्टः, तद्व्याप्त्या धर्मास्तिकाय-

स्यावस्थितत्वात्तेषां चानन्तत्वात्, अद्धासमयैः पुनरसौ स्पृष्टश्चास्पृष्टश्च, तत्र यः स्पृष्टः सोऽनन्तैरिति । एवमधर्मास्तिकायस्य ६ आकाशास्तिकायस्य ६ जीवास्तिकायस्य ६ पुद्गलास्तिकायस्य ६ अद्धासमयस्य च ६ सूत्राणि वाच्यानि, केवलं यत्र धर्मास्तिकायादिस्तत्प्रदेशैरेव चिन्त्यते तत्स्वस्थानमितरच्च परस्थानं, तत्र स्वस्थाने 'नत्थि एगेणवि पुट्ठे' इति निर्वचनं वाच्यं, परस्थाने च धर्मास्तिकायादित्रयसूत्रेषु३ असङ्ख्येयैः स्पृष्ट इति वाच्यं, असङ्ख्यातप्रदेशत्वाद्धर्माधर्मास्तिकाययोस्तत्संस्पृष्टाकाशस्य च, जीवादित्रयसूत्रेषु चानन्तैः प्रदेशैः स्पृष्ट इति वाच्यं, अनन्तप्रदेशत्वात्तेषामिति, एतदेव दर्शयन्नाह—'एवं एएणं गमएण' मित्यादि, इह चाकाशसूत्रेऽयं विशेषो द्रष्टव्यः-आकाशास्तिकायो धर्मास्तिकायादिप्रदेशैः स्पृष्टश्चास्पृष्टश्च, तत्र यः स्पृष्टः सोऽसङ्ख्येयैर्धर्माधर्मास्तिकाययोः प्रदेशैर्जीवास्तिकायादीनां त्वनन्तैरिति 'जाव अद्धासमओ'त्ति अद्धासमयसूत्रं यावत् सूत्राणि वाच्यानीत्यर्थः, 'जाव केवइएहिं' इत्यादौ यावत्करणादद्धासमयसूत्रे आद्यं पदपञ्चकं सूचितं षष्ठं तु लिखितमेवास्ते, तत्र तु 'नत्थि एक्केणवि'त्ति निरुपचरितस्याद्धासमयस्यैकस्यैव भावात्, अतीतानागतसमययोश्च विनष्टानुत्पन्नत्वेनासत्त्वान्न समयान्तरेण स्पृष्टताऽस्तीति ॥ अथावगाहद्वारं, तत्र—

जत्थ णं भंते! एगे धम्मत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा?, नत्थि एक्कोवि, केवतिया अहम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा?, एक्को, केवतिया आगासत्थिकाय० ?, एक्को, केवतिया जीवत्थि० ?, अणंता, केवतिया पोग्गलत्थि०?, अणंता, केवतिया अद्धासमया?, सिय ओगाढा सिय नो ओगाढा, जइ ओगाढा अणंता। जत्थ णं भंते! एगे अहम्मत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थि० ?, एक्को, केवतिया अहम्मत्थि० ?, नत्थि एक्कोवि, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। जत्थ णं भंते! एगे आगासत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ

केवतिया धम्मत्थिकाय० ?, सिय ओगाढा सिय नो ओगाढा, एक्को, एवं अहम्मत्थिकायपएसावि, केवइया आगासत्थिकाय० ?, नत्थि एक्कोवि, केवतिया जीवत्थि० ?, सिय ओगाढा सिय नो ओगाढा, जइ ओगाढा अणंता, एवं जाव अद्धासमया। जत्थ णं भंते! एगे जीवत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थि० ?, एक्को, एवं अहम्मत्थिकाय०, एवं आगासत्थिकायपएसावि, केवतिया जीवत्थि० ?, अणंता, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। जत्थ णं भंते! एगे पोग्गलत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकाय० ?, एवं जहा जीवत्थिकायपएसे तहेव निरवसेसं। जत्थ णं भंते! दो पोग्गलत्थिकायपदेसा ओगाढा तत्थ केवतिया धम्मत्थिकाय० ?, सिय एक्को सिय दोन्नि, एवं अहम्मत्थिकायस्सवि, एवं आगासत्थिकायस्सवि, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। जत्थ णं भंते! तिन्नि पोग्गलत्थि० तत्थ केवइया धम्मत्थिकाय० ?, सिय एक्को सिय दोन्नि सिय तिन्नि, एवं अहम्मत्थिकायस्सवि, एवं आगासत्थिकायस्सवि, सेसं जहेव दोण्हं, एवं एक्केक्को वड्ढियव्वो पएसो आइल्लएहिं तिहिं अत्थिकाएहिं, सेसं जहेव दोण्हं जाव दसण्हं सिय एक्को सिय दोन्नि सिय तिन्नि जाव सिय दस, संखेज्जाणं सिय एक्को सिय दोन्नि जाव सिय दस सिय संखेज्जा, असंखेज्जाणं सिय एक्को जाव सिय संखेज्जा सिय असंखेज्जा, जहा असंखेज्जा एवं अणंतावि। जत्थ णं भंते! एगे अद्धासमए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थि० ?, एक्को, केवतिया अहम्मत्थि० ?, एक्को, केवतिया आगासत्थि० ?, एक्को, केवइया जीवत्थि० ?, अणंता, एवं जाव अद्धासमया। जत्थ णं भंते! धम्मत्थिकाए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायप० ओगाढा ?, नत्थि एक्कोवि, केवतिया अहम्मत्थिकाय० ?,

असंखेज्जा, केवतिया आगास० ?, असंखेज्जा, केवतिया जीवत्थिकाय० ?, अणंता, एवं जाव अद्धासमया। जत्थ
णं भंते! अहम्मत्थिकाए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकाय० ?, असंखेज्जा, केवतिया अहम्मत्थि० ?, नत्थि
एक्कोवि, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स, एवं सव्वे, सट्ठाणे नत्थि एक्कोवि भाणियव्वं, परट्ठाणे आदिल्लगा तिन्नि अ-
संखेज्जा भाणियव्वा, पच्छिल्लगा तिन्नि अणंता भाणियव्वा जाव अद्धासमओत्ति जाव केवतिया अद्धासमया
ओगाढा ?, नत्थि एक्कोवि ॥ (सूत्रं ४८३) ॥ जत्थ णं भंते! एगे पुढविकाइए ओगाढे तत्थ णं केवतिया पुढविक्काइया
ओगाढा ?, असंखेज्जा, केवतिया आउक्काइया ओगाढा ?, असंखेज्जा, केवइया तेउकाइया ओगाढा ?, असंखेज्जा,
केवइया वाउ० ओगाढा ?, असंखेज्जा, केवतिया वणस्सइकाइया ओगाढा ?, अणंता, जत्थ णं भंते! एगे आउ-
काइए ओगाढे तत्थ णं केवतिया पुढवि० असंखेज्जा, केवतिया आउ० असंखेज्जा, एवं जहेव पुढविकाइयाणं वत्त-
व्वता तहेव सव्वेसिं निरवसेसं भाणियव्वं जाव वणस्सइकाइयाणं जाव केवतिया वणस्सइकाइया ओगाढा ?,
अणंता ॥ ( सूत्रं ४८४ ॥

'जत्थ णं भंते!' इत्यादि, यत्र प्रदेशे एको धर्मास्तिकायस्य प्रदेशोऽवगाढस्तत्रान्यस्तत्प्रदेशो नास्तीतिकृत्वाऽऽह–'नत्थि ए-
क्कोवि'त्ति, धर्मास्तिकायप्रदेशस्थानेऽधर्मास्तिकायप्रदेशस्य विद्यमानत्वादाह–'एक्को'त्ति, एवमाकाशास्तिकायस्याप्येक एव, जीवास्ति-
कायपुद्गलास्तिकाययोः पुनरनन्ताः प्रदेशा एकैकस्य धर्मास्तिकायप्रदेशस्य स्थाने सन्ति तैः प्रत्येकमनन्तैर्यस्मोऽसावत उक्तम्–'अ-
णंत'त्ति, अद्धासमयास्तु मनुष्यलोक एव सन्ति न परतोऽतो धर्मास्तिकायप्रदेशे तेषामवगाहोऽस्ति नास्ति च, यत्रास्ति तत्रानन्तानां,

भावना तु प्राग्वत्, एतदेवाह–'अद्धासमये'त्यादि ॥ 'जत्थ ण'मित्यादीन्यधर्मास्तिकायसूत्राणि षड् धर्मास्तिकायसूत्राणीव वाच्यानि, आकाशास्तिकायसूत्रेषु 'सिय ओगाढा सिय नो ओगाढा'त्ति लोकालोकरूपत्वादाकाशस्य लोकाकाशेऽवगाढा अलोकाकाशे तु न तदभावात् ॥ 'जत्थ णं भंते! दो पोग्गलत्थिकायपएसे'त्यादि, 'सिय एक्को सिय दोन्नि'त्ति यदैकत्राकाशप्रदेशे द्व्यणुकः स्कन्धोऽवगाढः स्यात्तदा तत्र धर्मास्तिकायप्रदेश एक एव, यदा तु द्वयोराकाशप्रदेशयोरसाववगाढः स्यात्तदा तत्र द्वौ धर्मप्रदेशाववगाढौ स्यातामिति, एवमवगाहनानुसारेणाधर्मास्तिकायाकाशास्तिकाययोरपि स्यादेकः स्याद्वाविति भावनीयं, 'सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स'त्ति शेषमित्युक्तापेक्षया जीवास्तिकायपुद्गलास्तिकायाद्धासमयलक्षणं त्रयं यथा धर्मास्तिकायप्रदेशवक्तव्यतायामुक्तं तथा पुद्गलप्रदेशद्वयवक्तव्यतायामपि, पुद्गलप्रदेशद्वयस्थाने तदीया अनन्ताः प्रदेशा अवगाढा इत्यर्थः। पुद्गलप्रदेशत्रयसूत्रेषु 'सिय इक्को''-इत्यादि, यदा त्रयोऽप्यणव एकत्रावगाढास्तदा तत्रैको धर्मास्तिकायप्रदेशोऽवगाढः, यदा तु द्वयो १। २ स्तदा द्वाववगाढौ, यदा तु त्रिषु। १। १। १। तदा त्रय इति, एवमधर्मास्तिकायस्याकाशास्तिकायस्य च वाच्यं, 'सेसं जहेव दोण्हं'त्ति 'शेषं' जीवपुद्गलाद्धासमयाश्रितं सूत्रत्रयं यथैव द्वयोः पुद्गलप्रदेशप्रदेशयोरवगाहचिन्तायामधीतं तथैव पुद्गलप्रदेशत्रयचिन्तायामप्यध्येयं, पुद्गलप्रदेशत्रयस्थानेऽनन्ता जीवप्रदेशा अवगाढा इत्येवमध्येयमित्यर्थः, 'एवं एक्केक्को वड्ढेयव्वो पएसो आइल्लेहिं तिहिं २ अत्थिकाएहिं'ति यथा पुद्गलप्रदेशत्रयावगाहचिन्तायां धर्मास्तिकायादिसूत्रत्रये एकैकः प्रदेशो वृद्धिं नीतः एवं पुद्गलप्रदेशचतुष्टयाद्यवगाहचिन्तायामप्येकैकस्तत्र वर्द्धनीयः, तथाहि–'जत्थ णं भंते! चत्तारि पुग्गलत्थिकायप्पएसा ओगाढा तत्थ केवइया धम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा?, सिय एक्को सिय दोन्नि सिय तिन्नि सिय चत्तारि'इत्यादि, भावना चास्य प्रागिव, 'सेसेहिं जहेव दोण्हं'ति शेषेषु

जीवास्तिकायादिषु सूत्रेषु पुद्गलप्रदेशचतुष्टयचिन्तायां तथा वाच्यं यथा तेष्वेव पुद्गलप्रदेशद्व(त्र)यावगाहचिन्तायामुक्तं, तच्चैवं—'जत्थ णं भंते ! चत्तारि पोग्गलत्थिकायप्पएसा ओगाढा तत्थ केवतिया जीवत्थिकायप्पएसा ओगाढा ?, 'अणंता' इत्यादि, 'जहा असंखेज्जा एवं अणंतावि' त्ति, अस्यायं भावार्थः—'जत्थ णं भंते ! अणंता पोग्गलत्थिकायपएसा ओगाढा तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा ?, सिय एक्को सिय दोन्नि जाव सिय असंखेज्जा' एतदेवाध्येयं, न तु 'सिय अणंत' त्ति, धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायलोकाकाशप्रदेशानामनन्तानामभावादिति ॥ अथ प्रकारान्तरेणावगाहद्वारमेवाह—'जत्थ णं' मित्यादि, धर्मास्तिकायशब्देन समस्ततत्प्रदेशसङ्ग्रहात् प्रदेशान्तराणां चाभावादुच्यते—यत्र धर्मास्तिकायोऽवगाढस्तत्र नास्त्येकोऽपि तत्प्रदेशोऽवगाढ इति, अधर्मास्तिकायाकाशास्तिकाययोरसङ्ख्येयाः प्रदेशा अवगाढा असङ्ख्येयप्रदेशत्वादधर्मास्तिकायलोकाकाशयोः, जीवास्तिकायसूत्रे चानन्तास्तत्प्रदेशाः, अनन्तप्रदेशत्वाज्जीवास्तिकायस्य, पुद्गलास्तिकायसूत्राद्धासूत्रयोरप्येवं, एतदेवाह—'एवं जाव अद्धासमय' त्ति ॥ अथैकस्य पृथिव्यादिजीवस्य स्थाने कियन्तः पृथिव्यादिजीवा अवगाढाः ? इत्येवमर्थं 'जीवमोगाढ' त्ति द्वारं प्रतिपादयितुमाह—'जत्थ णं भंते ! एगे पुढविक्काइए' इत्यादि, एकपृथिवीकायिकावगाहेऽसङ्ख्येयाः प्रत्येकं पृथिवीकायिकादयश्चत्वारः सूक्ष्मा अवगाढाः, यदाह—'जत्थ एगो तत्थ नियमा असंखेज्ज' त्ति, वनस्पतयस्त्वनन्ता इति ॥ अथास्तिकायप्रदेशनिषदनद्वारं, तत्र च—

एयंसि णं भंते ! धम्मत्थिकाय० अधम्मत्थिकाय० आगासत्थिकायंसि चक्किया केई आसइत्तए वा चिट्ठित्तए वा निसीइत्तए वा तुयट्टित्तए वा ?, नो इणट्ठे समट्ठे, अणंता पुण तत्थ जीवा ओगाढा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ—एतंसि णं धम्मत्थि० जाव आगासत्थिकायंसि णो चक्किया केई आसइत्तए वा जाव ओगाढा ?,

गोयमा! से जहा नामए-कूडागारसाला सिया दुहओ लित्ता गुत्ता गुत्तदुवारा जहा रायप्पसेणइज्जे जाव दुवारवयणाइं पिहेइ दु० २ तीसे कूडागारसालाए बहुमज्झदेसभाए जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं पदीवसहस्सं पलीवेज्जा, से नूणं गोयमा! ताओ पदीवलेस्साओ अन्नमन्नसंबद्धाओ अन्नमन्नपुट्ठाओ जाव अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति?, हंता चिट्ठंति, चक्किया णं गोयमा! केई तासु पदीवलेस्सासु आसइत्तए वा जाव तुयट्टित्तए वा?, भगवं! णो तिणट्ठे समट्ठे, अणंता पुण तत्थ जीवा ओगाढा, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जाव ओगाढा (सूत्रं ४८५)

'एयंसि ण'मित्यादि, एतस्मिन् णमित्यलङ्कारे 'चक्किय'त्ति शक्नुयात्कश्चित् पुरुषः ॥ अथ बहुसमेति द्वारं, तत्र च—

कहि णं भंते! लोए बहुसमे? कहि णं भंते! लोए सव्वविग्गहिए पण्णत्ते?, गोयमा! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिमहेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु एत्थ णं लोए बहुसमे एत्थ णं लोए सव्वविग्गहिए पण्णत्ते। कहि णं भंते! विग्गहविग्गहिए लोए पण्णत्ते?, गोयमा! विग्गहकंडए एत्थ णं विग्गहविग्गहिए लोए पण्णत्ते (सूत्रं४८६)॥

'कहि ण'मित्यादि, 'बहुसमे'त्ति अत्यन्तं समः, लोको हि क्वचिद्वर्द्धमानः क्वचिद्धीयमानोऽतस्तन्निषेधाद्बहुसमो, वृद्धिहानिवर्जित इत्यर्थः 'सव्वविग्गहिए'त्ति विग्रहो-वक्रं लघुमि(रि)त्यर्थः तदस्यास्तीति विग्रहिकः सर्वथा विग्रहिकः सर्वविग्रहिकः, सर्वसङ्क्षिप्त इत्यर्थः, 'उवरिमहेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु'त्ति उपरिमो यमवधीकृत्योर्द्धं प्रतरवृद्धिः प्रवृत्ता, अधस्तनश्च यमवधीकृत्याधः प्रतरप्रवृद्धिः प्रवृत्ता, ततस्तयोरुपरितनाधस्तनयोः क्षुल्लकप्रतरयोः-शेषापेक्षया लघुतरयो रज्जुप्रमाणायामविष्कम्भयोस्तिर्यग्लोकमध्यभागवर्त्तिनोः 'एत्थ णं'ति एतयोः-प्रज्ञापकेनोपदर्श्यमानतया प्रत्यक्षयोः 'विग्गहविग्गहिए'त्ति विग्रहो-वक्रं तद्युक्तो विग्रहः-शरीरं

यस्यास्ति स विग्रहविग्रहिकः, 'विग्गहकंडए'त्ति विग्रहो-वक्रं कण्डकं-अवयवो विग्रहरूपं कण्डकं विग्रहकण्डकं तत्र ब्रह्मलोककूर्प्परं इत्यर्थः, यत्र वा प्रदेशवृद्ध्या हान्या वा वक्रं भवति तद्विग्रहकण्डकं, तच्च प्रायो लोकान्तेष्वस्तीति ॥ अथ लोकसंस्थानद्वारं, तत्र च—

किंसंठिए णं भंते! लोए पण्णत्ते ?, गोयमा! सुपइट्ठियसंठिए लोए पण्णत्ते, हेट्ठा विच्छिन्ने मज्झे जहा सत्तमसए पढमुद्देसे जाव अंतं करेंति ॥ एयस्स णं भंते! अहेलोगस्स तिरियलोगस्स उड्ढलोगस्स य कयरे २ हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवे तिरियलोए उड्ढलोए असंखेज्जगुणे अहेलोए विसेसाहिए। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ( सूत्रं ४८७ ) ॥ १३-४ ॥

'सव्वत्थोवे तिरियलोए'त्ति अष्टादशयोजनशतायामत्वात्, 'उड्ढलोए असंखेज्जगुणे'त्ति किञ्चिन्न्यूनसप्तरज्जूच्छ्रितत्वात् 'अहेलोए विसेसाहिए'त्ति किञ्चित्समधिकसप्तरज्जूच्छ्रितत्वादिति ॥ त्रयोदशशते चतुर्थः ॥ १३-४ ॥

---

अनन्तरोद्देशके लोकस्वरूपमुक्तं, तत्र च नारकादयो भवन्तीति नारकादिवक्तव्यतां पञ्चमोद्देशकेनाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

नेरइया णं भंते! किं सचित्ताहारा अचित्ताहारा मीसाहारा?, गोयमा! नो सचित्ताहारा अचित्ताहारा नो मीसाहारा, एवं असुरकुमारा पढमो नेरइयउद्देसओ निरवसेसो भाणियव्वो ॥ सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं४८८) ॥१३-५॥

'नेरइया णं भंते!'इत्यादि, 'पढमो नेरइयउद्देसओ'इत्यादि, अयं च प्रज्ञापनायामष्टाविंशतितमस्याहारपदस्य प्रथमः, स चैवं दृश्यः-'नेरइया णं भंते! किं सचित्ताहारा अचित्ताहारा मीसाहारा ?, गोयमा ! नो सचित्ताहारा अचित्ताहारा नो मीसाहारा।'

'एवं असुरकुमारे'त्यादीति ॥ त्रयोदशशते पञ्चमः ॥ १३-५ ॥

अनन्तरोद्देशके नारकादिवक्तव्यतोक्ता, षष्ठेऽपि सैवोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम् —

रायगिहे जाव एवं वयासी–संतरं भंते! नेरतिया उववज्जंति निरंतरं नेरइया उववज्जंति?, गोयमा! संतरंपि नेरइया उवव० निरंतरंपि नेरइया उववज्जंति, एवं असुरकुमारावि, एवं जहा गंगेये तहेव दो दंडगा जाव संतरंपि वेमाणिया चयंति निरंतरंपि वेमाणिया चयंति ॥ (सूत्रं ४८९) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'गंगेए'त्ति नवमशतद्वात्रिंशत्तमोद्देशकाभिहिते 'दो दंडग'त्ति उत्पत्तिदण्डक उद्वर्त्तनादण्डकश्चेति ॥ अनन्तरं वैमानिकानां च्यवनमुक्तं, ते च देवा इति देवाधिकाराच्चमराभिधानस्य देवविशेषस्यावासविशेषप्ररूपणायाह—

कहिन्नं भंते! चमरस्स असुरिंदस्स असुररन्नो चमरचंचा नामं आवासे पण्णत्ते?, गोयमा! जंबुद्दीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे एवं जहा बितियए सभाउद्देसए वत्तव्वया सच्चेव अपरिसेसा नेयव्वा, नवरं इमं नाणत्तं जाव तिगिच्छकूडस्स उप्पायपव्वयस्स चमरचंचाए रायहाणीए चमरचंचस्स आवासपव्वयस्स अन्नेसिं च बहूणं सेसं तं चेव जाव तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचिविसेसा० परिक्खेवेणं, तीसे णं चमरचंचाए रायहाणीए दाहिणपच्चच्छिमेणं छक्कोडिसए पणपन्नं च कोडीओ पणतीसं च सयसहस्साइं पन्नासं च सहस्साइं अरुणोदयसमुद्दं तिरियं वीइवइत्ता एत्थ णं चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो चमरचंचे

नामं आवासे पण्णत्ते, चउरासीइं जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं दो जोयणसयसहस्सा पन्नट्ठिं च सहस्साइं छच्च बत्तीसे जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं, से णं एगेणं पागारेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, से णं पागारे दिवड्ढं जोयणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं एवं चमरचंचाए रायहाणीए वत्तव्वया भाणियव्वा सभाविहूणा जाव चत्तारि पासायपंतीओ। चमरे णं भंते! असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचे आवासे वसहिं उवेति?, नो तिणट्ठे समट्ठे, से केणं खाइ अट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ चमरचंचे आवासे च० २?, गोयमा! से जहानामए-इहं मणुस्सलोगंसि उवगारियलेणाइ वा उज्जाणियलेणाइ वा णिज्जाणियलेणाइ वा धारिवारियलेणाइ वा तत्थ णं बहवे मणुस्सा य मणुस्सीओ य आसयंति सयंति जहा रायप्पसेणइज्जे जाव कल्लाणफलवित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति अन्नत्थ पुण वसहिं उवेंति, एवामेव गोयमा! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो चमरचंचे आवासे केवलं किड्डारतिपत्तियं, अन्नत्थ पुण वसहिं उवेति, से तेण० जाव आवासे, सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ (सूत्रं ४९०)

'कहिण्णं भंते!' इत्यादि, 'सभाविहूण'त्ति सुधर्माद्याः पञ्चेह सभा न वाच्याः, कियद्दूरं यावदियमिह चमरचंचाराजधानीवक्तव्यता भणितव्या? इत्याह-'जाव चत्तारि पासायपंतीओ'त्ति ताश्च प्राक् प्रदर्शिता एवेति, 'उवगारियलेणाइ व'त्ति 'औपकारिकलयनानि' प्रासादादिपीठकल्पानि 'उज्जाणियलेणाइ व'त्ति उद्यानगतजनानामुपकारिकगृहाणि नगरप्रवेशगृहाणि वा 'णिज्जाणियलेणाइ व'त्ति नगरनिर्गमगृहाणि 'धारिवारियलेणाइ व'त्ति धाराप्रधानं वारि-जलं येषु तानि धारावारिकाणि तानि च तानि लयनानि चेति वाक्यम् 'आसयंति'त्ति 'आश्रयन्ते' ईषद्भजन्ते 'सयंति'त्ति 'श्रयन्ते' अनीषद्भजन्ते, अथवा 'आसयंति' ईषत्स्वपन्ति

'सयंति' अनीषत्स्वपन्ति 'जहा रायप्पसेणइज्जे'त्ति अनेन यत्सूचितं तदिदं–'चिट्ठंति' ऊर्ध्वस्थानेन तेषु तिष्ठन्ति 'निसीयंति' उपविशन्ति 'तुयट्टंति' निषण्णा आसते 'हसंति' परिहासं कुर्वन्ति 'रमन्ते' अक्षादिना रतिं कुर्वन्ति 'ललन्ति' ईप्सितक्रियाविशेषान् कुर्वन्ति 'कीलंति' कामक्रीडां कुर्वन्ति 'किड्डंति' अन्तर्भूतकारितार्थत्वादन्यान् क्रीडयन्ति 'मोहयन्ति' मोहनं–निधुवनं विदधति 'पुरापोराणाणं सुचिन्नाणं सुपरिक्कंताणं सुभाणं कडाणं कम्माणं'ति व्याख्या चास्य प्राग्वदिति, 'वसहिं उवेंति'त्ति वासमुपयान्ति, 'एवामेवे'त्यादि, 'एवमेव' मनुष्याणामौपकारिकादिलयनवच्चमरस्य ३ चमरचञ्च आवासो न निवासस्थानं, केवलं किन्तु 'किड्डारइपत्तियं'ति क्रीडायां रतिः–आनन्दः क्रीडारतिः अथवा क्रीडा च रतिश्च क्रीडारती सा ते वा प्रत्ययो-निमित्तं यत्र तत् क्रीडारतिप्रत्ययं, तत्रागच्छतीति शेषः ॥ अनन्तरमसुरकुमारविशेषावासवक्तव्यतोक्ता, असुरकुमारेषु च विराधितदेशसर्वसंयमा उत्पद्यन्ते ततश्च तेषु योऽत्र तीर्थे उत्पन्नस्तद्दर्शनायोपक्रमते—

तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ रायगिहाओ नगराओ गुणसिलाओ जाव विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था वन्नओ, पुन्नभद्दे चेइए वन्नओ, तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कदाइ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव विहरमाणे जेणेव चंपा नगरी जेणेव पुन्नभद्दे चेतिए तेणेव उवाग० २ जाव विहरइ, तेणं कालेणं २ सिंधुसोवीरेसु जणवएसु वीतीभए नामं नगरे होत्था वन्नओ, तस्स णं वीतीभयस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं मियवणे नामं उज्जाणे होत्था सव्वोउय० वन्नओ, तत्थ णं वीतीभए नगरे उदायणे नामं राया होत्था महया० वन्नओ, तस्स णं उदायणस्स रन्नो पभावती नामं देवी होत्था सुकुमाल०

वन्नओ, तस्स णं उदायणस्स रन्नो पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए अभीतिनामं कुमारे होत्था सुकुमाल० जहा सिवभद्दे जाव पच्चुवेक्खमाणे विहरति, तस्स णं उदायणस्स रन्नो नियए भायणेज्जे केसीनामं कुमारे होत्था सुकुमाल० जाव सुरूवे, से णं उदायणे राया सिंधुसोवीरप्पामोक्खाणं सोलसण्हं जणवयाणं वीतीभयप्पामोक्खाणं तिण्हं तेसट्ठीणं नगरागरसयाणं महसेणप्पामोक्खाणं दसण्हं राईणं बद्धमउडाणं विदिन्नछत्तचामरवालवीयणाणं अन्नेसिं च बहूणं राईसरतलवरजाव सत्थवाहप्पभिईणं आहेवच्चं जाव कारेमाणे पालेमाणे समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ। तए णं से उदायणे राया अन्नया कयाइ जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ जहा संखे जाव विहरइ। तए णं तस्स उदायणस्स रन्नो पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—धन्ना णं ते गामागरनगरखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंवाहसंनिवेसा जत्थ णं समणे भगवं महावीरे विहरइ, धन्ना णं ते राईसरतलवरजावसत्थवाहप्पभिईओ जे णं समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति जाव पज्जुवासंति, जइ णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं जाव विहरमाणे इहमागच्छेज्जा इह समोसरेज्जा इहेव वीतीभयस्स नगरस्स बहिया मियवणे उज्जाणे अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा जाव विहरेज्जा तो णं अहं समणं भगवं महावीरं वंदेज्जा नमंसेज्जा जाव पज्जुवासेज्जा, तए णं समणे भगवं महावीरे उदायणस्स रन्नो अयमेयारूवं अब्भत्थियं जाव समुप्पन्नं वियाणित्ता चंपाओ नगरीओ पुन्नभद्दाओ चेइयाओ पडिनिक्खमति पडिनि० २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणु० जाव विहरमाणे जेणेव

सिंधुसोवीरे जणवए जेणेव वीतीभये णगरे जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवा० २ जाव विहरति। तए णं वीतिभये नगरे सिंघाडगजाव परिसा पज्जुवासइ। तए णं से उदायणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति को० २ एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! वीयीभयं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं जहा कूणिओ उववाइए जाव पज्जुवासति, पभावतीपामोक्खाओ देवीओ तहेव जाव पज्जुवासंति, धम्मकहा। तए णं से उदायणे राया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेइ २ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी-एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! जाव से जहेयं तुज्झे वदह त्तिकट्टु जं नवरं देवाणुप्पिया! अभीयिकुमारं रज्जे ठावेमि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वयामि, अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं। तए णं से उदायणे राया समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ तमेव आभिसेक्कं हत्थिं दुरूहइ २ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ मियवणाओ उज्जाणाओ पडिनिक्खमति प० २ जेणेव वीतीभये नगरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए। तए णं तस्स उदायणस्स रन्नो अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-एवं खलु अभीयीकुमारे ममं एगे पुत्ते इट्ठे कंते जाव किमंग पुण पासणयाए?, तं जति णं अहं अभीयिकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता जाव पव्वयामि तो णं अभीयिकुमारे रज्जे य जाव जणवए माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववन्ने अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं

अणुपरियट्टिस्सइ, तं नो खलु मे सेयं अभीयीकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइ-त्तए, सेयं खलु मे णियगं भाइणेज्जं केसिं कुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ जाव पव्वइत्तए, एवं संपेहेइ एवं संपे० २ जेणेव वीतीभये नगरे तेणेव उवागच्छइ २ वीतीभयं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गेहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवाग० २ आभिसेक्कं हत्थिं ठवेति आभि० २ आभिसेक्काओ हत्थीओ पच्चोरुभइ आ० २ जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छति २ सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयति नि० २ कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति को० २ एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! वीतीभयं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं जाव पच्चप्पि-णंति, तए णं से उदायणे राया दोच्चंपि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति स० २ एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पि या! केसिस्स कुमारस्स महत्थं ३ एवं रायाभिसेओ जहा सिवभद्दस्स कुमारस्स तहेव भाणियव्वो जाव परमाउं पालयाहि इट्ठजणसंपरिवुडे सिंधुसोवीरपामोक्खाणं सोलसण्हं जणवयाणं वीतीभयपामोक्खाणं० महसेण० राया अन्नेसिं च बहूणं राईसर जाव कारेमाणे पालेमाणे विहराहित्तिकट्टु जयजयसद्दं पउंजंति। तए णं से केसी कुमारे राया जाए महया जाव विहरति। तए णं से उदायणे राया केसिं रायाणं आपुच्छइ, तए णं से केसीराया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति एवं जहा जमालिस्स तहेव सब्भिंतरबाहिरियं तहेव जाव निक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेंति, तए णं से केसीराया अणेगगणणायग जाव संपरिवुडे उदायणं रायं सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयावेति २ अट्ठसएणं सोवन्नियाणं एवं जहा जमालिस्स जाव एवं वयासी—भण सामी! किं देमो? किं पयच्छामो? किणा

वा ते अट्ठो ?, तए णं से उदायणे राया केसिं रायं एवं वयासी—इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! कुत्तियावणाओ एवं जहा जमालिस्स नवरं पउमावती अग्गकेसे पडिच्छइ पियविप्पयोगदूसहा, तए णं से केसी राया दोच्चंपि उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेति दो० २ उदायणं रायं सेयापीतएहिं कलसेहिं सेसं जहा जमालिस्स जाव सन्निसन्ने तहेव अम्मधाती नवरं पउमावती हंसलक्खणं पडसाडगं गहाय सेसं तं चेव जाव सीयाओ पच्चोरूभति सी० २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वंदति नमंसति वं० नमं० उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमति उ० २ सयमेव आभरणमल्लालंकारं तं चेव पउमावती पडिच्छति जाव घडियव्वं सामी ! जाव नो पमादेयव्वंतिकट्टु केसी राया पउमावती य समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति २ जाव पडिगया ॥ तए णं से उदायणे राया सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं सेसं जहा उसभदत्तस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ( सूत्रं ४९१ ) ॥ तए णं तस्स अभीयिस्स कुमारस्स अन्नदा कयाई पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु अहं उदायणस्स पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए, तए णं से उदायणे राया ममं अवहाय नियगं भायणेज्जं केसिकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ जाव पव्वइए, इमेणं एयारूवेणं महया अप्पत्तिएणं मणोमाणसिएणं दुक्खेणं अभिभूए समाणे अंतेपुरपरियालसंपरिवुडे सभंडमत्तोवगरणमायाए वीतीभयाओ नयराओ निग्गच्छति नि० २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव चंपा नयरी जेणेव कूणिए राया तेणेव उवा० २ कूणियं रायं उवसंपज्जित्ताणं विह०,

तत्थवि णं से विउलभोगसमितिसमन्नागए यावि होत्था, तए णं से अभीयीकुमारे समणोवासए यावि होत्था, अभिगय जाव विहरइ, उदायणंमि रायरिसिंमि समणुबद्धवेरे यावि होत्था, तेणं कालेणं २ इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए निरयपरिसामंतेसु चोसट्ठिं असुरकुमारावाससयसहस्सा पन्नत्ता, तए णं से अभीयीकुमारे बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणति पा० २ अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेएइ २ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयपरिसामंतेसु चोयट्ठीए आयावा जाव सहस्सेसु अन्नयरंसि आयावा असुरकुमारावासंसि आतावगाणं असुरकुमारदेवत्ताए उव०, तत्थ णं अत्थेगइ० आयावगाणं असुरकुमाराणं देवाणं एगं पलिओवमं ठिई प० तत्थ णं अभीयिस्सवि देवस्स एगं पलि० ठिई पण्णत्ता। से णं भंते! अभीयी देवे ताओ देवलोगाओ आउक्ख० ३ अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं ग०? कहिं उव०?, गोयमा! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति, सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ४९२) ॥ १३-६ ॥

'तए णं'मित्यादि, 'सिंधुसोवीरेसु'त्ति सिन्धुनद्या आसन्नाः सौवीरा जनपदविशेषाः सिन्धुसौवीरास्तेषु 'वीईभए'त्ति विगता ईतयो भयानि च यतस्तद्वीतिभयं विदर्भेति केचित् 'सव्वोउयवन्नओ'त्ति अनेनेदं सूचितं-'सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे रम्मे नंदणवणप्पगासे'इत्यादीति। 'नगरागरसयाणं'ति करादायकानि नगराणि सुवर्णाद्युत्पत्तिस्थानान्याकरा नगराणि चाकराश्चेति नगराकरास्तेषां शतानि नगराकरशतानि तेषां 'नगरसयाणं'ति क्वचित्पाठः, 'विदिन्नछत्तचामरवालवीयणागं'ति वितीर्णानि छत्राणि चामरखल्पवालव्यजनिकाश्च येषां ते तथा तेषाम्। 'अप्पत्तिएणं मणोमाणसिएणं दुक्खेणं'ति 'अप्रीतिकेन' अप्रीतिस्वभावेन

मनसो विकारो मानसिकं मनसि मानसिकं न बहिरुपलक्ष्यमाणविकारं यत्तन्मनोमानसिकं तेन, केनैवंविधेन ? इत्याह—दुःखेन, 'स-भंडमत्तोवगरणमायाय'त्ति स्वां-स्वकीयां भाण्डमात्रां-भाजनरूपं परिच्छदं उपकरणं च—शय्यादि गृहीत्वेत्यर्थः, अथवा सह भाण्डमात्रया यदुपकरणं तत्तथा तदादाय, 'समणुबद्धवेरि'त्ति अव्यवच्छिन्नवैरिभावः 'निरयपरिसामंतेसु'त्ति नरकपरिपार्श्वतः 'चोयट्ठीए आयावा असुरकुमारावासेसु'त्ति इह 'आयाव'त्ति असुरकुमारविशेषाः, विशेषतस्तु नावगम्यत इति ॥ १३-६॥

---

य एतेऽनन्तरोद्देशकेऽर्था उक्तास्ते भाषयाऽतो भाषाया एव निरूपणाय सप्तम उच्यते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी—आया भंते ! भासा अन्ना भासा ?, गोयमा ! नो आया भासा अन्ना भासा, रूविं भंते ! भासा अरूविं भासा ?, गोयमा ! रूविं भासा नो अरूविं भासा, सचित्ता भंते ! भासा अचित्ता भासा ?, गोयमा ! नो सचित्ता भासा अचित्ता भासा, जीवा भंते ! भासा अजीवा भासा ?, गोयमा ! नो जीवा भासा अजीवा भासा । जीवाणं भंते ! भासा अजीवाणं भासा ?, गोयमा ! जीवाणं भासा नो अजीवाणं भासा, पुव्विं भंते ! भासा भासिज्जमाणी भासा भासासमयवीतिक्कंता भासा ?, गोयमा ! नो पुव्विं भासा भासिज्जमाणी भासा, णो भासासमयवीतिक्कंता भासा, पुव्विं भंते ! भासा भिज्जति भासिज्जमाणी भासा भिज्जति भासासमयवीतिक्कंता भासा भिज्जति ?, गोयमा ! नो पुव्विं भासा भिज्जति भासिज्जमाणी भासा भिज्जइ नो भासासमयवीतिक्कंता भासा भिज्जति । कतिविहा णं भंते ! भासा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चउव्विहा भासा

पण्णत्ता, तंजहा-सच्चा मोसा सच्चामोसा असच्चामोसा ( सूत्रं ४९३ ) ॥ आया भंते ! मणे अन्ने मणे ?, गोयमा ! नो आया मणे अन्ने मणे जहा भासा तहा मणेवि जाव नो अजीवाणं मणे, पुव्विं भंते ! मणे मणिज्जमाणे मणे ? एवं जहेव भासा, पुव्विं भंते ! मणे भिज्जति मणिज्जमाणे मणे भिज्जति मणसमयवीतिक्कंते मणे भिज्जति ?, एवं जहेव भासा। कतिविहे णं भंते ! मणे पण्णत्ते ?, गोयमा ! चउव्विहे मणे पन्नत्ते, तंजहा-सच्चे जाव असच्चामोसे ( सूत्रं ४९४ ) ॥ आया भंते ! काये अन्ने काये ?, गोयमा ! आयावि काये अन्नेवि काये, रूविं भंते ! काये अरूविं काये ?, पुच्छा, गोयमा ! रूविंपि काये अरूविंपि काए, एवं एक्केक्के पुच्छा, गोयमा ! सच्चित्तेवि काये अचित्तेवि काए, जीवेवि काए अजीवेवि काए, जीवाणवि काए अजीवाणवि काए, पुव्विं भंते ! काये पुच्छा, गोयमा ! पुव्विंपि काए कायिज्जमाणेवि काए कायसमयवीतिक्कंतेवि काये, पुव्विं भंते ! काये भिज्जति पुच्छा, गोयमा ! पुव्विंपि काए भिज्जति जाव काए भिज्जति ॥ कइविहे णं भंते ! काये पन्नत्ते ?, गोयमा ! सत्तविहे काये पन्नत्ते, तंजहा—ओराले ओरालियमीसए वेउव्विए वेउव्वियमीसए आहारए आहारगमीसए कम्मए ॥ ( सूत्रं ४९५ ) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'आया भंते ! भास'त्ति काकाऽध्येयं, आत्मा-जीवो भाषा, जीवस्वभावा भाषेत्यर्थः, यतो जीवेन व्यापार्यते जीवस्य च बन्धमोक्षार्थां भवति ततो जीवधर्मत्वाज्जीव इति व्यपदेशार्हा ज्ञानवदिति, अथान्या भाषा-न जीवस्वरूपा श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यत्वेन मूर्त्ततयाऽऽत्मनो विलक्षणत्वादिति शङ्का, अतः प्रश्नः, अत्रोत्तरं—'नो आया भास'त्ति आत्मरूपा नासौ भवति, पुद्गलमयत्वाद् आत्मना च निसृज्यमानत्वात्तथाविधलोष्ठादिवत् अचेतनत्वाच्चाकाशवत्, यच्चोक्तं-जीवेन व्यापार्यमाणत्वाज्जीवः स्याज्ज्ञानवत्, तद-

नैकान्तिकं, जीवव्यापारस्य जीवादत्यन्तं भिन्नस्वरूपेऽपि दात्रादौ दर्शनादिति। 'रूविं भंते! भास'त्ति रूपिणी भदन्त! भाषा श्रोत्रस्यानुग्रहोपघातकारित्वात्तथाविधकर्णाभरणादिवत्, अथारूपिणी भाषा चक्षुषाऽनुपलभ्यत्वाद्धर्मास्तिकायादिवदिति शङ्का, अतः प्रश्नः, उत्तरं तु रूपिणी भाषा, यच्च चक्षुरग्राह्यत्वमरूपित्वसाधनायोक्तं तदनैकान्तिकं, परमाणुवायुपिशाचादीनां रूपवतामपि चक्षुरग्राह्यत्वेनाभिमतत्वादिति। अनात्मरूपाऽपि सचित्ताऽसौ भविष्यति जीवच्छरीरवदिति पृच्छन्नाह—'सचित्ते'त्यादि, उत्तरं तु नो सचित्ता जीवनिसृष्टपुद्गलसंहतिरूपत्वात्तथाविधलेष्टुवत्, तथा 'जीवा भंते!'इत्यादि, जीवतीति जीवा—प्राणधारणस्वरूपा भाषा उतैतद्विलक्षणेति प्रश्नः, अत्रोत्तरं—नो जीवा, उच्छ्वासादिप्राणानां तस्या अभावादिति। इह कैश्चिदभ्युपगम्यते—अपौरुषेयी वेदभाषा, तन्मतं मनस्याधायाह—'जीवाण'मित्यादि, उत्तरं तु जीवानां भाषा, वर्णानां ताल्वादिव्यापारजन्यत्वात् ताल्वादिव्यापारस्य च जीवाश्रितत्वात्, यद्यपि चाजीवेभ्यः शब्द उत्पद्यते तथाऽपि नासौ भाषा, भाषापर्याप्तिजन्यस्यैव शब्दस्य भाषात्वेनाभिमतत्वादिति। तथा 'पुव्विं'मित्यादि, अत्रोत्तरं—नो पूर्वं भाषणाद् भाषा भवति मृत्पिण्डावस्थायां घट इव, भाष्यमाणा—निसर्गावस्थायां वर्त्तमाना भाषा घटावस्थायां घटस्वरूपमिव, 'नो' नैव भाषासमयव्यतिक्रान्ता—भाषासमयो—निसृज्यमानावस्थातो यावद्भाषापरिणामसमयस्तं व्यतिक्रान्ता या सा तथा भाषा भवति, घटसमयातिक्रान्तघटवत् कपालावस्थ इत्यर्थः। 'पुव्विं भंते!'इत्यादि, अत्रोत्तरं—'नो' नैव पूर्वं निसर्गसमयाद्भाषाद्रव्यभेदेन भाषा भिद्यते, भाष्यमाणा भाषा भिद्यते, अयमत्राभिप्रायः—इह कश्चिन्मन्दप्रयत्नो वक्ता भवति, स चाभिन्नान्येव शब्दद्रव्याणि निसृजति, तानि च निसृष्टान्यसङ्ख्येयात्मकत्वात् परिस्थूरत्वाच्च विभिद्यन्ते, विभिद्यमानानि च सङ्ख्येयानि योजनानि गत्वा शब्दपरिणामत्यागमेव कुर्वन्ति, कश्चित्तु महाप्रयत्नो भवति स खल्वादाननिसर्गप्रयत्नाभ्यां भित्त्वैव निसृजति, तानि च सूक्ष्मत्वाद्बहु-

त्वाचानन्तगुणवृद्धया वर्द्धमानानि षट्सु दिक्षु लोकान्तमाप्नुवन्ति, अत्र च यस्यामवस्थायां शब्दपरिणामस्तस्यां भाष्यमाणताऽवसेयेति, 'नो भासासमयवीइक्कंते'त्ति परित्यक्तभाषापरिणामेत्यर्थः, उत्कृष्टप्रयत्नस्य तदानीं निवृत्तत्वादिति भावः ॥ अनन्तरं भाषा निरूपिता, सा च प्रायो मनःपूर्विका भवतीति मनोनिरूपणायाह—'आया भंते ! मणे'इत्यादि, एतत्सूत्राणि च भाषासूत्रवन्नेयानि, केवलमिह मनोद्रव्यसमुदयो मननोपकारी मनःपर्याप्तिनामकर्मोदयसम्पाद्यो, भेदश्च तेषां विदलनमात्रमिति ॥ अनन्तरं मनो निरूपितं, तच्च काये सत्येव भवतीति कायनिरूपणायाह—'आया भंते ! काये'इत्यादि, आत्मा कायः कायेन कृतस्यानुभवनात्, न ह्यन्येन कृतमन्योऽनुभवति अकृतागमप्रसङ्गात्, अथान्य आत्मनः कायः कायैकदेशच्छेदेऽपि संवेदनस्य सम्पूर्णत्वेनाभ्युपगमादिति प्रश्नः, [ ग्रन्थाग्रम् १३०००] उत्तरं त्वात्माऽपि कायः कथञ्चित्तदव्यतिरेकात् क्षीरनीरवत् अग्न्ययस्पिण्डवत् काञ्चनोपलवद्वा, अत एव कायस्पर्शे सत्यात्मनः संवेदनं भवति, अत एव च कायेन कृतमात्मना भवान्तरे वेद्यते, अत्यन्तभेदे चाकृतागमप्रसङ्ग इति, 'अन्नेवि काये'त्ति अत्यन्ताभेदे हि शरीरांशच्छेदे जीवांशच्छेदप्रसङ्गः, तथा च संवेदनासम्पूर्णता स्यात्, तथा शरीरस्य दाहे आत्मनोऽपि दाहप्रसङ्गेन परलोकाभावप्रसङ्ग इत्यतः कथञ्चिदात्मनोऽन्योऽपि काय इति, अन्यैस्तु कार्म्मणकायमाश्रित्यात्मा काय इति व्याख्यातं, कार्मणकायस्य संसार्यात्मनश्च परस्पराव्यभिचरितत्वेनैकस्वरूपत्वात्, 'अन्नेवि काए'त्ति औदारिकादिकायापेक्षया जीवादन्यः कायस्तद्विमोचनेन तद्भेदसिद्धेरिति, 'रूविंपि काए'त्ति रूप्यपि कायः औदारिकादिकायस्थूलरूपापेक्षया, अरूप्यपि कायः कार्म्मणकायस्यातिसूक्ष्मरूपित्वेनारूपित्वविवक्षणात्, 'एवं एक्केक्के पुच्छ'त्ति पूर्वोक्तप्रकारेणैकैकसूत्रे पृच्छा विधेया, तद्यथा—'सचित्ते भंते ! काये अचित्ते काये ?'-इत्यादि, अत्रोत्तरं—'सचित्तेवि काए' जीवदवस्थायां चैतन्यसमन्वितत्वात् 'अचित्तेवि काए' मृतावस्थायां चैतन्यस्याभावात् 'जी-

वेवि काये' जीवोऽपि विवक्षितोच्छ्वासादिप्राणयुक्तोऽपि भवति कायः औदारिकादिशरीरमपेक्ष्य, 'अजीवेवि काये'त्ति अजीवोऽपि उच्छ्वासादिरहितोऽपि भवति कायः कार्म्मणशरीरमपेक्ष्य 'जीवाणवि काये'त्ति जीवानां सम्बन्धी 'कायः' शरीरं भवति, 'अजीवाणवि काये'त्ति अजीवानामपि स्थापनार्हदादीनां 'कायः' शरीरं भवति शरीराकार इत्यर्थः 'पुव्विंपि काए'त्ति जीवसम्बन्धकालात्पूर्वमपि कायो भवति यथा भविष्यज्जीवसम्बन्धं मृतदर्दूरशरीरं 'काइज्जमाणेवि काए'त्ति जीवेन चीयमानोऽपि कायो भवति यथा जीवच्छरीरं, 'कायसमयवीतिक्कंतेवि काए'त्ति कायसमयो-जीवेन कायस्य कायताकरणलक्षणस्तं व्यतिक्रान्तो यः स तथा सोऽपि काय एव मृतकडेवरवत्, 'पुव्विंपि काए भिज्जइ'त्ति जीवेन कायतया ग्रहणसमयात्पूर्वमपि कायो मधुघटादिन्यायेन द्रव्यकायो भिद्यते प्रतिक्षणं पुद्गलचयापचयभावात्, 'काइज्जमाणेवि काए भिज्जइ'त्ति जीवेन कायीक्रियमाणोऽपि कायो भिद्यते, सिकताकणकलापमुष्टिग्रहणवत् पुद्गलानामनुक्षणं परिशाटभावात्, 'कायसमयवीतिक्कंतेऽवि काये भिज्जइ'त्ति कायसमयव्यतिक्रान्तस्य च कायता भूतभावतया घृतकुम्भादिन्यायेन, भेदश्च पुद्गलानां तत्स्वभावतयेति, चूर्णिकारेण पुनः कायसूत्राणि कायशब्दस्य केवलशरीरार्थत्यागेन चयमात्रवाचकत्वमङ्गीकृत्य व्याख्यातानि, यदाह-'कायसद्दो सव्वभावसामन्नसरीरवाई' कायशब्दः सर्वभावानां सामान्यं यच्छरीरं चयमात्रं तद्वाचक इत्यर्थः, एवं च 'आयावि काए, सेसदव्वाणिवि काये'त्ति, इदमुक्तं भवति-आत्माऽपि कायः प्रदेशसञ्चय इत्यर्थः, तदन्योऽप्यर्थः कायः प्रदेशसञ्चयरूपत्वादिति, रूपी कायः पुद्गलस्कन्धापेक्षया, अरूपी कायो जीवधर्मास्तिकायाद्यपेक्षया, अचित्तः कायोऽचेतनसञ्चयापेक्षया, जीवः कायः-उच्छ्वासादियुक्तावयवसञ्चयरूपः, अजीवः कायः तद्विलक्षणः, जीवानां कायो-जीवराशिः, अजीवानां कायः-परमाण्वादिराशिरिति, एवं शेषाण्यपि ॥ अथ कायस्यैव भेदानाह—'कइविहे ण'मित्यादि,

अयं च सप्तविधोऽपि प्राग् विस्तरेण व्याख्यातः, इह तु स्थानाशून्यार्थं लेशतो व्याख्यायते, तत्र च 'ओरालिए'त्ति औदारिकशरीरमेव पुद्गलस्कन्धरूपत्वादुपचीयमानत्वात्काय औदारिककायः, अयं च पर्याप्तकस्यैवेति, 'ओरालियमीसए'त्ति औदारिकश्चासौ मिश्रश्च कार्मणेनेत्यौदारिकमिश्रः, अयं चापर्याप्तकस्य, 'वेउव्विय'त्ति वैक्रियः पर्याप्तकस्य देवादेः, 'वेउव्वियमीसए'त्ति वैक्रियश्चासौ मिश्रश्च कार्म्मणेनेति वैक्रियमिश्रः, अयं चाप्रतिपूर्णवैक्रियशरीरस्य देवादेः, 'आहारए'त्ति आहारकः आहारकशरीरनिर्वृत्तौ, 'आहारगमीसए'त्ति आहारकपरित्यागेनौदारिकग्रहणायोद्यतस्याहारकमिश्रो भवति, मिश्रता पुनरौदारिकेणेति, 'कम्मए'त्ति विग्रहगतौ केवलिसमुद्घाते वा कार्म्मणः स्यादिति ॥ अनन्तरं काय उक्तस्तत्यागे च मरणं भवतीति तदाह—

कतिविहे णं भंते! मरणे पन्नत्ते?, गोयमा! पंचविहे मरणे पण्णत्ते, तंजहा–आवीचियमरणे ओहिमरणे आदिंतियमरणे बालमरणे पंडियमरणे। आवीचियमरणे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—दव्वावीचियमरणे खेत्तावीचियमरणे कालावीचियमरणे भवावीचियमरणे भावावीचियमरणे। दव्वावीचियमरणे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा—नेरइयदव्वावीचियमरणे तिरिक्खजोणियदव्वावीचियमरणे मणुस्सदव्वावीचियमरणे देवदव्वावीचियमरणे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ नेरइयदव्वावीचियमरणे नेरइयदव्वावीचियमरणे?, गोयमा! जण्णं नेरइया नेरइए दव्वे वट्टमाणा जाइं दव्वाइं नेरइयाउयत्ताए गहियाइं बद्धाइं पुट्ठाइं कडाइं पट्ठवियाइं निविट्ठाइं अभिनिविट्ठाइं अभिसमन्नागयाइं भवंति ताइं दव्वाइं आवीची अणुसमयं निरंतरं मरंतित्तिकट्टु, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ नेरइयदव्वावीचियमरणे, एवं

जाव देवदव्वावीचियमरणे, खेत्तावीचियमरणे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा! चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा-नेरइयखेत्तावीचियमरणे जाव देव०, से केणट्ठेणं भंते! एवं० नेरइयखेत्तावीचियमरणे नेर० २?, जण्णं नेरइया नेरइयखेत्ते वट्टमाणा जाइं दव्वाइं नेरइयाउयत्ताए एवं जहेव दव्वावीचियमरणे तहेव खेत्तावीचियमरणेवि, एवं जाव भावावीचियमरणे। ओहिमरणे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा-दव्वोहिमरणे खेत्तोहिमरणे जाव भावोहिमरणे। दव्वोहिमरणे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! चउव्विहे पण्णत्ते तंजहा-नेरइयदव्वोहिमरणे जाव देवदव्वोहिमरणे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वु० नेरइयदव्वोहिमरणे २?, गोयमा! जण्णं नेरइया नेरइयदव्वे वट्टमाणा जाइं दव्वाइं संपयं मरंति जण्णं नेरइया ताइं दव्वाइं अणागए काले पुणोवि मरिस्संति से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव दव्वोहिमरणे, एवं तिरिक्खजोणिय० मणुस्स० देवोहिमरणेवि, एवं एएणं गमेणं खेत्तोहिमरणेवि कालोहिमरणेवि भवोहिमरणेवि भावोहिमरणेवि। आइंतियमरणे णं भंते! पुच्छा, गोयमा! पंचविहे पन्नत्ते, तं०-दव्वादिंतियमरणे खेत्तादिंतियमरणे जाव भावादिंतियमरणे, दव्वादिंतियमरणे णं भंते! कतिविहे प०?, गो०! चउव्विहे प० तं०—नेरइयदव्वाइंतियमरणे जाव देवदव्वादिंतियमरणे, से केणट्ठेणं एवं वु० नेरइयदव्वादिंतियमरणे नेर० २?, गो०! जण्णं नेरइया नेरइयदव्वे वट्टमाणा जाइं दव्वाइं संपयं मरंति जे णं नेरइया ताइं दव्वाइं अणागए काले नो पुणोवि मरिस्संति से तेणट्ठेणं जावमरणे, एवं तिरिक्ख० मणुस्स० देवाइंतियमरणे, एवं खेत्ताइंतियमरणेवि एवं जाव भावाइंतियमरणेवि। बालमरणे णं भंते! कतिविहे प०?,

गो०! दुवालसविहे पं० तंजहा-वलयमरणं जहा खंदए जाव गद्धपट्ठे ॥ पंडियमरणे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा! दुविहे पण्णत्ते, तंजहा—पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य। पाओवगमणे णं भंते! कतिविहे प० ?, गोयमा! दुविहे पं०, तं—णीहारिमे य अनीहारिमे य जाव नियमं अपडिकम्मे। भत्तपच्चक्खाणे णं भंते! कतिविहे प० ?, एवं तं चेव नवरं नियमं सपडिकम्मे। सेवं भंते! २ त्ति ( सूत्रं ४९६ )॥ १३-७ ॥

'कतिविहे णं भंते! मरणे'इत्यादि, 'आवीइयमरणे'त्ति समन्ताद्वीचयः-प्रतिसमयमनुभूयमानायुषोऽपरापरायुर्दलिकोदयात्पूर्वपूर्वायुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिन् तदावीचिकं अथवाऽविद्यमाना वीचिः-विच्छेदो यत्र तदवीचिकं अवीचिकमेवावीचिकं तच्च तन्मरणं चेत्यावीचिकमरणं, 'ओहिमरणे'त्ति अवधिः-मर्यादा ततश्चावधिना मरणमवधिमरणं, यानि हि नारकादिभवनिबन्धनतयाऽऽयुःकर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते यदि पुनस्तान्येवानुभूय मरिष्यते तदा तदवधिमरणमुच्यते, तद्द्रव्यापेक्षया पुनस्तद्ग्रहणावधिं यावज्जीवस्य मृतत्वात्, संभवति च गृहीतोज्झितानां कर्म्मदलिकानां पुनर्ग्रहणं परिणामवैचित्र्यादिति, 'आइंतियमरणे'त्ति अत्यन्तं भवमात्यन्तिकं तच्च तन्मरणं चेति वाक्यं, यानि हि नारकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय पुनर्मरिष्यत इत्येवं यन्मरणं, तच्च तद्द्रव्यापेक्षयाऽत्यन्तभावित्वादात्यन्तिकमिति, 'बालमरणे'त्ति अविरतमरणं 'पंडियमरणे'त्ति सर्वविरतमरणं, तत्रावीचिकमरणं पञ्चधा द्रव्यादिभेदेन, द्रव्यावीचिकमरणं च चतुर्द्धा नारकादिभेदात्, तत्र नारकद्रव्यावीचिकमरणप्रतिपादनायाह—'जण्ण'मित्यादि, 'यत्' यस्माद्धेतोर्नैरयिका नारकत्वे द्रव्ये नारकजीवत्वेन वर्त्तमाना मरन्तीति योगः, 'नेरइयाउयत्ताए'त्ति नैरयिकायुष्कतया 'गहियाइं'ति स्पर्शनतः 'बद्धाइं'ति बन्धनतः 'पुट्ठाइं'ति पोषितानि प्रदेशप्रक्षेपतः 'कडाइं'ति

विशिष्टानुभागतः 'पट्ठवियाइं'ति स्थितिसम्पादनेन 'निविट्ठाइं'ति जीवप्रदेशेषु 'अभिनिविट्ठाइं'ति जीवप्रदेशेष्वभिव्याप्त्या निविष्टानि अतिगाढतां गतानीत्यर्थः, ततश्च 'अभिसमन्नागयाइं'ति अभिसमन्वागतानि-उदयावलिकायामागतानि तानि द्रव्याणि 'आविइ'त्ति, किमुक्तं भवति?-'अणुसमयं'ति अनुसमयं-प्रतिक्षणम्, एतच्च कतिपयसमयसमाश्रयणतोऽपि स्यादत आह-'निरंतरं मरंति'त्ति 'निरन्तरम्' अव्यवच्छेदेन सकलसमयेष्वित्यर्थः म्रियन्ते विमुञ्चन्तीत्यर्थः 'इतिकट्टु'त्ति इतिहेतोर्नैरयिकद्रव्यावीचिकमरणमुच्यत इति शेषः, एतस्यैव निगमनार्थमाह-'से तेणट्ठेण'मित्यादि। 'एवं जाव भावावीचियमरणे'त्ति इह यावत्करणाद् कालावीचिकमरणं भवावीचिकमरणं च द्रष्टव्यं, तत्र चैवं पाठः-'कालावीइयमरणे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?, गोयमा! चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा-नेरइयकालावीइयमरणे ४, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ नेरइयकालावीचियमरणे २?, गोयमा! जन्नं नेरइया नेरइयकाले वट्टमाणा'इत्यादि, एवं भवावीचिकमरणमप्यध्येयम्। नैरयिकद्रव्यावधिमरणसूत्रे 'जण्ण'मित्यादि, एवं चेहाक्षरघटना-नैरयिकद्रव्ये वर्त्तमाना ये नैरयिका यानि द्रव्याणि साम्प्रतं म्रियन्ते-त्यजन्ति तानि द्रव्याण्यनागतकाले पुनस्त इति गम्यं मरिष्यन्ते-त्यक्ष्यन्तीति यत्तन्नैरयिकद्रव्यावधिमरणमुच्यत इति शेषः 'से तेणट्ठेण'मित्यादि निगमनम्॥ पण्डितमरणसूत्रे 'णीहारिमे अणीहारिमे'त्ति यत्पादपोपगमनमाश्रयस्यैकदेशे विधीयते तन्निर्हारिमं, कडेवरस्य निर्हरणीयत्वात्, यच्च गिरिकन्दरादौ विधीयते तदनिर्हारिमं, कडेवरस्यानिर्हरणीयत्वात्, 'नियमं अप्पडिकम्मे'त्ति शरीरप्रतिकर्मवर्जितमेव, चतुर्विधाहारप्रत्याख्याननिष्पन्नं चेदं भवतीति, 'तं चेव'त्ति करणान्निर्हारिममनिर्हारिमं चेति दृश्यं, सप्रतिकर्म्मैव चेदं भवतीति॥ त्रयोदशशते सप्तमः॥ १३-७॥

अनन्तरोद्देशके मरणमुक्तं, तच्चायुष्कर्मस्थितिक्षयरूपमिति कर्म्मणां स्थितिप्रतिपादनार्थोऽष्टम उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कति णं भंते ! कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ, तं०—एवं बंधट्ठिइउद्देसो भाणियव्वो निरवसेसो जहा पन्नवणाए। सेवं भंते ! सेवं भंते ! ( सूत्रं ४९७ ) ॥ १३-८ ॥

'कति ण'मित्यादि, 'एवं बंधट्ठिइउद्देसओ'त्ति 'एवम्' अनेन प्रश्नोत्तरक्रमेण बन्धस्य—कर्म्मबन्धस्य स्थितिर्बन्धस्थितिः कर्म्मस्थितिरित्यर्थः तदर्थ उद्देशको बन्धस्थित्युद्देशको भणितव्यः, स च प्रज्ञापनायास्त्रयोविंशतितमपदस्य द्वितीयः, इह च वाचनान्तरे सङ्ग्रहणीगाथाऽस्ति, सा चेयं—"पयडीणं भेयठिई बंधोवि य इंदियाणुवाएणं। केरिसय जहन्नठिइं बंधइ उक्कोसियं वावि ॥ १ ॥" अस्याश्चायमर्थः—कर्म्मप्रकृतीनां भेदो वाच्यः, स चैवं—'कइ णं भंते ! कम्मपयडीओ पन्नत्ताओ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ, तंजहा—नाणावरणिज्जं दंसणावरणिज्ज'मित्यादि, तथा 'नाणावरणिज्जे णं भंते ! कम्मे कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—आभिणिबोहियणाणावरणिज्जे सुयणाणावरणिज्जे'इत्यादि। तथा प्रकृतीनां स्थितिर्वाच्या, सा चैवं—'नाणावरणिज्जस्स णं भंते ! कम्मस्स केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ'इत्यादि, तथा बन्धो ज्ञानावरणीयादिकर्म्मणामिन्द्रियानुपातेन वाच्यः, एकेन्द्रियादिर्जीवः कः कियतीं कर्म्मस्थितिं बध्नाति ? इति वाच्यमित्यर्थः, स चैवम्—एगिंदिया णं भंते ! जीवा नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधंति ?, गोयमा ! जहन्नेणं सागरोवमस्स तिन्नि सत्तभागे पलिओवमस्स असंखेज्जेणं भागेणं ऊणए उक्कोसेणं ते चेव पडिपुन्ने बंधंति'इत्यादि, तथा कीदृशो जीवो जघन्यां स्थितिं कर्मणामुत्कृष्टां वा बध्नातीति वाच्यं, तच्चेदं—'नाणावरणि-

ज्जस्स णं भंते! कम्मस्स जहन्नट्ठिइबंधए के० ?, गोयमा! अन्नयरे सुहुमसंपराए उवसामए वा खवए वा, एस णं गोयमा! णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स जहन्नट्ठिइबंधए, तव्वइरित्ते अजहन्ने'इत्यादि ॥ त्रयोदशशतेऽष्टमः ॥ १३-८ ॥

---

अनन्तरोद्देशके कर्म्मस्थितिरुक्ता, कर्म्मवशाच्च वैक्रियकरणशक्तिर्भवतीति तद्वर्णनार्थो नवम उद्देशकस्तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी से जहानामए केइ पुरिसे केयाघडियं गहाय गच्छेज्जा, एवामेव अणगारेवि भावियप्पा केयाघडियाकिच्चहत्थगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पाएज्जा ?, गोयमा! हंता उप्पाएज्जा, अणगारे णं भंते! भावियप्पा केवतियाइं पभू केयाघडियाहत्थकिच्चगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए ?, गोयमा! से जहानामए—जुवतिं जुवाणे हत्थेणं हत्थे एवं जहा तइयसए पंचमुद्देसए जाव नो चेव णं संपत्तीए विउव्विंसु वा विउव्विंति वा विउव्विस्संति वा, से जहानामए-केइ पुरिसे हिरन्नपेलं गहाय गच्छेज्जा, एवामेव अणगारेवि भावियप्पा हिरण्णपेलहत्थकिच्चगएणं अप्पाणेणं सेसं तं चेव, एवं सुवन्नपेलं, एवं रयणपेलं वइरपेलं वत्थपेलं आभरणपेलं, एवं वियलकिड्डं सुंबकिड्डं चम्मकिड्डं कंबलकिड्डं एवं अयभारं तंबभारं तउयभारं सीसगभारं सुवन्नभारं हिरन्नभारं वइरभारं, से जहानामए-वग्गुली सिया दोवि पाए उल्लंबिया २ उड्ढंपादा अहोसिरा चिट्ठेज्जा एवामेव अणगारेवि भावियप्पा वग्गुलीकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं, एवं जन्नोवइयवत्तव्वया भा० जाव विउव्विस्संति वा, से जहानामए-जलोया सिया उदगंसि कायं उव्विहिया २ गच्छेज्जा एवामेव सेसं जहा वग्गुलीए, से जहाणामए—

बीयंबीयगसउणे सिया दोवि पाए समतुरंगेमाणे स० २ गच्छेज्जा एवामेव अणगारे सेसं तं चेव, से जहाणामए-पक्खिविरालिए सिया रुक्खाओ रुक्खं डेवेमाणे गच्छेज्जा एवामेव अणगारे सेसं तं चेव, से जहानामए-जीवंजीवगसउणे सिया दोवि पाए समतुरंगेमाणे स० २ गच्छेज्जा एवामेव अणगारे सेसं तं चेव, से जहाणामए—हंसे सिया तीराओ तीरं अभिरममाणे २ गच्छेज्जा एवामेव अणगारे हंसकिच्चगएणं अप्पाणेणं तं चेव, से जहानामए समुद्दवायसए सिया वीईओ वीइं डेवेमाणे गच्छेज्जा एवामेव तहेव, से जहानामए-केइ पुरिसे चक्कं गहाय गच्छेज्जा एवामेव अणगारेवि भावियप्पा चक्कहत्थकिच्चगएणं अप्पाणेणं सेसं जहा केयाघडियाए, एवं छत्तं एवं चामरं, से जहानामए-केइ पुरिसे रयणं गहाय गच्छेज्जा एवं चेव, एवं वइरं वेरुलियं जाव रिट्ठं, एवं उप्पलहत्थगं एवं पउमहत्थगं एवं कुमुदहत्थगं एवं जाव से जहानामए-केइ पुरिसे सहस्सपत्तगं गहाय गच्छेज्जा एवं चेव, से जहानामए-केइ पुरिसे भिसं अवद्दालिय २ गच्छेज्जा एवामेव अणगारेवि भिसकिच्चगएणं अप्पाणेणं तं चेव, से जहानामए—मुणालिया सिया उदगंसि कायं उम्मज्जिय २ चिट्ठिज्जा एवामेव सेसं जहा वग्गुलीए, से जहानामए वणसंडे सिया किण्हे किण्होभासे जाव निकुरुंबभूए पासादीए ४ एवामेव अणगारेवि भावियप्पा वणसंडकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पाएज्जा सेसं तं चेव, से जहानामए—पुक्खरिणी सिया चउक्कोणा समतीरा अणुपुव्वसुजायजावसद्दुन्नइयमहुरसरणादिया पासादीया ४ एवामेव अणगारेवि भावियप्पा पोक्खरिणीकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा?, हंता उप्पएज्जा, अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवतियाइं पभू पोक्खरिणीकि

ञ्चगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए?, सेसं तं चेव जाव विउव्विस्संति वा। से भंते! किं मायी विउव्वति अमायी विउव्वति?, गोयमा! मायी विउव्वइ नो अमायी विउव्वइ, मायी णं तस्स ठाणस्स अणालोइय० एवं जहा तइयसए चउत्थुद्देसए जाव अत्थि तस्स आराहणा। सेवं भंते! सेवं भंते! जाव विहरइत्ति ( सूत्रं ४९८ )॥ १३-९ ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'केयाघडियं'ति रज्जुप्रान्तबद्धघटिकां 'केयाघडियाकिच्चहत्थगएणं'ति केयाघटिकालक्षणं यत्कृत्यं-कार्यं तत् हस्ते गतं यस्य स तथा तेनात्मना 'वेहासं'ति विभक्तिपरिणामात् 'विहायसि' आकाशे 'केयाघडियाकिच्चहत्थगयाइं'-ति केयाघटिकालक्षणं कृत्यं हस्ते गतं येषां तानि तथा, 'हिरन्नपेडं'ति हिरण्यस्य मञ्जूषां 'वियलकिलं'ति विदलानां-वंशार्द्धानां यः कटः स तथा तं 'सुंबकिडं'ति वीरणकटं 'चम्मकिडुं'ति चर्म्मव्यूतं खट्वादिकं 'कंबलकिडुं'ति ऊर्णामयं कम्बलं, जीनादि, 'वग्गुली'ति चर्म्मपक्षः पक्षिविशेषः 'वग्गुलिकिच्चगएणं'ति वग्गुलीलक्षणं कृत्यं-कार्यं गतं-प्राप्तं येन स तथा तद्रूपतां गत इत्यर्थः, 'एवं जन्नोवइयवत्तव्वया भाणियव्वा'इत्यनेनेदं सूचितं—'हंता उप्पएज्जा, अणगारे णं भंते! भावियप्पा केवइयाइं पभू वग्गुलिरूवाइं विउव्वित्तए?, गोयमा! से जहानामए-जुवतिं जुवाणे हत्थेणं हत्थे गिण्हेज्जा'इत्यादि, 'जलोय'त्ति जलौकाः जलजो द्वीन्द्रियजीवविशेषः 'उव्विहिय'त्ति उद्वृह्य २ उत्प्रेर्य २ इत्यर्थः। 'वीयंवीयगसउणे'त्ति बीजंबीजकाभिधानः शकुनिः स्यात् 'दोवि पाए'त्ति द्वावपि पादौ 'समतुरंगेमाणे'त्ति समौ-तुल्यौ तुरङ्गस्य-अश्वस्य समोत्क्षेपणं कुर्वन् समतुरंगायमाणः, समकमुत्पाटयन्नित्यर्थः, 'पक्खिविरालए'त्ति जीवविशेषः 'डेवेमाणे'त्ति अतिक्रामन्नित्यर्थः, 'वीईओ वीइं'ति कल्लोलात् कल्लोलं, 'वेरुलियं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं-'लोहियक्खं मसारगल्लं हंसगब्भं पुलगं सोगंधियं जोईरसं अंकं अंजणं रयणं जायरूवं अंजणपुलगं

फलिहं'ति 'कुमुदहत्थगं'इत्यत्र त्वेवं यावत्करणादिदं दृश्यं—'नलिणहत्थगं सुभगहत्थगं सोगंधियहत्थगं पुंडरीयहत्थगं [महापुंडरीयहत्थगं] सयवत्तहत्थगं'ति, 'विसं'ति बिसं-मृणालम् 'अवदालिय'त्ति अवदार्य-दारयित्वा 'मुणालय'त्ति नलिनी-कायम् 'उम्मज्जिय'त्ति कायमुन्मज्ज्य-उन्मग्नं कृत्वा, 'किण्हे किण्होभासे'त्ति 'कृष्णः' कृष्णवर्णोऽञ्जनवत् स्वरूपेण कृष्ण एवाव-भासते-द्रष्टृणां प्रतिभातीति कृष्णावभासः, इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'नीले नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे निद्धे निद्धोभासे तिव्वे तिव्वोभासे किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए हरिए हरियच्छाए सीए सीयच्छाए तिव्वे तिव्वच्छाए घणकडियकडच्छाए रम्मे महामेहनिउरंबभूए'त्ति, तत्र च 'नीले नीलोभासे'त्ति प्रदेशान्तरे 'हरिए हरि-ओभासे'त्ति प्रदेशान्तर एव नीलश्च मयूरगलवत् हरितस्तु शुकपिच्छवत्, हरितालाभ इति च वृद्धाः, 'सीए सीओभासे'त्ति शीतः स्पर्शापेक्षया, वल्ल्याद्याक्रान्तत्वादिति च वृद्धाः, 'निद्धे निद्धोभासे'त्ति स्निग्धो रूक्षत्ववर्जितः 'तिव्वे तिव्वोभासे'त्ति 'तीव्रः' वर्णादिगुणप्रकर्षवान् 'किण्हे किण्हच्छाए'त्ति इह कृष्णशब्दः कृष्णच्छाय इत्यस्य विशेषणमिति न पुनरुक्तता, तथाहि—कृष्णः सन् कृष्णच्छायः, छाया चादित्यावरणजन्यो वस्तुविशेषः, एवमुत्तरपदेष्वपि, 'घणकडियकडच्छाए'त्ति अन्योऽन्यं शाखानुप्रवेशाद्बहलं निरन्तरच्छाय इत्यर्थः, 'अणुपुव्वसुजाय'इत्यत्र यावत्करणादेवं दृश्यम्—'अणुपुव्वसुजायवप्पगंभीरसीयलजला' अनुपूर्वेण सुजाता वप्रा यत्र गम्भीरं शीतलं च जलं यत्र सा तथेत्यादि, 'सद्दुन्नइयमहुरसरनाइय'त्ति इदमेवं दृश्यं—सुयबरहिणमयणसाल-कोंचकोइलकोज्जक(कोंचक)भिंका(गा)रकोंडलक(कोंडरीक) जीवजीवकनंदीमुहकविलपिंगलक्खगकारंडगचक्कवाय-कलहंससारसअणेगसउणगणमिहुणविरइयसद्दुन्नइयमहुरसरनाइय'त्ति तत्र शुकादीनां सारसान्तानामनेकेषां शकुनिग-

णानां मिथुनैर्विरचितं शब्दोन्नतिकं च–उन्नतशब्दकं मधुरस्वरं च नादितं–लपितं यस्यां सा तथेति ॥ त्रयोदशशते नवमः ॥ १३–९ ॥

---

अनन्तरोद्देशके वैक्रियकरणमुक्तं, तच्च समुद्घाते सति छद्मस्थस्य भवतीति छाद्मस्थिकसमुद्घाताभिधानार्थो दशम उद्देशकस्तस्य चेदमादिसूत्रं-

कति णं भंते! छाउमत्थियसमुग्घाया पन्नत्ता?, गोयमा! छ छाउमत्थिया समुग्घाया पन्नत्ता, तंजहा—वेयणासमुग्घाए एवं छाउमत्थियसमुग्घाया नेयव्वा जहा पन्नवणाए जाव आहारगसमुग्घायेत्ति । सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ( सूत्रं ४९९ ) ॥ १३–१० ॥ तेरसमं सयं समत्तं ॥

'कइ ण'मित्यादि, 'छाउमत्थिय'त्ति छद्मस्थः—अकेवली तत्र भवाश्छाद्मस्थिकाः 'समुग्घाये'ति 'हन हिंसागत्योः' हननं घातः सम्–एकीभावे उत्–प्राबल्ये, ततश्चैकीभावेन प्राबल्येन च घातः समुद्घातः, अथ केन सहैकीभावगमनम्?, उच्यते, यदाऽऽत्मा वेदनादिसमुद्घातं गतस्तदा वेदनाद्यनुभवज्ञानपरिणत एव भवतीति वेदनाद्यनुभवज्ञानेन सहैकीभावः, प्राबल्येन घातः कथम्?, उच्यते, यस्माद् वेदनादिसमुद्घातपरिणतो बहून् वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरानुभवनयोग्यानुदीरणाकरणेनाकृष्योदये प्रक्षिप्यानुभूय निर्जरयति, आत्मप्रदेशैः सह संश्लिष्टान् सातयतीत्यर्थः, अतः प्राबल्येन घात इति, अयं चेह षड्विध इति बहुवचनं, तत्र 'वेयणासमुग्घाए'त्ति एकः, 'एवं छाउमत्थिए' इत्यादिअतिदेशः, 'जहा पन्नवणाए'त्ति इह षट्त्रिंशत्तमपद इति शेषः, ते च शेषाः पञ्चैवं—'कसायसमुग्घाए २ मारणंतियसमुग्घाए ३ वेउव्वियसमुग्घाए ४ तेयगसमुग्घाए ५ आहारगसमुग्घाए ६'त्ति, तत्र वेदनासमुद्घातः असद्वेद्यकर्म्माश्रयः कषायसमुद्घातः कषायाख्यचारित्रमोहनीयकर्म्माश्रयः, मारणान्तिकसमुद्घातः अन्तर्मुहूर्त्तशेषायुष्कक-

र्माश्रयः, वैकुर्विकतैजसाहारकसमुद्घाताः शरीरनामकर्माश्रयाः, तत्र वेदनासमुद्घातसमुद्धत आत्मा वेदनीयकर्मपुद्गलशातं करोति, कपायसमुद्घातसमुद्धतः कपायपुद्गलशातं, मारणान्तिकसमुद्घातसमुद्धत आयुष्ककर्मपुद्गलशातं, वैकुर्विकसमुद्घातसमुद्धतस्तु जीवप्रदेशान् शरीराद्बहिर्निष्काश्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमात्रमायामतश्च सङ्ख्येयानि योजनानि दण्डं निसृजति निसृज्य च यथास्थूलान् वैक्रियशरीरनामकर्म्मपुद्गलान् प्राग्बद्धान् सातयति सूक्ष्मांश्चादत्ते, यथोक्तं–'वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरइ २ अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ २ अहासुहुमे पोग्गले आइयइ'त्ति । एवं तैजसाहारकसमुद्घातावपि व्याख्येयाविति ॥ त्रयोदशशते दशमः ॥ १३–१० ॥ समाप्तं च त्रयोदशं शतम् ॥ १३ ॥

त्रयोदशस्यास्य शतस्य वृत्तिः, कृता मया पूज्यपदप्रसादात् ।
न ह्यन्धकारे विहितोद्यमोऽपि, दीपं विना पश्यति वस्तुजातम् ॥ १ ॥

॥ इति समाप्तं श्रीमदभयदेवसूरिवरविहितवरवृत्तियुक्तं भगवत्यां शतकं त्रयोदशम् ॥

## ॥ अथ चतुर्दशं शतकम् ॥

व्याख्यातं विचित्रार्थं त्रयोदशं शतम्, अथ विचित्रार्थमेव क्रमायातं चतुर्दशमारभ्यते, तत्र च दशोद्देशकाः, तत्सङ्ग्रहगाथा चेयम्—

चरमु १ म्माद २ सरीरे ३ पोग्गल ४ अगणी ५ तहा किमाहारे ६ । संसिट्ठ ७ मंतरे खलु ८ अणगारे ९ केवली चेव १० ॥७५॥ रायगिहे जाव एवं वयासी—अणगारे णं भंते ! भावियप्पा चरमं देवावासं वीतिक्कंते परमं देवावासमसंपत्ते एत्थ णं अंतरा कालं करेज्जा तस्स णं भंते ! कहिं गती कहिं उववाए पन्नत्ते ?, गोयमा ! जे से तत्थ परियस्सओ तल्लेसा देवावासा तहिं तस्स उववाए पन्नत्ते, से य तत्थ गए विराहेज्जा कम्मलेस्समेव पडिवडइ, से य तत्थ गए नो विराहेज्जा एयामेव लेस्सं उवसंपज्जित्ताणं विहरति ॥ अणगारे णं भंते ! भावियप्पा चरमं असुरकुमारावासं वीतिक्कंते परमअसुरकुमारा० एवं चेव एवं जाव थणियकुमारावासं जोइसियावासं एवं वेमाणियावासं जाव विहरइ (सूत्रं ५००) ॥ नेरइयाणं भंते ! कहं सीहा गती कहं सीहे गतिविसए पण्णत्ते ?, गोयमा ! से जहानामए—केइ पुरिसे तरुणे बलवं जुगवं जाव निउणसिप्पोवगए आउट्टियं बाहं पसारेज्जा पसारियं वा बाहं आउंटेज्जा विक्खिण्णं वा मुट्ठिं साहरेज्जा साहरियं वा मुट्ठिं विक्खिरेज्जा उन्निमिसियं वा अच्छिं निमिसेज्जा निमिसियं वा अच्छिं उम्मिसेज्जा, भवे एयारूवे ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, नेरइया णं एगसमएण वा दुसमएण वा तिसमएण वा विग्गहेणं उववज्जंति, नेरइयाणं गोयमा ! तहा सीहा गती तहा सीहे गतिविसए पण्णत्ते एवं जाव वेमा-

णियाणं, नवरं एगिंदियाणं चउसमइए विग्गहे भाणियव्वे । सेसं तं चेव ॥ ( सूत्रं ५०१ ) ॥

'चरमुम्माद सरीरे' इत्यादि, तत्र 'चरम' त्ति सूचामात्रत्वादस्य चरमशब्दोपलक्षितोऽपि चरमः प्रथम उद्देशकः, 'उम्माय' त्ति उन्मादार्थाभिधायकत्वादुन्मादो द्वितीयः, 'सरीरे' त्ति (शरीरार्थाभिधायकत्वात्) शरीरशब्दोपलक्षितत्वाच्छरीरस्तृतीयः 'पुग्गल' त्ति पुद्गलार्थाभिधायकत्वात्पुद्गलश्चतुर्थः, 'अगणी' त्ति अग्निशब्दोपलक्षितत्वादग्निः पञ्चमः, 'किमाहारे' त्ति किमाहारा इत्येवंविधप्रश्नोपलक्षितत्वात्किमाहारः षष्ठः 'संसिट्ठ' त्ति 'चिरसंसिट्ठोऽसि गोयम' त्ति इत्यत्र पदे यः संश्लिष्टशब्दस्तदुपलक्षितत्वात् संश्लिष्टोद्देशकः सप्तमः, 'अंतरे' त्ति पृथिवीनामन्तराभिधायकत्वादन्तरोद्देशकोऽष्टमः, 'अणगारे' त्ति अणगारेतिपूर्वपदत्वादनगारोद्देशको नवमः, 'केवलि' त्ति केवलीतिप्रथमपदत्वात्केवली दशमोद्देशक इति॥ तत्र प्रथमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते-'चरमं देवावासं वीतिक्कंते परमं देवावासं असंपत्ते' त्ति, 'चरमम्' अर्वाग्भागवर्त्तिनं स्थित्यादिभिः 'देवावासं' सौधर्मादिदेवलोकं 'व्यतिक्रान्तः' लङ्घितस्तदुपपातहेतुभूतलेश्यापरिणामापेक्षया 'परमं' परभागवर्त्तिनं स्थित्यादिभिरेव 'देवावासं' सनत्कुमारादिदेवलोकं 'असम्प्राप्तः' अप्राप्तस्तदुपपातहेतुभूतलेश्यापरिणामापेक्षयैव, इदमुक्तं भवति-प्रशस्तेष्वध्यवसायस्थानेषूत्तरोत्तरेषु वर्त्तमान आराद्भागस्थितसौधर्मादिगतदेवस्थित्यादिबन्धयोग्यतामतिक्रान्तः परभागवर्त्तिसनत्कुमारादिगतदेवस्थित्यादिबन्धयोग्यतां चाप्राप्तः 'एत्थ णं अंतर' त्ति इहावसरे 'कालं करेज्ज' त्ति म्रियते यस्तस्य क्वोत्पादः? इति प्रश्नः, उत्तरं तु 'जे से तत्थ' त्ति अथ ये तत्रेति-तयोः चरमदेवावासपरमदेवावासयोः 'परिपार्श्वतः' समीपे सौधर्मादेरासन्नाः सनत्कुमारादेर्वाऽऽसन्नास्तयोर्मध्यभागे ईशानादावित्यर्थः 'तल्लेसा देवावास' त्ति यस्यां लेश्यायां वर्त्तमानः साधुर्मृतः सा लेश्या येषु ते तल्लेश्या देवावासाः 'तहिं' ति तेषु देवावासेषु तस्यानगारस्य गतिर्भवतीति, यत उच्यते-"जल्लेसे मरइ

जीवे तल्लेसे चेव उववज्जइ'त्ति, 'से य'त्ति स पुनरनगारस्तत्र मध्यमभागवर्त्तिनि देवावासे गतः 'विराहिज्ज'त्ति येन लेश्यापरिणामेन तत्रोत्पन्नस्तं परिणामं यदि विराधयेत् तदा 'कम्मलेस्सामेव'त्ति कर्म्मणः सकाशाद्या लेश्या—जीवपरिणतिः सा कर्म्मलेश्या भावलेश्येत्यर्थः 'तामेव प्रतिपतति' तस्या एव प्रतिपतति—अशुभतरतां याति, न तु द्रव्यलेश्यायाः प्रतिपतति, सा हि प्राक्तन्येवास्ते, द्रव्यतोऽवस्थितलेश्यत्वाद्देवानामिति। पक्षान्तरमाह—'से य तत्थे'त्यादि, 'सः' अनगारः 'तत्र' मध्यमे देवावासे गतः सन् यदि न विराधयेत्तं परिणामं तदा तामेव च लेश्यां ययोत्पन्नः 'उपसम्पद्य' आश्रित्य 'विहरति' आस्त इति ॥ इदं सामान्यं देवावासमाश्रित्योक्तं, अथ विशेषितं तमेवाश्रित्याह—'अणगारे ण'मित्यादि, ननु यो भावितात्माऽनगारः स कथमसुरकुमारेषूत्पत्स्यते? विराधितसंयमानां तत्रोत्पादादिति, उच्यते, पूर्वकालापेक्षया भावितात्मत्वम्, अन्तकाले च संयमविराधनासद्भावादसुरकुमारादितयोपपात इति न दोषः, बालतपस्वी वाऽयं भावितात्मा द्रष्टव्य इति ॥ अनन्तरं देवगतिरुक्तेति गत्यधिकारान्नारकगतिमाश्रित्याह—'नेरइयाण'मित्यादि, 'कहं सीहा गइ'त्ति 'कथं' केन प्रकारेण, कीदृशीत्यर्थः, शीघ्रा गतिः, नारकाणामुत्पद्यमानानां शीघ्रा गतिर्भवतीति प्रतीतं, यादृशेन च शीघ्रत्वेन शीघ्राऽसाविति च न प्रतीतमित्यतः प्रश्नः कृतः 'कहं सीहे गइविसए'त्ति कथमिति कीदृशः 'सीहे'त्ति शीघ्रगतिहेतुत्वाच्छीघ्रो गतिविषयो—गतिगोचरस्तद्धेतुत्वात्काल इत्यर्थः, कीदृशी शीघ्रा गतिः? कीदृशश्च तत्कालः? इति तात्पर्यं, 'तरुणे'त्ति प्रवर्द्धमानवयाः, स च दुर्बलोऽपि स्यादत आह—'बलवं'ति शारीरप्राणवान्, बलं च कालविशेषाद्विशिष्टं भवतीत्यत आह—'जुगवं'ति युगं—सुषमदुष्षमादिः कालविशेषस्तत् प्रशस्तं विशिष्टबलहेतुभूतं यस्यास्त्यसौ युगवान्, यावत्करणादिदं दृश्यं—'जुवाणे' वयःप्राप्तः 'अप्पायंके' अल्पशब्दस्याभावार्थत्वादनातङ्को—नीरोगः 'थिरग्गहत्थे'स्थिराग्रहस्तः सुलेखकवत् 'दढपाणिपायपासपि-

ट्ठंतरोरुपरिणए' दढं पाणिपादं यस्य पार्श्वौ पृष्ठ्यन्तरे च उरू च परिणते-परिनिष्ठिततां गते यस्य स तथा, उत्तमसंहनन इत्यर्थः, 'तलजमलजुयलपरिघनिभबाहू' तलौ-तालवृक्षौ तयोर्यमलं-समश्रेणीकं यद् युगलं-द्वयं परिघश्च-अर्गला तन्निभौ-तत्सदृशौ दीर्घसरलपीनत्वादिना बाहू यस्य स तथा, 'चम्मेट्ठदुहणमुट्ठियसमाहयनिचियगायकाए' चर्मेष्टया द्रुघणेन मुष्टिकेन च समाहतानि अभ्यासप्रवृत्तस्य निचितानि गात्राणि यत्र स तथाविधः कायो यस्य स तथा, चर्मेष्टादयश्च लोकप्रतीताः, 'ओरसबलसमन्नागए' आन्तरबलयुक्तः 'लंघणपवणजइणवायामसमत्थे' जविनशब्दः शीघ्रवचनः 'छेए' प्रयोगज्ञः 'दक्खे' शीघ्रकारी 'पत्तट्ठे' अधिकृतकर्म्मणि निष्ठां गतः 'कुसले' आलोचितकारी 'मेहावी' सकृच्छ्रुतदृष्टकर्म्मज्ञः 'निउणे' उपायारम्भकः, एवंविधस्य हि पुरुषस्य शीघ्रं गत्यादिकं भवतीत्यतो बहुविशेषणोपादानमिति, 'आउंटियं'ति सङ्कोचितं 'विक्खिण्णं'ति 'विकीर्णं' प्रसारितां 'साहरेज्ज'त्ति 'साहरेत्' सङ्कोचयेत् 'विक्खिरेज्ज'त्ति विकिरेत्-प्रसारयेत् 'उम्मिसियं'ति 'उन्मिषितम्' उन्मीलितं 'निम्मिसेज्ज'त्ति निमीलयेत्, 'भवेयारूवे'त्ति काकाऽध्येयं, काकुपाठे चायमर्थः स्यात्-यदुतैवं मन्यसे त्वं गौतम! भवेदेतद्रूपं-भवेत्स स्वभावः शीघ्रतायां नारकगतेस्तद्विषयस्य च यदुक्तं विशेषणपुरुषबाहुप्रसारणादेरिति, एवं गौतममतमाशङ्क्य भगवानाह-नायमर्थः समर्थः, अथ कस्मादेवमित्याह—'नेरइयाण'मित्यादि, अयमभिप्रायः-नारकाणां गतिरेकद्वित्रिसमया बाहुप्रसारणादिका चासङ्ख्येयसमयेति कथं तादृशी गतिर्भवति नारकाणामिति?, तत्र च 'एगसमएण व'त्ति एकेन समयेनोपपद्यन्त इति योगः, ते च ऋजुगतावेव, वाशब्दो विकल्पे, इह च विग्रहशब्दो न सम्बन्धितः, तस्यैकसामायिकस्याभावात्, 'दुसमएण व'त्ति द्वौ समयौ यत्र स द्विसमयस्तेन विग्रहेणेति योगः, एवं त्रिसमयेन वा विग्रहेण-वक्रेण, तत्र द्विसमयो विग्रह एवं-यदा भरतस्य पूर्वस्या दिशो नरके पश्चिमायामुत्पद्यते

तदैकेन समयेनाधो याति द्वितीयेन तु तिर्यगुत्पत्तिस्थानमिति, त्रिसमयविग्रहस्त्वेवं—यदा भरतस्य पूर्वदक्षिणाया दिशो नारकेऽपरोत्तरायां दिशि गत्वोपपद्यते तदैकेन समयेनाधः समश्रेण्या याति द्वितीयेन च तिर्यक् पश्चिमायां तृतीयेन तु तिर्यगेव वायव्यां दिशि उत्पत्तिस्थानमिति, तदनेन गतिकाल उक्तः, एतदभिधानाच्च शीघ्रा गतिर्यादृशी तदुक्तमिति, अथ निगमयन्नाह—'नेरइयाण'मित्यादि, 'तहा सीहा गइ'त्ति यथोत्कृष्टतः समयत्रये भवति 'तहा सीहे गइविसए'त्ति तथैव, 'एगिंदियाणं चउसामइए विग्गहे'त्ति उत्कर्षतश्चतुःसमयं एकेन्द्रियाणां 'विग्रहो' वक्रगतिर्भवति, कथम्?, उच्यते, त्रसनाड्या बहिस्तादधोलोके विदिशो दिशं यात्येकेन, जीवानामनुश्रेणि गमनात्, द्वितीयेन तु लोकमध्ये प्रविशति, तृतीयेनोर्द्धं याति, चतुर्थेन तु त्रसनाडीतो निर्गत्य दिग्व्यवस्थितमुत्पादस्थानं प्राप्नोतीति, एतच्च बाहुल्यमङ्गीकृत्योच्यते, अन्यथा पञ्चसमयोऽपि विग्रहो भवेदेकेन्द्रियाणां, तथाहि—त्रसनाड्या बहिस्तादधोलोके विदिशो दिशं यात्येकेन द्वितीयेन लोकमध्ये तृतीयेनोर्ध्वलोके चतुर्थेन ततस्तिर्यक् पूर्वादिदिशो निर्गच्छति ततः पञ्चमेन विदिग्व्यवस्थितमुत्पत्तिस्थानं यातीति, उक्तञ्च—"विदिसाउ दिसिं पढमे बीए पइसरइ नाडिमज्झंमि। उड्ढं तइए तुरिए उ नीइ विदिसं तु पंचमए ॥ १ ॥" इति, 'सेसं तं चेव'त्ति 'पुढविक्काइयाणं णं भंते! कहं सीहा गई'इत्यादि सर्वं यथा नारकाणां तथा वाच्यमित्यर्थः ॥ अनन्तरं गतिमाश्रित्य नारकादिदण्डक उक्तः, अथानन्तरोत्पन्नत्वादि प्रतीत्यापरं तमेवाह—

नेरइया णं भंते! किं अणंतरोववन्नगा परंपरोववन्नगा अणंतरपरंपरअणुववन्नगा?, गोयमा! नेर० अणंतरोववन्नगावि परंपरोववन्नगावि अणंतपरंपरअणुववन्नगावि, से केण एवं वु० जाव अणंतरपरंपरअणुववन्नगावि?, गोयमा! जे णं नेरइया पढमसमयोववन्नगा ते णं नेरइया अणंतरोववन्नगा, जे णं नेरइया अपढमसमयोववन्नगा ते

णं नेरइया परंपरोववन्नगा, जे णं नेर० विग्गहगइसमावन्नगा ते णं नेरइया अणंतरपरंपरअणुववन्नगा, से तेण-
ट्ठेणं जाव अणुववन्नगावि, एवं निरंतरं जाव वेमा०। अणंतरोववन्नगा णं भंते! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति?
तिरिक्ख० मणुस्स० देवाउयं पकरेंति?, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति। परंपरोव-
वन्नगा णं भंते! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति जाव देवाउयं पकरेंति?, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेंति ति-
रिक्खजोणियाउयंपि पकरेंति मणुस्साउयंपि पकरेंति नो देवाउयं पकरेंति। अणंतरपरंपरअणुववन्नगा णं भंते!
नेर० किं नेरइयाउयं प० पुच्छा, गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति, एवं जाव वेमाणिया,
नवरं पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य परंपरोववन्नगा चत्तारिवि आउयाइं प०, सेसं तं चेव २॥ नेरइया
णं भंते! किं अणंतरनिग्गया परंपरनिग्गया अनंतरपरंपरअनिग्गया?, गोयमा! नेरइया णं अणंतरनिग्गयावि
जाव अणंतरपरंपरअनिग्गयावि, से केणट्ठेणं जाव अणिग्गयावि?, गोयमा! जे णं नेरइया पढमसमयनिग्गया ते
णं नेरइया अणंतरनिग्गया, जे णं नेरइया अपढमसमयनिग्गया ते णं नेरइया परंपरनिग्गया, जे णं नेरइया वि-
ग्गहगतिसमावन्नगा ते णं नेरइया अणंतरपरंपरअणिग्गया, से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव अणिग्गयावि, एवं जाव
वेमाणिया ३॥ अणंतरनिग्गया णं भंते! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति जाव देवाउयं पकरेंति?, गोयमा! नो
नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति। परंपरनिग्गया णं भंते! नेरइया किं नेरइयाउयं० पुच्छा, गोयमा!
नेरइयाउयंपि पकरेंति जाव देवाउयंपि पकरेंति। अणंतरपरंपरअणिग्गया णं भंते! नेरइया पुच्छा, गोयमा! नो

नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति, एवं निरवसेसं जाव वेमाणिया ४ ॥ नेरइया णं भंते ! किं अणंतरं खेदोववन्नगा परंपरं खेदोववन्नगा अणंतरपरंपरखेदाणुववन्नगा ?, गोयमा ! नेरइया० एवं एएणं अभिलावेणं ते चेव चत्तारि दंडगा भाणियव्वा। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ (सूत्रं ५०२)॥ चोद्दसमस्सयस्स पढमो १४-१

'नेरइया ण'मित्यादि, 'अणंतरोववन्नग'त्ति न विद्यते अन्तरं—समयादिव्यवधानं उपपन्ने—उपपाते येषां ते अनन्तरोपपन्नकाः 'परंपरोववन्नग'त्ति परम्परा—द्वित्रादिसमयता उपपन्ने—उपपाते येषां ते परम्परोपपन्नकाः, 'अणंतरपरंपरअणुववन्नग'त्ति अनन्तरं—अव्यधानं परम्परं च—द्वित्रादिसमयरूपमविद्यमानं उत्पन्नं—उत्पादो येषां ते तथा, एते च विग्रहगतिकाः, विग्रहगतौ हि द्विविधस्याप्युत्पादस्याविद्यमानत्वादिति ॥ अथानन्तरोपपन्नादीनाश्रित्यायुर्बन्धमभिधातुमाह—'अणंतरे'त्यादि, इह चानन्तरोपपन्नानामनन्तरपरम्परानुपपन्नानां च चतुर्विधस्याप्यायुषः प्रतिषेधोऽध्येतव्यः, तस्यामवस्थायां तथाविधाध्यवसायस्थानाभावेन सर्वजीवानामायुषो बन्धाभावात्, स्वायुषस्त्रिभागादौ च शेषे बन्धसद्भावात, परम्परोपपन्नकास्तु स्वायुषः षण्मासे शेषे, मतान्तरेणोत्कर्षतः षण्मासे जघन्यतश्चान्तर्मुहूर्त्ते शेषे भवप्रत्ययात्तिर्यग्मनुष्यायुषी एव कुर्वन्ति, नेतरे इति, 'एवं जाव वेमाणिय'त्ति अनेनोक्तालापकत्रययुक्तश्चतुर्विंशतिदण्डकोऽध्येतव्य इति सूचितं, यश्चात्र विशेषस्तं दर्शयितुमाह—'नवरं पंचिंदिए'त्यादि ॥ अथानन्तरनिर्गतत्वादिनाऽपरं दण्डकमाह—'नेरइया ण' मित्यादि, तत्र निश्चितं स्थानान्तरप्राप्त्या गतं—गमनं निर्गतं अनन्तरं—समयादिना निर्व्यवधानं निर्गतं येषां तेऽनन्तरनिर्गतास्ते अनन्तरनिर्गताः, ते च येषां नरकादुद्वृत्तानां स्थानान्तरं प्राप्तानां प्रथमः समयो वर्त्तते, तथा परम्परेण—समयपरम्परया निर्गतं येषां ते तथा, ते च येषां नरकादुद्वृत्तानामुत्पत्तिस्थानप्राप्तानां द्व्यादयः समयाः, अनन्तरपरम्परानिर्गतास्तु ये नरकादुद्वृत्ताः

सन्तो विग्रहगतौ वर्त्तन्ते न तावदुत्पादक्षेत्रमासादयन्ति तेषामनन्तरभावेन परम्परभावेन चोत्पादक्षेत्राप्राप्तत्वेन निश्चयेनानिर्गतत्वादिति॥ अथानन्तरनिर्गतादीनाश्रित्यायुर्बन्धमभिधातुमाह—'अणंतरे'त्यादि, इह च परम्परानिर्ग्गता नारकाः सर्वाण्यायूंषि बध्नन्ति, यतस्ते मनुष्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च एव च भवन्ति, ते च सर्वायुर्बन्धका एवेति, एवं सर्वेऽपि परम्परनिर्गता वैक्रियजन्मानः, औदारिकजन्मानोऽप्युद्वृत्ताः केचिन्मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो भवन्त्यतस्तेऽपि सर्वायुर्बन्धका एवेति॥ अनन्तरं निर्गता उक्ताः, ते च क्वचिदुत्पद्यमानाः सुखेनोत्पद्यन्ते दुःखेन चेति दुःखोत्पन्नकानाश्रित्याह—'नेरइये'त्यादि, 'अनंतरखेदोववन्नग'त्ति अनन्तरं—समयाद्यव्यवहितं खेदेन—दुःखेनोपपन्नं उत्पादक्षेत्रप्राप्तिलक्षणं येषां तेऽनन्तरखेदोपपन्नकाः, खेदप्रधानोत्पत्तिप्रथमसमयवर्त्तिन इत्यर्थः 'परंपरखेओववन्नग'त्ति परम्परा—द्वित्रादिसमयता खेदेनोपपन्ने उत्पादे—येषां ते परम्पराखेदोपपन्नकाः, 'अणंतरपरंपरखेदाणुववन्नग'त्ति अनन्तरं परम्परं च खेदेन नास्त्युपपन्नकं येषां ते तथा, विग्रहगतिवर्त्तिन इत्यर्थः, 'ते चेव चत्तारि दंडगा भाणियव्व'त्ति त एव पूर्वोक्ता उत्पन्नदण्डकादयः खेदशब्दविशेषिताश्चत्वारो दण्डका भणितव्याः, तत्र च प्रथमः खेदोपपन्नदण्डको द्वितीयस्तदायुष्कदण्डकस्तृतीयः खेदनिर्गतदण्डकश्चतुर्थस्तु तदायुष्कदण्डक इति॥ चतुर्दशशते प्रथमः॥ १४-१॥

---

अनन्तरोद्देशकेऽनन्तरोपपन्ननैरयिकादिवक्तव्यतोक्ता, नैरयिकादयश्च मोहवन्तो भवन्ति, मोहश्चोन्माद इत्युन्मादप्ररूपणार्थो द्वितीय उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कतिविहे णं भंते! उम्मादे पण्णत्ते?, गोयमा! दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तंजहा—जक्खावेसे य मोहणिज्जस्स

य कम्मस्स उदएणं, तत्थ णं जे से जक्खाएसे से णं सुहवेयणतराए चेव सुहविमोयणतराए चेव, तत्थ णं जे से मोहणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं से णं दुहवेयणतराए चेव दुहविमोयणतराए चेव ॥ नेरइयाणं भंते! कतिविहे उम्मादे पण्णत्ते?, गोयमा! दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तंजहा–जक्खावेसे य मोहणिज्जस्स य कम्मस्स उदएणं, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ० नेरइयाणं दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तंजहा–जक्खावेसे य मोहणिज्जस्स जाव उदएणं?, गोयमा! देवे वा से असुभे पोग्गले पक्खिवेज्जा, से णं तेसिं असुभाणं पोग्गलाणं पक्खेवणयाए जक्खाएसं उम्मादं पाउणेज्जा, मोहणिज्जस्स वा कम्मस्स उदएणं मोहणिज्जं उम्मायं पाउणेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव उम्माए। असुरकुमाराणं भंते! कतिविहे उम्मादे पण्णत्ते?, एवं जहेव नेरइयाणं नवरं देवे वा से महिड्डीयतराए असुभे पोग्गले पक्खिवेज्जा, से णं तेसिं असुभाणं पोग्गलाणं पक्खेवणयाए जक्खाएसं उम्मादं पाउणेज्जा, मोहणिज्जस्स वा सेसं तं चेव, से तेणट्ठेणं जाव उदएणं एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं जाव मणुस्साणं, एएसिं जहा नेरइयाणं, वाणमंतरजोइसवेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं ( सूत्रं ५०३ ) ॥ अत्थि णं भंते! पज्जन्ने कालवासी वुट्ठिकायं पकरेंति?, हंता अत्थि ॥ जाहे णं भंते! सक्के देविंदे देवराया वुट्ठिकायं काउकामे भवति से कहमियाणिं पकरेति?, गोयमा! ताहे चेव णं से सक्के देविंदे देवराया अब्भिंतरपरिसए देवे सद्दावेति, तए णं ते अब्भिंतरपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा मज्झिमपरिसए देवे सद्दावेंति, तए णं ते मज्झिमपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा बाहिरपरिसए देवे सद्दावेंति, तए णं ते बाहिरपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा बाहिरं बाहिरगे देवे सद्दावेंति,

तए णं ते बाहिरगा देवा सद्दाविया समाणा आभिओगिए देवे सद्दावेंति, तए णं ते जाव सद्दाविया समाणा वुट्ठिकाए देवे सद्दावेंति, तए णं ते वुट्ठिकाइया देवा सद्दाविया समाणा वुट्ठिकायं पकरेंति, एवं खलु गोयमा! सक्के देविंदे देवराया वुट्ठिकायं पकरेंति॥ अत्थि णं भंते! असुरकुमारावि देवा वुट्ठिकायं पकरेंति?, हंता अत्थि, किंपत्तियन्नं भंते! असुरकुमारा देवा वुट्ठिकायं पकरेंति?, गोयमा! जे इमे अरहंता भगवंता एएसि णं जम्मणमहिमासु वा निक्खमणमहिमासु वा णाणुप्पायमहिमासु वा परिनिव्वाणमहिमासु वा एवं खलु गोयमा! असुरकुमारावि देवा वुट्ठिकायं पकरेंति, एवं नागकुमारावि एवं जाव थणियकुमारा वाणमंतरजोइसियवे० एवं चेव(सू०५०४)

'कतिविहे ण'मित्यादि, 'उन्मादः' उन्मत्तता विविक्तचेतनाभ्रंश इत्यर्थः 'जक्खावेसे य'त्ति यक्षो-देवस्तेनावेशः-प्राणिनोऽधिष्ठानं यक्षावेशः, 'मोहणिज्जस्से'त्यादि, तत्र मोहनीयं-मिथ्यात्वमोहनीयं तस्योदयादुन्मादो भवति, यतस्तदुदयवर्त्ती जन्तुरतत्त्वं तत्त्वं मन्यते तत्त्वमपि चातत्त्वं, चारित्रमोहनीयं वा, यतस्तदुदये जानन्नपि विषयादीनां स्वरूपमजानन्निव वर्त्तते, अथवा चारित्रमोहनीयस्यैव विशेषो वेदाख्यो मोहनीयं, यतस्तदुदयविशेषेऽप्युन्मत्त एव भवति, यदाह—"चिंतेइ १ दट्ठुमिच्छइ २ दीहं नीससइ ३ तह जरे ४ दाहे ५। भत्तअरोअग ६ मुच्छा ७ उम्माय ८ न याणई९ मरणं १०॥१॥" इति। एतयोश्चोन्मादत्वे समानेऽपि विशेषं दर्शयन्नाह—'तत्थ ण'मित्यादि, तत्र-तयोर्मध्ये 'सुहवेयणतराए चेव'त्ति अतिशयेन सुखेन-मोहजन्योन्मादापेक्षयाऽक्लेशेन वेदनं-अनुभवनं यस्यासौ सुखवेदनतरः स एव सुखवेदनतरकः, चैवशब्दः स्वरूपावधारणे, 'सुहविमोयणतराए चेव'त्ति अतिशयेन सुखेन विमोचनं-वियोजनं यस्मादसौ सुखविमोचनतरः, कप्रत्ययस्तथैव। 'तत्थ ण'मित्यादि, मोहजन्योन्माद इतरापेक्षया दुःख-

वेदनतरो भवत्यनन्तसंसारकारणत्वात्, संसारस्य च दुःखवेदनस्वभावत्वात्, इतरस्तु सुखवेदनतर एव, एकभविकत्वादिति, तथा मोहजोन्माद इतरापेक्षया दुःखविमोचनतरो भवति, विद्यामन्त्रतन्त्रदेवानुग्रहवतामपि वार्त्तिकानां तस्यासाध्यत्वात्, इतरस्तु सुखविमोचनतर एव भवति, यन्त्रमात्रेणापि तस्य निग्रहीतुं शक्यत्वादिति, आह च—"सर्वज्ञमन्त्रवाद्यपि यस्य न सर्वस्य निग्रहे शक्तः। मिथ्यामोहोन्मादः स केन किल कथ्यतां तुल्यः? ॥ १ ॥" इदं च द्वयमपि चतुर्विंशतिदण्डके योजयन्नाह—'नेरइयाण'मित्यादि, 'पुढविक्काइयाण'मित्यादौ यदुक्तं 'जहा नेरइयाणं'ति तेन 'देवे वा से असुभे पोग्गले पक्खिवेज्जा' इत्येतद् यक्षावेशे पृथिव्यादिसूत्रेषु अध्यापितं, 'वाणमंतरे'त्यादौ तु यदुक्तं 'जहा असुरकुमाराणं'ति तेन यक्षावेश एव व्यन्तरादिसूत्रेषु 'देवे वा से महड्ढियतराए' इत्येतदध्यापितं, मोहोन्मादालापकस्तु सर्वसूत्रेषु समान इति ॥ अनन्तरं वैमानिकदेवानां मोहनीयोन्मादलक्षणः क्रियाविशेष उक्तः, अथ वृष्टिकायकरणरूपं तमेव देवेन्द्रादिदेवानां दर्शयन् प्रस्तावनापूर्वकमाह—'अत्थि ण'मित्यादि, 'अत्थि'त्ति अस्त्येतत् 'पज्जन्ने'त्ति पर्जन्यः 'कालवासि'त्ति काले—प्रावृषि वर्षतीत्येवंशीलः कालवर्षी, अथवा कालश्चासौ वर्षी चेति कालवर्षी, 'वुट्ठिकायं' प्रवर्षणतो जलसमूहं प्रकरोति, प्रवर्षतीत्यर्थः, इह स्थाने शक्रोऽपि तं प्रकरोतीति दृश्यं, तत्र च पर्जन्यस्य प्रवर्षणक्रियायां तत्स्वाभाव्यतालक्षणो विधिः प्रतीत एव, शक्रप्रवर्षणक्रियाविधिस्त्वप्रतीत इति तं दर्शयन्नाह—'जाहे'इत्यादि, अथवा पर्जन्य इन्द्र एवोच्यते, स च कालवर्षी काले—जिनजन्मादिमहादौ वर्षतीतिकृत्वा, 'जाहे णं'ति यदा, 'से कहमियाणिं पकरेइ'त्ति स शक्रः कथं तदानीं प्रकरोति?, वृष्टिकायमिति प्रकृतम्। असुरकुमारसूत्रे 'किं पत्तियण्णं'ति किं प्रत्ययं—कारणमाश्रित्येत्यर्थः 'जम्मणमहिमासु व'त्ति जन्ममहिमासु, जन्मोत्सवान् निमित्तीकृत्येत्यर्थः ॥ देवक्रियाऽधिकारादिदमपरमाह—

जाहे णं भंते! ईसाणे देविंदे देवराया तमुक्कायं काउकामे भवति से कहमियाणिं पकरेति?, गोयमा! ताहे चेव णं से ईसाणे देविंदे देवराया अब्भिंतरपरिसए देवे सद्दावेति, तए णं ते अब्भिंतरपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा एवं जहेव सक्कस्स जाव तए णं ते आभिओगियदेवा सद्दाविया समाणा तमुक्काइए देवे सद्दावेंति, तए णं ते तमुक्काइया देवा सद्दाविया समाणा तमुक्कायं पकरेंति, एवं खलु गोयमा! ईसाणे देविंदे देवराया तमुक्कायं पकरेति ॥ अत्थि णं भंते! असुरकुमारावि देवा तमुक्कायं पकरेंति?, हंता अत्थि। किं पत्तियन्नं भंते! असुरकुमारा देवा तमुक्कायं पकरेंति?, गोयमा! किड्डारतिपत्तियं वा पडिणीयविमोहणट्टयाए वा गुत्तीसंरक्खणहेउं वा अप्पणो वा सरीरपच्छायणट्टयाए, एवं खलु गोयमा! असुरकुमारावि देवा तमुक्कायं पकरेंति एवं जाव वेमाणिया। सेवं भंते २ त्ति जाव विहरइ ( सूत्रं ५०५ ) ॥ १४-२ ॥

'जाहे ण'मित्यादि, 'तमुक्काए'त्ति तमस्कायकारिणः 'किड्डारइपत्तियं'ति क्रीडारूपा रतिः क्रीडारतिः अथवा क्रीडा च—खेलनं रतिश्च—निधुवनं क्रीडारती सैव ते एव वा प्रत्ययः—कारणं यत्र तत् क्रीडारतिप्रत्ययं 'गुत्तीसंरक्खणहेउं व'त्ति गोपनीयद्रव्यसंरक्षणहेतोर्वेति ॥ चतुर्दशशते द्वितीयः ॥ १४-२ ॥

---

द्वितीयोद्देशके देवव्यतिकर उक्तः, तृतीयेऽपि स एवोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

देवे णं भंते! महाकाए महासरीरे अणगारस्स भावियप्पणो मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा?, गोयमा! अत्थेगइए

वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुचइ अत्थेगतिए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा?, गोयमा! दुविहा देवा पण्णत्ता, तंजहा-मायी मिच्छादिट्ठीउववन्नगा य अमायी सम्मदिट्ठीउववन्नगा य, तत्थ णं जे से मायी मिच्छदिट्ठीउववन्नए देवे से णं अणगारं भावियप्पाणं पासइ २ नो वंदति नो नमंसति नो सक्कारेति नो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं जाव पज्जुवासति, से णं अणगारस्स भावियप्पणो मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा, तत्थ णं जे से अमायी सम्मदिट्ठिउववन्नए देवे से णं अणगारं भावियप्पाणं पासइ पासित्ता वंदति नमंसति जाव पज्जुवासति, से णं अणगारस्स भावियप्पणो मज्झंमज्झेणं नो वीयीवएज्जा, से तेण० गोयमा! एवं वुचइ जाव नो वीइवएज्जा। असुरकुमारे णं भंते! महाकाये महासरीरे एवं चेव एवं देवदंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणिए॥ (सूत्रं ५०६)॥

'देवे ण'मित्यादि, इह च क्वचिदियं द्वारगाथा दृश्यते—"महकाए सक्कारे सत्थेणं विइवयंति देवा उ। वासं चेव य ठाणा नेरइयाणं तु परिणामे॥ १॥" इति, अस्याश्चार्थ उद्देशकार्थाधिगमावगम्य एवेति। 'महाकाय'त्ति महान्-बृहन् प्रशस्तो वा कायो-निकायो यस्य स महाकायः, 'महासरीरे'त्ति बृहत्तनुः। 'एवं देवदंडओ भाणियव्वो'त्ति नारकपृथिवीकायिकादीनामधिकृत-व्यतिकरस्यासम्भवाद् देवानामेव च सम्भवाद्देवदण्डकोऽत्र व्यतिकरे भणितव्य इति॥ प्राग् देवानाश्रित्य मध्यगमनलक्षणो दुर्विनय उक्तः, अथ नैरयिकादीनाश्रित्य विनयविशेषानाह—



अत्थि णं भंते! नेरइयाणं सक्कारेति वा सम्माणेति वा किइकम्मेइ वा अब्भुट्ठाणेइ वा अंजलिपग्गहेति वा

आसणाभिग्गहेति वा आसणाणुप्पदाणेति वा इंतस्स पच्चुग्गच्छणया ठियस्स पज्जुवासणया गच्छंतस्स पडिसंसाहणया ?, नो तिणट्ठे समट्ठे । अत्थि णं भंते ! असुरकुमाराणं सक्कारेति वा सम्माणेति वा जाव पडिसंसाहणया वा ?, हंता अत्थि, एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं जाव चउरिंदियाणं, एएसिं जहा नेरइयाणं, अत्थि णं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं सक्कारेइ वा जाव पडिसंसाहणया ?, हंता अत्थि, नो चेव णं आसणाभिग्गहेइ वा आसणाणुप्पयाणेइ वा, मणुस्साणं जाव वेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं ॥ (सूत्रं ५०७) ॥ अप्पड्ढीए णं भंते ! देवे महड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, समिड्ढीए णं भंते ! देवे समिड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा, णो इणमट्ठे समट्ठे, पमत्तं पुण वीइवएज्जा, से णं भंते ! किं सत्थेणं अवक्कमित्ता पभू अणक्कमित्ता पभू ?, गोयमा ! अवक्कमित्ता पभू नो अणक्कमित्ता पभू, से णं भंते ! किं पुव्विं सत्थेणं अवक्कमित्ता पच्छा वीयीवएज्जा पुव्विं वीईव० पच्छा सत्थेणं अवक्कमेज्जा ?, एवं एएणं अभिलावेणं जहा दसमसए आइड्ढीउद्देसए तहेव निरवसेसं चत्तारि दंडगा भाणियव्वा जाव महड्ढिया वेमाणिणी अप्पड्ढियाए वेमाणिणीए (५०८)॥

'अत्थि ण'मित्यादि, 'सक्कारेइ व'त्ति सत्कारो—विनयार्हेषु वन्दनादिनाऽऽदरकरणं प्रवरवस्त्रादिदानं वा 'सक्कारो पवरवत्थमाईहिं' इति वचनात् 'सम्माणेइ व'त्ति सन्मानः—तथाविधप्रतिपत्तिकरणं 'किइकम्मेइ व'त्ति कृतिकर्म्म—वन्दनं कार्यकरणं वा 'अब्भुट्ठाणेइ व'त्ति अभ्युत्थानं—गौरवार्हदर्शने विष्टरत्यागः 'अंजलिपग्गहेइ व'त्ति अञ्जलिप्रग्रहः—अञ्जलिकरणम् 'आसणाभिग्गहेइ व'त्ति आसनाभिग्रहः—तिष्ठत एव गौरव्यस्यासनानयनपूर्वकमुपविशतेति भणनं 'आसणाणुप्पयाणेइ व'त्ति आसनानुप्रदानं—

गौरव्यमाश्रित्यासनस्य स्थानान्तरसञ्चारणं 'इंतस्स पच्चुग्गच्छय'त्ति आगच्छतो गौरव्यस्याभिमुखगमनं 'ठियस्स पज्जुवासणय'त्ति तिष्ठतो गौरव्यस्य सेवेति 'गच्छंतस्स पडिसंसाहणय'त्ति गच्छतोऽनुव्रजनमिति, अयं च विनयो नारकाणां नास्ति, सततं दुःखत्वादिति ॥ पूर्वं विनय उक्तः, अथ तद्विपर्ययभूताविनयविशेषं देवानां परस्परेण प्रतिपादयन्नाह–'अप्पड्ढिए णं'मित्यादि, 'एवं एएणं अभिलावेणं'मित्यादौ, 'आइड्ढिउद्देसए'त्ति दशमशतस्य तृतीयोदेशके 'निरवसेसं'ति समस्तं प्रथमदण्डकसूत्रं वाच्यं, तत्र चाल्पर्द्धिकमहर्द्धिकालापकः समर्द्धिकालापकश्चेत्यालापकद्वयं साक्षादेव दर्शितं, केवलं समर्द्धिकालापकस्यान्तेऽयं सूत्रशेषो दृश्यः—'गोयमा ! पुव्विं सत्थेणं अक्कमित्ता पच्छा वीईवइज्जा, नो पुव्विं वीईवइत्ता पच्छा सत्थेणं अवक्कमिज्ज'त्ति, तृतीयस्तु महर्द्धिकाल्पर्द्धिकालापक एवं–'महड्ढिए णं भंते ! देवे अप्पड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, हंता वीइवएज्जा, से णं भंते ! किं सत्थेणं अक्कमित्ता पभू अणक्कमित्ता पभू ?' शस्त्रेण हत्वाऽहत्वा वेत्यर्थः, 'गोयमा ! अक्कमित्तावि पभू अणक्कमित्तावि पभू, से णं भंते ! किं पुव्विं सत्थेणं अक्कमित्ता पच्छा वीइवएज्जा पुव्विं वीइवइत्ता पच्छा सत्थेणं अक्कमेज्जा ?, गोयमा ! पुव्विं वा सत्थेणं अक्कमित्ता पच्छा वीइवएज्जा, पुव्विं वा वीइवइत्ता पच्छा सत्थेणं अक्कमिज्ज'त्ति, 'चत्तारि दंडगा भाणियव्व'त्ति तत्र प्रथमदण्डक उक्तालापकत्रयात्मको देवस्य देवस्य च, द्वितीयस्त्वेवंविध एव नवरं देवस्य च देव्याश्च, एवं तृतीयोऽपि नवरं देव्याश्च देवस्य च, चतुर्थोऽप्येवं नवरं देव्याश्च देव्याश्चेति, अत एवाह—'जाव महड्ढिया वेमाणिणी अप्पड्ढियाए वेमाणिणीए'त्ति, 'मज्झंमज्झेणं'मित्यादि तु पूर्वोक्तानुसारेणाध्येयमिति ॥ अनन्तरं देववक्तव्यतोक्ता, अथैकान्तदुःखितत्वेन तद्विपर्ययभूता नारका इति तद्गतवक्तव्यतामाह—

रयणप्पभापुढविनेरइया णं भंते! केरिसियं पोग्गलपरिणामं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति?, गोयमा! अणिट्ठं जाव अमणामं, एवं जाव अहेसत्तमापुढविनेरइया, एवं वेदणापरिणामं, एवं जहा जीवाभिगमे बितिए नेरइयउद्देसए जाव अहेसत्तमापुढविनेरइया णं भंते! केरिसयं परिग्गहसन्नापरिणामं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति?, गोयमा! अणिट्ठं जाव अमणामं। सेवं भंते! २ त्ति (सूत्रं ५०९) ॥ १४-३ ॥

'रयणे'त्यादि, 'एवं वेयणापरिणामं'ति पुद्गलपरिणामवद् वेदनापरिणामं प्रत्यनुभवन्ति नारकाः, तत्र चैवमभिलापः— 'रयणप्पभापुढविनेरइया णं भंते! केरिसयं वेयणापरिणामं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति?, गोयमा! अणिट्ठं जाव अमणामं एवं जाव अहेसत्तमापुढविनेरइया' शेषसूत्रातिदेशायाह—'एवं जहा जीवाभिगमे'इत्यादि, जीवाभिगमोक्तानि चैतानि विंशतिः पदानि, तद्यथा—"पोग्गलपरिणामं १ वेयणाइ २ लेसाइ ३ नामगोए य ४। अरई ५ भए य ६ सोगे ७ खुहा ८ पिवासा य ९ वाही य १० ॥ १ ॥ उस्सासे ११ अणुतावे १२ कोहे १३ माणे य १४ माय १५ लोभे य १६। चत्तारि य सन्नाओ २० नेरइयाणं परीणामे ॥ २ ॥" इति, तत्र चाद्यपदद्वयस्याभिलापो दर्शित एव, शेषाणि त्वष्टादशाद्यपदद्वयाभिलापेनाध्येयानीति ॥ चतुर्दशशते तृतीयः ॥ १४-३ ॥

---

तृतीयोद्देशके नारकाणां पुद्गलपरिणाम उक्त इति चतुर्थोद्देशकेऽपि पुद्गलपरिणामविशेष एवोच्यते इत्येवंसंबन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

**एस णं भंते! पोग्गले तीतमणंतं सासयं समयं लुक्खी समयं अलुक्खी समयं लुक्खी वा अलुक्खी वा?**

पुव्विं च णं करणेणं अणेगवन्नं अणेगरूवं परिणामं परिणमति ?, अह से परिणामे निज्जिन्ने भवति तओ पच्छा एगवन्ने एगरूवे सिया ?, हंता गोयमा ! एस णं पोग्गले तीते तं चेव जाव एगरूवे सिया ॥ एस णं भंते ! पोग्गले पडुप्पन्नं सासयं समयं ?, एवं चेव, एवं अणागयमणंतंपि ॥ एस णं भंते ! खंधे तीतमणंतं ?, एवं चेव खंधेवि जहा पोग्गले ॥ ( सूत्रं ५१० ) ॥

'एस णं भंते !'इत्यादि, इह पुनरुद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथा क्वचिद् दृश्यते, सा चेयं—" पोग्गल १ खंधे २ जीवे ३ परमाणू ४ सासए य ५ चरमे य । दुविहे खलु परिणामे अज्जीवाणं च जीवाणं ६ ॥ १ ॥ " अस्याश्चार्थ उद्देशकार्थाधिगमावगम्य एवेति, 'पुग्गले'त्ति पुद्गलः परमाणुः स्कन्धरूपश्च 'तीतमणंतं सासयं समयं'ति विभक्तिपरिणामादतीते अनन्ते अपरिमाणत्वात् शाश्वते अक्षयत्वात् 'समये' काले 'समयं लुक्खी'ति समयमेकं यावद्रूक्षस्पर्शसद्भावाद्रूक्षी, तथा 'समयं अलुक्खी'ति समयमेकं यावदरूक्षस्पर्शसद्भावात् 'अरूक्षी' स्निग्धस्पर्शवान् बभूव, इदं च पदद्वयं परमाणौ स्कन्धे च संभवति, तथा 'समयं लुक्खी वा अलुक्खी व'त्ति समयमेव रूक्षश्चारूक्षश्च रूक्षस्निग्धलक्षणस्पर्शद्वयोपेतो बभूव, इदं च स्कन्धापेक्षं, यतो द्व्यणुकादिस्कन्धे देशो रूक्षो देशश्चारूक्षो भवतीत्येवं युगपद्रूक्षस्निग्धस्पर्शसम्भवः, वाशब्दौ चेह समुच्चयार्थौ, एवंरूपश्च सन्नसौ किमनेकवर्णादिपरिणामं परिणमति पुनश्चैकवर्णादिपरिणामः स्यात् ? इति पृच्छन्नाह—'पुव्विं च णं करणेणं अणेगवन्नं अणेगरूवं परिणामं परिणमइ'इत्यादि, 'पूर्वं च' एकवर्णादिपरिणामात्प्रागेव 'करणेन' प्रयोगकरणेन विश्रसाकरणेन वा 'अनेकवर्णं' कालनीलादिवर्णभेदेनानेकरूपं गन्धरसस्पर्शसंस्थानभेदेन 'परिणामं' पर्यायं परिणमति—अतीतकालविषयत्वादस्येति परिणतवानिति द्रष्टव्यं, पुद्गल इति प्रकृतं, स च यदि

परमाणुस्तदा समयभेदेनानेकवर्णादित्वं परिणतवान्, यदि च स्कन्धस्तदा यौगपद्येनापीति । 'अह से'त्ति 'अथ' अनन्तरं सः–एष परमाणोः स्कन्धस्य चानेकवर्णादिपरिणामो 'निर्जीर्णः' क्षीणो भवति परिणामान्तराधायककारणोपनिपातवशात् 'ततः पश्चात्' निर्जरणानन्तरम् 'एकवर्णः' अपेतवर्णान्तरत्वा(दित्वा)देकरूपो विवक्षितगन्धादिपर्यायापेक्षयाऽपरपर्यायाणामपेतत्वात् 'सिय'त्ति बभूव, अतीतत्वादतीतकालविषयत्वादस्येति प्रश्नः, इहोत्तरमेतदेवेति, अनेन च परिणामिता पुद्गलद्रव्यस्य प्रतिपादितेति ॥ 'एस णं'मित्यादि, वर्त्तमानकालसूत्रं, तत्र च 'पडुप्पन्नं'ति विभक्तिपरिणामात् 'प्रत्युत्पन्ने' वर्त्तमाने 'शाश्वते' सदैव तस्य भावात् 'समये' कालमात्रे 'एवं चेव'त्तिकरणात्पूर्वसूत्रोक्तमिदं दृश्यं—'समयं लुक्खी समयं अलुक्खी समयं लुक्खी वा अलुक्खी वा'इत्यादि, यच्चेहानन्तमिति नाधीतं तद्वर्त्तमानसमयस्यानन्तत्वासम्भवात्, अतीतानागतसूत्रयोस्त्वनन्तमित्यधीतं तयोरनन्तत्वसम्भवादिति ॥ अनन्तरं पुद्गलस्वरूपं निरूपितं, पुद्गलश्च स्कन्धोऽपि भवतीति पुद्गलभेदभूतस्य स्कन्धस्य स्वरूपं निरूपयन्नाह–'एस णं भंते! खंधे'इत्यादि ॥ स्कन्धश्च स्वप्रदेशापेक्षया जीवोऽपि स्यादितीत्थमेव जीवस्वरूपं निरूपयन्नाह—

एस णं भंते! जीवे तीतमणंतं सासयं समयं दुक्खी समयं अदुक्खी समयं दुक्खी वा अदुक्खी वा? पुव्विं च करणेणं अणेगभूयं परिणामं परिणमइ अह से वेयणिज्जे निज्जिन्ने भवति तओ पच्छा एगभावे एगभूए सिया?, हंता गोयमा! एस णं जीवे जाव एगभूए सिया, एवं पडुप्पन्नं सासयं समयं, एवं अणागयमणंतं सासयं समयं ॥ (सूत्रं ५११) ॥ परमाणुपोग्गले णं भंते! किं सासए असासए?, गोयमा! सिय सासए सिय असासए, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ सिय सासए सिय असासए?, गोयमा! दव्वट्ठयाए सासए वन्नपज्जवेहिं जाव फासप-

ज्जवेहिं असासए से तेणट्ठेणं जाव सिय सासए सिय असासए ॥ ( सूत्रं ५१२ ) ॥ परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं चरमे अचरमे ?, गोयमा ! दव्वादेसेणं नो चरिमे अचरिमे, खेत्तादेसेणं सिय चरिमे सिय अचरिमे, कालादेसेणं सिय चरिमे सिय अचरिमे, भावादेसेणं सिय चरिमे सिय अचरिमे ( सूत्रं ५१३ ) ॥

'एस णं भंते ! जीवे'इत्यादि, 'एषः' प्रत्यक्षो जीवोऽतीतेऽनन्ते शाश्वते समये समयमेकं दुःखी दुःखहेतुयोगात् समयं चादुःखी सुखहेतुयोगाद् बभूव समयमेव च दुःखी वाऽदुःखी वा, वाशब्दयोः समुच्चयार्थत्वाद् दुःखी च सुखी च तद्धेतुयोगात्, न पुनरेकदा सुखदुःखवेदनमस्ति एकोपयोगत्वाज्जीवस्येति, एवंरूपश्च सन्नसौ स्वहेतुतः किमनेकभावं परिणामं परिणमति पुनश्चैकभावपरिणामः स्यात् ? इति पृच्छन्नाह-'पुव्विं च णं करणेणं अणेगभावं अणेगभूयं परिणामं परिणमइ' इत्यादि 'पूर्वं च' एकभावपरिणामात्प्रागेव करणेन कालस्वभावादिकारणसंवलिततया शुभाशुभकर्मबन्धहेतुभूतया क्रिययाऽनेको भावः-पर्यायो दुःखित्वादिरूपो यस्मिन् स तथा तमनेकभावं परिणाममिति योगः 'अणेगभूयं'ति अनेकभावत्वादेवानेकरूपं 'परिणामं' स्वभावं 'परिणमइ'त्ति अतीतकालविषयत्वादस्य 'परिणतवान्' प्राप्तवानिति । 'अह से'त्ति अथ 'तत्' दुःखितत्वाद्यनेकभावहेतुभूतं 'वेयणिज्जे'त्ति वेदनीयं कर्म्म उपलक्षणत्वाच्चास्य ज्ञानावरणीयादि च 'निर्ज्जीर्णं' क्षीणं भवति ततः पश्चात् 'एगभावे'त्ति एको भावः सांसारिकसुखविपर्ययात् स्वाभाविकसुखरूपो यस्यासावेकभावोऽत एव 'एकभूतः' एकत्वं प्राप्तः 'सिय'त्ति बभूव कर्म्मकृतधर्म्मान्तरविरहादिति प्रश्नः, इहोत्तरमेतदेव । एवं प्रत्युत्पन्नानागतसूत्रे अपीति ॥ पूर्वं स्कन्ध उक्तः, स च स्कन्धरूपत्यागाद्विनाशी भवति, एवं परमाणुरपि स्यान्न वा ? इत्याशङ्कायामाह-'परमाणुपोग्गले ण'न्ति पुद्गलः स्कन्धोऽपि स्यादतः परमाणुग्रहणं 'सासए'त्ति शश्वद्भवनात् 'शाश्वतः' नित्यः

अशाश्वतस्त्वनित्यः 'सिय सासए'त्ति कथञ्चिच्छाश्वतः 'दव्वट्ठयाए'त्ति द्रव्यं-उपेक्षितपर्यायं वस्तुत देवार्थो द्रव्यार्थस्तद्भावस्तत्ता तया द्रव्यार्थतया शाश्वतः, स्कन्धान्तर्भावेऽपि परमाणुत्वस्याविनष्टत्वात् प्रदेशलक्षणव्यपदेशान्तरव्यपदेश्यत्वात्, 'वन्नपज्जवेहिं'ति परि-सामस्त्येनावन्ति-गच्छन्ति ये ते पर्यवा विशेषा धर्म्मा इत्यनर्थान्तरं ते च वर्णादिभेदादनेकविधा इत्यतो विशेष्यते-वर्णस्य पर्यवा वर्णपर्यवा अतस्तैः, 'असासए'त्ति विनाशी, पर्यवाणां पर्यवत्वेनैव विनश्वरत्वादिति ॥ परमाण्वधिकारादेवेदमाह-'परमाणु'इत्यादि, 'चरमे'त्ति यः परमाणुर्यस्माद्विवक्षितभावाच्च्युतः सन् पुनस्तं भावं न प्राप्स्यति स तद्भावापेक्षया चरमः, एतद्विपरीतस्त्वचरम इति, तत्र 'दव्वादेसेणं'ति आदेशः-प्रकारो द्रव्यरूप आदेशो द्रव्यादेशस्तेन नो चरमः, स हि द्रव्यतः परमाणुत्वाच्च्युतः सङ्घातमवाप्यापि ततश्च्युतः परमाणुत्वलक्षणं द्रव्यत्वमवाप्स्यतीति । 'खेत्तादेसेणं'ति क्षेत्रविशेषितत्वलक्षणप्रकारेण 'स्यात्' कदाचिच्चरमः, कथम् ?, यत्र क्षेत्रे केवली समुद्घातं गतस्तत्र क्षेत्रे यः परमाणुरवगाढोऽसौ तत्र क्षेत्रे तेन केवलिना समुद्घातगतेन विशेषितो न कदाचनाप्यवगाहं लप्स्यते, केवलिनो निर्वाणगमनादित्येवं क्षेत्रतश्चरमोऽसाविति, निर्विशेषणक्षेत्रापेक्षया त्वचरमः, तत्क्षेत्रावगाहस्य तेन लप्स्यमानत्वादिति । 'कालादेसेणं'ति कालविशेषितत्वलक्षणप्रकारेण 'सिय चरमे'त्ति कथञ्चिच्चरमः, कथम् ?, यत्र काले पूर्वाह्णादौ केवलिना समुद्घातः कृतस्तत्रैव यः परमाणुतया संवृत्तः स च तं कालविशेषितं न कदाचनापि प्राप्स्यति तस्य केवलिनः सिद्धिगमनेन पुनः समुद्घाताभावादिति तदपेक्षया कालतश्चरमोऽसाविति, निर्विशेषणकालापेक्षया त्वचरम इति । 'भावाएसेणं'त्ति भावो-वर्णादिविशेषस्तद्विशेषलक्षणप्रकारेण 'स्याच्चरमः' कथञ्चिच्चरमः, कथं ?, विवक्षितकेवलिसमुद्घातावसरे यः पुद्गलो वर्णादिभावविशेषं परिणतः स विवक्षितकेवलिसमुद्घातविशेषितवर्णपरिणामापेक्षया चरमो यस्मात्तत् केवलिनिर्वाणे पुनस्तं परिणाममसौ न

प्राप्स्यतीति, इदं च व्याख्यानं चूर्णिकारमतमुपजीव्य कृतमिति ॥ अनन्तरं परमाणोश्चरमत्वाचरमत्वलक्षणः परिणामः प्रतिपादितः, अथ परिणामस्यैव भेदाभिधानायाह—

कइविहे णं भंते ! परिणामे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे परिणामे पण्णत्ते, तंजहा–जीवपरिणामे य अजीवपरिणामे य, एवं परिणामपयं निरवसेसं भाणियव्वं । सेवं भंते ! २ जाव विहरति ( सूत्रं ५१४ ) ॥ १४–४ ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, तत्र परिणमनं–द्रव्यस्यावस्थान्तरगमनं परिणामः, आह च—'परिणामो ह्यर्थान्तरगमनं न च सर्वथा व्यवस्थानम् । न तु सर्वथा विनाशः परिणामस्तद्विदामिष्टः ॥ १ ॥" इति, 'परिणामपयं'ति प्रज्ञापनायां त्रयोदशं परिणामपदं, तच्चैवं—'जीवपरिणामे णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! दसविहे पण्णत्ते, तंजहा–गइपरिणामे इंदियपरिणामे एवं कसाय लेसा जोग उवओगे नाणदंसणचरित्तवेदपरिणामे'इत्यादि, तथा–'अजीवपरिणामे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दसविहे पण्णत्ते, तंजहा—बंधणपरिणामे १ गइपरिणामे २ एवं संठाण ३ भेय ४ वन्न ५ गंध ६ रस ७ फास ८ अगुरुलहुय ९ सद्दपरिणामे १०"इत्यादि ॥ चतुर्दशशते चतुर्थः ॥ १४–४ ॥

---

चतुर्थोद्देशके परिणाम उक्त इति परिणामाधिकाराद्व्यतिव्रजनादिकं विचित्रं परिणाममधिकृत्य पञ्चमोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्–

नेरइए णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अत्थेगइए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा ?, गोयमा ! नेरइया

दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–विग्गहगतिसमावन्नगा य अविग्गहगतिसमावन्नगा य, तत्थ णं जे से विग्गहगतिसमावन्नए नेरतिए से णं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ, तत्थ णं जे से अविग्गहगइसमावन्नए नेरइए से णं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं णो वीइवएज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो वीइवएज्जा ॥ असुरकुमारे णं भंते ! अगणिकायस्स पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो वीइवएज्जा ?, गोयमा ! असुरकुमारा दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–विग्गहगइसमावन्नगा य अविग्गहगइसमावन्नगा य, तत्थ णं जे से विग्गहगइसमावन्नए असुरकुमारे से णं एवं जहेव नेरतिए जाव वक्कमति, तत्थ णं जे से अविग्गहगइसमावन्नए असुरकुमारे से णं अत्थेगतिए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीतीवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइव०, जे णं वितीवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमति, से तेणट्ठेणं एवं जाव थणियकुमारे, एगिंदिया जहा नेरइया । बेइंदिया णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं जहा असुरकुमारे तहा बेइंदिएवि, नवरं जे णं वीइवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, हंता झियाएज्जा, से णं तं चेव एवं जाव चउरिंदिए ॥ पंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! अगणिकायस्स पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, से केणट्ठेणं० ?, गोयमा ! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–विग्गहगतिसमावन्नगा य अविग्गहगइसमावन्नगा य, विग्गहगइसमावन्नए जहेव नेरइए जाव नो खलु तत्थ सत्थं कमइ, अविग्गहगइसमावन्नगा पंचिंदियतिरिक्खजोणिया

दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-इड्ढिप्पत्ता य अणिड्ढिप्पत्ता य, तत्थ णं जे से इड्ढिप्पत्ते पंचिंदियतिरिक्खजोणिए से णं अत्थेगइए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीयीवएज्जा अत्थेगइए नो वीयीवएज्जा, जे णं वीयीवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ, तत्थ णं जे से अणिड्ढिप्पत्ते पंचिंदियतिरिक्खजोणिए से णं अत्थेगतिए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीयीवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, जे णं वीयीवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, हंता झियाएज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो वीयीवएज्जा, एवं मणुस्सेवि, वाणमंतरजोइसियवेमाणिए जहा असुरकुमारे ॥ ( सूत्रं ५१५ ) ॥

'नेरइए ण'मित्यादि, इह च क्वचिदुद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथा दृश्यते, सा चेयं —"नेरइय अगणिमज्झे दस ठाणा तिरिय पोग्गले देवे । पव्वयभित्ती उल्लंघणा य पल्लंघणा चेव ॥ १ ॥" इति, अर्थश्चास्या उद्देशकार्थाधिगमगम्य इति, 'नो खलु तत्थ सत्थं कमइ'त्ति विग्रहगतिसमापन्नो हि कार्म्मणशरीरत्वेन सूक्ष्मः, सूक्ष्मत्वाच्च तत्र 'शस्त्रम्'अग्न्यादिकं न क्रामति । 'तत्थ णं जे से'इत्यादि, अविग्रहगतिसमापन्न उत्पत्तिक्षेत्रोपपन्नोऽभिधीयते, न तु ऋजुगतिसमापन्नः, तस्येह प्रकरणेऽनधिकृतत्वात्, स चाग्निकायस्य मध्येन न व्यतिव्रजति, नारकक्षेत्रे बादराग्निकायस्याभावात्, मनुष्यक्षेत्र एव तद्भावात्, यच्चोत्तराध्ययनादिषु श्रूयते—"हुयासणे जलंतंमि, दड्ढपुव्वो अणेगसो ।"इत्यादि तदग्निसदृशद्रव्यान्तरापेक्षयाऽवसेयं, संभवन्ति च तथाविधशक्तिमन्ति द्रव्याणि तेजोलेश्याद्रव्यवदिति ॥ असुरकुमारसूत्रे विग्रहगतिको नारकवत्, अविग्रहगतिकस्तु कोऽप्यग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजेत् यो मनुष्यलोकमागच्छति, यस्तु न तत्रागच्छति असौ न व्यतिव्रजेत्, व्यतिव्रजन्नपि च न ध्यायते ध्मायते वा, यतो न खलु तत्र शस्त्रं क्रमते सूक्ष्मत्वाद्वैक्रियशरी-

रस्य शीघ्रत्वाच्च तद्गतेरिति। 'एगिंदिया जहा नेरइय'त्ति, कथम् ?, यतो विग्रहे तेऽप्यग्निमध्येन व्यतिव्रजन्ति सूक्ष्मत्वान्न दह्यन्ते च, अविग्रहगतिसमापन्नकाश्च तेऽपि नाग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजन्ति स्थावरत्वात्, यच्च तेजोवायूनां गतित्रसतयाऽग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजनं दृश्यते तदिह न विवक्षितमिति सम्भाव्यते, स्थावरत्वमात्रस्यैव विवक्षितत्वात्, स्थावर(गतित्रस)त्वे हि अस्ति कथञ्चित् तेषां गत्यभावो स्थावरास्ते व्यपदिश्यन्ते, अन्यथाऽधिकृतव्यपदेशस्य निर्निबन्धनता स्यात्, तथा यद्वाय्वादिपारतन्त्र्येण पृथिव्यादीनामग्निमध्येन यदपेक्षया व्यतिव्रजनं दृश्यते तदिह न विवक्षितं, स्वातन्त्र्यकृतस्यैव तस्य विवक्षणात्, चूर्णिकारः पुनरेवमाह—'एगिंदियाण गई नत्थि'त्ति ते न गच्छन्ति, एगे वाउकाइया(इया)परपेरणेसु गच्छंति विर(ड)हिज्जंति य'त्ति, पञ्चेन्द्रियतिर्यक्सूत्रे 'इड्डिप्पत्ता य'त्ति तत्राग्निकायसम्पन्नाः 'अत्थेगइए अगणिकायस्से'त्यादि, अस्त्येककः कश्चित् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिको यो मनुष्यलोकवर्त्ती स वैक्रियलब्धिसम्भवात्तन्मध्येन व्यतिव्रजेत्, यस्तु मनुष्यक्षेत्राद्बहिर्नासावग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजेत्, अग्नेरेव तत्राभावात्, तदन्यो वा तथाविधसामग्र्यभावात्, 'नो खलु तत्थ सत्थं कमइ'त्ति वैक्रियादिलब्धिमति पञ्चेन्द्रियतिरश्चि नाग्न्यादिकं शस्त्रं क्रमत इति ॥ अथ दश स्थानानीति द्वारमभिधातुमाह—

नेरतिया दस ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तंजहा–अणिट्ठा सद्दा अणिट्ठा रूवा अणिट्ठा गंधा अणिट्ठा रसा अणिट्ठा फासा अणिट्ठा गती अणिट्ठा ठिती अणिट्ठे लावन्ने अणिट्ठे जसोकित्ती अणिट्ठे उट्ठाणकम्मबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमे। असुरकुमारा दस ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तंजहा–इट्ठा सद्दा इट्ठा रूवा जाव इट्ठे उट्ठाणकम्मबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमे, एवं जाव थणियकुमारा। पुढविक्काइया छट्ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा वि०,

तं०-इट्ठाणिट्ठा फासा इट्ठाणिट्ठा गती एवं जाव परक्कमे, एवं जाव वणस्सइकाइया। बेइंदिया सत्तट्ठाणाइं पच्चणु-ब्भवमाणा विहरंति, तंजहा-इट्ठाणिट्ठा रसा सेसं जहा एगिंदियाणं, तेंदिया णं अट्ठट्ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा वि०, तं-इट्ठाणिट्ठा गंधा सेसं जहा बेंदियाणं, चउरिंदिया नवट्ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तं०-इट्ठाणिट्ठा रूवा सेसं जहा तेंदियाणं, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया दस ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तंजहा—इट्ठाणिट्ठा सद्दा जाव परक्कमे, एवं मणुस्सावि, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा (सूत्रं ५१६) ॥

'नेरइया दस ठाणाइं'इत्यादि, तत्र 'अणिट्ठा गइ'त्ति अप्रशस्तविहायोगतिनामोदयसम्पाद्या नरकगतिरूपा वा, 'अणिट्ठा ठिति'त्ति नरकावस्थानरूपा नरकायुष्करूपा वा 'अणिट्ठे लावन्ने'त्ति लावण्यं-शरीराकृतिविशेषः 'अणिट्ठे जसोकित्ति'त्ति प्राकृतत्वान्निष्टेति द्रष्टव्यं यशसा-सर्वदिग्गामिप्रख्यातिरूपेण पराक्रमकृतेन वा सह कीर्त्तिः-एकदिग्गामिनी प्रख्यातिर्दानफलभूता वा यशःकीर्त्तिः, अनिष्टत्वं च तस्या दुष्प्रख्यातिरूपत्वात्, 'अणिट्ठे उट्ठाणे'इत्यादि, उत्थानादयो वीर्यान्तरायक्षयोपशमादिजन्यवीर्यविशेषाः, अनिष्टत्वं च तेषां कुत्सितत्वादिति ॥ 'पुढविकाइए'त्यादि, 'छट्ठाणाइं'ति पृथिवीकायिकानामेकेन्द्रियत्वेन पूर्वोक्तदशस्थानकमध्ये शब्दरूपगन्धरसा न विषय इति स्पर्शादीन्येव षट् ते प्रत्यनुभवन्ति, 'इट्ठाणिट्ठा फास'त्ति सातासातोदयसम्भवात् शुभाशुभक्षेत्रोत्पत्तिभावाच्च, 'इट्ठाणिट्ठा गइ'त्ति यद्यपि तेषां स्थावरत्वेन गमनरूपा गतिर्नास्ति स्वभावतस्तथाऽपि परप्रत्यया सा भवतीति शुभाशुभत्वेनेष्टानिष्टव्यपदेशार्हा स्यात्, अथवा यद्यपि पापरूपत्वात्तिर्यग्गतिरनिष्टैव स्यात्तथाऽपीषत्प्राग्भाराऽप्रतिष्ठानादिक्षेत्रोत्पत्तिद्वारेणेष्टानिष्टा गतिस्तेषां भावनीयेति, 'एवं जाव परक्कमे'त्ति वचनादिदं दृश्यम्-'इट्ठाणिट्ठा ठिई' सा च गतिवद्भावनीया 'इट्ठाणिट्ठे

लावन्ने' इदं च मण्यन्धपाषाणादिषु भावनीयम् 'इट्ठाणिट्ठे जसोकित्ती' इयं सत्प्रख्यात्यसत्प्रख्यातिरूपा मण्यादिष्वेवावसेयेति, 'इट्ठाणिट्ठे उट्ठाणजावपरक्कमे' उत्थानादि च यद्यपि तेषां स्थावरत्वान्नास्ति तथाऽपि प्राग्भवानुभूतोत्थानादिसंस्कारवशात्तदिष्टमनिष्टं वाऽवसेयमिति । 'बेंदिया सत्तट्ठाणाइं'ति शब्दरूपगन्धानां तदविषयत्वात्, रसस्पर्शादिस्थानानि च शेषाण्येकेन्द्रियाणामिवेष्टानिष्टान्यवसेयानि, गतिस्तु तेषां त्रसत्वाद्गमनरूपा द्विधाऽप्यस्ति, भवगतिस्तूत्पत्तिस्थानविशेषेणेष्टातिष्टाऽवसेयेति ॥ अथ 'तिरियपोग्गले देवे' इत्यादिद्वारगाथोक्तार्थाभिधानायाह—

देवे णं भंते! महिड्ढीए जाव महेसक्खे बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू तिरियपव्वयं वा तिरियभित्तिं वा उल्लंघेत्तए वा पलंघेत्तए वा ?, गोयमा! णो तिणट्ठे समट्ठे । देवे णं भंते! महिड्ढिए जाव महेसक्खे बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू तिरिय जाव पलंघेत्तए वा ?, हंता पभू। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ५१७) ॥१४-५॥

'देवे ण'मित्यादि, 'बाहिरए'त्ति भवधारणीयशरीरव्यतिरिक्तान् 'अपरियाइत्त'त्ति 'अपर्यादाय' अगृहीत्वा 'तिरियपव्वयं'ति तिरश्चीनं पर्वतं गच्छतो मार्गावरोधकं 'तिरियभित्तिं व'त्ति तिर्यग्भित्तिं-तिरश्चीनां प्राकारवरण्डिकादिभित्तिं पर्वतखण्डं वेति 'उल्लंघेत्तए'त्ति सकृदुल्लङ्घनेन 'पलंघेत्तए व'त्ति पुनः पुनर्लङ्घनेनेति ॥ चतुर्दशशते पञ्चमः ॥ १४-५ ॥



---

पञ्चमोद्देशके नारकादिजीववक्तव्यतोक्ता, षष्ठेऽपि सैवोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी—नेरइया णं भंते! किमाहारा किंपरिणामा किंजोणीया किंठितीया पण्णत्ता?, गोयमा!

नेरइया णं पोग्गलाहारा पोग्गलपरिणामा पोग्गलजोणिया पोग्गलट्ठितीया कम्मोवगा कम्मनियाणा कम्मट्ठितीया कम्मुणामेव विप्परियासमेंति, एवं जाव वेमाणिया ( सूत्रं ५१८ ) ॥ नेरइया णं भंते! किं वीचीदव्वाइं आहारेंति अवीचिदव्वाइं आहारेंति?, गोयमा! नेरतिया वीचिदव्वाइंपि आहारेंति अवीचिदव्वाइंपि आहारेंति, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ नेरतिया वीचि० तं चेव जाव आहारेंति?, गोयमा! जे णं नेरइया एगपएसूणाइंपि दव्वाइं आहारेंति ते णं नेरतिया वीचिदव्वाइं आहारेंति, जे णं नेरतिया पडिपुन्नाइं दव्वाइं आहारेंति, ते णं नेरइया अवीचिदव्वाइं आहारेंति, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जाव आहारेंति, एवं जाव वेमाणिया आहारेंति (सू०५१९)॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'किमाहार'त्ति किमाहारयन्तीति किमाहाराः 'किंपरिणाम'त्ति किमाहारितं सत्परिणामयन्तीति किंपरिणामाः 'किंजोणीय'त्ति का योनिः—उत्पत्तिस्थानं येषां ते किंयोनिकाः, एवं किंस्थितिकाः, स्थितिश्च अवस्थानहेतुः, अत्रोत्तरं क्रमेणैव दृश्यं व्यक्तं च, नवरं 'पुग्गलजोणीय'त्ति पुद्गला—शीतादिस्पर्शा योनिः येषां ते तथा, नारका हि शीतयोनय उष्णयोनयश्चेति, 'पोग्गलट्ठिइय'त्ति पुद्गला—आयुष्ककर्मपुद्गलाः स्थितिर्येषां नरके स्थितिहेतुत्वात्ते तथा, अथ कस्मात्ते पुद्गलस्थितयो भवन्तीत्यत आह—'कम्मोवगे'त्यादि, कर्म्म—ज्ञानावरणादि पुद्गलरूपमुपगच्छन्ति—बन्धनद्वारेणोपयान्तीति कर्म्मोपगाः, कर्म्म निदानं—नारकत्वनिमित्तं कर्म्मबन्धनिमित्तं वा येषां ते कर्म्मनिदानाः, तथा कर्म्मणः—कर्म्मपुद्गलेभ्यः सकाशात् स्थितिर्येषां ते कर्म्मस्थितयः, तथा 'कम्मुणामेव विपरियासमेंति'त्ति कर्मणैव हेतुभूतेन मकार आगमिकः विपर्यासं—पर्यायान्तरं पर्याप्तापर्याप्तादिकमायान्ति—प्राप्नुवन्ति अतस्ते पुद्गलस्थितयो भवन्तीति ॥ आहारमेवाश्रित्याह—'नेरइया ण'मित्यादि, 'वीइदव्वाइं'ति वीचिः—विवक्षितद्रव्याणां तदवय-

चानां च परस्परेण पृथग्भावः 'वीचिर् पृथग्भावे' इति वचनात् , तत्र वीचिप्रधानानि द्रव्याणि वीचिद्रव्याणि एकादिप्रदेशन्यूनानीत्यर्थः, एतन्निषेधादवीचिद्रव्याणि, अयमत्र भावः—यावता द्रव्यसमुदायेनाहारः पूर्यते स एकादिप्रदेशोनो वीचिद्रव्याण्युच्यंते, परिपूर्णस्त्ववीचिद्रव्याणीति टीकाकारः, चूर्णिकारस्त्वाहारद्रव्यवर्गणामधिकृत्येदं व्याख्यातवान् , तत्र च याः सर्वोत्कृष्टाहारद्रव्यवर्गणास्ता अवीचिद्रव्याणि, यास्तु ताभ्य एकादिना प्रदेशेन हीनास्ता वीचिद्रव्याणीति, 'एगपएसऊणाइंपि दव्वाइं' ति एकप्रदेशोनान्यपि, अपिशब्दादनेकप्रदेशोनान्यपीति ॥ अनन्तरं दण्डकस्यान्ते वैमानिकानामाहारभोग उक्तः, अथ वैमानिकविशेषस्य कामभोगोपदर्शनायाह-

जाहे णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजिउंकामे भवति से कहमियाणिं पकरेति ?, गोयमा ! ताहे चेव णं [ग्रंथाग्रम् ९००० ] से सक्के देविंदे देवराया एगं महं नेमिपडिरूवगं विउव्वति एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं तिन्नि जोयणसयसहस्सं जाव अद्धंगुलं च किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं, तस्स णं नेमिपडिरूवस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पन्नत्ते जाव मणीणं फासे, तस्स णं नेमिपडिरूवगस्स बहुमज्झदेसभागे तत्थ णं महं एगं पासायवडेंसगं विउव्वति पंच जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं अब्भुग्गयमूसियवन्नओ जाव पडिरूवं, तस्स णं पासायवडिंसगस्स उल्लोए पउमलयभत्तिचित्ते जाव पडिरूवे, तस्स णं पासायवडेंसगस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे जाव मणीणं फासो, मणिपेढिया अट्ठजोयणिया जहा वेमाणियाणं, तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं महं एगं देवसयणिज्जं विउव्वइ, सयणिज्जवन्नओ जाव पडिरूवे, तत्थ णं से सक्के देविंदे देवराया अट्ठहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं दोहि य अणीएहिं नट्टा-

णीएण य गंधव्वाणीएण य सद्धिं महयाहयनट्टजाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ ॥ जाहे ईसाणे देविंदे देवराया दिव्वाइं जहा सक्के तहा ईसाणेवि निरवसेसं, एवं सणंकुमारेवि, नवरं पासायवडेंसओ छ जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं तिन्नि जोयणसयाइं विक्खंभेणं, मणिपेढिया तहेव अट्ठजोयणिया, तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं एत्थ णं महेगं सीहासणं विउव्वइ सपरिवारं भाणियव्वं, तत्थ णं सणंकुमारे देविंदे देवराया बावत्तरीए सामाणियसाहस्सीहिं जाव चउहिं बावत्तरीहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहि य बहूहिं सणंकुमारकप्पवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे महया जाव विहरइ । एवं जहा सणंकुमारे तहा जाव पाणओ अच्चुओ नवरं जो जस्स परिवारो सो तस्स भाणियव्वो, पासायउच्चत्तं जं सएसु २ कप्पेसु विमाणाणं उच्चत्तं अद्धद्धं वित्थारो जाव अच्चुयस्स नवजोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अद्धपंचमाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं, तत्थ णं गोयमा ! अच्चुए देविंदे देवराया दसहिं सामाणियसाहस्सीहिं जाव विहरइ, सेसं तं चेव, सेवं भंते ! २ त्ति ( सूत्रं ५२० ) ॥ १४-६ ॥

'जाहे ण'मित्यादि, 'जाहे'त्ति यदा भोगभोगाइं'ति भुज्यन्त इति भोगाः—स्पर्शादयः भोगार्हा भोगा भोगभोगाः, मनोज्ञस्पर्शादय इत्यर्थः तान् 'से कहमियाणिं पकरेइ'त्ति अथ 'कथं' केन प्रकारेण तदानीं प्रकरोति ?, प्रवर्त्तत इत्यर्थः, 'नेमिपडिरूवगं'ति नेमिः—चक्रधारा तद्योगाच्चक्रमपि नेमिः तत्प्रतिरूपकं—वृत्ततया तत्सदृशं स्थानमिति शेषः, 'तिन्नि जोयणे'त्यादौ यावत्करणादिदं दृश्यं—'सोलस य जोयणसहस्साइं दो य सयाइं सत्तावीसाहियाइं कोसतियं अट्ठावीसाहियं धणुसयं तेरस य अंगुलाइं'ति, 'उवरिं'ति उपरिष्टात् 'बहुसमरमणिज्जे'त्ति अत्यन्तसमो रम्यश्चेत्यर्थः 'जाव मणीणं फासो'त्ति

भूमिभागवर्णकस्तावद्वाच्यो यावन्मणीनां स्पर्शवर्णक इत्यर्थः, स चायं—'से जहानामए—आलिंगपोक्खरेइ वा मुइंगपोक्खरेइ वा'इत्यादि, आलिङ्गपुष्करं मुरजमुखपुटं—मर्द्दलमुखपुटं तद्वत्सम इत्यर्थः, तथा 'सच्छाएहिं सप्पभेहिं समरीईहिं सउज्जोएहिं नाणाविहपंचवन्नेहिं मणीहिं उवसोहिए, तंजहा—किण्हेहिं ५'इत्यादि वर्णगन्धरसस्पर्शवर्णको मणीनां वाच्य इति । 'अब्भुग्गयमूसियवन्नओ'त्ति अभ्युद्गतोच्छ्रितादिः प्रासादवर्णको वाच्य इत्यर्थः, स च पूर्ववत्, 'उल्लोए'त्ति उल्लोकः उल्लोचो वा—उपरितलं 'पउमलयाभत्तिचित्ते'त्ति पद्मानि लताश्च पद्मलतास्तद्रूपाभिर्भक्तिभिः—विच्छित्तिभिश्चित्रो यः स तथा, यावत्करणादिदं दृश्यं—'पासाइए दरिसणिज्जे अभिरूवे'त्ति, 'मणिपेढिया अट्ठजोयणिया जहा वेमाणियाणं'ति मणिपीठिका वाच्या, सा चायामविष्कम्भाभ्यामष्टयोजनिका यथा वैमानिकानां सम्बन्धिनी, न तु व्यन्तरादिसत्केव, तस्या अन्यथास्वरूपत्वात्, सा पुनरेवं 'तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगं मणिपेढियं विउव्वइ, सा णं मणिपेढिया अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं पन्नत्ता चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वरयणामई अच्छा जाव पडिरूव'त्ति, 'सयणिज्जवन्नओ'त्ति शयनीयवर्णको वाच्यः, स चैवं—'तस्स णं देवसयणिज्जस्स इमेयारूवे वन्नावासे पण्णत्ते' वर्णकव्यासः—वर्णकविस्तरः, 'तंजहा—नाणामणिमया पडिपाया सोवन्निया पाया णाणामणिमयाइं पायसीसगाइं'इत्यादिरिति, 'दोहि य अणीएहिं'ति अनीकं—सैन्यं 'नट्टाणीएण य'त्ति नाट्यं—नृत्यं तत्कारकमनीकं—जनसमूहो नाट्यानीकं, एवं गन्धर्वानीकं, नवरं गन्धर्व्वं—गीतं, 'महये'त्यादि यावत्करणादेवं दृश्यं—'महयाऽऽहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं'ति व्याख्या चास्य प्राग्वत्, इह च यत् शक्रस्य सुधर्म्मसभालक्षणभोगस्थानसद्भावेऽपि भोगार्थं

नेमिप्रतिरूपकादिविकुर्वणं तज्जिनास्थ्याशातनापरिहारार्थं, सुधर्म्मसभायां हि माणवके स्तम्भे जिनास्थीनि समुद्गकेषु सन्ति, तत्प्रत्यासत्तौ च भोगानुभवने तदबहुमानः कृतः स्यात्, स चाशातनेति। 'सिंहासणं विउव्वइ'त्ति सनत्कुमारदेवेन्द्रः सिंहासनं विकुरुते, न तु शक्रेशानाविव देवशयनीयं, स्पर्शमात्रेण तस्य परिचारकत्वान्न शयनीयेन प्रयोजनमिति भावः, 'सपरिवारं'ति स्वकीयपरिवारयोग्यासनपरिकरितमित्यर्थः, 'नवरं जो जस्स परिवारो सो तस्स भाणियव्वो'त्ति सनत्कुमारस्य परिवार उक्तः, एवं माहेन्द्रस्य तु सप्ततिः सामानिकसहस्राणि चतस्रश्चाङ्गरक्षसहस्राणां सप्ततयः, ब्रह्मणः षष्टिः सामानिकसहस्राणां लान्तकस्य पञ्चाशत् शुक्रस्य चत्वारिंशत् सहस्रारस्य त्रिंशत् प्राणतस्य विंशतिः अच्युतस्य तु दश सामानिकसहस्राणि, सर्वत्रापि च सामानिकचतुर्गुणा आत्मरक्षा इति। 'पासायउच्चत्तं ज'मित्यादि, तत्र सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः षड् योजनशतानि प्रासादस्योच्चत्वं ब्रह्मलान्तकयोः सप्त शुक्रसहस्रारयोरष्टौ प्राणतेन्द्रस्याच्युतेन्द्रस्य च नवेति, इह च सनत्कुमारादयः सामानिकादिपरिवारसहितास्तत्र नेमिप्रतिरूपके गच्छन्ति, तत्समक्षमपि स्पर्शादिप्रतिचारणाया अविरुद्धत्वात्, शक्रेशानौ तु न तथा, सामानिकादिपरिवारसमक्षं कायप्रतिचारणाया लज्जनीयत्वेन विरुद्धत्वादिति ॥ चतुर्दशशते षष्ठः ॥ १४-६ ॥

---

षष्ठोद्देशकान्ते प्राणताच्युतेन्द्रयोर्भोगानुभूतिरुक्ता, सा च तयोः कथञ्चित्तुल्येति तुल्यताऽभिधानार्थः सप्तमोद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रं—

**रायगिहे जाव एवं वयासी, परिसा पडिगया, गोयमादी! समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं आमंतेत्ता एवं वयासी—चिरसंसिट्ठोऽसि मे गोयमा! चिरसंथुओऽसि मे गोयमा! चिरपरिचिओऽसि मे गोयमा! चिरजुसिओऽसि**

मे गोयमा ! चिराणुगओऽसि मे गोयमा ! चिराणुवत्तीसि मे गोयमा ! अणंतरं देवलोए अणंतरं माणुस्सए भवे, किं परं ?, मरणा कायस्स भेदा इओ चुता दोवि तुल्ला एगट्ठा अविसेसमणाणत्ता भविस्सामो ( सूत्रं ५२१ ) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, तत्र किल भगवान् श्रीमहावीरः केवलज्ञानाप्राप्त्या सखेदस्य गौतमस्वामिनः समाश्वासनायात्मनस्तस्य च भाविनीं तुल्यतां प्रतिपादयितुमिदमाह-'गोयमे'त्यादि, 'चिरसंसिट्ठोऽसि'त्ति चिरं-बहुकालं यावत् चिरे वा-अतीते प्रभूते काले संश्लिष्टः-स्नेहात्संबद्धश्चिरसंश्लिष्टः 'असि' भवसि 'मे' मया मम वा त्वं हे गौतम ! 'चिरसंथुओ'त्ति चिरं-बहुकालम् अतीतं यावत् संस्तुतः-स्नेहात्प्रशंसितश्चिरसंस्तुतः, एवं 'चिरपरिचिए'त्ति पुनः पुनर्दर्शनतः परिचितश्चिरपरिचितः, 'चिरजुसिए'त्ति चिरसेवितश्चिरप्रीतो वा 'जुषी प्रीतिसेवनयोः' इति वचनात्, 'चिराणुगए'त्ति चिरमनुगतो ममानुगतिकारित्वात् 'चिराणुवत्तीसि'त्ति चिरमनुवृत्तिः-अनुकूलवर्त्तिता यस्यासौ चिरानुवृत्तिः, इदं च चिरसंश्लिष्टत्वादिकं क्वासीत् ? इत्याह—'अणंतरं देवलोए'त्ति अनन्तरं-निर्व्यवधानं यथा भवत्येवं देवलोके, अनन्तरे देवभवे इत्यर्थः, ततोऽपि-अनन्तरं मनुष्यभवे, जात्यर्थत्वादेकवचनस्य देवभवेषु मनुष्यभवेषु चेति द्रष्टव्यं, तत्र किल त्रिपृष्ठभवे भगवतो गौतमः सारथित्वेन चिरसंश्लिष्टत्वादिधर्म्मयुक्त आसीत्, एवमन्येष्वपि भवेषु संभवतीति, एवं च मयि तव गाढत्वेन स्नेहस्य न केवलज्ञानमुत्पद्यते, भविष्यति च तवापि स्नेहक्षये तदित्यधृतिं मा कृथा इति गम्यते, 'किं परं ?, मरण'त्ति किं बहुना? 'परं'ति परतो 'मरणात्' मृत्योः, किमुक्तं भवति?-कायस्य भेदाद्धेतोः 'इओ चुय'त्ति 'इतः' प्रत्यक्षान्मनुष्यभवाच्च्युतौ 'दोवि'त्ति द्वावप्यावां तुल्यौ, भविष्याव इति योगः, तत्र 'तुल्यौ' समानजीवद्रव्यौ 'एकट्ठ'त्ति 'एकार्थौ' एकप्रयोजनावनन्तसुखप्रयोजनत्वात् एकस्थौ वा—एकक्षेत्राश्रितौ सिद्धिक्षेत्रापेक्षयेति 'अविसेसमणाणत्त'त्ति 'अविशेषं'

निर्विशेषं यथा भवत्येवम् 'अनानात्वौ' तुल्यज्ञानदर्शनादिपर्यायाविति, इदं च किल यदा भगवता गौतमेन चैत्यवन्दनायाष्टापदं गत्वा प्रत्यागच्छता पञ्चदश तापसशतानि प्रव्राजितानि समुत्पन्नकेवलानि च श्रीमन्महावीरसमवसरणमानीतानि तीर्थप्रणामकरणसमनन्तरं च केवलिपर्षदि समुपविष्टानि, गौतमेन चाविदिततत्केवलोत्पादव्यतिकरेणाभिहितानि यथा—आगच्छत भोः साधवः ! भगवन्तं वन्दध्वमिति, जिननायकेन च गौतमोऽभिहितो यथा—गौतम ! मा केवलिनामाशातनां कार्षीः, ततो गौतमो मिथ्यादुष्कृतमदात्, तथा यानहं प्रव्राजयामि तेषां केवलमुत्पद्यते, न पुनर्मम, ततः किं तन्मे नोत्पत्स्यत एवेति विकल्पादधृतिं चकार, ततो जगद्गुरुणा गदितोऽसौ मनःसमाधानाय, यथा—गौतम ! चत्वारः कटा भवन्ति—सुम्बकटो विदलकटश्चर्मकटः कम्बलकटश्चेति, एवं शिष्या अपि गुरोः प्रतिबन्धसाधर्म्येण सुम्बकटसमादयश्चत्वार एव भवन्ति, तत्र त्वं मयि कम्बलकटसमान इत्येतस्यार्थस्य समर्थनाय भगवता तदाऽभिहितमिति ॥ एवं भाविन्यामात्मतुल्यतायां भगवताऽभिहितायां 'अतिप्रियमश्रद्धेय'मितिकृत्वा यद्यन्योऽप्येनमर्थं जानाति तदा साधु भवतीत्यनेनाभिप्रायेण गौतम एवाह—

जहा णं भंते ! वयं एयमट्ठं जाणामो पासामो तहा णं अणुत्तरोववाइयावि देवा एयमट्ठं जा० पा० ?, हंता गोयमा ! जहा णं वयं एयमट्ठं जाणामो पासामो तहा अणुत्तरोववाइयावि देवा एयमट्ठं जा० पा०, से केणट्ठेणं जाव पासंति ?, गोयमा ! अणुत्तरोववाइया णं अणंताओ मणोदव्ववग्गणाओ लद्धाओ पत्ताओ अभिसमन्नागयाओ भवंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव पासंति (सूत्रं ५२२) ॥

'जहा ण'मित्यादि, 'एयमट्ठं'ति 'एतमर्थम्' आवयोर्भावितुल्यतालक्षणं 'वयं जाणामो'त्ति यूयं च वयं चेत्येकशेषाद्वयं, तत्र

यूयं केवलज्ञानेन जानीथ वयं तु भवदुपदेशात् तथाऽनुत्तरोपपातिका अपि देवा एनमर्थं जानन्तीति ? प्रश्नः, अत्रोत्तरं—'हंता गोयमा !'इत्यादि, 'मणोदव्ववग्गणाओ लद्धाओ'त्ति मनोद्रव्यवर्गणा लब्धास्तद्विषयावधिज्ञानलब्धिमात्रापेक्षया 'पत्ताओ'त्ति प्राप्तास्तद्द्रव्यपरिच्छेदतः 'अभिसमन्नागयाओ'त्ति अभिसमन्वागताः तद्गुणपर्यायपरिच्छेदतः, अयमत्र गर्भार्थः-अनुत्तरोपपातिका देवा विशिष्टावधिना मनोद्रव्यवर्गणा जानन्ति पश्यन्ति च, तासां चावयोरयोग्यवस्थायामदर्शनेन निर्वाणगमनं निश्चिन्वन्ति, ततश्चावयोर्भावितुलयतालक्षणमर्थं जानन्ति पश्यन्ति चेति व्यपदिश्यत इति ॥ तुलयताप्रक्रमादेवेदमाह—

कइविहे णं भंते ! तुल्लए पण्णत्ते ?, गोयमा ! छव्विहे तुल्लए पण्णत्ते, तंजहा-दव्वतुल्लए खेत्ततुल्लए कालतुल्लए भवतुल्लए भावतुल्लए संठाणतुल्लए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ दव्वतुल्लए २?, गोयमा ! परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलस्स दव्वओ तुल्ले, परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलवइरित्तस्स दव्वओ णो तुल्ले, दुपएसिए खंधे दुपएसियस्स खंधस्स दव्वओ तुल्ले, दुपएसिए खंधे दुपएसियवइरित्तस्स खंधस्स दव्वओ णो तुल्ले, एवं जाव दसपएसिए, तुल्लसंखेज्जपएसिए खंधे तुल्लसंखेज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वओ तुल्ले, तुल्लसंखेज्जपएसिए खंधे तुल्लसंखेज्जपएसियवइरित्तस्स खंधस्स दव्वओ णो तुल्ले, एवं तुल्लअसंखेज्जपएसिएवि एवं तुल्लअणंतपएसिएवि, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ दव्वओ तुल्लए। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-खेत्ततुल्लए २ ?, गोयमा ! एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढस्स पोग्गलस्स खेत्तओ तुल्ले, एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढवइरित्तस्स पोग्गलस्स खेत्तओ णो तुल्ले, एवं जाव दसपएसोगाढे, तुल्लसंखेज्जपएसोगाढे० तुल्लसंखेज्ज०, एवं तुल्लअसंखेज्जपएसोगाढेवि, से तेणट्ठेणं जाव

खेत्ततुल्लए। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ कालतुल्लए२?, गोयमा! एगसमयठितीए पोग्गले एग० २ कालओ तुल्ले एगसमयठितीए पोग्गले एगसमयठितीवइरित्तस्स पोग्गलस्स कालओ णो तुल्ले, एवं जाव दससमयट्ठितीए, तुल्लसंखेज्जसमयठितीए एवं चेव, एवं तुल्लअसंखेज्जसमयट्ठितीएवि, से तेणट्ठेणं जाव कालतुल्लए। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ—भवतुल्लए २?, गोयमा! नेरइए नेरइयस्स भवट्ठयाए तुल्ले नेरइयवइरित्तस्स भवट्ठयाए नो तुल्ले, तिरिक्खजोणिए एवं चेव, एवं मणुस्से एवं, देवेवि, से तेणट्ठेणं जाव भवतुल्लए। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ—भावतुल्लए भावतुल्लए?, गोयमा! एगगुणकालए पोग्गले एगगुणकालगस्स पोग्गलस्स भावओ तुल्ले एगगुणकालए पोग्गले एगगुणकालगवइरित्तस्स पोग्गलस्स भावओ णो तुल्ले, एवं जाव दसगुणकालए, एवं तुल्लसंखेज्जगुणकालए पोग्गले, एवं तुल्लअसंखेज्जगुणकालएवि, एवं तुल्लअणंतगुणकालएवि, जहा कालए एवं नीलए लोहियए हालिद्दे सुक्किल्लए, एवं सुब्भिगंधे एवं दुब्भिगंधे, एवं तित्ते जाव महुरे, एवं कक्खडे जाव लुक्खे, उदइए भावे उदइयस्स भावस्स भावओ तुल्ले, उदइए भावे उदइयभाववइरित्तस्स भावस्स भावओ नो तुल्ले, एवं उवसमिए० खइए० खओवसमिए० पारिणामिए० संनिवाइए भावे संनिवाइयस्स भावस्स० से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ—भावतुल्लए २। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ—संठाणतुल्लए २?, गोयमा! परिमंडले संठाणे परिमंडलस्स संठाणस्स संठाणओ तुल्ले, परिमंडलसंठाणवइरित्तस्स संठाणओ नो तुल्ले, एवं वट्टे तंसे चउरंसे आयए, समचउरंससंठाणे समचउरंसस्स संठाणस्स संठाणओ तुल्ले, समचउरंसे संठाणे समचउरंससंठाणवइरित्तस्स संठाणस्स संठाणओ नो तुल्ले, एवं परिमंडले, एवं जाव

हुंडे, से तेण० जाव संठाणतुल्लए सं० २ (सूत्रं ५२३) ॥

'कइविहे' इत्यादि, तुल्यं-समं तदेव तुल्यकं 'दव्वतुल्लए'त्ति द्रव्यतः-एकाणुकाद्यपेक्षया तुल्यकं द्रव्यतुल्यकम्, अथवा द्रव्यं च तत्तुल्यकं च द्रव्यान्तरेणेति द्रव्यतुल्यकं विशेषणव्यत्ययात्, 'खेत्ततुल्लए'त्ति क्षेत्रतः-एकप्रदेशावगाढत्वादिना तुल्यकं क्षेत्रतुल्यकम्, एवं शेषाण्यपि, नवरं भवो-नारकादिः भावो-वर्णादिरौदयिकादिर्वा संस्थानं-परिमण्डलादिः, इह च तुल्यव्यतिरिक्तमतुल्यं भवतीति तदपीह व्याख्यास्यते, 'तुल्लसंखेज्जपएसए'त्ति तुल्या-समानाः सङ्ख्येयाः प्रदेशा यत्र स तथा, तुल्यग्रहणमिह सङ्ख्यातत्वस्य सङ्ख्यातभेदत्वान्न सङ्ख्यातमात्रेण तुल्यताऽस्य स्यादु, अपि तु समानसङ्ख्यत्वेनेत्यस्यार्थस्य प्रतिपादनार्थम्, एवमन्यत्रापीति, यच्चेहानन्तक्षेत्रप्रदेशावगाढत्वमनन्तसमयस्थायित्वं च नोक्तं तदवगाहप्रदेशानां स्थितिसमयानां च पुद्गलानाश्रित्यानन्तानामभावादिति । 'भवट्ठयाए'त्ति भव एवार्थो भवार्थस्तद्भावस्तत्ता तया भवार्थतया, 'उदइए भावे'त्ति उदयः-कर्म्मणां विपाकः स एवौदयिकः क्रियामात्रं अथवा उदयेन निष्पन्नः औदयिको भावो-नारकत्वादिपर्यायविशेषः औदयिकस्य भावस्य नारकत्वादेर्भावतो-भावसामान्यमाश्रित्य तुल्यः-समः, 'एवं उवसमिए'त्ति औपशमिकोऽप्येवं वाच्यः, तथाहि—'उवसमिए भावे उवसमियस्स भावस्स भावओ तुल्ले, उवसमिए भावे उवसमियवइरित्तस्स भावस्स भावओ नो तुल्ले'त्ति, एवं शेषेष्वपि वाच्यं, तत्रोपशमः-उदीर्णस्य कर्म्मणः क्षयोऽनुदीर्णस्य विष्कम्भितोदयत्वं स एवौपशमिकः क्रियामात्रं उपशमेन वा निर्वृत्तः औपशमिकः-सम्यग्दर्शनादि, 'खइए'त्ति क्षयः-कर्माभावः स एव क्षायिकः क्षयेण वा निर्वृत्तः क्षायिकः-केवलज्ञानादिः, 'खओवसमिए'त्ति क्षयेण-उदयप्राप्तकर्मणो विनाशेन सहोपशमो-विष्कम्भितोदयत्वं क्षयोपशमः स एव क्षायोपशमिकः क्रियामात्रमेव क्षयोपशमेन वा निर्वृत्तः

क्षायोपशमिकः–मतिज्ञानादिपर्यायविशेषः, नन्वौपशमिकस्य क्षायोपशमिकस्य च कः प्रतिविशेषः ?, उभयत्राप्युदीर्णस्य क्षयस्यानुदीर्णस्य चोपशमस्य भावात्, उच्यते, क्षायोपशमिके विपाकवेदनमेव नास्ति, प्रदेशवेदनं पुनरस्त्येव, औपशमिके तु प्रदेशवेदनमपि नास्तीति, 'पारिणामिए'त्ति परिणमनं परिणामः स एव पारिणामिकः, 'सन्निवाइए'त्ति सन्निपातः–औदयिकादिभावानां द्व्यादिसंयोगस्तेन निर्वृत्तः सान्निपातिकः। 'संठाणतुल्लए'त्ति संस्थानं–आकृतिविशेषः, तच्च द्वेधा–जीवाजीवभेदात्, तत्राजीवसंस्थानं पञ्चधा, तत्र 'परिमंडले संठाणे'त्ति परिमण्डलस्थानं बहिस्ताद् वृत्ताकारं मध्ये शुषिरं यथा वलयस्य, तच्च द्वेधा–घनप्रतरभेदात्, 'वट्टे'त्ति वृत्तं–परिमण्डलमेवान्तःशुषिररहितं यथा कुलालचक्रस्य, इदमपि द्वेधा–घनप्रतरभेदात्, पुनरेकैकं द्विधा–समसङ्ख्यविषमसङ्ख्यप्रदेशभेदात्, एवं त्र्यस्रं चतुरस्रं च, नवरं 'त्र्यस्रं' त्रिकोणं शृङ्गाटकस्येव, चतुरस्रं तु चतुष्कोणं यथा कुम्भिकायाः, आयतदीर्घं यथा दण्डस्य, तच्च त्रेधा–श्रेण्यायतप्रतरायतघनायतभेदात, पुनरेकैकं द्विधा–समसङ्ख्यविषमसङ्ख्यप्रदेशभेदात्, इदं च पञ्चविधमपि विश्रसाप्रयोगाभ्यां भवति, जीवसंस्थानं तु संस्थानाभिधाननामकर्म्मोत्तरप्रकृत्युदयसम्पाद्यो जीवानामाकारः, तच्च षोढा, तत्राद्यं 'समचउरंसे'त्ति तुल्यारोहपरिणाहं सम्पूर्णाङ्गावयवं स्वाङ्गुलाष्टशतोच्छ्रयं समचतुरस्रं, तुल्यारोहपरिणाहत्वेन समत्वात् पूर्णावयवत्वेन च चतुरस्रत्वात्तस्य, चतुरस्रं सङ्गतमिति पर्यायौ, 'एवं परिमंडलेवि'त्ति यथा समचतुरस्रमुक्तं तथा न्यग्रोधपरिमण्डलमपीत्यर्थः, न्यग्रोधो–वटवृक्षस्तद्वत्परिमण्डलं नाभित उपरि चतुरस्रलक्षणयुक्तमधश्च तदनुरूपं न भवति, तस्मात्प्रमाणाद्धीनतरमिति, 'एवं जाव हुंडे'त्ति इह यावत्करणात् 'साई खुज्जे वामणे'त्ति दृश्यं, तत्र 'साइ'त्ति सादि नाभीतोऽधश्चतुरस्रलक्षणयुक्तमुपरि च तदनुरूपं न भवति, 'खुज्जे'त्ति कुब्जं ग्रीवादौ हस्तपादयोश्चतुरश्रलक्षणयुक्तं सङ्क्षिप्तविकृतमध्यं, 'वामणे'त्ति वामनं लक्षणयुक्तमध्यं ग्रीवादौ हस्तपादयोर-

ण्यादिलक्षणन्यूनं, 'हुंडे'त्ति हुण्डं-प्रायः सर्वावयवेष्वादिलक्षणविसंवादोपेतमिति ॥ अनन्तरं संस्थानवक्तव्यतोक्ता, अथ संस्थानवतोऽनगारस्य वक्तव्यताविशेषमभिधातुकाम आह—

भत्तपच्चक्खायए णं भंते ! अणगारे मुच्छिए जाव अज्झोववन्ने आहारमाहारेति अहे णं वीससाए कालं करेति तओ पच्छा अमुच्छिए अगिद्धे जाव अणज्झोववन्ने आहारमाहारेति ?, हंता गोयमा ! भत्तपच्चक्खायए णं अणगारे तं चेव, से केणट्ठेणं भन्ते ! एवं वु०-भत्तपच्चक्खायए णं तं चेव ?, गोयमा ! भत्तपच्चक्खायए णं अणगारे मुच्छिए जाव अज्झोववन्ने आहारए भवइ अहे णं वीससाए कालं करेइ तओ पच्छा अमुच्छिए जाव आहारे भवइ से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव आहारमाहारेति (सूत्रं ५२४) ॥

'भत्ते'त्यादि, तत्र 'भत्तपच्चक्खायए णं'ति अनशनी 'मूर्च्छितः' सञ्जातमूर्च्छः-जाताहारसंरक्षणानुबन्धः तद्दोषविषये वा मूढः 'मूर्च्छा मोहसमुच्छ्राययोः' इति वचनात्, यावत्करणादिदं दृश्यं-'गढिए' ग्रथितः-आहारविषयस्नेहतन्तुभिः संदर्भितः 'ग्रन्थ श्रन्थ संदर्भे' इति वचनात् 'गिद्धे' गृद्धः-प्राप्ताहारे आसक्तोऽतृप्तत्वेन वा तदाकाङ्क्षावान् 'गृधु अभिकाङ्क्षायाम्' इति वचनात् 'अज्झोववन्ने'त्ति अध्युपपन्नः-अप्राप्ताहारचिन्तामाधिक्येनोपपन्नः 'आहारं' वायुतैलाभ्यङ्गादिकमोदनादिकं वाऽभ्यवहार्यं तीव्रक्षुद्वेदनीयकर्मोदयादसमाधौ सति तदुपशमनाय प्रयुक्तम् 'आहारयति' उपभुंक्ते, 'अहे णं'ति 'अथ' आहारानन्तरं 'विश्रसया' स्वभावत एव 'कालं'ति कालो-मरणं काल इव कालो-मारणान्तिकसमुद्घातस्तं 'करोति' याति 'तओ पच्छ'त्ति ततो-मारणान्तिकसमुद्घातात् पश्चात् तस्मान्निवृत्त इत्यर्थः अमूर्च्छितादिविशेषणविशेषित आहारमाहारयति प्रशान्तपरिणामसद्भावादिति प्रश्नः, अत्रोत्तरं-'हंता

गोयमा !'इत्यादि, अनेन तु प्रश्नार्थ एवाभ्युपगतः, कस्यापि भक्तप्रत्याख्यातुरेवंभूतभावस्य सद्भावादिति ॥ अनन्तरं भक्तप्रत्याख्यातुरनगारस्य वक्तव्यतोक्ता, स च कश्चिदनुत्तरसुरेषूत्पद्यत इति तद्वक्तव्यतामाह—

अत्थि णं भंते ! लवसत्तमा देवा ल० २ ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भन्ते ! एवं वुच्चइ–लवसत्तमा देवा ल० २ ?, गोयमा ! से जहानामए–केइ पुरिसे तरुणे जाव निउणसिप्पोवगए सालीण वा वीहीण वा गोधूमाण वा जवाण वा जवजवाण वा पक्काणं परियाताणं हरियाणं हरियकंडाणं तिक्खेणं णवपज्जणएणं असिअएणं पडिसाहरिया प० २ पडिसंखिविया २ जाव इणामेव २ त्तिकट्टु सत्त लवए लुएज्जा, जति णं गोयमा ! तेसिं देवाणं एवतियं कालं आउए पहुप्पते तो णं ते देवा तेणं चेव भवग्गहणेणं सिज्झंता जाव अंतं करेंता, से तेणट्ठेणं जाव लवसत्तमा देवा लवसत्तमा देवा (सूत्रं ५२५) ॥ अत्थि णं भंते ! अणुत्तरोववाइया देवा अ० २ ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अ० २ ?, गोयमा ! अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं अणुत्तरा सद्दा जाव अणुत्तरा फासा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव अणुत्तरोववाइया देवा अ० २। अणुत्तरोववाइया णं भंते ! देवा णं केवतिएणं कम्मावसेसेणं अणुत्तरोववाइयदेवत्ताए उववन्ना ?, गोयमा ! जावतियं छट्ठभत्तिए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति एवतिएणं कम्मावसेसेणं अणुत्तरोववाइया देवा देवत्ताए उववन्ना । सेवं भंते ! २ त्ति (सूत्रं ५२६) ॥ १४–७ ॥



'अत्थि ण'मित्यादि, लवाः–शाल्यादिकवलिकालवनक्रियाप्रमिताः कालविभागाः सप्त–सप्तसंख्या मानं–प्रमाणं यस्य कालस्यासौ लवसप्तमस्तं लवसप्तमं कालं यावदायुष्यप्रभवति सति ये शुभाध्यवसायवृत्तयः सन्तः सिद्धिं न गता अपि तु देवेषूत्पन्नास्ते लवसप्तमाः,

ते च सर्वार्थसिद्धाभिधानानुत्तरसुरविमाननिवासिनः, 'से जहानामए'त्ति 'सः' कश्चित् 'यथानामकः' अनिर्दिष्टनामा पुरुषः 'तरुणे' इत्यादेर्व्याख्यानं प्रागिव 'पक्काणं'ति पक्कानां 'परियायाणं'ति 'पर्यवगतानां' लवनीयावस्थां प्राप्तानां 'हरियाणं'ति पिङ्गीभूतानां, ते च पत्रापेक्षयाऽपि भवन्तीत्याह—'हरियकंडाणं'ति पिङ्गीभूतजालानां 'नवपज्जणएणं'ति नवं-प्रत्यग्रं 'पज्जणयं'ति प्रतापितस्यायोघनकुट्टनेन तीक्ष्णीकृतस्य पायनं-जलनिबोलनं यस्य तन्नवपायनं तेन 'असियएणं'ति दात्रेण 'पडिसाहरिय'त्ति प्रतिसंहृत्य विकीर्णनालान् बाहुना संगृह्य 'पडिसंखिविय'त्ति मुष्टिग्रहणेन सङ्क्षिप्य 'जाव इणामेवे'त्यादि प्रज्ञापकस्य लवनक्रियाशीघ्रत्वोपदर्शनपरचप्पुटिकादिहस्तव्यापारसूचकं वचनं 'सत्त लवे'त्ति लूयन्त इति लवाः-शाल्यादिनालमुष्टयस्तान् लवान् 'लुएज्ज'त्ति लुनीयात्, तत्र च सप्तलवलवने यावान् कालो भवतीति वाक्यशेषो दृश्यः, ततः किमित्याह—'जइ ण'मित्यादि, 'तेसिं देवाणं'ति द्रव्यदेवत्वे साध्ववस्थायामित्यर्थः 'तेणं चेव'त्ति यस्य भवग्रहणस्य सम्बन्धि आयुर्न पूर्णं तेनैव, मनुष्यभवग्रहणेनेत्यर्थः ॥ लवसप्तमा अनुत्तरोपपातिका इत्यनुत्तरोपपातिकदेवप्ररूपणाय सूत्रद्वयमभिधातुमाह—'अत्थि ण'मित्यादि, 'अणुत्तरोववाइय'त्ति अनुत्तरः—सर्वप्रधानोऽनुत्तरशब्दादिविषययोगात् उपपातो—जन्म अनुत्तरोपपातः सोऽस्ति येषां तेऽनुत्तरोपपातिकाः, 'जावइयं छट्ठभत्तिए' इत्यादि, किल षष्ठभक्तिकः सुसाधुर्यावत् कर्म क्षपयति एतावता कर्म्मावशेषेण-अनिर्जीर्णेनानुत्तरोपपातिका देवा उत्पन्ना इति ॥ चतुर्दशशते सप्तमः ॥ १४-७ ॥

सप्तमे तुल्यतारूपो वस्तुनो धर्मोऽभिहितः, अष्टमे त्वन्तररूपः स एवाभिधीयते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए सक्करप्पभाए य पुढवीए केवतियं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?, गोयमा! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते, सक्करप्पभाए णं भंते! पुढवीए वालुयप्पभाए य पुढवीए केवतियं एवं चेव, एवं जाव तमाए अहेसत्तमाए य, अहेसत्तमाए णं भंते! पुढवीए अलोगस्स य केवतियं आबाहाए अंतरे पण्णत्ते?, गोयमा! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं आबाहाए अंतरे पण्णत्ते। इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए जोतिसस्स य केवतियं पुच्छा, गोयमा! सत्तनउए जोयणसए आबाहाए अंतरे पण्णत्ते, जोतिसस्स णं भंते! सोहम्मीसाणाण य कप्पाणं केवतियं पुच्छा, गोयमा! असंखेज्जाइं जोयण जाव अंतरे पण्णत्ते, सोहम्मीसाणाणं भंते! सणंकुमारमाहिंदाण य केवतियं एवं चेव, सणंकुमारमाहिंदाणं भंते! बंभलोगस्स कप्पस्स य केवतियं एवं चेव, बंभलोगस्स णं भंते! लंतगस्स य कप्पस्स केवतियं एवं चेव, लंतयस्स णं भंते! महासुक्कस्स य कप्पस्स केवतियं एवं चेव, एवं महासुक्कस्स कप्पस्स सहस्सारस्स य, एवं सहस्सारस्स आणयपाणयकप्पाणं, एवं आणयपाणयाण य कप्पाणं आरणच्चुयाण य कप्पाणं, एवं आरणच्चुयाणं गेविज्जविमाणाण य, एवं गेविज्जविमाणाणं अणुत्तरविमाणाण य। अणुत्तरविमाणाणं भंते! ईसिंपब्भाराए य पुढवीए केवतिए पुच्छा, गोयमा! दुवालसजोयणे अबाहाए अंतरे पण्णत्ते, ईसिंपब्भाराए णं भंते! पुढवीए अलोगस्स य केवतिए अबाहाए पुच्छा, गोयमा! देसूणं जोयणं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते (सूत्रं ५२७) ॥

'इमीसे ण'मित्यादि, 'अबाहाए अंतरे'त्ति बाधा—परस्परसंश्लेषतः पीडनं न बाधा अबाधा तया अबाधया यदन्तरं व्यवधानमित्यर्थः, इहान्तरशब्दो मध्यविशेषादिष्वर्थेषु वर्त्तमानो दृष्टस्ततस्तद्व्यवच्छेदेन व्यवधानार्थपरिग्रहार्थमबाधाग्रहणं, 'असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं'ति इह योजनं प्रायः प्रमाणाङ्गुलनिष्पन्नं ग्राह्यं, "नगपुढविविमाणाइं मिणसु पमाणंगुलेणं तु ।" इत्यत्र नगादिग्रहणस्योपलक्षणत्वाद्, अन्यथाऽऽदित्यप्रकाशादेरपि प्रमाणयोजनाप्रमेयता स्यात्, तथा चाधोलोकग्रामेषु तत्प्रकाशाप्राप्तिः प्राप्नोत्यात्माङ्गुलस्यानियतत्वेनाव्यवहाराङ्गतया रविप्रकाशस्योच्छ्रययोजनप्रमेयत्वात्, तस्य चातिलघुत्वेन प्रमाणयोजनप्रमितक्षेत्राणामव्याप्तिरिति, यच्चेहेषत्प्राग्भारायाः पृथिव्या लोकान्तस्य चान्तरं तदुच्छ्रयांगुलनिष्पन्नयोजनप्रमेयमित्यनुमीयते, यतस्तस्य योजनस्योपरितनक्रोशस्य षड्भागे सिद्धावगाहना धनुस्त्रिभागयुक्तत्रयस्त्रिंशदधिकधनुःशतत्रयमानाऽभिहिता, सा चोच्छ्रययोजनाश्रयणत एव युज्यत इति, उक्तञ्च—"ईसीपब्भाराए उवरिं खलु जोयणस्स जो कोसो । कोसस्स य छब्भाए सिद्धाणोगाहणा भणिया ॥ १ ॥" इति । 'देसूणं जोयणं'ति इह सिद्धचलोकयोर्देशोनं योजनमन्तरमुक्तं आवश्यके तु योजनमेव, तत्र च किञ्चिन्न्यूनताया अविवक्षणान्न विरोधो मन्तव्य इति ॥ अनन्तरं पृथिव्याद्यन्तरमुक्तं तच्च जीवानां गम्यमिति जीवविशेषगतिमाश्रित्येदं सूत्रत्रयमाह—

**एस णं भंते ! सालरुक्खे उण्हाभिहए तण्हाभिहए दवग्गिजालाभिहए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति?, गोयमा ! इहेव रायगिहे नगरे सालरुक्खत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ अच्चियवंदियपूइयसक्कारियसम्माणिए दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सन्निहियपाडिहेरे लाउल्लोइयमहिए यावि भविस्सइ, से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गमिहिति कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव**

अंतं काहिति ॥ एस भंते ! साललट्ठिया उण्हाभिहया तण्हाभिहया दवग्गिजालाभिहया कालमासे कालं किच्चा जाव कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे विञ्झगिरिपायमूले महेसरीए नगरीए सामलिरुक्खत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ अच्चियवंदियपूइय जाव लाउल्लोइयमहिए यावि भविस्सइ, से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता सेसं जहा सालरुक्खस्स जाव अंतं काहिति। एस णं भंते ! उंबरलट्ठिया उण्हाभिहया ३ कालमासे कालं किच्चा जाव कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे पाडलिपुत्ते नामं नगरे पाडलिरुक्खत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ अच्चियवंदिय जाव भविस्सति, से णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता सेसं तं चेव जाव अंतं काहिति (सूत्रं ५२८) ॥

'एस ण'मित्यादि, 'दिव्वे'त्ति प्रधानः 'सच्चोवाए'त्ति 'सत्यावपातः' सफलसेवः, कस्मादेवमित्यत आह—'सन्निहियपाडिहेरे'त्ति संनिहितं-विहितं प्रातिहार्यं-प्रतीहारकर्म्म-सांनिध्यं देवेन यस्य स तथा । 'सालट्ठिय'त्ति शालयष्टिका, इह च यद्यपि शालवृक्षादावनेके जीवा भवन्ति तथाऽपि प्रथमजीवापेक्षं सूत्रत्रयमभिनेतव्यं १। एवंविधप्रश्नाश्च वनस्पतीनां जीवत्वमश्रद्दधानं श्रोतारमपेक्ष्य भगवता गौतमेन कृता इत्यवसेयमिति ॥ गतिप्रक्रमादिदमाह—

तेणं कालेणं तेणं समएणं अम्मडस्स परिव्वायगस्स सत्त अंतेवासीसया गिम्हकालसमयंसि एवं जहा उववाइए जाव आराहगा (सूत्रं ५२९) ॥ बहुजणे णं भंते ! अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ एवं-खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे नगरे घरसए एवं जहा उववाइए अम्मडस्स वत्तव्वया जाव दढप्पइण्णो अंतं काहिति (सूत्रं ५३०) ॥

'तेण'मित्यादि, 'एवं जहा उववाइए जाव आराहग'त्ति इह यावत्करणादिदमर्थतो लेशेन दृश्यं-ग्रीष्मकालसमये गङ्गाया उभयकूलतः काम्पिल्यपुरात् पुरिमतालपुरं संप्रस्थितानि ततस्तेषामटवीमनुप्रविष्टानां पूर्वगृहीतमुदकं परिभुज्यमानं क्षीणं, ततस्ते तृष्णाभिभूता उदकदातारमलभमाना अदत्तं च तदगृह्णन्तोऽर्हन्नमस्कारपूर्वकमनशनप्रतिपत्त्या कालं कृत्वा ब्रह्मलोकं गताः, परलोकस्य चाराधका इति । 'घरसए' इत्यत्र 'एवं जहे'त्यादिना यत्सूचितं तदर्थतो लेशेनैवं दृश्यं-भुंक्ते वसति चेति, एतच्च श्रुत्वा गौतम आह—कथमेतद् भदन्त!, ततो भगवानुवाच—गौतम! सत्यमेतद्, यतस्तस्य वैक्रियलब्धिरस्ति ततो जनविस्मापनहेतोरेवं कुरुते, ततो गौतम उवाच—प्रव्रजिष्यत्येष भगवतां समीपे ?, भगवानुवाच-नैवं, केवलमयमधिगतजीवाजीवत्वादिगुणः कृतानशनो ब्रह्मलोके गमिष्यति, ततश्च्युतश्च महाविदेहे दृढप्रतिज्ञाभिधानो महर्द्धिको भूत्वा सेत्स्यतीति ॥ अयमेतच्छिष्याश्च देवतयोत्पन्ना इति देवाधिकाराद्देववक्तव्यतासूत्राण्युद्देशकसमाप्तिं यावत्—

अत्थि णं भंते! अव्वाबाहा देवा अव्वाबाहा देवा ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुचइ-अव्वाबाहा देवा २ ?, गोयमा! पभू णं एगमेगे अव्वाबाहे देवे एगमेगस्स पुरिसस्स एगमेगंसि अच्छिपत्तंसि दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवज्जुतिं दिव्वं देवजुत्तिं दिव्वं देवाणुभागं दिव्वं बत्तीसतिविहं नट्टविहिं उवदंसेत्तए, णो चेव णं तस्स पुरिसस्स किंचिवि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएइ छविच्छेयं वा करेति, एसुहुमं च णं उवदंसेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव अव्वाबाहा देवा२ (सूत्रं ५३१) पभू णं भंते! सक्के देविंदे देवराया पुरिसस्स सीसं पाणिणा असिणा छिंदित्ता कमंडलुंमि पक्खिवित्तए ?, हंता पभू, से कहमिदाणिं पकरेति ?, गोयमा! छिंदिया २ च णं पक्खिवेज्जा

भिंदिया भिंदिया च णं पक्खिवेज्जा कोट्टिया कोट्टिया च णं पक्खिवेज्जा चुन्निया चुन्निया च णं पक्खिवेज्जा तओ पच्छा खिप्पामेव पडिसंघाएज्जा, नो चेव णं तस्स पुरिसस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएज्जा छविच्छेदं पुण करेति, एसुहुमं च णं पक्खिवेज्जा ॥ (सूत्रं ५३२) ॥ अत्थि णं भंते! जंभया देवा जंभया देवा ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-जंभया देवा जंभया देवा ?, गोयमा! जंभगा णं देवा निच्चं पमुइयपक्कीलिया कंदप्परतिमोहणसीला जन्नं ते देवे कुद्धे पासेज्जा से णं पुरिसे महंतं अयसं पाउणिज्जा, जे णं ते देवे तुट्ठे पासेज्जा से णं महंतं जसं पाउणेज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा! जंभगा देवा २ ॥ कतिविहा णं भंते! जंभगा देवा पण्णत्ता ?, गोयमा! दसविहा पण्णत्ता, तंजहा-अन्नजंभगा पाणजंभगा वत्थजंभगा लेणजंभगा सयणजंभगा पुप्फजंभगा फलजंभगा पुप्फफलजंभगा विज्जाजंभगा अवियत्तजंभगा, जंभगा णं भंते! देवा कहिं वसहिं उवेंति ?, गोयमा! सव्वेसु चेव दीहवेयड्ढेसु चित्तविचित्तजमगपव्वएसु कंचणपव्वएसु य एत्थ णं जंभगा देवा वसहिं उवेंति। जंभगाणं भंते! देवाणं केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?, गोयमा! एगं पलिओवमं ठिती पण्णत्ता। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति (सूत्रं ५३३) ॥ १४-८ ॥

तत्र च 'अव्वाबाह'त्ति व्याबाधन्ते-परं पीडयन्तीति व्याबाधास्तन्निषेधादव्याबाधाः, ते च लोकान्तिकदेवमध्यगता द्रष्टव्याः, यदाह—"सारस्सयमाइच्चा वण्ही वरुणा य गद्दतोया य। तुसिया अव्वाबाहा अग्गिच्चा चेव रिट्ठा य ॥ १ ॥" इति। 'अच्छिपत्तंसि' अक्षिपत्रे-अक्षिपक्ष्मणि 'आबाहं व'त्ति ईषद्बाधां 'पबाहं व'त्ति प्रकृष्टबाधां 'वाबाहं'ति क्वचित् तत्र तु 'व्याबाधां'

विशिष्टामाबाधां 'छविच्छेयं'ति शरीरच्छेदम् 'एसुहुमं च णं'ति 'इतिसूक्ष्मम्' एवं सूक्ष्मं यथा भवत्येवमुपदर्शयेत् , नान्यविधिमिति प्रकृतं 'सपाणिणा'त्ति स्वकपाणिना 'से कहमियाणिं पकरेइ'त्ति यदि शक्रः शिरसः कमण्डल्वां प्रक्षेपणे प्रभुस्तत्प्रक्षेपणं कथं तदानीं करोति ?, उच्यते, 'छिंदिया छिंदिया व णं'ति छित्त्वा २ क्षुरप्रादिना कूष्माण्डादिकमिव श्लक्ष्णखण्डीकृत्येत्यर्थः, वाशब्दो विकल्पार्थः, प्रक्षिपेत् कमण्डल्वां, 'भिंदिय'त्ति विदार्योर्द्ध्वपाटनेन शाटकादिकमिव, 'कुट्टिय'त्ति कुट्टयित्वा उदूखलादौ तिलादिकमिव, 'चुन्निय'त्ति चूर्णयित्वा शिलायां शिलापुत्रकादिना गन्धद्रव्यादिकमिव 'ततो पच्छ'त्ति कमण्डलूप्रक्षेपणानन्तरमित्यर्थः 'परिसंघाएज्ज'त्ति मीलयेदित्यर्थः 'एसहुमं च णं पक्खिवेज्ज'त्ति कमण्डल्वामिति प्रकृतं। 'जंभग'त्ति जृम्भन्ते–विजृम्भन्ते स्वच्छन्दचारितया चेष्टन्ते ये ते जृम्भकाः–तिर्यग्लोकवासिनो व्यन्तरदेवाः, 'पमुइयपक्कीलिय'त्ति प्रमुदिताश्च ते–तोषवन्तः प्रक्रीडिताश्च–प्रकृष्टक्रीडाः प्रमुदितप्रक्रीडिताः 'कंदप्परइ'त्ति अत्यर्थं केलिरतिकाः 'मोहणशील'त्ति निधुवनशीलाः 'अजसं'ति उपलक्षणत्वादस्यानर्थं प्राप्नुयात्, 'जसं'त्ति उपलक्षणत्वादस्यार्थं–वैक्रियलब्ध्यादिकं प्राप्नुयात् वैरस्वामिवत् , शापानुग्रहकरणसमर्थत्वात् तच्छीलत्वाच्च तेषामिति । 'अन्नजंभये'त्यादि, अन्ने–भोजनविषये तदभावसद्भावाल्पत्वबहुत्वसरसत्वनीरसत्वादिकरणतो जृम्भन्ते–विजृम्भन्ते ये ते तथा, एवं पानादिष्वपि वाच्यं, नवरं 'लेण'त्ति लयनं–गृहं 'पुप्फफलजंभग'त्ति उभयजृम्भकाः, एतस्य च स्थाने 'मंतजंभग'त्ति वाचनान्तरे दृश्यते, 'अवियत्तजंभग'त्ति अव्यक्ता अन्नाद्यविभागेन जृम्भका ये ते तथा, क्वचित्तु 'अहिवइजंभग'त्ति दृश्यते तत्र चाधिपतौ–राजादिनायकविषये जृम्भका ये ते तथा 'सव्वेसु चेव दीहवेयड्ढेसु'त्ति 'सर्व्वेषु' प्रतिक्षेत्रं तेषां भावात् सप्तत्यधिकशतसङ्ख्येषु 'दीर्घविजयार्द्धेषु' पर्वतविशेषेषु, दीर्घग्रहणं च वर्त्तुलविजयार्द्धव्यवच्छेदार्थं, 'चित्तविचित्तजमगसमग-

पव्वएसु'त्ति देवकुरुषु शीतोदानद्या उभयपार्श्वतश्चित्रकूटो विचित्रकूटश्च पर्वतः, तथोत्तरकुरुषु शीताभिधाननद्या उभयतो यमकसमकाभिधानौ पर्वतौ स्तस्तेषु, 'कंचणपव्वएसु'त्ति उत्तरकुरुषु शीतानदीसम्बन्धिनां पञ्चानां नीलवदादिहदानां क्रमव्यवस्थितानां प्रत्येकं पूर्वापरतटयोर्दश दश काञ्चनाभिधाना गिरयः सन्ति ते च शतं भवन्ति, एवं देवकुरुष्वपि शीतोदानद्याः सम्बन्धिनां निषधहदादीनां पञ्चानां महाहदानामिति, तदेवं द्वे शते, एवं धातकीखण्डपूर्वार्धादिष्वप्यतस्तेष्विति ॥ चतुर्दशशतेऽष्टमः ॥ १४-८ ॥

अनन्तरोद्देशकान्त्यसूत्रेषु देवानां चित्रार्थविषयं सामर्थ्यमुक्तं, तस्मिंश्च सत्यपि यथा तेषां स्वकर्मलेश्यापरिज्ञानसामर्थ्यं कथञ्चिन्नास्ति तथा साधोरपीत्याद्यर्थनिर्णयार्थो नवमोद्देशकोऽभिधीयते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

अणगारे णं भंते ! भावियप्पा अप्पणो कम्मलेस्सं न जाणइ न पासइ तं पुण जीवं सरूविं सकम्मलेस्सं जाणइ पासइ ?, हंता गोयमा ! अणगारे णं भावियप्पा अप्पणो जाव पासति ॥ अत्थि णं भंते ! सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासंति ४ ?, हंता अत्थि ॥ कयरे णं भंते ! सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासंति जाव पभासेंति ?, गोयमा ! जाओ इमाओ चंदिमसूरियाणं देवाणं विमाणेहिंतो लेस्साओ बहिया अभिनिस्सडाओ ताओ ओभासंति पभासेंति एवं एएणं गोयमा ! ते सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासेंति ४ ( सूत्रं ५३४ ) ॥

'अणगारे ण'मित्यादि, अनगारः 'भावितात्मा' संयमभावनया वासितान्तःकरणः आत्मनः सम्बन्धिनीं कर्म्मणो योग्या लेश्या कृष्णादिका कर्म्मणो वा लेश्या 'श्लिष श्लेषणे' इति वचनात् सम्बन्धः कर्म्मलेश्या तां न जानाति विशेषतो न पश्यति च सामान्यतः,

कृष्णादिलेश्यायाः कर्मद्रव्यश्लेषणस्य चातिसूक्ष्मत्वेन छद्मस्थज्ञानागोचरत्वात्, 'तं पुण जीवं'ति यो जीवः कर्मलेश्यावांस्तं पुनः 'जीवम्' आत्मानं 'सरूविं'ति सह रूपेण—रूपरूपवतोरभेदाच्छरीरेण वर्त्तते योऽसौ समासान्तविधेः सरूपी तं सरूपिणं, सशरीरमित्यर्थः, अत एव 'सकम्मलेस्सं' कर्म्मलेश्यया सह वर्त्तमानं जानाति, शरीरस्य चक्षुर्ग्राह्यत्वाज्जीवस्य च कथञ्चिच्छरीराव्यतिरेकादिति॥ 'सरूविं सकम्मलेसं'ति प्रागुक्तम्, अथ तदेवाधिकृत्य प्रश्नयन्नाह-'अत्थि णं'मित्यादि, 'सरूविं'ति सह रूपेण—मूर्त्ततया ये ते 'सरूपिणः' वर्णादिमन्तः 'सकम्मलेस्स'त्ति पूर्ववत्, 'पुद्गलाः' स्कन्धरूपाः 'ओभासंति'त्ति प्रकाशन्ते 'लेसाओ'त्ति तेजांसि 'बहिया अभिनिस्सडाओ'त्ति बहिस्तादभिनिःसृता—निर्गताः, इह च यद्यपि चन्द्रादिविमानपुद्गला एव पृथिवीकायिकत्वेन सचेतनत्वात्सकर्म्मलेश्यास्तथाऽपि तन्निर्गतप्रकाशपुद्गलानां तद्धेतुकत्वेनोपचारात्सकर्म्मलेश्यत्वमवगन्तव्यमिति ॥ पुद्गलाधिकारादिदमाह—

नेरइयाणं भंते! किं अत्ता पोग्गला अणत्ता पोग्गला?, गोयमा! नो अत्ता पोग्गला अणत्ता पोग्गला, असुरकुमाराणं भंते! किं अत्ता पोग्गला अणत्ता पोग्गला?, गोयमा! अत्ता पोग्गला णो अणत्ता पोग्गला, एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं पुच्छा, गोयमा! अत्तावि पोग्गला अणत्तावि पोग्गला, एवं जाव मणुस्साणं, वाणमंतरजोइसियवेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं, नेरइयाणं भंते! किं इट्ठा पोग्गला अणिट्ठा पोग्गला?, गोयमा! नो इट्ठा पोग्गला अणिट्ठा पोग्गला जहा अत्ता भणिया एवं इट्ठावि कंतावि पियावि मणुन्नावि भाणियव्वा, एए पंच दंडगा॥ देवे णं भंते! महड्ढिए जाव महेसक्खे रूवसहस्सं विउव्वित्ता पभू भासासहस्सं भासित्तए?, हंता पभू, सा णं भंते! किं एगा भासा भासासहस्सं?, गोयमा! एगा णं सा भासा

णो खलु तं भासासहस्सं ( सूत्रं ५३५ ) ॥

'नेरइयाण'मित्यादि, 'अत्त'त्ति आ-अभिविधिना त्रायन्ते-दुःखात् संरक्षन्ति सुखं चोत्पादयन्तीति आत्राः आप्ता वा-एकान्तहिताः, अत एव रमणीया इति वृद्धैर्व्याख्यातं, एते च ये मनोज्ञाः प्राग् व्याख्यातास्ते द्रष्टव्याः, तथा 'इट्ठे'त्यादि प्राग्वत्। पुद्गलाधिकारादेवेदमाह-'देवे ण'मित्यादि, 'एगा णं सा भासा भास०'त्ति एकाऽसौ भाषा, जीवैकत्वेनोपयोगैकत्वात्, एकस्य हि जीवस्यैकदा एक एवोपयोग इष्यते, ततश्च यदा सत्याद्यन्यतरस्यां भाषायां वर्त्तते तदा नान्यस्यामित्येकैव भाषेति ॥ पुद्गलाधिकारादेवेदमाह-

तेणं कालेणं २ भगवं गोयमे अचिरुग्गयं बालसूरियं जासुमणाकुसुमपुंजप्पकासं लोहितगं पासइ पासित्ता जायसड्ढे जाव समुप्पन्नकोउहल्ले जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ जाव नमंसित्ता जाव एवं वयासी-किमिदं भंते! सूरिए किमिदं भंते! सूरियस्स अट्ठे?, गोयमा! सुभे सूरिए सुभे सूरियस्स अट्ठे। किमिदं भंते! सूरिए किमिदं भंते! सूरियस्स पभा एवं चेव, एवं छाया एवं लेस्सा ( सूत्रं ५३६ ) ॥

'तेण'मित्यादि, 'अचिरोद्गतम्' उद्गतमात्रमत एव बालसूर्यं 'जासुमणाकुसुमप्पगासं'ति जासुमणा नाम वृक्षस्तत्कुसुमप्रकाशमत एव लोहितकमिति 'किमिदं'ति किंस्वरूपमिदं सूर्यवस्तु, तथा किमिदं भदन्त! सूर्यस्य-सूर्यशब्दस्यार्थः-अन्वर्थवस्तु ?, 'सुभे सूरिए'त्ति शुभस्वरूपं सूर्यवस्तु सूर्यविमानपृथिवीकायिकानामातपाभिधानपुण्यप्रकृत्युदयवर्त्तित्वात् लोकेऽपि प्रशस्ततया प्रतीतत्वात् ज्योतिष्केन्द्रत्वाच्च, तथा शुभः सूर्यशब्दार्थस्तथाहि-सूरेभ्यः-क्षमातपोदानसंग्रामादिवीरेभ्यो हितः सूरेषु वा साधुः सूर्यः 'पभ'त्ति दीप्तिः छाया-शोभा प्रतिबिम्बं वा लेश्या-वर्णः ॥ लेश्याप्रक्रमादिदमाह-

जे इमे भंते! अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एते णं कस्स तेयलेस्सं वीतीवयंति ?, गोयमा! मासपरियाए समणे निग्गंथे वाणमंतराणं देवाणं तेयलेस्सं वीइवयंति, दुमासपरियाए समणे निग्गंथे असुरिंदवज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं तेयलेस्सं वीयीवयंति, एवं एएणं अभिलावेणं तिमासपरियाए समणे नि० असुरकुमाराणं देवाणं तेय० चउम्मासपरियाए गगहनक्खत्ततारारूवाणं जोतिसियाणं देवाणं तेय० पंचमासपरियाए य सचंदिमसूरियाणं जोतिसिंदाणं जोतिसरायाणं तेय० छम्मासपरियाए समणे सोहम्मीसाणाणं देवाणं० सत्तमासपरियाए सणंकुमारमाहिंदाणं देवाणं० अट्ठमासपरियाए बंभलोगलंतगाणं देवाणं तेय० नवमासपरियाए समणे महासुक्कसहस्साराणं देवाणं तेय० दसमासपरियाए आणयपाणयआरणच्चुयाणं देवाणं० एक्कारसमासपरियाए गेवेज्जगाणं देवाणं० बारसमासपरियाए समणे निग्गंथे अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं तेयलेस्सं वीयीवयंति, तेण परं सुक्के सुक्काभिजाए भवित्ता तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेति। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति ॥ ( सूत्रं ५३७ ) ॥ १४—९ ॥

'जे इमे' इत्यादि, ये इमे प्रत्यक्षाः 'अज्जत्ताए'त्ति आर्यतया पापकर्म्मबहिर्भूततया अद्यतया वा—अधुनातनतया वर्त्तमानकालतयेत्यर्थः 'तेयलेस्सं'ति तेजोलेश्यां—सुखासिकां, तेजोलेश्या हि प्रशस्तलेश्योपलक्षणं, सा च सुखासिकाहेतुरिति कारणे कार्योपचारात्तेजोलेश्याशब्देन सुखासिका विवक्षितेति, 'वीइवयंति' व्यतिव्रजन्ति—व्यतिक्रामन्ति 'असुरिंदवज्जियाणं'ति चमरबलिवर्जितानां, 'तेण परं'ति ततः संवत्सरात्परतः 'सुक्के'त्ति शुक्लो नामाभिन्नवृत्तोऽमत्सरी कृतज्ञः सदारम्भी हितानुबन्ध इति, निरतिचारचरण

इत्यन्ये, 'सुक्काभिजाइ'त्ति शुक्काभिजात्यः परमशुक्क इत्यर्थः, अत एवोक्तम्—" आकिञ्चन्यं मुख्यं ब्रह्मापि परं सदागमविशुद्धम्। सर्वं शुक्कमिदं खलु नियमात्संवत्सरादूर्ध्वम् ॥ १ ॥ " एतच्च श्रमणविशेषमेवाश्रित्योच्यते न पुनः सर्व एवैवंविधो भवतीति ॥ चतुर्दशशते नवमः ॥ १४-९ ॥

अनन्तरं शुक्क उक्तः, स च तत्त्वतः केवलीति केवलिप्रभृत्यर्थप्रतिबद्धो दशम उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

केवली णं भंते! छउमत्थं जाणइ पासइ?, हंता जाणइ पासइ, जहा णं भंते! केवली छउमत्थं जाणइ पासइ तहा णं सिद्धेवि छउमत्थं जाणइ पासइ?, हंता जाणइ पासइ, केवली णं भंते! आहोहियं जाणइ पासइ एवं चेव, एवं परमाहोहियं, एवं केवलिं एवं सिद्धं जाव जहा णं भंते! केवली सिद्धं जाणइ पासइ तहा णं सिद्धेवि सिद्धं जाणइ पासइ?, हंता जाणइ पासइ। केवली णं भंते! भासेज्ज वा वागरेज्ज वा?, हंता भासेज्ज वा वागरेज्ज वा, जहा णं भंते! केवली भासेज्ज वा वागरेज्ज वा तहा णं सिद्धेवि भासेज्ज वा वागरेज्ज वा?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जहा णं केवली णं भासेज्ज वा वागरेज्ज वा णो तहा णं सिद्धे भासेज्ज वा वागरेज्ज वा?, गोयमा! केवली णं सउट्ठाणे सकम्मे सबले सवीरिए सपुरिसक्कारपरक्कमे, सिद्धे णं अणुट्ठाणे जाव अपुरिसक्कारपरक्कमे, से तेणट्ठेणं जाव वागरेज्ज वा, केवली णं भंते! उम्मिसेज्ज वा निमिसेज्ज वा?, हंता उम्मिसेज्ज वा निम्मिसेज्ज वा एवं चेव, एवं आउट्टेज्ज वा पसारेज्ज वा, एवं ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा चेएज्जा, केवली

णं भंते! इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभापुढवीति जाणति पासति?, हंता जाणइ पासइ, जहा णं भंते! केवली इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभापुढवीति जाणइ पासइ तहा णं सिद्धेवि इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभपुढवीति जाणइ पासइ?, हंता जाणइ पासइ, केवली णं भंते! सक्करप्पभं पुढविं सक्करप्पभापुढवीति जाणइ पासइ?, एवं चेव, एवं जाव अहेसत्तमा, केवली णं भंते! सोहम्मं कप्पं सोहम्मकप्पेत्तिजाणइ पासइ?, हंता जाणइ पासइ, एवं चेव, एवं ईसाणं एवं जाव अच्चुयं, केवली णं भंते! गेवेज्जविमाणे गेवेज्जविमाणेत्ति जाणइ पासइ?, एवं चेव, एवं अणुत्तरविमाणेवि, केवली णं भंते! ईसिपब्भारं पुढविं ईसिपब्भारपुढवीति जाणइ पासइ?, एवं चेव, केवली णं भंते! परमाणुपोग्गलं परमाणुपोग्गलेत्ति जाणइ पासइ?, एवं चेव, एवं दुपएसियं खंधं एवं जाव जहा णं भंते! केवली अणंतपएसियं खंधं अणंतपएसिए खंधेत्ति जाणइ पासइ तहा णं सिद्धेवि अणंतपएसियं जाव पासइ?, हंता जाणइ पासइ। सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति (सूत्रं ५३८) ॥ १४-१० ॥ चोदसमं सयं संमत्तं ॥ १४ ॥

'केवली'त्यादि, इह केवलिशब्देन भवस्थकेवली गृह्यते, उत्तरत्र सिद्धग्रहणादिति, 'आहोहियं'ति प्रतिनियतक्षेत्रावधिज्ञानं 'परमाहोहियं'ति परमावधिकं 'भासेज्ज व'त्ति भाषेतापृष्ट एव 'वागरेज्ज'त्ति पृष्टः सन् व्याकुर्यादिति 'ठाणं'ति ऊर्ध्वस्थानं निषदस्थानं त्वग्वर्त्तनस्थानं चेति 'सेज्जं'ति शय्यां-वसतिं 'निसीहियं'ति अल्पतरकालिकां वसतिं 'चेएज्ज'त्ति कुर्यादिति ॥ चतुर्दशशते दशमः ॥ १४-१० ॥ समाप्तं च वृत्तितश्चतुर्दशं शतम् ॥ १४ ॥

चतुर्दशस्येह शतस्य वृत्तिर्येषां प्रभावेण कृता मयैषा ।
जयन्तु ते पूज्यजना जनानां, कल्याणसंसिद्धिपरस्वभावाः ॥ १ ॥

इतिश्रीचन्द्रकुलनभोमृगाङ्कश्रीमदभयदेवसूरिवरविरचितविवरणयुतं-
॥ चतुर्दशं शतं समाप्तम् ॥

इति श्रीमद्भगवतीसूत्रे द्वितीयो भागः
॥ समाप्तः ॥

## विक्रयपुस्तकानि

| पुस्तक | मूल्य | पुस्तक | मूल्य | पुस्तक | मूल्य |
|---|---|---|---|---|---|
| दशवैकालिकचूर्णिः .... | ४–०–० | अर्हिसाष्टकः सर्वज्ञसिद्धिऐन्द्रस्तुति | ०–८–० | पुष्पमाला मलधारीयहेमचन्द्रकृत | ६–०–० |
| उत्तराध्ययनचूर्णिः .... | ३–८–० | अनुयोगचूर्णिर्हारिभद्रीयवृत्तिश्च | १–४–० | तत्त्वार्थहारिभद्रीयटीका सभाष्य | ६–०–० |
| ३५०, १५०, १२५ स्तवनानि | ०–८–० | नंदीचूर्णिर्हारिभद्रीयवृत्तिः गाथाश्च | १-४-० | मध्यमसिद्धप्रभा(व्याकरण),,.... | ०–८–० |
| पंचाशकादिशास्त्राष्टकं .... | ३–०–० | नवपदप्रकरणबृहद्वृत्तिः ... | ३–०–० | पर्युषणादशशतकं .... | ०-१०-० |
| पंचाशकादिदशअकारादिक्रमः | ३–०–० | बारसासूत्रं (सचित्रं) | १२-०-० | विशेषावश्यकभाष्य(कोट्याचार्य कृतटीका) (प्रथमो विभागः) | ५–०–० |
| ज्योतष्करंडकटीका .... | ३–०–० | ऋषिभाषितानि .... | ०--२--० | बुद्धिसागर .... | ०–३–० |
| पंचवस्तुः स्वोपज्ञटीकायुक्तः .... | २–४–० | प्रत्याख्यानविशेषणवती वीशवीशी | १-८-० | भवभावनावृत्ति पू. हेमचन्द्रसूरि | प्रेसमां |
| द्रव्यलोकप्रकाशः .... | २–०–० | विशेषावश्यकगाथानुक्रमादि | ०–३–० | कल्पकामुदी .... | ,, |
| क्षेत्रलोकप्रकाशः .... | २–८–० | ललितविस्तरा .... | ०-१०-० | उत्पादादिसिद्धः .... | ,, |
| युक्तप्रबोधः स्वोपज्ञः .... | १–०–० | तत्त्वतरंगिणी .... | ०–८–० | विशेषावश्यकभाष्यकोट्याचार्य कृतटीका) द्वितीयभागः | प्रेसमां |
| वचाररत्नाकरः .... | २–४–० | बृहत्सिद्धप्रभा व्याकरण .... | २–८–० | षोडशकः सटीकः | ,, |
| वंदारुवृत्तिः .... | १–०–० | आचारांगसूत्रवृत्तिः .... | ७–०–० | | |
| पयरणसंदोहो .... | ०-१२-० | भगवतीजी दानशेखरसूरिटीका.... | ५–०–० | | |

प्राप्तिस्थान १ जैनानन्दपुस्तकालय गोपीपुरा—सुरत. २ मास्तर कुंवरजी दामजी. मोती कडीयानी मेडी –पालीताणा.